JEEVAN SAKHA 1941 G.K.V.

028737

078737

COMPILED

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

~~R1-01297~~

विशेषांक

जनवरी, १९

वार्षिक मूल्य ३) इस अंक का १)

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है ।

१—एक छटाँक शहद पानी में मिलाकर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है ।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है ।
३—शरीर में ताकत आती है ।
४—दूध में मिलाकर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुरुषत्व बढ़ता है ।
५—शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है ।
६—यदि दिल व[illegible]जोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है ।
७—शहद का इस्तमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है ।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं । पूरे लाभ के लिये **जीवन-मधु** का उपयोग कीजिए । इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है ।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=) एक रुपया दो आना ।

मिलने का पता--

मैनेजर--**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह**
८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

दुग्ध-चिकित्सा रोगों को धो डालती है

दूध शरीर को तो पुष्ट करता ही है रग-रग, नस-नस को धोकर शरीर को निर्मल बना देता है । रक्त शुद्ध हो जाता है और रोग इसके कल्प से चले जाते हैं । रोगों में मृगी से मानसिक रोगों को छोड़ कर इस कल्प से सभी रोग जाते हैं । पाचन-क्रिया की गड़बड़ी से पैदा होने वाले हर प्रकार के रोगों के लिए तो यह कल्प रामबाण है, पर दूध का कल्प दवा के सहारे नहीं प्रकृति के सहारे करना चाहिए । इसकी सारी व्यवस्था स्वास्थ्य गृह में की गई है । नियमावली के लिए पांच पैसे का डाक टिकट आज ही भेजिए ।

मैनेजर--

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह
८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

सिरीज़ का प्रकाशन पहली जनवरी से आरम्भ

हमारी प्रथम योजना १०० पुस्तकें प्रतिवर्ष के हिसाब से ५ वर्ष में ५०० पुस्तकें निकालने की है। ये पुस्तकें सभी मुख्य-मुख्य विषयों पर होंगी और इनसे एक सुन्दर

घरेलू-पुस्तकालय

बन जायगा। प्रत्येक पुस्तक की पृष्ठ-संख्या २००-२५०, गेट-अप सुन्दर और मूल्य आठ आना होगा।

ग्राहक बनने के नियम

प्रत्येक पाठक (क) सिरीज़ की कुल पुस्तकों के लिए, (ख) कुछ विभागों की कुल पुस्तकों के लिए या (ग) चुनी हुई किन्हीं २० पुस्तकों के लिए ग्राहक बन सकता है।

पेशगी चंदा १) है।

२० पुस्तकें मिल जाने के बाद यह फिर से जमा होगा। पोस्टेज-पैकिंग माफ़ रहेगा। चुनने के लिए पूरी पुस्तकों की सूची फ़ार्म भर कर आने पर भेज दी जायगी।

सरस्वती-सिरीज़
क्रान्तिकारी
क्रान्तिकारी
२
आठ आना

निम्नलिखित १० पुस्तकें पहली जनवरी को तैयार हो जायँगी।

१ दैनिक जीवन और मनोविज्ञान २ क्रान्तिकारी ३ समरक़ंद की सुन्दरी ४ चक्रभेद ५ रूसी कहानी-संग्रह ६ सूर-संदर्भ ७ रामकृष्ण चरितामृत ८ आधुनिक जापान ९ पृथ्वी का इतिहास १० मेरा संघर्ष (हिटलर)

दस पुस्तकें पहली जनवरी को तैयार

५०० पुस्तकें निम्न प्रकार से १० विभागों में निकलेंगी—

विचारधारा	५०	विश्व उपन्यास	५०	आधुनिक उपन्यास और नाटक	५०
कहानी-संग्रह	५०	रहस्य-रोमांच	१००	ऐतिहासिक विचित्र कथा	५०
विज्ञान	३०	जीवनचरित्र	२०	हिन्दी-साहित्य	६०
		धर्मग्रन्थ	४०		

सरस्वती-सिरीज़, इंडियन प्रेस, लि॰ प्रयाग

मेरा नाम पूरी सिरीज़ के / विभाग के / २० पुस्तकों के ग्राहकों में लिख लीजिए।

चन्दा वी॰ पी॰ भेजकर वसूल कर लीजिए। / मनीआर्डर से भेज रहा हूँ।

नाम ____________________

पता ____________________

कमला

[महिलाओं की अपनी मासिक पत्रिका]
सम्पादक—श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर
सहायक—श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी

मैनेजर, 'कमला',
गायघाट, बनारस

नारी जागरण का महान् सन्देश सुनाने वाली हिन्दी की प्रमुख सर्वोत्तम मासिक पत्रिका 'कमला' के प्रकाशन से हिन्दी के पत्र पत्रिकाओं की दुनियाँ में एक अजीब तहलका मच गया है। हर एक उसकी गम्भीरता और उपयोगिता का कायल हो रहा है। यदि आपको विश्वास न हो तो एक प्रति मँगा कर देख लें। नमूने के लिये ।=) के टिकट भेजिये। वार्षिक मूल्य ४॥) रखा गया है। आज ही चन्दा भेजिये या नमूना मँगाइये।

जन्म-निरोध (Birth Control)

अर्थात् स्त्री के गर्भवती होने से बचने के उपाय और साधन

लेखक—ए० ए० खान

उपक्रमणिका लेखक—[Lieut-Colonel A. N. Bose, M.B.E., M.D. (Laus.) F.R.C.P. (Ed.) D.T.M.H. (Camb.), M.R.C.P. (Lond.) I.M.S.,]
PRINCE OF WALES MEDICAL COLLEGE, PATNA.

(१) चित्र संख्या ११२, (२) पृष्ठ संख्या ६००, मूल्य ४) कमीशन काटकर ३), डाक खर्च ॥-)
अधिक जानने के लिये भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस से पत्रव्यवहार कीजिये।

विवाहोपलक्ष्य में भेंट देने की महान् वस्तु
क्या ? वही
स्त्री जगत् में हलचल मचाने वाली पुस्तक
क्या आप किसी के पिता और पति हैं ?
यदि हाँ तो

भाभी के पत्र

पढ़िये और अपनी स्त्री तथा कन्याओं को पढ़ाइये,

भूमिका लेखक—कृष्णदेवप्रसाद गौड़ 'बेढब' बनारसी
लेखक—श्री व्यथित हृदय

मूल्य सजिल्द १)

पता—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, ब्रांच, चौक, कचौड़ी गली, बनारस।

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी' ही बचा सकती है

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।
(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।
(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है

'कहानी'

सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन०––'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं... यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिए'।

श्री जैनेन्द्र––"...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है..."।

श्री सुदर्शन––'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम क़ीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'––'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब––सब विचार से अंक सर्वाङ्ग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा––'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है––अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्च कोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय––'...कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकायें निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट––'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र––'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो ही गई...'

श्री पहाड़ी––'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी-पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेंगी।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २।।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट

आचार्य चतुरसेनजी शास्त्री की कृतियाँ

(१) हृदय की परख

आपने इस उपन्यास में मनुष्य के विचारों को बड़े ही उत्तम ढंग से अंकित किया है। उपन्यास हिंदी-संसार में लासानी है। मूल्य १), सजिल्द १।)

(२) ख़वास का ब्याह

शास्त्रीजी ने इसे पृथ्वीराज रासो के आधार पर लिखा है। इसमें संयोगिता के स्वयंवर का कथानक बड़ी सुन्दर भाषा में लिखा गया है। एक रंगीन चित्र भी है। मूल्य १), सजिल्द १।)

(३) अक्षत

इसमें लेखक की आठ सुंदर, रसीली, तथा शिक्षा-प्रद कहानियाँ हैं, जिन्हें पढ़कर आप आपे से बाहर हो जायँगे। सचित्र पुस्तक का मूल्य १), सजिल्द १।)

(४) उत्सर्ग

यह एक सुन्दर ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें चित्तौर के अग्रगण्य वीर अधिपति जयमल तथा उनकी जवाँमर्द रानी की वीरता का दिल फड़का देनेवाला वर्णन है। पढ़ते ही बाहें फड़कने लगती हैं। मूल्य ।=), सजिल्द ॥)

(५) ब्रह्मचर्य-साधन

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने ब्रह्मचर्य की महिमा, विधि और उसके साधन के विषय में अच्छा प्रकाश डाला है, जो विद्यार्थी समुदाय के लिए अत्यंत उपयोगी है। मूल्य ॥), सजिल्द १)

(६) गोल सभा

इसमें आपको सात-समुद्र-पार विलायत के जेम्स-पैलेस में बैठकर भारत एवं ब्रिटेन के राजनीतिक खिलाड़ियों द्वारा भारत की तक़दीर का जो फ़ैसला हुआ, उसका ब्यौरेवार परिचय मिलेगा। कुछ ही प्रतियाँ रह गई हैं। सचित्र पुस्तक का मूल्य १।), सजिल्द २)

(७) सुखी जीवन

ग्रामीण तथा नागरिक स्त्री-पुरुषों तथा विशेषकर स्त्रियों के लिये अत्यंत लाभदायिनी है। स्त्रियों का बचपन, उनका गार्हस्थ्य जीवन, उनकी तंदुरुस्ती आदि विषयों की जानकारी प्राप्त करने के लिए यह अद्वितीय पुस्तक है। इसका प्रत्येक स्त्री के हाथ में जाना अत्यंत आवश्यक है। मूल्य ॥।), सजिल्द १)

(८) आरोग्यशास्त्र

स्वास्थ्य के संबंध में हिंदी-जगत् में यह अद्वितीय ग्रंथ-रत्न है। कई सुंदर, रंगीन और सैकड़ों सादे चित्रों से सुसज्जित पुस्तक का मूल्य १२)

(९) ग़दर के पत्र तथा कहानियाँ

इसमें सन् ५७ के भयानक विप्लव की भीषणता का दिग्दर्शन है। प्रत्येक घटना पढ़ने योग्य है। मूल्य १), सजिल्द १।)

(१०) हृदय की प्यास

(तृतीयावृत्ति)

यह आपका मौलिक उपन्यास बहुत ही उच्च कोटि का है। भाषा में जान है, ओज है, प्रभाव है और रस है। इसकी घटनायें दिल पर चोट करनेवाली हैं। पाठक स्वयं पढ़कर इसकी उत्तमता का पता लगा सकते हैं। इसे अवश्य मँगाइए। मूल्य २), सजिल्द २।)

पता—गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ

NOTICE

The publication of an English monthly magazine from the month of July onwards from our office is hereby announced. It will contain authoritative articles from foreign and Indian writers.

Manager
JIWAN-SAKHA
87 Himmatganj, ALLAHABAD

078737

तरुण-भाव के प्रदर्शन के लिए एकमात्र सचित्र मासिक पत्र

तरुण

यू० पी० और सी० पी० के शिक्षा-विभागों द्वारा स्वीकृत

हिन्दी-संसार में अनेकों श्रेष्ठ और उत्तम पत्र-पत्रिकायें हैं, लेकिन तरुणों का तारुण्य बनाये रखने, प्रौढ़ों को असमय के वृद्धत्व से बचाने और लड़के-लड़कियों को तरुणावस्था के योग्य बनाने के लिए एक ही पत्र है, और वह है—तरुण

जीवन में सफलता के लिए क्या चाहिए ?

तरुण-भाव, जो निम्न-लिखित सद्गुणों से पुष्ट होता है:—

(१) स्वास्थ्य और शारीरिक बल।
(२) अदम्य उत्साह और साहस की क्षमता
(३) मानसिक तीव्रता और सभी तरह की योग्यता।
(४) नैतिक दृढ़ता।

'तरुण' इन सभी विषयों में अपने पाठक-पाठिकाओं की पूरी सहायता करता है।

'तरुण' सभी अवस्था के नर-नारियों का जीवन-पथ पर सच्चा सहायक है।

वार्षिक मूल्य ३)

मैनेजर, 'तरुण' तरुण कार्यालय, इलाहाबाद

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें खरीदिए

सन् १९३६ (फरवरी, मार्च के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९३७ (जनवरी, मार्च के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९३८ (जनवरी, फरवरी, अप्रैल के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९३९ (जनवरी, फरवरी के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९४० मूल्य ३)

आपको यह जानना ही चाहिए

कि

नये विचार

नई भावनायें और राष्ट्र निर्माणकारी नई क्रान्ति का सन्देश देने वाले

'जीवन-साहित्य' मासिक पत्रिका

[सम्पादक हरिभाऊ उपाध्याय, वार्षिक मूल्य २), मंडल ग्राहकों से १)]

तथा

सस्ता साहित्य मण्डल का नया प्रकाशन

(१) बापू—ले० घनश्याम दास बिड़ला, १३ सुन्दर चित्रों सहित दाम ॥।), सजिल्द १।) और हाथ के कागज पर २) सिर्फ।

महात्मा गाँधी की छोटी से छोटी और महान् से महान् बातों का नजदीक से बिन्दुस्पर्शी अध्ययन।

(२) खादी मीमांसा—ले० भालू भाई मेहता, मू० १॥)। खादी पर लिखी गई पुस्तकों में से प्रधान पुस्तक।

(३) बिनोबा और उनके विचार—मूल्य ॥), प्रथम सत्याग्रही आचार्य बिनोबा के जीवनमय विचार।

(४) समाजवाद पूँजीवाद—मूल्य ॥।), बर्नार्ड शा की Intelligent woman's guide to socialism and capitalism के आधार पर लिखी।

(५) मेरी मुक्ति की कहानी—मूल्य ॥); महात्मा टाल्स्टाय के जीवन संस्करण और उनकी जीवन कहानी।

आपके स्थान के खादी भंडारों और प्रधान पुस्तक विक्रेताओं के पास पहुँच चुकी है।

और

१—लड़खड़ाती दुनिया—ले० पं० जवाहरलाल नेहरू।

२—युद्ध और अहिंसा—लेखक महात्मा गांधी।

३—मालवीयजी के साथ ३० दिन—ले० रामनरेश त्रिपाठी।

ये पुस्तकें और छप रही हैं

यदि आप इन पुस्तकों को अभी न खरीद सके हों तो बिलम्ब से पूर्व ही हमें आर्डर भेजिए। संस्करण की समाप्ति की नौबत आ गई है।

सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सरकस, नई दिल्ली

शाखायें दिल्ली, लखनऊ और इन्दौर

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास मास के प्रथम सप्ताह में प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि दूसरे महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो उन्हें १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगन्ज, इलाहाबाद

AWAY WITH DISEASE

Enjoy bubbling health & real happiness,
Build up a cheerful, harmonious home,
Construct the Social Structure on firm foundation,
Become a Master of yourself and your environment

By Reading

HUMAN CULTURE AND CURE

THE CHROMOPATHIC INSTITUTE
Andhra Grandhalaya Press Buildings, Bezwada, India

क्या और कैसे खायें

[लेखक : डाक्टर बालेश्वर प्रसाद सिंह]

भोजन की समस्या बड़ी विचित्र है। खाने का सवाल हल हो जाने पर किसी बात की चिन्ता नहीं रह जाती। खाने के मुताबिक ही आदमी की जिन्दगी बीतती है। जैसा कि नाम से स्पष्ट है। इस पुस्तक में किन चीजों को खाना और किनको छोड़ना, किनको कितना खाना आदि मसलों पर विचार किया गया है। तरह तरह की सूचियाँ देकर गागर में सागर भर दिया गया है। ऐसी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल चार आना है।

सम्पादक

बालेश्वरप्रसाद सिंह : विट्ठलदास मोदी
विशेषांक के सम्पादक : जानकी शरण वर्मा

विषय-सूची

विषय — पृष्ठ

१ **औषधोपचार व्यर्थ**——महात्मा गाँधी .. १
२ **प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का विकास** .. ४
३ **बापू की दिनचर्या**——श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला ११
४ **प्रकृति बनाम दवा**——श्रीयुत आनन्दवर्धन १४
५ **इन्द्रिय-निग्रह की समस्या**——श्रीयुत बरनर मैकफेडेन २१
६ **बिटामिन की कहानी**——डा० सरदार जसवन्त सिंह, एम०ए०, बी० एस-सी०, एन०डी० (लण्डन) २५
७ **भाजी और फल**——श्रीयुत जानकीशरण वर्मा ३४
८ **बेवकूफी की भी हद होती है**——भदन्त आनन्द कौसल्यायन ४२
९ **भोजन और धूप**——श्रीयुत ए० विजय घोष ४५
१० **आधार-निदान**——योग व्यायामविद् डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह ४९
११ **जीर्ण रोग उनका कारण और निवारण**——श्रीयुत विट्ठल दास मोदी ५५
१२ **बद्धकोष्ठ चिकित्सा**——प्रो० भवानी प्रसाद प्राकृतिक स्वास्थ्य-शास्त्रोपाध्याय .. ६०
१३ **प्राकृतिक चिकित्सा में साधना**——श्रीयुत इकबालकृष्ण तैमिनी, अध्यापक इलाहाबाद यूनिवर्सिटी ६४

विषय — पृष्ठ

१४ **रोगावस्था में जड़ी-बूटियों का प्रयोग**——डाक्टर एल० कामेश्वर शर्मा, एम०ए०, बी०एस-सी०, एन०डी० (कैलिफोर्निया) ६६
१५ **आँखों का सौंदर्य कैसे सुरक्षित रहे**——डा० आर० एस० अग्रवाल, नेत्र-चिकित्सक ७१
१६ **योग और स्वास्थ्य**——श्री स्वामी शिवानन्द ७७
१७ **विद्युत-चिकित्सा**——डा० के० आर० दिलकश एम०ए०बी०, एन०डी० .. .. ८२
१८ **डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह**——श्रीयुत विट्ठल दास मोदी ८९
१९ **मनुष्य क्या है**——प्रो० एस० गोस्वामी, एन० डी०, एन०एस०सी०, डी० एन०, पी-एच० डी० .. .. .. ९३
२० **स्वास्थ्य और प्राकृतिक चिकित्सा**——प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम०ए० .. ९६
२१ **हम क्या अवश्य खायँ**——श्रीयुत महेशचन्द्र अग्रवाल, बी० एस० सी०, एम० ए०, विशारद ९९
२२ **संपादकीय** १११
२३ **हिन्दुस्तान के प्राकृतिक चिकित्सकों के नाम और पते** ११४

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

जीवन-सखा

जनवरी १९४१, वर्ष ६, संख्या १

औषधोपचार-व्यर्थ

महात्मा गांधी

> "हम माने बैठे हैं कि दवा बिना रोग नहीं जाता। यह भारी भ्रम है इसकी बदौलत जितनी तकलीफ उठाई या उठा रहे हैं उतनी अन्य कारणों से न भोगी है न भोगेंगे। दर्द के माने दुःख हैं। रोग का भी यही अर्थ है। बीमारी का इलाज वाजबी है, लेकिन उसे दूर करने को दवा लेना व्यर्थ है, यही नहीं बहुत बार उससे नुकसान होता है। घर में पड़े कूड़े को ढाँप देने का और दवा का असर एक सा होता है"--गांधी जी के इन विचारों पर प्रत्येक पाठ को ध्यान देना चाहिए।--सं०

लेखक

अङ्गरेज कवि मिल्टन का कथन है कि मनुष्य का मन ही उसके लिये स्वर्ग या नरक है; स्वर्ग कहीं बादलों में और नरक कहीं पृथ्वी के अन्दर नहीं। मन ही बन्धन (नरक) और मोक्ष (स्वर्ग) का कारण है। इसके अनुसार कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने रोगी या नीरोगी रहने का आप ही कारण है। हम जैसे अपने कार्यों से रोगी होते हैं वैसेही विचारों से भी रोगी हो जाते हैं। इसके बहुत उदाहरण हैं। जैसे बेटे को हैजा हुआ देख बाप को भी हो गया। एक प्रसिद्ध वैद्य का कथन है कि महामारी, हैजा, प्लेग आदि बीमारियों से जितने रोगी नहीं मरते उससे ज्यादा उन बीमारियों के भय से मरते हैं। 'कायर बिना मौत मरता है' यह कहावत झूठी नहीं।

अज्ञान भी आरोग्यनाश का एक बड़ा कारण है। किसी आकस्मिक विपत्ति के आ पड़ने और उसके निराकरण का कोई उपाय न जानने के कारण निरुपाय हो हम पागल से हो जाते हैं, और भला करने जाते-जाते बुरा कर बैठते हैं। शरीर-सम्बन्धी नियमों की अज्ञानता के कारण बहुत बार हम अकर्त्तव्य कार्य करते और धूर्त, अनाड़ी वैद्यों के हाथ में जा फँसते हैं। बात ताज्जुब की है, फिर भी है सच्ची कि हमें पास पड़ी चीज का ज्ञान दूर पड़ी चीज के ज्ञान से कम होता है। अपने मुहल्ले की खबर नहीं रखते, लेकिन इंगलैण्ड के गाँव और

नदी आदि के नाम खटाखट सुन लीजिये। आकाश के तारों के सम्बन्ध में बड़बड़ाते रहते हैं लेकिन अपने घर का पता नहीं। आकाश के तारे गिनने का इरादा रखेंगे लेकिन छान की वल्लियों से अनजान। आँखों के सामने होते हुए प्रकृति का विचित्र नाटक देखने की इच्छा नहीं पर नकली नाट्यशाला के ढोंग देखने के लिये बेताब रहते हैं और ठीक वैसे ही अपने शरीर में क्या हो रहा है, यह क्या है, काहे से बना है, उसके अन्दर की हड्डियाँ मांस, खून वगैरह कैसे बनते हैं, उन सब का क्या मतलब है, शरीर में बोलने वाला कौन है, हम में यह गति कहाँ से आती है, हम में कभी खराब कभी अच्छे विचार कहाँ से आते हैं, हमारी मरजी बिना यह मन कैसे करोड़ों मील की दौड़ लगा आता है, शरीर चिउँटी की चाल चलता और मन हवा से भी हजार गुना तेज दौड़ता है इनके कारणों का हमें कुछ पता नहीं। अब देख लीजिये, हमारा शरीर हमारे लिये निकट से निकट है, पर उसके साथ हमारा क्या सम्बन्ध है इसका हमें कम से कम ज्ञान है।

इस कठिनाई से पार पाना प्रत्येक का कर्त्तव्य है। शरीर और मन का सम्बन्ध जानना तो बहुत मुश्किल काम है, लेकिन शरीर सम्बन्धी साधारण बातों की कुछ जानकारी प्रत्येक मनुष्य के लिये आवश्यक समझी जानी चाहिए। बालकों की पढ़ाई में भी इस ज्ञान को शामिल करना चाहिए। उँगली कट गई, क्या करें पता नहीं, काँटा गड़ गया, निकाल नहीं सकते, साँप ने काट खाया तो धीरज धर कर तत्काल क्या करना चाहिए इसकी खबर नहीं, अगर इन सब का विचार करने बैठें तो शर्म से हमारा सिर नीचा हो जाना चाहिए। गर्व से यह कह देना कि मामूली आदमी इन मामलों को कुछ नहीं समझेंगे निरा मिथ्याभिमान है और सीधे सादे मनुष्यों को फँसाने का जाल है।

हम लोगों को जरा से रोगों में भी तुरन्त डाक्टर, वैद्य या हकीम के यहाँ दौड़ने की आदत पड़ गई है और न सही तो नाऊ (हजाम) या पड़ोसी की सलाह से ही दवा ले लेते हैं। हम माने बैठे हैं कि दवा बिना रोग नहीं जाता। यह भारी भ्रम है। इसकी बदौलत जितनी तकलीफ उठाई और उठा रहे हैं उतनी अन्य कारणों से न भोगी है न भोगेंगे। दर्द के माने दुःख हैं। रोग का भी यही अर्थ है। बीमारी का इलाज वाजबी है, लेकिन उसके दूर करने को दवा लेना व्यर्थ है, यही नहीं बहुत बार उससे नुकसान होता है। घर में पड़े कूड़े को ढाँप देने का और दवा का एक सा असर होता है। ढाँप देने से कूड़ा सड़ कर हमें हानि पहुँचाता है। ढक्कन सड़ जाने पर वह कूड़े के ढेर को और बढ़ाता है, तब हमें सब निकालना पड़ता है। यही दशा दवा लेने वालों की होती है और जो हम इस कूड़े को निकाल दें तो घर जैसा-का-तैसा साफ़ हो जाय। रोग दुःख देकर प्रकृति हमें सूचित करती है कि शरीर में कूड़ा इकट्ठा हो गया है। प्रकृति ने शरीर ही में कूड़ा निकालने के रास्ते बना रखे हैं और जब-जब रोग हों तब-तब हमें समझना चाहिए कि प्रकृति ने अब हमारे शरीर से कूड़ा निकालना शुरू किया है। हमारे घर का कूड़ा साफ करने आने वाले का हम उपकार मानते हैं। अगर उसके कूड़ा साफ करते समय जरा दिक्कत भी होती है तो हम उसे बरदाश्त कर लेते हैं। वैसे ही प्रकृति के हमारे शरीररूपी घर में से कूड़ा साफ करते समय यदि हम शान्त रहें तो हमारा शरीर साफ हो जाय और हम नीरोग हो जायँ। मान लीजिये हमें सर्दी हुई, अब हमें तुरन्त किसी दवा के लिये—अदरक खाने के लिये दौड़-धूप करने की जरूरत नहीं। क्योंकि हम जानते हैं कि हमारे शरीर के अमुक भाग में कूड़ा था। उसे प्रकृति निकाल रही है। हमें उसे मार्ग देना चाहिए, इससे सफाई हो जायगी। प्रकृति की प्रतिकूलता करने पर उसका एक काम और बढ़ जायगा, कूड़ा साफ करना और हमसे लड़ना। हम चाहें तो प्रकृति की सहायता कर सकते हैं, कूड़ा इकट्ठा होने के कारण को दूर करें जिसमें वह बढ़े नहीं, अर्थात् उस बीच में खुली हवा में उचित व्यायाम करें, जिससे चमड़े के पसीने द्वारा शरीर का कूड़ा बाहर निकल जायगा।

शरीर की नीरोगता के लिये यह सर्वोत्तम नियम है; इसे हर आदमी आजमा कर देख सकता है। हमें केवल मन को वश में रखना चाहिए। जिन मनुष्यों में सच्ची ईश्वरभक्ति है उनका आचरण तो ऐसा होना ही चाहिए। मन को स्थिर रखने में निम्नलिखित विचार सहायक होंगे—वैद्य की दवा से हम आराम हो ही जायँगे इसका कोई ठेका नहीं ले सकता, वैद्यों के हाथ में पड़े हुए बहुतेरे आदमी बीमार ही रहते हैं।

अनुभव से तो यह मालूम होता है कि घर में एक बार दवा देवी का प्रवेश हो जाता है वहाँ से फिर वह निकलने का नाम ही नहीं लेती। अनगिनत आदमी जन्म भर किसी-न-किसी रोग में फँसे रहते हैं, दवा-पर-दवा लेते रहते हैं। आज इस वैद्य के पास कल उस डाक्टर के। रोग दूर करने वाले वैद्य की तलाश में हमेशा भटकते रहते हैं और अन्त में स्वयं हैरान हो और दूसरों को हैरान करने के बाद तड़प-तड़प कर परलोक सिधार जाते हैं। प्रसिद्ध जज परलोकवासी स्टीवन साहब ने, जो हिन्दुस्तान में भी रह गये हैं—एक बार कहा था कि जिन वनस्पतियों के सम्बन्ध में वैद्य लोग बहुत कम जानते हैं, उन्हें उन शरीर में जिनके विषय में वे वनस्पतियों की अपेक्षा भी कम जानते हैं; पहुँचाते हैं। पूर्ण अनुभव प्राप्त होने के बाद डाक्टर वैद्य स्वयं भी यही विचार प्रकट करने लगते हैं।

हम हर जगह देखते हैं कि जहाँ वैद्य बढ़े हैं वहीं रोग भी बढ़े हैं। जिन पत्रों में अन्य विज्ञापन नहीं आते उनमें भी दवाइयों के बड़े-बड़े विज्ञापन तो आ ही जायँगे। एक पैसे की दवा के लिये हम एक रुपया देते हैं। प्रायः दवा वाले यह नहीं प्रकट करते कि उनकी दवा किन चीजों के मेल से बनी है। 'गुप्त दवाइयाँ' इस नाम से एक किताब किसी दवा बेचने वाले ने ही प्रकाशित की है। उसका उद्देश्य है कि लोगों को भटकना न पड़े। उसमें उसने बतलाया है कि सार्सापरिला, फ्रूटसाल्ट, सीरप वगैरह नामी-नामी (पेटेण्ट) दवाइयों के लिये हम २) से ५) रु० तक कीमत देते हैं। असल में वह एक पैसे से एक आने तक की होती हैं। इस हिसाब से हम कम-से-कम छत्तीस गुनी और अधिक से अधिक तीन सौ छत्तीस गुनी कीमत अर्थात् साढ़े तीन हजार से पैंतीस हजार तक का नफा दवाइयों पर देते हैं।

पाठकों को इतना समझ लेना चाहिए कि बीमारों को डाक्टरों के चक्कर में पड़ने की जरूरत नहीं है। यकायक दवा लेने की आवश्यकता भी नहीं। लेकिन अधिकांश मनुष्यों को इतना सब्र नहीं होता। साधारण मनुष्यों के मन में यह बात नहीं जमती कि सभी डाक्टर अविश्वासी हैं और दवा हमेशा बुरा असर करती है। इन लोगों को निम्न बातों का ख्याल रखना चाहिए—"जहाँ तक सम्भव हो सब्र करो, डाक्टरों को न बुलाओ और बुलाना ही हो तो किसी भले मानस के पास जाओ, उसकी सलाह पर चलो, दूसरे को जब वह कहे तभी बुलाओ। तुम्हारा रोग तुम्हारे डाक्टर के हाथ में नहीं है। तुम्हारी आयु होगी तो जरूर आराम हो जाओगे और तदबीर करने पर भी तुम न बचो या तुम्हारे आत्मीय न बचें तो समझना चाहिए कि यह भी जीवन का एक परिवर्तन ही है।"

प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का विकास

प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली यद्यपि है तो बहुत पुरानी लेकिन इसका आधुनिक विकास पिछले सौ वर्षों के अन्दर ही हुआ है, इसलिए यह प्रणाली प्राचीन होते हुए भी नवीन है। प्रस्तुत लेख में इसके आज तक के विकास-क्रम का सिंहावलोकन तो किया ही गया है, इसके उन्नायकों के जीवन पर भी संक्षेप में प्रकाश डाला गया है, जिससे लेख उपादेय होने के साथ साथ रोचक भी हो गया है। इसके द्वारा पाठक जानेंगे कि प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति क्या है, यह पुनरुज्जीवित किस प्रकार हुई ?––सं०

प्राकृतिक-चिकित्सा प्रणाली कोई नई प्रणाली नहीं है। इसका जन्म कम से कम हिपोक्रेटीज़ (Hippocrates)––४६० से ३७७ वर्ष ईसा के जन्म के पूर्व––के समय में हुआ था। भ्रमवश लोग हिपोक्रेटीज़ को औषधि-चिकित्सा प्रणाली का जनक मानते हैं। लेकिन सच पूछिए तो संसार में उसे जीवन पर्यन्त, प्राकृतिक नियमों के अनुसार रोगोपचार का प्रचार करते रहने के ही कारण, ख्याति मिली थी। उसीने 'उभाड़ की क्रिया' अथवा (Law of crises) का अनुसन्धान किया, जिसे भ्रमवश लोग रोग की खतरनाक अवस्था कहते हैं।

लेकिन फिर भी यह कहा जा सकता है कि आधुनिक प्राकृतिक-चिकित्सा का आन्दोलन आज से प्रायः सौ वर्ष पूर्व विनसेंज़ प्रिस्निज़ (Vincenz Priesnitz) के समय से हुआ। प्रिस्निज एक साधारण बुद्धि वाला अशिक्षित किसान था। उसने सन् १८२६ में ग्रेफ़ेनबर्ग में एक चिकित्सागृह की स्थापना की। वह एक बड़ा सूक्ष्मदर्शी और अन्तर्दृष्टि-सम्पन्न व्यक्ति था। वह पहले स्वयं अस्वस्थ रहा करता था और अपने को पुनः स्वस्थ बनाने के लिए प्रयत्नशील हो रहा था। इसी सिलसिले में उसने ठण्ढे जल में रोगों के दूर करने की अद्भुत शक्ति का अनुसन्धान किया। इसका उसने अपने स्वास्थ्य-गृह (सैनीटोरियम) के रोगियों पर भीतरी और बाहरी दोनों तरह का प्रयोग किया।

हालाँकि प्रिस्निज़ पूरी तौर से जल-चिकित्सा (Hydropathy) पर ही विश्वास करता था लेकिन उसने कई तरह के रोगों के दूर करने में आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की। उसका स्वास्थ्य-गृह रोगियों और पीड़ितों के लिए तीर्थ-स्थान बन गया, उपचार के लिए सारे संसार से लोग झुण्ड के झुण्ड वहाँ पहुँचने लगे।

अन्य कई उन्नायकों की भाँति प्रिस्निज़ को भी काफ़ी विरोध का सामना करना पड़ा। उसकी सफलता को देख कर तत्कालीन प्राचीन-पंथी चिकित्सक लोग उसके विरुद्ध हो गए। झूठी निन्दा, अपयश, उपहास, गालियाँ और यहाँ तक कि अदालत में कानूनी कार्रवाई, इन सब का बारी बारी से उसे सामना करना पड़ा। लेकिन अन्त में इस महान प्राकृतिक-चिकित्सक को अपने विरोधियों पर विजय मिली। जो सत्य है, उसका खण्डन नहीं किया जा सकता। इस उत्पीड़न से प्रिस्निज़ की कीर्ति एवं प्रतिष्ठा और बढ़ गई। इन विरोध-प्रदर्शनों ने उसके लिए एक प्रकार के विज्ञापन का ही कार्य किया।

उसने अपनी संस्था के समीप के रास्ते के एक पत्थर के खम्भे पर यह अंकित कर दिया था—"तुम्हें धैर्य धारण करना होगा।" इससे यह जाना जा सकता है कि इस असाधारण व्यक्ति की कैसी प्रतिभा और अपने कार्य में सफलीभूत होने का कितना दृढ़ विश्वास था।

इस वाक्य के द्वारा उसने अपने विरोधियों को शिष्ट शब्दों में चेतावनी दी थी। उसने यह अनुभव किया कि पुरानी बीमारियों को दूर करने का एकमात्र साधन यह है कि शरीर के भीतर की निवारक शक्ति को तीव्र बनाया जाय, जिससे वह शरीर में एकत्र हुए विषाक्त पदार्थों तथा विभिन्न प्रकार के भोजन के कारण रक्त में आ जाने वाले विष (Toxins) को बाहर निकाल दे। लेकिन यह प्रायः एक ऐसा कार्य है जिसमें अधिक समय लगता है तथा बड़ा ही परिश्रमपूर्ण है।

जल-चिकित्सा प्रणाली के जनक

उसने उभाड़ के नियम (Law of crises) का फिर से अनुसन्धान किया लेकिन उसके पश्चाद्वर्ती (आगे आने वाले अनुयायी लोग) उसको जल-चिकित्सा प्रणाली के जनक के रूप में ही स्मरण करते हैं।

जे० स्क्राथ

एक विचित्र तथा मनोरंजक बात तो यह है कि प्राकृतिक-चिकित्सा प्रणाली के दूसरे उन्नायक जोहन स्क्राथ (Johannes Schroth) का भी जन्म प्रिस्निज़ के जन्म-स्थान से कुछ ही मील की दूरी पर हुआ था। वह एक आस्ट्रियन (आस्ट्रिया निवासी) था। उसने मुख्यतः व्यक्तिगत अनुभव के ही द्वारा प्राकृतिक-चिकित्सा का ज्ञान प्राप्त किया। आरम्भ में वह केवल घायल कुत्तों तथा घोड़ों का ही उपचार करने का प्रयत्न करता, लेकिन शीघ्र ही उसने मनुष्यों का भी उसी प्रणाली से इलाज करना शुरू किया। उसकी स्थानीय कीर्ति तेजी के साथ दूर तक फैल गई। चेकोस्लोवाकिया के लिण्डेवीज नामक स्थान पर, जहाँ उसने एक स्वास्थ्य-गृह खोला था, सारे संसार के रोगी पहुँचने लगे।

प्रिस्निज़ के सम्बन्ध में जो बातें घटित हुई थीं उनका सामना स्क्राथ को भी करना पड़ा। उसके समकालीन डाक्टरों तथा चिकित्सकों ने उसका भी विरोध किया। लगभग २० वर्ष तक उसे घृणित और अनुचित गालियाँ सहनी पड़ीं। यहाँ तक कि उसे इस कार्य के लिए जेल भी जाना पड़ा। आगे चलकर सन् १८४९ में विन्टमबर्ग के ड्यूक ने हस्तक्षेप किया। ड्यूक के पैर में बुरी तरह से जख्म हो गया था और उनकी हालत नाजुक हो गई थी। उस समय के प्राचीनपंथी डाक्टर-वैद्य उसे अच्छा न कर सके। हार मान डाक्टरों ने यह सलाह दी कि अब उसके अच्छा होने का केवल यही एक उपाय रह गया है कि उसका पैर काट दिया जाय। इसके सिवाय बचने की कोई और आशा नहीं। इसपर ड्यूक ने स्क्राथ की संस्था में पहुँचाए जाने के लिए जोर दिया। वहाँ पहुँचने के कुछ ही महीने बाद वे पूरी तौर से चंगे और स्वस्थ होकर लौटे।

इसके बाद उन्होंने अपना रोग दूर होने का पूरा पूरा विवरण प्रकाशित करके समस्त आस्ट्रियन सेना में वितरित करवाया। स्क्राथ के उत्पीडकों को यह अनुभव हो गया कि उनके लिए स्क्राथ का और अधिक विरोध करना बेकार है। कुछ नए ख्याल के तथा प्रगतिशील चिकित्सकों ने तो स्क्राथ की चिकित्सा-प्रणाली का मनन तथा उसकी नकल भी करने लगे।

इधर प्रिस्निज़ नालों और झरनों के शीतल जल के प्रयोग पर निर्भर करता था, उधर स्क्राथ ने गीली पट्टी के रूप में नम गर्मी (Moist heat) के रोग-निवारक प्रभाव को महत्त्व दिया। उसने अपनी प्रणाली के सम्बन्ध में आहार-शास्त्र (Dietetic) का उपयोग किया और "स्क्राथ-चिकित्सा" (Schroth cure) निकाली।

फ़ादर नीप

स्क्राथ का समकालीन प्राकृतिक-चिकित्सक एक बवेरियन (बवेरिया निवासी) था, जिसका नाम था सेबेस्टियन नीप (Sebastian Kneipp)। वह न केवल एक महान चिकित्सक बल्कि एक शिक्षक तथा लोकसेवी भी था। ४५ साल से अधिक समय तक एक स्वास्थ्य-

गृह (Clinic) चलाता रहा, जिसमें उसने बहुत अधिक सफलता के साथ रोगियों की चिकित्सा की। उसने प्रायः हर तरह के रोगों के दूर करने में सफलता पाई।

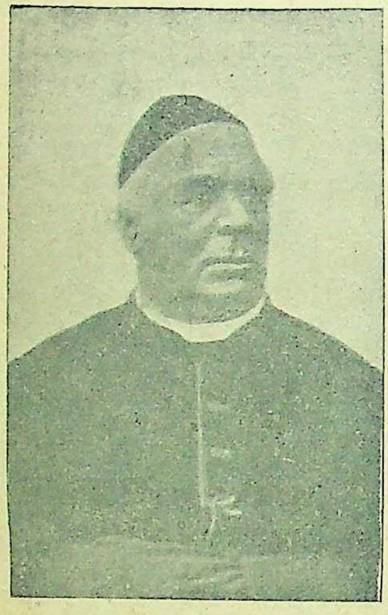

फ़ादर नीप

नीप जल-चिकित्सा का बहुत बड़ा समर्थक तथा उसे प्रयोग में लाने वाला व्यक्ति था। 'जल-चिकित्सा' नामक उसकी पुस्तक आज भी व्यापक रूप से पढ़ी जाती है। वह रोगी की बीमारी तथा शारीरिक प्रकृति (Constitution) के अनुसार विभिन्न प्रकार के तापमान के जल का प्रयोग करता था। ७५ साल की अवस्था में सन् १८९७ में उसकी मृत्यु हुई।

अरनाल्ड रिकली

विगत शताब्दी का एक दूसरा जल-चिकित्सा प्रणाली का आचार्य अरनाल्ड रिकली (Arnold Rickli) था। उसने आस्ट्रिया में क्रेन प्रान्त के टेल्डास नामक स्थान पर वायु और धूप की चिकित्सा का सेनिटोरियम स्थापित किया। यह संस्था संसार में अपने ढंग की एक थी। यहाँ पर चिकित्सा की जो पद्धति निकाली गई उसकी नकल संसार के प्रायः सभी चिकित्सकों ने की। वह वायु-चिकित्सा (Atmospheric cure) के नाम से प्रचलित है। इसका प्रयोग वे मुख्यतः कब्ज के रोगियों के इलाज के लिए करते हैं। रिकली न केवल समूचे शरीर पर वायु, प्रकाश और सूर्य के आरोग्यकारी (Therapeutic) प्रभाव का समर्थक तथा उपयोगकर्त्ता था बल्कि वह कट्टर निरामिषभोजी (मांस मछली न खाने वाला) भी था।

प्राकृतिक-चिकित्सा के नियम जिनको वह प्रचारित करता था कितने ठोस हैं, इसका वह स्वयं एक आश्चर्य-जनक उदाहरण था। उसने ९७ साल की लम्बी आयु पाई थी और मरने के समय तक वह स्वस्थ और स्फूर्तिवान बना रहा।

डा० हेनरिच लेमैन

प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली डा० हेनरिच लेमैन (Heinrich Lamann) की बहुत अधिक ऋणी है। डा० हेनरिच जर्मन थे। उन्होंने ड्रेसडेन (Dresden) में एक स्वास्थ्य-गृह स्थापित किया था। मनुष्य जो भोजन करता है उसमें स्वास्थ्य के लिए आवश्यक कौन कौन से गुण होने चाहिए?—इसके लिए दूध को माप-दण्ड (Standard) स्थापित करने वाले डा० लेमैन ही थे। आहार-विज्ञान को उन्होंने जो सबसे बड़ी सहायता पहुँचाई वह उनका स्वास्थ्य के लिए आवश्यक तत्वों (Mineral elements) से सम्पन्न प्राकृतिक भोजनों के महत्त्वों का अनुसन्धान था। लेकिन उन्होंने जो यह प्रमाणित किया कि साधारण तौर से काम में लाए जाने वाले नमक के अत्यधिक प्रयोग से क्या हानि पहुँच सकती है तथा बहुत अधिक मात्रा में शराब आदि पीना कितनी बेवकूफी की बात है, उसके लिए प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली निश्चय उनकी चिर-कृतज्ञ रहेगी।

लूई कूने

सम्भवतः प्राकृतिक-चिकित्सा के सबसे बड़े आचार्य लुई कुने थे। उनका भी जन्म जर्मनी में हुआ था।

अभी वह केवल २० साल की अवस्था के ही हो पाए थे कि उनका स्वास्थ्य बिलकुल नष्ट हो गया। डाक्टरी चिकित्सा कराकर उनके माता-पिता मर चुके थे। प्राचीनपंथी डाक्टरों के इलाज से जब वह ऊब गए तो उन्होंने प्राकृतिक-चिकित्सा की शरण ली जिसके बाद शीघ्र ही उनके स्वास्थ्य में सुधार होने लगा। इसका उनपर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि वे अब इसके भक्त बन गए। उन्होंने कई साल तक प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली का अध्ययन किया। उसके अनन्तर सन् १८८३ में उन्होंने लिपज़िग (Leipzig) में एक स्वास्थ्य-गृह खोला।

लूई कूने

वह जिन तरीकों से रोगियों का उपचार करते थे उनमें धूप-स्नान (Sun bath), वाष्प-स्नान (Steam bath), जल-स्नान (Water bath), पेड़ू-नहान (Hip bath) आदि थे। उनका यह मुख्य कथन था कि 'केवल सफाई ही रोग को दूर कर सकती है।' वह रोगी को निरामिष आहार और रोटी खाने को बताते। रोग की परीक्षा के लिए वह मुख्यतः रोगी के चेहरे और उसकी गरदन का निरीक्षण करते। The new science of healing और The science of facial expression—ये[1] दो उनकी सबसे अधिक प्रसिद्ध पुस्तकें हैं। इनमें से पहली पुस्तक का संसार की प्रायः सभी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। लूई कूने ने जो यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि सभी रोगों की जड़ एक ही है अथवा मूलरूप में सभी तरह के रोग समान हैं—यह आधुनिक प्राकृतिक-चिकित्सा की एक आधार-शिला है।

एडोल्फ़ जुस्ट

प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली के एक अन्य आचार्य एडोल्फ़ जुस्ट (Adolf Just) थे, जिन्होंने जर्मनी में हार्ज़ पर्वत (Harz Mountains) पर "जंग बॉर्न" (Jung barn) नामक सेनीटोरियम स्थापित किया था। वह "self-massage" (मालिश की क्रिया) के जन्म-दाता हैं। वे नंगे पैर चलने फिरने पर जोर देते थे ताकि पृथवी की प्राणदायक शक्तियों से शरीर का सम्पर्क कायम हो सके। उन्होंने "Return to

एडोल्फ़ जुस्ट

---

[1] इन दोनों पुस्तकों का अनुवाद हिन्दी में भी 'जल-चिकित्सा' और 'आकृति निदान' के नाम से हो गया है।

Nature" नामक अपनी पुस्तक में यह दिखाया है कि प्राकृतिक रहन-सहन (Living) के द्वारा मनुष्य किस प्रकार अपना 'कायाकल्प' कर सकता है। आपका कहना है कि केवल अनुचित रहन-सहन तथा प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन करने के ही कारण मनुष्य को रोग होते हैं। एडोल्फ़ ज़स्ट टीका लगवाने के घोर विरोधी थे।

× × ×

प्राकृतिक-चिकित्सा के इतिहास का निर्माण यूरोप में ही नहीं हुआ है। इसे आधुनिक रूप देने में अमेरिका का भी महत्त्वपूर्ण भाग रहा है। प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली के प्रथम अमेरिकन उन्नायक जेम्स सी० जैक्सन (James C. Jackson) थे। उनका जन्म सन् १८११ में हुआ था। पैंतीस साल की अवस्था में वह बीमार पड़े। अमेरिका के डाक्टरों ने रोग को असाध्य बताकर जवाब दे दिया। चारों तरफ से निराश होकर वह सीलास ओ० ग्लीसन (Silas O. Gleason)—जो प्रिस्निज़ के शिष्य थे और जिन्होंने अमेरिका में जल-चिकित्सा-गृह खोला था—की शरण में आए। वहाँ पर एक साल के भीतर ही उनकी हालत काफी सुधर गई। उसके बाद वे ग्लीसन के साझीदार बन गए। इसके साथ ही उन्होंने सिराक्यूज़ मेडिकल कालेज (Syracuse Medical College) में अध्ययन करना भी आरम्भ किया। वहाँ से उन्हें डाक्टरी करने का लाइसेंस मिला। बाद में उन्होंने डैन्सविली (Dansvilli) न्यूयार्क में 'जैक्सन सेनीटोरियम' की स्थापना की। आगे चल कर उसकी गणना अमेरिका की सर्व-प्रसिद्ध स्वास्थ्य-संस्थाओं में की जाने लगी। जैक्सन ने दवाओं का वहिष्कार करके जल, विश्राम, वैज्ञानिक व्यायाम, आहार, मानसोपचार तथा अन्य प्राकृतिक उपचारों का सहारा लिया। उनका आदर्श वाक्य था "उचित रहन-सहन के द्वारा स्वास्थ्य प्राप्त करो।" उनकी मृत्यु ८५ वर्ष की अवस्था में हुई। उनके मरने के बाद उनके पुत्र डा० जेम्स एच० जैम्सन उस सेनिटोरियम को चलाते रहे। अब हाल ही में वह संस्था अमेरिका के सुप्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक बरनर मैकफेडेन की संरक्षता में आ गई है।

बरनर मैकफ़ेडेन

डा० रसेल टी० ट्रॉल

अमेरिका के दूसरे प्राकृतिक चिकित्सा के उन्नायक डा० रसेल टी० ट्रॉल (Dr. Russel T. Trall) थे, जिन्होंने फ़्लोरेन्स, न्यूयार्क, में हाइजिनिक थेराप्यूटिक कॉलेज की स्थापना की। वह प्राकृतिक जीवन और रोगोपचार के सम्बन्ध में विश्वविख्यात पुस्तक-लेखक थे। यद्यपि उन्हें प्राचीनपंथी मेडिकल स्कूल में शिक्षा दी गई थी, लेकिन वे आगे चलकर प्राकृतिक-चिकित्सक बन गए।

डा० जे० एच० कैलॉग

अमेरिका के एक दूसरे 'महान वयोवृद्ध' प्राकृतिक चिकित्सा के आचार्य डा० जे० एच० कैलॉग (Dr. J. H. Kellog) हैं, जो मिचीगैन (Michigan) के संसार-प्रसिद्ध बैटिल क्रीक सैनिटोरियम के डाइरेक्टर हैं। जल-चिकित्सा, मालिशक्रिया, धूप-चिकित्सा आदि अनेक विषयों की पुस्तकें लिखने वाले आप दूसरे विश्वविख्यात अमेरिकन-लेखक हैं।

डा० हेनरी लिण्डल्हार

डा० हेनरी लिण्डल्हार (Dr. Henry Lindlahr) एक दूसरे अमेरिकन आचार्य हैं, जिन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली की विचारधारा और उसके कार्यों पर निर्णयात्मक प्रभाव डाला है। उन्होंने एक ऐसे सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, जिसका अनुसरण आजकल के सभी प्राकृतिक चिकित्सक करते हैं। आपका कहना था, "प्रत्येक तीव्र रोग प्रकृति की रोग-निवारण शक्ति का परिचायक है।" आपका विश्वास है कि मनुष्य को अपने जीवन में आगे चलकर जो तरह तरह की खतरनाक बीमारियों का सामना करना पड़ता है उसका मुख्य कारण यही है कि वह आरम्भ में रोगों को औषधियों और सूइयों के द्वारा दबाने का प्रयत्न करता है। उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा के सभी विविध पहलुओं में सहकारिता स्थापित करके उसे एक पूर्ण विज्ञान का रूप देने में एक असाधारण कार्य किया। चक्षुविज्ञान (Iridiagnosis) के वे जोरदार समर्थक थे। उन्होंने अपने नाम से शिकागो और एल्महर्स्ट (न्यूयार्क) में दो सेनीटोरियम खोले। Iridiagnosis और The Philosophy and Practice of Natural Therapeutic—ये उनकी दो सर्व-प्रसिद्ध पुस्तकें हैं।

हेनरी लिण्डल्हार

डा० लिण्डल्हार पहले प्राचीनपंथी डाक्टरी चिकित्सा-प्रणाली के अनुसार रोगियों की चिकित्सा करते थे। एकाएक वह स्वयं बीमार पड़ गए। बीमारी की हालत में उन्हें जो कटु अनुभव हुए उनसे वे यह समझ गए कि औषधि-विज्ञान और शल्य-शास्त्र (Surgery) उनकी सहायता पहुँचाने में कितने असफल हैं। इसके अनन्तर उन्हें चिकित्सा का एक नया मार्ग—एक नया सिद्धान्त—मिला और वह था प्राकृतिक चिकित्सा का सिद्धान्त।

डा० टिलडेन

अमेरिका के प्रायः सभी प्राकृतिक चिकित्सकों में डा० जे० एच० टिलडेन (Dr. J. H. Tilden) का स्थान सबसे ऊँचा है। आपका कहना है कि उपचार की ठीक विधि यह है कि उन आदतों को ही रोक दिया जाय जिनके कारण रोग उत्पन्न होते हैं, फिर उसके बाद रोगी को यह सिखाया जाय कि उसे स्वस्थ रहने के लिए किस प्रकार का जीवन व्यतीत करना चाहिए। डा० टिलडेन बड़े जबर्दस्त लेखक और विचारक हैं। उनकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'Impaired Health' है।

अगर यहाँ पर डा० बेनिडिक्ट लस्ट (Dr. Benedict Lust) के नाम का उल्लेख न किया जाय तो प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास अधूरा रह जायगा। डा० लस्ट आचार्य नीप के शिष्य हैं और इस समय

इङ्गलैंड के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सक स्टैनली लीफ़

अमेरिका के एक अग्रगण्य प्राकृतिक शिक्षा सम्बन्धी कालेज के प्रधान हैं। इसी प्रकार डा० डिवी (Dr. Dewey) और एलफ़्रेड डब्ल्यू मैक केन्, अमेरिका के सुप्रसिद्ध आहारशास्त्री, डा० ऐण्ड्रयू ही स्टिल, आस्टियोपैथी के जन्मदाता, और Churopractic के संस्थापक डा० डेनियल डी० पामर (Daniel D. Palmer) के नाम छोड़े नहीं जा सकते।

अगर केवल योग्यता और कार्य-सफ़लता के विचार से देखा जाय तो ऐसे कई एक अंग्रेज, अमेरिकन तथा अन्य यूरोपीय प्राकृतिक चिकित्सक हैं, जिनके नामों का यहाँ पर उल्लेख किया जाना चाहिए लेकिन इस छोटे से लेख में उन सबका परिचय देना सम्भव नहीं है। यहाँ पर प्राकृतिक चिकित्सा के विकास के क्रम का केवल सरसरी तौर पर सिंहावलोकन ही किया गया है।

⁂

लोग जीविका-उपार्जन के साधन को सीखने में वर्षों लगा देते हैं पर स्वास्थ्य की ओर जरा भी ध्यान नहीं देते। डाक्टरी पास कर लेते हैं पर स्वास्थ्य गवाँ कर। वे नहीं जानते कि वह हिम्मत और जवाँमर्दी जो हार को भी जीत में बदल देती है शारीरिक शक्ति द्वारा ही प्राप्त होती है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो भी कार्य हम करें उसे अच्छी तरह जानें, उसके हर पहलू को समझें। पर इसके साथ हम में शक्ति, शौर्य और उस दम का होना भी जरूरी है जिस से जिन्दगी की दौड़ में विजयश्री हाथ आती है।

इसकी प्राप्ति के लिए एक कार्यक्रम बनाने की आवश्यकता होती है।

मजदूर पेशा आदमी को अपने कार्य की सफलता के लिए शारीरिक शक्ति और सब्र चाहिए। पहलवान बनने के लिए इन गुणों के अलावा मजबूत इरादा। पर नेता बनने के लिए--विशेषता प्राप्त करने के लिए एक और चीज की जरूरत होती है वह है हिम्मत के साथ लड़ते रहने की ताकत। सफलता इसी अन्तिम विशेषता की चेरी है।

यदि मनुष्य परिस्थितियों से न घबराये, गुत्थियों को तुरत सुलझा सके तो उसे जीवन में एक के बाद दूसरी सफलता मिलती ही रहेगी पर ऐसे आदमी को चाहिए कि अपने में आत्मनिरीक्षण की भावना को जाग्रत करे। उसे चाहिए कि अपने बारे में प्रश्न करने की आदत डाले। इस आदत से लाभ के सिवा हानि कभी न होगी। अपनी समस्याओं का हल स्वयं निकालिए, अपने निकाले निष्कर्ष पर विश्वास कीजिए। बस यहीं से सच्ची शिक्षा का आरम्भ होता है। यह बहुत आवश्यक है कि आप अपने को जानें, पहचानें और अपने बारे में स्वयं विचार करें।

आप अपने में वह शक्ति और सब्र पैदा कीजिए जो हार जानता ही नहीं। आप एक बार गिर जायँ तो उसका यह अर्थ नहीं है कि आप हार गए। किस फौज को विजयश्री मिली है और उसके सिपाही नहीं गिरे हैं?

आप वकील हों या डाक्टर या किसी राज्य के मन्त्री ही क्यों न हों यदि आप में शारीरिक शक्ति होगी--मांसपेशियाँ दृढ़, छाती चौड़ी और आँखें स्वच्छ--तो आपका जीवन आपको अधिक प्रिय लगेगा और सफलता भी शीघ्र मिलेगी।

शारीरिक शक्ति का प्रतीक बनिए। कोशिश कीजिए कि आपका शरीर सराहनीय हो। यदि आप यह कर सकेंगे तभी आप अपनी सफलता का उपयोग भी भली प्रकार कर सकेंगे।

बापू की दिनचर्या

श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला

गांधीजी आज भी जितना काम करते हैं उसे युवक भी देखकर चकित रह जाते हैं। गांधीजी के इस अधिक काम कर सकने की शक्ति का रहस्य है, उनका अच्छा स्वास्थ्य। पर यह स्वास्थ्य उन्हें अनायास नहीं मिला है; इसके लिए वे प्रयत्नशील रहते हैं। नियमित एवं उचित भोजन, रोज टहलना, निद्रा पर अधिकार एवं प्रकृति का सहारा उनके सहज सहायक हैं।—सं०

गांधीजी की दिनचर्या व्यवस्थित है। एक-एक मिनट का उपयोग होता है। बाहर से काफी भारी डाक आती है, उसका उत्तर भेजना पड़ता है। अक्सर वह खाते-खाते भी पढ़ते हैं। कभी कभी खाते-खाते किसी को वार्तालाप के लिए भी समय दे देते हैं। घूमने का समय भी बेकार नहीं गुजरता।

गांधीजी प्रायः चार बजे उठते हैं। उठते ही हाथ-मुँह धोकर प्रार्थना होती है। इसके बाद शौचादि से निवृत्त हो सात बजे सुबह कुछ हलका-सा नाश्ता होता है। उसके बाद टहलना होता है। फिर काम में लग जाते हैं। नौ बजे के करीब तेल-मालिश कराते हैं, पर काम मालिश के समय भी चलता रहता है। फिर स्नान से निवृत्त होकर ग्यारह बजे भोजन करते हैं। एक बजे तक काम करके कुछ झपकी लेते हैं। दो बजे के करीब उठते हैं, उसके बाद फिर शौच जाते हैं। उस समय भी कुछ काम तो जारी ही रहता है। शौच

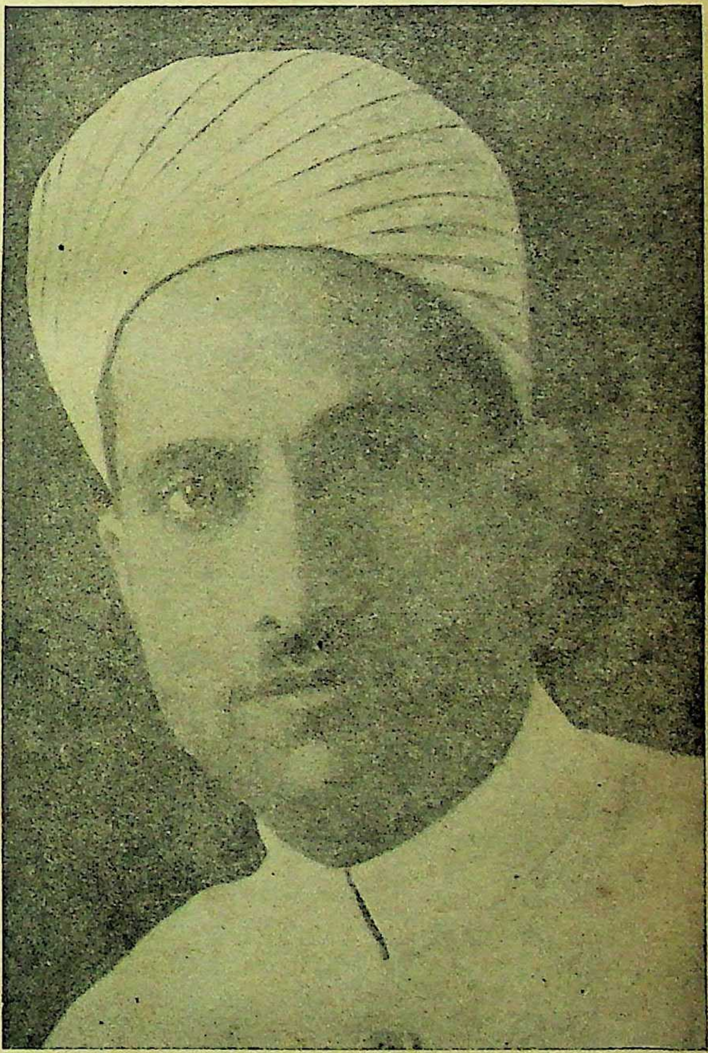

के बाद पेट पर मिट्टी की पट्टी बाँधकर कुछ विश्राम करते हैं, पर काम लेटे-लेटे भी जारी रहता है। चार बजे के करीब चर्खा कातते हैं। फिर लिखने-पढ़ने का काम होता है। पाँच के करीब शाम का ब्यालू होता है, उसके बाद टहलना, सात बजे प्रार्थना, फिर कुछ काम और नौ-साढ़े नौ बजे के करीब सो जाते हैं।

आवश्यकता होने पर रात को दो बजे भी उठ जाते हैं और काम शुरू कर देते हैं। गांधीजी का भोजन सीधा-सादा है, पर साल दो साल से हेर-फेर होते रहते हैं। एक जमाना था, जब केवल मूँगफली और गुड़ खाकर ही रहते थे। बहुत वर्षों पहले मैंने देखा था, वह दूध का बिल्कुल परित्याग करके उसके बदले में एक सौ से ज्यादा बादाम रोज खाते थे। कई वर्षों पहले एक मर्तबा यह भी देखा था कि रोटी का परित्याग करके करीब एक सौ खजूर खाते थे। इसी तरह एक जमाने में रोटी ज्यादा खाते, फल कम खाते थे। इस तरह के प्रयोग और रद्दोबदल भोजन में चलते ही रहते हैं। कुछ ही वर्षों पहले नीम की कच्ची पत्तियाँ और इमली का बड़े जोरों से प्रयोग जारी था, पर बाद में उसे छोड़ दिया। कच्चे अन्न का प्रयोग भी बीमार होकर छोड़ा।

ये सब प्रयोग हर मनुष्य के लिए अवांछनीय हैं। आजकल गांधीजी का भोजन खूब ख़रखरी सिकी, पतली रूखी रोटी, उबला हुआ साग, गुड़, लहसुन और फल है। हर चीज में थोड़ा सा सोडा डाल लेते हैं। उनकी राय है कि सोडा स्वास्थ्य के लिए अच्छी चीज है। एक दिन में पाँच से अधिक चीजें गांधीजी नहीं खाते। इस गणना में नमक भी शुमार में आ जाता है।

गांधीजी अपनी जवानी में पचास-पचास मील भी रोजाना चल चुके हैं, पर बुढ़ापे में भी इन्होंने टहलने का व्यायाम कभी नहीं छोड़ा। कभी-कभी कहते हैं कि खाना एक रोज न मिले तो न सही, नींद भी कम मिले तो चिंता नहीं, पर टहलना न मिले तो बीमारी आई समझो। पेट पर रोजमर्रा एक घंटे तक मिट्टी की पट्टी बाँधे रखते हैं, इसका भी काफी माहात्म्य बतलाते हैं।

नींद का यह हाल है कि जब चाहें तब सो सकते हैं। गांधी-अर्विन-समझौते के समय की मुझे याद है: मेरे यहाँ कुछ अंग्रेजों ने गांधीजी से मिलना निश्चय किया था। निर्धारित समय से पन्द्रह मिनट पहले गांधीजी आये। कहने लगे, "मुझे आज नींद की जरूरत है, कुछ सो लूँ।" मैंने कहा, "सोने का समय कहाँ है ? पन्द्रह मिनट तो हैं।" उन्होंने कहा, "पन्द्रह मिनट तो काफी हैं।" चट खटिया पर लेट गये और एक मिनट के भीतर ही गाढ़ निद्रा में सो गये। सबसे आश्चर्य की बात यह थी कि पन्द्रह मिनट के बाद अपने-आप ही उठ गये। मैंने एक बार कहा, "आपमें सोने की शक्ति अद्भुत है।" गांधीजी ने कहा, "जिस रोज मेरा नींद पर से काबू गया तो समझो कि मेरा शरीरपात होगा।"

गांधीजी को बीमारों की सेवा का बड़ा शौक है। यह शौक बचपन से ही है। अफ़्रीका में सेवा के लिए न उन्होंने केवल नर्स का काम किया; बल्कि एक छोटा-मोटा अस्पताल भी चलाया, यद्यपि अपनी 'हिन्द-स्वराज' नामक पोथी में एक दृष्टि से उन्होंने अस्पतालों की निन्दा भी की है। वह बीमारों की सेवा का शौक आज भी उनमें ज्यों-का-त्यों मौजूद है। वह केवल सेवा तक ही रस लेते हैं ऐसा नहीं है। चिकित्सा में भी रस लेते हैं और सीधी-सादी चीजों के प्रयोग से क्या लाभ हो सकता है, इसकी खोज बराबर जारी ही रहती है।

कोई अत्यन्त बीमार पड़ा हो और मृत्यु-शय्या पर हो, और गांधीजी से मिलना चाहता हो तो असुविधा और कष्ट बर्दाश्त करके भी रोगी से मिलने जाते हैं। मैंने कई मर्तबा उन्हें ऐसा करते देखा है और एक-दो घटनाएँ तो ऐसी भी देखी हैं कि उनके जाने से रोगियों को बेहद राहत मिली।

बहुत वर्षों की पुरानी बात है। दिल्ली की घटना है। एक मरणासन्न रोगिणी थी। रोग से संग्राम करते-करते बेचारी के शरीर का ह्रास हो चुका था। केवल साँस बाकी थी। उसने जीवन से विदाई ले ली थी। और लम्बी यात्रा करना है ऐसा मान कर राम राम करते

अपने अन्तिम दिन काट रही थी। पर गांधीजी से अभी अन्तिम आशीर्वाद लेना बाकी था। रोगिणी ने कहा, "क्या गांधीजी के दर्शन भी हो सकते हैं ? जाते-जाते अन्त में उनसे तो मिल लूँ।" गांधीजी तो दिल्ली के पास भी नहीं थे, इसलिए उनका दर्शन असम्भव था। पर मरते प्राणी की आशा पर पानी फेरना मैंने उचित नहीं समझा, इसलिए मैंने कहा, "देखेंगे, तुम्हारी इच्छा ईश्वर शायद पूरी कर देगा।"

दो ही दिन बाद मुझे सूचना मिली कि गांधीजी कानपुर से दिल्ली होते हुए अहमदाबाद जा रहे हैं। उनकी गाड़ी दिल्ली पहुँचती थी, सुबह चार बजे। अहमदाबाद की गाड़ी पाँच बजे छूट जाती थी। केवल घण्टे भर की फुरसत थी। और रुग्णा बेचारी दिल्ली से दस मील के फासले पर थी। घंटे भर में रोगी से मिलना और वापस स्टेशन आना, यह दुशवार था।

जाड़े का मौसम था। हवा तेजी से चल रही थी। मोटर गाड़ी में—उन दिनों खुली गाड़ियाँ हुआ करती थीं—गांधीजी को सवेरे-सवेरे बीस मील सफर कराना भी भयानक था। गांधीजी आ रहे हैं, इसका बेचारी रोगिणी को तो पता भी न था। उसकी तीव्र इच्छा गांधीजी के दर्शन करने की थी। पर इसमें कठिनाई प्रत्यक्ष थी। गांधीजी गाड़ी से उतरे। मैंने दबी जबान में कहा—"आप आज ठहर नहीं सकते ?" गांधीजी ने कहा—"ठहरना मुश्किल है।" मैं हताश हो गया। रोगी को कितनी निराशा होगी, यह मैं जानता था।

गांधीजी ने उथल कर पूछा—"ठहरने की क्यों पूछते हो ?" मैंने उन्हें कारण बताया। गांधीजी ने कहा— "चलो, अभी चलो।" "पर मैं आपको इस जाड़े में, ऐसी तेज हवा में, सुबह के वक्त मोटर में बैठाकर कैसे ले जा सकता हूँ ?" "इसकी चिंता छोड़ो। मुझे मोटर में बिठाओ। समय खोने से क्या लाभ ? चलो, चलो।" गांधीजी को मोटर में बैठाया। जाड़ा और ऊपर से पैनी हवा, ये बेरहमी से अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर रहे थे। सूर्योदय तो अभी हुआ भी न था। ब्राह्म-मुहूर्त की शान्ति सर्वत्र विराजमान थी। रुग्णा शय्या पर पड़ी 'राम राम' जप रही थी। गांधीजी उसकी चारपाई के पास पहुँचे।—मैंने कहा—"गांधीजी आये हैं।" उसे विश्वास न हुआ। हक्की-बक्की-सी रह गई। सकपका कर उठ-बैठने की कोशिश की; पर शक्ति कहाँ थी ? उसकी आँखों से दो बूँदें चुपचाप गिर गईं। मैंने सोचा, मैंने अपना कर्त्तव्य-पालन कर दिया।

रोगिणी की आत्मा को क्या सुख मिला, यह उस की आँखें बता रही थीं।

गांधी जी की गाड़ी तो छूट चुकी थी, इसलिए मोटर से सफर करके आगे के स्टेशन पर गाड़ी पकड़ी। गांधीजी को कष्ट तो हुआ, पर रोगी को जो शान्ति मिली, उस सन्तोष में गांधीजी को कष्ट का कोई अनुभव नहीं था।

थोड़े दिनों बाद रोगिणी ने संसार से विदा ली, पर मरने से पहले उसे गांधीजी के दर्शन हो गये, इससे उसे बेहद शान्ति थी।

हम भूखे को अन्न देते हैं, प्यासे को पानी देते हैं, उसका माहात्म्य है। रंतिदेव और उसके बाल-बच्चों ने स्वयं भूखे रहकर किस तरह भूखे को रोटी दी, इसका माहात्म्य हमारे पुराण गाते हैं। पर एक मरणासन्न प्राणी है। अन्तिम घड़ियाँ गिन रहा है। चाहता है कि एक पूज्य व्यक्ति के दर्शन कर लूँ। इस दर्शन के भूखे रोगी की भूख तृप्त होती है। उसे सन्तोष-दान मिलता है। इस दान का माहात्म्य कितना होगा ?

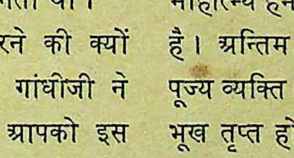

प्रकृति बनाम दवा

श्रीयुत आनन्द वर्धन

दवा के प्रयोग का कटु अनुभव अनेकों को हुआ है और वे जान गये हैं कि स्वास्थ्य बोतलों में नहीं है। बहुत ऐसे भी हैं जो डाक्टरों की पोलपट्टी समझ गये हैं और उन्हें उनकी इस चिकित्सापद्धति से घृणा हो गई है। वे अनुभव करते हैं कि डाक्टरों ने उनके स्वास्थ्य को बनाने के बदले बिगाड़ा है और नैतिक पतन की ओर पहुँचाया है। आनन्द वर्धन जी की सफल लेखनी द्वारा लिखा गया यह लेख आशा है औषधोपचार पर विश्वास करने वालों की आँख खोलेगा।——सं०

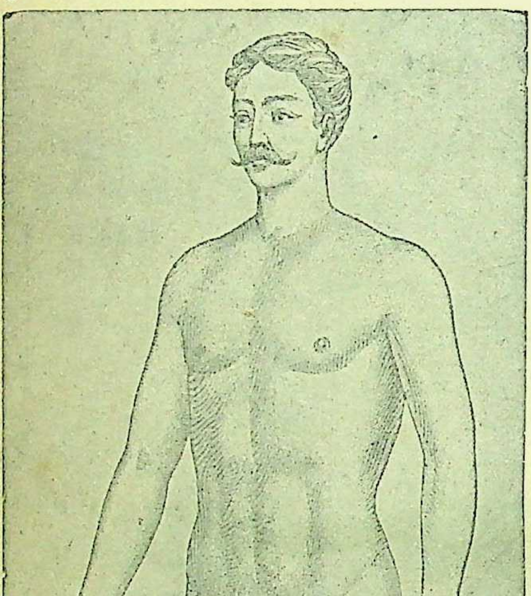

स्वाभाविक आकृति

कौन है जिसे बीमारी का कुछ न कुछ तजरबा न हो। हाँ, उसके होने के सही कारण और दूर होने के उपाय से अलबत्ता लोग बहुत दूर हैं। गलत अन्दाज लगाने और उसपर चलने चलाने वालों की तो कोई कमी नहीं है। ठंढ से बुखार, धूप से आँव, बैंगन की तरकारी से पेट में दर्द, दूध से दस्त, दही से खाँसी, ठंढे पानी के स्नान से जुकाम, जादू टोने या किसी खास पेड़ के नीचे से गुजरने से बीमारी, शनि और राहु की दशा से रोग——ऐसी अनगिनत कल्पनायें हैं उनकी, जिन्हें अपढ़ कहा जाता है।

फिर वैद्य समुदाय। वात, पित्त, कफ इन तीन तत्त्वों के सहारे शरीर की गाड़ी चलती बताता है। जहाँ किसी तत्त्व की जरा कमी बेशी हुई, रुकी गाड़ी। हकीम जी तीन में एक और जोड़ते हैं रक्त। और 'सबके गुरु गोवर्धनदास' डाक्टर साहबान हैं। जिनकी जननी एलोपैथी है। अनन्त रोग और अनन्त कारण! सबसे नई उपज है इनका 'जन्तुवाद'! हर रोग के लिए ज़िम्मेदार एक जाति के जन्तु (germs) बताते हैं। और इन जन्तुओं को मारने के लिए इतनी तरह की दवाइयों की बन्दूकें ईजाद करते जा रहे हैं कि उनकी किस्मों का कोई ठिकाना नहीं रह गया है। रोज नये नये सिद्धान्त निकलते जा रहे

हैं। पुराने डाक्टरों का अपटूडेट रहना मुश्किल हो रहा है। दवाइयाँ भी इतनी तेजी से बढ़ती जा रही हैं कि दस बरस में उनकी तादाद सैकड़ों गुना बढ़ गई है। और रोगों की किस्में भी उसी तरह। रोगों और दवाइयों में होड़ सी लगी है कि देखें कौन नम्बर मार ले जाता है। नये ज़माने ने दुनिया को जहाँ और नई नई नियामतें दी हैं वहाँ इतनी तरह के नये रोग भी दिये हैं कि जिनका पुरानी पीढ़ी को सपने तक में ख़याल न आया होगा। इनपर रोज बेशुमार पोथे लिखे जा रहे हैं। ज्यों ज्यों डाक्टरी में तरक्की हो रही है त्यों त्यों दुनिया के दर्द में भी बढ़ंती हो रही है। यही हम हैं और यही हमारा शरीर, आज के बीस बरस पहले दस बीस तरह के रोग इसमें होते थे और अब तो सैकड़ों तरह के—नित नये रोग होने लगे। और हों क्यों न, जब आदमियों की तादाद बढ़ रही है तो फिर इन रोगों की सन्तान क्यों न बढ़े। और जब इन्हें पालने-पोसने वाला एक डाक्टर नाम का अलग फ़िर्का ही खड़ा हो गया है।

दुनिया भी डाक्टरों से इतना प्रेम करती है जितना दीपक से पतंग। जरा कुछ हुआ और दौड़े डाक्टर के यहाँ। डाक्टर का नाटक नाड़ी पकड़ने से शुरू होता है। फिर जीभ निकलवाता है। तरह तरह के सवाल करता है। फेफड़े और दिल की हालत की जाँच के लिए अँगुली से छाती पीठ ठोंकता बजाता है। फिर कान में आला डालकर धड़कन सुनता है। सुन सुना और देख दिखाकर मुट्ठी गरम करता है और नुस्खा लिख कर चलता कर देता है। रोगी दो चार दिनों में सुधर गया तो अल्लाह अल्लाह खैर सल्लाह नहीं तो फिर सब सब नौबत होती है। पेशाब, पाखाना, खून, थूक सब की जाँच का काम और इनके अलग अलग दाम। नुस्खा बदला जायगा। आराम हो गया तो ठीक नहीं तो सूई खोभने (injection) की बारी आती है। इसमें काफी रकम झाड़ी जाती है। चार पैसे की दवा का चार रुपया तो इन्जेक्शन की दवा बेचने वाला लेता है और चार ही रुपये एक सूई चुभाने के डाक्टर लेता है। अगर इतने पर भी रोग न निकला—और उसे निकलना क्या था, दबना था, फिर निकलने के लिए—तो एक्सरे का प्रपंच सामने आता है। फोटो लिया जाता है, और उसके लिए काफी रुपया लिया जाता है। इसके बाद चीर फाड़ चलती है। मतलब, जो दुर्भाग्य से डाक्टर के फन्दे में पड़ गया उसकी

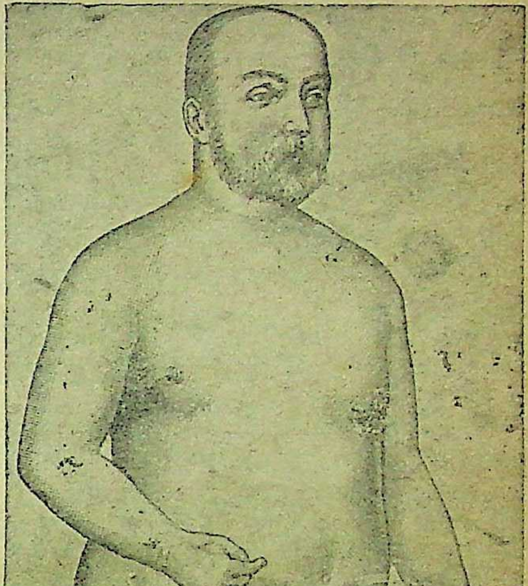

एक शरीर जिसके अंग अंग में विजातीय द्रव्य अथवा मल भरा हुआ है।

सब गति हो जाती है। इसीसे कई उठ सबेरे प्रार्थना करते हैं कि भगवान् डाक्टर और वकील से वास्ता न डालें।

मजा यह कि आप अपना रोग एक दर्जन डाक्टरों को दिखलाइए, सब की अलग अलग राय होगी और दवा भी अलग अलग। जो डाक्टरी के बड़े आचार्य माने जाते हैं उनमें भी रोगों के बारे में अनेक मतभेद हैं। इस एलोपैथी ने अपनी अब तक की जिन्दगी में बेहिसाब पैतरे बदले हैं। कल जो सिद्धान्त ठीक समझा जाता था आज वह गलत साबित हो गया। अगर विचारों की दुनिया में कोई बात गलत सही सिद्ध होती रहे तो इतना हर्ज नहीं, सपने की तरह चलते रहते हैं—पर दवा गलत सही लग गई तो आदमी के जीवन-मरण का सवाल हो जाता है। इनका तो जरा सा सिद्धान्त ही बदलता है, वहाँ हजारों युवतियाँ जन्म भर के लिए विधवा हो जाती हैं, और हजारों बच्चे बे माँ बाप के हो जाते हैं। गँवई की कहावत है 'चिरइन क जान जाय लड़िकन क खेलवार'।

जैसे वेश्यायें भाँति भाँति से कोठे और सूरत सजा कर लोगों को ठगती हैं वही बात इन डाक्टरों के लिए भी लागू पड़ती है। इतनी तरह की दवाइयाँ, इतनी तरह के औजार, ऐसी बड़ी बड़ी सजधज की इमारतें और वैसे ही सजे सजाये डाक्टर साहबान। डाक्टरी धंधा सोलह आने पेशा बन गया है। भारत में समाज के लिए यह एक अभिशाप रूप वस्तु पैदा हो गई है। धन, धर्म, स्वास्थ्य सबके लिए घातक।

यद्यपि हजारों ही वैद्य डाक्टर रोगियों का इलाज करते पाये जाते हैं पर उनमें शायद थोड़े होंगे जो अपने रोगियों से अधिक चंगे हों। वास्तव में इन्हें तो दवा देना सिखाया गया है नीरोग रहना और रखना नहीं। इन्हें निरोगिता के नियमों का पूरा पता ही नहीं रहता है। देर से सोना, देर से उठना, भूख हो न हो, पौष्टिक पदार्थ खाना, गुलछर्रे उड़ाना और पैसों के लिए परेशान रहना। कपड़े लत्तों से बदन छिपाये 'अहले बिलायत' बने फिरते हैं। मुँह साबुन से धोये और तेल पाउडर से चिकना किये रहते हैं, सोने की कमानी का चश्मा लगाये आँखों की वास्तविक दशा पर पर्दा डाले फिरते हैं।

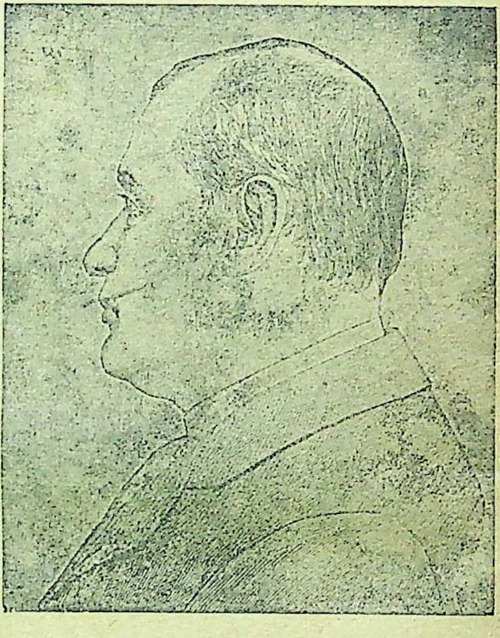

विजातीय द्रव्य से लदा एक चेहरा

अगर इनमें से एक सौ की, लँगोटी लगा कर जाँच की जाय जैसी कि फौज में भर्ती होने वालों की की जाती है तो आप देखेंगे कि सौ में पंचानवे मलजनित विकारों से लदे हैं। किसीको सामने वाला बादीपन है, किसीको बगल वाला, किसीको पीठ का और किसीको मिश्रित। एक भी स्वाभाविक आकृति वाला नजर न आवेगा। इस लेख के साथ मैं कूने के आकृति 'निदान'* से

---

* **आकृति-निदान**—प्राकृतिक-चिकित्सा की बहुत अच्छी पुस्तक है। पचासों रोगी और निरोगियों के चित्र देकर विषय समझाया गया है। **हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, काशी** से मिलती है। सजिल्द का दाम १।) है। अंग्रेजी में मूल पुस्तक Facial Expression का दाम १६) है।

एक चित्र स्वाभाविक आकृति का दे रहा हूँ। दूसरे तीन बादीपन के जिनमें दो कालर नेकटाई वाले और तीसरा नंगा है। अब आप स्वाभाविक आकृति के साथ अपने डाक्टरों के चेहरे और शरीर मिलान कर देखें कि जिन्होंने दुनिया को नीरोग करने का बीड़ा उठा रखा है उनका अपना क्या हाल है? विकृत शरीर और उसमें विकृत मस्तिष्क !

विजातीय-द्रव्य से लदा एक दूसरा चेहरा

पर सभी फिर्कों में जहाँ अधिक झूठे रहते हैं वहाँ कुछ सच्चे भी निकल आते हैं। मैंने डाक्टरी के सम्बन्ध में जो विचार बनाये हैं वह देख सुन और उन्हीं महानुभावों की राय पढ़कर बनाये हैं। आप भी उनमें से कुछ दुनिया के बड़े डाक्टरों की राय पढ़िये :—

डाक्टर मेजेन्दी—डाक्टरी महापाखण्ड है। **सर एस्टली कूपर**—एलोपैथी शास्त्र अटकल के सहारे रचा गया है। **सर जान फारब्ज**—डाक्टरों का रसायनपन मौजूद रहते भी बहुतेरे मनुष्यों का रोग प्रकृति ने ही दूर किया है। **डाक्टर बेकर**—ज्वर से जितने बीमार मरते हैं उससे कहीं अधिक उस रोग की दवा से मरते हैं। **डाक्टर फ़्राथ**—डाक्टरी से बढ़कर झूठा रोजगार दुनियां में शायद ही हो। **डाक्टर टामस वाटसन**—हम लोगों का व्यवसाय बहुत प्रश्नों के सम्बन्ध में शक और शुबहों से भरा हुआ है। **डाक्टर फाजवेल**—डाक्टरी दुनिया से उठ जाय तो मनुष्य जाति का अकथनीय लाभ हो। **डाक्टर फ़्रैंक**—हजारों आदमी दवाइयों से मारे जाते हैं। **डाक्टर मेसन गुड**—लड़ाई, महामारी और अकाल जितने आदमियों को खाते हैं, उससे कहीं ज्यादा आदमी दवाइयों की भेंट चढ़ते हैं।

आजकल की दवाओं के जन्मदाता—**हिपोक्रेट**—प्रकृति रोग मिटाती है, डाक्टर नहीं।

डा० काउल्स कहते हैं—प्रायः डाक्टर रोगों की बात जानते हैं स्वास्थ्य की नहीं।

सर फ़्रेडरिक ट्रीब्ज, एम० डी०, एफ० आर० सी० एस०, के० सी० वी० ओ०, सी० बी० सप्तम एडवर्ड के सर्जन, लंडन अस्पताल के कन्सल्टिंग सर्जन और सर्जरी के प्रोफेसर—मैं एक ऐसे युग की बाट देख रहा हूँ कि जब लोग बीमार पड़ने पर दवा खाने की विचित्र टेव छोड़ देंगे।

शेल्टन—बीमारी शरीर पर बाहरी आक्रमण नहीं है बल्कि वह तो बदली हुई शक्ल में तन्दुरुस्ती है।

एक सुविख्यात **डाक्टर कोबर्ट** का कहना है—हमें कबूल करना पड़ेगा कि दुर्भाग्यवश गलत मात्रा अथवा गलत दवाओं से हलाल होने वालों की संख्या बहुत बड़ी है।

यह हुई कुछ परदेशी डाक्टरों की बात। अब एक रिटायर्ड सिविल सर्जन स्वर्गीय रायबहादुर डाक्टर एल० एन० चौधरी की राय सुनिए—

“आखिर मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि जितनी दवाएँ दुनियां की बड़ी से बड़ी प्रयोग-शालाओं (Laboratories) में तैयार की जाती हैं वे उन दवाओं का मुकाबिला नहीं कर सकतीं जिनको प्रकृति मिट्टी से पैदा करती है। प्रकृति की इन दवाओं में मुनासिब तौर पर वे सब तत्त्व (Elements) मौजूद हैं जो शरीर को चंगा रखते हैं। सैकड़ों पेटेन्ट और दूसरी दवाएँ ऐसी हैं, जिनके बारे में जोरों से कहा जाता है कि उनके बनाने में कलॉइ-

डल केलशियम (Colloidal calcium) एक तरह का चूना और लोहा (Iron) ठीक ठीक मिकदार में मिलाए गए हैं। लेकिन ये दवाएँ बिल्कुल बेकार हैं। और उनसे बड़ा नुकसान पहुँचता है। इसलिए डाक्टरों के इन बड़े बड़े ऐलानों और दवाओं के बड़े बड़े नामों पर कुछ भी ध्यान नहीं देना चाहिए। ये डाक्टर एक तरह के सौदागर हैं जो पैसे के लिए, न कि रोगी के फायदे के लिए, सौदागरी करते हैं। इस तरह की सौदागरी की मामूली मिसाल है—मैदा और सफेद चीनी की तिजारत। यह दोनों गैर-कुदरती चीजें हैं और इनसे तन्दुरुस्ती को बहुत धक्का पहुँचता है। शरीर की बाढ़ और उसको चंगा रखने के लिए जिन विटामिन्स और खनिज-लवणों की जरूरत है वे सब आटे और गुड़ से निकाल लिए जाते हैं ताकि वे देखने में भले मालूम हों और उनकी खूब बिक्री हो। लोग भी सच्ची बात को न जानते हुए उनकी सुन्दरता को देख कर भुलावे में आ जाते हैं और यह नहीं समझते कि लवणों और विटामिन्स के निकल जाने से इन दोनों चीजों ने करोड़ों आदमियों और उनके बच्चों को भारी नुकसान पहुँचाया है। 'दवाओं से बहुत फायदा है', ऐसा ख्याल करके मैंने अपनी जिन्दगी शुरू की और 'इन दवाओं से बड़ा नुकसान पहुँचता है' ऐसा ख़याल करके मैं अपनी जिन्दगी खतम कर रहा हूँ। दवाओं से रोग दब जाता है, अच्छा नहीं होता। असल में डाक्टर का काम होना चाहिए कि वह लोगों को बीमार होने से बचावे न कि उन्हें अच्छा करे क्योंकि दवाओं से बीमारी अच्छी नहीं होती।"

तब क्या यह बिल्कुल ठगी का धंधा है? तो फिर यह हजारों आदमी डाक्टर वैद्यों की शरण में जाते क्यों हैं और इनमें बहुतेरे तो अच्छे होते भी जान पड़ते हैं? जाते क्यों हैं इसका जवाब तो यह है कि इस संसार का अधिक भाग तो सरल वृत्ति के लोगों का है। जिस किसी ने कुछ टीमटाम फैलाई उसीके जाल में फँस गए, जैसे व्याध के जाल में सीधे-सादे पंछी। ऐसों को डाक्टर वैद्य ही क्यों पीर पैगम्बर, पंडे पुजारी, ओझा सोखा, नजूमी ज्योतिषी सभी लूटते हैं। अधिक जनता बेचारी भेड़ों की तरह जिधर चल पड़ी चल पड़ी। बहुतेरे साधु संन्यासियों की तारीफ में आज कहा जाने लगा है कि उनके यहाँ बड़े बड़े जज, वकील, बैरिस्टर तक जाते हैं। और दवाइयों वाले भी ऐसे विज्ञापन निकालते हैं कि अमुक बैरिस्टर, अमुक जज का सर्टीफिकेट है कि यह दवा जादू का सा काम करती है। मानो, जब ऐसे ऐसे मूर्ख बन गये जो दुनिया को रोज मूर्ख बनाते हैं तो फिर बेचारे सीधों का क्या कहना है। सरल जनता डाक्टरों के यहाँ पढ़े लिखों और सफेद पोशों का मजमा देखती है तो वह भी उधर झुकती है। उसे क्या मालूम कि डिग्रियाँ लग जाने पर ऐसा नहीं होता कि वह औरों की अपेक्षा ज्यादा अक्लमन्दी से काम लेने लगें। पढ़े लिखों को तो और ज्यादा वहम होता है। वहम की एक मामूली सी मिसाल देने का मैं लोभ नहीं रोक सकता। इस लेख के लिखे जाने के दौरान की ही, एक खास सज्जन की बात है—नाम न लेना ही ठीक है—जो तत्त्वज्ञान पर बोलते और लिखते हैं। उन्हें मामूली बुखार आया। मजे में होशहवास से बातचीत कर रहे थे। पास बैठे वैद्य जी से कहते हैं जरा कफ देखने वाले यन्त्र से देख लीजिए कहीं कफ तो नहीं है, न्यूमोनिया का डर तो नहीं है। मैंने पूछा आपको कभी न्यूमोनिया हुआ है? बोले, कभी नहीं। मैंने सोचा था कि शायद कभी न्यूमोनिया का कष्ट भोगा होगा इससे डरते हैं। पर नहीं, मालूम हुआ सिर्फ कल्पना और वहम की वजह से घबराते हैं। भला कहिए, जब इन महात्माओं का यह हाल है तो अल्पात्मा प्राणियों की क्या हालत होगी?

अब रही हजारों के आराम होने की बात। सो क्या दुनियां में जितने बीमार पड़ते हैं सब मरने को ही पड़ते हैं? लाखों बीमार पड़ते हैं, उनमें हजारों ही डाक्टर वैद्य का मुँह देखते हैं। बाकी तो अपने आप ही अच्छे होते हैं। देहात में क्या लोग बीमार नहीं पड़ते? कहाँ हैं वहाँ डाक्टर साहब, वैद्य जी या हकीम जी? तो क्या वहाँ का मरण प्रमाण उन शहरों से—जहाँ गली

गली में इनके अड्डे बने हैं—ज्यादा है ? तब क्या सिद्ध होता है ? यही कि अधिकतर बीमार तो दवा या डाक्टर का मुँह देखे बिना ही अच्छे हो जाते हैं और अधिकांश अच्छे होने वाले दुर्भाग्य से डाक्टर का मुँह देख लेते हैं तो कुछ उलझ उलझा कर अच्छे होते हैं। और जो उनकी माया के समेटे में आ गये वह बहुत दिनों तक भोगते रहते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सक का यह कहना है कि बीमारी को शत्रु न मानकर मित्र मानो। प्रकृति उसे आपके शरीर में का कूड़ा साफ करने भेजती है। प्रकृति दयालु है इसलिए बिना किसी फीस के आपका यह काम कर देती है। स्वास्थ्य के सच्चे ज्ञान के अभाव और बवजह आपकी भूल के, खानपान, व्यायाम, विश्राम के सम्बन्ध में जीवन की अनियमितता के कारण, शरीर के भीतर जो मल-विकार (Foreign matter) पैदा हो गया है उसे निकालने के लिए ही रोग आते हैं। जब रोग मल-विकार को निकाल चुकता है, खुद भी रफूचक्कर हो जाता है। इसमें कहाँ डाक्टर की जरूरत है और कहाँ दवा की ? आप घर में कूड़ा करते हैं। मेहतर आता है सफाई कर देता है, आप कूड़े को घर के अन्दर न डालिए, बाहर के कूड़ादान में डालिए, मेहतरों को घर में घुसने की जरूरत नहीं। नाबदान—नाले मोरी—साफ रहें—गन्दा पानी निकल जाता रहे, मेहतर अन्दर क्यों आवेगा ? पर जब गलती से नाली में ऐसा कूड़ा डाल देते हैं कि पानी भी रुक जाता है तब सड़ान पैदा होती है और बेचारे मेहतर को आकर नाली में बाँस चला कर सफाई करनी पड़ती है। कितनी सफाई, कै दिन की सफाई यह सब तो आपने कितना कूड़ा नाली में डाला है इसपर निर्भर है। अगर बहुत दिनों की भठी हुई नाली है और कूड़ा सड़ सड़ कर इधर उधर नाली की दीवारों पर जमा हो गया है तो पानी निकलने भर को रास्ता मेहतर जल्दी बना सकेगा लेकिन नाली के इधर उधर का मैला साफ करने में कुछ वक्त लगेगा और आपसे वह प्रार्थना करेगा कि इस बीच आप मेहरबानी करके नाली में कोई कूड़ा न डालें, हाँ पानी डाले जाइए उससे धुलाई ही होगी। पानी तो मेहतर चाह कर डलवायेगा। कूड़ा साफ करते वक्त बदबू मामूल से ज्यादा भी उठ सकती है। क्योंकि पहले कूड़ा दबा था, धीमी धीमी बदबू आती थी, अब मेहतर छेड़ देता है, रगड़ कर साफ करता है तब ज्यादा बदबू आनी स्वाभाविक है। लेकिन यह बदबू, सफाई का पूर्व रूप है। शान्त रह कर इसे सहना चाहिए। अगर आप मेहतर को सफाई से रोक देंगे, उसके काम में बाधा देंगे तो उसका काम अधबिच में रह जायगा और फिर रोज बदबू आती रहेगी। फेनाइल डालते रहिए पर पूरी सफाई नहीं होने की। यहाँ आपका शरीर-मन्दिर—घर है और व्याधि है मेहतर। जब यह मेहतर आता है तो आप इसको डाक्टर से हटवाते हैं, वैद्य से भगवाते हैं, इसकी खबर लेने को हकीम जी को बुलवाते हैं। भले आदमियो, आपकी यह क्या रीति है, उपकारी के साथ यह व्यवहार, उसका यह अपमान। पर जहाँ प्रकृति दयालु है वहाँ वह उतनी ही कठोर भी है। जब आप उसके मेहतर को काम नहीं करने देते तो सूद समेत आगे उसका बदला चुकाना पड़ता है। स्वास्थ्य की मौज जाती रहती है। इसीसे जैसे आज स्वाभाविक आकृति के मनुष्य मिलने मुश्किल हो गये हैं वैसे ही पूर्ण स्वस्थ मनुष्य, जिनके स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क है। लोग बड़ी शेखी से कहते हैं, मुद्दतों हो गई हमें बुखार नहीं आया, पर जरा हल्के हल्के सिर में दर्द रहता है, हम बराबर काम पर जाते हैं, पर पूरा जी नहीं लगता, टहलने हम रोज जाते हैं, पर तेजी से नहीं चल सकते, खाते हम रोज हैं पर पेट बहुत साफ नहीं होता। यह आज के स्वस्थ पुरुष के लक्षण हैं। खाट पर न पड़े रहना, रोज खाये जाना, काम पर जाना, इससे आगे के स्वास्थ्य की जरूरत हमें नहीं जान पड़ती। इतना हुआ तो बस। हमें मालूम ही नहीं कि स्वास्थ्य की मौज क्या है, सच्चे स्वास्थ्य का आनन्द क्या है ? हमें भंग की तरंगों का ज्ञान है, अफीम की पिनक का पता है, शराब के सरूर को भी जानते पहचानते

हैं पर सच्चे स्वास्थ्य का जो एक ऊँचा आनन्द है उसका हमें पता नहीं। उसका पक्षियों को खूब पता है और पता है वन के भागते दौड़ते पशुओं को, और इस बुद्धि के अभिमानी आज के सभ्य जीव को उसका पता नहीं है। हाँ, छोटे छोटे स्वस्थ बच्चों को अलबत्ता उसका ज्ञान रहता है। उछल कूद, किलकारियाँ, दौड़ धूप, चेहरे पर सुर्खी, मन में उत्साह का दरिया मौजें मार रहा हो यह सच्चे स्वास्थ्य के लक्षण हैं। पर आज के तो जीवन्मुक्त को भी यह लक्षण नसीब नहीं हैं।

डाक्टर और दवा आपको यह स्वास्थ्य सपने में भी नहीं दे सकते। यह तो आप खुद ही ले सकते हैं। ऐसा स्वास्थ्य बोतल में नहीं बसता, न वैद्य जी के द्राक्षासव में और न हकीम जी के अर्क बादियान में और न होमियोपैथी की छोटी छोटी गोलियों में ही। मालूम तो यह होता है कि उस आनन्द को पाने के लिए मनुष्य नशों के फेर में पड़ता है। पर यह दारू और इससे बनी दवाएँ उस आनन्द को हरने वाली हैं बढ़ाने वाली नहीं। आप जितना दवाओं का सेवन करेंगे स्वास्थ्य के आनन्द से दूर होते जायँगे। भला विष से किसी को लाभ हुआ है। कहा करो 'विषस्य विषमौषधम्' वह तो ऐसे ही है जैसे 'शठे शाठ्यं'। गर्मी से गर्मी को जीता जा सकता है? गर्मी को ठंढक से जीतो! अगर आपको सच्चे स्वास्थ्य की चाह है तो प्रकृति का अनुसरण कीजिए। संयमी जीवन बिताइए। संयमी जीवन को जो नहीं जानते हैं वह इसे बड़ा मुश्किल मानते हैं, जैसे कूएँ में कूदना। संयमी जीवन का नाम सुनते ही लम्बी साँस लेने लगते हैं, मानों पहाड़ उठाना है। तरह तरह की कड़ुई औषधि पीना, रोज रात को चूरन की पुड़िया फाँकना और डाक्टर वैद्य से जेब कतरवाना तो आसान समझते हैं पर संयमी जीवन कठिन! संयम के मानी ही कठिन समझ लिया, मालूम नहीं कहाँ से। संयम जाता रहा इसीलिए यह हालत हो गई। सब चीज कठिन मालूम होने लगी, जैसे कमजोर-दिमाग लड़के को हर तरह की पढ़ाई। हमें किसी तरह का भी संयम कठिन मालूम होता है। अरे, दवाओं के नाम पर विषपान से भी कठिन है? शिव जी ने जो काम——हलाहल-पान——देवताओं के बड़ी आरजू मिन्नत करने पर किया था वह आप बदुरुस्ती होश हवास, बखुशी तमाम, अपनी रज़ामन्दी से किये जा रहे हैं। नतीजा यह कि शिव जी महाराज का कण्ठ ही श्याम हुआ था पर आपके तो सारे बदन और चेहरे पर यह विष झाईं फेर देता है। देखिए दर्पण में दवाओं का चेहरों पर क्या असर होता है? दवाओं के नुकसान का दिग्दर्शन मैंने थोड़े में करा दिया। आपको 'जीवन-सखा' के इस समूचे अंक में प्राकृतिक-चिकित्सा के सम्बन्ध में जानकारी कराने वाला मसाला मिलने वाला है इसलिए मेरे उसके ब्यौरे में जाने की ज़रूरत नहीं है। लिखना ही हुआ तो फिर कभी।

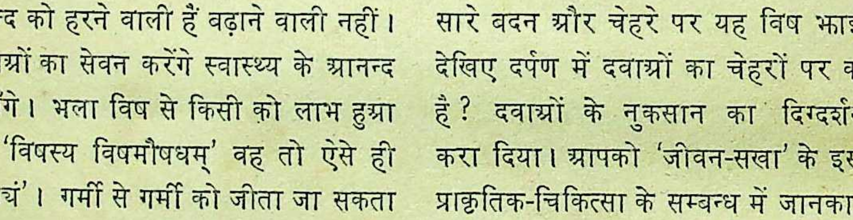

078737
कांगड़ी विश्वविद्यालय

इन्द्रिय निग्रह की समस्या

श्रीयुत बरनर मैकफेडन

'ब्रह्मचर्य ही जीवन है, वीर्यनाश ही मृत्यु है।'—वेद-वाक्य की तरह आदर पाई हुई इस उक्ति को किसने नहीं सुना? पर क्या ब्रह्मचर्य सदा के लिए? कैसे? किन परिस्थितियों में नहीं?—ये समस्याएँ ऐसी हैं जिन पर विचार होना ही चाहिए। अपने युवकों को इन समस्याओं से अलग रख कर हम उन्हें सन्मार्ग पर कभी नहीं लगा सकते। उनके मानसिक विकास को, वय-जनित भावनाओं को, सामने रख कर हमें इन बातों पर विचार करना होगा। ऐच्छिक और अनैच्छिक ब्रह्मचर्य का जो प्रभाव हमारे शरीर एवं मानस पर पड़ता है उसे भी नहीं भुलाया जा सकता। अमेरिका के प्रमुख प्राकृतिक-चिकित्सक द्वारा, अधिकतर अपने देश के युवकों एवं उनकी परिस्थितियों को सामने रख कर, लिखा गया यह लेख हमारे युवकों के भी कम काम का नहीं है।—सं०

लेखक

ऐसे बहुत से लोग हैं जिनका यह कहना है कि कोई चाहे तो वह बिना किसी प्रकार की मानसिक, नैतिक अथवा शारीरिक क्षति उठाए अनिश्चित काल तक कठोरता पूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है। कुछ गिने चुने महान व्यक्तियों का दृष्टान्त देकर इस दलील की सचाई भी प्रमाणित की जा सकती है। इसमें सन्देह नहीं कि संसार में कुछ ऐसे महापुरुष हुए हैं जिन्होंने दीर्घ काल तक कठोर ब्रह्मचर्य का पालन किया है और इसके कारण उनके मानसिक, नैतिक, अथवा शारीरिक स्वास्थ्य पर कोई बुरा असर भी नहीं पड़ा है। लेकिन साधारण जनसमुदाय अथवा समाज को दृष्टि में रख कर इस प्रश्न पर विचार करते समय हमें उन महान पुरुषों के जीवन को अपवाद के ही रूप में मानना पड़ेगा, किसी नियम अथवा सिद्धान्त के रूप में नहीं। इसलिए हम यहाँ पर औसत व्यक्ति के जीवन को लेकर ही इस प्रश्न पर विचार करेंगे।

मनुष्य के अलग अलग चरित्र-निर्माण तथा व्यक्तिगत जीवन के अनुसार इन्द्रिय निग्रह की समस्या के विभिन्न रूप हैं। कोई कोई ऐसे व्यक्ति होते हैं जो दीर्घ काल तक ब्रह्मचर्य का पालन कर सकते हैं। लेकिन दूसरी ओर बहुत से ऐसे लोग भी हैं जिनका निर्माण इस प्रकार से हुआ है कि उसके कारण यौवन-सम्बन्धी बातों की वे उपेक्षा नहीं कर सकते। इस तरह के लोग इन्द्रिय निग्रह करने में बड़ी कठिनाई महसूस करते हैं।

दूसरी ओर मनुष्य में स्वभावतः काम-तृप्ति (Sexual gratification) की इच्छा सबसे प्रबल होती है। यहाँ तक कि उसके आगे संसार अथवा जीवन की बड़ी से बड़ी चिन्ता भी नहीं ठहर पाती, और कुछ समय के ही लिए सही, उसका काम-तृप्ति की चिन्ता के आगे कोई महत्त्व नहीं जान पड़ता।

मनुष्य-जीवन में यौवन काल सबसे अधिक तूफानी और अस्थिर होता है। यही वह अवस्था है जिसमें प्रायः अविवाहित नवयुवक अपने भयानक कर्मों का बीज बोते हैं। इसका आरम्भ साधारणतः गुप्त-हरकतों से शुरू होता है। धीरे धीरे वे व्यभिचार की ओर बढ़ने लगते हैं जिसके दरमियान बहुधा उन्हें जीवन को नष्ट कर देने वाले मैथुन-जनित भयानक रोग (Venereal diseases) हो जाते हैं। लेकिन यह स्मरण रखना चाहिए कि सभी हालतों में यह बात नहीं पाई जाती। अक्सर कई लोगों को विवाह कर लेने के बाद भी अपने कर्मों का फल भोगने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

इस सामाजिक बुराई के बारे में एक बात और भी देखी जाती है। मद्य-पान और सिगरेट आदि का कामुकता अथवा व्यभिचार से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। औसत युवक आरम्भ में यह नहीं समझ सकता कि ये आदतें उसे किस ओर बहा ले जायँगी अथवा उसके स्वास्थ्य और जीवन पर इन कुप्रवृत्तियों का क्या प्रभाव पड़ेगा? यह सच है कि धूम्रपान की अपेक्षा मद्य-पान कहीं अधिक अनिष्टकारी होता है और मनुष्य को पतन की ओर ले जाने की पहली जिम्मेदारी इसी पर होती है। लेकिन सिगरेट या तम्बाकू का भी असर शराब से कम बुरा नहीं होता, क्योंकि इसके सेवन से मनुष्य की बुद्धि और उसके नैतिक विचार मन्द पड़ जाते हैं। आम तौर पर यह देखा जाता है कि जो सिगरेट पीता है वह आगे चलकर शराब भी पी सकता है। मद्य-पान की आदत डालने के समय अकसर वह यही सोचेगा कि एक या दो बार शराब पी लेने से कोई विशेष नुकसान नहीं पहुँच सकता। मुमकिन है, इस नियम के कुछ लोग अपवाद भी हों, लेकिन साधारणतः आप देखेंगे कि शराब के साथ उनका फायशा औरतों के साथ सम्बन्ध भी कायम हो जाता है।

मजा तो यह है कि इस अवस्था में पड़े हुए औसत युवक को इतना ज्ञान नहीं रहता, जिससे वह यह विचार कर सके कि वह किधर जा रहा है? इसके विपरीत वह यही सोचता है कि "अब मैं निरा बालक नहीं रहा।"

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो शराबखोर और कभी कभी अवसर विशेष पर शराब पी लेने वाले व्यक्तियों में अन्तर बताते हैं। लेकिन सच पूछिए तो उनमें अधिक से अधिक अन्तर केवल अंश या मात्रा का ही हो सकता है। अगर कोई व्यक्ति शराब पीकर ठीक तरह आचरण कर सकता है, तो इसका यह मतलब नहीं कि बड़े गम्भीर स्वभाव का है अथवा शराब का उसके आचार-व्यवहार पर कोई प्रभाव ही नहीं पड़ सकता। वैज्ञानिक प्रयोगों से यह प्रकट हो चुका है कि शराब से मनुष्य की निर्णय बुद्धि मन्द पड़ जाती है और कम से कम कुछ हद तक तो अवश्य ही उसकी मानसिक योग्यता का ह्रास हो जाता है। मनोवैज्ञानिक लोग इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं कि औसत युवक में कुछ विशिष्ट अंश तक संयम रहता है, लेकिन शराब से वह नष्ट हो जाता है।

अविवाहितों के लिए अपने हृदय में, भद्रभावनाओं और आदर्शों को स्थान देना कोई कठिन बात नहीं है। लेकिन यहाँ पर एक सबसे गम्भीर समस्या उत्पन्न होती है। वह यह कि आप पुरुष को स्त्री से अलग नहीं रख सकते। अगर किसी व्यक्ति को अच्छे आचरण वाली, सच्चरित्रा स्त्री नहीं मिलती तो उसका बुरी स्त्रियों से सोहबत हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। अब तक जो बातें कही जा चुकी हैं उनसे आप भलीभाँति यह समझ सकते हैं कि अपवाद को छोड़कर कौमार्य अथवा अविवाहित जीवन का अप्रकट अर्थ अनैतिकता अथवा गुप्तपाप ही होता है। इसलिए प्रत्येक स्वस्थ, सबल और वीर्यवान के लिए विवाह की आवश्यकता का अनुभव करना अनिवार्य है। यही वह आधार शिला है जिसपर हम

भावी जीवन की इमारत खड़ी कर सकते हैं। परिपक्व अवस्था के पूर्व विवाह करने से जो एक सबसे महत्त्वपूर्ण लाभ हो सकता है वह यह है कि विवाह के द्वारा उन कुप्रवृत्तियों अथवा दुराचरणों से अपने को आसानी के साथ बचा लेता है जिनसे अपनी रक्षा करने में अन्य साधारण युवक अथवा अविवाहित लोग असमर्थ होते हैं। अविवाहित जीवन के महत्त्व की तारीफ के सम्बन्ध में आपको बहुत सी आकर्षण युक्त और सुरुचिपूर्ण बातें सुनने को मिल सकती हैं लेकिन अधिकतर तो आप अविवाहित अथवा कौमार्य जीवन व्यतीत करने वाले युवकों को जघन्य से जघन्य नैतिक अपराध करते देखेंगे। इसमें सन्देह नहीं कि आपको ऐसे भी अविवाहित व्यक्ति देखने को मिल सकते हैं जिनका जीवन बड़ा पुनीत और ब्रह्मचर्य का है। लेकिन ऐसे लोगों की संख्या अँगुलियों पर ही गिनी जा सकती है। अधिकांश अविवाहित युवकों को तो आप इसके सर्वथा विपरीत धारा में ही बहते हुए पायेंगे।

इन्द्रिय निग्रह से सम्भावित हानि

दूसरी ओर इन्द्रिय निग्रह के सम्बन्ध में कुछ और भी कठिनाइयाँ हैं। मुमकिन है कि प्रकट रूप से इन्द्रिय निग्रह का शरीर पर कोई प्रभाव पड़ता न दीख पड़े लेकिन इस तरह का जीवन व्यतीत करने से सन्तान उत्पन्न करने की शक्ति अथवा पुरुषत्व के बने रहने की सम्भावना शायद कम ही रहेगी। इसके अलावा यह भी सम्भव है कि जनन-शक्ति (Virility) का दमन करने के फलस्वरूप साधारण शारीरिक विकास में भी बाधा पड़े और आगे चलकर वह शक्ति विनष्ट हो जाय। इसलिए साधारण मनुष्य के लिए प्राकृतिक जीवन व्यतीत करना ही सर्वोत्तम और श्रेयस्कर है। साधारण रूप से चिकित्सकों का यह विचार है कि कठोरता पूर्वक इन्द्रिय निग्रह करना घातक है। यह पुरुषत्व को कम करने वाला और किसी किसी दशा में मनुष्य को क्लीव अथवा नपुंसक बना देने वाला है।

क्या कठोरता के साथ ब्रह्मचर्य का पालन कभी कभी हानिकारक होता है? क्या इन्द्रिय निग्रह करने वाला व्यक्ति न केवल कार्य में, बल्कि विचार में भी पवित्र होता है? बहुत से लोग एक ओर तो ब्रह्मचर्य के द्वारा कार्यरूप से प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं लेकिन दूसरी ओर इसके विपरीत उनका मन केवल पुनीत विचारों को छोड़ और बाकी सभी तरह के विचारों और भावनाओं में तरंगित होता रहता है? हम इस मनोवृत्ति को 'आग से खेलना' कह सकते हैं। ऐसा करने में मनुष्य यह देखना चाहता है कि वह आग से जले बिना अपने को उसके समीप तक ला सकता है। यह एक ऐसी मनोवृत्ति है जो एक ओर तो कल्पना और वासना को उत्तेजित बनाती है और दूसरी ओर उस वासना की शारीरिक रूप से पूर्ति में पूरी तौर से बाधा डालती है। यदि मन में वासनाएँ उत्पन्न हुईं तो उनकी शारीरिक तृप्ति की भावना उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है। यद्यपि इस प्रकार की वासनाओं की तृप्ति सदैव नैतिक नहीं होती, फिर भी उनका शारीरिक महत्त्व तो होता ही है। और यदि इस स्वाभाविक शारीरिक आवश्यकता के पूर्ण होने में कोई बाधा पड़ती है तभी केवल शरीर विज्ञान और विशेषतः स्नायुविक स्वास्थ्य की दृष्टि से वह घातक होती है।

इस सम्बन्ध में सम्भवतः पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को ही अधिकतर शिकार होना पड़ता है। खास करके जिनका विवाह किसी ऐसे व्यक्ति से हुआ है जो उनके योग्य नहीं है, उन स्त्रियों के सम्बन्ध में यह बात और भी अधिक सत्य है। इस तरह के अवरोध के परिणाम केवल स्नायुओं से ही सम्बन्ध रखने वाले नहीं होते बल्कि इनका असर शरीर तथा उसके समस्त कार्यप्रणाली पर भी पड़ता है। तत्सम्बन्धी शरीर के अंगों में बार बार रक्त का जमाव होने के कारण वे दुर्बल और निष्क्रिय हो जाते हैं। इस प्रकार के मानसिक उद्वेग अथवा आत्मग्लानि के फलस्वरूप स्त्रियों को अकसर प्रमेह अथवा सफेदा रोग हो जाता है और गर्भाशय में कभी कभी भयानक जलन होने लगती है। पुरुषों में इस तरह

के रक्तसंचय के फलस्वरूप रक्तवाही शिराएँ कमजोर पड़ जाती हैं और फैल जाती हैं, ग्रंथियों में सूजन आ जाती है और वे दर्द करने लगती हैं ।

इसमें सन्देह नहीं कि अविवाहितों के लिए इस समस्या का हल बहुत सरल तथा साधारण है । इसके लिए केवल मानसिक-शुचिता की आवश्यकता है । साधारण विवाहित जीवन व्यतीत करने के अलावा इसके लिए एकमात्र ठोस उपाय यह है कि स्त्री और पुरुष दोनों अपने दैनिक जीवन का कार्यक्रम ऐसा बनावें जिससे उनमें काम-प्रवृत्ति जागृत ही न होने पावे । उन्हें चाहिए कि वे ऐसे व्यक्तियों के सम्पर्क अथवा वातावरण में अपने को न डालें जिनसे उनकी सुप्त-काम-प्रवृत्तियों के जागरित हो उठने की सम्भावना हो । उन्हें चाहिए कि वे अपनी उन प्रवृत्तियों अथवा भावनाओं को निद्रित अवस्था में ही पड़ी रहने दें, फिर वे उनका कुछ भी न बिगाड़ सकेंगी । अतः बहुत से लोगों के सम्बन्ध में जो न्द्रिय-निग्रह घातक सिद्ध होता है उसका सबसे प्रमुख कारण उनकी ऊपर बताई गई द्वैध मनोवृत्ति ही हुआ करती है । काम की प्रवृत्ति के दमन करने के दो सम्भावित अर्थ हो सकते हैं—(१) इच्छाओं का दमन करना अर्थात् कामोत्तेजना उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों, सम्पर्कों अथवा प्रभावों से अपने को बचाते हुए अपनी प्रसुप्त काम-प्रवृत्ति को बनाए रखना, और (२) मन में जागरित हुई काम-वासना का दमन करना, जो बड़ा ही कठिन और स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक भी है ।

अविवाहित अवस्था में सम्भवतः काम-वासना रहित (Sexless) जीवन व्यतीत करना ही पसन्द किया जाता है । लेकिन अगर कोई ऐसा मन, वचन और कार्य से करे तो शायद उसका पुरुषत्व क्षीण होने की सम्भावना ही न होगी, बल्कि इसके विपरीत, काम-शक्ति के अन्य विचारों और कार्यों में लग जाने पर वह अपने में अधिकाधिक शक्ति का अनुभव करेगा । लेकिन अगर कोई विवाहित पुरुष उस स्त्री के, जिसके प्रति उसके हृदय में अगाध और प्रबल प्रेम है और जिसके साथ वह स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार अपनी कामेच्छाओं की पूर्ति की स्वाभाविक इच्छा रखता है, निकट सम्पर्क में रहते हुए भी किन्हीं आदर्श विचारों अथवा भावनाओं से प्रेरित होकर अथवा अन्य कारणों से कठोरता पूर्वक इन्द्रिय-निग्रह करने का निश्चय करता है तो उसपर इसका बुरा असर पड़ कर ही रहेगा और वह अपनी शक्ति में ह्रास होता देखेगा ।

इसलिए अगर कोई व्यक्ति अपनी स्वाभाविक मनोवृत्तियों का अनुगमन करता है और बीस अथवा तीस साल की अवस्था के अन्दर शादी कर विवाहित जीवन व्यतीत करने लगता है तो उसका मानसिक और शारीरिक विकास होगा । और यह निश्चय है कि आजीवन अविवाहित रहकर अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का विरोध करते रहने की अपेक्षा वह अपने को अधिक शक्तिशाली, स्वस्थ, उत्साहयुक्त और क्षमताशील पायेगा ।

इस सम्बन्ध के विविध मतों अथवा सिद्धान्तों के प्रति आप व्यक्तिगत रूप से चाहे जो कुछ भी विचार रक्खें, लेकिन यह कहा जा सकता है कि शारीरिक थकावट कमजोरी, या असाधारण मानसिक परिश्रम करने पर भूल कर भी सहवास नहीं करना चाहिए ।

इन्द्रिय-निग्रह के प्रश्न पर व्यावहारिक दृष्टिकोण से विचार करते हुए यह कहा जा सकता है कि यह केवल शादी होने के समय तक ही लाभदायक हो सकता है ।

विटामिन की कहानी

डा० सरदार जसवन्तसिंह, एम० ए०, बी० एस-सी०, एन० डी० (लन्दन)

विटामिन की खोज ने चिकित्सा-क्रम में एक क्रान्ति पैदा कर दी है। इसके कारण अब एलोपैथिक डाक्टर भी प्राकृतिक-भोजन के महत्त्व को पहचानने लगे हैं फिर भी व्यवसाय प्रधान उनकी बुद्धि विटामिनों को बोतलों में बन्द करके मँहगे दामों बेचने से बाज नहीं आती। इस लेख में बिना डाक्टरों के नुस्खों के मँहगे दाम चुकाए, सभी विटामिन सरलता पूर्वक प्राप्त करने के उपाय तो मिलेंगे ही यह भी पता लगेगा कि किस विटामिन के अभाव में कौन से रोग पैदा हो जाते हैं। विद्वान एवं अनुभवी लेखक के इस खोजपूर्ण लेख से आशा है पाठक लाभान्वित होंगे।—सं०

जीवन-तत्वों (विटामिन) के सम्बन्ध में लोगों की दिलचस्पी आए दिन बढ़ती जा रही है। सचमुच यह एक ऐसा विषय भी है जिसपर हम सभी को बड़ी गम्भीरता के साथ विचार करना चाहिए, क्योंकि इसका हमारी व्यक्तिगत भलाई तथा सामूहिक रूप से मनुष्य-जाति की भलाई से गहरा सम्बन्ध है।

लेखक

मनुष्य के शारीरिक अवयव, तथा इन्द्रियाँ किसी खास रासायनिक पदार्थ से बने हैं। इन अवयवों तथा इन्द्रियों के बने रहने, शक्ति प्राप्त करने तथा उत्तम ढंग से अपने कार्य करते रहने के लिए यह बहुत जरूरी है कि इन अवयवों तथा इन्द्रियों को वही पदार्थ या कम से कम उनसे बहुत कुछ मिलते-जुलते रासायनिक भोजन पहुँचाये जायँ। ये रासायनिक पदार्थ हमारे भोजन में रहते हैं और हम चाहे "खाते हैं जीने के लिए" या "जीते हैं खाने के लिए", लेकिन इन दोनों में से प्रत्येक हालत में हमारी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि हम जो भोजन करते हैं उसमें किस हद तक ये रासायनिक पदार्थ मौजूद हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इस दिशा में हमारी सफलता विभिन्न प्रकार के भोजनों में पाए जाने वाले रासायनिक पदार्थों की मात्रा अथवा गुण पर निर्भर करती है।

ये रासायनिक पदार्थ इस प्रकार हैं—(१) नत्रजन-प्रधान भोज्य-पदार्थ (Nitrogen containing food-stuff); (२) श्वेतसार (Starchy) और शर्करा (Sugary) प्रधान भोज्य-पदार्थ; (३) चिकनई (Fats); (४) खनिज लवण (Mineral salts); और (५) जल। ये सभी वास्तविक अर्थ में हमारे लिए खाद्य-पदार्थ हैं और ये समान रूप से अविभाज्य हैं अर्थात् इनका हमारे शरीर से घनिष्ट सम्बन्ध है। जीवन-तत्वों अथवा विटामिनों का अनुसन्धान होने के पूर्व लोगों का यह विश्वास था कि हमारे जीवन के लिए आवश्यक यही पाँचों प्रकार के खाद्यपदार्थ हैं।

इस विश्वास को हृदय में जमाकर कार्य करते हुए वैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार के भोज्य-पदार्थों का विश्ले-

षण किया और यह पता लगाया कि उनमें किन किन अंशों में प्रोटीन, चिकनई आदि हैं। इन भोज्य-पदार्थों के तत्वों की सहायता से उन वैज्ञानिकों ने कृत्रिम अथवा बनावटी भोज्य-पदार्थ तैयार किये। इस प्रकार सन् १८८१ में लूनिन नामक एक वैज्ञानिक ने आवश्यक तत्वों को मिलाकर एक प्रकार का बनावटी दूध तैयार किया। यह दूध हर तरह से देखने में प्राकृतिक दूध के ही समान जान पड़ता था और इसमें चिकनई प्रोटीन आदि सभी पदार्थ दूध के ही समान ठीक ठीक अंशों में मौजूद थे; लेकिन प्रयोग के लिए जब लूनिन ने इस बनावटी दूध पर चूहों को रक्खा तो उसने देखा कि वे चूहे एक महीने के अन्दर ही मर गए, हालाँकि उन चूहों को जब प्राकृतिक दूध पर रक्खा गया था तो वे अच्छी हालत में थे। लूनिन ने इस प्रयोग की कई बार आजमाइश की लेकिन हर बार इसका एक ही नतीजा निकला। अन्त में इस प्रयोग के द्वारा लूनिन जिस नतीजे पर पहुँचा वह इस प्रकार है, "जब चूहों को उपयुक्त भोजन (उदाहरण के लिए दूध) दिया जाता है तो वे बिलकुल अच्छी हालत में रहते हैं, लेकिन जब उन्हें, जैसा कि ऊपर के प्रयोग से प्रकट होता है, प्रोटीन, चिकनई, श्वेतसार, लवण, और जल के द्वारा तैयार किए गए बनावटी दूध पर रक्खा जाता है तो वे मर जाते हैं। इससे यह तात्पर्य निकलता है कि शरीर के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक अन्य पोषक पदार्थों का भी दूध में रहना निहायत जरूरी है।"

ऊपर जिस प्रयोग का उल्लेख किया गया है, उसके किए जाने के कई साल पहले डाक्टरों को स्कर्वी (Scurvy) नामक एक रोग के मरीज देखने को मिल रहे थे। कुछ डाक्टरों को यह भी अनुभव हुआ कि अगर साधारण आहार में ताजी सब्जियों और ताजे फलों के रस को भी स्थान दिया जाय तो उससे स्कर्वी रोग से बचाया जा सकता है। सन् १७५७ में डाक्टर लिण्ड ने, जो हैसलर के जहाजी अस्पताल के डाक्टर थे, इस सम्बन्ध में कुछ और जानकारी प्राप्त की। उन्होंने बताया कि नीबू के रस में स्कर्वी रोग दूर करने वाले तत्व काफी मात्रा में मौजूद रहते हैं, और इसके कारण यह समझा जाता है कि दूर तक जहाजरानी करने के समय इसे साथ में रखना बड़ा लाभदायक है, तो दूसरी ओर यह भी देखा गया है कि जहाज में सुखा कर रक्खे गए पालक (Spinach) से कोई लाभ नहीं पहुँचता। इस शाक को सुखा देने से इसके प्राकृतिक रस नष्ट हो जाते हैं, और अगर कोई चाहे कि इस शाक को नमी में रखकर इसे प्राप्त कर लेगा तो वह सम्भव नहीं हो सकता। सन् १७७६ में कैप्टेन कुक ने लन्दन की रायल सोसाइटी के सम्मुख अपना एक लेख पढ़कर सुनाया जिसमें उन्होंने विस्तार के साथ यह बताया था कि स्कर्वी रोग से बचाव के लिए उन्होंने किन तरीकों से काम लिया था और उन्हें कहाँ तक सफलता मिली थी। उन्होंने बताया कि स्कर्वी रोग उस हालत में होता है जब कि हमारे भोजन में उन तत्वों का अभाव होता है जिनका मौजूद रहना हमारे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। उन्होंने यह भी बताया कि यह आवश्यक तत्व ताजी साग-भाजियों और फलों में मौजूद रहता है और यह कि अगर आहार में इसकी कमी या अभाव हो तो कोई मनुष्य साधारणतः स्वस्थ नहीं रह सकता। लेकिन कैप्टेन कुक ने जिस बात का पता लगाया था उसका अनुभव लोगों को होने में कई साल लग गए। स्कर्वी रोग से बचाव के लिए नीबू के रस की उपयोगिता मालूम हो जाने के बावजूद भी स्कर्वी रोग समुद्री माझियों के लिए भयानक खतरा बना रहा। बताया जाता है कि सन् १७८९ में ब्रिटिश चैनेल-जहाजी बेड़े के कम से कम २४०० माझी इस रोग से पीड़ित थे। और इस बात में भी सन्देह करने की कम गुंजाइश है कि समुद्री लड़ाइयों, जहाज-दुर्घटनाओं तथा माझियों के जीवन में आने वाली अन्य सभी आपदाओं के कारण उनकी जो मृत्यु संख्या होती है उसकी अपेक्षा स्कर्वी रोग से मरने वाले माझियों की संख्या कहीं अधिक थी!

जापानी नौसेना में बहुत समय से बेरी-बेरी नामक रोग का प्रकोप होता रहा है। यह रोग न केवल जापानी नौसेना के लोगों में, बल्कि स्वतः जापान में तथा मलाया

अन्तरीप, डंच ईस्ट इण्डीज, फिलीपाइन द्वीप समूह, तथा पूर्व के अन्य देशों में भी फैला हुआ था। आप देखेंगे कि उन देशों में ऐसे लोगों की आबादी है जिनका भोजन मुख्य रूप से चावल या भात है। जापानी नौसेना के लोगों को अधिकांश रूप से भोजन के लिए चावल ही दिया जाता था और अन्य देशों की भाँति जापान में भी काफी देर तक चावल को मिलों में कूटने-छाँटने का रिवाज है। मिलों में चावल के कूटे जाने के समय भूसी के साथ साथ उसके ऊपर का लाल छिलका भी दूर हो जाता है। इस प्रकार मिलों में साफ किए गए चावल से बेरी-बेरी रोग के सम्वन्ध में सन् १८९७ में पहली बार इजक मैन नामक एक डाक्टर का ध्यान आकर्षित हुआ, जो जावा के जेल में कैद था। उसने देखा कि कैदियों के द्वारा बाहर फेंक दिए गए जूठन को जो मुर्गियाँ खाती थीं उन्हें भी एक ऐसे रोग का सामना करना पड़ रहा था जो मनुष्य को होने वाले बेरी-बेरी रोग के ही समान था। लेकिन आश्चर्य की बात तो यह थी कि अगर उन चिड़ियों को ऐसा चावल खाने को मिलता जिन्हें मिलों में साफ और उन पर पालिश नहीं किया गया था, तो वे पूरी तौर से अच्छी हालत में रहतीं। इससे यह प्रकट हो गया कि चावल के दाने में कोई हानि पहुँचाने वाली बात नहीं। और अगर उन पर मिल में पालिश नहीं की गई है तो चिड़ियाँ चाहे कितना भी चावल खायँ लेकिन उसके कारण उन पर कोई बुरा असर नहीं पड़ सकता। सन् १९०६ में इजकमैन ने यह निष्कर्ष निकाला कि मुर्गियों को होने वाला यह रोग सचमुच बेरी-बेरी का ही एक रूप है और यह मुर्गियों तथा मनुष्यों दोनों को इस तत्व के अभाव के कारण होता है जो कि चावल के मिलों में साफ करते समय दूर कर दिए जाते हैं। वह इस निष्कर्ष पर भी पहुँचा कि यह आवश्यक तत्व प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, चिकनई अथवा कोई खनिज लवण नहीं है।

अब हम ऊपर दी गई दलीलों को साथ रखकर विचार करेंगे। लूनिन का चूहों को बनावटी तथा असली दूध पिलाने के प्रयोग, कैप्टेन कुक का स्कर्वी रोग सम्बन्धी अनुभव, और इजकमैन का पालिश किए हुए चावल का जापानी कैदियों तथा मुर्गियों पर पड़े प्रभाव, ये सभी इस बात को प्रकट करते हैं कि मनुष्य को अगर स्वस्थ रहना है तो उसके भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, चिकनाई, खनिज लवण तथा जल के अलावा कुछ अन्य आवश्यक तत्वों का रहना बहुत जरूरी है। मोटर के इंजन को अगर अधिक चलना है तो उसके लिए काफी मात्रा में पेट्रोल की जरूरत है, लेकिन इसके साथ उसकी मशीनों में चिकनाहट पैदा करने तथा सहूलियत के साथ चलने के लिए मोबिल आयल की भी जरूरत है। पेट्रोल की अपेक्षा मोबिल आयल की उसे बहुत ही कम मात्रा में आवश्यकता होती है, लेकिन इसके साथ ही उसकी आवश्यकता तो होती ही है। ऐसा नहीं हो सकता कि चूँकि मोबिल आयल की कम जरूरत होती है इसलिए उसकी उपेक्षा कर दी जाय और उसके बगैर काम चला लिया जाय। पेट्रोल की अपेक्षा मोबिल आयल बहुत कम खर्च होता है लेकिन तब भी ऐसा कौन मोटर ड्राइवर होगा जो इस बात को न जानता हो कि अगर वह मशीनों में मोबिल आयल डालना भूल जाय तो पेट्रोल भरे रहने पर भी उसकी मोटर दूर तक न जा सकेगी। हम इन तत्वों की, जो ताजी शाक-भाजियों और फलों, बगैर पालिश किए चावल में थोड़ी मात्रा में मौजूद रहते हैं, उस "आयल" से तुलना कर सकते हैं जिसकी मनुष्य रूपी मशीन को पेट्रोल रूपी खुराक के अलावा जरूरत पड़ती है। शरीर रूपी इंजन के लिए इस "आयल" का अभाव होने पर उसके 'कल-पुरजे' मोटर के कल-पुरजों की ही भाँति खराब हो जाते हैं और काम नहीं दे सकते। मनुष्य रूपी इंजन को दुरुस्त रखने के लिए "आयल" के रूप में जिस वस्तु की जरूरत होती है उसीको हम विटामिन कहते हैं।

विटामिन शब्द की उत्पत्ति

विटामिन शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'विटा' से

हुई है जिसका अर्थ है जीवन। इस प्रकार हम विटामिन युक्त भोज्य-पदार्थों को जीवन अथवा जीवन-तत्व कह सकते हैं। जिन भोजनों में विटामिन नहीं हैं वे निर्जीव हैं। निर्जीव अथवा प्राणहीन, आहार के लिए जीवन-शक्ति प्रदान करना सम्भव नहीं हो सकता। अगर आहार में विटामिन का अभाव है तो मनुष्य काफी मात्रा में भोजन करने पर भी भूखों मर सकता है। फिर भी ऐसे हजारों-लाखों व्यक्ति आपको मिलेंगे जो इस बात पर आश्चर्य प्रकट करते हैं कि इस प्रकार से काफी खर्चीला भोजन करने पर भी उन्हें उससे आवश्यक बल, प्राणशक्ति और जीवन प्राप्त करने में असफलता क्यों होती है? उनका खर्चीला भोजन ऐसा कर सकने में समर्थ क्यों नहीं होता?

अब तक विटामिन के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों द्वारा लाखों प्रयोग किए जा चुके हैं और उन सब से प्रकट हुआ है कि कम से कम १५ प्रकार के विटामिन होते हैं। यद्यपि उनकी मौजूदगी निश्चित रूप से प्रमाणित हो चुकी थी, लेकिन चूँकि वे अज्ञात पदार्थ बने हुए थे, इसलिए वैज्ञानिकों ने उनका नाम विटामिन (ए), विटामिन (बी) आदि रक्खा, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि बीजगणित में हम अज्ञात वस्तुओं को, जिन्हें हमें मालूम करना होता है, अ, ब, स आदि मान लेते हैं। बाद में जो अनुसन्धान हुए हैं, उनसे यह कभी-कभी मालूम हुआ है कि जिस पदार्थ के बारे में आरम्भ में हम यह विश्वास करते थे कि उसमें केवल एक ही विटामिन है, उसमें वस्तुतः २ या ३ तरह के विटामिन होते हैं। इस तरह के मामले में विभिन्न विटामिनों का प्रारम्भिक विटामिन के नाम के अनुसार नामकरण हुआ है, जैसे विटामिन बी$_1$, बी$_2$, बी$_3$ इत्यादि।

विभिन्न प्रकार के विटामिनों में भिन्न भिन्न गुण पाए गए हैं। यहाँ पर हम सभी १५ विटामिनों का उल्लेख न करके केवल कुछ महत्त्वपूर्ण विटामिनों का उल्लेख करेंगे।

विटामिनों के सम्बन्ध में आप सभी बातें एक दृष्टि डाल कर ही जान लें, इसके लिए मैंने तालिका[1] तैयार कर दी है। इसमें विटामिनों के सम्बन्ध में अब तक जानी गई सभी बातों का बड़ी सरलता पूर्वक उल्लेख किया गया है।

इस तालिका के दूसरे कालम से आपको यह पता चलेगा कि किस विटामिन का अभाव होने से किस तरह के रोग मैदा हो सकते हैं। इसके तीसरे कालम में उन भोज्य-पदार्थों की सूची दी गई है जिनमें कई विशिष्ट विटामिन पाए जाते हैं। इनकी हमारे लिए क्या उपयोगिता है यह एक उदाहरण से स्पष्ट हो जायगा। मान लीजिए कोई आदमी पायरिया (Pyorrhoea) तथा अन्य प्रकार के दाँत के रोगों से पीड़ित हो रहा है। इस तालिका के दूसरे कालम से आपको यह मालूम हो जायगा कि यह रोग भोजन में विटामिन (सी) का अभाव होने पर पैदा होता है। इसके बाद इस तालिका के तीसरे कालम को देखते हैं। इसके द्वारा आपको पता चलता है कि किन-किन पदार्थों में विटामिन सी अधिक मात्रा में पाया जाता है। अगर आप दाँत का कष्ट भोगने वाले उस व्यक्ति को ये चीजें खाने को दें तो इससे उसका कष्ट दूर हो जायगा। इसी प्रकार अन्य प्रकार की बीमारियों के सम्बन्ध में इस तालिका से लाभ उठाया जा सकता है। इसके अलावा आप इस तालिका के अनुसार अपना भोजन इस प्रकार से निर्धारित कर सकते हैं कि आपके आहार में विटामिनों का न तो अभाव हो और न उन कष्टों को ही भोगने की आशंका पैदा हो जो विटामिनों के अभाव के कारण उत्पन्न होते हैं।

विभिन्न प्रकार के विटामिनों की पहचान के लिए एक बात याद कर लीजिए। विटामिन (ए) और (डी) चिकनाई में गलनशील (Soluble) होते हैं इसलिए ये उन पदार्थों में—जैसे दूध, काडलीवर आयल और उन

---

[1] तालिका इस लेख के अन्त में दी गई है।

साग-भाजी तथा फलों में पाए जाते हैं जिनमें चिकनाई अधिक होती है। विटामिन बी अथवा एफ और एफ$_2$ अथवा सी पानी में गलनशील होते हैं। इसके अनुसार ये उन चीजों में पाए जाते हैं जिनमें पानी की अधिकता होती है जैसे रसदार फल शन्तरा, सेब, नाशपाती, टमाटर, आलू आदि।

यह जान लेना आवश्यक है कि किस हद तक विटामिन पकाए जाने, खुली हवा में न रक्खे जाने तथा अन्य पदार्थों में मिलाने पर खराब नहीं हो सकते। विटामिन ए पकाए जाने, हवा में न रखे जाने से साधारणतः खराब नहीं होता। इसलिए किसी विटामिन ए प्रधान पदार्थ को देर तक आग पर रख कर पकाएँ तो उसका जीवन-तत्व नष्ट न होगा। इसी तरह ढँक कर रखने से भी विटामिन ए नष्ट हो जाने की सम्भावना नहीं है।

दूसरी ओर विटामिन बी या एफ यद्यपि सुखाए जाने पर कायम भी रह सकता है, लेकिन गर्मी से वह बहुत जल्द नष्ट हो जाता है। इसलिए विटामिन बी की रक्षा के लिए उस पदार्थ को जहाँ तक सम्भव हो सके कम समय तक आँच पर रख कर पकाना चाहिए। विटामिन बी$_2$ बहुत अधिक आँच सहन कर सकता है इसलिए पकाए जाने पर भी यह नष्ट नहीं हो सकता।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि विटामिन सी बहुत ही अधिक नष्ट हो जाने वाला है। इसे क्षार विशिष्ट पदार्थ (Alkalies) से मिलाने, सुखाने या उबालने पर यह नष्ट हो जाता है। इसलिए पकाने से आपके भोजन में यह नष्ट हो जाता है। इसे बगैर पकाए ही खाना चाहिए। जिन साग-भाजियों या फलों में विटामिन सी हो, उन्हें आप कच्चा ही इस्तेमाल कीजिए।

विटामिन डी, सम्भवतः अपनी चिकनाई के कारण धूप को काफी बरदाश्त कर सकता है। पकाने का इस पर कोई बुरा असर नहीं पड़ता। लेकिन अगर आप इसे अधिक समय तक किसी स्थान में बन्द करके रक्खें तो धीरे धीरे यह नष्ट हो जाता है।

विटामिन ई अधिक समय तक ठहरने वाला है, इस पर हवा, क्षार-विशिष्ट पदार्थ, खटाई धूप अथवा आँच का कोई असर नहीं पड़ता। इसलिए पकाए जाने पर भी यह नष्ट नहीं होता। लेकिन सड़न पैदा होते ही यह बहुत जल्द नष्ट हो जाता है। सच बात तो यह है कि अगर चिकनाई, जिसमें यह विटामिन पाया जाता है, कुछ भी बासी हुआ और उसमें महक आ गई तो यह नष्ट हो जायगा। यह देखा गया है कि जिस भोजन में लौह-लवण होता है वह भी इस विटामिन को नष्ट कर देता है।

संसार में सम्भवतः विटामिन ही ऐसे पदार्थ हैं जिन्हें बाँधकर रखना अथवा पैकेट में बन्द करना सबसे कठिन है। विटामिन पैदा करने के लिए सबसे अच्छा उपाय यही है कि हम विटामिन प्रधान पदार्थों का सेवन करें। लेकिन कुछ बीमारियों में विटामिनों की, अपेक्षा से अधिक जरूरत होती है। इन हालतों में विटामिन ए के लिए कैरोटीन (Carotene) का इस्तेमाल कीजिए। इसी तरह विटामिन बी के लिए सविता (Savita) या मारमाइट (Marmite)। विटामिन डी के लिए (Viosterol) अथवा (Calciferol) और विटामिन ई के लिए (Wheat-germ oil) या इसके सत्त को लेना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि आरोग्य-विज्ञान में इस तरह के विटामिन-सत्वों का अपने विशिष्ट गुणों के कारण एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। लेकिन इसके बावजूद यह नहीं भूलना चाहिए कि इनके गुण सीमित हैं। **हाल ही में आहार-शास्त्र सम्बन्धी कई एक प्रयोग किए गए हैं और उन सबसे यह प्रकट हुआ है कि विटामिन के अभाव के कारण शरीर में उत्पन्न हुई किसी खराबी को दूर करने के लिये सबसे उत्तम उपाय यही है कि विटामिनसत्वों का सेवन करने के बजाय प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले विटामिन प्रधान पदार्थों को अपने भोजन में स्थान देकर अपने आहार को ही पूरी तौर से बदल दिया जाय।** यह बात भी ध्यान में रखना चाहिए कि एक ओर जब कि इन पाँचों विटामिनों—विटामिन

ए, बी$_{१}$, बी$_{२}$, सी और ई—को किसी भी मात्रा में ग्रहण किए जाने पर भी मनुष्य की पाचन-प्रणाली बड़ी आसानी और सही-सलामती के साथ लाभ उठा सकती है, तो दूसरी ओर अगर कोई व्यक्ति बहुत अधिक मात्रा में विटामिन डी खाय तो उसका भयानक असर उसकी संचालन-प्रणाली पर पड़े बिना न रहेगा। इसलिए (Viosterol) अथवा (Calciferol) या व्यापारिक दृष्टि से तैयार करके बाजारों में बेचे जाने वाले सभी पदार्थों का व्यवहार करते समय सावधानी रखने की जरूरत है, क्योंकि विटामिन डी प्रदान करने वाले इनमें से कोई भी पदार्थ ऐसे नहीं हैं जो अधिक मात्रा में सेवन किए जाने पर आपके शरीर पर कोई बुरा असर न पड़ने दें। इसके विपरीत आप धूप का सेवन करके सीधे प्रकृति के द्वारा विटामिन डी का पूरा पूरा लाभ पा सकते हैं।

सूर्य-किरणें जब शरीर के चर्म पर पड़ती हैं तो चर्म-छिद्रों के नीचे के अवयवों में मौजूद रहने वाली चरबी या तेल में इस प्रकार से परिवर्तन कर देती हैं कि वहाँ पर अपने आप विटामिन डी तैयार हो जाता है, जिसका शरीर लाभ उठाता है। शरीर के काफी मात्रा में विटामिन प्राप्त कर लेने पर फौरन ही चमड़े में जलन होने लगती है और तब वह झुलसने लगता है। इस झुलसने के कारण शरीर सूर्य की किरणों से और अधिक विटामिन डी नहीं ग्रहण कर सकता और इस प्रकार वह इससे बच जाता है।[1] प्रकृति का यह कितना सुन्दर प्रबन्ध है! इसलिए विटामिन डी प्राप्त करने के लिए धूप का सेवन करना ही सबसे उत्तम साधन है। लेकिन कभी कभी जब मौसम अथवा ऋतु सम्बन्धी कठिनाइयों के कारण सूर्य की रोशनी से शरीर की आवश्यकता के अनुसार विटामिन डी प्राप्त करना सम्भव न हो सके तो उस हालत में ऊपर बताए पदार्थों का सेवन करके विटामिन डी प्राप्त किया जा सकता है।

बिना किसी खर्च के घर में किस प्रकार विटामिन डी तैयार किया जा सकता है, यह नीचे बताया जाता है। इसके लिए न तो किसी खास मशीन की जरूरत है और न इस बात की ही आवश्यकता है कि इस साधन से विटामिन डी तैयार करने की इच्छा रखने वाला, कोई वैज्ञानिक जानकारी अथवा ज्ञान प्राप्त करे। इस काम को घर की स्त्रियाँ बड़ी आसानी के साथ कर सकती हैं। इसके लिए आपको केवल यही करना होगा कि जब धूप निकली हो तो आप अपने भोजन को केवल धूप में रख कर उसमें विटामिन प्राप्त कर लें। इसमें आपका कुछ भी खर्च न होगा।

जैसा कि मनुष्य के शरीर में सूर्य की किरणों के द्वारा विटामिन डी पैदा होता है, उसी तरह चिकनाई वाले भोज्य-पदार्थों के भी धूप में रख देने पर सूर्य की किरणें (Ultra-violet rays) उन खाद्य-पदार्थों में विटामिन डी उत्पन्न कर देती हैं, जिनमें 'इरगोस्टरल' चिकनाई की सी बहुत अधिक मात्रा में चिकनाई का अंश होता है, जैसे दूध, मक्खन, टमाटर का रस, रोटी, जैतून का तेल आदि। भोजन को सूर्य की किरणों अथवा कृत्रिम किरणों के प्रकाश में रखकर विटामिन डी प्राप्त करने की क्रिया को इरैडियेशन (Irradiation) कहते हैं। अगर आप यह चाहते हैं कि आप अपने खाद्य-पदार्थों में इस क्रिया के द्वारा विटामिन डी इस तरह से तैयार करें

---

[1] यह कहना कि धूप द्वारा जलन पैदा होना इस बात का सूचक है कि अब विटामिन डी की अधिक आवश्यकता नहीं है, गलत है। आदत डाल कर धूप में धीरे धीरे अधिक देर तक रहा जा सकता है। इससे लाभ के बजाय हानि होने की तनिक भी सम्भावना नहीं है। डाक्टर बेविट का कहना है कि "जिन्हें धूप के बाद तुरन्त ठंड मालूम होती हो उन्हें धीरे धीरे धूप लेने का पूरा अभ्यास करना चाहिए। जिन जातियों को धूप में अधिक रहने का मौका मिलता है उनका मानसिक और शारीरिक दोनों स्वास्थ्य अधिक उन्नत होता है"।—सं०

कि उन्हें कुछ समय तक रक्खा भी जाय तो बिगड़ने न पावे तो इसके लिए आपको घी या जैतून के तेल में विटामिन डी तैयार करके रख लेना अच्छा होगा। नारियल का तेल या मूँगफली का तेल भी इसके लिए काम में लाया जा सकता है, लेकिन यह उतना अच्छा नहीं होता जितना कि घी या जैतून का तेल होता है।

अब विटामिन डी तैयार करने की विधि बताई जाती है। एक चौड़ी रकाबी या थाली में घी या जैतून का तेल ऐसे स्थान में रख दीजिए जहाँ सूर्य की किरणें उस पर सीधी पड़ सकें। यह ध्यान में रखना चाहिए कि घी या जैतून के तेल की तह पतली हो। मोटी तह होने पर सूर्य की किरणें उसके निचले हिस्से पर न पड़ सकेंगी। इस तरह आप उसे दिन भर सूर्य की रोशनी में पड़े रहने दीजिए, उसमें विटामिन डी तैयार हो जायगा। लेकिन अगर आपको विटामिन डी की फौरन जरूरत हो तो घी या जैतून के तेल को २० मिनट तक सूर्य की रोशनी में रख देने से काम चल जायगा। इस तरह से प्राप्त किए गए विटामिन डी को ८ महीने तक रक्खा जा सकता है और वह नष्ट न हो सकेगा। लेकिन हाँ आपको इसके लिए कुछ सावधानी रखनी होगी। अगर आप इसे अधिक दिन तक रखना चाहते हैं तो इसे गहरे भूरे रंग की बोतल में रक्खें। उसमें कार्क लगाकर किसी अँधेरे स्थान में रख दें। ध्यान रहे, हर बार बोतल का कार्क खोलने पर हवा के सम्पर्क के कारण विटामिन का कुछ न कुछ अंश गायब हो जाता है।

घर पर विटामिन डी तैयार करने की इस क्रिया के सम्बन्ध में कुछ निषेधाज्ञाएँ भी हैं जो इस प्रकार हैं—(१) शीशे की बोतल में घी आदि रखकर उसमें विटामिन डी प्राप्त करने का प्रयत्न न करें। क्योंकि सूर्य की किरणें साधारण शीशे को पार करके उसके अन्दर नहीं पहुँच सकतीं। (२) घी या जैतून के तेल को बहुत मोटी तह में रखकर न फैलाइए, क्योंकि पतली तह होने पर ही सूर्य की किरणें पूरी तरह से उस पर पड़ सकती हैं। मोटी तह होने पर वह बहुत अधिक विटामिन डी न प्राप्त कर सकेगी। (३) धूप या रोशनी में रखकर विटामिन डी बनाने की क्रिया समाप्त हो जाने पर घी या जैतून के तेल आदि को खुला न रख छोड़िए। विटामिन डी बन जाने पर उसे बोतल में रखकर बोतल को कार्क से बन्द कर दीजिए। (४) इसे बहुत अधिक समय तक न रक्खे रहिए। हालाँकि वैज्ञानिक प्रयोगों से यह साबित हो चुका है कि अगर ठीक तौर से रक्खा जाय तो इस प्रकार से तैयार किया विटामिन डी महीनों तक रह सकता है, लेकिन अच्छा यही होगा इसे जल्द इस्तेमाल कर डालें और खत्म हो जाने पर ताजा विटामिन डी तैयार कर लें।

विटामिन ए और डी की भाँति विटामिन ई भी मक्खन या चिकनाई या चरबी में गलनशील है। यह सबसे अधिक मात्रा में गेहूँ के अंकुरों तथा लटूस की पत्तियों में पाया जाता है। लेकिन यह कुछ न कुछ अंशों में सभी बीजों, उनसे निकाले गए तेलों, हरी पत्तियों और कुछ फलों में भी पाया जा सकता है। यह जानवरों के अंगों में और खास करके उनकी मांसपेशियों और चरबी में भी पाया जाता है, हालाँ कि इनमें यह विटामिन कम मात्रा में ही होता है। थोड़ी बहुत मात्रा में यह अण्डे की जरदी और दूध में भी पाया जाता है। लीवर, आमाशय, गुर्दे, मस्तिष्क आदि अंगों में इसका या तो अभाव होता है या यह बहुत ही कम मात्रा में मौजूद रहता है। एक उल्लेखनीय बात तो यह है कि काड मछली के तेल में यह विटामिन बिलकुल नहीं होता। खमीर, मैदा, और पालिश किए चावल, में भी यह प्रायः बिलकुल नहीं होता। नारंगी के रस में यह बहुत कम मात्रा में होता है। जिन पौधों तथा जानवरों के जिन अंगों में यह विटामिन पाया जाता है उनके ताजे अवयवों को अगर पकाया जाय तो उसके कारण यह विटामिन नष्ट नहीं होता। लेकिन जितने अधिक समय तक यह अंकुरित गेहूँ में बना रह सकता है उतनी देर तक गोश्त में नहीं रह सकता। अंकुरित गेहूँ के अंकुरों (अँखुओं) से इस विटामिन का ऐसा सत निकाला गया है कि वह अँखुओं की अपेक्षा ४०० गुना अधिक गुणकारी है। लोगों का कहना है कि अगर-सह-

वास के दिन पाँच मिलीग्राम की मात्रा में इसकी एक खूराक खा ली जाय तो गर्भाधान की बहुत अधिक सम्भावना रहेगी। विटामिन-चिकित्सा का हमारे लिए क्या महत्त्व है इसका एक उदाहरण यहाँ पर दिया जाता है जिसका अनुभव अमेरिका के डाक्टर डी० टी० क्विगले एम० डी० ने किया था। यह उन्हीं के शब्दों में सुनिए——

"दो साल हुए एक किसान, जो ७ लड़कों का बाप था, मेरे कार्यालय में आया। उसने मुझे बताया कि उसके सातों बच्चे आँख की बीमारी होने के कारण स्कूल से निकाल दिए गए हैं। उनकी आँखों से कीचड़ निकलता था और कुछ बच्चों की आँखों की पुतलियों पर दाने भी हो गए थे। बच्चों के इलाज के लिए वह किसान २ हजार डालर (लगभग ६०००रु०) से अधिक खर्च कर चुका था और तीन बड़े बड़े शहरों के नेत्रचिकित्सा के विशेषज्ञ इलाज कर रहे थे, लेकिन वे लड़के धीरे धीरे अन्धे हो चले थे। इस बीमारी का किस्सा सुन लेने पर मैं समझ गया कि उन बच्चों को केवल विटामिन के अभाव के ही कारण यह रोग हुआ है। लेकिन मुझे इसका पूरा पूरा निश्चय नहीं था, मैंने प्रयोग करना चाहा। मैंने उस किसान से पूछा——तुम अपने बच्चों को कितना मक्खन और क्रीम खिलाते हो? उसने जवाब दिया——उन्हें तो मक्खन या क्रीम बिलकुल ही नहीं खाने को मिलता। हम अपने फार्म में बहुत अधिक मक्खन तैयार करते हैं लेकिन हम मक्खन और क्रीम को तो बेंच देते हैं और नकली मक्खन खाते हैं और इस प्रकार हमें फी पौण्ड छ सेन्ट की बचत हो जाती है।

"मैंने कहा——जाओ, और ये बच्चे साधारणतः जितना मक्खन और क्रीम खा सकते हैं उससे दूना इन्हें खिलाओ। छः सप्ताह के बाद मेरे पास उस किसान का एक खत आया जिसमें उसने मुझे सूचित किया था कि उसके बच्चे बिलकुल अच्छे हो गए हैं।"

विटामिन-चार्ट

(जीवन-सखा के विशेषांक के लिए लेखक द्वारा संपादित)

विटामिन	इसकी कमी से जो रोग होते हैं	खाद्य-पदार्थ जिनमें विटामिन अधिकता से मिलते हैं	विशेषता
ए चिकनाई में गलनशील	रतौंधी आदि आँख की अनेक बीमारियाँ, शरीर की बढ़न रुक जाना, गुर्दे और मूत्राशय की बीमारियाँ	चौलाई, मेथी, पालक की तरह की सभी पत्तीदार भाजियाँ, गाजर, आम, पपीता, अंडा, जिगर और काड लिवर आयल	
बी १	स्नायुजाल के रोग, घोड़नस, कब्जियत	चोकर समेत आटा, कुटू, गेहूँ, मूँगफली, सोयाबीन	

विटामिन	इसकी कमी से जो रोग होते हैं	खाद्य-पदार्थ जिनमें विटामिन अधिकता से मिलते हैं	विशेषता
बी २ पानी में गलनशील	वहुमूत्र, सुफेद दाग, पेट की गड़वड़ी	अंडे की जरदी, दूध, मखनिया दूध, दही, दालें, सोयाबीन, आलू, शकरकन्द कन्द, कच्चा केला, जिमीकन्द, पातगोभी, पालक	ओठों का फटना तथा जीभ का खुश्क रहना और फटना नित्य पाव भर से लेकर आध सेर तक ताजा दूध पीने या दो तीन अंडा रोज खाने से जल्द अच्छा हो जाता है।
सी पानी में गलनशील	हड्डी की और दाँत की कमजोरी, पायोरिया, पाचन की गड़बड़ी, रक्तचाप का बढ़ना, लकवा मार जाना, गठिया, गर्भवती को अधिक कै आना	सभी तरह के रसदार फल और हरी भाजियाँ; विशेषतया नींबू, शन्तरा। मूली की पत्ती, पातगोभी, अमरूद (में बहुत अधिक है)	संतुलित भोजन के साथ साथ नित्य आध सेर शन्तरे का रस पीने से पायोरिया रोग जाता है।
डी चिकनाई में गलनशील	हड्डी का टेढ़ा पड़ना, दाँत का खोढ़, शरीर की बाढ़ का रुक जाना, मृगी, यक्ष्मा, दिल की धड़कन का बढ़ना, कब्ज, शरीर की ऐंठन	दूध, मक्खन, क्रीम, अंडे की जरदी, मछली के जिगर का तेल, धूप	
ई चिकनाई में गलनशील	बाँझपना, नपुंसकता, जच्चा को दूध का कम होना, गर्भावस्था में गड़बड़ी, गर्भपात, शक्ति क्षीण हो जाना, बच्चा पैदा करने की शक्ति कम हो जाना, बुढ़ापा जल्द आना, जख्म होते रहना	लटूस की पत्ती, अंकुरित मक्का, अंकुरित गेहूँ, हरी पत्तियाँ और हर प्रकार के बीज, अंडे की जर्दी और दूध	

भाजी और फल

श्रीयुत जानकीशरण वर्मा

अलग अलग खाद्यपदार्थों का शरीर पर अलग अलग असर होता है। इस विषय पर हमारे आयुर्वेद ने काफी प्रकाश डाला है फिर भी आधुनिक वैज्ञानिकों ने इस विषय पर जो अन्वेषण किए हैं वे किसी प्रकार भी उपेक्षणीय नहीं हैं। इन दोनों ही दृष्टियों को सामने रख कर अधिकतर फल और तरकारियों के गुणावगुण पर इस लेख द्वारा संक्षेप में प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है।

भोजन के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए भाजी और फलों के सम्वन्ध में कुछ बातें नीचे वताई जा रही हैं :—

भाजी

कन्द-भाजी—कन्द-भाजी उसे कहते हैं, जिसका खाने वाला भाग पृथ्वी के अन्दर रहता है। इन भाजियों में से कुछ के पत्ते भी खाने योग्य और गुणकारक होते हैं।

पृथ्वी के अन्दर रहने के कारण धूप का प्रभाव कन्दों पर अच्छी तरह नहीं पड़ता। फिर भी डाल और पत्तियों पर पड़ा हुआ धूप का प्रभाव जमीन के नीचे तक पहुँच जाता है। ये गरिष्ठ होते हैं।

इन भाजियों में अक्सर श्वेतसार (गर्मी पैदा करने वाला तत्त्व) अधिक होता है। उनमें खनिज लवण भी होते हैं। इनमें विटामिन[1] 'ए' की कमी रहती है, पर 'वी' की मात्रा काफी रहती है। लेकिन पीली गाजर जैसी कन्द-भाजी में विटामिन 'ए' भी काफी मात्रा में पाया जाता है। पीले या लाल-पीले रंग की सभी भाजियों में, चाहे वे पृथ्वी के अन्दर बैठती हों या वाहर लगती हों, विटामिन 'ए' का आधिक्य होता है। इन कन्द-भाजियों में विटामिन 'सी' भी होता है, पर आग के प्रभाव से वह नष्ट हो जाता है।

आलू—पुष्टिकारक, देर से पचने वाला, कब्ज करने वाला, पेशाव बढ़ाने वाला पर स्नायुओं का पोषक, गठिया को दूर करने वाला और चावल और आटे का स्थान लेने वाला है। छिलका दूर करने से यह जरूर कब्ज करता है। अगर छिलका हटाना ही हो तो उबालने के बाद हटाना चाहिए। छिलका सहित रहने से इसमें थोड़ा विटामिन 'ए', उससे ज्यादा विटामिन 'बी' और उससे भी ज्यादा विटामिन 'सी' पाया जाता है। इसमें ७४ फी सदी पानी, २ फी सदी प्रोटीन (मांसवर्द्धक पदार्थ), १६ फी सदी चिकनई, २१ फी सदी श्वेतसार, और १ फी सदी खनिज लवण हैं।

यह रोगियों का आहार नहीं है। स्वास्थ्य की हालत में भी रोटी और चावलों के साथ इसकी बहुत थोड़ी मात्रा लेनी चाहिए। गठिया और स्नायुदौर्बल्य के रोगी २-३ दिनों पर केवल आलू का एक आहार कर सकते हैं। इच्छा हो तो इसके साथ थोड़ी हरी या शाक-भाजी, कच्ची या पकी हुई, ली जा सकती है।

शकरकन्द—इसमें प्रायः आलू के से ही गुण हैं।

---

[1] विटामिन 'ए'—साधारणतः स्वास्थ्य ठीक रखता है; विटामिन 'बी'—स्नायु को ठीक रखता है; विटामिन 'सी'—खून साफ़ करता है।

मुख्य भेद यह है कि इसमें ३ फी सदी शकर भी है, जो आलू में नहीं है। यह ठंडा, गरिष्ठ और पोषक होता है। स्वस्थ मनुष्य जब कभी इसका एक भोजन अकेला कर सकते हैं।

गाजर—कुछ गर्मी पैदा करने वाली लेकिन पाचन के लिए अच्छी, बवासीर के रोगियों के लिए लाभदायक, खून साफ करने वाली, पित्तनाशक, गठिया, यकृत के दोष और पथरी रोग को दूर करने वाली और पौष्टिक है। इसमें 'ए', 'बी' और 'सी' तीनों ही विटामिन का आधिक्य है। इसमें लोहा की मात्रा काफी है, और भी कई खनिज लवण हैं।

खेद है कि आग पर उबाल कर या हलवा बना कर गाजर का गुण नष्ट कर दिया जाता है। उससे ताकत तो होती है, पर शरीर में विकार भी उत्पन्न होते हैं। गाजर कच्ची खानी चाहिए। गाजर के दिनों में दिन के भोजन की आधी मात्रा गाजर ही हो तो शरीर बहुत अच्छी हालत में रहे। चर्म रोग वालों को १५-२० दिन केवल गाजर पर ही रखने से बहुत लाभ होता है। गाजर का रस खुजली इत्यादि की हालत में शरीर में लगाना चाहिए। गाजर की मुलायम पत्ती भी खाई जाती है।

भरसक पीली गाजर ही खानी चाहिए, पर काली गाजर भी अच्छी है।

मूली—पतली—त्रिदोषनाशक, पाचक, रेचक और बवासीर तथा पथरी में लाभदायक होती है; मोटी—वायुकारक और विकार-वर्द्धक होती है। मूली के साथ उसकी मुलायम पत्ती भी खानी चाहिए। मूली में सोडा का आधिक्य है।

सूरन (जमींकन्द, ओल)—यह बवासीर और प्लीहा-सम्बन्धी रोगों में लाभदायक है। पर बहुत गरिष्ठ है और अक्सर कब्ज करता है। अगर मसाला इत्यादि डालकर इसको स्वादिष्ट बनाया जाता है तो यह जरूर गरिष्ठ हो जाता है। इसको मिट्टी के बर्त्तन में रख, उसका मुँह बन्द कर और धीमी आँच पर बिना पानी डाले हुए चढ़ा कर घंटे दो घंटे छोड़ देना चाहिए। इस तरह उसका पानी सूख जाता है और तब उसके खाने से मुँह में खुजली नहीं होती। सच्ची बात यह है कि सूरन रोगियों के खाने की चीज नहीं है।

चुकन्दर—इसमें और भाजियों की अपेक्षा शकर की मात्रा अधिक है, इसलिए यह शरीर में गर्मी और फुर्ती बढ़ाता है। यह जल्द पचने वाला और पौष्टिक है। इसमें साधारणतः अच्छी मात्रा में विटामिन 'बी' और 'सी' पाए जाते हैं। इसको कच्चा ही खाना चाहिए।

प्याज—उत्तेजक और गरमी पैदा करने वाला, फिर भी बहुत उपयोगी खाद्य-पदार्थ है। कच्चा प्याज पेट के साफ होने में सहायक है, पर पकाया हुआ वायु पैदा करता है। इसमें 'बी' और 'सी' विटामिन और साथ ही बहुत से खनिज लवण हैं। यह बल-वीर्य वर्द्धक विकार-नाशक और रक्त-संचार को बढ़ाने वाला है। इसके स्वाद और गन्ध की विचित्रता के कारण अक्सर लोग इसे नापसन्द करते हैं, पर है यह बहुत उपयोगी। यह लू और हैजे में रक्षक का काम करता है। इसका प्रयोग तन्दुरुस्ती के दिनों में और साधारण दौर्बल्य में बहुत लाभदायक होगा, पर उपदंश, मूत्रकृच्छ्र और कठिन चर्म-रोग से पीड़ित रोगियों के लिए यह ठीक नहीं है। उत्तेजक होने के कारण धातु-दौर्बल्य की अवस्था में भी यह उपयोगी नहीं होता। जाड़ों में शहद के साथ प्याज के रस का सेवन बहुत पौष्टिक होता है। मात्रा ज्यादा न हो, एक चम्मच शहद में आधा चम्मच प्याज का रस—बस। इसकी मुलायम पत्ती भी खाई जा सकती है।

लहसुन—प्याज की ही तरह गुणकारक, उत्तेजक, पौष्टिक, विकार-नाशक, शरीर के नया बनने में सहायक पर बहुत गर्मी पैदा करने वाला। वायु-विकार को यह अच्छी तरह दूर करता है।

क्षयी रोग में एक छोटे चम्मच भर शहद में लहसुन या प्याज का एक-दो बूँद रस जब कभी लेना लाभदायक होता है। इसकी मुलायम पत्ती भी खाई जा सकती है।

शलजम—इसमें 'बी' और 'सी' विटामिन और बहुत थोड़ी मात्रा में 'ए' विटामिन भी है। इसमें तीन मुख्य खनिज लवण भी हैं। यह हल्का, पचने वाला, ताकत लाने वाला और चमड़े को साफ करने वाला है। तासीर कुछ गरम है। इसकी जड़ के ऊपर के हिस्से को पत्तियों के साथ हल्की आँच पर पकाना चाहिए।

इनके अलावा कुछ और कन्द-भाजियाँ हैं। **घुईयां (अरवी, पेंक्ची)** और **बन्डा (कन्दा)** बहुत लोकप्रिय हैं। ये हैं तो पौष्टिक पर बहुत देर में पचते हैं और अक्सर कब्ज पैदा करते हैं और आँव बढ़ाते हैं। जो रोग दूर करने में लगा हो उसके लिए ये त्याज्य हैं। साधारण तन्दुरुस्ती की हालत में जब कभी खा सकते हैं।

हरी (फलदार) भाजी

हरी भाजियाँ बहुत उपयोगी खाद्य-पदार्थ हैं। इनके अन्दर विटामिन और खनिज लवणों का भाण्डार रहता है। कठिनाई तो यह है कि जोरदार आग के सम्पर्क से बहुतों का गुण नष्ट हो जाता है, बचा-बचाया गुण मसालों और बहुत नमक के प्रयोग से जाता रहता है। धूप में तैयार होने के कारण बहुत सी कन्द-भाजियों से ये ज्यादा उपयोगी और अधिकतर रोगियों के खाने लायक भी होती हैं। इनमें से बहुत सी छिलके के साथ पकाई और खाई जा सकती हैं।

करेला—खून को शुद्ध करने वाला, यकृत और प्लीहा के रोगों में लाभदायक, बहुमूत्र, पीलिया और कब्ज को दूर करने वाला, पेट के कीड़ों का नाशक और पौष्टिक है। तासीर कुछ गरम है। बहुत दिन लगातार सेवन करने से यह बुखार और चेचक-खसरे से बचाता है। इसका छिलका हल्के हल्के खुरचना चाहिए।

नेनुआ, तरोई (तुरई)—इन दोनों भाजियों के गुण प्रायः एक से हैं—हल्की, ठंडी और स्वास्थ्य-वर्द्धक। इनके छिलके काटकर फेंक देना इनको नष्ट कर देना है।

बैंगन (भाँटा)—वैसे तो बैंगन हल्की चीज है, पर कुछ पित्तवर्द्धक है।

ककड़ी—भारी, ठंडी और बहुत खाने से वायुवर्द्धक है। पेट से निकल कर आँतों में पहुँचने में इसे बहुत देर लगती है।

परवल—हल्का और त्रिदोषनाशक है। रोगी और स्वस्थ दोनों ही के अनुकूल यह भाजी है। इसका छिलका कभी न फेंकना चाहिए। परवल की पत्ती का साग भी लाभदायक है, यद्यपि वह कुछ कड़ुआ होता है।

सहजन (मुनगा)—इसके फूल और फली दोनों ही की भाजी होती है। यह भी परवल की तरह त्रिदोष-नाशक है।

भिंडी (रामतरोई)—ठंडी, पौष्टिक, आँव और पथरी रोग में लाभदायक, वीर्य-वर्द्धक है। हाल की निकली पतली मुलायम भिंडी कच्ची खाई जा सकती है। मौसम में हर रोज एक-दो सबेरे ही खा लेने से धातु-दौर्बल्य में लाभ पहुँचाती है।

कटहल—पौष्टिक पर बहुत देर से पचने वाला और वायु-विकार-वर्द्धक है। इसकी तरकारी बहुत स्वादिष्ट होती है, पर यह जब-कभी खाने की चीज है। तासीर गर्म है।

टमाटर (टोमैटो, सरभंटा, वलायती, वलायती बैंगन)—इसमें 'ए', 'बी' और 'सी' तीनों विटामिन का आधिक्य है। यह बहुत ही लाभदायक भाजी है। पाखाना साफ लाने वाला, खून को साफ करने वाला और बहुत रोगों को मार भगाने वाला है। लाल पके टमाटर को कच्चा ही खाना चाहिए। हरे टमाटर की तरकारी बनती है पर वह शरीर के बहुत काम की चीज नहीं होती। पके टमाटरों की आग पर पकाई हुई तरकारी खाई जा सकती है, पर उसका बहुत सा गुण नष्ट हो जाता है।

टमाटर भी गाजर के दिनों में मिलता है। दोनों को कच्चा ही काट कर एक साथ खाया जा सकता है। अगर एक समय का यही भोजन रहे तो बहुत लाभ हो। खास कर बेरी-बेरी, गठिया और एक्जिमा के रोगियों को १०-१५ दिन सिर्फ यही खाकर रह जाना चाहिए।

लाल टमाटर का रस सूखा रोग की हालत में बच्चों को देना चाहिए। यह रस बुखार के रोगियों को भी दिया जा सकता है।

टमाटर में लोहा, चूना, गन्धक और कई तरह की प्राकृतिक औषधियाँ रहती हैं।

पेठा (भतुआ)—इसकी तरकारी और मिठाई (मुरब्बा) दोनों ही बनती हैं। पेठा हल्का, सुपाच्य, ठंडा, पित्तनाशक, वायुनाशक और पौष्टिक है। बवासीर में इसकी तरकारी विशेष लाभदायक है। पेठा धातु दौर्बल्य में भी लाभ पहुँचाता है। इसका मुरब्बा बहुत स्वादिष्ट और लाभदायक है, पर इसे गुड़ या भूरी शकर में ही तैयार करना चाहिए।

कोंहड़ा (काशीफल, कद्दू)—वायुकारक, विकार-वर्द्धक, पर तन्दुरुस्ती की हालत में जब कभी खाया जा सकता है।

लौकी (लउआ, कदुआ)—ठंडी, हल्की, पित्तनाशक और कुछ पुष्टिकारक।

चचेंडा—ठंडा, हल्का और यकृत-दोषों में लाभदायक।

गूलर—ठंडी, कब्ज को दूर करने वाली, पित्तनाशक और बवासीर और पीलिया में लाभदायक।

सेम, लोभिया (बोंड़ा)—ये दोनों ही पौष्टिक, मांस-वर्द्धक और बल-वर्द्धक हैं, पर देर से पचने वाले और वायुकारक हैं। तन्दुरुस्ती की हालत में ही इन्हें खाना चाहिए।

साग (पत्तीदार) भाजी

ये बहुत ही लाभदायक हैं। इनमें विटामिन और खनिज लवण दोनों ही का आधिक्य है। कुछ साग वायु अवश्य बढ़ाते हैं, विशेषकर कमजोरों में। पकाते समय इनको धीमी आँच पर पकाना चाहिए और इनमें पानी नहीं या बहुत कम डालना चाहिए। इनका पानी कभी भी फेंकना न चाहिए। बहुत से साग कच्चे खाये जा सकते हैं। प्रायः सभी साग साफ दस्त लाने वाले और खून साफ करने वाले हैं।

चौलाई (गेन्हारी)—हल्की, ठंडी।

मरसा (लाल साग)—तासीर में कुछ गरम।

खुरफा (कुलफा)—खट्टा, खटाई पैदा करने वाला और बढ़ाने वाला, रोगियों के लिए वर्जित।

बथुआ—हल्का, गरम, पेट साफ करने वाला; प्लीहा, बवासीर और पेट में कीड़ा रहने की हालत में लाभदायक।

पालक (पलाकी)—'ए' और 'सी' विटामिन और लोहा इसमें अधिकता से पाय जाता है। यह दस्तावर है और खून को साफ और बल-युक्त करती है। कच्ची खाने में कड़ुई लगती है, पर ज्यादा लाभदायक है। दही के साथ कच्ची पालक का रायता बहुत स्वादिष्ट और गुणकारक होता है। गुण में पालक सब सागों में बढ़-चढ़ कर है। कच्ची पत्तियों को सिल पर बिना पानी के पीस-कुचल कर रस निकाल कर (आध सेर) पीने से पेट खूब साफ होता है। इसे सुबह में ८ बजे के लगभग पीना चाहिए। कच्ची गाजर, टमाटर और मूली के साथ पालक के टुकड़े रखकर और उसपर नींबू का रस निचोड़ कर अच्छा सलाद (कच्चा रायता) बनता है।

पुदीना—पाचक और रुचिवर्द्धक। इसकी चटनी तो बनती ही है; शर्बत भी बनता है। चटनी बनाने के लिए इसके साथ किशमिश, अनारदाने या आलूबुखारा मिलाना चाहिए। उल्टी (कै) होने की हालत में और पेट के दर्द में पुदीना पीस कर पिलाने से लाभ होता है। पेट के दर्द में इसे गरम कर लेना चाहिए। पुदीने की पकौड़ी हल्के बेसन या चावल के आटे के साथ बहुत अच्छी होती है।

पोई—वायु और पित्तनाशक, भूख बढ़ाने वाली है।

करमकल्ला (बन्द-गोभी, पात-गोभी)—इसमें विटामिन और खनिज लवणों की भरमार है, पर कमजोर पाचन-शक्ति वालों को अन्दाज से खाना चाहिए। करमकल्ले में गन्धक, सोडा और लोहा है। इसकी

मुलायम पत्तियों को कच्चा भी खाया जा सकता है। इसे सलाद में डाल सकते हैं।

फूल-गोभी (कोबी)—रुचिवर्द्धक, पौष्टिक पर वायुकारक। इसके मुलायम मुलायम फूल कच्चे खाये जा सकते हैं।

फल

प्रायः सभी मीठे फल और खट्टे फलों में नीबू, सन्तरा (नारंगी), चकोतरा, अनन्नास खून को साफ करने वाले हैं। मीठे फल पौष्टिक और बलवर्द्धक हैं। इनमें भी विविध विटामिन और खनिज लवण पाये जाते हैं। प्रायः सभी फल पेट को भी साफ करते हैं, पर फलों में कठिनाई यह है कि उन्हें डाल में पकने नहीं दिया जाता। धूप में पके फलों के गुण कुछ और होते हैं और जबरदस्ती पकाये गये फलों के कुछ और।

आम—फलों का राजा। है तो यह मामूली तौर पर दस्तावर, पर पाल के पके आम अक्सर कब्ज करते हैं। असल में कच्चे खट्टे आम विकार-वर्द्धक हैं, इसीसे जबरदस्ती पकाये गये आम भी विकार पैदा करते हैं। अगर काफी तैयार हो जाने पर वे पाल पर रखे जायँ तो उनमें विकार की मात्रा बहुत कम हो। आम बहुत पौष्टिक है। इसमें विटामिन 'सी' का बहुत आधिक्य है। रोगियों के लिए छोटे रस वाले (बीजू) आम ही ठीक हैं। गूदे वाले कलमी आम बहुत देर से पचते हैं। आम दुबलों और कमजोरों को तगड़ा कर सकता है, लेकिन उसकी तरकीब यह है। पहले तीन दिन का उपवास किया जाय, जैसा कि डाक्टर चौधुरी ने बताया है। फिर तीन दिन सिर्फ दूध पीकर रहा जाय—५, ५ घंटे पर पाव डेढ़-पाव कच्चा या गरम किया हुआ (उबाला नहीं) दूध, बिना चीनी डाले। फिर ४०-४५ दिन, दिन में दो बार आम-दूध और एक या दो बार सिर्फ दूध—जैसे ७ बजे सिर्फ दूध, १२ बजे आम-दूध और फिर ६-७ बजे शाम को आम-दूध या ८ बजे आम-दूध, १ बजे दूध और ७-७½ बजे आम-दूध।

कच्चे आम का पना गरमी में ठंडक देता है, पर धातु-रोग वालों को इससे बचना चाहिए।

अंगूर—दस्तावर और पौष्टिक पर कुछ कफ-वर्द्धक है। इसमें शकर की मात्रा बहुत है। साथ ही खनिज लवण का आधिक्य है। यह खून को बढ़ाता है।

इमली—कच्ची खट्टी इमली विकारवर्द्धक है। पकी मीठी इमली तन्दुरुस्ती की हालत में प्रयोग की जा सकती है। यह पाचन-क्रिया में सहायता देती है और पित्त-नाशक है। मीठी इमली का भी बहुत इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

जामुन—यह पाचक, पेट के रोगों को भगाने वाला और बहुमूत्र में हितकर है।

अमरूद—पौष्टिक, कुछ कफकारक, (बीज के साथ) पेट साफ करने वाला और खून साफ करने वाला है। यह गरीबों का सेब है।

अनार—इसके तीन प्रकार हैं—मीठा, खट्टा और खटमिट्ठा। मीठे अनार का रस हर तरह के रोग में दिया जा सकता है। खटमिट्ठे (कन्धारी) अनार का रस वायु और गठिया इत्यादि रोगों में लाभदायक है।

गन्ना (ऊख, ईख)—यह फल नहीं है, फिर भी फल की ही तरह काम में आता है। इसके टुकड़ों को दाँतों से कुचल कर ही चूसना चाहिए। गन्ने का रस कुछ दस्तावर, कुछ कफ पैदा करने वाला, पौष्टिक, पित्तनाशक और रक्त-शोधक है।

नारियल (गरी गोला)—नारियल के गोले में बहुत गुण हैं। पके फल की गिरी कुछ देर से पचती जरूर है पर पेट को साफ करती है। इसमें गर्मी और फुर्त्ती लाने वाला, बल-वर्द्धक, मांसवर्द्धक और चर्बी बढ़ाने वाला, सभी गुण मौजूद हैं। इसे न सिर्फ मुँह साफ करने या पकवान में डालने के लिए इस्तेमाल करना चाहिए बल्कि एक समय के भोजन का मुख्य अंश बनाना चाहिए। सलाद में इसके बहुत छोटे छोटे टुकड़े डाल सकते हैं। जिन दिनों कच्चा नारियल मिलता है उन दिनों इसका प्रयोग जी खोलकर करना चाहिए।

कच्चे नारियल का पानी पीकर उपवास किया जा सकता है। यह हलका, ठंडा, खून से खटाई को दूर करने वाला, पाचनशक्ति को बढ़ाने वाला, पित्तनाशक, रक्तशोधक और पौष्टिक होता है।

कटहल—पका कटहल पौष्टिक जरूर है पर देर से पचता और अक्सर दस्त की बीमारी पैदा करता है। तन्दुरुस्ती की हालत में जब-कभी खाने की चीज है।

शरीफा—ठंडा, कुछ कफकारक पर पित्तनाशक और पेट साफ करने वाला। इसमें पोटाश, गन्धक और शकर है। इसकी पत्तियों को पीस कर फोड़ों पर प्रयोग किया जाता है।

खीरा—ठंडा, पेशाब लाने वाला, रक्तशोधक पर देर से पचने वाला है। भादों में हर रोज अगर एक खीरा खाया जाय तो साल भर खाये गये तेल और मसाले की गरमी को दूर करता है।

केला—बहुत पौष्टिक और गुणकारक फल है। इसमें खनिज लवणों का आधिक्य है। इसे अकेला ही खाना चाहिए, रोटी या चावल के बदले। बच्चों की बाढ़ में इससे बहुत मदद मिलती है। भर पेट और चीजें खाने के बाद केला खाने से अपच होता है। अच्छी तरह पका केला खाना चाहिए।

लाल छिलके वाले केले में शकर और लोहा का आधिक्य होता है। यह खून की क़मी और दुर्बलता में हितकर है। पीले छिलके वाले केले सोडा के आधिक्य के कारण साफ दस्त लाने में सहायक होते हैं। हरे छिलके के केले में पोटाश और सोडा ज्यादा होते हैं, जिससे वह पेशाब साफ लाता है।

बेर—पौष्टिक पर कफकारक है।

सिंघाड़ा—ठंडा, पुष्टिकारक पर देर से पचने वाला और किसी किसी के लिए वायुकारक है।

शहतूत—दस्त साफ करने वाला है।

तरबूज—इसका विशेष गुण है खून की खटाई को दूर करना। इसमें लोहा भी है, जो खून के लिए हितकर है। इससे प्यास मिटती है। गर्मियों में लू से बचाता है।

खरबूजा—खून की खटाई को दूर करने वाला, दस्त साफ लाने वाला, पेशाब साफ लाने वाला, पौष्टिक और यकृतरोग और पथरी में लाभदायक।

नाशपाती—पेट साफ करती है। छिलके के साथ खाना चाहिए। इसमें भी कई खनिज लवण हैं, जो रक्तशोधक सिद्ध होते हैं।

अनन्नास—पेट साफ करने वाला, पेट के कीड़ों को मारने वाला, भोजन में रुचि बढ़ाने वाला है। यह ठंडा और कफकारक है।

फालसा—ठंडा और पित्तनाशक।

सन्तरा (नारंगी, कमलानीबू, केवला)—यह बहुत लाभदायक फल है। इसमें 'ए', 'बी' और अधिक मात्रा में 'सी' विटामिन हैं, साथ ही लोहा और कई और पदार्थ भी हैं। सन्तरे का प्रयोग तन्दुरुस्ती और बीमारी दोनों में ही किया जा सकता है। मीठे सन्तरे का रस बुखार, दमा और निमोनिया में भी दिया जाता है। उपवास के दिनों में इसके रस से बहुत सहारा मिलता है, साथ ही लाभ भी होता है। तन्दुरुस्ती की हालत में झिल्ली के साथ सन्तरे की फाँकों को खाना चाहिए।

सेब—ठंडा, सुपाच्य, रुचिवर्द्धक, स्वास्थ्यकर और पौष्टिक है। यह यकृत और गुर्दे के रोगों को दूर करता है।

रसभरी (मकोय)—इसका रस कुछ अंशों में सन्तरे के रस की तरह है। काफी मात्रा में पीने से पेट भी अच्छी तरह साफ होता है।

बेल—यह पतले दस्त और आँव की बीमारियों में विशेष हितकर है। बेल दस्त को बाँधता है, जिससे पेट अच्छी तरह साफ होता है। पहले कुछ वायु होती सी मालूम होती है फिर भी साफ पाखाना होता है। बैसाख भर बेल जरूर खाना चाहिए।

नींबू—यह भी बहुत उपयोगी फल है, पर इसका प्रयोग अन्न के साथ नहीं करना चाहिए। पानी में इसका रस निचोड़ कर पीना चाहिए। थोड़े ठंडे पानी में १०-२० बूँद डाल कर दो-दो तीन-तीन घंटे पर पीने

से दस्त बन्द होता है, पर गरम पानी में १-२ नींबू का रस निचोड़ कर पीने से कब्ज दूर होता है। इसको बुखार और जुकाम में भी ठंडे या गरम जल के साथ ले सकते हैं। हैजे में एक चम्मच ठंडे जल में २-३ बूँद नींबू का रस घंटे घंटे पर पिलाना चाहिए। नींबू खून के विकारों को दूर करता है और पाचन-क्रिया को सहायता देता है। शहद के साथ नींबू का रस थोड़ी-थोड़ी मात्रा में कफ को ढीला करता है।

मीठा या शरबती नींबू का प्रयोग तो मियादी बुखार, चेचक, हैजा इत्यादि रोगों में भी हो सकता है।

नींबू का रस पानी या नारियल के तेल के साथ मिला कर जख्म पर भी लगाना चाहिए।

नींबू में 'सी' विटामिन का आधिक्य है, साथ ही कई और पदार्थों का सम्मिश्रण है।

पपीता—इसमें दो-तीन ऐसे खनिज लवण हैं, जिनसे यह अपच, प्लीहा और यकृत दोष और बवासीर में विशेष गुणकारी सिद्ध होता है। यह ठंडा और रुचि बढ़ाने वाला फल है।

इनके अलावा और कई फल हैं, जैसे **खूबानी, शफतालू, चीकू, आड़ू, अलूचा** इत्यादि। जो फल पक जाने पर मीठे हो जायँ वे रोगियों के भी खाने योग्य हैं। **किशमिश, मुनक्का** और **अंजीर** भी बहुत लाभदायक, पेट साफ करने वाले, रक्त बढ़ाने वाले और पौष्टिक हैं। **खजूर** दिल को ताकत पहुँचाता है, पर बहुत खाने से शरीर में गरमी बहुत बढ़ती है। **अंजीर** अच्छा दस्तावर फल है।

बादाम, अखरोट, मूँगफली (चीनिया बादाम), चिलगोजा, पिश्ता और **काजू** मांसवर्द्धक और बलवर्द्धक हैं। इनमें से कई में चिकनाई भी काफी मात्रा में रहती है। ये निरोग आदमियों के खाने की चीजें हैं। भर पेट और चीजें खाने के बाद इन मेवों को न खाना चाहिए। बादाम जैसे मेवों के खाने का सबसे अच्छा ढंग यह है कि जाड़ों में दिन-रात का एक मुख्य भोजन इनमें से एक या दो मेवे हों और इनके साथ-साथ सादी पकी तरकारी या कोई मौसम का हरा फल खाया जाय और ऊपर से थोड़ा दूध पी लिया जाय।

* * *

ऊपर जितने भाजी और फल बताये गये हैं उनके अतिरिक्त कुछ और भी हैं, पर मैं समझता हूँ कि मैंने सभी मुख्य मुख्य भाजी और फलों का वर्णन किया है।

फल और भाजियों में बहुत सी प्राकृतिक औषधियां रहती हैं जो शरीर और शरीर के अन्दर रहने वाले मस्तिष्क को बहुत लाभ पहुँचाती हैं। वे बीमारियों से बचाव करती हैं, खून को साफ करती और उसमें बहुत से गुण भरती हैं, पेट को साफ रखती हैं और दिल-दिमाग को हरा-भरा बनाये रहती हैं। भोजन में इन्हीं का आधिक्य होना चाहिए। कुछ न हो तो एक भोजन में रोटी या चावल इत्यादि खाने के पहले कुछ हरी भाजियों का सलाद और दूसरे के पहले सिर्फ मौसम का फल जरूर खाना चाहिए। भाजी और फलों को पैदा करने की ओर हमारा विशेष ध्यान जाना चाहिए, जिससे ये आसानी से और सस्ते दामों मिल सकें।

कुछ लोग कहते हैं कि फल बहुत मँहगे मिलते हैं। कुछ फल जरूर मँहगे हैं, पर अमरूद, केला, रसभरी, तरबूज, खरबूजा, ककड़ी, जामुन, मूँगफली इत्यादि बहुत ऐसे फल हैं, जिन्हें हर कोई खा सकता है। देसी आम भी बहुत मँहगे नहीं हैं। भोजन-सुधार **और स्वस्थ जीवन बिताने** की उत्कट अभिलाषा चाहिए।

भाजी और फलों के प्रयोग से पूरा पूरा लाभ उठाने के लिए उनको तैयार करना और उनके खाने के सम्बन्ध में कई बातें जानना आवश्यक है। यों तो भाजी और फल सभी खाते हैं पर कितने मनुष्य उनको खाकर स्वस्थ और सुखी होते हैं। सच्ची बात यह है कि उनके बारे में सभी ज्ञातव्य बातें हम नहीं जानते, ऐसी कुछ बातें नीचे दी जाती हैं:—

भाजी के सम्बन्ध में—

(१) बुरी तरह पकाने से भाजियों के गुण प्राय

नष्ट हो जाते हैं। उन्हें धीमी आँच पर पकाना चाहिए और बर्त्तन का मुँह ढँका रहना चाहिए। घी या तेल में बहुत तलने से भी वे खराब हो जाते हैं—हलके हलके ८-१० बार इधर-उधर घुमा कर, अन्दाज से नमक, मसाले और पानी डाल कर बर्त्तन को ढँक देना चाहिए।

(२) ज्यादा मसाला डालना अच्छा नहीं है। रोग-ग्रस्त को तो मसाला खाना ही नहीं चाहिए। स्वस्थावस्था में भी सिर्फ हल्दी, धनिया और जीरा, और ये भी थोड़ी मात्रा में, काफी हैं।

(३) एक ही भोजन में कई तरह की भाजियों या एक ही दो भाजियों को बहुत मात्रा में खाने से वायु-विकार बढ़ता है।

(४) कन्द-भाजी और पत्तेवाले साग दिन में ही खाये जायँ। रात में लौकी की तरह हरी भाजी खाना ठीक होगा।

(५) जो भाजियाँ कच्ची खाई जा सकती हैं उन्हें कच्ची ही खाना चाहिए। अगर उनका सलाद बनाया जाय तो उसे पहले खाकर रोटी या चावल खाना शुरू करना चाहिए।

फलों के सम्बन्ध में—

अक्सर लोग भरपेट खाने के बाद फल खाते हैं। इससे अवश्य हानि होती है। भरसक फलों का एक भोजन अलग होना चाहिए। अगर दिन में एक बार एक तरह का फल खाकर ऊपर से दूध पिया जाय तो बहुत लाभ हो।

अगर दिन में तीन ही बार खाया जाय तो ७-३० बजे सुबह फल-दूध, १२-३० बजे दोपहर में रोटी या चावल और भाजी और चिरागबत्ती जलने के कुछ पहले या बाद एक तरह की पकी भाजी और कुछ बादाम या अखरोट या मूँगफली या चिलगोजे खाये जायँ तो स्वास्थ्य अवश्य बन जाय। जो दो बार खाता है वह एक बार फल और दूध ले।

अगर दूध की सुविधा न हो तो पके ताजे फल के साथ बादाम या मूँगफली का मेल बहुत अच्छा होगा।

(सर्वाधिकार सुरक्षित)

* * *

बहुतेरे मनुष्य स्वास्थ्य बनाए रखने और खोकर स्वास्थ्य प्राप्त करने के बीच जो महत्त्वपूर्ण भेद है उसे नहीं समझते।

स्वास्थ्य को बनाए रखना, उसे एक बार खोकर फिर से बनाने की अपेक्षा कहीं ज्यादा सरल और कम खर्चीला है।

रोग का आक्रमण इसलिए होता है कि हम लोग स्वास्थ्य के साधारण नियमों को तोड़ते रहते हैं। हम न तो नियम पूर्वक खाते हैं, न पर्याप्त व्यायाम करते हैं, न ठीक तरह साँस लेते हैं, न उतना आराम करते हैं जितना आराम करना चाहिए और न अच्छी तरह नहाते धोते ही हैं। हमारा शरीर विषपूर्ण हो जाता है और हमारी स्नायु-शक्ति क्षीण हो जाती है जिसके परिणाम स्वरूप रोगों का ताँता बँध जाता है।

आपका स्वास्थ्य आपके ऊपर निर्भर है। सभी प्रायः अच्छी अवस्था में रह सकते हैं यदि वे कुछ ही नियमों पर समुचित रूप से चलें। असन्तोषजनक स्वास्थ्य शायद ही कभी पैत्रिक सम्पत्ति हो कर आता है।

अगर आप अपने स्वास्थ्य पर अभी तक वैसा ध्यान नहीं देते आ रहे हैं जैसा कि देना चाहिए तो अब भी सँभल जायँ और अपना सुधार शुरू कर दें।

बेवकूफी की भी हद होती है

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

हकीम लुकमान से किसी ने पूछा—आपने इतनी अकल कहाँ से सीखी ? बोले—बेवकूफों से ।—इस सरल आरम्भ के लेख का अन्त है 'रात को भी अधिक खा लेने की अपेक्षा तो यह अच्छा है कि रात को तो कम रहे । लेकिन सबसे यही अच्छा है कि न दुपहर को अधिक हो न रात को ।' इस लेख को पढ़ कर पाठक हँसे बिना न रहेंगे । उन्हें ज्ञात होगा कि यदि मनुष्य अपने अनुभवजनित ज्ञान के आधार पर भी चले तो वह अपने स्वास्थ्य को बहुत उन्नत बना सकता है ।—सं०

हकीम लुकमान से किसी ने पूछा—आपने इतनी अकल कहाँ से सीखी ? बोले—बेवकूफों से ।

कदाचित् मेरी बेवकूफी से भी 'जीवनसखा' के कोई पाठक कुछ सीख लें ।

सन् १९२८ के आखिरी महीनों की बात है । उस साल राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन मदरास में होने जा रहा था । मैं घूमता-घामता बंगलौर पहुँच गया और इस प्रतीक्षा में था कि अधिवेशन के दिन समीप आएँ तो मदरास के लिए प्रस्थान करूँ ।

मेरे मेजवान थे बंगलौर के प्रसिद्ध समाज-सेवक श्री रामचन्द्र जी । इस समय उनके स्थापित किए हुए बंगलौर में कई आश्रम चल रहे हैं । लेकिन उन दिनों न उनके रहने-सहने का कोई ठीक ठिकाना था; न उनके अतिथि का । मैं कभी-कभी बंगलौर से बाहर भी आता जाता । जब बंगलौर में रहता, तो मेरा निवास-स्थान होता प्रायः आर्य-समाज मन्दिर । उसीमें एक छोटा-सा स्कूल भी था । जहाँ आस-पास बच्चे हों, वहाँ कब कोई उदास रह सकता है ।

एक दिन मैं शायद मैसूर से लौटा था । जो विद्यार्थी मुझे भोजन बनाकर खिलाते थे, उन्होंने पूछा—क्या खायेंगे ? मुझे एक-दो दिन से कब्ज था । मेरा ख्याल है, उस दिन मुझे कुछ नहीं खाना चाहिए था । लेकिन तभी वयो-वृद्ध, ज्ञान-वृद्ध वैदिक मुनि हरिप्रसाद जी का कथन याद आया; मैंने अपने विद्यार्थी-जीवन में एक बार उनसे पूछा था—स्वामी जी, कभी-कभी कब्ज रहता है, क्या किया जाय ? कदाचित् मेरे शक्की मिजाज का ख्याल करके बोले—पेट कोई छोटी डिबिया थोड़े ही है । एक-दो दिन शौच नहीं आया; न सही । खाते पीते रहना चाहिए । मैंने कब्ज रहते हुए भी उन विद्यार्थी को भोजन बनाने के लिए कह दिया और साथ ही ताकीद कर दी कि पराँवठे बना सकें तो अच्छा । मैंने सोचा, जब कुछ घी पेट में जायगा तो कब्ज दूर करेगा ही । उसने पराँवठों के साथ आलू की तरकारी बनाई । जिसे मैंने भर-पेट ही नहीं, यदि यह कहा जाय कि ठूँस-ठूँस कर खाया तो अधिक असत्य न होगा । मैं सोचता था कि जब चक्की में, ऊपर से और गँला (झोंक) पड़ता है तभी तो आटा निकलता है ।

भोजन किए थोड़ी ही देर हुई होगी; हलका-हलका पेट-दर्द शुरू हुआ । उसी समय एक विद्यार्थी कहीं से दो पपीते ले आया; खूब सुन्दर पके हुए । मैंने उससे पहले पपीते कम खाये थे । लेकिन सुन रक्खा था कि पेट के लिए बहुत ही अच्छे होते हैं । विद्यार्थी के, खाने के लिए, पूछने पर मैं उन्हें भी खाने के लिए तैयार हो गया । पेट-दर्द पहले ही था : एक या डेढ़ पपीता ऊपर से और

ठूँस लिया। दर्द का क्या कहना! तीव्र वेदना शुरू हुई। कुछ समझ में नहीं आता था कि क्या करूँ क्या न करूँ? छोटे-छोटे विद्यार्थियों को छोड़ और कोई आसपास था भी नहीं, जिससे सलाह लेता। आर्य-समाज के मंत्री वहीं रहते थे, लेकिन वे उस समय दफ़्तर गए हुए थे। जब पीड़ा अधिक बढ़ने लगी तो मुझे शीर्षासन का ख्याल आया। सोचा, शीर्षासन सभी रोगों की दवा है। मेरा पेट-दर्द क्या इससे ठीक न होगा? तकलीफ तो हुई, लेकिन जैसे-तैसे मैं सिर नीचे और पैर ऊपर करके टँग ही गया। अधिक देर शीर्षासन न कर सका। कर ही कैसे सकता था? शीघ्र ही चारपाई पर लेटना पड़ा। तब देखा कि किसी भी करवट चैन से लेटना असम्भव है। पेट में हर तरफ सुइयाँ चुभने लगीं। अजब छटपटाहट थी। कुछ समझ में न आता था कि क्या करूँ? मंत्री जी चार बजे से पहले दफ़्तर से लौटने वाले न थे और अभी बजे थे दिन के बारह या एक। बंगलौर में और कोई मेरा परिचित न था। बेचारे विद्यार्थी मेरे दुःख से दुखी हो सकते थे, लेकिन कुछ कर तो न सकते थे। किसी के दुश्मन को भी ऐसा पेट-दर्द न हो।

आखिर मुझे लेटे-लेटे एक उपाय सूझा। मैंने सुन रक्खा था कि रामकृष्ण मिशन का एक आश्रम आर्य-समाज मन्दिर से बहुत दूर नहीं है। सोचा, वहाँ कोई न कोई स्वामी जी अवश्य रहते होंगे। एक विद्यार्थी से कागज और पेन्सिल मँगवा मैंने उस पर जैसे-तैसे लिखा :—

स्वामी जी,

मैं, एक अपरिचित व्यक्ति, यहाँ आर्य-समाज मन्दिर में पेट के शूल से बुरी तरह पीड़ित हूँ। बड़ी ही कृपा हो, यदि आप पधार कर मेरी किसी तरह की—दवा-दारू से—कुछ सहायता कर सकें।

आपका—

. . . .

पत्र लिख कर विद्यार्थी के हाथ स्वामी जी के पास भेज दिया। आशा थी कि कोई-न-कोई अवश्य पधारेंगे। यों ही इधर से उधर तड़पते काफी समय गुजरा। कोई न आया। लौट कर विद्यार्थी ने कहा—

'पत्र दे आया।'

'और स्वामी जी?'

'वे नहीं आये।'

. . . .

लेटा न जाता तो उठ कर बैठ जाता। बैठा न जाता तो फिर लेट जाता। इधर से पेट को पकड़ता तो दूसरी तरफ दर्द होता। दूसरी तरफ पकड़ता तो इधर। दर्द किसी तरह पकड़ में आता ही न था।

खैर। चार बजने थे, सो बजे। मंत्री जी दफ़्तर से लौटे। मेरी हालत देखते ही उन्होंने दवा-दारू के लिए दौड़ शुरू की। भाई रामचन्द्र जी को पता लगा, वे भी भागे आये। मेरी बीमारी का समाचार फैलने लगा। रात को कितने ही आदमी मुझे देखने पहुँचे। रामकृष्ण मिशन से एक स्वामी जी भी। मेरी बीमारी का पता तो उन्हें मेरे पत्र से ही लग गया था। लेकिन वह एक राह चलते 'अपरिचित व्यक्ति' का पत्र था। और इस समय वह देखने आये थे अपने मित्र श्री . . . . . जी के रोगी अतिथि को।

रात-भर दवाइयों का दौर दौरा चलता रहा। आध-आध घण्टे पर शौच की हाजत होती, लेकिन शौच न होता। दर्द बराबर जारी था। कुछ भी तो कमी नहीं होती थी। कैसे कैसे करके रात कटी!

दिन चढ़ते ही सभी हित-चिन्तकों की सलाह से मैं अस्पताल पहुँचा दिया गया। डाक्टर की आज्ञा से तुरन्त एनीमा की व्यवस्था हुई। मुझे लगा, मानों कोई बड़ा ऑपरेशन होने जा रहा है। वस्ति-क्रिया से शूल कुछ कम हुआ सही; लेकिन गया नहीं। तीन-चार दिन दवाई पीते रहना पड़ा। अभी दो-तीन दिन और अस्पताल में रहने की आवश्यकता थी। लेकिन क्या करता; कांग्रेस सिर पर आ गई थी : वह कांग्रेस जिसकी प्रतीक्षा में इतने दिनों से बंगलौर में पड़ा था। अभी मैं अच्छी तरह चल-फिर भी न सकता था। लेकिन कांग्रेस

देखने की इच्छा ने बदन में कुछ जान डाल दी। मैंने डरते-डरते, नम्रता-पूर्वक डाक्टर से कहा—

'कल से कांग्रेस आरम्भ है। मैं किसी तरह आज की गाड़ी से जा सकता तो बहुत अच्छा होता।'

डॉक्टर बोला—'जा सकते हो।'

मैंने फिर निवेदन किया—'आप जो-जो परहेज बताएँगे; मैं सब करूँगा। कृपया कहिए कि मुझे क्या खाना चाहिए और क्या नहीं।'

डॉक्टर का उत्तर था—'कुछ भी खाओ। लेकिन खाओ भूख रख कर ही।'

× × ×

पालि-साहित्य में एक कथा है :

भगवान् बुद्ध की धर्म-सभा में भिक्षु भी होते थे, गृहस्थ भी, धनी भी, निर्धन भी। तथागत की समदृष्टि में राजा रंक का कोई भेद न था।

एक दिन जिस समय तथागत बैठे हुए उपदेश दे रहे थे, उन्होंने देखा कि राजा प्रसेनजित् (?) बैठा ऊँघ रहा है। भगवान् समझ गये कि आवश्यकता से अधिक खाकर आया है। उसी समय यह गाथा कही—

चत्तारो पञ्च आलोपे अभुत्वा उदकं पिवेत्
अलं फासु विहाराय न किलिस्सेय्य पंडितो।

[चार-पाँच ग्रास और खाने की जगह रखकर आदमी पानी पी ले। सुख से रहने के लिए यह काफी है। ऐसा करने से बुद्धिमान् आदमी को कष्ट नहीं होता।]

राजा ने सुना तो एक माणवक (विद्यार्थी) को बुला कर कहा—

यह गाथा याद कर लो। जिस समय हम भोजन करने बैठें, इसे रोज सुनाओ। एक कार्षापण (अशरफी) प्रति दिन मिला करेगा।

माणवक ने वह गाथा याद कर ली और उसीकी कृपा से वह हमें भी प्राप्त हुई है। लिखा है कि इस गाथा की मदद से राजा का भोजन सम्बन्धी असंयम दूर हो गया।

जो लोग जिह्वा के या स्वाद-इन्द्रिय के अधिक वशीभूत होते हैं, उनके मन में प्रायः कई मिथ्या-विश्वास घर किये रहते हैं।

माताएँ बचपन में बच्चों को अधिक से अधिक खिलाना चाहती हैं। वे सोचती हैं, जितना खायगा उतना ही मोटा-ताजा होगा। जब कभी बच्चा अधिक खाने से इनकार करता है तो माताएँ प्रायः बड़े प्रेम से कहती हैं—थाली में बचा भात खा लो। नहीं तो व्यर्थ नष्ट होगा।

वे यह नहीं सोचतीं कि बच्चा अधिक खाने से मोटा-ताजा नहीं होता बल्कि अधिक हजम करने से। वे यह भी नहीं सोचतीं कि थाली में बचा हुआ भात न खाने से तो भात ही नष्ट होता है, लेकिन खा लेने से भात की हानि के साथ पेट की भी हानि होती है। यदि माताएँ अपने मोह में इस बात को न समझें तो हम तो समझें।

लोग जब खाने बैठते हैं तो प्रायः यही देखते रहते हैं कि अभी और कितना खाया जा सकता है। अधिक न खाने का तो वे ख्याल रखते हैं, लेकिन कम भी नहीं खाना चाहते। ठीक जितना चाहिए उतना—न कम, न ज्यादा—खाने की फिकर में वे हमेशा अधिक खा लेते हैं। भोजन की उचित मात्रा है निश्चयात्मक रूप से कम खाना।

कुछ लोग यह समझते हैं कि दुपहर को अधिक खाने का प्रायश्चित्त रात को कम खाकर हो सकता है। यह बिलकुल गलत है। रात को भी अधिक खा लेने की अपेक्षा तो यह अच्छा है कि रात को तो कम रहे। लेकिन सबसे अच्छा तो यही है कि न दुपहर को अधिक हो, न रात को।

तथागत का, राजा प्रसेनजित् को दिया गया उपदेश, सभी भोजन-गृहों में स्वर्णाक्षरों में लिखा रहे तो क्या अच्छा !

भोजन और धूप

श्रीयुत ए० विजय घोष

'खुली वायु में लहराती हुई हरी घास को कुछ दिनों के लिए ढँक दीजिए, वह मुरझा जायगी, उसकी हरीतिमा न रह सकेगी'--इस बात को हम आप सभी जानते हैं। लेकिन क्या आपने इस प्रकट सत्य पर भी विचार किया है कि उस हरी घास से कौन सा उसका सर्वस्व छीन लिया गया जिससे उसकी यह दशा हो गई ?

इस लेख के विद्वान लेखक ने इसी प्रकट-सत्य की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया है। लेख को पढ़िए और फिर विचार कीजिए कि हमें असली खूराक कहाँ से मिलती है ?--सं०

समुद्र की सतह से ६००० फीट की ऊँचाई पर बसा हुआ स्विटजरलैण्ड का एक छोटा-सा गाँव है। वहाँ पर रहते हैं एक उल्लेखनीय डाक्टर--लम्बा कद, सुडौल शरीर, चौड़ा कन्धा और हँसमुख चेहरा। अगर कोई उनसे मिल जाता है तो उसका स्वागत करने के लिए वह प्रेम-पूर्ण मुस्कराहट के साथ अपना बलिष्ठ हाथ बढ़ाते हैं। उस गाँव में पहुँचने पर मेरा उनसे परिचय हुआ। उनका नाम है डाक्टर रोलियर और उनके उस छोटे-से गाँव का नाम है लेसिन।

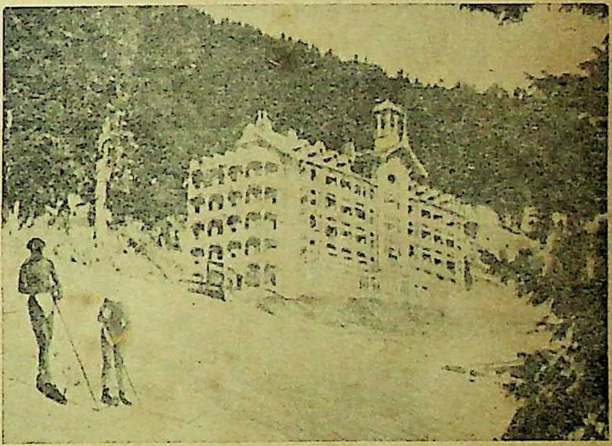

डाक्टर रोलियर की धूपशाला का एक अंग, पहले इस इमारत में एक होटल था।

आज से ४० साल पहले डा० रोलियर लॉसेन में डा० कोचर के अधीन डाक्टरी करते थे। उस समय डा० कोचर यूरोप में मशहूर हो रहे थे। उनके अधीन कार्य करने के दरमियान डा० रोलियर ने यह अनुभव किया कि चीर-फाड़ हड्डियों और ग्रंथियों के क्षय रोग को बहुत कम लाभ पहुँचाता है। खराब हड्डियाँ रेत कर निकाल देने पर घाव भर जाता है। रोगी अच्छा हो जाता है। ऐसा जान पड़ने लगता है कि वह पूरी तौर से नीरोग हो गया। बुखार की शिकायत नहीं रह जाती, मवाद-भरा फोड़ा सूख जाता है, उसका वजन बढ़ जाता है, और उसके गालों पर स्वास्थ्य-लालिमा छा जाती है। वह लकड़ी के सहारे से चलने लगता है लेकिन फिर वह उसे अनावश्यक समझ कर फेंक देता है। तो, अब वह उस रोग से छुटकारा पा गया। यह देखकर आश्चर्य होने लगता है, कितना बुद्धि-विशारद है वह डाक्टर जिसने मौत की बाट जोहने वाले एक रोगी को फिर से स्वस्थ और प्रसन्न बना दिया। लेकिन यह क्या ? कुछ ही महीनों अथवा वर्षों के बाद दूसरी हड्डी में बीमारी पकड़ लेती है, उसमें मवाद बहने लगता है, रोगी का

तापमान फिर बढ़ जाता है और कमजोरी बढ़ने लग जाती है, यहाँ तक उसकी फिर पहले की-सी हालत हो जाती है। इसके बाद फिर आपरेशन और फिर स्वास्थ्यलाभ। हाँ, इस बार रोगी के अच्छा होने में पहले की अपेक्षा कुछ अधिक समय लगता है। पर इससे क्या? वह स्वस्थ तो हो गया। मगर फिर वही बात। अभी वह पूर्ण स्वस्थ होने की आशा लगाए बैठा था, कि इतने में तीसरी बार उस रोग ने गला धर दबाया! दौड़ा वह फिर डाक्टर के पास, फिर आपरेशन हुआ। इस बार रोगी को पहले से काफी अधिक दिनों तक अस्पताल में रहना पड़ा और उसके बाद वह अगर स्वस्थ भी हुआ तो पूरी तौर से नहीं। रोगी की यह दयनीय हालत चलती रहती है—यहाँ तक कि पाँचवें या अधिक से अधिक बीसवें आपरेशन के बाद उसका जीवन-नाटक समाप्त हो जाता है—उसकी असामयिक मृत्यु बड़े कष्ट के साथ हो जाती है। उपचार के इस निराशा-जनक तरीके को देखकर डा० रोलियर को बड़ा दुःख हुआ। वह इस पर विचार करने लगे। जब एक बुद्धिमान व्यक्ति स्थिर हो कर युक्ति-युक्त तर्क के साथ किसी विषय पर विचार करता है तो अवश्य ही वह किसी ठोस नतीजे पर पहुँच जाता है।

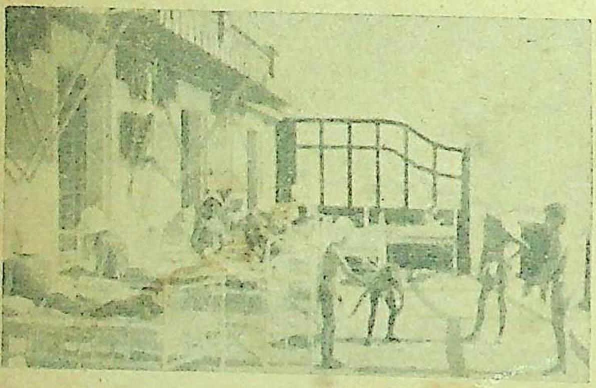

डाक्टर रोलियर की धूपशाला का एक खुला बरामदा जहाँ धूप दिन भर मिलती है।

विचार करने के बाद डा० रोलियर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि शहरों में रहने वाले तथा अपने शरीर को वस्त्रों से पूरी तौर से ढँक कर रखने वाले आजकल के सभ्य लोग सूर्य की लाभदायक [1]अल्ट्रा वायलेट किरणों से वंचित हो जाते हैं। उनके शरीर पर इतने वस्त्र लदे रहते हैं तथा वे ऐसे वातावरण में रहते हैं जिससे उनके शरीर पर सूर्य की वह जीवनदायिनी किरण कभी पड़ ही नहीं पाती।

आप जानते हैं, जब हम किसी स्थान पर की घास को ऊपर से ढँक देते हैं तो उसकी हरियाली गायब होने लग जाती है। अगर हम उसे यों ही ढँका रहने दें तो आगे चलकर एक ऐसी अवस्था आ जाती है कि उसकी हरियाली की जगह सफेदी आ जाती है और वह मुरझा कर नष्ट हो जाती है। विचार कीजिए, घास की यह हालत कैसे हुई? घास की जड़ें जमीन से खुराक प्राप्त करती हैं। घास की पत्तियों की हरियाली (जिसे Chlorophyl कहते हैं) सूर्य की अल्ट्रा वायलेट किरणों के साथ मिल कर उस घास को अपनी खूराक से लाभ उठाने में सहायता पहुँचाती हैं। जब हमने उसे ढँक दिया और उस पर सूर्य की किरणों को नहीं पड़ने दिया तो उसका मतलब यह हुआ कि हमने घास को उस शक्ति से अलग कर दिया जिसके द्वारा वह अपनी खूराक पाती है। इस प्रकार सूर्य की किरणों से वंचित कर दिए जाने पर वह घास जमीन से काफी खूराक मिलते रहने पर भी भूख के मारे निर्जीव हो गई।

मनुष्य के सम्बन्ध में भी एक इसी तरह की बात देखी जाती है। पौधों के हरे रंग के बजाय मनुष्य में लाल रंग रहता है जिसे हम 'हेमोग्लोबिन' कहते हैं। इस लाल रंग को भी सूर्य की किरणों की उतनी ही जरूरत होती है जितनी कि पौधों को। जब हम शहरों में घर के अन्दर बहुत अधिक कपड़े-लत्ते पहन कर रहते हैं

---

[1] अल्ट्रा वायलेट किरणें प्रातः काल एवं सायं काल की धूप में होती हैं।—सं०

तो सूर्य की लाभदायक किरणों से हम अपने को बिलकुल अलग कर लेते हैं। शहरों में बहुत अधिक धुआँ और गर्द से भरा आसमान भी हमें उन जीवनदायिनी किरणों से वंचित कर देता है।

डा० रोलियर का विचार था कि वे इस तरह के रोगियों को शहरों से हटा कर अगर किसी ऐसे स्थान पर ले जायँ, जहाँ उन्हें काफी मात्रा में सूर्य की अल्ट्रा वायलेट किरणें प्राप्त हो सकें तो इसके फलस्वरूप रोगी अपनी सर्वोत्तम खूराक प्राप्त करेगा और उसकी हालत सुधर जायगी।

जब हम किसी पुस्तक या लेख में इस तरह के सिद्धान्त पढ़ते हैं तो वे हमें बड़े अच्छे और आकर्षक मालूम होते हैं। लेकिन खेद की बात है कि उनमें से अधिकांश ऐसे होते हैं जो काम में नहीं आते। इसलिए प्रत्येक सिद्धान्त की हमें परीक्षा करनी होती है और यह देखना होता है कि वह कहाँ तक सत्य है। समुद्र-तट और पहाड़ियाँ अथवा पर्वत—ये दो ऐसे स्थान हैं जहाँ पर अल्ट्रा वायलेट किरणें प्रचुर मात्रा में पाई जाती हैं। स्विट्जरलैण्ड में समुद्र-तट न होने से डा० रोलियर ने इसके लिए स्विट्जरलैण्ड के एक पहाड़ी स्थान को चुना।

लेसिन में डा० रोलियर का स्वास्थ्य-गृह है जहाँ स्वच्छ वायु पूरी तौर से मिलती हैं। उनकी संस्था की गणना संसार की सर्वश्रेष्ठ स्वास्थ्य-संस्थाओं में की जाती है।

डाक्टर रोलियर की धूपशाला का साएदार बरामदा जहाँ धूप शाम को मिलती है।

आज से ४० साल पहले जब डा० रोलियर पहली बार लेसिन गए तो उस समय वह प्रायः वीरान थी। वहाँ तक पहुँचने के लिए केवल पगडण्डी ही थी। लेकिन आज वहाँ पर चौड़ी सड़कें बन गई हैं जिन पर मोटरें चलती हैं। मैदान से यात्रियों को उस पहाड़ी तक लाने के लिए एक छोटी सी रेलवे-लाइन भी बन गई है। लेसिन में ३०,००० मनुष्य रहते हैं जिनमें से रोगियों की संख्या ४००० है। यहाँ पर आप संसार के सभी भागों से आए लोगों को देख सकते हैं। वहाँ पर मैंने बंगाल के एक जमींदार के लड़के को देखा था।

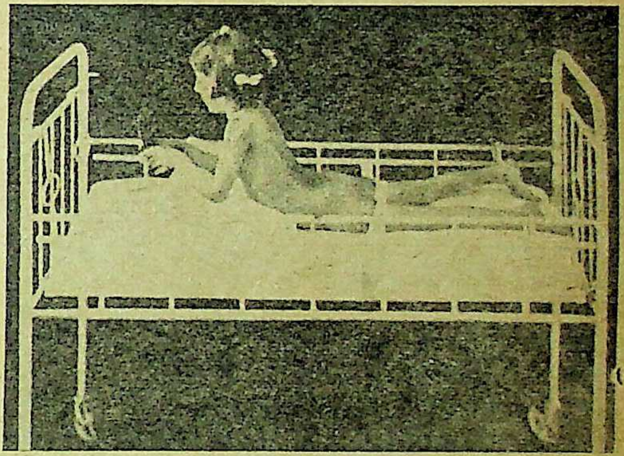

डाक्टर रोलियर की धूपशाला में एक बच्ची : रीढ़ की हड्डियों के यक्ष्मा को दूर करने के लिए धूप देने का प्रबन्ध

डा० रोलियर रोगियों को धूप में रखते हैं। रोगी को कितने समय तक धूप में रक्खा जाय, यह वे रोगी के स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर निश्चित करते हैं। सूर्य-रश्मियों की उपयोगिता के बारे में उन्होंने जो सिद्धान्त निकाला है वह पूरी तौर से प्रतिपादित हो चुका है। सन् १९३४ में जब मैं यूरोप में था, उस समय उन्हें 'सूर्य-रश्मि का

मनुष्य के शरीर पर प्रभाव' विषय पर भाषण देने के लिए ब्रिटिश मेडिकल सोसाइटी की ओर से निमंत्रित किया गया था।

ज़ूरिच में एक अन्य बड़े प्रसिद्ध डाक्टर हैं। उनका नाम है बर्चर-बेनर। डां० बर्चर-बेनर के पास एक बहुत बड़ी तथा आधुनिक व्यक्तिगत लाइब्रेरी है। उनकी लाइब्रेरी में बारह भागों में श्रीमद्भगवत्गीता का संस्करण, जिसका अनुवाद डसडेन ने जर्मन भाषा में किया है, देखकर मैं बड़ा प्रभावित हुआ। उन्होंने मुझ से निवृत्ति-मार्ग और कर्म-फल के सम्बन्ध में कई एक गम्भीर प्रश्न किए। उनकी इस अध्ययनशीलता को देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। हमारे यहाँ ऐसे कितने हिन्दू अथवा मुसलमान हैं, जो ईसाई-धर्म के भोजन के समय ईश्वर-स्तुति (Grace), त्रिदेव (Trinity) आदि के सम्बन्ध में इस तरह के गम्भीर प्रश्न पूछने की क्षमता रखते हों ?

आहार-सम्बन्धी प्रश्नों पर बातचीत के समय डा० बर्चर-बेनर ने मुझसे कहा कि डा० रोलियर का मत है कि सूर्य की किरणों का मनुष्य के वाह्य-शरीर पर लाभदायक प्रभाव पड़ता है। लेकिन मेरा विश्वास है कि सूर्य-किरणें मनुष्य की आन्तरिक संचालन-प्रणालियों के लिए भी लाभदायक हैं। जब हम बिना पकाई या उबाली हुई ताजी साग-भाजी, सब्जी, और फल खाते हैं तो इसका मतलब यह होता है कि हम उनके द्वारा छनी हुई सूर्य की किरणों को ग्रहण करते हैं।

यह किस प्रकार होता है, इसके बारे में डा० बर्चर-बेनर ने कई एक आश्चर्यजनक प्रयोग किए हैं, लेकिन हमारे लिए खेद की बात यह है कि उनकी सभी पुस्तकें जर्मन-भाषा में लिखी गई हैं। उन पुस्तकों का यूरोप की प्रायः सभी भाषाओं में—टर्किश भाषा में भी—अनुवाद हो चुका है। उनमें से केवल दो ही पुस्तकें ऐसी हैं जिनका अनुवाद अंग्रेजी में हुआ है। उनके नाम हैं—(१) The Prevention of incurabble diseases (असाध्य रोगों का निराकरण) और (२) Food science for all (जनसाधारण के लिए आहार-विज्ञान)। जो लोग उनके सिद्धान्त में दिलचस्पी रखते हैं उनसे मैं अनुरोध करूँगा कि वे इन दोनों पुस्तकों को पढ़ें। यूरोप में डा० बर्चर-बेनर को इतनी ख्याति और लोकप्रियता मिली है कि आप वहाँ के किसी भी होटल या रेस्तोरां में जाकर डा० बर्चर-बेनर द्वारा बताए नियमों के अनुसार भोजन के लिए इशारा मात्र कर दीजिए, आपको सभी चीजें तैयार मिलेंगी।

संक्षेप में हमने यह देख लिया है कि हमारे वाह्य शरीर के लिए सूर्य का प्रकाश कितना अधिक महत्वपूर्ण है। इतना ही यह हमारे शरीर के आन्तरिक अवयवों के लिए भी आवश्यक है। सूर्य की किरणों का लाभ हमारे आन्तरिक अवयवों को बगैर पकाई हुई शाक-भाजी और फलों के द्वारा प्राप्त होता है।

आधार-निदान

योगव्यायामविद् डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह

चिकित्सक की सफलता बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करती है कि वह रोग एवं रोगी की स्थिति को समझे। तभी उपयुक्त चिकित्सा का विधान किया जा सकता है। एक रोग एक रोगी के लिये मारक क्यों साबित होता है और दूसरे के लिए नहीं, यह रहस्य तो पाठकों की समझ में इस अनुभव पूर्ण लेख द्वारा आवेगा ही, आधार-निदान से गम्भीर विषय की जानकारी भी सरलता से हो जायगी।—सं०

लेखक

प्राकृतिक चिकित्सा के जितने भी प्रवर्तक तथा उनके अनुयायी हैं सब यही मानते हैं कि बीमारी होने का कारण केवल एक है—वह है विजातीय द्रव्य का शरीर में जमा होना। यह तीन हालतों में जमा होता है—(१) शक्ति का ह्रास, (२) अनुचित भोजन से खून में विकार पैदा होना और (३) शरीर में अपना ही विष तथा और भी दूसरे प्रकार का बाहरी विष जमा होना। अब प्रश्न यह उठता है कि जब कारण केवल तीन हैं और मनुष्य शरीर भी प्रायः सभी एक ही प्रकार के हैं तो अनेक लोगों में अनेक प्रकार की बीमारियाँ क्यों होती हैं? इसका उत्तर एक यही हो सकता है कि शरीर का ढाँचा अर्थात् मांस, मज्जा, चमड़ी, शकल में तो प्रायः सब का एक सा ही दीखता है पर सत्य यह है कि मनुष्य एक दूसरे से स्वभाव, मन-बुद्धि, काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि गुण और दोषों में जुदा है। मनुष्य इतना जटिल है कि इसका ठीक ठीक पता चलाना बहुत कठिन है। उसकी बीमारी समझने के लिए केवल रोग के स्थूल एवं वाह्य कारण पर्याप्त नहीं हैं। इसके जानने के लिए पूरे मनुष्य को ही जानने का प्रयास करना चाहिए।

जब एक ही कारण से अनेक बीमारियाँ पैदा होती हैं तो बाहर के लक्षणों से बीमारी का निदान करना असम्भव सी बात मालूम होती है। इसलिए यह निदान बीमारी के निदान का प्रयत्न नहीं करता, पर बीमार को ही समझने की कोशिश करता है।

जब हम शरीर यंत्र को समझने लगते हैं उसके काम और एक हिस्से से दूसरे हिस्से के सम्बन्ध को समझ जाते हैं तो बीमारी का जानना आसान हो जाता है। मनुष्य शरीर के विभिन्न कार्यों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—(१) स्वाँस की क्रिया, (२) पाचन और विसर्जन-क्रिया, (३) उत्पादन और जाति-वृद्धि क्रिया।

१—स्वाँस की क्रिया

यह वह क्रिया है जिसमें मनुष्य अपने फुफ्फुस द्वारा

हवा से ओषजन लेता है और अपने रक्त को शुद्ध करता है। इस क्रिया से मनुष्य अपनी प्राण-शक्ति की वृद्धि करता है जिससे मनुष्य की आन्तरिक क्रियाएँ सुचारु रूप से चलती हैं।

२—पाचन और विसर्जन क्रिया

यह मनुष्य की ऐसी क्रियाएँ हैं जिससे वह जो भोजन ग्रहण करता है उसे पचाता है और शेष भाग को शरीर के बाहर निकाल कर फेंक देता है। इस क्रिया के लिए आँतों का मजबूत होना बहुत जरूरी है।

३—उत्पादन या जाति-वृद्धि क्रिया

यह वह क्रिया है जिससे मनुष्य अपनी जाति को कायम रखने में मदद लेता है। इस क्रिया के लिए नल्ली-रहित ग्रन्थियों का स्वस्थ रहना परमावश्यक है।

इन तीन क्रियाओं की तह में तीन विशेष गुण हैं—बुद्धि (मानसिक), शरीर और मन (नैतिक)।

बुद्धि

इसकी तुलना एक ऐसे दायरे से की गई है जिसका केन्द्र मनुष्य का शरीर है और उसका दायरा प्रत्येक मनुष्य में अलग अलग कम और ज्यादा है। नवजात शिशु तथा बुद्धिहीन मनुष्यों में इसका दायरा उनके शरीर तक ही सीमित होता है और विद्वानों, दार्शनिकों तथा वैज्ञानिकों में इसका दायरा योग्यतानुसार कम वेशी करके सारे विश्व में फैला हुआ है। बुद्धि से निरीक्षण, विवेक, तर्क, वितर्क इत्यादि गुणों का बोध होता है। इसीसे तुरन्त कार्य करने की प्रेरणा होती है। बुद्धि सोचने का यंत्र है और यह ठीक ठीक सारी परिस्थितियों की गणना करती है। यह भावुकता और साधारण विचारों के परे न्याय का स्थानीय है।

शरीर

यह स्थूल सृष्टि का सूचक है और इससे बल, द्रव और ठोस चीजों का ज्ञान होता है। शरीर के प्रत्येक अंग और सभी यंत्र, इड़ा और पिंगला (Sympathetic nervous system) द्वारा ही संचालित होते हैं। जिस मनुष्य में स्थूल-शक्ति विशेष है वह ताकतवर, विशालकाय और शरीर सम्बन्धी मिहनत करने वाला होता है। जिस मनुष्य के स्नायु अच्छे और स्वस्थ होते हैं वह वैसे मनुष्यों से ज्यादा बलिष्ठ होता है जिनकी बुद्धि प्रखर होती है या जिनमें नैतिक बल ज्यादा होता है।

नैतिक बल

यह मनुष्य को विश्व की आत्मा से मिला देता है। जिस मनुष्य में नैतिक बल विशेष होता है उसमें किसी भी काम करने के लिए बुद्धि से तर्क वितर्क करके उसको किसी निश्चय पर पहुँचना नहीं पड़ता और न शरीर बल ही से किसी निश्चित बात पर पहुँचता है। उसको कार्य की ओर प्रेरित करने के लिए सभी बातें आपसे आप प्रकट होती हैं (Intuition)। यह शक्ति एक दैव-शक्ति है और इसकी उत्पत्ति ब्रह्म है, कोई ईश्वर कहते हैं, कोई आत्मा और कोई इसे विश्व की चेतना-शक्ति कहते हैं।

इन तीन गुणों का सम्बन्ध शरीर के तीन अंगों से है। ये तीनों गुण मनुष्य के मस्तिष्क के तीन भागों में निहित हैं और ये तीनों भाग शरीर के तीन अंगों से ज्ञान तन्तुओं द्वारा सम्बन्धित हैं। बहुत दिनों के अनुभव तथा निरीक्षण से यह पता चलाया गया है कि मस्तिष्क के तीन भागों का सम्बन्ध शरीर की तीन क्रियाओं से अर्थात् १—श्वास क्रिया, २—पाचन और ३—विसर्जन तथा उत्पादन क्रियाओं से विशेषतया है।

सिर

मनुष्य का सिर मुख्यतः तीन हिस्से में बाँटा जा सकता है। इसको बनाने वाली हड्डियाँ इस प्रकार से हैं।

सामने की हड्डी अथवा ललाटास्थि (Frontal bone) जिसे माथा या मस्तक कहते हैं। मध्य का भाग

(Parital ·lobe), पीछे का हिस्सा (Temporal-occipital lobe)। सिर के इन तीन भागों की बनावट से शरीर की तीन मुख्य क्रियाओं का अन्दाजा लगता है जैसे जिस आदमी के सिर का पीछे का हिस्सा ज्यादा बड़ा बना होता है वह शारीरिक बल वाला मनुष्य होता है। जिसका सामने का ललाट ज्यादा ऊँचा और चौड़ा होता है उस मनुष्य की बुद्धि तीव्र होती है और जिस मनुष्य के सिर के बीच का हिस्सा ऊँचा होता है उस मनुष्य में नैतिक बल प्रधान होता है।

शारीरिक बल-प्रधान मनुष्य के सिर की आकृति

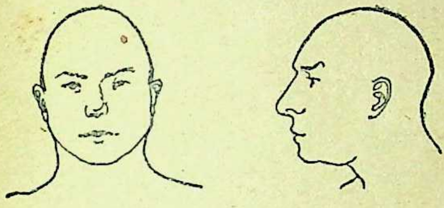

सिर के पीछे का हिस्सा ज्यादा बड़ा है।

नैतिक बल-प्रधान मनुष्य के सिर की आकृति

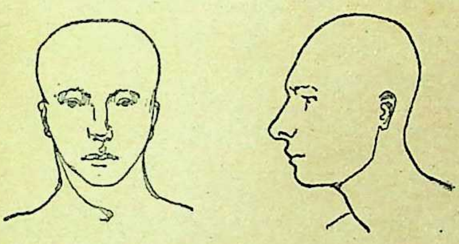

सिर के बीच का हिस्सा ज्यादा चौड़ा और ऊँचा है।

बुद्धि-प्रधान मनुष्य के सिर की आकृति

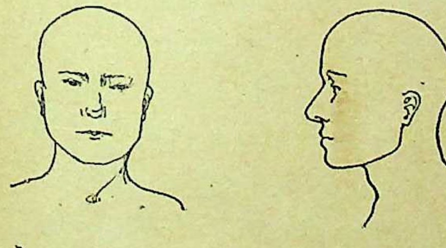

सिर के सामने का हिस्सा ज्यादा चौड़ा और ऊँचा है।

मनुष्य मात्र को इन तीन हिस्सों में बाँटने से साफ साफ पता चलेगा कि अमुक मनुष्य का कौन सा हिस्सा प्रधान है। मनुष्य की तीन विशेष क्रियाएँ (१) श्वास, (२) पाचन, (३) विसर्जन और उत्पादन हैं और ये तीन क्रियाएँ उसके सिर की बनावट से सम्बन्ध रखती हैं। सामने ललाट चौड़ा और ऊँचा होने से यह ज्ञात होता है कि उसकी बुद्धि प्रखर है। बीच का हिस्सा ऊँचा और चौड़ा होने से उसके नैतिक बल का पता चलता है और जिसका पीछे का हिस्सा बड़ा और चौड़ा होता है उसमें शारीरिक बल विशेष होता है।

सबसे सुन्दर और स्वस्थ मनुष्य वही कहा जा सकता है जिसमें शारीरिक, मानसिक और नैतिक बल सामान्य रूप से विशेष हो। पर ऐसे मनुष्य बहुत कम देखने में आते हैं। पर यह ठीक है इन तीनों गुणों का एक मनुष्य में कुछ न कुछ विकास हुआ ही रहता है। यदि मानसिक और नैतिक गुण विशेष बढ़ा है और मस्तिष्क के पीछे का हिस्सा अर्थात् शारीरिक बल का विकास बिल्कुल नहीं हुआ है तो उस मनुष्य को लड़कपन ही में खतम हो जाना चाहिए। इसी तरह से किसी भी मनुष्य में इन तीन गुणों में से किसी एक का बिल्कुल अभाव नहीं रहता। हाँ! यह अवश्य होता है कि एक मनुष्य के सिर की बनावट में यदि एक हिस्सा ज्यादा बढ़ा हुआ और चौड़ा होता है तो दूसरा हिस्सा उससे कम और तीसरा हिस्सा उससे भी कम होता है। जो हिस्सा सबसे ज्यादा बढ़ा हूआ होता है उस हिस्से को **आधार** कहते हैं और उससे कम बढ़े हुए को **झुकाव** कहेंगे और तीसरे को तीसरा हिस्सा कहेंगे। पहला सबसे मजबूत हिस्सा होता है, दूसरा उससे कमजोर और **तीसरा हिस्सा** सबसे कमजोर होता है। तीसरे को भी स्वभाव के अनुसार झुकाव ही कहना ठीक होगा।

अब एक मनुष्य को जानने के लिए अथवा उसका निदान करने के लिए उसके सिर को अच्छी तरह से निरीक्षण करना चाहिए और यह पता लगाना चाहिए कि उसके सिर पर कौन सा भाग सबसे ऊँचा, चौड़ा

और दृढ़ है और उसके बाद का कौन है? और सब से कम और ऊँचा चौड़ा कौन है? यदि झुकाव अर्थात् दूसरा हिस्सा साधारण रूप से आधार से कम बढ़े नहीं हैं तो आधार का पता लगाना कठिन होता है।

हर एक गुणों का अर्थात् मानसिक, शारीरिक तथा नैतिक का शरीर के विशेष अंग से सम्बन्ध होता है जिससे वह अपने अस्तित्व के लिए शक्ति का संचय करता है जैसे—मानसिक प्रवृत्ति वाला मनुष्य अपने फुप्फुस (Lungs) द्वारा ही शक्ति लेता है। ऐसे मनुष्य के लिए यह जरूरी है कि उसका फुप्फुस काफी मजबूत हो। इसी तरह शारीरिक बल वालों के लिए आँतें और नैतिक गुण वालों के लिए ऐसी ग्रन्थियों का स्वस्थ रहना बहुत ही आवश्यक है, जिनपर जननेन्द्रिय की शक्ति निर्भर करती है। अब यदि एक मनुष्य का ललाट ऊँचा और चौड़ा है और उसके सिर के बीच का हिस्सा कम बढ़ा है और पीछे का हिस्सा सबसे छोटा है तो ऐसे मनुष्य को देखने से यह ज्ञात होगा कि उसकी बुद्धि प्रधान है, नैतिक-शक्ति उससे कम और शारीरिक शक्ति सबसे कम है। इसका अर्थ यह हुआ कि उसके पचने का यंत्र शरीर के और अंगों से कमजोर है। उससे ज्यादा ताकत वाला भाग, जननेन्द्रियों को संचालित करने वाली ग्रन्थियाँ हैं। जब पहले पहल बीमारी शुरू होती है तो कमजोर भाग से ही शुरू होती है और यदि बीमारी का उपयुक्त इलाज नहीं हुआ तो उसके बाद वाले हिस्से को रोग पकड़ता है और यदि फिर भी बीमारी का इलाज ठीक नहीं हुआ तो बीमारी आगे बढ़ती है और सबसे मजबूत वाले हिस्से में पहुँच जाती है। पुरानी बीमारी जब सबसे मजबूत वाले हिस्से में जाती है तो नवीन रूप धारण करती है। फिर मनुष्य का बचना मुश्किल हो जाता है। चिकित्सक को यह अच्छी तरह से जान लेना चाहिए कि बीमारी का रूप क्या है। अर्थात् किस अवस्था अथवा किस अंग तक पहुँची है। इसीको जान कर रोग का इलाज करना चाहिए। नीचे इस निदान पद्धति के कुछ नमूने दिए जाते हैं।

क—साधारण व्यक्ति शारीरिक शक्ति प्रधान

(क)—आधार शरीर, पहला झुकाव नैतिक, दूसरा झुकाव मानसिक।

१—सबसे मजबूत हिस्सा, पाचनक्रिया।

२—आधार यंत्र, यकृत (Liver)।

३—मध्य भाग उत्पादन शक्ति। वैसी ग्रन्थियाँ जो जनन-शक्ति को मदद करती हैं (Ductless glands)।

४—सबसे कमजोर हिस्सा फुप्फुस।

मुख्य लक्षण—ऐसी बीमारी जो जननेन्द्रिय और उत्पादन ग्रन्थियों की हो।

बीमारी—ऐसी बीमारियाँ जो समय पर नहीं रोकी गईं। जिनका इलाज गलत हुआ, जिससे पाचनक्रिया पर खराब असर पड़ा अर्थात् लीवर, यकृत की बीमारी हुई। इसके बाद जो रोग आवेंगे वे होंगे, मधुमेह, जलोदर आदि। लीवर की खराबी का पहला लक्षण गठिया है, जो आगे चल कर दिल के ऊपर असर करता है और उसे खराब कर देता है।

लक्षण—ऐसे रोगी की हालत उस समय तक अच्छी समझी जाती है जब तक कि बीमारी ने यकृत में पहुँच कर यकृत को खराब नहीं कर दिया है अर्थात् यह समझा जाय कि अभी बीमारी इस हालत में नहीं पहुँची है जिससे यकृत खराब हो गया हो। यकृत ही उस हालत में शक्ति पहुँचाने का यन्त्र है। यदि ऐसे मनुष्य को यकृत की बीमारी शुरू हो तो यह निश्चय है कि उसका यकृत पहले से खराब होगा। ऐसे मनुष्य की हालत उस समय तक सुधरने लायक समझी जायगी जब तक यकृत बीमारी निकालने में समर्थ रहेगा। जब यकृत की हालत गिर जाती है और यकृत की हरकतें बन्द होने लगती हैं तो ऐसे मनुष्य का बचना मुश्किल हो जाता है।

इलाज

ऐसा प्राकृतिक इलाज होना चाहिए जिसमें सारे अंगों (शरीर) की गन्दगी निकले। खास कर यकृत की

मजबूत करने की कोशिश करनी चाहिए और ऐसी कोशिश करनी चाहिए जिससे यकृत को कम॰ काम करना पड़े।

ख–साधारण व्यक्ति, शारीरिक शक्ति प्रधान

आधार-शारीरिक। पहला झुकाव मानसिक, दूसरा झुकाव नैतिक।

सबसे मजबूत हिस्सा—पाचन-क्रिया।

दूसरा मजबूत हिस्सा—फुप्फुस।

सबसे कमजोर हिस्सा—ऐसी गिल्टियाँ जो उत्पादन-क्रिया में मदद करती हैं।

मुख्य लक्षण और उभाड़—ऐसी बीमारियाँ चाहे जितनी खराब दिखें पर इसकी वजह से यकृत में कोई खराबी नहीं पहुँची हो तो वह रोगी जरूर अच्छा होगा। बीमारी खतरनाक समझी जायगी, यदि बीमारी ने लीवर को खराब कर दिया है। इलाज और लक्षण (क) की तरह चलेगा।

क—नैतिक प्रवृत्ति का मनुष्य

आधार नैतिक। पहला झुकाव शारीरिक, दूसरा झुकाव मानसिक।

ख—१—सबसे मजबूत हिस्सा—नल्ली रहित गिल्टियाँ।
२—आधारयंत्र—उत्पादन-क्रिया।
३—बीच का यंत्र—पाचन-क्रिया।
४—सबसे मजबूत हिस्सा—फुप्फुस।
५—**मुख्य लक्षण और उभाड़**—पाचन-क्रिया।

यकृत की बीमारियाँ आसानी से अच्छी हो जायँगी। वैसी बीमारियाँ जो उत्पादन-यंत्र को बहुत खराब कर दें और इसकी वजह से नल्ली रहित ग्रन्थियाँ अस्वस्थ हो जायँ तो ऐसे मनुष्य कभी नहीं अच्छे हो सकते।

नैतिक प्रवृत्ति वाले मनुष्यों का स्नायुजाल बहुत मजबूत होना चाहिए और यह नल्ली रहित ग्रन्थियों के स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। इस प्रणाली के मजबूत रहने से वह दूसरे हिस्से की बीमारियों को आसानी से झेल लेता है और अच्छा कर लेता है।

इलाज

ऐसी बीमारियों का इलाज करने में यह देखना जरूरी है कि इलाज की दशा में रोगी की किसी तरह से वीर्य की हानि न हो। या यों कहिए कि ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए। भोजन का सुधार कराइए और कभी कभी कुछ दिनों का उपवास भी करना चाहिए। पीठ के नीचे के हिस्से को रोज धूप-स्नान देना चाहिए। बाकी हिस्से को बचा रखना चाहिए।

ख—नैतिक प्रवृत्ति का मनुष्य

आधार नैतिक, पहला झुकाव—मानसिक, दूसरा झुकाव—शारीरिक।

१—सबसे मजबूत हिस्सा—नल्ली रहित ग्रन्थियाँ।
२—आधारयंत्र—उत्पादन क्रिया।
३—बीच का यंत्र—श्वास क्रिया।
४—सबसे कमजोर यंत्र—पाचन क्रिया।

मुख्य लक्षण और उभाड़—वैसी बीमारियाँ जो फुप्फुस की हों या पेट की हों आसानी से अच्छी हो जायँगी और यदि बढ़ कर आधारयंत्र तक बीमारी पहुँच गई हो तो उसका अच्छा होना असम्भव है।

इसका इलाज (क) की तरह होगा।

क—मानसिक प्रवृति का मनुष्य

आधार—मानसिक, पहला झुकाव—शारीरिक, दूसरा झुकाव नैतिक।

१—सबसे मजबूत यंत्र—फुप्फुस।
२—बीच का यंत्र—पाचन क्रिया।
३—सबसे कमजोर भाग—नल्ली रहित ग्रन्थियाँ।

मुख्य लक्षण और उभाड़—ऐसी बीमारियाँ जो

फुप्फुस तक नहीं पहुँची हैं। वे चाहे जितनी भी भयंकर दीखती हों ठीक इलाज से जरूर अच्छी हो जांयगी। वैसी बीमारियाँ जो फुप्फुस की हों अर्थात् यक्ष्मा आदि ऐसे रोगी के लिए घातक हैं।

इलाज

भोजन सुधार के साथ छोटे छोटे उपवास और साथ ही स्वांस की कसरतें करानी चाहिए। साथ ही खुली हवा में घूमने का आदेश देना चाहिए।

ख—मानसिक प्रवृत्ति का मनुष्य

आधार—मानसिक। पहला झुकाव—नैतिक। दूसरा झुकाव—शारीरिक।

१—सबसे मजबूत यंत्र—फुप्फुस।
२—बीच का यंत्र—नल्ली रहित ग्रन्थियाँ।
३—सबसे कमजोर यंत्र—पाचन क्रिया।

लक्षण और उभाड़—स्नायु और उत्पादन क्रिया की बीमारियाँ कितनी भी खराब दिखती हों पर वे जरूर अच्छी हो जायँगी। पर यदि फुप्फुस में विशेष खराबी पहुँचेगी तो अच्छा होना नामुमकिन है।

जब एक मरीज डाक्टर के पास आए तो उस डाक्टर को रोगी का सिर देख कर पता लगाना चाहिए कि वह किस आधार का मनुष्य है। पहला और दूसरा झुकाव क्या है? इसके बाद उसकी बीमारी के सारे लक्षणों को जानना चाहिए। फिर इसके बाद यह देखना चाहिए कि बीमारी का प्रकोप कहाँ तक बढ़ा है? यदि बीमारी बढ़ कर आधारयंत्र तक गड़बड़ी पहुँचा चुकी है तो ऐसी बीमारी का इलाज न करना चाहिए। आधार-निदान जानने वालों को यह अच्छी तरह पता चल जाता है कि बीमारी अच्छी होगी या नहीं। फिर उसे यश ही मिलता है और बदनामी उठाने का मौका ही नहीं आता। मैं समझता हूँ कि आधार-निदान से विशेषतः इलाज करने वाले तथा साधारण व्यक्ति भी काफी लाभ उठा सकते हैं।

* * *

यदि कभी इत्तिफाक से भोजन करने के लिए केवल दस मिनट मिलें तो जितना उतने समय में अच्छी तरह चबा कर खाया जासके खा लेना चाहिए और बाकी का भोजन छोड़ देना चाहिए। यदि किसी होटल में भी खा रहे हों तो कभी यह चिन्ता न करनी चाहिए कि पूरे भोजन के दाम देने पड़ रहे हैं। थोड़ा ही सही जो भोजन चबाकर खाया जायगा वह पचेगा, उससे स्वास्थ्य बनेगा और शक्ति बढ़ेगी। बढ़िया भोजन भी यदि अच्छी तरह चबा कर नहीं खाया जायगा तो वह पचेगा नहीं और उसे बाहर निकालने में शरीर की व्यर्थ में शक्ति खर्च होगी। जब तक भोजन मुँह में लेई की तरह न हो जाय चबाना चाहिए। भूख लगने पर खाने से और कच्चा भोजन ग्रहण करने से चबाने की आदत पड़ती है।

भोजन के साथ पानी न पियें। पानी भोजन के आध घंटे पहले या दो घंटे बाद पीना चाहिए। दूध को भोजन समझें, न कि जल। दूध सवेरे फलों के साथ नाश्ते के तौर पर लेना अच्छा होता है।

जीर्णरोग—उनका कारण और निवारण

श्रीयुत विट्ठलदास मोदी

प्राकृतिक-चिकित्सा का सिद्धान्त है कि सभी रोग एक हैं और उनकी चिकित्सा भी एक ही है तथा रोगों को दूर करने के लिए यह चिकित्सा-पद्धति प्राकृतिक साधन—भोजन, जल, वायु, धूप कसरत का सहारा लेने की सलाह देती है। अनुभवी लेखक ने इस लेख में इन प्राकृतिक साधनों के उपयोग का ढंग बताकर उनके समुचित प्रयोग की विवेचना बड़े ही सरल ढंग से की है।—सं०

लेखक

आधुनिक सभ्यता की उन्नति के साथ साथ मनुष्य अपने स्वाभाविक जीवन से अधिकाधिक दूर होता गया है और उसका जीवन इतना अप्राकृतिक हो गया है तथा उसने अनजान में ऐसी आदतें डाल ली हैं जिनके कारण उसका शरीर रोग का निवास बन गया है, यहाँ तक कि रोग उसे अस्वाभाविक नहीं मालूम होते। वह यह समझना भूल गया है कि शरीर का स्वभाव ही स्वस्थ रहना है।

जो स्त्री पुरुष पूर्णतया अथवा करीब करीब स्वस्थ रहते हैं उनके जीवन का यदि निरीक्षण किया जाय तो ज्ञात होगा कि उनको इसके लिए प्रयास नहीं करना पड़ता। मन और शरीर को जब स्वस्थ रहने की आदत पड़ जाती है तब रोग को स्थान नहीं मिलता।

यदि सजीवता और शक्ति के केन्द्र स्वास्थ्य को लौटाया जा सके तो जिस प्रकार सूर्य की प्रकाशमान किरणों के आगमन के बाद रात्रि के अन्धकार के लिए स्थान नहीं रहता उसी प्रकार रोगों के लिए शरीर में स्थान न रहेगा।

रोगों को दूर भगाने की विधि जानने के पहले यह जान लेना चाहिए कि रोगों का कारण केवल एक है और रोग गन्दगी को निकाल कर स्वस्थ होने का शरीर का प्रयास है। शरीर का रक्त जब शुद्ध एवं विकारहीन रहता है, कोई रोग नहीं होता पर जब रक्त की जीवन-दायिनी शक्ति क्षीण हो जाती है, एवं वह मलयुक्त हो जाता है तो अनेक रोग होते हैं। रक्त में विकार तभी उत्पन्न होता है जब हमारे शरीर के विकार निकालने वाले अवयव, मल, मूत्र, पसीना, स्वाँस आदि द्वारा, नित्य पैदा होने वाले विकार को पूर्णतया नहीं निकाल पाते। बचा हुआ विकार शरीर में रह जाता है और रक्त को गन्दा कर देता है, फिर रोग, कष्ट, दुःख का आगमन होता है। यदि रक्त के विकारयुक्त हो जाने की सूचना दुःख, दर्द, पीड़ा के रूप में हमें न मिले और रक्त अधिकाधिक विकारयुक्त होता रहे तो मृत्यु अवश्यम्भावी है। अतः सर फेडरिक के शब्दों में "रोग परमात्मा की एक आशीर्वादात्मक देन है, इसका स्वभाव ही रक्षा करना है।

मैं जो यह कह रहा हूँ कि—यदि रोग न होते तो मनुष्य जाति कभी की समाप्त हो गई होती—अपने विषय पर बहुत कम जोर डाल पा रहा हूँ।" रोगों के मित्र-रूप को पहचानना चाहिए। वे प्रकृति की वह सूचना हैं जिनपर हमें तुरन्त ध्यान देना चाहिए। इस सूचना को शत्रु समझ कर उसे दबाने की कोशिश करने के बजाय हमें रोग के कारण को समझ कर उसे दूर करने की कोशिश करनी चाहिए।

जब सूचना को ठीक ठीक समझा नहीं जाता, उसके कारण को दूर करने के बजाय उन्हें दबाया जाता है, सूचना धीरे धीरे धीमी एवं उसकी शक्ति मन्द पड़ जाती है। यहीं से जीर्ण रोग की जड़ जमती है। यह सूचना हमारी जीवनी-शक्ति की सूचक है जो शरीर की सफाई करने एवं रोग दूर करने की कोशिश करती रहती है। इस शक्ति के कमजोर पड़ने का अर्थ है शरीर की सफाई की शक्ति का कमजोर पड़ना, जीवनी-शक्ति का ह्रास।

जीर्ण रोग को दूर करना इसी जीवनी-शक्ति को उभाड़ कर रोग को उग्र रूप में लाने की कला है। जो जितना ही उभाड़ लाने, उसे समझने की कला में निपुण होगा वह उतना ही शरीर को रोगमुक्त करने में सफल होगा।

उपचार के साधन

प्राकृतिक चिकित्सा में उपचार के साधन हैं—भोजन, जल, वायु, धूप, कसरत। इन सबका सम्मिलित सहारा बड़ी समझदारी के साथ लेना चाहिए। कभी यह न समझना चाहिए कि इनका प्रयोग जितना ही अधिक किया जायगा, लाभ उतना ही अधिक होगा। देखने में यह गलत मालूम हो सकता है पर वास्तविकता यही है। बुद्धिमानी इसीमें है कि रोग और रोगी की शक्ति के अनुसार इनका प्रयोग न्यूनाधिक मात्रा में किया जाय। उपचारों का प्रयोग आरम्भ करने के पहले रोगी से उसके औषध प्रयोग का इतिहास और उसके दैनिक भोजन क्रम को अच्छी तरह जान लेना चाहिए। यदि रोगी मांसाहारी है अथवा डाक्टरी दवाओं का अधिक प्रयोग किया है तो ऐसे रोगी का उपचार करते समय बहुत सजग रहना चाहिए और चिकित्सा के साधनों का प्रयोग बहुत अल्प मात्रा से शुरू करना चाहिए। अधिकतर रोगों का कारण विकृत भोजन ही हुआ करता है अतः सभी रोगियों का उपचार भोजन सुधार से आरम्भ होना चाहिए।

भोजन

भोजन जीवन देने वाला तो है ही, जीवन लेने वाला भी है। तीव्र रोगों में अधिकतर लोगों के प्राण भोजन ग्रहण करने के कारण ही जाते हैं। वैसी हालत में कुछ न करके केवल भोजन छोड़ दिया जाय तो प्रायः सभी रोग अपने आप शान्त हो जायँ। जीर्ण रोग के रोगी को भी भोजन के इस गुणावगुण पर सदा ध्यान रखना चाहिए। जो भोजन उपयुक्त हो उसे भी उचित मात्रा में ही ग्रहण करना चाहिए। कभी यह न सोचना चाहिए कि जितनी सफाई का काम एक शन्तरा करेगा उससे दूनी दो शन्तरे। अमृत भी यदि मात्रा से अधिक ग्रहण किया जायगा तो विष का ही काम करेगा।

भोजन को दो मोटे भागों में बाँटा जा सकता है। एक कफ-कारक दूसरा कफ-निवारक। कफ-निवारक भोजन हैं, कन्द को छोड़ कर सभी ताजी हरी भाजियाँ और कटहल केले को छोड़ कर सभी ताजे फल। इनके अलावा सभी खाद्य-पदार्थ जैसे दाल, भात, रोटी, मांस, मछली, तेल-घी, सूखे मेवे, गुड़-चीनी कफ-कारक हैं। इसमें सन्देह नहीं कि कफ-निवारक भोजन ही रोग दूर करने में सहायक होते हैं पर इसका अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य को कफकारक भोजन की आवश्यकता ही नहीं है। स्वास्थ्य की दशा में तो है ही, रोग की दशा में भी इसका यथा उचित प्रयोग होना चाहिए।

अच्छे परिणाम के लिए कफनिवारक भोजन का प्रयोग खूब समझ बूझ कर करना चाहिए। यदि रोगी के भोजन से सभी कफकारक खाद्यपदार्थ एक साथ निकाल दिए जायँगे तो सफाई का काम तेजी से चलने के कारण उपद्रव इतने तीव्र एवं अधिक होंगे कि रोगी उन्हें सँभाल

न सकेगा। अंतः सफाई का काम धीरे धीरे चलाने के लिए कफकारक भोजन की मात्रा क्रमशः कम करनी चाहिए। एक हद तक सफाई हो जाने के बाद ही केवल कफनिवारक भोजन पर रोगी रह सकता है। रोगी को शक्ति के अनुसार कुछ दिन तक कफनिवारक भोजन पर रखकर फिर थोड़ा सा कफ-कारक भोजन देने लग जाना चाहिए। कफकारक भोजन में केवल गेहूँ की सादी रोटी और कच्चे दूध का व्यवहार उचित होगा। मानलें कि रोगी सवेरे दोपहर, शाम अर्थात् तीन बार खाता है तो अल्पारम्भः के अनुसार पहले रोगी का जलपान केवल फलों का किया जाय फिर शाम के भोजन में फलों की और इसके बाद दोपहर के भोजन में कच्ची सब्जियों की सलाद के रूप में अधिकता की जाय। धीरे धीरे शाम का भोजन भी कफ-निवारक अर्थात् फल अथवा कच्ची या पकी सब्जी, कर दी जाय फिर कुछ समय के लिए दोपहर के भोजन को भी कफ-निवारक खाद्य-पदार्थों का कर दिया जाय। एक कार्यक्रम सा बना लेना चाहिए और उसीके अनुसार चलना चाहिए। यदि महीने भर का कार्य-क्रम बनाया जाय तो इस हिसाब से एक सप्ताह या तीन-चार दिन तक केवल कफ-निवारक भोजन ग्रहण किया जाय। फिर एक सप्ताह के लिए केवल दोपहर को कफ-कारक भोजन के रूप में रोटी जोड़ी जाय और महीने के शेष दिनों में शाम को भी कफ-कारक भोजन थोड़ा दूध के रूप में लिया जाय। इस तरह महीने के शेष दिनों में सवेरे फल, दोपहर को कच्ची और पकी सब्जी और रोटी और शाम को फल और दूध होगा। ज्यों ज्यों शक्ति बढ़ती जाय और सफाई होती जाय, कफ-विहीन भोजन का समय बढ़ाते जाना चाहिए और रोग-मुक्त होने पर महीने के शेष दिनों के लिए बताया गया संतुलित भोजन ग्रहण करने लग जाना चाहिए।

जल

रोगों को दूर करने के लिए दूसरा पुरअसर साधन है जल। पीने और सफाई के लिए साफ जल की आवश्यकता तो सभी को होती है पर प्राकृतिक-चिकित्सा में इसका विशेष उपयोग होता है। शरीर की बढ़ी गरमी शान्त करने के लिए कुछ विशेष स्नान निकाले गए हैं। इन स्नानों की संख्या बहुत बड़ी है; इनमें से घर पर चिकित्सा चलाने के लिए और भारतीय जल-वायु को देखकर भी लूईकूने द्वारा बताए हुए मेहन और पेड़ू नहान[1] सर्वोत्तम हैं। पेड़ू-नहान शरीर की बढ़ी हुई गरमी को पेड़ू में लाकर शान्त करता है और मेहन-नहान स्नायुओं को ताकत पहुँचाता है। गरमी शान्त करने के बाद ताकत पहुँचाने का काम शुरू होना चाहिए। अतः कुछ दिन सवेरे शाम पेड़ू-नहान लिया जाय, फिर सवेरे के पेड़ू-नहान के बदले मेहन-नहान किया जाय, इसके बाद दोनों समय मेहन-नहान लिया जाय।

कई लोग यह समझ कर कि यदि ये नहान अधिक देर तक लिए जायँगे तो लाभ अधिक होगा, इन नहानों को घंटे-घंटे भर तक लेते रहते हैं इसमें शक्ति का अपव्यय होता है, कमजोरी बढ़ती है और मनोवांछित फल दूर होता जाता है नहानों का प्रयोग बहुत बुद्धिमानी के साथ करना चाहिए। यदि नहानों की आवश्यकता अधिक प्रतीत हो तो दो बार के बदले तीन बार नहान लेना ठीक होगा पर एक बार में अधिक देर तक नहीं। गरमी के दिनों में ये स्नान जाड़े के दिनों से अधिक देर तक लिए जा सकते हैं, पर एक रोगी के लिए जितना समय उचित होगा दूसरे के लिए नहीं। समय का निर्धारण भी रोग और रोगी का बलाबल देखकर ही निश्चित करना चाहिए। इन नहानों को पाँच-सात मिनट से शुरू करके एक बार में दस-पन्द्रह मिनट तक लेना समुचित होगा।

---

[1] इन नहानों की विधि लूईकूने की पुस्तक 'दी न्यू साइन्स आफ हीलिंग' के किसी अनुवाद से अथवा 'रोगों की अचूक-चिकित्सा' से जानी जा सकती है।

लूईकूने के कट्टर मानने वाले इन नहानों के बाद पसीना लाने पर बहुत जोर देते हैं, यदि रोगी में कड़ी कसरत करने की ताकत न हो तो वे आग के पास तक बैठने की राय देते हैं। यह गलत है। समझने की बात केवल इतनी ही है कि इन नहानों के लेने से जो ठंडक आती है, वह जानी चाहिए; अर्थात् नहान लेने के पूर्व की हालत हो जानी चाहिए। कहीं इतनी गरमी पड़ रही हो कि पसीना आ रहा हो तो इस नहान के बाद पसीना लाने की राय दी जा सकती है, अन्यथा नहीं। अतः नहान के बाद शक्ति के अनुसार टहलना, दौड़ना, हलकी कसरत करना काफी है। जो अशक्त हैं वे सिर को ढक कर नंगे बदन धूप में बैठ सकते हैं अथवा गरम कपड़े ओढ़ कर लेट सकते हैं।

जिन दिनों केवल कफ-विहीन भोजन ग्रहण किया जा रहा हो, नहान बन्द रखने चाहिए। सफाई का दोहरा काम चलाना अधिकतर रोगियों के लिए बहुत उग्र प्रमाणित होगा।

आँतों की सफाई के लिए जल का प्रयोग एनीमा द्वारा किया जाता है। उपवास रसाहार में इस प्रयोग की नित्य आवश्यकता होती है। फलाहार करते समय अथवा साधारण भोजन करने के दिनों में भी यदि पेट की सफाई अपने आप न हो तो इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिए। कुछ लोग एनीमा से इसलिए डरते हैं कि इसकी आदत पड़ जायगी। यह भ्रम है। साल भर लगातार एनिमा लेने पर भी लोगों को इसकी आदत नहीं पड़ी है।

वायु

वायु के प्रयोग पर बहुत थोड़े चिकित्सक और रोगी ध्यान देते हैं। योग में वायु के प्रयोग को प्राणायाम कहा गया है जिसके विधिवत प्रयोग से अनेक रोग जाते हैं। वायु के सरल प्रयोग से होने वाले लाभ पर दृष्टि न रखना भारी भूल होगी। पर इसका अच्छा प्रयोग स्वच्छ वायु में ही होता है। स्वच्छ साफ वायु में खड़े होकर धीरे धीरे नाक द्वारा साँस लेते हुए फेफड़ों को भरना चाहिए और फिर नाक द्वारा ही पूर्ववत् निकाल देना चाहिए। कई लोग साँस लेने के बाद उसे फेफड़ों में रोक रखने की सलाह देते हैं; वायु के फेफड़ों में पहुँचते ही उनकी संजीवनी शक्ति शरीर द्वारा ग्रहण कर ली जाती है अतः बेजान वायु को रोके रखने में कोई लाभ नहीं है।

वायु के प्रयोग की क्रिया दिन में कई बार की जा सकती है। इसका मेल कसरत और टहलने से भी मिलाया जा सकता है। यदि हर समय स्वच्छ वायु में रहने का इन्तजाम किया जा सके तो रोग शीघ्रता से जायगा। अतः रोगी को बाग-बगीचे अथवा गाँव में, खेत के या नदी के किनारे रहना चाहिए। दिन भर शहर में काम करके शाम को स्वच्छ वायु वाले स्थान को लौट जाया जाय तो भी लाभ कम न होगा।

धूप

लूईकूने ने रोम-कूपों को खोल कर पसीना लाने के लिए भाप-नहान पर बहुत जोर दिया है। पर हमारे देश में साल भर मिलने वाली धूप से यह काम बहुत मजे में लिया जा सकता है। इसके अलावा धूप की संजीवनी शक्ति का अपना प्रभाव है। उसमें मिलने वाली अल्ट्रा वायलेट किरणों में रोग नाश करने की बहुत अधिक शक्ति होती है। जाड़े में जब कभी भाप भी ली जा सकती है।

धूप-नहान के लिए दिन में किसी समय भी नंगे बदन धूप में लेटना चाहिए, केवल सिर को गीले तौलिए आदि से ढके रहना चाहिए। धूप लेने के बाद ठंडे पानी से नहा डालना चाहिए अथवा भीगे कपड़े से बदन को पोंछ डालना चाहिए। धूप-नहान शक्ति और आदत के अनुसार न्यूनाधिक मात्रा में नित्य अथवा सप्ताह में चार-पाँच दिन अवश्य लेना चाहिए। गर्मी के दिनों में सप्ताह में एक बार ही यह नहान लेने से काम चल सकता है। धूप बहुत तेज हो तो सारे बदन को केले के पत्तों से ढक दिया जा सकता है।

कसरत

रक्तसंचालन को ठीक रखने के लिए कसरत बहुत

उपयोगी है। बुढ़ापे का अर्थ ही है रक्तसंचालन में कमी। अतः रोगी को रोग भगाने एवं नवीन बनने के लिए कसरत का सहारा अवश्य लेना चाहिए। कोई भी कसरत ठीक है, क्योंकि सभी कसरतें रक्तसंचालन में सहायक होती हैं अतः कसरत नहीं, शक्ति के अनुसार कसरत चुननी चाहिए। टहलना ऐसी कसरत है, जिसे सभी उम्र वाले कर सकते हैं। टहलने में कड़ी कसरतों की जो बुराइयाँ हैं, वे भी नहीं हैं। अतः रोगी की प्रधान कसरत है टहलना। शक्ति के अनुसार सुबह शाम एक से चार मील तक टहला जा सकता है। चिकित्साकाल में कसरत का सबसे अच्छा समय है नहान लेने के बाद। इस समय टहलने से कसरत तो होती ही है, नहान के बाद आवश्यक गरमी भी आती है।

ऊपर बताई विधि से कोई भी जीर्ण रोग दूर किया जा सकता है। पर यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि जीर्ण रोग जाने का अर्थ है तीव्र रोग आने की शक्ति आना। जीर्ण रोग के उपचार काल में तीव्र रोग को उभाड़ के नाम से पुकारा जाता है। ज्यों ज्यों शक्ति बढ़ती जाती है, जीवनी शक्ति तीव्र होती जाती है, गन्दगी अथवा रोग के लिए शरीर में रहना कठिन हो जाता है, और वे बाहर आ जाते हैं। यही सफाई की स्वाभाविक क्रिया है। जीर्ण रोग के उपचार करते समय जो उभाड़ हों, उनका तीव्र रोग की तरह ही उपचार होना चाहिए।

कई रोगी यह देखते रहते हैं कि अभी रोग इतना गया, इतना नहीं गया। यदि इतना इतने दिन में गया तो इतना इतने दिन में जायगा। इस दृष्टिकोण के कारण प्रायः निराशा होती है। कई बार रोग देखने में प्रायः चला सा जाता है, कोई बाहरी लक्षण प्रतीत नहीं होता, ऐसी दशा में लोग उपचार छोड़ कर फिर पुरानी आदतों को पकड़ लेते हैं। ऐसी हालत में रोग फिर होता है और प्राकृतिक उपचार को बदनाम किया जाता है। रोगी को रोग की ओर ध्यान न देकर जीवनी-शक्ति को समझने की कोशिश करनी चाहिए। जब इस हद तक शरीर की सफाई हो जाय, जीवनी-शक्ति बढ़ जाय कि शरीर में गंदगी इकट्ठा होते ही शरीर उसे तीव्र रोग के रूप में बाहर फेंक दे तभी रोग मुक्त हुआ समझना चाहिए।

रोग जाने के बाद

रोग जाने के बाद कैसा जीवन-क्रम होना चाहिए, इस पर अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। जिस पथ के ग्रहण करने से रोग हुआ था, उसे फिर यदि ग्रहण किया जायगा तो रोग होगा ही, इसमें संदेह नहीं। हाँ, उस रोग का नाम फिर कुछ और पड़ सकता है।

स्वास्थ्य और विचार

इस लेख को समाप्त करने के पहले मैं चाहता हूँ कि पाठकगण विचार और स्वास्थ्य के सम्बन्ध को अवश्य समझ लें। रोग भगाने के लिए स्वस्थ विचारों की बड़ी आवश्यकता होती है।

रोग कितना भी भयंकर क्यों न हो, उसकी भयंकरता के सारे विचार रोगी को अपने दिमाग से निकाल देना चाहिए। जहाँ तक हो सके रोग को सरल समझना चाहिए। इसमें तो संदेह ही नहीं कि उचित उपचार से रोगों की भयंकरता स्वतः चली जाती है। निराश तो कभी होना ही न चाहिए। विश्वास रखना चाहिए कि मेरा स्वस्थ होना निश्चित एवं ध्रुव है। ऐसा विश्वास करने की आवश्यकता पर जितना जोर दिया जाय थोड़ा है। इस विश्वास के बल पर रोग भगाकर स्वास्थ्य लौटाया जा सकता है और मृत्यु जीवन में परिणत की जा सकती है।

रोग दूर करने में विचारों से लाभ उठाने के लिए इस बात पर विश्वास करना चाहिए कि मैं स्वस्थ हो सकता हूँ और अवश्य हो जाऊँगा। फिर इस तरह का आचरण कीजिए कि जैसे आप स्वस्थ हैं और हमेशा अपने को शक्ति, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, आशा एवं स्फूर्ति का केन्द्र समझिए। फिर ये सभी आपके पास बिना बुलाए आ जायँगे।

* * *

बद्धकोष्ठ-चिकित्सा

प्रो० भवानीप्रसाद प्राकृतिक स्वास्थ्य-शास्त्रोपाध्याय

यदि यह कहा जाय कि प्रायः सभी कब्ज से पीड़ित हैं तो यह बहुत बड़ी अत्युक्ति न होगी। पर आश्चर्य तो यह है कि अधिकतर चिकित्सक रोगों की इस जड़ को उखाड़े बिना ही रोग भगाने का प्रयत्न करते हैं। इसीलिए रोग एक बार जाकर फिर फिर लौटते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के उन्नायकों ने यह बात बहुत पहले ही समझ ली थी। यही नहीं वे तो यह भी मानते हैं कि कब्ज चला जाय तो रोग चला जाय, इसीलिए सारी चिकित्सा पद्धति ही कब्ज हटाने, पेड़ू की गरमी दूर करने पर आश्रित है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्राकृतिक चिकित्सा के प्रोफेसर भवानीप्रसादजी ने इस विषय पर हुए अब तक के अनुसन्धानों पर प्रकाश डाल कर कब्ज हटाने के प्रबल साधन एनीमा की उपयोगिता समझाई है।—सं०

यूँ तो संसार की सारी चिकित्सा पद्धतियाँ इस विषय में सहमत हैं कि सब रोगों का मूल कारण बद्धकोष्ठ अथवा मलबन्ध ही है, परन्तु प्रत्यक्ष और अनुभवशाली पाश्चात्य प्राकृतिक चिकित्सकों ने इस विषय में जो प्रत्यक्ष अनुभव किए हैं, उन्हींका संक्षिप्त वर्णन इस लेख में किया जाता है।

संयुक्त राज्य की राज्यव्यवस्थापक सभा के सदस्य (Senator Royal) और न्यूयार्क नगर के भूतपूर्व स्वास्थ्याधिकारी डा० कोपलैंड (Commissioner of Health—Dr. Copland M. D.) बद्धकोष्ठ के विषय में लिखते हैं कि "मनुष्य के समस्त रोगों का यदि कोई एक उत्तरदायी कारण है तो वह बद्धकोष्ठ है।"

कोष्ठबद्ध का लक्षण कितना व्यापक है, वह कितना फैला हुआ है यह बड़े आश्चर्य की बात है। मैं उसको लक्षण इसलिए कहता हूँ कि वह स्वयं कोई रोग नहीं है, किन्तु बहुत से सम्भव कारणों का कार्य अथवा परिणाम हैं।

सबसे अधिक उपहास की बात तो यह है कि अधिकांश मनुष्यों को, जिनको कि दिन रात में केवल एक बार अधःशौच होता है, बद्धकोष्ठ रहता है। यदि आप उनसे इस विषय में प्रश्न करेंगे तो यही उत्तर देंगे कि हमको तो नियमपूर्वक ठीक ठीक शौच होता है।

किन्तु वास्तविक बात तो कुछ और ही होती है। उनकी निचली आँतों (बृहदन्त्र व मलाशय) में मल ठसाठस भरा रहता है। उनके मल-विसर्जन का प्रवाह मन्द होता है। फलतः उनको उनके नित्य के अधःशौच में जो मल निकलता है, वह आँतों में रुका हुआ कई दिन का वह मल होता है जो कई दिन पूर्व निकल जाना चाहिए था।

कोई भी मनुष्य, जिसकी आँतों में उफनता हुआ मल भरा हुआ है पूर्ण स्वस्थ नहीं कहा जा सकता। इस रुके हुए मल का शोषण (संचार व प्रवेश) उसकी रक्त धारा में अवश्यमेव होता रहता है। उसके शरीर के सामर्थ्य का ह्रास भी अवश्यमेव होता है। चाहे उसके देह में किसी रोग का प्रत्यक्ष प्रादुर्भाव प्रतीत न होता हो।

उग्र विरेचक व मृदु विरेचक औषधियों से कोष्ठशोधन क्यों नहीं हो सकता?

डा० पी० लाक हार्ट ममेरी (P. Lack Hart

Mumery) F. B. G. T. Eng. जो सेंट मार्क अस्पताल के प्रधान शल्य-चिकित्सक (Senior surgeon) थे और जो इङ्गलैण्ड के प्रमुख विशेषज्ञों में गिने जाते थे, अपने ग्रन्थ 'Diseases of Rectum and colon' (गुदानलिका तथा बृहदन्त्र के रोग) में लिखते हैं :—

"बद्धकोष्ठ मल के, अन्नप्रणाली के मार्ग में रुके रह कर निकलने से होता है। बद्धकोष्ठ अन्नप्रणाली के किसी भी भाग में हो सकता है किन्तु वह प्रायः बृहदन्त्र (नीचे की बड़ी आँतों) में होता है और उसके बहुत से कारण हैं। आजकल बद्धकोष्ठ का विचार विशेष रोग के रूप में सम्भव नहीं है। सबसे पूर्व उसके कारण का ज्ञान होना चाहिए। वर्तमान काल के बहुत से रोगों के समान पुराना (जीर्ण) बद्धकोष्ठ भी आधुनिक सभ्यता का फल है। असभ्य जातियों और जन्तुओं (पशुओं) में क्रियात्मक रूप से वह नहीं पाया जाता, किन्तु सभ्यजनों में यह अति साधारण बात है और हमारे बड़े नगरों में रोगप्रसार का यही मुख्य कारण है। इतने फैले हुए बद्धकोष्ठ की प्रवृत्ति की उत्तरदायिता हमारे आहार और बैठे रहने (व्यायाम का अभाव) की बुरी लत पर ही है। हमारे बृहदन्त्र को जितना काम करना चाहिए उतना न कर पाने का ही यह दण्ड है।"

प्रत्येक वर्ष देखा जाता है कि बहुत से रोगी इस प्रकार के बद्धकोष्ठ से इतना कष्ट पाते हैं कि उनको अपच के दुष्परिणामों से कभी छुटकारा नहीं मिलता। और इसके लिए उनको प्रथम मृदुविरेचक और उसके काम न देने पर उग्रविरेचक औषधियों का प्रयोग करना पड़ता है। तब कहीं उनके देह की छकड़ा-गाड़ी धीरे धीरे सरकती है। अन्त में उनकी ऐसी अवस्था हो जाती है कि मृदु वा उग्रविरेचक औषधि भी उनके पुराने बद्धकोष्ठ के छुड़ाने में कुछ भी काम नहीं देती। किन्तु इन विरेचक औषधियों से उनको यह हानि पहुँचती है कि वे आहार को आमाशय तथा छोटी आँतों में से शीघ्रता से निकाल ले जाती हैं। और उसको निचली बड़ी आँतों में से शीघ्र निकालने में सहायक नहीं होती हैं, इसका परिणाम यह होता है कि आहार की इस त्वरित गति के कारण वह ठीक ठीक नहीं पच पाता और अधपचा ही बड़ी आँतों में चला जाता है। इस प्रकार वह खाने वाले के देह का अंग नहीं बनता और उससे देह का कुछ भी पोषण नहीं होता। जिन लोगों की बड़ी आँतों में मल पड़ा रहता है उससे उनकी आँतों में एक प्रकार के स्वास्थ्य-नाशक कीटाणु रहने लगते हैं। इन कीटाणुओं को दूर करना आजकल के वैद्यक विज्ञान शास्त्र में सबसे बड़ा कार्य समझा जाता है। क्योंकि सब प्रकार के रोगों का जन्म और उससे देह का विनाश बड़ी आँतों में के इन्हीं कीटाणुओं के विष के कारण ही होता है। उनके कारण रोगियों का स्वभाव भी अत्यन्त चिड़चिड़ा हो जाता है। उनको मिथ्या भ्रम की भावनाएँ सताती रहती हैं। पिता-पुत्र, पति-पत्नी और प्रभु-स्वामी के झगड़ों के अनेक कारणों में से प्रधान कारण बड़ी आँतों में के कीटाणुओं का विष ही होता है। इस विष से पीड़ित मनुष्यों का मन वश में नहीं रहता है और वे मतवाले शराबी मनुष्यों के समान कुत्सित कर्मों पर उतर आते हैं। अतः अधिकांश पापों का कारण बद्धकोष्ठ ही है। मनुष्य के विचार कितने ही ऊँचे क्यों न हों, उसमें कितनी ही भक्ति की भावना क्यों न भरी हो, वह कितना ही साहित्य अनुरागी क्यों न हो किन्तु बड़ी आँतों के कीटाणुओं का विष उसको ऐसा निकम्मा बना देता है कि उससे कुछ भी करते-धरते नहीं बनता।

अमरीका में एक जीवन बीमा करने वाली कम्पनी के कार्यालय में बीमा कराए हुए प्रकट रूप में स्वस्थ दीखने वाले १६१६२ पुरुषों के स्वास्थ्य की पड़ताल की गई। उनमें से प्रति सैकड़ा ३९ मनुष्यों को बद्धकोष्ठ था और प्रति सैकड़ा १२ को अर्श (बवासीर) पाया गया। अस्पतालों में जो रोगी चिकित्सा कराने आते हैं उनमें से ८५ प्रतिशत को बद्धकोष्ठ होता है। बद्धकोष्ठ को दूर करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका में सन् १९२५ के एक वर्ष में १५ करोड़ रुपये से ऊपर की उग्रविरेचक

औषधियों क व्यय हुआ था। आप पूछेंगे कि सब रोगों के मूल कारण बद्धकोष्ठ होने का ज्ञान अभी तक पश्चिमी डाक्टरों को क्यों न हुआ था। इसका कारण यह है कि अब तक शव व्यवच्छेद करने वाले डाक्टर मृत-देह के मलाशय (बड़ी आँत) को इस भय से देखते ही न थे कि मलाशय को चीर कर खोलने से जो दुर्गन्ध फैलेगी वह असह्य होगी, वे उसके दोनों सिरों को तागे से बँधवा देते थे और उसको मृतदेह में से कटवा कर पृथक् करवा देते थे। किन्तु अमेरिका के डाक्टर टरनर (Turner) ने मृतक-देहों के मलाशयों की भी पड़ताल आरम्भ की। उन्होंने २८४ मृतदेहों के मलाशय चीर कर देखे तो उनमें से केवल २८ ही मल से पूर्ण न थे। शेष २५६ मल से ठसाठस भरे हुए थे। उनका आकार मल के कारण फूल कर स्वाभाविक आकार से दुगना हो गया था। इन मल से भरे हुए मलाशयों के मल के बीच में प्रतिदिन एक बार शौच जाने के लिए एक छोटा सा छिद्र विद्यमान पाया गया। इस छोटे से छिद्र में से ही प्रतिदिन एक बार अधःशौच करने वाले मनुष्य अपने आपको बद्धकोष्ठ न होने के मिथ्या भ्रम में पड़कर अपने को स्वस्थ समझते रहते हैं, परन्तु उनको वस्तुतः घोर बद्धकोष्ठ होता है। और उनके मल से भरपूर मलाशयों में छोटे और बड़े कीटाणु अपना निवास-स्थान बना लेते हैं। वे वहीं अंडे देते रहते हैं। डा० टरनर (Turner) ने कई मलाशयों में चार से लेकर ६ इंच तक के लम्बे कीड़े पाये थे।

अब यह मानी हुई बात है कि इस ठसाठस भरे हुए मल को ढीला करके बाहर निकालने का सामर्थ्य, देह को भारी हानि पहुँचाये बिना, किसी भी उग्रविरेचक औषधि में नहीं है। किन्तु साधारण बुद्धि का मनुष्य भी इस बात को समझ सकता है कि यदि तप्त जल की पर्याप्त मात्रा गुदा के द्वारा मलाशय में भरपूर पहुँचाई जाय तो वह वहाँ जमे हुए मल को शीघ्र घुला कर गुदा मार्ग से ही बाहर कर देगी। इस क्रिया को बृहदन्त्र प्रक्षालन या प्राचीन आयुर्वेद की परिभाषा में वस्ति कर्म कहते हैं।

आजकल प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली में मलशोधन का यह उपाय अनेकों अनुभवों के द्वारा सर्वोत्तम सुगम और किसी प्रकार की हानि से भी रहित प्रमाणित हो चुका है। प्राचीन आयुर्वेद के सबसे प्राचीन ग्रन्थ चरक में भी वस्ति का वर्णन विस्तारपूर्वक है और वस्तिकर्म को आधी चिकित्सा और किन्हीं आचार्यों के मत से सारी चिकित्सा बतलाया गया है, इसी वस्ति क्रिया को आभ्यन्तर-स्नान भी कहते हैं। हठयोग की परिभाषा में इसको न्योलिकर्म कहा जाता है। न्योलिकर्म में किसी यन्त्र की आवश्यकता नहीं होती है। हठयोगी जन ऐसा अभ्यास कर लेते हैं कि वे किसी जलाशय में बैठ कर गुदा की मांसपेशियों के आकर्षण से जल को मलाशय में यथेच्छ भर कर उससे वहाँ के संचित मल को बाहर निकाल देते हैं। आज कल के यन्त्र-युग में रबड़ के बने हुए विविध प्रकार के उत्तमोत्तम वस्ति-यन्त्र निकल आये हैं। उनसे अति सुगमता से वस्तिकर्म (आभ्यन्तर-स्नान) करके मलाशय की शुद्धि हो जाती है। हमारे आयुर्वेदज्ञ पूर्वपुरुषों को वस्तिकर्म का पूर्ण ज्ञान होने का तो गौरव प्राप्त था, किन्तु उनके समय में आधुनिक रबड़ के यन्त्रों का आविष्कार न हुआ था और वे मृत बकरे आदि के उदर से निकाली हुई वस्तियों (नलों) से वस्तिकर्म करते थे तथा उनमें नवाविष्कृत यथेच्छ जलस्रावक घूमने वाले पेंच के अभाव के कारण उनको जल भर कर धागे से बाँधना पड़ता था। आजकल के प्रचलित वस्तियन्त्रों में अमरीका के डाक्टर टाइर M. D. (Tyre) का आविष्कृत जे० बी० एल० कैस्केड (J. B. L. Cascad हर्ष-सौन्दर्य दीर्घायु-प्रद वस्तियन्त्र) नामक सर्वोत्तम वस्तियन्त्र है। परन्तु वह धनियों के ही लेने की वस्तु है। उसका मूल्य ५० रुपये के लगभग है, जो वर्ष भर में खाई जाने वाली विरेचक औषधियों की तुलना में तो कम ही माना जाना चाहिए। परन्तु साधारण जन दो ढाई रुपये के साधारण वस्तियन्त्र से वही काम निकाल सकते हैं। यह वस्तियन्त्र राव-रङ्क सभी के घरों में रहना चाहिए। जिस प्रकार निर्धन से निर्धन पुरुषों के घर

भी कुछ बर्तन-भाँड़े अवश्य होते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक घर में एक साधारण वस्तियन्त्र रहने की भी आवश्यकता है। यदि साधारण जन इस आभ्यन्तर-स्नान के अति सुगम प्रयोग और उसके रोगमूलोच्छेदक असीम लाभ को जान जायँ, तो संसार में रोगियों की संख्या बहुत घट जाय और रोगियों के धन से फूलने फलने वाले औषधालय और चिकित्सालय बहुत ही कम रह जायँ। किन्तु विरेचक औषधियों के विक्रय से पेट पालने वाले वैद्य और डाक्टर आभ्यन्तर-स्नान के विषय में रोगियों के मन में नाना प्रकार के मिथ्या भ्रम भरते रहते हैं। वे उनको डराते रहते हैं कि वस्ति करने से आँतें निर्बल पड़ जाती हैं तथा वस्ति की आदत पड़ जाती है। किन्तु ये दोनों ही बातें केवल भुलावा हैं। वस्ति से आँतें निर्बल होने के स्थान में बलवान हो जाती हैं, क्योंकि उनमें निर्बलता तो मल के भरे रहने और ठीक ठीक काम न करने अथवा शिथिल पड़े रहने से आती है। वस्तिद्वारा मल के निकलते रहने से उनमें रक्त का संचार ठीक ठीक होकर उनमें सक्रियता और बल आ जाता है। और वे भले प्रकार काम करने लगती हैं। वस्ति की बान पड़ने की बात भी कोरा भ्रम ही है। हमने अपने तीस वर्ष से अधिक के अनुभव में पचासों रोगियों को सप्ताहों तक प्रतिदिन वस्ति कराई है और उनको उपवास करते हुए एक एक मास तक वस्ति द्वारा प्रतिदिन पुराना जमा हुआ दूषित काला मल निकलता रहा है और रोगमुक्त वा स्वस्थ हो जाने पर उनको वस्ति की सहायता के बिना ही नियम पूर्वक नियत समय पर शौच होने लगा है और फिर महीनों भी वस्तिकर्म की आवश्यकता नहीं पड़ी है।

यदि दुर्जन तोष न्याय से यह मान भी लिया जाय कि किन्हीं को वस्ति की सहायता से ही शौच होने की बान पड़ जाय, तो यह उससे तो कहीं अच्छा है कि मनुष्य अपने कोष्ठ (उदर) में मल संचय करता रहे और उससे वह नाना प्रकार के रोगों का लक्ष्य बना रहे। मनुष्य को कहीं बाहर पड़ी हुई विष्ठा देख कर कितनी घृणा होती है और यदि वह उसके पैर आदि किसी अंग को लग जाय, तो वह उसको जल से भले प्रकार धोने के रूप में बाह्य स्नान करता है। किन्तु वही मनुष्य अपने उदर में विष्ठा का भार एकत्रित किये हुए उसको उठाये फिरता रहता है और वह उसको आभ्यन्तर-स्नान अर्थात् वस्तिकर्म द्वारा बाहर निकालने का प्रयत्न नहीं करता है। यह उसके विवेक का कैसा दिवाला है। वस्तुतः मनुष्य को पूर्ण पवित्रता और शुचिता के लिए आभ्यन्तर और बाह्य दोनों स्नानों की आवश्यकता है। उनमें अन्तर केवल यही है कि मनुष्य के देह में असंख्य रोम-कूप होने के कारण उनको खुला रखने के लिए बाह्य स्नान की तो आवश्यकता प्रतिदिन होती ही है किन्तु आभ्यन्तर-स्नान निचली बड़ी आँतों में मल के रुक जाने पर ही अपेक्षित होता है। हमारे धर्मशास्त्रों में तो हमारा 'बाह्याभ्यन्तर शुचिः' होना परमावश्यक बतलाया गया है और एक विद्वान ने तो उदर में मल भर कर रोगी बनने को अनाचार कहा है। अंग्रेजी में एक कहावत है "A Sick man is a Rascal" अर्थात् रोगी मनुष्य धूर्त, अनाचारी वा पापी है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह आवश्यकता के अनुसार आभ्यन्तर-स्नान (वस्तिकर्म) के सरल सुगम प्रयोग से अपने देह रूपी मन्दिर को स्वच्छ और स्वस्थ बनाये रखे, तब ही वह सुखधाम का अधिकारी हो सकता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में साधना

श्रीयुत इकबाल कृष्ण तैमिनी, अध्यापक इलाहाबाद युनिवर्सिटी

"अनेक रोगों का उद्गम साधारण बँधे हुए कारणों से नहीं होता, अतएव रोग के केवल शारीरिक कारणों को लेकर उपचार करने मात्र से कोई लाभ नहीं होता। ऐसी दशा में तो रोगी के स्वभाव तथा रोग के विभिन्न कारणों की पूरी जानकारी हासिल करके ही रोग को सफल चिकित्सा को जा सकती है।"——यह है वह गूढ़ रहस्य जिसकी जानकारी अनेक चिकित्सकों को नया दृष्टिकोण प्रदान कर सकता है और रोगियों की निराशा को आशा में परिवर्तित कर सकता है।——सं०

एक सरसरी निगाह से देखने वालों के लिए, प्राकृतिक-चिकित्सा, रोगों को दूर करने वाली एक ऐसी पद्धति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, जिसमें जड़ी-बूटी अथवा यन्त्रों की सहायता नहीं ली जाती। यहाँ तक कि इस दिशा में कार्य करने वाले बहुत से चिकित्सक भी जीवनके उस 'दर्शन' (सिद्धान्त) से अनभिज्ञ हैं, जिस पर कि वास्तव में वह (हमारा जीवन) स्थित है। बहुधा ऐसा होता है कि जब हम किसी विषय का उसकी गहराई में उतर कर अनुसन्धान करते हैं तो वह जैसा कि अपनी ऊपरी सतह पर दिखाई पड़ा करता था उससे कुछ अधिक प्रतीत होता है। इसी प्रकार प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति के आधारभूत दर्शन का गम्भीर अध्ययन इस विषय पर सर्वथा एक नवीन प्रकाश डालता है। प्रस्तुत लेख में इसी प्रकार के गम्भीर अध्ययन के परिणामस्वरूप पाए गए एक नए पहलू पर विचार करने का प्रयास किया गया है।

यद्यपि प्राकृतिक-चिकित्सा-दर्शन एक गहन विषय है तथापि इसका सारांश निम्न वाक्यों में उपस्थित किया जा सकता है—"प्राकृतिक नियमोंका उल्लंघन करने से ही तमाम बीमारियाँ पैदा होती हैं और उनसे निवृत्त होकर स्वस्थावस्था सा दोषों का समन्वय तथा तत्त्वों का सामंजस्य पुनः स्थायी रूप से प्राप्त करने का एकमात्र उपाय है——पुनः प्रकृति की शरण में जाना तथा उसके नियमों के अनुकूल जीवन यापन करना।" इतना तो प्राकृतिक-चिकित्सा-दर्शन का अध्ययन करने वाले सभी लोगों को मालूम है, किन्तु जो तथ्य उन्हें अज्ञात अथवा अर्द्ध-ज्ञात है वह यह है कि उक्त प्रकार के नियम केवल शरीर सम्बन्धी ही नहीं हैं; उनका सम्बन्ध हमारे भाव-जगत एवं विचार-जगत से भी है; और इनके नियमों का उल्लंघन भी हमारे रोगों का उतना ही बड़ा कारण है जितना कि शारीरिक नियमों का। मानव अनेक प्रकार के अवयवों से युक्त एक प्राणी है। उसके समस्त विभाग, यथा——शरीर, मन (भाव) और मस्तिष्क (विचार), एक दूसरे से भली भाँति सम्बद्ध हैं; अतः यदि उसके किसी भी विभाग में कोई गड़बड़ी होती है तो उसकी प्रतिक्रिया दूसरे सभी विभागों में होती है। भाव और विचार-जगत की रुग्ण अवस्था का असर जल्दी अथवा देर से हमारे शरीर पर निश्चित ही पड़ता और शारीरिक व्याधियों को उत्पन्न करता है। इसी प्रकार शारीरिक रोगों का प्रभाव भी हमारे मन और मस्तिष्क पर बुरी तरह पड़ता है। यह बात प्रत्येक व्यक्ति अनुभव द्वारा सिद्ध करके जान चुका है।

रोगों एवं विशेष कर जीर्ण रोगों की चिकित्सा करते समय प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति की अनेक असफलताओं का कारण ऊपर कहे गए तथ्य की अज्ञानता ही हुआ

करती है। इसी प्रकार बहुत से चिकित्सकों के सामने ऐसे अनेक रोगी पड़ जाया करते हैं जिनके रोगों का ठीक से निदान न कर पाने के कारण चिकित्सकगण ऊब जाया करते हैं। वस्तुतः उनके रोगों का उद्गम साधारण बँधे हुए कारणों से होता नहीं, अतएव रोग के केवल शारीरिक कारणों को लेकर उपचार करने मात्र से कोई लाभ नहीं होता। ऐसी दशा में तो रोगी के स्वभाव तथा रोग के विभिन्न कारणों की पूरी जानकारी हासिल करके ही रोग की सफल चिकित्सा की जा सकती है।

यह सत्य है कि अनेक रोग केवल शुद्ध शारीरिक कारणों से होते हैं और उनका उपचार भी शारीरिक उपायों का अवलम्बन लेकर किया जा सकता है, किन्तु बहुत से ऐसे रोग भी होते हैं जिनका मूल भय-द्वेष-घृणा-क्रोध जैसी हमारी मानसिक एवं भावगत प्रवृत्तियों में हुआ करता है। अतः ऐसी दशा में शरीर-चर्या को चाहे जितना भी व्यवस्थित तथा नियमित क्यों न किया जाय लेकिन उससे स्थायी वाञ्छित लाभ नहीं हो सकता। हाँ, कभी कभी यह अवश्य हो सकता है कि रोग की भीषण व्यथा से क्षणिक सेहत मिल जाय। वास्तविक स्वास्थ्य-लाभ तो मन और मस्तिष्क की मिथ्या अवस्था (प्रवृत्ति) को ठीक करने तथा आन्तरिक समन्वय को प्राप्त करने पर ही हो सकता है, क्योंकि स्वास्थ्य तो उसी समन्वय का निदर्शक है।

उक्त विवेचन का निष्कर्ष यहीं है कि स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए हमारे विचार और भावों का नियन्त्रण होना बहुत जरूरी है और प्रत्येक प्राकृतिक चिकित्सक को, जिसने मनुष्यों को स्वस्थ रखने का कार्य अपने सिर लिया है, मन और शरीर के इस घनिष्ट सम्बन्ध को अवश्य जानना चाहिए। साथ ही उसमें अपने रोगियों को मन और मस्तिष्क सम्बन्धी स्वास्थ्य विषयक व्यावहारिक परामर्श देने की पूर्ण क्षमता भी होनी चाहिए। यह सच है कि इस ओर डाक्टर केवल बाहर से परामर्श देने तथा अपने रोगियों को उनके शारीरिक रोगों की कारणभूत मानसिक तथा भावगत मिथ्या प्रवृत्तियों का सम्बन्ध दिखलाने के अतिरिक्त कुछ अधिक नहीं कर सकता। मानसिक एवं भावगत मिथ्या प्रवृत्तियों का सुधार तो रोगी को स्वयं ही करना पड़ेगा। यह कार्य साधारण नहीं है। इसका अर्थ है—रोगी का बड़ी कुशलता के साथ मानसिक और नैतिक अनुशासन के क्षेत्र में प्रवेश करना। इस कार्य को हम साधना कह सकते हैं। किन्तु, यह बात भी सन्देह से परे है कि जब अपने रोग और मिथ्या मानसिक प्रवृत्तियों का सम्बन्ध स्पष्टतया दिख तथा समझ में आ जायगा तो शायद ही कोई रोगी हो जो अपने पुनः स्वास्थ्य-लाभ करने के निमित्त अपनी मानसिक अवस्था को सुधारने का प्रयत्न न करे।

ऊपर जो कुछ कहा जा चुका है उससे स्पष्ट है कि प्राकृतिक चिकित्सा का 'साधना' से बड़ा घना सम्बन्ध है। इसीलिए हम स्थायी और वास्तविक स्वास्थ्य तब तक नहीं पा सकते जब तक कि हम प्रकृति के उन सभी नियमों के अनुकूल जीवन यापन न करें जो कि हमारे शारीरिक, मानसिक तथा भावगत संस्कारों का नियन्त्रण करते हैं; और इन नियमों के अनुकूल हम तभी रह सकते हैं जब कि 'साधना' संज्ञक मानसिक और नैतिक अनुशासन की शिक्षा ग्रहण करके हम अपनी निम्न कोटि की प्रवृत्तियों का दमन कर दें।

रोगावस्था में जड़ी-बूटियों का प्रयोग

डाक्टर एल० कामेश्वर शर्मा, एम० ए०, बी० एस-सी०, एन० डी० (कैलीफोर्निया)

जड़ी-बूटियाँ प्राकृतिक हैं और वे रोग निवारण करती हैं तो फिर उनका उपयोग क्यों न किया जाय ? यह एक स्वाभाविक प्रश्न है जो प्रत्येक प्राकृतिक चिकित्सक के मन में पैदा होता है। किया जाय, पर कैसे ? उनकी पहचान क्या है ? आदि प्रश्नों का उत्तर देकर अमेरिका के 'नेशनल एशोसियेशन आफ नेचुरो पैथिक हर्बलिस्ट्स' के फेलो डा० शर्मा ने इस विषय को खूब स्पष्ट किया है। विषय-प्रतिपादन में जो दार्शनिक दृष्टिकोण आ गया है, उससे लेख और भी सुन्दर बन पड़ा है।—सं०

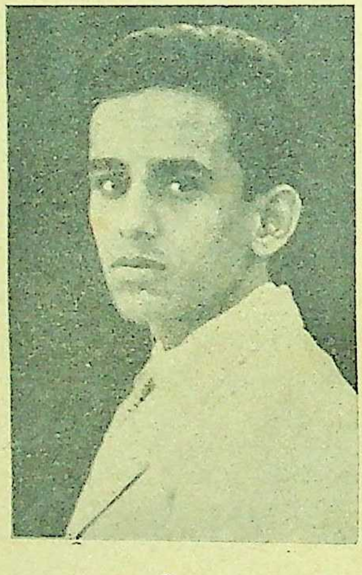

लेखक

मद्रास से प्रकाशित होने वाले 'सन्डे टाइम्स' में 'वर्मा मेडिकल टाइम्स' पत्र से एक कहानी उद्धृत की गई है। उस कहानी के लेखक हैं डा० लाजपत राय। वे लिखते हैं "मेरे एक सम्बन्धी की स्त्री को चार वर्ष से मधुमेह की शिकायत थी। उसके पेशाब में चीनी का माप साल में १०२२ से १०४०के बीच घटता बढ़ता रहता था। मैंने उसपर कई नई पुरानी दवाइयों का प्रयोग किया पर किसी से कुछ भी फायदा नहीं हुआ; यदि किसी दवा से कुछ फायदा हुआ भी तो उसका असर टिकाऊ नहीं साबित हुआ। इसी बीच लुधियाना के डिस्ट्रिक्ट कमिश्नर आफिस के सुपरिन्टेन्डेन्ट श्रीयुत किशनचन्द से मेरी भेंट हो गई और उन्होंने मुझे इस रोग को दूर करने की जो दवा बताई उसके लिए आप धन्यवाद के पात्र हैं। आपने मुझे जामुन के फल अथवा उसकी पत्तियों के प्रयोग की सलाह दी। उन्होंने बताया कि जामुन की पत्तियों के प्रयोग द्वारा उन्होंने दो तीन रोगियों को अच्छे होते भी देखा है।

"मैंने रोगिणी को चार पत्ती सुबह और चार पत्ती शाम को खिलाना शुरू किया। तीसरे दिन जब उसके मूत्र की परीक्षा हुई तो मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उनके मूत्र में चीनी का माप केवल १०१० था और चीनी जो प्राय चार प्रतिशत आया करती थी, बिल्कु न थी।" जीवन सखा के पाठक ने भी अनेक बार ऐसी अनेक कहानियाँ सुनी होंगी। वैद्य और हकी भी, इसी प्रकार की कई जड़ी-बूटिय का प्रयोग रोगोपचार में करते हैं। अमेरिका में जगह जगह ऐसे चिकित्सक हैं जो जड़ी-बूटियों के काढ़ों आदि का प्रयोग अनेक प्रकार के रोगों में करते हैं। कुछ ऐसे भी चिकित्सक मिल जायँगे जो जड़ी-बूटियों का प्रयोग प्राकृतिक चिकित्सा-पद्धति के साथ भी करते हैं। लंदन से प्रकाशित होने वाले 'हेल्थ हर्ब्स' नामक पत्र में तो केवल जड़ी-बूटियों की ही चर्चा रहती है। उसी प के एक अंक में मैंने पढ़ा कि उड बेटानी (Wood Betony) नामक पौधा गठिया रोग और खून शु

करने के लिए बहुत उपयोगी है और यह शक्तिदायक और दुर्बल स्नायुओं को सशक्त करने वाला भी। उसी अंक में एलटर (Elter) को मनुष्य जाति के लिए वरदान बताया गया है। इसके प्रयोग से सर्दी जुकाम अच्छा हो जाता है और ड्वार्फ एलटर (Dwarf Elter) से गठिया और जलोदर रोग जाते हैं। दक्षिण के तामिल लोग बेल की पत्तियों को रोग दूर करने की एक अच्छी दवा समझते हैं। बच्चों को ज्वर हो जाने पर तुलसी के काढ़े का प्रयोग बहुधा किया जाता है। बीस पचीस वर्ष के पहले तक तामिल लोग सब प्रकार के रोगों को दूर करने के लिए जड़ी-बूटियों का ही प्रयोग करते थे। जड़ी-बूटियों को प्रायः प्राकृतिक दवा समझा जाता है और प्राकृतिक चिकित्सक भी कभी कभी इनके प्रयोग की ओर आकर्षित होते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि जड़ी-बूटियाँ प्राकृतिक दवा हैं पर प्रश्न यह होता है कि क्या सभी प्राकृतिक हैं? क्या प्राकृतिक चिकित्सक बिना सोचे समझे सब का उपयोग करे? यदि नहीं तो फिर वह किन सिद्धान्तों का अवलम्बन करे?

इस प्रश्न पर विचार करने के पहले हमें रोग और उसके कारण को ठीक ठीक समझ लेना चाहिए। इसे मैं एक रूपक द्वारा समझाऊँगा। जब मोटर गाड़ी चलती है तो उसमें कारबन पैदा होता है और यह धीरे धीरे इकट्ठा होता रहता है। चार पाँच हजार मील चल लेने के बाद तो गाड़ी की यह हालत हो जाती है कि उसे बिना साफ कराए चलाया नहीं जा सकता। ठीक यही बात हमारे शरीर पर भी घटती है। जब भी कोई शारीरिक या मानसिक कार्य किया जाता है तो मोटर के कार्बन की तरह हमारे शरीर में एसिड पैदा होता रहता है। पाठकों ने यूरिक एसिड और सारकोलैक्टिक एसिड का नाम सुना ही होगा। एसिड बीस प्रकार के होते हैं और ये सभी एसिड विजातीय द्रव्य होते हैं। इस प्रकार यह भली प्रकार समझ लिया जा सकता है कि हमारे शरीर की प्रत्येक हरकत, हमारा प्रत्येक कार्य एसिड पैदा करता रहता है। मोटर गाड़ी के कारबन की तो सफाई करनी होती है पर हमारे शरीर की सफाई पाखाने, पेशाब, श्वास और पसीने द्वारा स्वयं होती रहती है। पर ज्यों ज्यों उम्र बढ़ती जाती है, सफाई के काम में कमी आती जाती है और यदि जीवन के क्रम में सुधार न किया जाय, भोजनादि में परिवर्तन न किया जाय तो शरीर में धीरे धीरे एसिड इकट्ठा हो जाता है।

यदि मोटर गाड़ी में हम अच्छे तेल के बजाय कोई सस्ता तेल इस्तेमाल करते हैं तो फल यह होता है कि कार्बन की सफाई के लिए गाड़ी जल्दी भेजनी पड़ती है। इसी प्रकार अनावश्यक और अप्राकृतिक भोजन के कारण शरीर में भी गन्दगी जल्दी और ज्यादा इकट्ठा होती है।

शरीर में निहित जीवनी-शक्ति इस गन्दगी को हमेशा साफ करने की कोशिश करती रहती है पर जब यह गन्दगी अधिक हो जाती है तब जीवनी-शक्ति द्वारा सफाई के साधारण तरीके के बजाय असाधारण तरीका इस्तेमाल किया जाता है। यह तरीका शरीर की बनावट पर निर्भर होता है। गन्दगी शरीर के उसी द्वार से निकलती है जो द्वार कमजोर होता है। इस प्रकार किसी के यह गन्दगी नाक द्वारा, किसी के आँतों द्वारा तो किसी को त्वचा द्वारा निकलती है। इस प्रकार रोग सफाई का प्रयास मात्र है। रोगों का नाम सफाई के निर्गम द्वार से सम्बन्धित कर दिया जाता है। यदि नाक से सफाई हो रही है तो उसे सर्दी कहते हैं, यदि त्वचा से तो खाज अथवा फोड़े फुन्सियाँ और यदि सारे शरीर द्वारा सफाई का प्रयास किया जाता है तो उसे बुखार कहते हैं। इसी प्रकार शरीर की सफाई के प्रयास के अनेक नाम रखे जाते हैं। वास्तव में सभी रोगों का कारण एक है अतः रोग एक ही है।

यदि छेड़ छाड़ न की जाय तो रोग अपने आप अच्छे हो जाते हैं। पर कई बार इतने ही से काम नहीं बनता। स्वस्थ आदमी का रक्त क्षारयुक्त होता है अर्थात् उसमें प्राकृतिक लवण होते हैं। ये लवण खून की अधिक खटाई को दूर करते हैं अतः रोग दूर करने में सहायक होते हैं। पर यदि खन में खटाई की मात्रा बहुत अधिक हो जाय

तो प्राकृतिक लवण अपना काम पूरी तरह नहीं कर सकते उस समय उनको ऐसे भोजन से सहायता देनी होती है जो औषध का भी काम करें। भोजनौषध में प्राकृतिक लवण की अधिकता होनी ही चाहिए। इनकी अधिकता हरी सब्जियों में, साग-पात में होती है और इन्हीं को जड़ी-बूटी के नाम से पुकारा जाता है।

रोगावस्था में और साधारण अवस्था में भी इन जड़ी-बूटियों का प्रयोग काफी होना चाहिए क्योंकि उनमें वह संजीवनी-शक्ति होती है जो स्वास्थ्य को उन्नत रखती है।[1] अब प्रश्न यह होता है कि किसी बूटी की उपयोगिता और उपयुक्तता कैसे जानी जाय? यदि वह जल्द ही दर्द को शान्त कर दे और रोग को मिटा दे तो क्या उसे काम की समझ लिया जाय? इस लेख के आरम्भ वाली कहानी में बताया गया है कि जामुन की पत्तियों के प्रयोग से तीन-चार दिन में ही रोग चला गया तो क्या यदि एक बूटी तुरन्त ही फायदा पहुँचा सके तो हम उसे अच्छी मान लें? जीवन-सखा के पाठकों को यह भली प्रकार जान लेना चाहिए कि प्राकृतिक-चिकित्सावादी कभी भी किसी औषध की उपयोगिता इसलिए नहीं मानते कि वह तुरन्त लाभ पहुँचाती है। वे तो यह चाहते हैं कि रोग चाहे धीरे धीरे ही जाय पर सदा के लिए चला जाय और फिर न हो। यदि कोई बूटी जहरीली होती है तो वह उनके काम की नहीं होती, न वह बूटी जो पेट भर भी खा ली जाय तो किसी प्रकार का नुकसान पहुँचा सके। संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि उन्हीं औषधियों का प्रयोग करना चाहिए जो दवा के साथ साथ भोजन का भी काम करें। इस सम्बन्ध में डाक्टर लक्ष्मण शर्मा का यह कथन ध्यान देने योग्य है कि "प्राकृतिक चिकित्सा ने चिकित्सा और औषधि के अर्थ में क्रान्ति पैदा कर दी है। दवा ऐसी कोई चीज नहीं है जो रोगमुक्त करती है, यह प्रकृति का वह साधन है, जिससे वह मरम्मत का काम लेती है।" इस अर्थ में दवा वही समझी जानी चाहिए जिसे शरीर ग्रहण करके अपने में लगा सके और जो विजातीय द्रव्य को शरीर में दबाए रखने में नहीं बाहर निकालने में सहायक हो।

इस प्रकार वह सभी चीजें जिन्हें हम भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं औषधि ही हैं। हवा, सूर्य का प्रकाश, जल और साग-सब्जियों—जड़ी-बूटियों के रस—सभी पहले भोजन हैं तब औषध। "यदि इस बात को अच्छी तरह समझ लिया जाय तो हम उन चिकित्सकों के चक्कर में न पड़ेंगे जो अलग अलग रोगों के लिए अलग अलग दवा—बूटी की ही सही—बताते हैं। वे बिचारे भी एलोपैथी के डाक्टरों की तरह रोग समझने, रोग का नाम रखने के फेर में पड़े रहते हैं और कहते रहते हैं कि रोग को समझने में गलती हो गई और रोग नहीं अच्छा हुआ।"

इस दृष्टि से किसी भी ऐसी जड़ी-बूटी का प्रयोग नहीं करना चाहिए जो विषैली हो और जिसके प्रयोग से किसी भी प्रकार की हानि होने की सम्भावना हो। प्राकृतिक-चिकित्सक के उपयोग की वे ही जड़ी-बूटियां हो सकती हैं जिनमें किसी प्रकार का विष न हो और यदि उन्हें पेट भर भी खाया जाय तो कोई नुकसान न होने पावे। जड़ी-बूटियाँ सात्विकी, राजसी और तामसी भी होती हैं। इनमें केवल सात्विकी का ही प्रयोग करना चाहिए।

छान्दोग्य उपनिषद में लिखा है 'अन्नमयम् मनः' अर्थात् हमारा मन भोजन से बनता है और शक्ति ग्रहण करता है। इस प्रकार भोजन की प्रकृति का असर हमारे

---

[1] इस विषय की अधिक जानकारी के लिए डाक्टर के० एल० शर्मा की पुस्तक 'प्रैक्टिकल नेचर क्योर' का दूसरा परिच्छेद देखना चाहिए। यह पुस्तक स्वास्थ्य पुस्तक भंडार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद से मँगाई जा सकती है।—लेखक

मन एवं शरीर पर बहुत अधिक पड़ता है। जिस प्रकृति का हम भोजन करते हैं वही हमारी भी प्रकृति बनती है।

गीता में कहा गया है कि मनुष्य तीन प्रकार के गुणों से प्रभावित रहता है। उनके नाम हैं सत, रज और तम। सतोगुण शक्ति और आनन्द की ओर खींचता है, रजोगुण इच्छाओं का जनक और सांसारिकता का मूल है। "इच्छा जनित दुःखों की शान्ति के लिए यह उपभोगों की प्राप्ति के लिए हमें प्रोत्साहित करता है।" तमोगुण एक ऐसी निष्क्रिय अवस्था है जब कि हमारा मन दुर्बलता और पतन के वशीभूत रहता है। ये तीनों ही गुण साधारणतः प्रत्येक व्यक्ति में न्यूनाधिक मात्रा में विद्यमान रहते हैं। मुक्ति मार्ग की ओर अग्रसर होने के लिए तमोगुण से रजोगुण की ओर और रजोगुण से सतोगुण की ओर जाना पड़ता है।

ये तीनों गुण चेतन जगत मात्र में ही नहीं होते बल्कि ये समस्त सृष्टि का नियन्त्रण करते हैं। जिन मूल तत्वों का चेतन शरीर बना है उन गुणों के द्वारा उनका भी नियन्त्रण होता है। अतः भोजन भी तीन प्रकार का होता है। गीता में सात्विक, राजसिक और तामसिक भोजनों का विवेचन किया गया है। राजस् और तामस भोजन अप्राकृतिक हैं। स्वस्थ और शुद्ध अवस्था में मनुष्य की इन प्रकार के भोजनों की ओर रुचि नहीं होती। निरन्तर इस प्रकार का भोजन करने से पहले मनुष्य का मानसिक स्वास्थ्य, फिर शारीरिक स्वास्थ्य नष्ट हो जाते हैं। गीता जोरदार शब्दों में कहती है कि राजस भोजन पीड़ा, दुःख और रोग के जनक हैं। राजस भोजन उत्तेजक होता है साथ ही लोग इसे शीघ्रता से और भूख से अधिक खा जाते हैं। अतः इस प्रकार किया हुआ भोजन शरीर में विजातीय द्रव्य-सा पहुँचता है।

तामसिक भोजन राजसिक से भी बुरा है। वह स्वतः न्यूनाधिक मात्रा में विजातीय द्रव्य ही होता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि फिर हम भोजन को किस प्रकार से श्रेणियों में विभाजित करें? क्या कोई ऐसी परीक्षण प्रणाली है जिससे हमें इस कार्य में सहायता मिल सकती है? गीता में राजस भोजन का स्वाद इस प्रकार लिखा हुआ है—(१) साधारणतः चरपरा, (२) कड़ुआ, (३) खट्टा, (४) नमकीन, (५) रूक्ष तथा (६) दाहकारक। तामस भोजन या तो प्रारम्भ से ही अथवा बासी हो जाने से या सड़ जाने से, दुर्गन्धित[१] और अशुद्ध होते हैं। इस प्रकार के भोजनों की श्रेणी में मांस, मछली, प्याज, लहसुन, मूली, तम्बाकू, मदिरा, समस्त बासी भोजन आदि हैं।

राजस और तामस की श्रेणी में न आने वाले सभी भोजन सात्विक हैं। वे विशुद्ध प्राकृतिक भोजन हैं। उनमें अपना स्वाभाविक स्वाद होता है। यह स्वाद इतना मृदु होता है कि साधारणतः अप्राकृतिक भोजन करने वालों से नहीं जाना जा सकता। मिर्च मसाले आदि से रहित होने पर उसके स्वाद का आनन्द तो शुद्ध ज्ञानेन्द्रिय वाले पुरुष ही पा सकते हैं।

इसलिए जड़ी-बूटियाँ न केवल भोजन की दृष्टि से ही ठीक होनी चाहिए बल्कि उनका सात्विक होना भी जरूरी है। लेकिन एक सच्चा प्राकृतिक चिकित्सक पूछ सकता है "क्या रोगों को दूर करने के लिए जड़ी-बूटियों का प्रयोग नितान्त आवश्यक है और उनके बिना क्या हम रोगों की चिकित्सा नहीं कर सकते?" मेरा उत्तर है कि तीव्र रोगों में उपवास, जलचिकित्सा, स्वच्छ वायु और धूप-नहान ही मुख्य साधन हैं। ऐसी दशा में जड़ी-

---

[१] उक्त दुर्गन्ध की जाँच सात्विक स्वभाव वाले पुरुषों द्वारा होनी चाहिए क्योंकि वे इस प्रकार के भोजनों के आदी नहीं होते। दूसरे प्रकार के लोग जो कि ऐसा भोजन करते आए हैं वे उसमें किसी भी दुर्गन्ध को नहीं पहचान सकते।

बूटियों की सहायता अनावश्यक है, लेकिन गिरे हुए स्वास्थ्य को सुधारने के लिए भोजन के अंग रूप में इसका उपयोग किया जा सकता है। जीर्ण रोग में रक्त और शरीर के अन्य तत्त्वों में एक अस्वाभाविकता आ जाती है, रक्त में खटाई की मात्रा अधिक हो जाती है। इस खटाई को प्राकृतिक लवणों की सहायता से साफ करना होता है। साफ करने की क्रिया जड़ी-बूटियों की सहायता से अधिक की जा सकती है क्योंकि उनमें प्राकृतिक लवण की मात्रा अधिक होती है। जब सफाई का काम कुछ हद तक हो ले तभी रोगी को छोटे-बड़े उपवास करने के योग्य समझा जा सकता है।

मैं इस लेख को कुछ खाद्य जड़ी-बूटियों के नाम गिना कर समाप्त करूँगा। मुझे ज्ञात नहीं है कि जिन जड़ी-बूटियों का यहाँ मैं उल्लेख कर रहा हूँ वे सभी उत्तर-भारत में प्राप्य हैं अथवा नहीं। पर मैं आशा करता हूँ कि वैसी ही गुण वाली बूटियाँ वहाँ भी प्राप्य होंगी। सभी जात के पालक स्वास्थ्यकर हैं। पत्ता बहार विशेषरूप से उल्लेखनीय है। कुलफा, मेथी, चौलाई भी अच्छी बूटियाँ हैं।

अनेक जड़ी-बूटियों का स्वरस पानी में मिलाक छाला, फोड़ा-फुन्सी, जहरवाद आदि धोने के काम लाया जा सकता है। कभी कभी बूटियों के रस से रो युक्त अंग को तर रखा जा सकता है। यह क्रिया लगभ आध घंटे तक चलाई जा सकती है। इसे वनौषधि-स्ना (Herbal Bath) कहते हैं। कुछ ऐसे रोगों जिनमें आन्तरिक दाह और सूजन हो त्वचा प जड़ी के रस का लेप किया जा सकता है और कु देर बाद गरम या ठंढे पानी से स्नान किया ज सकता है।

जिन जड़ी-बूटियों का इस लेख में उल्लेख किया गय है वे प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों के अनुकूल हैं हम किसी भी जड़ी के स्वाद से यह निर्णय कर सक हैं कि वह सात्विक है या नहीं। कुछ तो कच्ची ही खा जा सकती हैं। उसी अवस्था में उनसे सर्वाधिक ला उठाया जा सकता है। वे रक्त को शुद्ध करती हैं त स्नायु, यकृत और अन्य प्रधान इन्द्रियों को सशक्त बनात हैं। यकृत और स्नायु को सशक्त बनाकर वे आँतों प भी स्थाई एवं हितकर प्रभाव डालती हैं।

* * *

दूध को चूस चूस कर पीना चाहिए। वह गट गट पीने की चीज नहीं है। दूध में वे सारी वस्तुएँ होती हैं जिनकी हमारे शरीर को आवश्यकता होती है। अतः दूध ही एक ऐसा पदार्थ है जिसे पीकर मनुष्य जितने दिन चाहे रह सकता है। कीटाणुओं के डर से दूध को उबाल कर उसे प्राणहीन न बनाइए। उबालने से दूध की जीवन-शक्ति नष्ट हो जाती है और उसका बहुत सा आवश्यक सामान जल जाता है। दूध उबाल लेने से रखने पर खट्टा तो नहीं होता पर उसमें सड़न शुरू हो जाती है। कीटाणुओं की ओर आप ध्यान न दें तो वे आपकी ओर भी कभी आकर्षित न होंगे।

आँखों का सौन्दर्य कैसे सुरक्षित रहे ?

डा० आर० एस० अग्रवाल, नेत्र-चिकित्सक

आँखें हमारे शरीर का सबसे अधिक मूल्यवान अंग हैं। इनके सौन्दर्य और रक्षा पर हमें सदा ध्यान रखना चाहिये। पर अज्ञानवश जो अत्याचार इस कोमलतम अंग पर किए जाते हैं उन्हीं का फल है कि हम 'चार आँखों वाले' हुए फिरते हैं। डा० आर० एस० अग्रवाल भारत के प्रथम नेत्र-चिकित्सक हैं जो चश्मे के रोग से लोगों को बचाना एवं छुड़ाना चाहते हैं। उपयोगी सूचनाओं से भरा हुआ आपका यह लेख सभी अभिभावकों एवं अध्यापकों द्वारा अपने तथा अपने रक्षितों के लाभार्थ मनोयोग पूर्वक पढ़ा जाना चाहिए।—सं०

संसार में ऐसा कौन सा प्राणी है जिसे नेत्रों से प्रेम न हो। सब अंगों में नेत्र ही अत्यन्त अमूल्य एवं श्रेष्ठ वस्तु है। दृष्टि के मन्द पड़ते ही डाक्टर रोगी को ऐनक लगाने की सलाह देते हैं। उनकी कृपा से आज हम 'चार आँखों वाले' बने फिरते हैं। चश्मे का सेवन इस बीसवीं सदी का प्रमुख सभ्य-रोग है, जिसकी नित्य प्रति वृद्धि हो रही है। इस अवांछित रोग का मूल कारण है प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन तथा प्राकृतिक साधनों का अभाव। जनता का एक बड़ा भाग नेत्ररक्षण विषयक ज्ञान से अपरिचित है और लोग लगातार बहुत समय तक नेत्रों का दुरुपयोग करते रहते हैं।

पलक

देखने में आँखों की पलकें एक मुख्य भाग लेती हैं। साधारणतः ऊपर की पलकें सदैव झुकी हुई और नेत्र आधे खुले हुए रहने चाहिए। ऊपर या सामने की ओर देखने के समय पलकें ऊपर न चढ़नी चाहिए बल्कि ठोड़ी को ऊँचा करना चाहिए। ऊपर की पलकें तो हर हालत में कुछ नीचे झुकी हुई ही रहनी चाहिए।

पलक मारना

महत्त्वपूर्ण बातें साधारण हुआ करती हैं। पलकों का साधारण से साधारण परन्तु सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और प्रथम कार्य पलक मारना है। पलक मारने में ऊपर की पलक को कुछ नीचे गिराना चाहिये, जिससे वह आंख की पुतली को ढक ले और फिर ऊपर उठाना चाहिए। झटका देकर या अनियमित तथा अनियंत्रित गति से पलक मारना भूल है। पलक मारना मनुष्य को हर समय स्वभावतः ही करते रहना चाहिए, चाहे वह कुछ भी कार्य क्यों न कर रहा हो। किसी अक्षर को बिना पलक मारे (टकटकी बाँध कर) देखना शुरू कीजिए, आप देखेंगे कि उसकी स्याही फीकी पड़ने लगी है। अब आप पलक मारिये और देखिए, वह फिर ज्यों का त्यों दीखने लगेगा। किसी छोटे बच्चे की, जो अपनी स्वाभाविक क्रियाओं को नहीं भूला है और जिसमें कृत्रिम अभ्यासों का प्रवेश नहीं हो पाया है, पलक मारते हुए देखिये और ध्यान दीजिए कि उसकी पलक किस प्रकार कार्य करती है। एक मिनट में कम से कम पांच बार पलक अवश्य मारनी चाहिए।

पढ़ना

पुस्तकों को ठोड़ी से कुछ नीचे रखिए, जिससे पढ़ते

समय पलकों को ऊँचा न उठाना पड़े। एक पंक्ति पढ़ने में कम से कम दो बार पलक अवश्य मारनी चाहिए। लेटे हुए भी बड़ी आसानी से पढ़ा जा सकता है, परन्तु सिर को ऊँचा रखना और बार बार पलक मारना आवश्यक है। पढ़ते समय पलक न मारना बड़ी भारी भूल है। यदि धूप में बैठ कर पढ़ना हो तो इस तरह बैठो कि किताब पर धूप न पड़े चाहे आँखों और चेहरे पर धूप पड़ती रहे।

लिखना

लिखते वक्त दृष्टि सदैव कलम की नोक पर रहनी चाहिए और दृष्टि को कलम की नोक के साथ साथ चलाना चाहिए। साथ ही बार बार पलक भी मारते रहना चाहिए। लिखते समय प्रायः लोग यह भूल करते हैं कि अगले अक्षर लिखने के समय पिछले अक्षरों को भी देखते जाते हैं।

सीना

बहुत सी स्त्रियों को थोड़े समय भी सीने-पिरोने का काम करने से सिर में दर्द होने लगता है और आँखें मींचनी पड़ती हैं। उनकी एक बड़ी भूल यह होती है कि वे पलक बहुत देर से मारती हैं, और अपने काम की ओर टकटकी लगा कर देखती रहती हैं। उन्हें जल्दी जल्दी पलक मारते रहना और सुई की गति के साथ ही साथ दृष्टि को भी घुमाते रहना चाहिए। जब सुई ऊपर जावे तो दृष्टि ऊपर जानी चाहिए और जब सुई कपड़े पर जाय तो दृष्टि भी कपड़े पर जानी चाहिए।

सिनेमा

साधारणतः सिनेमा को नेत्रों के लिए अत्यन्त हानिकर समझा जाता है और वास्तव में उनसे अनेक बार आँखों को बहुत हानि पहुँचती भी है, एवं दृष्टि मन्द हो जाती है परन्तु उन्हीं को दृष्टि शक्ति वर्द्धन का एक साधन बनाया जा सकता है। सिनेमा देखने से हानि पहुँचने का मुख्य कारण यह होता है कि उन्हें देखने के सम दर्शक आँखों पर जोर डालते और बिना पलक झपका देखते हैं। यदि यह आदत छोड़ दी जाय तो दृष्टि सदै उन्नत होगी और यदि इस प्रकार सिनेमा देखने क अभ्यास अधिक समय तक जारी रक्खा जाय तो बहुत नेत्र विकार दूर हो सकते हैं।

सिनेमा किस प्रकार देखना चाहिए ?

आराम के साथ सीधे (बिना झुके हुए) बैठि और ऊपर की पलकों को कुछ झुका हुआ तथा थोड़ ऊपर उठी हुई रखिए, साथ ही बार बार पलकें भी मार रहना चाहिए। सिनेमा देखने में साधारणतः जो भू की जाती है वह यह है कि दर्शक ऊपर की पलकों क ऊँचा उठाए रखते हैं और पलक नहीं मारते।

दृष्टि बढ़ाने के उपाय

१. नेत्र और सूर्य व्यायाम—

आजकल नेत्र रोग बहुत ही बढ़ रहे हैं। को भी ऐसा घर न होगा जिसमें कोई न कोई नेत्र रोगी न हो आँखों का दुखना तथा रोहे तो बहुधा लोगों को पीड़ि करते रहते हैं। बालक, युवक अथवा वृद्ध—जो भ अपनी आँखों को प्रकाश से बचाने के लिए धूप की ऐन (Goggles) पट्टी अथवा अँधेरे कमरों का प्रयो करते हैं प्रायः नेत्र रोग का रोना रोते हैं। नेत्रों से प्रका सहन करने की शक्ति क्षीण होती चली जाती है और ने कमजोर होते जाते हैं।

हमारे शास्त्रों, वेदों तथा उपनिषदों में सूर्य क नेत्रों का देवता माना है। हमारे ऋषियों ने आदे किया है कि प्रातः सायं नेत्र सूर्य की ओर करके सन्ध्य करनी चाहिए। बहुत से हिन्दू घरों में आज भी ऐ प्रथा है कि स्नान के बाद सूर्य की ओर मुख करके जल अर्घ चढ़ाते हैं। याद रखिए नेत्रों का स्वास्थ्य ठीक रख के लिए सूर्य के प्रकाश की बहुत आवश्यकता है। प्रका के बिना नेत्र नीरोग रह ही नहीं सकते।/सूर्य की किर

में नेत्ररोग दूर करने की पूर्ण शक्ति होती है। नेत्रों के लिए सूर्य से बढ़कर लाभदायक वस्तु और कोई है ही नहीं। अनेक रोगों में सूर्य व्यायाम से जादू का सा असर होता है। नेत्रपीड़ा, चौंध लगना एक बार के व्यायाम से ही कम हो जाते हैं। रोहे बहुत ही जल्दी अच्छे हो जाते हैं। विशेषता तो यह है कि हानि तो किसीको होती ही नहीं। यदि आप किसीसे चिकित्सा कराते हैं तो भी सूर्य व्यायाम अधिक लाभदायक होता है। नेत्रों में एक प्रकार की शक्ति उत्पन्न हो जाती है जो नेत्रों में तेजी पैदा करती और उन्हें स्वस्थ रखती है। सूर्य व्यायाम से मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है। इसके द्वारा भगवान के भी दर्शन होते हैं। सूर्य अमृत के समान हैं। इसलिए बालक से लेकर बूढ़े तक सब को सूर्य व्यायाम करना चाहिए। मैं अपने ६००० नेत्र रोगियों पर सूर्य की विशेषता जाँच चुका हूँ। स्वयं भी एक घंटा नेत्र बन्द करके और खोल कर सूर्य-व्यायाम करता हूँ।

छोटे बालकों के लिए सूर्य-व्यायाम

बच्चे को इस प्रकार गोदी में लो कि सूर्य की किरणें उसके मुख पर पड़ें। बालक को गोदी में आहिस्ता आहिस्ता हिलाओ। पहले पहले तो बच्चा रोवेगा परन्तु फिर चुप हो जायगा। यदि वह रोता भी रहे तो भी उसे पाँच सात मिनट तक हिलाते रहो। उसके नेत्रों को तुरन्त आराम मिलेगा और नेत्र पीड़ा कम हो जायगी। सबेरे और सायंकाल के समय ही बच्चों को सूर्य के प्रकाश में हिलाना अच्छा है। यदि नेत्रों से किसी प्रकार का मल, कीचड़ आदि निकलता हो तो पहले नेत्रों को गरमी में शीतल जल से और सरदी में हलके गरम पानी से धो लो। यदि बालक की आँखों के लिये किसी औषधि का प्रयोग करते हों तो उसे सूर्य-व्यायाम करा कर करना चाहिये। यदि बालक को पालने में रक्खा जाय तो भी धूप उसके मुख पर पड़नी चाहिए। बालक के नेत्रों को पाँच व सात मिनट तक धूप लगाते रहना चाहिए। बच्चे के नेत्र स्वस्थ रहेंगे।

बड़े बालकों के लिए सूर्य-व्यायाम

धूप में झूले में झुलाओ। मुख सूर्य की ओर रहे अथवा भूमि पर या कुर्सी पर बिठा दो और सूर्य की ओर मुख रक्खो।

बड़ों के लिये सूर्य-व्यायाम

सुख से कुर्सी पर या पृथ्वी पर सूर्य की ओर मुख करके, नेत्र बन्द करके १० से ३० मिनट तक बैठो। प्रातः सायं या किसी भी समय जब कि सूर्य में प्रचण्डता न हो बैठ सकते हो। यदि चाहो तो सिर को एक रूमाल से ढक लो। यदि बदली हो तो २०० से ५०० वोल्ट की बिजली की बत्ती के सामने ६ इंच की दूरी पर बैठ जाओ या जलती आग के सामने बैठ जाओ। सूर्य बिजली या आग के सामने बैठ कर अपने शरीर को इस प्रकार हिलाते रहो जैसे कि घड़ी का पैन्डुलम हिलता है या साँप बीन के सामने अपने फन को हिलाता है।

आँखें खोलकर सूर्य-व्यायाम

खुली आँखों से सूर्य-व्यायाम और भी अधिक लाभ दायक है। परन्तु यह व्यायाम स्वस्थ नेत्र वालों को ही करना उचित है; जिन्होंने कुछ समय पहले नेत्र बन्द करके अभ्यास कर लिया है और उनको चौंध न लगती हो तो वे भी इसका अभ्यास कर सकते हैं। खराब आँखों वालों को इसका अभ्यास न करना चाहिए।

विधि

१—यह व्यायाम केवल प्रातः और सायं ही करना चाहिए, जिस समय सूर्य में लाली और तेजी न हो उसी समय यह व्यायाम ठीक ठीक होता है।

२—सुख से बैठ जाओ। नेत्र खोल कर भूमि की ओर देखो और इस प्रकार नेत्र ऊपर करते जाओ कि पलक न उठे केवल ठोड़ी ऊँची होती जावे, शिर पीछे को चलता जावे, ठोड़ी को इतना ऊपर ले जाओ कि नेत्र सूर्य के समीप एक गज नीचे आकाश को देखें।

अपने पलक हलके हलके झपकाते रहो।

३—अब साँप की अथवा घड़ी के पैन्डुलम की तरह धीरे-धीरे हिलना आरम्भ करो। हिलने में स्वयं ऐसा प्रतीत होगा कि सामने की वस्तुएँ (मकान, पेड़ आदि) चल रहे हैं। जब तुम दाएँ हिलोगे तो वस्तुएँ बाईं ओर और बाईं ओर हिलोगे तो वस्तुएँ दाईं ओर को चलती प्रतीत होंगी, इस प्रकार के ध्यान के साथ सूर्य भी दीखता रहेगा और नेत्रों को किसी प्रकार की हानि नहीं होगी।

४—सूर्य को टकटकी बाँध कर न देखना चाहिए नहीं तो सूर्यान्धिता (Sun blindness) होने की सम्भावना है। बीच-बीच में हर दो चार मिनट के पश्चात् एक या दो मिनट के लिए नेत्र बन्द कर लो। कुछ समय तक इसी प्रकार अभ्यास करते रहो। नेत्रों में शान्ति बढ़ती जायगी। तेज टपकने लगेगा। व्यायाम की सफलता और पूर्णता की पहचान यह है कि सूर्य-व्यायाम करने के पश्चात् नेत्रों के सामने धुँधलापन नहीं आएगा वरन् दृष्टि साफ रहेगी। यदि धुँधलापन आवे तो इसके यह माने हैं कि सूर्य-व्ययाम में कुछ गलती हुई है, इस धुँधलेपन को दूर करने के वास्ते ठंडे पानी से आँखें धोनी चाहिए और फिर पामिंग (Palming) करना चाहिए।

२. आँखे धोना

आँख धोने के कई तरीके हैं।

पहला तरीका—हाथ में पानी ले ले कर आँखों पर पानी के छपके देना।

दूसरा तरीका—आँख धोने के प्याले (Eye cup) में पानी भर लो और प्याले को आँख पर इस तरह लगाओ कि प्याले का नीचे का किनारा नीचे की पलक को छुए और ऊपर का किनारा ऊपर की पलक से अलग रहे। फिर प्याले में पलक झपका कर आँख करीब दो मिनट तक धोओ। दूसरी आँख धोने के वास्ते फिर प्याले को पानी से भर लो। इस तरह प्याले में आँख धोने में गलती यह होती है कि प्याले को आँख पर जोर से गाड़ लेते हैं और सिर को ऊपर उठा लेते हैं।

तीसरा तरीका—बालटी या तामचीन के ब प्याले में पानी भर लो और अपने चेहरे को पानी डुबोओ और पानी के अन्दर पलकें झपकाते रहो जब साँस लेने की जरूरत हो तो चेहरे को बाहर निका लो और फिर पानी में डुबोओ, इस तरह करीब १० बा करना चाहिए।

इस प्रयोग से आँखों में तेज पैदा होता है। आँ धोने के बाद पामिग करना चाहिए।

३. ध्यान और पामिंग

शास्त्रों में ध्यान की बड़ी महिमा गाई है। मस्तिष् को शान्ति देने वाले साधनों में ध्यान ही मुख्य है। बड़ बड़े महात्माओं के बारे में कहा जाता है कि उनके नेत्र से ज्योति निकलती है, उनसे तेज टपकता है। यह स ध्यान की महिमा है। डाक्टर बेट्स (Dr. Bates) ध्यान को पामिग कहते हैं और नेत्रों के लिए इसक प्रशंसा करते नहीं अघाते।

पामिंग करने की तरकीब

आँख बन्द कर लो और दोनों हथेलिओं से बन् आँखों को हलके से ढक लो। आँखें सरलता से बन् कर दोनों हथेलियों से ढकने के बाद किसी प्रिय वस् का ध्यान करो। क्लर्क अपनी लेखनी का, बच्चे अपन गेंद का, माताएँ नन्हें शिशुओं का, चित्रकार अपन तूलिका का ध्यान सरलता से कर सकता है। यदि ध्या में चित्रकार अपनी तूलिका को घुमावे, बच्चे अपन गेंद को उछालें, माताएँ बच्चों को हँसता लोटता दे तो दृष्टि में अभूतपूर्व परिवर्त्तन होता है। पामि ३ से १० मिनट तक करना चाहिए। कुहनी के नी तकिया रख लो या कोहनी मेज पर रख लो।

दृष्टि चार्ट पर अभ्यास

दूर की दृष्टि तेज करने के वास्ते दृष्टि-पत्र (Snellen Eye Testing Chart) को दीवार प

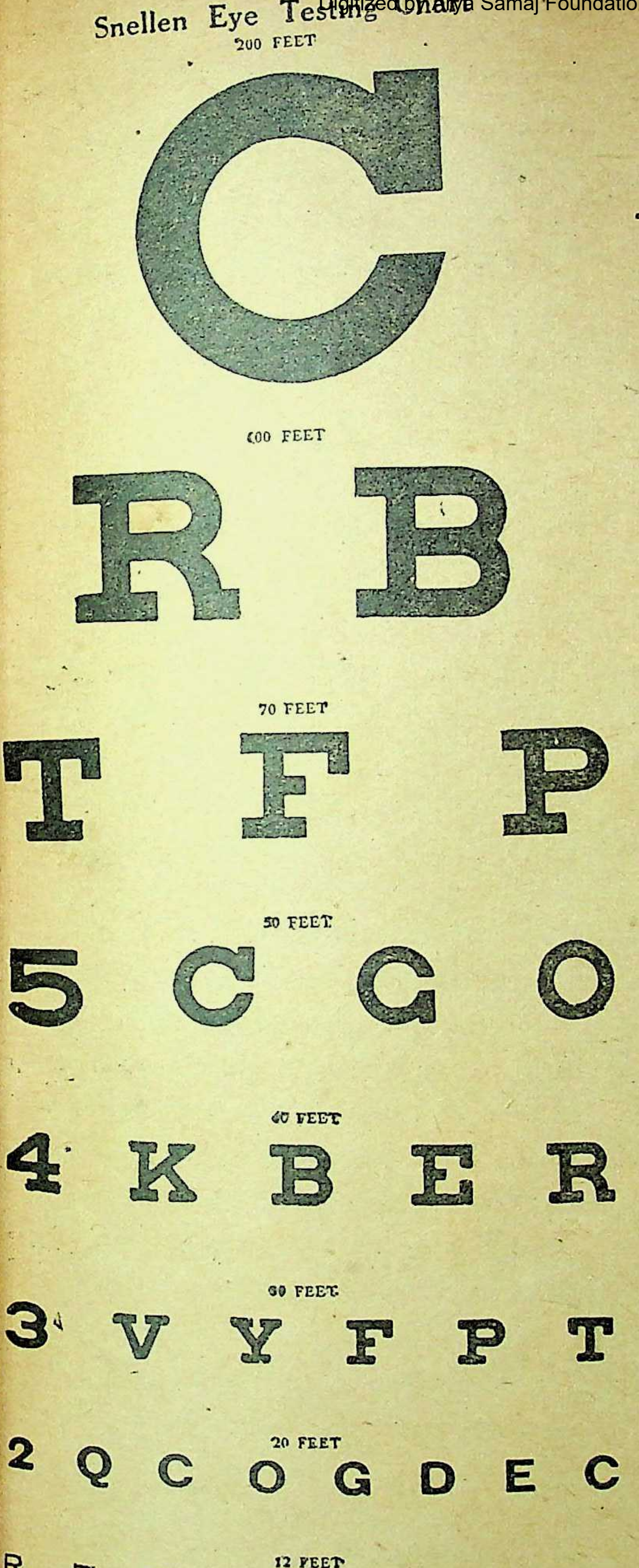
Snellen Eye Testing Chart
200 FEET
C
100 FEET
R B
70 FEET
T F P
50 FEET
5 C G O
40 FEET
4 K B E R
30 FEET
3 V Y F P T
20 FEET
2 Q C O G D E C
12 FEET
R Z 3 B 8 S H K O
10 FEET
F Y V P C O R K 5 6 E
DR. AGARWAL'S EYE INSTITUTE, DELHI.

दूर की दृष्टि तेज करने के लिए दृष्टि-पत्रक :
इस पर रोज प्रैक्टिस करनी चाहिए।

अच्छे प्रकाश में लगाओ इससे दस फीट की दूरी पर एक कुर्सी रक्खो, पहले सूर्य-व्यायाम करो, फिर ठंडे पानी से आँखें धोलो तब कुर्सी पर बैठो। अब पामिंग करो। फिर आहिस्ता से आँख खोलो और पलक मार मार कर दृष्टि पत्रक पर अक्षर पढ़ो। पहले तो अक्षर बड़े साफ और काले दीखेंगे पर कुछ देर बाद फिर धुँधले पड़ते मालूम होंगे। ज्योंही अक्षर धुँधले दीखने लगें आँख बन्द कर हथेली से ढक कर दूसरी आँख खोलो और पलक मार मार कर पढ़ना आरम्भ करो फिर पामिंग करना शुरू कर दो और दो से पाँच मिनट बाद पुनः उसी भाँति अक्षरों को पढ़ो। बच्चों को पामिंग के समय कोई मनोरंजक कहानी सुनाओ।

यदि लिखने पढ़ने में दृष्टि कमजोर पड़ती हो तो इसी प्रकार इलाज करके 'पढ़ने वाले बारीक चार्ट' (Reading Test Type) पर प्रैक्टिस करो। १० मिनट की प्रैक्टिस से बारीक अक्षर जो पहले नहीं पढ़े जाते थे पढ़ने लगोगे। इस तरह एक दो बार रोज अभ्यास करने से दृष्टि तेज हो जाती है और कोई भी नेत्र-रोग न सतावेगा। मोतियाबिन्द की बीमारी न होगी। यदि नेत्र ज्यादा कमजोर हों तो साथ साथ और दूसरे नेत्र-ज्योति बढ़ाने के साधन[1] भी करो।

प्रधान सूचनाएँ

(१) इस चिकित्सा के आरम्भ करने के साथ ही चश्मा लगाना छोड़ देना चाहिए। बिना चश्मा छोड़े विशेष लाभ होना असम्भव है। दूसरी तरकीब यह भी हो सकती है कि चश्मे का नम्बर थोड़ा थोड़ा कम करते रहो। यदि दूर की दृष्टि कमजोर है तो लिखने

---

[1] **ये साधन लेखक की पुस्तक** Mind and Vison **से जाने जा सकते हैं।—सं०**

पढ़ने को ऐनक न लगाओ। यदि लिखने पढ़ने की दृष्टि कमजोर हो तो दूर के वास्ते ऐनक न लगाओ। हर समय ऐनक लगाए रहने से हानि होती है।

यदि कोई ऐनक भी लगाना चाहे तब भी यह व्यायाम चन्द मिनट तक रोज करना चाहिए ताकि नेत्र कमजोर न होने पावें।

(२) रात्रि को जल्दी सो जाना चाहिए। सोते समय नेत्रों को हथेली से ढक लो, ध्यान करते करते सो जाओ। प्रातःकाल उठते ही पाँच मिनट उसी प्रकार ध्यान करो और फिर आँखें खोलो।

(३) अपनी दृष्टि के जाँच का फल हफ़्तेवार एक रजिस्टर में लिखा करो।

(४) जब कभी सिर में दर्द हो या आँखों में खिचाव आवे तो क्रिया तुरन्त बदल करके पामिंग करो और यह समझ लो कि उस क्रिया के करने का उचित ढंग तुम नहीं जान सके हो।

(५) दूसरे को भी यह उपयोग सिखलाओ। इससे तुम्हारा ज्ञान बढ़ेगा।

(६) दृष्टि-पट पर देखने से आँखों की दृष्टि शक्ति बढ़ती है क्योंकि दृष्टि का व्यायाम होता है और पामिंग आदि ध्यानों से उन्हें विश्राम मिलता है।

(७) प्रत्येक मनुष्य को प्रातःकाल सूर्य की ओर मुख करके कम से कम १० मिनट जरूर बैठना चाहिए। ऐसा करने से नेत्रों की ज्योति बलहीन न होगी और वे भविष्य में नेत्र सम्बन्धी पीड़ाओं से बची रहेंगी।

(८) घर और पाठशाला में दृष्टि-पट होना चाहिए। घर के प्रत्येक सदस्य को नित्य एक आँख बन्द करके दृष्टि-पट को पढ़ना चाहिए फिर दूसरी से। इससे आँखें आजन्म बलवान और स्वस्थ रहती हैं। पाठशाला में प्रत्येक बालक को यह दृष्टि-पट स्कूल का कार्य आरम्भ से पहले शान्तिपूर्वक हर एक आँख से पढ़ लेना चाहिए।

(९) मिठाइयाँ जो बेसन, मैदा, मावा से बनी हों न खाओ। पेट की बीमारी नेत्रों के ऊपर भी असर डालती हैं। सुपाच्य और हलका भोजन करो। गरिष्ट और कब्जकारी चीजों से दूर रहो। गेहूँ का दलिया चोकरयुक्त रोटी, तरकारी, दाल, चावल, फल आदि पथ्यकारक भोजन हितकारी है। हरी तरकारियों एवं टमाटर का उपयोग नेत्रों को लाभदायक है। शहद का सेवन करो। कभी कभी पानी में नीबू का रस डाल कर भी पीना चाहिए। (नीबू के बीजों से बचना चाहिए)।

(१०) खाने के बाद आँखों पर हाथ फेरने से दृष्टि तेज होती है। आँखें बन्द करो और अपने दोनों हाथ चेहरे पर खड़े रक्खो। अब अपने सिर को ऊपर नीचे हिलाओ हाथों को नहीं। सिर हिलाते समय ऐसा मालूम होगा जैसे कि हाथ आँखों पर चलते हैं। जब सिर हिलेगा तो हाथ ऊपर को चलते मालूम होंगे और जब ऊपर को हिलेगा तो हाथ नीचे को चलते मालूम होंगे, इस तरह के ध्यान से मस्तिष्क में शान्ति पैदा होती है।

योग और स्वास्थ्य

श्री स्वामी शिवानन्द

आज यह साबित हो गया है कि हमारी प्राचीन योग-विद्या, विज्ञान के दृढ़ आधारों पर कायम है एवं इसके आविष्कर्ता आजकल के बढ़े हुए चीर फाड़ के जमाने से, शरीर विज्ञान के किसी प्रकार भी कम ज्ञाता न थे। यही कारण है कि योग-विद्या सम्पूर्ण है। इसके आविष्कर्ताओं ने शारीरिक ही नहीं मानसिक स्वास्थ्य पर भी ध्यान दिया था। अतः योग के साथ यम, नियम, भोजन की भी व्यवस्था है। अधिकारी लेखक द्वारा लिखे गये इस लेख से पाठक योग की प्रारम्भिक आवश्यकताओं से परिचित हो कर लाभ उठाएँगे।--सं०

स्वास्थ्य का महत्त्व

सुन्दर स्वास्थ्य आपके लिए सबसे बड़ी सम्पत्ति है। स्वास्थ्य ही धन है। निस्सन्देह स्वास्थ्य प्राप्त करने योग्य वस्तु है। यह सबके लिए समान रूप से कल्याणकारी है। आपको शारीरिक और मानसिक दोनों तरह का स्वास्थ्य प्राप्त करना चाहिए। अगर आपका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है तो आप जीवन की किसी भी दिशा में अग्रसर नहीं हो सकते। आध्यात्मिक अनुसरण अथवा अध्ययन के लिए भी सुन्दर स्वास्थ्य प्राथमिक आवश्यकता है। बिना उत्तम स्वास्थ्य के जीवन-सागर की अज्ञात गहराई तक आप न पहुँच ही सकते हैं और न जीवन की अन्तिम मुक्ति ही प्राप्त कर सकते हैं। "न्यायम् आत्मावलहीनेना लभ्या"—अर्थात् इस आत्मा को बलहीन कभी प्राप्त नहीं कर सकते। यह श्रुतियों में स्पष्ट रूप से घोषित कर दिया गया है कि उत्तम स्वास्थ्य के बिना अस्थिर मस्तिष्क और उत्पात मचाने वाली इन्द्रियों का सामना कोई नहीं कर सकता।

लेखक

सुन्दर स्वास्थ्य उस शारीरिक और मानसिक अवस्था को कहते हैं जिसमें मनुष्य अच्छी तरह सोता है, भोजन को ठीक तौर से पचा लेता है, आराम से दिन व्यतीत करता है, और उसे किसी भी तरह की बीमारियों की चिन्ता नहीं लगी रहती। स्वास्थ्य के ठीक रहने पर शरीर की समस्त इन्द्रियाँ—जैसे हृदय, फुप्फुस, मस्तिष्क, यकृत, मूत्राशय, आँतें इत्यादि—अपना कार्य एक दूसरे से पूर्ण सामंजस्य रखते हुए सहकारिता पूर्वक करती हैं और उनका परिणाम सन्तोषजनक होता है। नाड़ी की गति और श्वास की गति पूरी तौर से व्यवस्थित होती है। शरीर का तापमान सामान्य (Normal) होता है। एक स्वस्थ व्यक्ति बिना थकावट महसूस किए अधिक समय तक कार्य करने में समर्थ होता है। प्रतिदिन उसे साफ पाखाना होता है।

जिसे शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक बल प्राप्त है, वह एक आदर्श व्यक्ति है। शारीरिक बल

से नैतिक बल उत्तम है। नैतिक बल प्राप्त करना कठिन होता है। आध्यात्मिक बल संसार में सर्वश्रेष्ठ है। एक साधु अथवा योगी जिसे आध्यात्मिक बल प्राप्त हो, सारे संसार को हिला सकता है। उसका व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक होता है। गान्धीजी को नैतिक बल प्राप्त है। उन्होंने इस बल को अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्य से प्राप्त किया है। गांधीजी में शारीरिक बल नहीं है। उनमें मानसिक और नैतिक बल है। दुबले पतले और कमजोर शरीर के अन्दर शक्तिशाली आत्मा का वास हो सकता है।

संसार को सुन्दर स्वस्थ माताओं की स्वस्थ और मजबूत बालक-बालिकाओं की आवश्यकता है। लेकिन इन दिनों हम भारत में क्या देखते हैं? वह भारत जो किसी समय सुविख्यात वीरों का देश था, जहाँ पर अदम्य साहस और अप्रतिम वीरता वाले अगणित योद्धाओं और सरदारों का वास था, वही भारत आज क्लीव और निःशक्त लोगों से भर उठा है। बच्चे, बच्चे पैदा करते हैं। स्वास्थ्य के नियमों की उपेक्षा की जाती है। आज राष्ट्र दुःख भोग रहा है और मर रहा है। आज संसार को असंख्य वीर—नैतिक, आध्यात्मिक—सैनिकों की जिनमें अहिंसा, सत्य, आस्तेय, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह—ये पाँचों गुण मौजूद हों—आवश्यकता है। जिन्हें स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त है, जिनमें उपरोक्त पाँचों गुण मौजूद हैं, जिन्हें आत्म-ज्ञान हो गया है, केवल वही संसार को वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त करा सकते हैं।

वह दुर्लभ वस्तु स्वास्थ्य ही है जो जीवन को जीवन के योग्य बना सकती है। क्या आप आज यह गान गायेंगे—"शरीरमाद्यम् खलु धर्म साधनम्"—अर्थात् निश्चय ही जिस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मनुष्य ने जीवन धारण किया है उसके लिए सबसे पहले आवश्यक वस्तु शरीर ही है।

दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि मानव जीवन के उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह सबसे पहला और महत्त्वपूर्ण साधन है। महर्षि चरक ने अपनी संहिता में लिखा है, "धर्मार्थ काममोक्षणामारोग्यं मूलमुत्तमम्, अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करने का मूल साधन उत्तम स्वास्थ्य ही है। रोग स्वास्थ्य को नष्ट करने वाले हैं। स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों पर आपका सबसे पहले ध्यान आकृष्ट होना चाहिए। स्वास्थ्य के नियम प्रकृति के नियम हैं। इनका निर्विघ्नतापूर्वक अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। इन नियमों का उलंघन अथवा अतिक्रमण करने वाले व्यक्ति ही असाध्य रोगों के शिकार होते हैं और उनका जीवन शोकग्रस्त बन जाता है।

महत्त्वपूर्ण प्रारम्भिक आवश्यकताएँ

उत्तम कोटि का स्वास्थ्य और बल प्राप्त करने के लिए सात्विक आहार अथवा सम्पूर्ण (Wholesome) भोजन, जिसमें जीवनतत्वों की प्रधानता हो, अथवा सुसन्तुलित आहार करना, आसन और प्राणायाम का नियमित रूप से अभ्यास करना, सादा जीवन रखना और समुचित रूप से विचार करना—ये महत्त्वपूर्ण प्रारम्भिक आवश्यकताएँ हैं। ये वही उच्च सिद्धान्त हैं जिनके आधार पर हमारे ऋषि और मुनि लोग दीर्घ काल तक शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। ये वे महत्त्वपूर्ण साधन हैं जिनके आधार पर शरीर और मस्तिष्क को पूर्ण स्वस्थ रखने के लिए योग की प्रणालियाँ निर्धारित की गई हैं। यदि कोई पतनोन्मुख राष्ट्र अपनी खोई हुई महत्ता को पुनः प्राप्त करना चाहता है तो उसके लिए यही अनिवार्य साधन है।

योग-आसन

नियमित रूप से योगाभ्यास अथवा आसन करने से आप पूरी तौर से स्वस्थ और प्रसन्न-चित्त रहेंगे। आपकी मांसपेशियों और स्नायुओं की शक्ति में वृद्धि होगी, आपका व्यक्तित्व आकर्षक बनेगा और आप दीर्घायु होंगे। आजकल व्यायाम की कई एक प्रणालियाँ प्रचलित हैं लेकिन उनमें योगाभ्यास अथवा योग-

आसन सर्वश्रेष्ठ और अतुलनीय हैं। यह अन्य सभी प्रणालियों में अधिक पूर्ण है। इसके द्वारा मस्तिष्क, मांसपेशियाँ, शिराएँ तथा शरीर के अन्य सभी अवयव सुसंचालित होते और शक्ति प्राप्त करते हैं। इसके द्वारा सभी तरह के पुराने रोग दूर हो जाते हैं।

योगाभ्यास के लिए यह आवश्यक है कि शरीर में अधिकाधिक मात्रा में उत्साह और स्नायुविक शक्ति हो। जो मनुष्य वीर्य की रक्षा करता है केवल उसी में यह उत्साह और शक्ति पाई जा सकती है। इसलिए जो मनुष्य शीघ्रता के साथ योगाभ्यास करके उसके परम लाभ को प्राप्त करना चाहता है उसके लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना सबसे अधिक आवश्यक है। यदि योगाभ्यास में कोई शिथिलता अथवा अनियमितता आई तो, सम्भव है कि उस हालत में उसमें वासना अथवा सांसारिकता के भाव उत्पन्न हों और इस प्रकार उसने अब तक योगाभ्यास से जो थोड़ा बहुत लाभ उठाया है वह नष्ट हो जाय। अगर उसने वासनाओं अथवा सांसारिकता के चक्कर में पड़ कर योगाभ्यास द्वारा अब तक प्राप्त किए हुए लाभ को विनष्ट कर दिया तो फिर उसे उस स्थिति तक, जहाँ तक वह पहले पहुँच चुका था, पहुँचना बड़ा कठिन होगा। इसी वजह से योग के इच्छुक व्यक्ति को चाहिए कि जब तक वह अपने को उच्चतम समाधि में नहीं लगा सकता तब तक वह कड़ाई के साथ योगाभ्यास करे। जिस योगी ने कुछ वर्षों तक कठोर योगाभ्यास करके अपने मस्तिष्क पर नियंत्रण कायम कर लिया है वह इस अवास्तविक अथवा नाम और रूपमय संसार के परे उस वास्तविक सत्य को पहचान सकेगा। इसीलिए पतंजलि ने भी कहा है, ''दीर्घ काल तक अभ्यास करने से वह (अभ्यास) सुदृढ़ और स्थाई बन जाता है।''

आसन से दृढ़ता प्राप्त होती है। मुद्रा स्थिरता प्रदान करती है। प्रत्याहार धैर्य प्रदान करने वाला है। प्राणायाम लघिमा प्रदान करता है। ध्यान आत्मा के प्रत्यक्षत्व का बोध कराता है। समाधि से 'निर्लिप्त' 'कैवल्यम्' की प्राप्ति होती है जो कि चरम मुक्ति है।

योगासन का अभ्यास करने से शरीर का विकास होता है और योगाभ्यासी आलस्य-मुक्त होकर फुर्तीला बनता है। उसकी रीढ़ बहुत लचीली और उसका शरीर मुलायम होता है। उसकी पाचनशक्ति तीव्र होती है और उसे अच्छी तरह भूख लगती है। आसन के द्वारा किसी भी प्रकार का रोग समूल नष्ट किया जा सकता है। नियमित रूप से आसन करने से शरीर के तीन मुख्य अंग—हृदय, फेफड़ा और मस्तिष्क—और मेरुदण्ड स्वस्थ अवस्था में रहता है। इसके द्वारा प्राणशक्ति की भी रक्षा और परिवृद्धि होती है। शिराओं और धमनियों में रक्त का ठीक तौर से संचालन होता है। शरीर के किसी भी भाग में रक्त स्थिर नहीं रहता। रीढ़ की स्नायु-ग्रन्थियों में शक्ति प्राप्त होती है। आसन करने से धमनियों में कड़ापन नहीं आने पाता। सच पूछिए तो आसन शरीर के समस्त अवयवों को सशक्त और अपना कार्य करने के लिए योग्य बनाता है।

आध्यात्मिक लाभ

आसन केवल शारीरिक व्यायाम ही नहीं है। आसन कुण्डलिनी को सजग बनाते हैं। वे मस्तिष्क को स्थिरता प्रदान करते हैं और उनके द्वारा शरीर के अवयवों में सामंजस्य प्राप्त होता है तथा मानसिक शान्ति मिलती है। बिना स्थिर मुद्रा आप ध्यानमग्न नहीं हो सकते। इसलिए आसन का आध्यात्मिक महत्त्व भी बहुत अधिक है।

स्मरण शक्ति में वृद्धि

शीर्षासन करने से मस्तिष्क में बहुत अधिक मात्रा में रक्त का संचालन होता है। इसलिए इससे स्मरण-शक्ति और बौद्धिक शक्ति में वृद्धि होती है। शक्ति से अधिक परिश्रम करने अथवा किन्हीं अन्य कारणों से नष्ट हुई स्मरण-शक्ति आसन के द्वारा पुनः प्राप्त की

जा सकती है। यह काम-शक्ति को ओज-शक्ति में परिवर्तित कर देता है। इससे शरीर के स्नायु सशक्त और सबल बन जाते हैं।

योगासनों के द्वारा हमें रोगों से बचाव करने तथा शरीर में स्थान प्राप्त कर लेने वाले रोगों के दूर करने की शक्ति प्राप्त होती है। कुछ योगासन ऐसे हैं जो शरीर को आगे और पीछे की तरफ ले जाकर कसते हैं। कुछ अन्य आसनों के द्वारा रीढ़ की शिराओं के कार्य में सहायता मिलती है। इस प्रकार आसन से समस्त शरीर का विकास होता है और उसके सभी अंगों में शक्ति प्राप्त होती है। आसन सम्बन्धी सभी क्रियाएँ आध घंटे के अन्दर समाप्त हो सकती हैं। लेकिन इस थोड़े समय के अन्दर ही आप आसन के चरम लाभ का अनुभव कर सकते हैं। आसन से किसी एक अंग की नहीं, बल्कि समूचे शरीर की कसरत हो जाती है। आसन की विधि सरल, वास्तविक, प्रभावशाली, कम समय में समाप्त हो जाने वाली है तथा इसे बिना किसी बाहरी सहायता के—अपने आप—किया जा सकता है।

प्राणायाम

योग-दर्शन में प्राणायाम को बड़े महत्त्व का स्थान दिया गया है। प्राण का मस्तिष्क से सम्बन्ध है और मस्तिष्क के द्वारा इच्छा से, और इच्छा के द्वारा वैयक्तिक आत्मा से और अन्त में वैयक्तिक आत्मा के द्वारा परम आत्मा से इसका सम्बन्ध है। मस्तिष्क के द्वारा संचालित हो प्राणलहरियों पर नियंत्रण कायम करना यदि आप जानते हैं तो सार्वभौम प्राण को अपने वश में करने का भेद आपको मालूम हो जायगा। श्वास-क्रिया को अपने वश में करके आप बड़ी उत्तमता के साथ अपने शरीर के अन्य समस्त स्नायुओं को वशीभूत कर सकते हैं। प्राण पर नियंत्रण कायम कर लेने के द्वारा आसानी और शीघ्रता के साथ अपने शरीर, मस्तिष्क और आत्मा पर अधिकार कायम कर सकते हैं। जिसने प्राण को अपने वश में कर लिया है, उसने न केवल अपने शरीर और मस्तिष्क को, बल्कि संसार के अन्य सभी प्राणियों के शरीर और मस्तिष्क को अपने वश में कर लिया है। प्राणायाम ही वह साधन है जिससे योगी लोग संसार की समस्त शक्ति को ग्रहण करके पूर्णता प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं।

प्राणायाम का शरीर, मस्तिष्क, बुद्धि और इन्द्रियों पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ता है। यह शरीर के रोगों को दूर करके बीजकोषों और स्नायुओं को ताजा बना देता है। यह शरीर में नव-स्फूर्ति उत्पन्न करने वाला है। प्राणायाम मस्तिष्क की विचार शक्ति को दृढ़ बनाता है। यह मन अथवा चित्त की अपवित्र भावनाओं को भी दूर करने वाला है। यह मेधा-शक्ति को बढ़ाता है और आध्यात्मिक प्रवृत्तियों में सहायक होता है। यह स्मरण-शक्ति को बढ़ाता है। यह चंचल प्रवृत्तियों को शान्त करता है और उनपर नियंत्रण कायम करता है। इससे नाड़ी-सिद्धि भी होती है।

जिसका चित्त शान्त है, जिसने अपनी इन्द्रियों को काबू में कर लिया है, जो अपने गुरु-जनों और शास्त्रों के वचनों में विश्वास रखता है, जो खान-पान में मध्यम-मार्ग का अनुसरण करता है, जो जन्म-मरण के चक्र से अपने को मुक्त करने के लिए उत्सुक है, वही योगाभ्यास का अधिकारी है। इस तरह का व्यक्ति प्राणायाम में बड़ी आसानी के साथ सफलता प्राप्त कर सकता है।

योगी का भोजन

जो भोजन योगाभ्यास और आध्यात्मिक विकास में पूरी तौर से सहायता पहुँचाने वाला है वही योगी का भोजन है। आहार का चित्त अथवा मस्तिष्क से घनिष्ट सम्बन्ध है। आहार से सूक्ष्मतम तत्वों एवं चित्त का निर्माण होता है। उद्दालक ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को आदेश किया है, "आहार जब शरीर के भीतर पहुँचता है तो उसके तीन रूप हो जाते हैं: उसका स्थूल भाग मल बनता है, माध्यमिक भाग मां

बनता है और उसके सूक्ष्म अंशों से चित्त बनता है। जब दही को मथा जाता है तो मक्खन उसके ऊपर आ जाता है। इसी प्रकार हे वत्स ! जब भोजन पचता है तो उसके सूक्ष्म अंश ऊपर उठ आते हैं जिनसे चित्त बनता है। इसलिए चित्त वस्तुतः आहार ही है।" इसी प्रकार छांदोग्य उपनिषद् में लिखा है ! "पवित्र भोजन करने से मनुष्य की आन्तरिक प्रवृत्तियाँ पवित्र बनती हैं, आन्तरिक प्रवृत्तियों के पुनीत होने पर वह आत्मा का बोध करता है और आत्मा का बोध हो जाने पर वह सभी प्रकार के बन्धनों से मुक्त हो जाता है।"

आहार के तीन प्रकार

आहार तीन प्रकार के होते हैं——सात्विक, राजसिक और तामसिक। दूध, जौ, गेहूँ आदि अनाज, मक्खन, छेना, टमाटर, मधु, खजूर, फल और बादाम आदि ये सभी सात्विक आहार हैं। ये चित्त को शुद्ध और शान्त बनाते हैं। मछली, अण्डे, गोश्त, नमक, मिर्च, मसाला, राजसिक आहार हैं। ये उत्तेजना उत्पन्न करने वाले हैं। गोमांस, शराब, लहसुन, प्याज, तम्बाकू, तामसिक आहार हैं। ये चित्त में क्रोध, अज्ञानान्धकार, और आलस्य उत्पन्न करते हैं। टिन के डिब्बों में बन्द करके बाहर से आने वाले पदार्थों को बासी, अथवा विकृत समझना चाहिए। इस प्रकार के, बिस्कुट, चाकलेट तथा अन्य प्रकार की मिठाइयाँ आँतों में चिपकने वाली होती हैं। बहुत अधिक आँच या ताप में पकाई या भूनी गई चीजें भी ठीक नहीं होतीं और इसलिए ये भी उतनी ही अधिक हानिकारक हैं। स्वास्थ्य और शक्ति के लिए ताजे फल, सब्जी और बिना चाले गए आटे की रोटी पर ही रहिए।

प्रारम्भिक अवस्था में सात्विक आहार का चुनाव करते समय सावधानी रखनी चाहिए। भोजन का चित्त पर बहुत व्यापक प्रभाव पड़ता है। आप इसे दैनिक रूप में प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं। गरिष्ट, अपाच्य और स्वादिष्ट भोजन के उपरान्त चित्त पर काबू रखना बड़ा कठिन होता है। चित्त हर घड़ी इधर उधर बन-मानुष की भाँति उछलने कूदने लगता है। शराब चित्त में बहुत ही अधिक उत्तेजना उत्पन्न करने वाली होती है।

आप स्वस्थ और दीर्घायु हों, और योग के द्वारा परमानन्द प्राप्त करें, आप सभी प्रभावशाली योगी बनें, यही मेरी कामना है।

* * *

शरीर में ही जन्मसिद्ध एक शक्ति रहती है जिसे 'जीवन-शक्ति' कह सकते हैं। रोगों को भगाकर स्वास्थ्य को फिर से स्थापित करना इसी शक्ति का काम है। शरीर का यह स्वाभाविक नियम है कि वह सदैव ही स्वास्थ्य की ओर अग्रसर होता है और वह अवश्य ही स्वस्थ रहता है जब तक कि वह निश्चित एवं प्राकृतिक नियमों के अनुसार चलता है। रोग तभी होता है जब कि इन नियमों की अवहेलना की जाती है। नियमों की अवहेलना का दंड अवश्यम्भावी है एवं स्वयं ही मिल जाता है। उसका दंड किसी बाहरी शक्ति द्वारा नहीं दिया जाता स्वयं ही मिलता है। जब मनुष्य कर्म करना छोड़ देता है तो दंड का भी अन्त स्वयं ही और अवश्यमेव हो जाता है।

विद्युत-चिकित्सा

डाक्टर के० आर० दिलकश, एम० एस० बी०, एन० डी०, एम० एच० एम० सी०, एम० आई० एच० ए०, एल० एस० ई० पी०

लेखक

विद्युत-चिकित्सा प्राकृतिक-चिकित्साका एक अंग कहा जाता है जिसमें हम विद्युत-शक्ति को शारीरिक रोगों को दूर करने के एक ढंग के तौर पर काम में लाते हैं। इसमें गालवैनिक (Galvanic), फैरेडिक (Faradaic), सिनोसाइडल (Sinosoidal), विद्युत-प्रकाश-स्नान (Electric light bath), इन्फ्रारेड रे (Infra-red ray), अल्ट्रा वायलेट रे (Ultra-violet ray), डायाथरमी (Diathermy) इत्यादि शामिल की जाती हैं। कुछ प्राकृतिक-चिकित्सक जड़ी बूटियों का उपयोग पारमाणिक-चिकित्सा के ढंग पर करते हैं। इस ढंग के चिकित्सकों ने कई परिश्रमशील प्रयोगों के बाद इस बात को पूर्णरूप से प्रमाणित कर दिया है कि विद्युत-शक्ति में दैवी प्रकार के कुछ ऐसे गुण रहते हैं जो मानव-शरीर में छिपी हुई या समाप्त सी हुई जीवन-शक्ति को फिर से उत्तेजित कर शक्तिवान बना देते हैं।

कोई भी अस्तित्वमय वस्तु, चाहे वह जीव जगत, वनस्पति जगत या खनिज जगत की हो, कई छोटे छोटे अविभाजनीय कणों से बनी हुई होती है जिसे विज्ञान की भाषा में अणु (Atom) कहते हैं।

किन्तु हाल ही की वैज्ञानिक खोजों ने यह भी भली प्रकार प्रमाणित कर दिया है कि यह कण भी विद्युत-शक्ति के बल से और भी छोटे छोटे कणों में विभाजित हो सकते हैं। बड़े बड़े प्रयोगों के बाद विद्वानों और वैज्ञानिकों ने यह भी प्रमाणित कर दिया कि इन छोटे छोटे विभाजित कणों में से कुछ ऋणबोधक विद्युतमय होते हैं और कुछ धनबोधक विद्युतमय। यानी कुछ कणों या परमाणुओं में नेगेटिव इलेक्ट्रिसिटी (Negative electricity) पाई जाती है और कुछ में पाजिटिव (Positive)। हम अपनी सहूलियत के लिए ऋण-बोधक परमाणुओं को इलेक्ट्रोन (Electron) और धन-बोधक परमाणुओं को प्रोटोन (Proton) कह लेते हैं।

इन विद्युतमय परमाणुओं में अत्यन्त तीव्र और शक्तिवान गति होती है। वे एक ताँबे के तार में १,८०,००० मील फी सेकेण्ड की चाल से यात्रा कर सकते हैं। इनके इस गुण का प्रयोग केथोड् (Cathode) और एक्सकिरण (X-Ray) के उत्पादन में किया जाता है। केथोड् किरण केवल कुछ विद्युतमय परमाणुओं की कतार या लाइन है जिसमें परमाणु अत्यन्त तीव्रता से यात्रा करते हैं और इस कारण जो लगभग हर प्रकार की वस्तु के अन्दर तक पहुँच जाने की क्षमता रखती है। जब केथोड् किरणें किसी शीशे के बल्ब के

अन्दर रक्खे हुए धातु की रोक से टकराती हैं तो ऐसी किरणों की उत्पत्ति होती है जो और भी ज्यादा अन्दर तक जाने की क्षमता रखती हैं और इन्हीं किरणों को हम (X-Ray) एक्सरे कहते हैं।

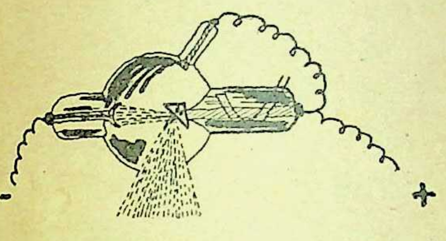

एक्सरे-यंत्र

इन विद्युतमय परमाणुओं के प्रवाह को ही हम विद्युतधारा कह कर पुकारते हैं।

इस प्रकार एक अविभाजनीय कण ही विद्युत-शक्ति का उद्गम स्थान ठहरता है और चूँकि सम्पूर्ण विश्व ऐसे अविभाजनीय कणों का ही बना है हमें विद्युत-शक्ति भी विश्वव्यापी माननी पड़ती है।

प्रकृति का आधार ही विद्युत है। मानवशरीर, उसके अंग प्रत्यंग, उसके कोष्ठक और तन्तु सभी अस्तित्व-मय हैं अथवा अधिक खुले शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि ये सब विद्युतमय परमाणुओं का एक समूह हैं। इस बात को विचार में रखते हुए कि परमाणुओं के प्रवाह को ही हम विद्युत कहते हैं हम यह भी कह सकते हैं कि हमारा शरीर एक बहुत बड़ा विद्युत का भण्डार है। आज विश्व के सभी सुप्रसिद्ध भौतिक शास्त्रज्ञाताओं ने इस बात को मान भी लिया है।

प्रोफेसर लारकिन का कथन है कि तमाम जीवित शरीर विद्युत यन्त्रों की तरह है। मानव-शरीर में हम मस्तिष्क को बैटरी और तमाम तन्तुओं को उससे निकलने वाले तार कह सकते हैं।

प्रोफेसर ओ० ओवरबैक, एफ० आर० एस० पी०, एफ० जी० एस०, ई० पी० एस० का कथन है कि विद्युत ही इस भौतिक विश्व की उत्पादक है।

प्रोफेसर जेक्वेस लोएब का कहना है कि विद्युत ही मानव-शरीर की समस्त क्रियाओं की उत्तरदायी है। आगे यही प्रोफेसर साहब फरमाते हैं कि विद्युत तमाम तरह की शारीरिक दुर्वस्थाओं और रोगों की चिकित्सा का एक प्रभावशील साधन है।

इस प्रकार पाठक भली प्रकार समझ सकते हैं कि हमारे लिए अपने शरीर की विद्युत को सुरक्षित रखना कितना अधिक आवश्यक है। हमारे शरीर में जो शरीर के तन्तु प्रत्येक भाग में हैं, विद्युतधारा के पथ कहे जा सकते हैं। यही हमारे शरीर का जीवन-विज्ञान कहा जा सकता है। इसी विद्युतशक्ति का ह्रास रोग कहलाता है। इस बात को वियना के प्रोफेसर ससटर ने अपने कैमरे से लिए हुए चित्रों की सहायता से पूर्णरूप से प्रमाणित कर दिया है।

शारीरिक तन्तुओं में जीवन विद्युत का उचित ढंग से प्रवाहित न होने को ही—जिसका कारण शरीर में जमा हुआ पदार्थ हो सकता है जो अनावश्यक और व्यर्थ सा हो जाता है और जो तमाम तरह के विषैले द्रव्यों को उत्पन्न कर देता है—रोग कहते हैं। यही कारण है कि साधारणतः सब रोग और विशेष कर स्नायु-रोग (Nervous disorders) विद्युत-चिकित्सा से आश्चर्यजनक रीति से अच्छे होते हैं।

मानव-शरीर पर विद्युत का दो तरह से प्रभाव पड़ा है—प्रथम तो यह शरीर की पाचन-क्रिया को उत्तेजित करके शरीर के तमाम मांस-तन्तुओं के बनने में सहायता पहुँचाती है और इस प्रकार शरीर और जीवन-क्रियाओं को अधिक शक्तिशाली बनाती हैं। दूसरे यह शरीर के विजातीय द्रव्यों को बाहर फेंकने वाले अंगों को शक्तिवान बनाकर उन्हें विजातीय द्रव्यों को मल, मूत्र, पसीना इत्यादि के रूप में बाहर निकालने के योग्य बना देती है।

शरीर के ऐसे बहुत ही कम रोग हैं जो विद्युतधारा से प्रभावित न होते हों। जब विद्युतधारा का प्रयोग शरीर पर किया जाता है तब वह तन्तु को उत्तेजित करती

है, रक्तसंचालन को नवीन शक्ति प्रदान करती है और रोगी अंगों को क्रियाशील बनाती है। वह शरीर की तमाम क्रियात्मक शक्तियों को अधिक शक्तिमय बनाती है और शरीर को रोग के कीटाणुओं से लड़ने की शक्ति देती है।

लेखक ने लम्बे अनुभव से जाना है कि सब प्रकार के नए रोग या पुराने रोग के पीड़ित रोगियों को उनके दुखों से छुटकारा दिलाने में विद्युत-चिकित्सा बहुत अधिक लाभप्रद है और उसे अभी तक के अपने अनुभव में अन्य प्राकृतिक ढंगों के साथ इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा इससे अधिक सफल ढंग दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

यों तो विद्युत-चिकित्सा के ढंगों पर एक बड़ी सी पुस्तक लिखी जा सकती है किन्तु यहाँ पर समय और स्थान के अभाव के कारण हम बहुत ही संक्षेप में कुछ खास खास ढंगों को ही लिखेंगे।

गालवैनिक धारा

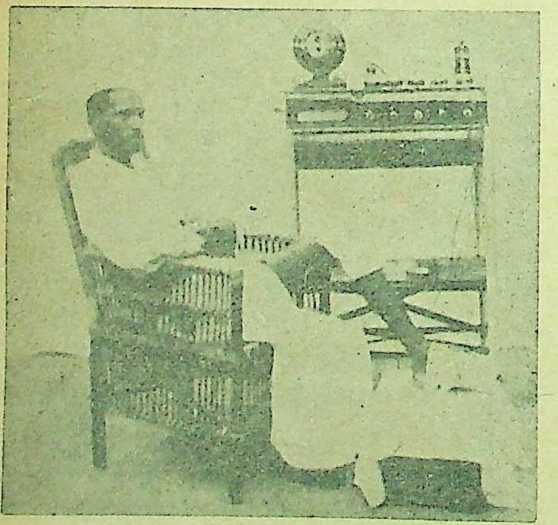

गालवैनिक-धारा ली जा रही है

गालवैनिक एक सदैव प्रवाहित विद्युत धारा है जिसमें वोल्टेज नीची यानी ४० से ८० या ९० तक और एम्परेज साधारण सी रहती है। यह रोगों से छुटकारा पाने का सफल उपाय है। इसमें दो सिरे (Poles) होते हैं—धनबोधक और ऋणबोधक। दोनों ही के भिन्न भिन्न गुण होते हैं। धनबोधक के विशेष गुण यह हैं कि उसका प्रभाव तेजाब सा या अम्लमय होता है। किसी अंग से खून बहने को रोकता है। यह अपने प्रभाव में शान्तिदायक है। ऋण बोधक सिरा बिलकुल विपरीत होता है। इस का प्रभाव क्षारमय होता है। इसका प्रयोग रक्तसंचालन बढ़ाने के लिए करते हैं। इसी कारण इसे ऐसे स्थानों पर लगाया जाता है जहाँ रक्त-प्रवाह कम होता है क्योंकि इसका प्रभाव उत्तेजक होता है।

गालवैनिकधारा का प्रयोग सम्पूर्ण शरीर पर निस्सन्देह अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ है विशेष कर स्त्रियों के हिस्टीरिया के दौरों में, स्नायुजाल के रोगों में, नींद न आने में, अजीर्ण में, पाण्डुरोग में और हड्डियों के टेढ़े पड़ जाने में। जब यह धारा स्थानीय ढंग से प्रयोग में लाई जाती है तब यह धारा जिगर या यकृत को उत्तेजना देती है, अँतड़ियों के संचालन को बढ़ाती है और इस प्रकार पुरानी कोष्ठबद्धता का अन्त करती है तथा बड़ी आँतों के और भी रोगों में बहुत लाभप्रद पाई गई है। जब यह नेचरल बाथ या फील्ड रबिंग सिट्जबाथ के साथ दी जाती है तब नपुंसकता की अचूक चिकित्सा सिद्ध होती है। जब इसका प्रयोग मेरुदण्ड पर करते हैं (ऋणबोधक नितम्बों के नीचे रख कर धनबोधक मेरु पर फिराते हैं) तो यह तमाम तन्तुओं की जलन वगैरह से छुटकारा दिलाती है और पागलपन में भी लाभदायक पाई गई है। धनबोधक सिरे से इस धारा का प्रयोग सभी प्रकार के दर्दों में उपयोगी है। इन दर्दों में पुरानी शूल-पीड़ा, गठिया भी शामिल है। इनमें धारा के प्रयोग से पहले गरम सेंक दे लेना चाहिए। फालिज या लकवे की शिकायतों में जमे हुए खून को घोलने के लिए इसका प्रयोग अन्य जलप्रयोगों के साथ अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ है। पुराने जुकाम से पैदा हुए बहरेपन के लिए भी यह लाभकारी है। इसके लिए विशेष प्रकार के

एलेक्ट्रोड काम में लाए जाते हैं। धनबोधक सिरा गर्दन की हड्डियों पर रखकर ऋणबोधक कानों में लगा देते हैं।

यह धारा जलाने और पारमाणिक चिकित्सा के ढंग पर भी प्रयोग में लाई जाती है। नमक के पारमाणु जकड़े हुए जोड़ों को खोलने की शर्तिया चिकित्सा है। यह ढंग तब भी सफल होता है जब और सभी प्रकार की प्रणालियाँ हार खा जाती हैं। एक प्रतिशत नमक इस पानी के घोल में डाला जाता है और ऋणबोधक सिरा रोगी अंग पर रक्खा जाता है।

डा० केप्रियट की राय है कि मेरु पर १० से १५ मिनट तक का प्रयोग मांसपेशियों की क्रियात्मक शक्ति पर काफी प्रभाव डालता है।

फैरेडिक

फैरेडिकधारा मांसपेशियों के संकोचन के लिए प्रयोग की जाती है जिससे कि फालिज या लकवे लगे हुए अंग या कमजोर भागों की मांसपेशियाँ शक्तिशाली हो जाती हैं। इसके साथ ही एलेक्ट्रोड होते हैं, एक घूम जाने वाला बेलन और दूसरी चौड़ी पट्टी। पट्टी को हम मांसपेशी के आदि भाग पर या मेरु के उस भाग पर रखते हैं जो रोगी अंग पर प्रभाव रखता है और बेलन को रोगी अंग पर घुमाते हैं।

डा० आर सोनबल का विचार है कि फैरेडिक का सम्पूर्ण शरीर पर प्रयोग गठिया, हड्डियों के टेढ़े हो जाने, पाण्डुरोग, मोटापा वगैरह में अधिक लाभदायक है। यह धारा बहुमूत्र रोग में भी प्रभावकर साबित हुई है।

फैरेडिक का प्रयोग जल प्रयोगों के पुष्टिकारक प्रभाव को बढ़ा देता है। यह ठंडे-स्नानों के बाद दी जानी चाहिए। स्थानीय सेक या भाप-स्नान के बाद फैरेडिक की हल्की धाराओं का प्रयोग बहुत ही शान्तिदायक होता है और तमाम तरह के रोगों से छुटकारा दिलवाता है।

सीनोसाइडल बाथ

इस स्नान के लिए जैसा कि चित्र में दिया है रोगी को आदमकद टब में साधारणतः ९८° तापमान के जल

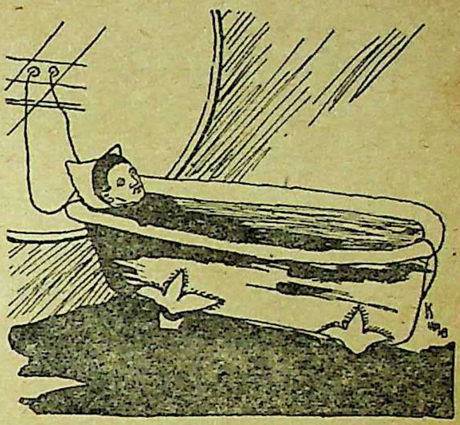

सीनोसाइडल बाथ

में लिटा देते हैं। फिर दो चौड़ी पट्टी वाले इलेक्ट्रोड (एक सिर के पास तकिये के नीचे और दूसरा पैरों के पास दूसरे सिरे के तले पर) लगा कर सिनोसाइडल धारा चालू कर देते हैं। यह स्नान मांसपेशियों का संचालन बढ़ा देता है।

डा० बिलफ्रेड हैरिस, एम० डी०, एफ० आर० सी० पी० के शब्दों में यह स्नान, उन लकवे के रोगियों के लिए जो लड़खड़ाने लगते हैं (चाहे उनका लकवे का प्रभाव आधे शरीर पर या केवल टाँगों पर ही क्यों न पड़ा हो) बहुत लाभप्रद पाया गया है। यह नसों की सूजन और मांसपेशियों की काम न कर सकने वाली अवस्थाओं में भी लाभप्रद पाया गया है।

अर्धांग के लकवे की चिकित्सा का आरम्भ हमको हाथ और पैर के स्नान से करना होता है। पुराने लकवे की चिकित्सा, रोगी को पूरे विश्वास से कम से कम ६ से १० सप्ताह तक लग कर करनी चाहिए तब कहीं सुन्दर प्रभाव दिखाई दे सकता है। इस प्रकार के रोग के ठीक होने में समय कुछ अधिक लगता है किन्तु यह भी पूरे तौर से समझ लिया जाना चाहिए कि विद्युत-चिकित्सा

से शीघ्र प्रभावमय कोई दूसरी सफल चिकित्सा इस रोग के लिए नहीं है ।

स्नान का समय १० से १५ मिनट तक होता है। यह प्रति सप्ताह दो या तीन बार दिया जा सकता है ।

डा० जे० एच० केलोग एम० डी० जिनका नाम प्राकृतिक चिकित्सा के संसार में सुप्रसिद्ध है, इसको नींद लाने वाले बहुत प्रभावशाली ढंग के तौर पर प्रयोग में लाते हैं। उनका कथन है कि मैंने इसे लगभग १५ साल से अत्यन्त लाभकारी नतीजों के साथ केवल निद्रानाश में ही नहीं किन्तु अफीम, कोकीन इत्यादि नशीले पदार्थों के त्याग के बाद की बुरी हालतों के सुधार के लिए भी प्रयोग किया है।

सिनोसाइडल धारा का सीधा सा प्रयोग अँतड़ियों की दीवालों को शक्तिवान बनाने और गर्भाशय के तन्तुओं को पुष्ट करने के लिए भी किया जाता है ।

फैरेडिक बाथ

इसी प्रकार फैरेडिक धारा से स्नान दिया जाता है। उसे फैरेडिक बाथ कहते हैं। यह स्नान एक दिन छोड़ कर दूसरे दिन देना चाहिए। समय १० मिनट से १५ मिनट तक ही रखना अधिक ठीक होता है। इस प्रकार के कम से कम १२ स्नानों के बाद विशेष लाभ दिखाई देता है ।

हड्डियों के टेढ़े हो जाने में और उन कमजोर बच्चों के लिए जिनको भोजन उचित ढंग से नहीं पचता, जिनका वजन बहुत ही कम होता है, तथा कद भी बहुत छोटा होता है यह स्नान बहुत लाभप्रद पाया गया है। इसका प्रभाव उत्तेजक और पुष्टिकारक होता है, फालिज या लकवे में इसका प्रयोग किया जा सकता है। लेखक ने इसको शक्तिहीन रक्तसंचालन के रोगियों के लिए लाभप्रद पाया है। यह स्नान ज्ञान-तन्तुओं के लिए भी पुष्टिकारक पाया गया है। जैसा कि डा० एच० लुइस जोन्स, एम० ए०, एल०-एल० डी० कहते हैं इसका हमारे शरीर पर दो प्रकार से प्रभाव पड़ता है—प्रथम तो यह कि पाचनक्रिया को उत्तेजित करता है जिससे नए स्नायुओं का निर्माण अधिक सुन्दर ढंग पर होता है और द्वितीय यह कि यह गन्दे माद्दे को शरीर से बाहर निकालने की क्रिया को भी उत्तेजन देता है ।

हाई फ़्रीक्वेन्सी (High frequency)

यह बहुत ही तीव्रता से झूलती हुई-सी ऊँची वोल्टेज और नीची एम्परेज की एक धारा है ।

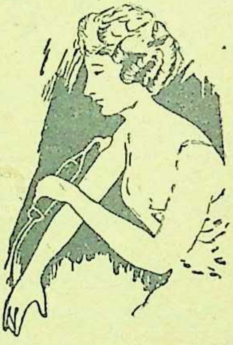

हाई फ़्रीक्वेन्सी धारा के प्रयोग करने की रीति

शरीर पर इसका प्रभाव रक्तसंचालन को उत्तेजित कर देना है जिससे कि पाचनक्रिया भी अधिक शक्तिशील होकर शरीर से विजातीय द्रव्य को बाहर निकाल कर तमाम अंगों की क्रियात्मक शक्ति को अधिक शक्तिमय बना देती है।

नसों की सूजन, मस्से, मुहासे, फुन्सियों, रक्तप्रवाहिनी धाराओं की सूजन, शूलपीड़ा, गर्भाशय की सूजन, अर्धांग या निम्नअंग का लकवा, नपुंसकता, जिगर या तिल्ली के बढ़ जाने आदि रोग में यह बहुत लाभप्रद साबित हुई है ।

इसकी मशीन में खास ढंग के क्यूरेटर लगाने से हम ओजोन पैदा कर लेते हैं। ओजोन-चिकित्सा दमा, जुकाम, खाँसी, सूखी खाँसी, निमोनिया और गले की गिल्टियों की सूजन में बहुत प्रभावशाली साबित हुई है ।

विद्युत-प्रकाश-स्नान

भारत सरीखे देश में सभी को इस बात का पूरा परिचय है कि स्वास्थ्य के लिए सूर्य-रश्मि-स्नान कितना लाभप्रद है। किन्तु अनेक देशों में जहाँ जलवायु इत्यादि तथा अन्य कारणों से इस प्रकार के स्नान संभव नहीं होते वहाँ इस प्रकार के स्नान कृत्रिम प्रकाश यानी विद्युत-प्रकाश में लिये जाते हैं। इसमें भी बहुत कुछ सूर्य-प्रकाश के से गुण रहते हैं।

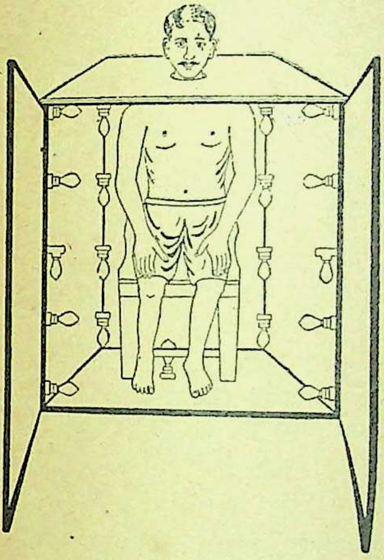

विद्युत-प्रकाश-स्नान की रीति

इस स्नान के लिए विशेष प्रकार के लकड़ी के बने बड़े बक्स में बहुत ज्यादा तेज विद्युत प्रकाश में, रोगी को विवस्त्र करके बिठा देते हैं और सिर पर ठण्डे कपड़े का भीगा तौलिया रख देते हैं।

यह स्नान हमारी त्वचा और स्वेद ग्रन्थियों को उत्तेजित कर देता है। रक्तवाहिनी धाराओं को ढीला कर देता है। इस कारण यह अनेक प्रकार के पुराने रोगों में लाभप्रद पाया गया है।

बैटिलक्रीक सेनेटोरियम, अमेरिका के डा० जे० एच० कैलोग लिखते हैं कि यह स्नान हर प्रकार की गठिया की शिकायतों में, नसों की सूजन, कटिग्रह, घुटने की सूजन व सख्ती इत्यादि रोग में अत्यन्त लाभप्रद पाया गया है। पेट के बढ़ जाने में लालामेह, उपदंश, मैलेरिया ज्वर की कै और बहुमूत्र रोग में भी यह बहुत लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

इन्फ़ारेड (रक्ताधः किरण

इन्फ़ारेड किरणों में शरीर के मांस तन्तुओं में बहुत अन्दर तक पहुँचने की शक्ति होती है। यह किरणें हर प्रकार के दर्दों और सूजन, किसी भाग में खून के जमा हो जाने में अत्यन्त कम समय में लाभ पहुँचाती हैं। घुटनों की सख्ती और सूजन, नसों की सूजन, कटिग्रह, गठिया, शूलपीड़ा, कान का दर्द, पेट का दर्द, फेफड़े की झिल्ली का वरम, स्त्रियों के अण्डकोषों का वरम वगैरह में ये बहुत लाभप्रद पाई गई हैं। यह किरणें त्वचा के तमाम रोगों, फोड़ों वगैरह में बहुत प्रभावमय हैं। यह स्त्रियों के मासिकधर्म की गड़बड़ी में भी बहुत प्रभावशाली पाई गई हैं।

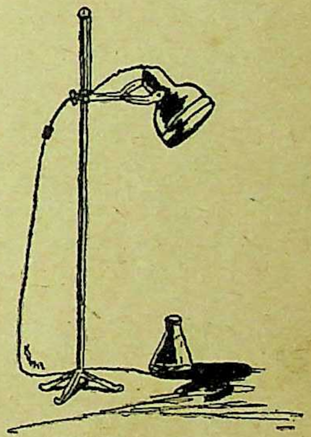

इन्फ़ारेड-किरण-यंत्र

अल्ट्रा वायलेट रेज नील लोहितेतर किर

अल्ट्रा वायलेट किरणें रक्त के रंगीन पदार्थ को बढ़ाती हैं और साथ ही कीटाणुओं और जहरीले पदार्थ को नष्ट करने की क्षमता रखती हैं और इस तरह रक्त को शुद्ध बनाती हैं।

डा० बर्नर मैकफैडन के कथनानुसार यह अपने तमाम तरह के अजीब और गरीब गुणों के साथ ही रक्त में कैलशियम की मात्रा बढ़ा देती हैं। इन्हीं महान चिकित्सक का कथन है कि इसी कारण ये काडलिवर आयल से कहीं अधिक प्रभावकर हैं।

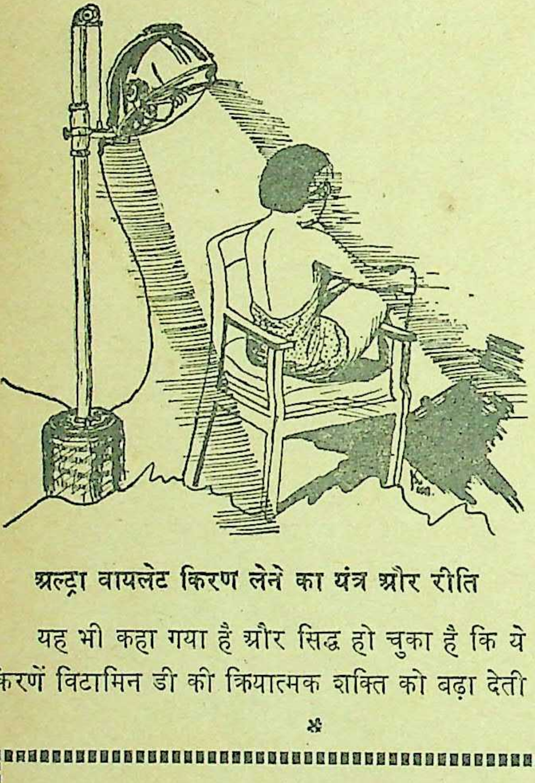

अल्ट्रा वायलेट किरण लेने का यंत्र और रीति

यह भी कहा गया है और सिद्ध हो चुका है कि ये किरणें विटामिन डी की क्रियात्मक शक्ति को बढ़ा देती हैं और विटामिन ए के प्रभाव को अधिक शक्तिशाली बना देती हैं।

विश्व के समस्त सफल प्राकृतिक-चिकित्सक जिनमें बर्नर मैकफैडन, बेनिडिक्ट लस्ट, स्टेनली लीफ, तथा अन्य भी शामिल हैं, इन किरणों का अपने स्वास्थ्य-गृहों में प्रयोग कर रहे हैं और उनका ख्याल है कि ये किरणें श्वेत और अरुण कोष्ठकों, कैलशियम, फासफोरस, फासफेट, आयोडीन और लोहा इत्यादि में समता पैदा कर देती है।

इन किरणों के जहरनाशक प्रभाव के कारण शरीर में इकट्ठा जहर (टाक्सिमिया) इन किरणों के प्रयोग से जिस तेजी से जाता है उसे देखकर आश्चर्य होता है।

कोई भी आश्चर्य नहीं कि इन किरणों का प्रयोग प्रसूति-ज्वर, अँतड़ियों, हड्डियो और ग्रन्थियों की तपेदिक वगैरह की सर्वोत्तम चिकित्सा साबित हो।

पाण्डुरोग में, हड्डियों के टेढ़े हो जाने में, पेट के फोड़ों में, त्वचा तथा साँस लेने के रोगों में इन किरणों की लाभप्रदता आँकी नहीं जा सकती। ये किरणें रक्तचाप को कम करने में, कटिग्रह और गठिया वगैरह में बहुत लाभप्रद पाई गई हैं। फेफड़ों की झिल्ली के वरम और संग्रहणी रोग में यह इन्फ्रारेड किरणों के साथ अचूक सफलता प्राप्त करती हैं।

* *

इङ्गलैण्ड के प्रसिद्ध डाक्टर एच० यूर्गी उड्स ने कहा——

“यह हमें स्वीकार करना होगा कि औषधियाँ अपने काम में सफल नहीं हो सकी हैं।

“यह इसीसे सिद्ध होता है कि जनसाधारण की एक बढ़ती हुई संख्या निराश होकर दूसरी ओर अपनी दृष्टि लगाए है। या तो वह उन चिकित्सकों के पास जाती है जिन्हें हम उपाधिप्राप्त डाक्टर अवैज्ञानिक कह कर घृणा की दृष्टि से देखते हैं या वह अपनी चिकित्सा आप ही करती है।

“अगर हम सत्य और न्याय के प्रेमी हैं तो यह हमें मानना पड़ेगा कि ये अवैज्ञानिक चिकित्सक हम वैज्ञानिक चिकित्सकों की अपेक्षा कठिन रोगों को निर्मूल करने में अधिक कृतकार्य होते हैं।

“हमारी चिकित्सा पद्धति में क्या त्रुटि है? बहुत सी, लेकिन एक भारी त्रुटि यह है कि हम रोगियों की चिकित्सा करने के बदले रोग की चिकित्सा करते हैं।

“अगर रोग के बदले रोगी की चिकित्सा की जाय तो बहुत से रोग आसानी से दूर हो जायँगे और जितनी चीर-फाड़ आजकल की जाती है उसकी आधी की भी आवश्यकता न होगी।”

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

एक अध्ययन

श्रीयुत विट्ठलदास मोदी

अगर मुझसे कोई पूछे कि बालेश्वर जी ने एक चिकित्सक का मार्ग क्यों ग्रहण किया तो मैं कहूँगा कि यह उनके सिपाहियाने स्वभाव के कारण है। पहले बालेश्वर जी सेवासमिति के कार्यकर्ताओं में थे, पर जब उस संस्था की सिपाही की-सी वर्दी उन्हें अधिक धोखा न दे सकी तो उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। सिपाही का स्वभाव है कुछ करते रहना, लड़ते रहना। यह कार्य इन्हें चिकित्सक के जीवन में व्यापक रूप से दिखाई दिया अतः इन्होंने इसे ही ग्रहण किया। देखता हूँ कि आज भी कुछ नया कर सकने की लगन, गिरते हुए को, हारे हुए को उठा देने की उनकी सच्चे सिपाही की-सी प्रवृत्ति बनी हुई है।

बालेश्वर जी ने चिकित्सामार्ग जो ग्रहण किया उसकी तैयारी भी आप अनजान में ही वर्षों से कर रहे थे। सेवा-समिति की ओर से आप लोगों को योग की शिक्षा दिया करते थे। कसरतों और योग के विशेष अध्ययन के लिए आपको सेवा-समिति ने जुम्मादादा व्यायाम मन्दिर, बड़ौदा और महामना कुवलयानन्द जी के आश्रम लोनावला भेजा। वहीं आप में रोगोपचार करने की इच्छा के बीज पड़े। बड़ौदा में प्रसिद्ध व्यायाम-विद् माणिक राव जी द्वारा आपने अनेक कसरतें सीखीं और मांसपेशियाँ, उनके कार्य, रक्त हड्डियों आदि पर विशेष कसरतों का प्रभाव जाना। वहीं आपका परिचय मालिश की उस पद्धति से हुआ, जिसके प्रयोग द्वारा लकवा, गठिया आदि से कठिन रोग भगाए जा सकते हैं एवं स्वास्थ्य उन्नत किया जा सकता है। कुवलयानन्दजी के आश्रम में आपका यौगिक क्रियाओं की रोग हटाने की शक्ति से परिचय हुआ। उस आश्रम में हर तरह के रोगी चिकित्सा के लिए बड़ी तादाद में आते हैं और उनके रोग केवल यौगिक क्रियाओं द्वारा दूर किए जाते हैं। वहाँ आपने इन क्रियाओं को विधिवत सीखा और उनमें ऐसी दक्षता प्राप्त की कि कुवलयानन्द जी इनसे ही लोगों के आसन शुद्ध करवाते। इसी बीच बालेश्वर जी को एक दूसरी चिन्ता ने पकड़ लिया। वे देखते कि दमे के तथा और भी अनेक रोगी महीनों से क्रियाएँ कर रहे हैं और इन्हें विशेष लाभ नहीं हुआ है। वे सोचने लगे क्या इनके वर्षों और महीनों में स्वस्थ होने का रास्ता महीनों और सप्ताहों का नहीं बनाया जा सकता? इसी सहज जिज्ञासा ने आपको प्राकृतिक-चिकित्सा का अध्ययन करने की ओर प्रवृत्त किया। प्रयाग आकर आप अनेक रोगियों पर यौगिक क्रियाओं एवं भोजन-सुधार के असर का अनुभव करने लगे। इनके किए गए अनुभवों से प्रभावित होकर दूर दूर से लोग इनके पास आने लगे और इन्हें बुलाने लगे। उन दिनों जिनकी चिकित्सा चल रही थी उनमें आपके एक कलकत्ता-निवासी मित्र भी थे। उन्हें चिकित्सा करते रोग का उभाड़ हुआ और इन्हें बुलाया। सेवा-समिति से इसके लिए बालेश्वर जी ने छुट्टी चाही पर मिली नहीं। चिकित्सक की कर्त्तव्य-परायणता ने इन्हें कलकत्ते जाने को मजबूर किया और ये इस्तीफा देकर ही वहाँ जा सके। इस मजबूरी का अभिशाप इनके लिए बरदान बन गया। सेवा-समिति के शिथिल कार्य में इनकी तबियत लगती न थी। रिपोर्टों से अधिक इन्हें काम पसन्द था, जिसकी अधिक गुन्जायश वहाँ न थी। इसी कारण वे वहाँ से इस्तीफा

दे देना चाहते थे पर संकोचवश दे न पाते थे। जो बालेश्वर जी सोचने पर भी न कर पा रहे थे, परिस्थितियों ने इनसे करा लिया।

प्राकृतिक-चिकित्सा का आपका अध्ययन तो चल ही रहा था। कलकत्ते से लौटने पर आपने 'प्राकृतिक-स्वास्थ्य-गृह' खोल दिया। स्वास्थ्य-गृह खोलते समय आपकी तीन योजनाएँ थीं। प्राकृतिक-चिकित्सा विषयक एक पत्र निकालना, प्राकृतिक-चिकित्सा का एक कालेज बनाना और भारत के प्राकृतिक-चिकित्सकों की एक सभा कायम करना, जहाँ प्राकृतिक-चिकित्सा की उन्नति के लिए सोचा जा सके और विचारों का आदान-प्रदान किया जा सके। कमेटी आपने कायम की पर वह विशेष चल न सकी। लोगों ने उत्साह नहीं दिखाया; पर उससे आपको एक लाभ हुआ वह यह कि आप स्वर्गीय डा० लक्ष्मीनारायण जी चौधरी के परिचय में आए। चौधरी साहब आपके कार्यों में खूब रस लेते और आप पर बड़ा स्नेह रखते थे। कालेज भी खोला गया, वह शिक्षकों के अभाव से विशेष चल न सका। पर बालेश्वर जी की प्राकृतिक-चिकित्सा को सर्वसुलभ बनाने की प्रवृत्ति अब भी बनी हुई है। कुछ न कुछ छात्र अब भी आपसे पढ़ते ही रहते हैं और स्वास्थ्य-गृह में अनुभव प्राप्त करते रहते हैं। पहली योजना के अनुसार जीवन-सखा प्रकाशित हुआ, जो पाठक, आपके हाथ में है। जो रंग-रूप इसे आज मिला है उसके पीछे जिन कठिनाइयों की कहानी छिपी है उसका अनुमान कोई भी प्रकाशक या पत्रकार लगा सकता है।

× × ×

भारत में प्राकृतिक-चिकित्सा का परिचय लोगों को लूईकूने की पद्धति से हुआ, जो जल-चिकित्सा के नाम से मशहूर है। इस पद्धति के कट्टर मानने वाले कूने के बताए नहान, धूप और भाप के अलावा दूसरी विधियों को स्वीकार नहीं करते। बालेश्वर जी ने पहले यही विधि जानी। इसे आपने यौगिक क्रियाओं के साथ तो मिलाया ही, साथ साथ मिट्टी-उपचार, भोजनोपचार आदि को भी रखा। प्राकृतिक-चिकित्सा में उभाड़ के वक्त बड़ी कठिनाई होती है। उभाड़ थोड़े ही समय के लिए आते हैं सही पर उतने ही समय में रोगी घबरा जाता है उन्हें तुरन्त किसी प्रकार आराम मिलना चाहिए। कूने की पद्धति द्वारा जल्दी जल्दी नहान आदि देने से भी लाभ होता है पर उतने से रोगी को सन्तोष नहीं होता। यह कठिनाई बालेश्वर जी ने डा० एस०एस० नेहरू के एलेक्ट्रोकल्चर, डाक्टर बेबिट की सूर्य-रश्मि-चिकित्सा और मानसोपचार द्वारा हल की। पेट में दर्द चल रहा है, रोगी तड़फड़ा रहा है, एनिमा दिया गया, मिट्टी की पट्टी भी लगी, लाभ नहीं होता तो आपने कुछ पास[1] देकर रोगी को सुला देने की क्रिया द्वारा कई बार लोगों को आश्चर्य में डाल दिया है। इसी प्रकार बिजली और सूर्य-रश्मि-चिकित्सा के प्रयोग भी जादू का सा असर करते देखे गए हैं। प्राकृतिक-चिकित्सा में आपने कट्टरपन्थी कभी न आने दी। आप हर समय उन सब विधियों को ग्रहण करने को तैयार रहते हैं, जो रोग को दबाती नहीं। यदि आपके उपचार को अनौषधोपचार कहा जाय तो गलती न होगी, पर आपने कभी किसी चीज को जैसा पढ़ा वैसा ही न माना। उस पर अपने प्रयोग किए और लाभ के साथ रद्दोबदल किया।

प्राकृतिक-चिकित्सकों में दो ही चिकित्सक ऐसे हैं जिन्होंने दूध-चिकित्सा का प्रयोग हजारों रोगियों पर किया है। एक डा० पोर्टर, दूसरे बर्नर मैकफेडन। दोनों की पद्धतियों में काफी अन्तर है। न उन्हें हमारे आयुर्वेद द्वारा समर्थित मट्ठा बनाने की विधि ही का पता है और न इसके विशेष गुणों का। बालेश्वर जी ने इन दोनों की पद्धतियों के सामंजस्य द्वारा मट्ठे के

---

[1] मानसोपचार सम्बन्धी एक क्रिया

प्रयोग से दूध-चिकित्सा की जो पद्धति निकाली है उसकी सहायता से संग्रहणी, ब्लडप्रेशर, गठिया, दमा, नपुंसकता, बहुमूत्र, खून की कमी आदि रोगों को दूर करने में अच्छी सफलता प्राप्त की है। यहाँ तक कि यक्ष्मा के रोगी भी इससे आराम हुए हैं।

अब तक एलोपैथ यक्ष्मा के रोगियों को कैलशियम के इन्जेक्शन देते रहे हैं पर अब उन्हें पता लग गया है कि इस प्रकार शरीर में पहुँचाया गया कैलशियम लाभ के बदले हानि पहुँचाता है। पोस्टमार्टम में इस प्रकार पहुँचाया गया कैलशियम हड्डियों पर चिपका हुआ मिला है जो तेज चाकू से खुरचने पर ही छूटता है। बालेश्वर जी भी सोच रहे थे कि यक्ष्मा के रोगी को कैलशियम चाहिए और दूध द्वारा रोगी को कैलशियम देने की विधि भी आपके मन में निश्चित सी हो रही थी पर अधिक दूध का उपयोग कैसे किया जाय यह निश्चित न कर पाए थे। वह विधि दूध-चिकित्सा ने निश्चित कर दी और उसकी आपने पूरी आजमाइश भी की। बाहर से आए रोगी तो पूरा अवसर नहीं देते पर आपकी बहन को जिसके यक्ष्मा की चिकित्सा उनके ससुराल वाले डाक्टरों एवं वैद्यों से कराते कराते थक गए तो आपके यहाँ पहुँचा गए। आपको चिकित्सा करनी ही थी और आपकी बहन को करानी। बालेश्वर जी ने उन्हें एक एक करके तीन बार दूध का कल्प कराया। समय तो प्रायः नौ मास का लगा पर वे भली चंगी हो गई और आशा है कि वे स्वस्थ रहेंगी।

यह खुली बात है कि प्राकृतिक-चिकित्सा विधि से दमा, खुजली, गठिया आदि रोग इस चिकित्सा का साधारण जानकार भी अच्छा कर लेता है पर संग्रहणी के रोग में कठिनाई यह होती है कि संग्रहणी के कमजोर रोगी का वजन जब और घटता है तो वह बहुत घबराता है। दूध-चिकित्सा से यह कठिनाई भी दूर हो गई। रोग जाने के साथ साथ यह पद्धति वजन भी खूब बढ़ाती है।

डा० रोलियर ने हड्डी के यक्ष्मा के लिए धूप का प्रयोग बताया है। वे कहते हैं कि इसके लिए समुद्र के किनारे की और पहाड़ की ऊँचाई पर मिलने वाली धूप ही काम की होती है। ऐसी धूप सवेरे और शामकी ही मिलनी चाहिए। पर इस रोग के रोगी तो सभी जगह होते हैं और बहुत ऐसे भी होते हैं कि न तो वे पहाड़ पर ही जा सकते हैं और न समुद्र के किनारे। ऐसे रोगियों के लिए क्या किया जाय? इस समस्या का हल बालेश्वर जी सोचने में लगे थे कि एक ऐसी रोगिणी आपके पास आई जिसकी रीढ़ की, पैर की और हाथ की हड्डियों में भी गाँठें पड़ गई थीं। साफ यक्ष्मा का रोगी। डाक्टर भी यही कह चुके थे और खपच्चियों में शरीर को बाँधकर तखत पर सुला देने की राय में थे। एलोपैथी में यही एक उपचार है। पूछा तो पता चला कि वह ऐसे घर में रहती है जहाँ दोपहर को ही धूप आती है। खैर उसे जो धूप मिल सके उसे लेने की सलाह दी गई और दूध का प्रयोग बताया गया। पूर्ण विश्राम की सलाह दी गई। आशा निराशा में झूलते रोगिणी ने दो महीने काटे कि लाभ स्पष्ट दिखाई दिया। फिर तो हिम्मत हुई और उस रोगिणी ने धूप और दूध के प्रयोग द्वारा इस एक वर्ष में स्वास्थ्य लाभ कर लिया है। डा० रोलियर ने धूप पर ही अधिक जोर दिया है। भोजन पर उनका ध्यान तो गया है, वे पौष्टिक भोजन की सलाह भी देते हैं पर दूध का ही एक मात्र भोजन नहीं बताते। धूप और दूध के प्रयोग द्वारा यह भयंकर रोग अब बिना समुद्र के किनारे या पहाड़ पर जाए भी अच्छा कर सकना सम्भव हो गया है ऐसा प्रतीत होता है।

कोढ़ के रोगियों को देखकर किसके मन में उनके प्रति करुणा उत्पन्न नहीं होती। उनकी सहायता के लिए बहुत बार संसार में अनेक जगह अनेक प्रयत्न हुए हैं। ईसाई मिशनरियों ने तो उनके लिए टापू भी बसाए, जहाँ केवल कोढ़ियों को रखकर उनकी सेवा की जा सके। इन संस्थाओं ने दवा के नाम पर एलोपैथिक दवा ही दी है पर अभी तक इन दवाओं से विशेष लाभ नहीं होता था लेकिन अभी जो चाल मोंगरा का इन्जेक्शन निकला है उससे लाभ होता है अवश्य पर बहुत बार स्थाई नहीं;

क्योंकि न चिकित्सा-काल में न उसके बाद ही भोजन पर विशेष ध्यान दिया जाता है। आयुर्वेद में रोग के अनुसार भोजन की अच्छी व्यवस्था है। कई प्रकार के कल्प का वर्णन है। चने का कल्प—केवल चने का प्रयोग—खून की खराबियों के लिए बड़ा पुरअसर बताया गया है। बालेश्वर जी ने चने के कल्प और चाल मोंगरा—इन्जेक्शन नहीं—का प्रयोग कराकर कई प्रकार के कोढ़ के रोगियों को अच्छा किया है। इस रोग के जाने में समय तो बहुत लगता है पर जाता जरूर है।

इसी प्रकार के बालेश्वर जी के अपने अन्य कई प्रयोग चल रहे हैं जिन पर निश्चित परिणाम निकलने पर ही प्रकाश डाला जा सकता है।

× × ×

प्राकृतिक-चिकित्सक के साथ साथ बालेश्वर जी प्रकृति-वादी भी हैं। अपने स्वास्थ्य को समुन्नत रखते हैं। आपका विश्वास है कि इस मशीन-युग में मनुष्य की मांसपेशियाँ नहीं, स्नायुजाल निर्विकार एवं सशक्त होना चाहिए, जिसके लिए यौगिक क्रियाओं को आप सर्वोत्तम मानते हैं। आवरण के नाम पर आप एक खादी की धोती और चादर का प्रयोग करते हैं और इसीसे आपका जाड़ा गरमी बरसात कटता रहता है।

आप ट्रेन में अपनी ट्रंक छोड़ दे सकते हैं, किसीको कोई वस्तु देकर वापस लेना भूल जायँगे; आपकी व्यवस्था दूसरे ही करेंगे पर इन सबके बीच एक बात है—वह यह कि रोगी आपके दिमाग में बने रहते हैं। उनकी हिस्ट्री की जो छोटी छोटी बातें कोई रजिस्टर देख कर बताएगा आपको याद रहती हैं; जब भी कुछ पढ़ते हैं, जिनकी चिकित्सा चल रही है उन रोगियों को सामने रख कर। हर समय उन्हें अपने रोगियों का ही ध्यान रहता है और उन्हीं पर विचार चलता रहता है।

कई लोग ऐसे होते हैं कि आप उनसे महीनों मिलिए आपसे उनसे कोई घनिष्टता न हो पाएगी। वे अगर एक छोर पर हैं तो बालेश्वर जी दूसरे छोर पर। एक बार के मिलने में ही आप इनकी सहानुभूति प्राप्त कर सकते हैं और दो तीन बार के मिलने में काफी घनिष्टता हो सकती है। यही कारण है कि स्वास्थ्य-गृह के रोगी सप्ताह भर से भी कम के समय में अपने को अस्पताल का रोगी न समझ कर एक बड़े कुटुम्ब का सदस्य समझने लगते हैं। और यह उनका समझना विचार ही तक सीमित नहीं रहता। बहुत बार ऐसा होता है कि रोगी दो ढाई महीने के खर्च का इन्तजाम करके चलते हैं और आवश्यकता पड़ने पर इतने ही समय और रह जाते हैं। उन्हें इसके लिए बालेश्वर जी को बहुत नहीं कहना पड़ता। बालेश्वर जी स्वजन की तरह स्वयं सब कुछ देखते रहते हैं और अक्सर ऐसा होता है कि रोगी के बिना कहे ही स्थिति समझ कर स्वयं यह सुविधा प्रदान कर देते हैं। कई बार तो ऐसा भी हुआ है कि इन्होंने रोगियों के दूध-कल्प का सारा खर्च स्वयं बर्दाश्त किया है। पर इससे कोई यह न समझे कि वे लक्ष्मी के कृपा-पात्र हैं। नहीं, उनका स्वभाव ही कुछ ऐसा है। उनके पास कितने ही आवश्यक काम के लिए पैसे रखे हों और कोई उनसे माँग ले तो वे अपना हर्ज करके भी दे देंगे। इन्कार करना वे जानते ही नहीं।

बालेश्वर जी कभी किसीको अपनी सहायता करने को नहीं कहते और न अपने काम को प्रकाश में ही लाने की कोशिश करते हैं, फिर भी जो काम उन्होंने किया है उस पर व्यक्ति क्या किसी भी संस्था को अभिमान हो सकता है।

आपके प्रोत्साहन ने प्राकृतिक चिकित्सा के लेखक तैयार किए, आपके कई शिष्य इस समय स्वतन्त्र रूप से चिकित्सा-कार्य चला रहे हैं और ऐसे परिवारों की तो संख्या बहुत अधिक है जिन्हें आपकी कृपा से दवा से मुक्ति मिल गई है और आवश्यकता पड़ने पर वे अपनी चिकित्सा स्वयं कर लेते हैं।

* * *

मनुष्य क्या है ?

प्रो० एस० गोस्वामी, एन० डी०, एन० एस-सी०, डी० एन०; पी-एच० डी०

मनुष्य अपने ही दिमाग की उपज मशीन आदि को देखकर हैरान होता रहता है पर उसे अपने शरीर की जटिलतम मशीन की ओर ध्यान देने का समय ही नहीं मिलता। यदि वह इससे परिचित हो ले तो वह इसे अधिक सरलता पूर्वक एवं दीर्घ काल तक चला सकने में अधिक सफल होगा। प्रोफेसर साहब का यह लेख पाठकों के मन में शरीर-विज्ञान के पूरी तौर से जानने की जिज्ञासा पैदा करने के साथ साथ बहुत सा उपयोगी ज्ञान प्रदान करेगा। —सं०

लेखक

मनुष्य ने अपने हाथ, मस्तिष्क और हृदय के द्वारा बहुत से आश्चर्यजनक कार्य किए हैं। लेकिन वह अकसर इस बात को भूल जाया करता है कि वह स्वयं प्रकृति की सब से अधिक आश्चर्यजनक रचना है। प्रकृति द्वारा निर्मित समस्त शरीरों तथा मानव-निर्मित समस्त यंत्रों से वह स्वयं कहीं अधिक श्रेष्ठ है। संसार की विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के सम्बन्ध में मनुष्य ने विराट ज्ञान प्राप्त किया है लेकिन वह स्वयं अपने विषय में जितना जानता है उसे पर्याप्त नहीं कहा जा सकता। सन् १९३९ में न्यूयार्क में जो विश्व-मेला हुआ था उसमें मनुष्य को अपने स्वयं से परिचय कराया गया था। वहाँ पर बनाई गई 'मनुष्य-परिचयशाला' के द्वारा स्वयं अपना ही अध्ययन करने के लिए मनुष्य को एक दुर्लभ अवसर प्रदान किया गया था। वहाँ पर मैंने काफी समय लगाकर दिखाई गई बातों का अध्ययन किया और उसके उपरान्त मुझे यह यकीन हो गया कि मानव-शरीर तथा उसके विभिन्न अवयवों की कार्य-प्रणाली के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह अध्ययन नितान्त आवश्यक है।

उस हॉल में मुख्य रूप से औषधि और सार्वजनिक स्वास्थ्य-निर्माण-प्रणाली का प्रदर्शन किया गया था और उसमें मनुष्य के निर्माण तथा उसके स्वास्थ्य सम्बन्धी कई एक आश्चर्यजनक चित्र दिखाए गए थे। यह शाला 'अमेरिकन हेल्थ म्यूजियम' के संरक्षण में प्रदर्शन के लिए तैयार की गई थी। औषधि-प्रणाली तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य-निर्माण सम्बन्धी जिन उपयोगी बातों का वहाँ पर प्रदर्शन किया गया था वह एक हजरा व्यक्तियों के प्रयत्न का परिणाम था। और उसमें १० लाख डालर (तीस लाख रुपए से भी अधिक) खर्च हुआ था।

उस हॉल के प्रदर्शन का अभिप्राय क्या था इसे वहाँ पर सेण्ट आगस्टाइन द्वारा लिखित इन शब्दों में व्यक्त किया गया था—

> "Man wonders over the restless sea,
> The flowing water,
> The Sight of the Sky,
> And forgets that of all wonders
> Man himself is the most wonderful."

(अर्थात् अशान्त-सागर, प्रवाहित जल एवं आसमान को

देखकर मनुष्य आश्चर्य प्रकट करता है, लेकिन वह यह भूल जाता है कि वह स्वयं सबसे अधिक आश्चर्यपूर्ण है।)

उस हॉल के एक छोर पर विराट आकृति के मनुष्य की एक प्रतिमा बनाई गई थी, वह विराट आकृति का मनुष्य खड़ा था, उसकी पृष्ठभूमि में प्रातःकालीन सूर्य, उड़ते हुए बादल, पर्वत और बहती हुई सरिता दिखाए गए थे। वह मनुष्य साँस ले रहा था। उसके हृदय की गति अथवा धड़कन सुनी जा सकती थी। उसे देखने वाले को मनुष्य के हृदय की धड़कन का बोध आसानी के साथ हो सकता था। इस विराट प्रतिमा की बाईं तरफ मनुष्य की साधारण आकृति की एक पारदर्शी मूर्ति बनाई गई थी जिसके अन्दर मनुष्य-शरीर के अस्थि-पंजर और समस्त अंगों तथा अवयवों को दिखाया गया था। उसमें इस प्रकार के यन्त्र लगा दिए गए थे जिससे मनुष्य की वह मूर्ति शरीर के मुख्य अंगों की स्थिति तथा उनके कार्य बताती थी। वहाँ के असिस्टेंट डाइरेक्टर मि० एडवर्ड एफ० हिकी ने कृपापूर्वक मुझे उस विराट मनुष्य, पारदर्शी मनुष्य तथा शरीर-विज्ञान सम्बन्धी अन्य प्रदर्शित वस्तुओं का चल-चित्र लेने की अनुमति दी थी।

पारदर्शी मनुष्य के ठीक सामने "हम लोग" प्रदर्शित किए गए थे। वह एक बड़ा-सा घूमता हुआ ग्लोब (पृथ्वी की शकल) था जिसमें संसार की आबादी, जातियाँ आदि बातें दिखाई गई थीं। इसमें दिखाया गया था कि संसार में जितने मनुष्यों की आबादी है उसमें से आधे से अधिक एशिया में, एक चौथाई यूरोप में, आठवाँ भाग अमेरिका में और इससे भी कम अफ़्रीका और आस्ट्रेलिया में रहते हैं।

शाला के पूरब के हिस्से में अमेरिका में मृत्यु-संख्या के ह्रास का प्रदर्शन किया गया था और बताया गया था कि जार्ज वाशिंगटन के समय से लेकर अब तक अमेरिका में लोगों की मृत्यु-संख्या किस गति से कम होती गई है। उसके द्वारा यह पता चलता है कि सन् १८०० के लगभग अमेरिका में लोगों की मृत्यु-संख्या आज की अपेक्षा तिगुनी अधिक थी और इसका मुख्य कारण था हैजा, चेचक, मियादी बुखार, डिपथीरिया और पीला-बुखार। उसमें आगे बताया गया था कि अमेरिका में लोगों की मृत्यु-संख्या क्रमशः जो कम होती जा रही है उसका कारण सार्वजनिक स्वास्थ्य और इलाज की दिशा में किया जाने वाला सुधार है। अमेरिका में हर तेरहवें सेकेण्ड एक बच्चा पैदा होता है और हर इक्कीसवें सेकेण्ड एक मौत होती है।

मनुष्य-परिचयशाला सात कक्षों में विभाजित थी जिनमें मनुष्य की शरीर सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण अवस्थाओं को प्रदर्शित किया गया था जो इस प्रकार थीं—चलना और काम करना; रक्त और वायु का कार्य; खाना और पीना; त्वचा; पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ; जन्म के पूर्व की अवस्था और शरीर की कार्य-प्रणाली। यहाँ पर मैं उन प्रदर्शित बातों में से केवल कुछ महत्त्वपूर्ण बातों का ही उल्लेख करूँगा।

"चलना और काम करना" नामक कक्ष में मानव-शरीर का ढाँचा २४५ हड्डियों के सहित प्रदर्शित था। उसमें एक बोलने वाला अस्थि-पंजर मनुष्य के शरीर की बनावट के सम्बन्ध में दो मिनट तक बातें करता, साथ ही अपने, सिर और जोड़ों को भी घुमाता।

एक दूसरे पुतले द्वारा शरीर की क्रियाशील मांस-पेशियों को प्रदर्शित किया गया था। एक दूसरे पुतले के द्वारा हाथ की मांसपेशियों को दिखाया गया था। वहाँ पर एक ऐसा यंत्र भी था जिसके द्वारा दर्शक अपनी मांसपेशियों की शक्ति को माप सकते थे। इस यंत्र का उपयोग मांसपेशियों की थकावट जानने के लिए किया जाता है।

मांसपेशियों के कितने प्रकार होते हैं, उनका शरीर के अंग विशेष पर क्या प्रभाव पड़ता है आदि बातों को इसी प्रकार विस्तार के साथ समझाया गया था। मांस-पेशियों के सिकुड़ने तथा फैलने तथा स्नायु-शिराओं के द्वारा उनपर मस्तिष्क का नियंत्रण होने के फलस्वरूप हमारी शारीरिक हरकतें होती हैं।

एक दूसरे अस्थि-पंजर के द्वारा रक्त-संचालन-क्रिया का प्रदर्शन किया गया था। दर्शक अपने हृदय की गति

जान सकें इसके लिए भी यंत्र लगे हुए थे।

वहाँ पर अणु-इन्द्रियों (सेल) को काफी बड़े आकार में प्रदर्शित किया गया था। औसत स्वस्थ मनुष्य के शरीर में २५० खर्व लाल सेल और ३०० खर्व सफेद सेल होते हैं। लाल सेल शरीर के समस्त भागों में आक्सिजन पहुँचाते हैं। सफेद आक्रमणकारी कीटाणुओं को नष्ट करके शरीर को संक्रामक रोगों से बचाए रखने में सहायक होते हैं। उस हाल में इलाज के लिए शरीर से रक्त निकालने की क्रिया का भी प्रदर्शन किया गया था।

उस हाल में एक स्थान पर यह समझाया गया था कि फेफड़ों की बनावट किस प्रकार की होती है। विभिन्न क्रियाओं के करने में कितनी वायु की आवश्यकता होती है, आपके फेफड़े की शक्ति क्या होनी चाहिए आदि बातों को समझाने के लिए तालिका बनी थी। दर्शकों के फेफड़े की परीक्षा करने के लिए वहाँ पर यंत्र भी लगे थे।

इसी प्रकार हमारे विभिन्न प्रकार के दैनिक कार्यों में हमारी कितनी शक्ति खर्च होती है इसकी भी एक तालिका दी गई थी। भोजन से हमें शक्ति मिलती है। मनुष्य की भोजन पचाने की शक्ति, उसकी अवस्था, कद, लिंग-भेद और रहन-सहन के मुताबिक स्वाद और घ्राणेन्द्रियों के द्वारा हम अपना भोजन चुनते हैं, आदि दिखाया गया था। किसी खाद्य-पदार्थ की मिठास का बोध जीभ के सिरे से, खट्टेपन का बोध जीभ के किनारों से, नमक का स्वाद जीभ के सिरे और किनारों से तथा कड़वी चीजों का स्वाद जीभ के मूल भाग से अनुभव किया जाता है, यह बड़ी चतुराई से प्रदर्शित किया था।

यह बताया गया था कि आप एक महीने में जितना भोजन करते हैं उसका कुल वजन आपके शरीर के वजन के बराबर होता है। हमारे शरीर में ६० प्रतिशत जल, १८ प्रतिशत प्रोटीन, १६ प्रतिशत चिकनाई, ५ प्रतिशत खनिज पदार्थ, और एक प्रतिशत श्वेतसार रहता है।

उदर की क्रियाओं को चल-चित्रों द्वारा दिखाया गया था। हम जो भोजन करते हैं वह अपनी किस्म के अनुसार उदर में एक घंटे से लेकर पाँच घंटे तक रहता है। पेट खाली रहने पर अगर जल पीया जाय तो वह पाँच मिनट के अन्दर उदर को छोड़ देता है।

एक अस्थि-पंजर के द्वारा स्नायु प्रणाली समझाई गई थी। मस्तिष्क का भी एक बड़ा सा 'माडल' बनाया गया था जिसके द्वारा यह समझाया गया था कि आपके लिखने, बोलने, आदि क्रियाओं का किस प्रकार मस्तिष्क द्वारा संचालन होता है।

एक अन्य माडल के द्वारा यह दिखाया गया था कि रक्तचाप किस प्रकार से जाना जाता है। इस सम्बन्ध में निम्न बात कही गई थी : "रक्तचाप से भयभीत होने का कोई कारण नहीं है। यह सभी को होता है। रक्त के प्रवाह के ही द्वारा हमारे शरीर को आवश्यक जीवन प्राप्त होता रहता है।

"असाधारण रूप से रक्तचाप का बढ़ जाना प्रायः अपने तईं कोई बीमारी नहीं है, बल्कि वह केवल एक चेतावनी के तौर पर है जिससे यह प्रकट होता है कि आपके शरीर के संचालन प्रणाली में सम्भवतः कोई खराबी उत्पन्न हो गई है।"

आपका सामान्य (नार्मल) रक्त-चाप औसत सामान्य के बराबर हो, यह जरूरी नहीं। लेकिन हाँ, आपको एक बात ध्यान में रखनी होगी—वह यह कि आपका सामान्य रक्त-चाप निश्चित रूप से मालूम हो जाना चाहिए और भविष्य में जरूरत पड़ने पर जानकारी के लिए उसका रेकार्ड रक्खा जाना चाहिए।"

वहाँ यह भी बताया गया था कि किस अवस्था के आदमी को कितनी अधिक नींद की जरूरत होती है। एक जगह लिखा था—"गहरी नींद की हालत में शरीर की समूची स्नायु प्रणाली ढीली पड़कर विश्राम करती है जिससे शरीर की सारी संचालन प्रणाली को लाभ पहुँचता है। जितना ही शरीर को ढीला करके आप सोयेंगे उतनी ही गहरी नींद आपको आयेगी।"

स्वास्थ्य और प्राकृतिक चिकित्सा

प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम० ए०

गुप्त जी प्राकृतिक चिकित्सा के अनन्य भक्त हैं, आपकी रट है 'हम सौ वर्ष कैसे जीवें' इसके लिए आप कटिवद्ध भी हैं। नियमित व्यायाम, उचित भोजन के आप जबरदस्त पालक हैं फलतः अधेड़ अवस्था में भी आप युवकों से अधिक तरुण एवं स्फूर्तिवान हैं। मुस्कराते रहना आपका सहज स्वभाव है। स्वास्थ्य और प्राकृतिक चिकित्सा का जो सम्बन्ध आपने बतलाया है वह आपके अनुभवों पर आधारित है।—सं०

इस समय जब कोई बीमार पड़ता है तो वह वैद्य, हकीम, या डाक्टर से चिकित्सा कराता है। कुछ समय से कुछ लोगों का एक और दल तैयार हुआ है जो किसी दवा का प्रयोग न करके केवल मिट्टी, पानी और धूप आदि प्राकृतिक साधनों से सब रोगों को शर्तिया अच्छा करता है। इन्हें प्राकृतिक-चिकित्सक कहते हैं।

पाश्चात्य देशों में प्राकृतिक चिकित्सा या नेचर क्योर की बड़ी धूम है। जर्मनी तो इसका केन्द्र स्थान हो रहा है। इंगलैंड, फ्रांस, अमेरिका और रूस में भी इसका काफी प्रचार है। इन देशों में नेचर क्योर के हजारों अस्पताल खुले हैं जहाँ रोगियों का इलाज विना औषधि के होता है।

लेखक

कोहनी के बाद अडाल्फ जुस्ट ने पानी के साथ साथ मिट्टी के इलाज का अधिक प्रचार किया। उसने दो बगीचे बनवाये, एक स्त्रियों के लिए और दूसरा मर्दों के लिए। इन बागीचों में स्त्री और पुरुष नंगे होकर कुछ समय तक धूप का सेवन करते थे और अच्छे होते थे। वह कहता था कि यदि मनुष्य प्राकृतिक ढंग से रहे तो कोई बुड्ढा हो ही नहीं सकता।

अमेरिका के लिंडलार ने भी प्राकृतिक चिकित्सा का खूब प्रचार किया। केलाग और मैकफेडेन तो इतने मशहूर प्राकृतिक चिकित्सक हैं जिन्हें दुनिया जानती है।

हिन्दुस्तान में प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास मुरादाबाद के श्रोत्रीय कृष्णस्वरूप से शुरू होता है। उन्होंने लूई कूने की पुस्तक 'न्यू साइन्स आफ हीलिंग' का हिन्दी और उर्दू में अनुवाद किया और अपने जिले बिजनौर में नेचर क्योर का एक बड़ा अस्पताल खोला। पुद्दू कोटा के महाशय लक्ष्मण शर्मा भी बड़े जोरों से प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार कर रहे हैं। उनकी लिखी पुस्तक 'प्रैक्टिकल नेचर क्योर' एक बड़ी प्रसिद्ध पुस्तक है। राय बहादुर डाक्टर लक्ष्मी नारायण चौधुरी भूतपूर्व सिविल सरजन एक बड़े सफल प्राकृतिक चिकित्सक थे। हाल ही में उनकी मृत्यु हो गई है जिससे प्राकृतिक चिकित्सा

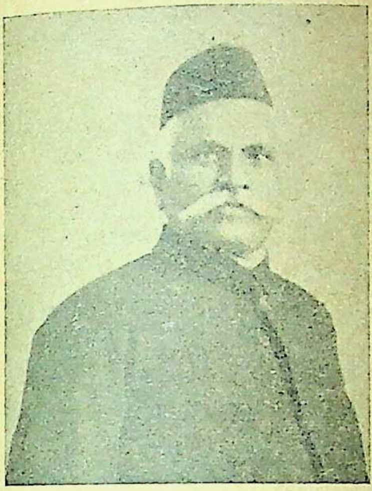

श्रोत्रिय कृष्ण स्वरूप जी

को भारी हानि पहुँची है।

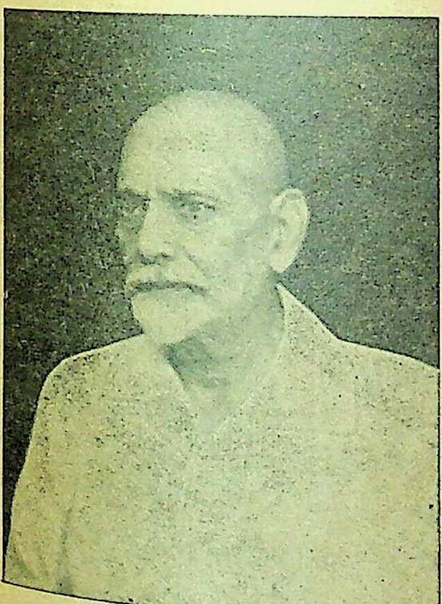

स्व० राय बहादुर लक्ष्मी नारायण चौधुरी

इस समय आल इंडिया हिन्दुस्तान स्काउट एसोसिएशन, प्रयाग के हेड-क्वार्टर कमिश्नर महाशय जानकीशरण वर्मा, बी० ए० और डाक्टर बालेश्वरप्रसाद जी सिंह बड़ी सरगर्मी के साथ प्राकृतिक चिकित्सा का काम कर रहे हैं। डाक्टर बालेश्वरप्रसाद जी ने तो ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद में नेचर क्योर का एक बड़ा अस्पताल खोला है जहाँ बड़ी सफलता के साथ सैकड़ों रोगी हर साल चंगे किए जाते हैं। 'जीवन सखा' भी वे ही प्रकाशित कर रहे हैं, जिसके कारण प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार में काफी सहायता मिल रही है।

× × ×

सन्ध्या करने के समय हम रोज कहते हैं 'पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं' हे ईश्वर हमारी आँखें सौ वर्ष तक काम करें और हम सौ वर्ष तक जीवित रहें। किन्तु क्या हम सौ वर्ष तक जीवित रहते हैं? कुछ तो २५ वर्ष की ही अवस्था में मर जाते हैं और अधिकतर लोग ४० और ५० के बीच मरते हैं।

उपरोक्त मन्त्र से मालूम होता है कि हिन्दुस्तानियों की औसत आयु १०० वर्ष की थी। कभी कभी तो हम बड़े घमंड से कहते हैं कि हमारे पूर्वज हजार हजार वर्ष तक जीवित रहते थे। किन्तु अब हमारी औसत आयु केवल २३ वर्ष रह गई है जब कि पाश्चात्य देशों के लोगों की औसत आयु ५० वर्ष से भी अधिक है। यदि हमारा पतन इसी प्रकार जारी रहा तो भविष्य में हमारी बड़ी दुर्दशा होगी।

अब तो विचारने की बात यह है कि हमारे वर्तमान शारीरिक पतन का कारण क्या है? हमारे पूर्वज शतायु क्यों होते थे और हम अल्पायु ही में क्यों मर जाते हैं। मेरी समझ में इसका केवल एक ही कारण है और वह यह है कि हमारे पूर्वज प्रकृति के साथ रहते थे और उसीके अनुकूल अपना सब काम करते थे किन्तु हम प्रकृति से घृणा करते हैं और उसके प्रतिकूल सब काम करते हैं।

वर्तमान सभ्यता ने हमारे स्वास्थ्य को भारी नुकसान पहुँचाया है। हम सुबह सात बजे सोकर उठते हैं और उठते ही चाय

भारत के एक प्रमुख प्राकृतिक-चिकित्सक श्रीयुत दिनशा के० मेहता

और सिगरेट पीकर तब पाखाने जाते हैं। फिर पाव-रोटी, चाय और मिठाइयों का जलपान करते हैं। दिन भर में हम न मालूम कितनी बार खाते हैं। हमारे भोजन में अचार, चटनी, पकवान, पूड़ी और कचौड़ियों की भरमार रहती है। २४ घंटे में दर्जनों सिगरेट और १०, १२ प्याले चाय पी डालते हैं। फल और तरकारियों के खाने का शौक हमें है ही नहीं।

नतीजा यह होता है कि हम हमेशा बीमार रहते हैं। कहीं जुकाम है तो कहीं दाँतों में दर्द है। कहीं सर में पीड़ा है तो कहीं बलतोर हो गया है। हम जानते हैं कि सब बीमारियाँ पेट से पैदा होती हैं, लेकिन उसे हम आराम कभी नहीं देते। स्कूल, दफ्तर, कचहरियाँ सब इतवार को बन्द रहते हैं लेकिन छुट्टी के दिन गरिष्ट भोजनों से पेट को हम और भी ठूँस ठूँस कर भरते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा में रोग का एक ही कारण है और एक ही इलाज है। शरीर के अन्दर विजातीय द्रव्य के इकट्ठे होने का नाम रोग है। प्राकृतिक साधनों से विजातीय द्रव्य को निकाल दीजिए, आपकी बीमारी दूर हो जायगी। यदि शुरू से पेट की देखभाल कीजिए और अपना जीवन हर तरह से कुदरती बनाइए तो आप कभी बीमार पड़ेंगे ही नहीं।

हमेशा तन्दुरुस्त रहने के लिए मैं दो नुसखे बतलाता हूँ।

(१) सुबह चार बजे उठिए और शौच से निवृत्त होकर स्नान कीजिए और फिर ४, ५ मील खुली हवा में टहलिए। लौट कर पानी में एक नीबू निचोड़ कर उसीका जलपान कीजिए। ९ बजे स्कूल या आफिस जाने के पहले मोटे आटे की रोटी, छिलकेदार दाल, भात और तरकारी खाइए। थोड़ा सा मक्खन या घी और थोड़ी कच्ची तरकारी भोजन के साथ अवश्य रखिए। ४ बजे थोड़ा सा फल खाकर पाव डेढ़ पाव दूध पीजिए। करीब ७ बजे रात रोटी और तरकारी फिर खाइए और भोजन के साथ थोड़ा खजूर या मुनक्का खाइए। भोजन खूब कुचलिए और हमेशा हल्का कीजिए। पानी भोजन के एक घंटे बाद पिया कीजिए। चाय, गोश्त, सिगरेट, चटपटे और मिठाइयों का परित्याग कीजिए।

(२) डाक्टर चौधरी के शब्दों में दूसरा नुसखा इस प्रकार है :—

पहले दिन शामको एक एनीमा लीजिए। दूसरे दिन सवेरे एक गिलास गरम पानी पीजिए और फिर शन्तरा, सेब, पपीता, किशमिश या टमाटर में से जो कोई एक फल खाइए। ज्यादा तरह के फल एक साथ खाना मुनासिब नहीं। प्यास लगे तो दिन में पानी पीते रहिए। लेकिन और दूसरे प्रकार का पेय पदार्थ न पीजिए। रात को भी वही फल खाइए। एक एनीमा लेकर सो जाइए। तीन दिन तक इसी प्रोग्राम को जारी रखिए चौथे, पाँचवें, छठवें और सातवें दिन सवेरे उठ कर जितना गरम पानी पी सकिए उसमें एक या दो नीबू डालकर पीते रहिए। जलपान हरी पत्तीदार तरकारियों का कीजिए जैसे प्याज, गाजर, पालक, मूली, पातगोभी और टमाटर। रात के समय हरी तरकारियों का सलाद खाइए और उसे जायकेदार बनाने के लिए उसपर नीबू का रस, थोड़ा सा घी और नमक या गुड़ डाल दीजिए। इन चार दिनों में दो एनीमा लीजिए। आठवें रोज भी वही भोजन कीजिए। जलपान के समय मोटे आटे की एक रोटी खाइए। रात को हरी तरकारी का सलाद खाइए और एक या दो पकी तरकारियाँ भी खाइए। नवें दिन से धीरे धीरे रोटियों की तादाद बढ़ाकर अपने पहले के भोजन पर आ जाइए। इस तरीके से आपका शरीर इस कदर साफ हो जायगा कि साल भर आपकी तन्दुरुस्ती बहुत अच्छी रहेगी। सब बीमारियों को अच्छा करने के लिए शुरू में इस तरह की सफाई की बड़ी जरूरत है और बहुत से मरीजों के तीव्र रोग तो इसी सफाई से अच्छे हो जाते हैं।

यदि बीमारी इतनी भीषण हो कि वह वार्षिक सफाई से न दूर हो तो किसी प्राकृतिक चिकित्सक से पूछिए या इस विषय की पुस्तकें पढ़िए। प्राकृतिक चिकित्सा के तरीके इतने सरल हैं कि थोड़े से अनुभव के बाद प्रत्येक स्त्री और पुरुष अपने डाक्टर खुद हो सकते हैं।

हम क्या अवश्य खाएँ ?

श्रीयुत महेशचन्द्र अग्रवाल, बी० एस-सी०, एम० ए०, विशारद

भोजन के वैज्ञानिक पहलू को लेकर विदेश में अनेक प्रयोग हुए हैं, भारत में भी सरकार की ओर से प्रशंसनीय प्रयत्न इस दिशा में हुआ है, जिनसे साबित हुआ है कि हमारे भोजन में कौन कौन से तत्व कितनी मात्रा में होने चाहिए ? एवं वे किन किन खाद्य पदार्थों से प्राप्त किए जा सकते हैं ? वैज्ञानिक अनुसन्धान द्वारा प्राप्त इन्हीं सूचनाओं के आधार पर विज्ञ लेखक ने यह उपयोगी लेख लिखा है। विशेषता यह है कि आपने पग पग पर यह ध्यान रखा है कि जो महँगी चीजें नहीं खरीद सकते उनके लिए भी आपका लेख उपयोगी हो।—सं०

जीवन-सखा के सम्पादक जी की भेजी हुई विषय-सूची अब भी मेरे सामने पड़ी हुई है। 'भोजन विज्ञान', भारत के प्रांतों का भोजन और उनके गुण दोष', 'विटामिन्स की कहानी' व 'चश्मे का व्यवहार अप्राकृतिक है' के आगे '×' लगा हुआ है। पर लिखूँ किस पर ? और क्या ?—हाथ में कलम पकड़े मैं यही सोच रहा था कि याद आया कि उस दिन मेरे मित्र ने मुझे गाजर खाते देख कर कहा था—'यार यह तो गरीबों का खाना है। फल खाना है तो अंगूर अनार खाओ। बहुत करो तो केला और सरदा खालो। पर गाजर जैसी वाहियात चीज, मुँह हाथ भी काले और जीभ भी।'

लेखक

मैं—भारत गरीब देश है। जितने कम खर्च से काम चल सके उतना ही अच्छा।

मित्र—पर आपको गरीबों से कहीं अच्छा भोजन करना चाहिए।

मैं—आप अच्छा भोजन किसे कहते हैं ?

मित्र—अनार, अंगूर, घी, दूध, पूरी, कचौड़ी—यह अच्छी चीजें हैं। जो गरीब हैं वह बेचारे गाजर, सिंघाड़ा, रोटियाँ खाकर गुजारा करते हैं।

मैं—पढ़े लिखे होने के कारण आप इतना तो अवश्य चाहते हैं कि शरीर को उचित अवयव मिल जायँ।

मित्र—हाँ, देखिए, डाक्टरों ने बहुत सोच विचार कर यह ढूँढ़ निकाला है कि हमको ३००० या २५००, मुझे ठीक याद नहीं, कैलरी ताकत देने वाला भोजन करना चाहिए। उसके लिए हरेक को आधा सेर से लेकर तीन पाव गेहूँ का आटा खाना चाहिए। फल वल तो ऊपर के मजे हैं। आप बाजार में लोगों को चाट खाते देखते हैं। हम फल खाते हैं।

"आटा नमक के साथ खाएँ या चीनी"—मैंने थोड़ा हँसते हुए कहा।

मित्र—अजी आप तो मजाक समझते हैं। मैं आपको दिखा सकता हूँ। उसमें लिखा है कि तीन पाव तक आटा खाना चाहिए।

इसी समय राजेश्वर ने कमरे में घुसते हुए कहा—कहो जी क्या शगल है ?

"क्यों, राजेश्वर, उस दिन तुमने भी देखा था उस किताब में लिखा था कि प्रत्येक मनुष्य को तीन पाव तक गेहूं का आटा खाना चाहिए ?—मेरे मित्र ने झपट कर उससे कहा ।

राजेश्वर—अजी, रखिए आप तीन पाव को घर में। पंजाबियों की तरह खाना खाइए। बस खूब तगड़े और मजबूत हो जाइएगा। देखो न बलवन्त कैसा तैयार है।

मित्र—जाओ, सब आदमी सिक्खों की तरह झटका और मांस नहीं खा सकते। ऐसा होता तो सरकार इस प्रश्न को हल करने के लिए हजारों रुपए माहवार न खर्च करती।

और सबसे बड़ी बात यह है कि बहुत कम सज्जन जानते हैं कि हमारे शरीर को कौन कौन से वैज्ञानिक पदार्थ चाहिए और वे किस प्रकार की वस्तुओं से मिल सकते हैं। अमीरों को ये अवयव मिल जाते हैं पर इसीलिए कि उनके पास पैसा है और उसे वे भाँति भाँति की बढ़िया, मँहगी व भिन्न वस्तुएँ खाने में खर्च करते हैं। वे पैसे के बल से अपने अज्ञान पर विजय पाते हैं। तालिका न० १ से स्पष्ट है कि आयुवृद्धि के साथ भोजन अधिक उचित बनता जाता है क्योंकि प्राणि जगत से प्राप्त प्रोटीन की मात्रा बढ़ जाती है। तालिका न० २ भी पैसे के बल को प्रमाणित करती है।

तालिका[1] न० १

आय प्रति मनुष्य (रीशमार्क में)	भोजन में स्थित प्राप्त प्रोटीन	
	प्राणि-जगत	बीज-जगत
८०० तक	४४·६२%	५५·३८%
८००–१०००	४९·४२%	५०·५८%
१०००–१२००	५२·०१%	४७·९९%
१२००–१५००	५६·०७%	४३·९३%
१५०० वा अधिक	५८·३०%	४१·७०%

तालिका[2] न० २

	आय प्रति व्यक्ति (क्रोन में)[3]	१०००० कैलरी की कीमत
मध्य वर्ग	७०० तक	२५०
	७००–१४५०	३१०
	१४५० या अधिक	३६९
मज़दूर वर्ग	१००५–१५३०	२९५
	१५३०–२५८५	३७३
	२५८५ या अधिक	४४२

अस्तु, आइए पता लगावें कि हमको क्या खाना चाहिए और कितना ? ध्यान रखिए कि एक वैज्ञानिक पौष्टिक भोजन कई वस्तुओं से मिल सकता है पर हमारा प्रयत्न सब से सस्ती वस्तुओं पर जोर डालने का ही रहेगा क्योंकि हम गरीब हैं।

---

[1] Final Report of Mixed Committee (League of Nations) on Nutrition, पन्ना २५१

[2] उक्त रिपोर्ट, पृष्ठ २५१

[3] १ क्रोन=१२ आना।

भोजन सामग्री दो भागों में बाँटी जा सकती है—(१) बलवर्द्धक व (२) रक्षक। मोटर की मशीन को दो प्रकार के तेल की आवश्यकता होती है—पेट्रोल और ग्रीज। पेट्रोल के कारण मोटर चलती है। ग्रीज मशीन को घिसने से बचाता है। यदि ग्रीज न हो तो पुरजे आपस में रगड़ खाकर जल्दी नष्ट हो जायँ। इसके बिना मोटर ठीक से न चल सकेगी। इसी प्रकार हमारे शरीर को बलवर्द्धक तथा रक्षक पदार्थों की आवश्यकता होती है। कार्बोहाइड्रेट, चर्बी व प्रोटीन से हमको बल मिलता है। खनिज तथा विटामिन्स विभिन्न रोगों से हमारी रक्षा करते हैं तथा हमारी मशीन को चालू रखते हैं। प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और चर्बी पेट में पहुँच कर कार्बन द्विओषिद में बदल जाते हैं। इस क्रिया से जो गर्मी पैदा होती है उसे शरीर ग्रहण कर लेता है और कार्बन द्विओषिद को हम साँस द्वारा बाहर निकाल देते हैं। इसके विपरीत कैलशियम व फासफोरस हमारे दाँतों और हड्डियों को बनाते हैं और हमारा रक्त इसीलिए लाल है क्योंकि उसमें लोहा है। विटामिन्स की कहानी जीवन-सखा के पाठकों ने अवश्य पढ़ी होगी तब भी इन 'न्स्पेक्टरों' के बारे में मैं कुछ बता दूँ।

मुख्यतः चार विटामिन्स हैं—'ए', 'बी', 'सी' व 'डी'। 'बी' विटामिन के अब दो भाग कर दिए गए हैं—विटामिन बी१ और बी२। इनका महत्व इस प्रकार है :—

विटामिन 'ए'—इसकी अनुपस्थिति में विभिन्न नेत्र-दोष, रतौंधी, पथरी, ब्रानकाइटिस[1] तथा अन्य फेफड़ों की बीमारियाँ हो जाती हैं।

विटामिन 'बी'१—यह मशीन-छंटे चावलों में नहीं होता। मेरा मतलब उस चावल से है जो हम खाते हैं। फलतः बेरी-बेरी[2] की बीमारी खूब फैली हुई है क्योंकि हम चावल ही तो अधिक मात्रा में खाते हैं।

विटामिन 'बी'२—प्रयोग द्वारा सिद्ध होता है कि जिन जानवरों को यह नहीं मिलता वे शीघ्र रोगी होकर मर जाते हैं।

विटामिन 'सी'—इसमें और 'स्कर्वी'[3] रोग में आग पानी का सम्बन्ध है। अन्तर इतना ही है कि पानी न रहने से आग नहीं पैदा होती पर विटामिन 'सी' के न होने से स्कर्वी तुरन्त भभक उठती है।

विटामिन 'डी'—यदि किसी को रिकेट[4], दाँत रोग अथवा बुरी शक्ल वाली हड्डियाँ हों तो समझ जाइए कि उनके शरीर से विटामिन 'डी' गायब है। 'डी' के रहने से ही हमारा शरीर कैलशियम का उचित उपयोग कर पाता है।

परसों राजेश्वर ने इस अधूरे लेख को पढ़ा था। वह मेरे घर आया था और अचानक उसकी निगाह इसपर पड़ गई। वह बोला—वाह जी, आपने तो मुझे भी इसमें घसीट लिया। पर आप इतना क्यों बढ़ा रहे हैं। सीधे सीधे बता दीजिए कि भई यह खाओ, वह खाओ, इतना खाओ, उतना खाओ और मानिकचन्द जी के २५००–३००० के बारे में क्या हुआ ?

---

[1] साँस की नली में सूजन आना।

[2] शरीर जगह जगह सूज आता है और बड़े बड़े गुट्ठल उठ आते हैं।

[3] रक्त विषाक्त हो जाता है। मसूड़े फूल आते हैं।

[4] हड्डियाँ मुलायम होकर विचित्र शक्ल धारण कर लेती हैं।

२५००–३००० ? पर यह तो विवादजनक बात है कि भारत जैसे देश में प्रति दिन किसी व्यक्ति को कितनी गर्मी की आवश्यकता है ? सन् ३५ में लीग आफ नेशन्स ने भोजन-समस्या पर विचार करने के लिए जो कमेटी बैठाई थी उसने तथा अन्य कमेटियों ने पश्चिमी वातावरण के उपयुक्त भोजन पर ही अपनी राय दी है। दक्षिण भारत की कूनूर रिसर्च लेबोरेट्री में श्री एकरायड की अध्यक्षता में कुछ प्रयोग हुए हैं पर हेल्थ बुलेटिन न० २३[1] में (अफसोस है कि इसका हिन्दी अनुवाद नहीं निकला है) एकरायड भी लीग आफ नेशन्स के स्टैन्डर्ड को मानते हैं। भारतीय जन-संख्या पर विचार करते समय लखनऊ विश्वविद्यालय के डाक्टर राधाकमल मुकर्जी, पटना के डाक्टर ज्ञानचन्द तथा कलकत्ते के डाक्टर गांगुली ने भी अपनी पुस्तकों में कुछ ऐसा ही राग गाया है। इंडियन जरनल आफ इकनामिक्स के एक पिछले अंक में नकी कड़ी आलोचना करते हुए श्री विनयकुमार सरकार ने लिखा था कि ३०००, २८००, २२०० . . .कैलरी के अन्दाज से सिर पैर के हैं। एक भारतवासी के लिए १६०० से लेकर ३००० क्लारी तक की गर्मी की आवश्यकता पड़ सकती है। हम ऐसे अन्दाजों पर भारत की भोजन-समस्या नहीं सुलझा सकते।

श्री सरकार के विचार बहुत कुछ ठीक हैं, तब भी मैं यह मानता हूँ कि यदि कोई सज्जन यह पता लगाना चाहें कि भारतीयों के लिए पर्याप्त भोजन देश में है या नहीं[2] तो उसे अधिकतर आटा, दाल, चावल तक ही सीमित रहना पड़ेगा क्योंकि दूध, फल, तरकारी आदि के आँकड़े[3] हमारे पास नहीं हैं। दाल, चावल के स्टैण्डर्ड को कायम करने के लिए यह बात सोचनी पड़ती है कि हमको प्रति दिन कितनी कैलरी गर्मी की आवश्यकता है।[4] पर उष्णता हमारे शरीर के लिए इतनी महत्त्वशाली नहीं जितने खनिज यौगिक तथा विटामिन्स। क्या हुआ यदि आपने आधा सेर चावल राँध कर आध पाव दाल के साथ खा लिया।[5] ऐसी ताकत किस काम की जब आपके शरीर में स्थान स्थान पर सूजन है, आपकी हड्डियों ने भयावनी सूरत धारण कर ली है और आपके रक्त की लाली गायब हो चली है। विटामिन्स, कैलशियम, लोहा, फासफोरस—आप इन्हें न भूलिए।

मैं कह चुका हूँ कि हम दूध, फल, तरकारी को ध्यान में रख कर भारतीय भोजन पर विचार नहीं कर सकते। विटामिन्स और खनिज पदार्थ इन्हीं में अधिकतर पाए जाते हैं। इतना अवश्य हो सकता है कि विभिन्न स्टैण्डर्ड को देखते हुए हम पता लगाएँ कि हमको कितने कैलशियम, फासफोरस या विटामिन्स चाहिए। इसके लिए यह समय व स्थान उपयुक्त नहीं। यहाँ तो मैं निस्संकोच श्री एकरायड के

तालिका न० ३

पदार्थ	शरीर की दैनिक आवश्यकता
प्रोटीन	७३ ग्राम
चर्बी	७४ ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	४०८ ग्राम
फासफोरस	१.४७ ग्राम
कैलशियम	१.०२ ग्राम
लोहा	४४ मिलीग्राम
विटामिन	
ए	७००० अन्तर्राष्ट्रीय यूनिट
बी$_1$	४०० ,, ,,
बी$_2$	काफी
सी	१७० मिलीग्राम
डी	काफी

---

[1] यह सरकारी पुस्तक दो आने को मिलती है।

[2] ऐसी इन्क्वायरी श्री दयाशंकर दुबे, प्रयाग विश्वविद्यालय ने सन् १९१८ में की थी।

[3] 'रोटी दाल चावल' अर्थात् अन्न के आँकड़े भी तो गलतियों से भरे पड़े हैं (देखिए वाडले राबर्टसन रिपोर्ट)

[4] यदि आवश्यकता समझी जाय तो इसपर किसी अन्य लेख में स्पष्ट तथा पूरी तौर से लिख दूँ।

[5] इस भोजन से लगभग २००० कैलरी ताप मिलता है।

आँकड़ों को मान लेता हूँ। उनके अनुसार प्रत्येक भारतीय को प्रति दिन निम्न रासायनिक पदार्थ चाहिए :—

हो सकता है कि इस समय हम भारतीयों के लिए यह मात्राएँ भी अधिक हों। अथवा कम भी हो सकती हैं। पर यदि हम इस प्रकार का ही भोजन कर सकें तो क्या ही अच्छी बात हो। अस्तु, मैं विटामिन्स से चलना पसन्द करूँगा। तालिका न० ४ से पता चलता है कि पौने दो छटाँक पदार्थ में विटामिन 'ए' की मात्रा कितनी है।

तालिका न० ४[1]

पदार्थ	पौने दो छटाँक में विटामिन 'ए' की मात्रा (अं० यूनिट में)	पदार्थ	पौने दो छटाँक में विटामिन 'ए' की मात्रा (अं० यूनिट में)
उर्द बिना छिलका	६४	बादाम	..
अरहर " "	२२०	अखरोट	१०
मूंग छिलकेदार	१५८	आलू	४०
सोयाबीन	७१४	आम कच्चा	१५०
निया	११५००	आम पक्का	४८००
सेंजन	११३३०	नीबू	२६
चने का साग	६७००	नारंगी	३५०
सलाद	२२००	तरबूज	..
पुदीना	२७००	पपीता पक्का	२०२०
पालक हरा	३०८५	केला	१२४
गाजर	३१६०	अनार	..
प्याज	..	अंगूर	१५
करेला	२१०	अमरूद	..
बैंगन	५	खजूर	६००
सेम	..	सेब	..
गोभी	३८	मुर्गी का अंडा	२१९७
कटहल	५१	गाय का दूध	१८०
सिंघाड़ा	२०	पान	९६३५
टमाटर	३२०	काडलिवर तेल	४५०००–१९८०००
पिस्ता	२४०	हालिवट तेल	३९०००००

यदि हम काड लिवर तेल खाएँ तो केवल १·८७२ रत्ती से ही हमें ७६०० अं० यूनिट विटामिन 'ए' मिल सकता है। पर गरीबों के लिए तो सवा छटाँक धनिया, सवा छटाँक सेंजन, आध पाव चने का साग, पाव भर पालक या सवा पाव गाजर से ही हमारी विटामिन 'ए' की माँग पूरी हो सकती है। गर्मी में पक्के आम से यह प्राप्त किया जा सकता

---

[1] हैल्थ बुलेटिन नं० २३, पृष्ठ २४-४६

है। पैसे वाले पपीता, नारंगी, केला, टमाटर, दूध और अंडा खा सकते हैं।

अब विटामिन बी को लीजिए। तालिका न० ५ में 'बी'$_1$ व बी$_2$ दोनों को दिखाया गया है :—

तालिका न० ५[1]

पदार्थ	पौने दो छटाँक में विटामिन की मात्रा (अं० यूनिट में) बी$_1$	बी$_2$	पदार्थ	१·७५ छटाँक में विटामिन की मात्रा (अं० यूनिट में) बी$_1$	बी$_2$	पदार्थ	१·७५ छटाँक में विटामिन की मात्रा (अं० यूनिट में) बी$_1$	बी$_2$
उर्द (बिना छिलका)	१४०	काफी	सलाद	९०	..	मूँगफली (गैर भुनी)	३००	कुछ
अरहर ,,	१५०	काफी	पालक	७०	..	अखरोट	१५०	..
मूँग (छिलकेदार)	१५५	काफी	गाजर	६०	..	सेब	४०	..
बाजरा	११०	..	ककड़ी	३०	..	केला	५०	..
जौ	१५०	..	आलू	२०	काफी	नारंगी	४०	..
जई	३२५	..	गोभी	११०	..	खजूर	३०	कुछ
साँवा	..	..	सेम	..	..	किशमिश	७५	..
गेहूँ चोकरदार	१८०	कुछ	कटहल	..	..	टमाटर	४०	..
चना	१००	काफी	भिंडी	२१	कुछ	दूधगाय	..	काफी
धनिया	..	काफी	हरा केला	१५	काफी	मखनिया दूध का पाउडर	१६५	बहुत
सेंजन	७०	..	बादम	५०	..	..	..	..

अमीर अखरोट, सेब, केला, किशमिश, बादाम, अरहर खा सकते हैं। गेहूँ की रोटी[2] से भी उनकी विटामिन 'बी' की आवश्यकता पूरी हो जायगी। गरीब यदि जौ और बाजरे की रोटी मूँग चने या उर्द की दाल के साथ खा सकें तो बहुत है। साथ में गाजर, और ककड़ी और पालक भी खाएँ। दिन भर में यदि उन्होंने आधा सेर आटा भी खाया तो काफी है। आप कह सकते हैं कि तब तो 'ए' की अपेक्षा यह महँगा पड़ेगा। उत्तर है—हाँ, नहीं। पैसों के अनुसार 'हाँ' पर यदि यह सोचा जाय कि रोटी दाल तो हम सब लोग खाते हैं तो 'नहीं'। लेकिन विटामिन 'सी' 'ए' की भाँति ही सस्ता है। तालिका न० ६ से स्पष्ट है कि सवा छटाँक सेंजन, धनिया, तीन छटाँक पातगोभी या एक अमरूद से ही १७० मिलीग्राम विटामिन 'सी' प्राप्त हो सकता है। अमीरों के लिए अमरूद, पपीता, टमाटर, आम उपयुक्त होंगे।

---

[1] उक्त रिपोर्ट पृष्ठ २४-४६

[2] मिल के पिसे आटे में विटामिन जल जाते हैं अतएव हाथ का पिसा आटा ही वांछनीय है।

तालिका न० ६[1]

पदार्थ	पौने दो छटाँक में विटामिन 'सी' की मात्रा (मिलीग्राम में)	पदार्थ	पौने दो छटाँक में विटामिन 'सी' की मात्रा (मिलीग्राम में)	पदार्थ	पौने दो छटाँक में विटामिन 'सी' की मात्रा (मिलीग्राम में)
पातगोभी	१२४	सेम	१२	पका आम	१३
धनिया	१३५	गोभी	६६	नारंगी	६८
सेंजन	२२०	भिंडी	१६	ककड़ी	७
सलाद	१५	मेवा	..	पपीता	४६
मूली	१५	अंगूर	३	टमाटर	३१
करेला	८८	अमरूद	२९९	मांस	..
बैंगन	२३	नीबू	६३	दूध-दही	..

विटामिन 'डी' सलाद, नारियल की गरी, मुर्गी का अंडा, दूध आदि में पाया जाता है। उसके अतिरिक्त पेटेन्ट दवाइयाँ भी हैं। पर गरीबों[2] को इस हेतु सूर्य भगवान की शरण जाना ही उपयुक्त होगा। सूर्य की किरणें नंगे शरीर पर पड़ती हैं तो उसके अन्दर विटामिन 'डी' की उत्पत्ति होती है।

"और विटामिन ई ?"—मेरे एक मित्र ने एक बार कहा था।

विटामिन ई अब विटामिन बी बन गया। आजकल मुख्य विटामिन चार ही माने जाते हैं—'ए', 'बी', 'सी' और 'डी'।

उपर्युक्त विश्लेषण के फलस्वरूप हम इस निश्चय पर पहुँचते हैं कि हमको तालिका न० ७ के पदार्थों को अधिक ग्रहण करना चाहिए।

अब मैं खनिज धातुष यौगिक वाले पदर्थों को लेता हूँ। तालिका न० ३ के अनुसार हमको ४४ मिलीग्राम लोहा प्रति दिन पेट में पहुँचाना चाहिए। तालिका न० ८ से मालूम होता है कि पौने दो छटाँक खाद्य-वस्तु में लोहे का क्या अंश होता है।

तालिका न० ७

पदार्थ	पौने दो छटाँक में वि० की मात्रा			
	ए (अं० यू०)	बी$_1$ (अं. यू०)	बी$_2$	सी मि.ग्रा.
मूँग (छिलकेदार)	१५८	१५५	काफी	..
चना (,,)	३१६	१००	काफी	..
उर्द (बिना छिलका)	६४	१४०	काफी	..
अरहर (,,)	२२०	१५०	नकाफी	..
बाजरा	२२०	११०	नकाफी	..
जौ	..	१५०	नकाफी	..
गेहूँ चोकरदार	१०८	१८०	कुछ	२२०
सेंजन	११३३०	७०	..	४८
पालक	३०६५	७०	..	१२४
पातगोभी	२०००	५०	..	१३५
धनिया	११५००	..	काफी	..
चने का साग	६७००	..	..	३
गाजर	३१७०	६०	..	७
ककड़ी	..	३०	..	२९९
अमरूद	..	..	..	१३
आम	४८००	..	कुछ	..
सोयाबीन	७१०	३००	काफी	१५
सलाद	२२००	९०	..	

---

[1] उक्त रिपोर्ट, पृष्ठ २४-४६

[2] भारतीय परदानशीन स्त्रियों को उसका अधिक ख्याल रखना चाहिए। परदे में अथवा साए में होने के कारण उन्हें आस्टेमेलेसिया का रोग हो जाता है। उनकी हड्डी की बनावट बिगड़ जाती है।

स्पष्ट है कि लगभग १४–१५ मिलीग्राम लोहा (बल्कि अधिक) हमको बाजरा, जौ या गेहूँ की रोटी व दालों से मिल जाता है। तरकारी और फलों से यह अधिक नहीं प्राप्त हो सकता। पौने दो छटाँक लाल टमाटर में भी लोहे का अंश १ मिलीग्राम ही होता है। जाड़े के दिनों में यदि आधपाव चने का साग प्रतिदिन सेवन किया जाय तो ३० मि० ग्र० की बाकी कमी पूरी हो जाय। अन्य दिनों में आधा पाव भुना चना, धनिया व पाव भर कच्चा पालक खाना उचित होगा। वे गरीब जो ढाई तीन पाव चावल पर गुजर करते हैं यदि डेढ़ पाव, आधा सेर भुना या भीगा चना नमक मिर्च के साथ खा जाएँ तो लोहे की क्षति पूरी हो जाए। जाड़े में तो वे चने के साग से काम चला सकते हैं।

मेरे पास बैठे मित्र बोल उठे—अब कैलशियम की तालिका बनाओ। मनुष्य को प्रति दिन कितने कैलशियम की आवश्यकता है ?

तालिका न० ८

पदार्थ	लोहे की मात्रा (मि० ग्र०)	पदार्थ	लोहे की मात्रा (मि० ग्र०)
बाजरा	८·८	पालक	५·०
जौ	३·७	गाजर	१·५
चूड़ा व मुरमुरा	६·२	करेला छोटा	९·४
गेहूँ	५·३	पिस्ता	१३·७
चना (भीगा)	९·८	बादाम	३·५
चना (भुना)	८·९	अखरोट	४·८
उर्द	९·८	खजूर	४·०
मूँग	८·४	ककड़ी	१·५
अरहर	८·८	भिंडी	१·५
धनिया हरा	१००	कटहल	१·७
तिल	१०·७	फल	·१–१·७
चने का साग	२८·३	मांस	·१–१·७

मैं—१.०२ ग्राम। पर अफसोस है कि इसको हम कौड़ियों में नहीं प्राप्त कर सकते। कारण रोटी, फल, तरकारी, मांस आदि में तो यह नहीं के बराबर होता है।

मित्र—चाहे जिसकी रोटी हो ?

मैं—हाँ, रोटी से मेरा मतलब जौ, बाजरा, गेहूँ तथा चने की रोटी से ही है। यही हम अधिकतर खाते हैं।

जब मैं तालिका बना चुका तो मित्र महोदय बोले—बहुत गरीब गरीब चिल्लाते हो। देखें यहाँ क्या दवा बताते हो। जाड़े में मैं डेढ़ पाव चने का साग और गरमी में ?

मैं—क्या बताऊँ। यदि हम लोग प्रति दिन छटाँक भर तिल खा सकें तो बड़ा अच्छा हो।

मित्र—पर खाया किस तरह जाए ?

मैं—तिल के लड्डू बनाए जा सकते हैं[1]। मेरे ख्याल में चीनी से गुड़ अच्छा होगा क्योंकि पौने दो छटाँक गुड़ में ११.४ मिलीग्राम लोहा होता है।

तालिका न० ९

पौने दो छटाँक पदार्थ	कैलशियम की मात्रा (ग्राम में)	पौने दो छटाँक पदार्थ	कैलशियम की मात्रा (ग्राम में)
रोटी	.०१–.०५	अन्य सब्जी	·०–२·०७
चावल	.०१–.०२	तिल	१·४५
चना	.१९	पिस्ता	·१४
उर्द	.२०	अखरोट	·१०
मूँग या अरहर	.१४	खजूर	·०७
बथुआ	.१५	नीबू	·०९
धनिया	.१४	नारंगी	·०५
चने का साग	.३१	फल	·०१–·०
पालक	.०६	मांस	·०१–·०
गाजर	.०८	दूध	·१·२

---

[1] क्योंकि मैं पाकशास्त्र के नाम कोरा हूँ। छटाँक में तीन लड्ड वाली बात को तालिका न० १२ में ख्याल रखना चाहिए। देखिए* पृ० १०७

तालिका न० १०

पौने दो छटाँक पदार्थ	फासफोरस की मात्रा (ग्राम में)	पौने दो छटाँक पदार्थ	फासफोरस (ग्राम में)
रोटी	.३०	अखरोट	.३८
उर्द	३.३७	फल	.०१–.०३
चना	.२४	अंडा मुर्गी	.२७
मूंग या अरहर	.२६–.२८	मछली	.१९–.४१
चावल	.०८–.२८	दूध गाय	.०९
करेला	.१४	..	..
तरकारी	.०१–.१३	..	..
तिल	.५७	..	..
किशमिश	.४९	..	..
वादाम	.०८	..	..
पिस्ता	.४३	..	..

मित्र—सेर भर तिल में कितने लड्डू वन जायेंगे ?

मैं—यह तो मैं नहीं कह सकता। यदि वरावर का मीठा डालें और सेर के चौबीस लड्डू तैयार करें तो छटाँक भर तिल में तीन लड्डू होंगे।*

मित्र—तीन लड्डू तो एक आदमी खा सकता है।

मैं—खा तो सकता है। स प्रकार प्रति दिन दो पैसे का खर्च बैठ जायगा।

मित्र—इसके अलावा कोई और चारा भी तो नहीं दिखाई पड़ता।...चलिए चलि फासफोरस की तालिका तैयार करिए। हमको १.४७ ग्राम फासफोरस की आवश्यकता है।

तालिका देख कर कहा जा सकता है कि .३० ग्राम फासफोरस तो तिल के लड्डुओं से प्राप्त हो जाएगा और १.२५ ग्राम रोटी दाल से। जो चावल पर जीवन निर्वाह

तालिका न० ११

पौने दो छटाँक पदार्थ	कैलशियम (ग्राम)	फासफोरस (ग्राम)	लोहा (मिलीग्राम)	ए	बी$_1$ (अं०यू०)	बी$_2$	सी (वि-अ)
गेहूँ	.०५	.३२	५.३	१०८	१८०	कुछ	..
वाजरा	.०५	.३५	८.८	२२०	११०	कुछ	..
जौ	.०३	.२३	३.७	..	१५०	कुछ	..
उर्द(विना छिलका)	.२०	३.३७	९.८	६४	१४०	काफी	..
अरहर (,,)	.१४	.२६	८.८	२२०	१५०	काफी	..
मूंग (छिलकादार)	.१४	.२८	८.४	१५८	१५५	काफी	..
चना (,,)	.१९	.२४	९.८	३१६	००१	काफी	..
चना भुना (,,)	.०७	.३१	८.९	..	..	..	..
सैंजन	.४४	.०७	७.०	११३३०	७०	..	२२०
पालक कच्चा	.०६	.०१	५.०	३०६५	७०	..	४८
चने का साग	.३१	.२१	२८.३	६७००	..	..	..
गाजर	.०८	.०३	१.५	३१६०	६०	..	३
खजूर	.०७	.०८	१०.६	६००	.३२	कुछ	..
अमरूद	.०१	.०४	१.०	..	..	..	२९९
निया	.१४	.०६	१०.०	११५००	..	काफी	१३५
तिल	१.४५	.५७	१०.५	१०७	..	..	..
गुड़	.०८	.०४	११.४	२८०	..	..	..
हमें चाहिए	१.०२	१.४७	४४	७०००	४००	काफी	१७०

करते हैं उन्हें उर्द की दाल खानी चाहिए।

विटामिन और खनिज पदार्थों के दृष्टिकोण से उचित भोजन पर जो विचार किया गया है उसके फलस्वरूप मैं जिन वस्तुओं में से अपना भोजन चुनूँगा वे तालिका न० ११ में दी गई हैं। तालिका में सबसे नीचे वह मात्रा दिखा दी गई है जो हमें प्रति दिन आवश्यक है।

क्या ही अच्छा हो अगर प्रत्येक व्यक्ति कम से कम निम्नलिखित भोजन कर सके :

तालिका न० १२

पदार्थ	मात्रा	कैलरी गर्मी	कैलशियम	फासफोरस	लोहा	ए	बी$_१$	बी$_२$	सी	पैसा खर्च
चना भुना	आधपाव	४२५	.०८	.३५	१९.१	..	..	..	..	१
पालक कच्चा	पावभर	७२	.१४	.०२	११.४	६१३०	१६०	..	११०	१
गेहूँ का आटा चोकरदार	डेढ़पाव	१२४५	.१६	१.००	१८.०	३६४	६१५	कुछ	..	३
उर्द	एक छटाँक	२००	.१२	२.००	५६	३६	८०	काफी	..	१
तिल गुड़ का लड्डू	तीन*	३१६	.५१	.२०	७.३	१४६	..	.	.	१
धनिया मसाला	एक तोला	..	.०७	.०४	२०	१७४	..	..	..	१†
कुल	..	२२५८	१.०८	३.६१	५४.४	६८५०	८५५	काफी	११०	८

गेहूँ के स्थान पर बाजरा या जौ खाया जाय तो उक्त भोजन में कोई चिन्ताजनक परिवर्तन नहीं होता। मेरे मित्र का विचार है कि उर्द को भोजन में विशेष स्थान देने की भी आवश्यकता नहीं। उर्द को फासफोरस के कारण महत्त्व दिया गया था पर वह रोटी-दाल से ही काफी निकल आता है। पालक के साग के बारे में मित्रवर ने कहा कि शायद एक ही कच्चा साग पाव भर मात्रा में खाना रुचिकर न हो। अतः चने का साग, सेंजन, धनिए की पत्ती और पालक इनमें से कोई या कुछ खाए जाएँ तो भी कोई बुराई नहीं बशर्ते कि कुल मिलाकर इनकी मात्रा पाव भर से कम न हो। साथ में खेलते कूदते गाजर, अमरूद, ककड़ी, खरबूजा, जामुन आदि फल खाइए। शरीर को उचित गर्मी पहुँचाने के

तालिका न० १३

पदार्थ	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम में)	(ग्राम में) चर्बी	प्रोटीन (ग्राम में)
चना ऽ=	६७.३	५.९	२५.७
पालक ऽ।	९.०	२.०	४.२
गेहूँ ऽ।=	२४४.२	२.१	४०.५
उर्द ऽ–	३४.४	०.८	१३.७
तिल का लड्डू तीन	४.३	१४.४	६.१
धनिया मसाला एक तोला	२.४	१.८	१.६
कुल	३६१.६	२७.०	९१.८
चाहिए	४०८	७३	७४
कमी	+४६.४	+४६	–१७.८

---

* देखिए, नोट १, पृ० १०६ तथा* पृ० १०७

† इसमें तथा उर्द की कीमत में मिलाकर जलाने की लकड़ी आदि का खर्च शामिल समझा गया है।

विचार से रोटी, दाल, भात पेट भर खाइए ।

अब तक मैंने प्रोटीन, चर्बी व कार्बो हाइड्रेट का खुल कर जिक्र नहीं किया है और न करूँगा। पर ऊपर मैंने जिस भोजन का उदाहरण दिया कम से कम उसमें इनकी स्थिति और महत्त्व क्या है यह अवश्य बताना चाहता हूँ। उक्त भोजन में इनकी मात्रा कितनी है, और कितनी होनी चाहिए यह तालिका न० १३ में दिया गया है।

कार्बो हाइड्रेट की कमी तो पेट भर भोजन करने से पूरी हो जाएगी, पर चर्बी ! गरीब बेचारे रेंडी या तिली का तेल खाते या खा सकते हैं। पर वे इस खर्च को बरदाश्त नहीं कर सकते। हाँ जिनकी आय तीस चालीस रुपए मासिक की है वे दूध का सेवन कर सकते हैं।

दूध के नाम पर मुझे लीग आफ नेशन्स की भोजन सम्बन्धी रिपोर्ट में दी गई एक बात याद आ गई जिसे यहाँ बता देने में कोई हानि नहीं है। देखा जाता है कि बालकों की संख्या-वृद्धि के साथ शीघ्र ही प्रति प्राणी दूध की मात्रा घटने लगती है। मैंने अमरीका के कुछ आँकड़े तालिका न० १४ में दिए हैं। प्रश्न उठता है क्यों ? मैं केवल इतना कहूँगा कि इसके लिए वृद्ध जन उत्तरदायी हैं। हाँ, यह भी मानना पड़ता है कि आज कल दूध की समस्या बहुत विकट होती जाती है और यह लोगों को दूध की मात्रा घटाने के लिए बाध्य करती है। कैसे ? कहाँ तक ? आदि प्रश्न उठते हैं पर यह किसी अन्य लेख का विषय होना चाहिए।

तालिका न० १४[1]

प्रति व्यक्ति प्रति दिन दुग्ध-पान (लिटर में)

बड़े व्यक्तियों की संख्या	२	३	४	५
गृहस्थी में बच्चों की संख्या				
०	०·३९	०·४२	०·३६	०·३०
१	०·४८	०·४३	०·४३	०·३८
२	०·५६	०·४६	०·४३	०·४३
३	०·५१	०·४३	०·३९	
४	०·४९	०·६०		
५	०·४७			

इस समय तो हमें प्रोटीन की बात सोचनी चाहिए। तालिका न० १३ देख कर आप सोचते होंगे कि चलो कम से कम प्रोटीन की मात्रा कम नहीं है। पर इस ९१.८ ग्राम के पीछे एक भेद है। आप तालिका न० १ को फिर से देखें। स्पष्ट है कि आय वृद्धि के साथ प्राणीजगत से प्राप्त प्रोटीन की प्रतिशत मात्रा बढ़ती जाती है और इस कारण कहा जाता है कि आय वृद्धि के साथ भोजन अधिक उचित बनता है। क्यों ? क्योंकि हमारे शरीर को उस प्रोटीन की अधिक आवश्यकता है जो अधिक Biological महत्त्व रखता है तथा जो आसानी से हजम हो जाय। तालिका न० १५ से मालूम पड़ता है कि दूध व अंडे से प्राप्त प्रोटीन अधिक Biological महत्त्व रखते हैं और हजम भी जल्दी होते हैं।

---

[1] उक्त लीग आफ नेशन्स रिपोर्ट, पृष्ठ २६३

"पर शरीर को तो प्राणीजगत से प्राप्त प्रोटीन अधिक आवश्यक हैं न ?"

"अरे भाई , अंडे, दूध आदि प्राणीजगत की ही तो वस्तुएँ हैं। यह खेत में थोड़े ही पैदा होते हैं। अतएव इनके प्रोटीन को ही प्राणीजगत-प्राप्त-प्रोटीन कहते हैं।"

तालिका न० १५

पदार्थ	प्रोटीन का Biological महत्त्व
अंडा	९४
दूध	८५
चना	७६
अरहर	७४
जौ	७१
गेहूँ	६७
तिल	६७
आलू	६७
उर्द	६४

मैं जिस भोजन की चर्चा कर चुका हूँ उसमें प्राणी-जगत-प्राप्त प्रोटीन का नामोनिशान भी नहीं है। पर इस समय इस कठिनाई को वही दूर कर सकता है जिसके पास पैसा है। पैसे से घी दूध के रूप में चर्बी व प्रोटीन दोनों खरीदे जा सकते हैं। अफसोस है भारत जैसे देश में भी घी दूध हराम हो रहा है।

अस्तु, हमारे देश में भोजन समस्या हल करने के जो प्रयत्न हो रहे हैं वे पर्याप्त नहीं। पर लेख बहुत बढ़ गया है अतः मैं केवल यह और बता दूँ कि इंग्लैंड में इस समय इस ओर क्या हो रहा है? यह पेंग्विन सीरीज की नवीनतम पुस्तक Science in war से विदित होता है। वहाँ के भोजन-वैज्ञानिकों का मत है—

"जो दश के लगभग विटामिन तथा खनिज पदार्थ हैं उनकी जितनी मात्रा हमको प्रति दिन चाहिए वह एक छोटे बिस्कुट में भरी जा सकती है। यह बिस्कुट मुफ़्त या कौड़ियों में सारी जनसंख्या (ब्रिटेन की) को बाँटा जा सकता है। इसका सालाना व्यय २० लाख पौंड से कम होगा। यह रकम उस ५ करोड़ पौंड की रकम से कहीं कम है जो ब्रिटिश खेती के सहायतार्थ व्यय होती है और जिससे विटामिन की समस्या नहीं हल हो सकती।. . .यदि प्रत्येक व्यक्ति को एक बिस्कुट प्रति दिन मुफ़्त मिल जाए तो हमारे भोजन की समस्या सदैव के लिए—चाहे युद्ध हो या शांति—हल हो जाए। सरकार को इसे अपनाना चाहिए।"[1]

ब्रिटेन की जनसंख्या लगभग सवा चार करोड़ है। अतएव तीन दिन में प्रति मनुष्य एक छदाम का व्यय पड़ेगा। ब्रिटिश सरकार खुशी से ऐसा करे तो ताज्जुब नहीं। पर भारत में ? शायद असम्भव।

(लेखक द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित)

---

[1] Science in war, पृष्ठ ६९

अपने विचार

यह सात साल की बात है। सन् १९३४ में बालेश्वर जी और मैं सोचा करते थे कि अँगरेज़ी की तरह हिन्दी भाषा में भी प्राकृतिक जीवन और प्राकृतिक चिकित्सा-सम्बन्धी एक सुन्दर, सारपूर्ण और सभी तरह उपयोगी मासिक पत्र होना चाहिए। उन दिनों हमारे हृदयों में अहर्निश प्रेरणा करने वाला एक अलौकिक उत्साह था। सन् १९३४ की १५वीं अक्तबर को बालेश्वर जी ने अपना प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह खोला और उसके लगभग डेढ़ महीने बाद हमें इलाहाबाद में ही जबलपुर-निवासी प्रसिद्ध प्राकृतिक-चिकित्सक स्वर्गीय डाक्टर रायबहादुर लक्ष्मीनारायण चौधुरी, रिटायर्ड सिविल सर्जन, का परिचय प्राप्त करने का सुअवसर. उनकी उत्साह-पूर्ण गम्भीरता, प्रगाढ़ विद्वत्ता, विनयशील प्रकृति और युक्तिपूर्ण वक्तृता ने हमें इस तरह प्रभावित किया कि हम लोग अपनी मनोनीत आयोजना में और भी दृढ़ता-पूर्वक लग गये। समस्याएँ अनेकों थीं। और कठिनाइयों के अतिरिक्त सबसे कठिन प्रश्न यह था कि प्रति मास उपयुक्त लेख कहाँ से लायेंगे। इन्हीं समस्याओं पर विचार करते करते सन् १९३५ आया और निकल गया, और १९३६ में ही हम इस योग्य हो सके कि जीवन-सखा का प्रकाशन आरम्भ कर सकें। इच्छा थी कि जनवरी में ही पहला अंक निकले, पर यह इच्छा फ़रवरी में ही पूरी हो सकी। सन् १९३६ के फ़रवरी मास में जीवन-सखा का आविर्भाव हुआ।

× × ×

उन दिनों बालेश्वर जी जीवन-सखा के संचालक और प्रकाशक थे और मैं था सम्पादक। मुझे अच्छी तरह याद है कि किस तल्लीनता के साथ हम प्रति अंक के लिए उपयुक्त सामग्री इकट्ठा करने की चेष्टा करते थे। हमारा उद्देश्य ऊँचा था। हम न केवल रोगों को मार भगाना चाहते थे बल्कि उसे पास आने से ही रोकना चाहते थे। हम सच्चे जीवन-सुधार का आदर्श अपनी आँखों के सामने बनाये रखते थे। हम न केवल शारीरिक स्वास्थ्य चाहते थे वरन् मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य, साथ ही आध्यात्मिक परिपूर्णता को भी अपना लक्ष्य बनाये हुए थे। हम जीवन-वृक्ष की सुन्दर टहनियों और पत्तियों को निरख कर ही सन्तुष्ट न थे। हम तो उसकी जड़ तक पहुँचना चाहते थे। इसी से हम दोनों स्वास्थ्य-सम्बन्धी अन्वेषणों में जी-जान से लग गये थे। जीवन-सखा को पाठकों ने पसन्द किया, समालोचकों ने सराहा और स्वास्थ्यार्थियों ने अपनाया। हमारा उत्साह भी उत्तरोत्तर बढ़ता गया।

× × ×

आज भी वह उत्साह बना हुआ है। यह लक्ष्य ही ऐसा है कि इसके सामने होते हुए उत्साह-हीनता टिक नहीं सकती। आज मैं जीवन-सखा का सम्पादक नहीं हूँ, पर मुझे सन्तोष है, हर्ष है, कि आज के सम्पादक भी उसी नीति का अनुसरण कर रहे हैं और जीवन-सखा सचमुच अपने पाठकों का जीवन-सखा बन रहा है। पाँचवें वर्ष के अन्त में जो यह पहला वृहद् विशेषांक निकल रहा है उसके सम्पादन का सुखद भार मेरे इच्छुक कन्धों पर डालकर संचालक ने मुझे गौरवान्वित किया—इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ! कई कारणों से मुझे जीवन-सखा के सम्पादक-पद से अलग होना पड़ा था, पर मेरे बाद के सम्पादकों ने सदैव ही मेरी सहयोगिता पर अपना पूरा अधिकार रखा और मेरी सेवाओं को बड़ी सहृदयता के साथ स्वीकार किया। शायद उसीके पुरस्कार-स्वरूप इस सुन्दर विशेषांक के सम्पादन का गौरव मुझे प्राप्त हुआ। धन्यवाद!

× × ×

इस पाँच वर्ष के जीवन-सखा के छोटे जीवन में कई प्रकार की विघ्न-बाधाएँ उपस्थित हुईं, पर जीवन-

सखा बना रहा, और अब आशा ही नहीं पूरा विश्वास है कि कुछ ही दिनों में जीवन-सखा नैतिक, मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य का सच्चा पथ-प्रदर्शक बन कर अपने लक्ष्य को पूरा कर सकेगा। गत वर्ष जो इसकी कायापलट हुई और इसके वाह्याकार के साथ-साथ आन्तरिक सामग्री की आश्चर्यजनक उन्नति हुई उसे देख विश्वास होता है कि वर्त्तमान सम्पादकों का उत्साह जीवन-सखा को बहुत ऊँचा ले जायगा। होना भी ऐसा ही चाहिए।

× × ×

इस अवसर पर जीवन-सखा के विविध सहकारी सम्पादक और सम्पादकों का कृतज्ञता-पूर्ण स्मरण मुझे अतीव आनन्दित करता है। मेरे सर्व प्रथम सहकारी थे श्रीयुत कृष्णनन्दन प्रसाद। लेखों के चुनने, स्तम्भों के सजाने और बाहरी साज को ठीक करने में उनका परिश्रम बहुत ही सराहनीय था। मेरे दूसरे सहकारी और आगे चलकर द्वितीय सम्पादक पंडित व्रजभूषण मिश्र हुए। उन्होंने कई कठिनाइयों का सामना करते हुए पत्र को उपयोगी बनाने की चेष्टा जारी रखी। उसके बाद स्वयं बालेश्वर जी सम्पादक हुए और उनके सहायक रहे पंडित विश्वम्भरनाथ द्विवेदी। अब तो बालेश्वर जी की प्रधानता में श्री विट्ठलदास मोदी का सम्पादन-कार्य जीवन-सखा के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहा है। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि जीवन-सखा का सम्पादन कोई आसान बात नहीं है। कठिनाइयों के होते हुए भी जो सफलता वर्त्तमान सम्पादकों को मिली है उसके लिए उन्हें हार्दिक बधाई!

पर योग्य सम्पादक कर ही क्या सकते थे अगर सुयोग्य लेखकों ने भी यथा-साध्य परिश्रम न किया होता। ऐसे लेखकों की सूची यहाँ देना सम्भव नहीं, पर इतना मैं अवश्य कह सकता हूँ कि हम सभी इन विद्वान लेखकों के अत्यन्त आभारी हैं।

× × ×

हमारे लेखकों में प्रमुख रहे हैं स्वर्गीय डाक्टर लक्ष्मीनारायण चौधुरी। यह हमारे लिए बड़े शोक का विषय है कि उनका देहावसान सन् १९३९ के मार्च महीने में हो गया। आज उनके नहीं रहने से जीवन-सखा को जो क्षति पहुँची उससे कहीं ज्यादा क्षति देश के प्राकृतिक-जीवन के प्रेमियों को हुई। चौधुरी साहब का जीवन सब के लिए आदर्श-स्वरूप था। उन्होंने सभी तरह अपने जीवन को सफल बनाया था। वे अपने जीवन-काल में ही जीवन-मुक्त से थे। सच्चा भ्रातृभाव-पूर्ण उनका सद्व्यवहार उनकी अलौकिक आध्यात्मिकता का द्योतक था। प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली में उनका दृढ़ विश्वास और उसीके अनुरूप उनका आचरण उनके प्रगाढ़ पांडित्य का परिचायक था, उनके कथित शब्द और उनके द्वारा किये गये कर्मों का सामंजस्य उनकी आन्तरिक सत्यशीलता का समर्थक था। उनकी महत्ता का पता उनके दर्शनों से ही चलता था। ऐसे सहृदय, सत्पुरुष और अनुभवी-चिकित्सक के उठ जाने से हमें सचमुच बहुत दुःख हुआ। मृत्यु के समय उनकी अवस्था ७५ साल की थी। यों तो सैकड़े ७५ से भी ज़्यादा मनुष्य ७५वें साल लगने के ७५ वें महीने पहले ही चल बसते हैं, पर मरने के ४-५ ही दिन पहले उनके स्वास्थ्य को देख कर स्वप्न में भी यह आशंका नहीं होती थी कि वे और २५ वर्षों तक जीवित न रहेंगे। अवश्य ही जीवन-मरण के विषय में किसी और शक्ति का भी हाथ है।

डाक्टर चौधुरी की दो कृतियाँ उनकी स्मृति को चिरकाल तक जीवित रखेंगी—(१) Ideal Diet for Perfect Health and Rejuvenation (पूर्ण स्वास्थ्य और पुनर्यौवन के लिए आदर्श भोजन) और (२) Ideal children and how to get them (आदर्श सन्तति और उसकी उत्पत्ति के उपाय)। इनमें से पहली का हिन्दी भाषान्तर प्रिन्सिपल केदारनाथ गुप्त की योग्य लेखनी द्वारा हो गया है। इनके अतिरिक्त जीवन-सखा में भी उनके कई प्रभावशाली लेख प्रकाशित हुए हैं। मुझे पूर्ण आशा है कि जिन भाग्यवान पाठकों ने चौधुरी साहब की इन कृतियों को पढ़ा है वे अवश्य

ही उनसे प्रभावित हुए होंगे ।

× × ×

डाक्टर चौधुरी तो जीवन-सखा के सर्वश्रेष्ठ सुयोग्य लेखक थे ही और लेखकों ने भी जीवन-सखा के प्रति सच्चे सखा का भाव रखकर इसका संपोषण किया है। उन सबों को बधाई और धन्यवाद ।

इस विशेषांक को सुन्दर और उपयोगी बनाने में जिन सुलेखकों ने सहयोग प्रदान किया है उन्हें भी बधाई और हार्दिक धन्यवाद । सब से अधिक आभारी हम अपने प्रिय सहयोगी स्नेहास्पद विट्ठलदास जी मोदी के हैं। उन्होंने ही इस अंक का वास्तविक संपादन किया है। आशा है कि यह अंक प्राकृतिक चिकित्सा-साहित्य के सर्वांग-परिपूर्ण होने में सहायक होगा और पाठकों को स्वास्थ्य-पथ पर अग्रसर करेगा ।

× × ×

जीवन-सखा जिस उद्देश्य से कार्यक्षेत्र में अवतरित हुआ था वह बहुत अंशों में पूरा होता सा दिखाई देता है। कम से कम भोजन-सुधार की चर्चा सभी जगह सुन पड़ती है। यद्यपि इसकी हँसी उड़ाने वाले बहुतेरे हैं और जानकारों का ज्ञान भी प्रायः अधूरा ही है, फिर भी लोग यह समझने लगे हैं कि स्वास्थ्य बहुत कुछ भोजन पर निर्भर है और यह भी कि स्वस्थ जीवन के लिए भोजन-सुधार के अतिरिक्त यथेष्ट व्यायाम, पर्याप्त विश्राम और विचार और भावों का परिष्कृत होना आवश्यक है। आशा है कि आगामी वर्षों में जीवन-सखा अधिक सफलता के साथ स्वास्थ्य का सुमधुर सन्देश स्वदेशवासियों के कानों तक पहुँचायेगा और इसकी सेवाओं के फलस्वरूप आने वाली पीढ़ियों के लिए स्वस्थ रहना वैसा ही साधारण विषय हो जायगा जैसा कि अभी अस्वस्थ रहना है।

× × ×

इस विशेषांक के सम्बन्ध में अपने प्रिय पाठकों को मैं दो उपहार देना चाहता हूँ—एक प्रार्थना और दूसरा शुभ-कामना ।

प्रार्थना—

"हमें स्वस्थ बनाओ ।
"हमें सबल बनाओ ।
"हम अपनी सन्तान के साथ सौ वर्ष तक जीवित रहकर संसार की सेवा करें।"

शुभकामना—

"सभी सुखी हों, सभी नीरोग रहें, सभी शुभ देखें, कोई भी दुख का भागी न हो।"

× × ×

सन् १९४१ जीवन-सखा के पाठकों के लिए, स्वदेश के लिए, सारे संसार के लिए सुखदायी और कल्याणकारी हो !

—जानकीशरण वर्मा

* * *

यदि मनुष्य दिन में केवल दो बार भोजन करे तो वह बहुत से रोगों से बच जाय। सवेरे किसी को भूख तो लगती नहीं पर जलपान करने का रिवाज पड़ गया है, इस रिवाज को तोड़ना ही चाहिए। अगर आदमी स्वस्थ हो तो उसे सवेरे उठते ही खाने की क्या जरूरत है। नींद तो स्वयं हम में शक्ति भरती है और ताकत देती है अतः सोकर उठने के बाद ही खाना भोजन का अपव्यय एवं शरीर को रुग्ण बनाना है।

हिन्दुस्तान के प्राकृतिक चिकित्सक

डा० दिनशा के० मेहता,
दी नेचर क्योर क्लिनीक--
एन्ड सैनिटोरियम,
६ टोडी वाला रोड,
बम्बई

डा० एम० बी० गाडवोले, एन० डी०, एम० डी०
लक्ष्मी रोड पी० बी० १९
पूना सिटी

डा० के० एल० शर्मा, बी० ए०,
बी० एल०, एन० डी० पुड्डू कोटा
(दक्षिण-भारत)

डा० बी० एस० गोपालराव
नेचर क्योर एडवोकेट
राजमुन्द्री

डा० ए० रक्षित, बी० एस-सी०, एम० बी०
नेचर क्योर होम
७५।१ बीडिन स्ट्रीट,
कलकत्ता

श्री देव बोहरा योगासनाचार्य
योगाश्रम
लायलपुर

डा० एम० डी० पँवार
रैडियेन्ट हेल्थ सेन्टर
सीयागंज,
इन्दौर

डा० के० ग्रार० दिलकश, एम० एस० बी०,
एन० डी०, नेचर क्योर क्लिनीक
हीवट रोड,
लखनऊ

डा० एस० जे० सिंह, एम० ए०, एन० डी०
५७ ग्वेनी रोड,
लखनऊ

श्रीमती कैलाश भटनागर
कैलाश डेपरी ख्याली गंज
लखनऊ

श्री वृजभूषण मित्र, एम० ए०
गोलाबाजार,
बिलासपुर

डा० रामनारायण दूबे
प्राकृतिक स्वास्थ्य-सदन
चौक,
बनारस

डा० बी० जी० हुन्डेकर, एन० डी०
वृन्दावन ग्राश्रम
बेतिया
बिहार

डा० ए० व्ही० के० मूर्ती
वेसेन्ट रोड–
ए० जी० प्रेस बिल्डिङ्ग
वेजवादा

डा० युगलकिशोर चौधरी
नीम का थाना
(जैपुर)

श्री फतहचन्द ढड्ढा
प्राकृतिक चिकित्सालय
३१ बरतल्ला स्ट्रीट,
कलकत्ता

डा० सुरेन्द्रनाथ
कृष्ण प्राकृतिक चिकित्सालय
चौकड़ी घाट दरवाजे,
कल्यानकों का मुहल्ला,
जैपुर

डा० आर० एस० अग्रवाल, एल० एस० एन० एफ०
नेत्र-चिकित्सक
१५ दरियागंज,
दिल्ली

डा० टी० डी० शर्मा, एम० एस०, बी० एन० एस०
नेचर क्योर हास्पिटल,
कनखल

डा० हरनामसिंह नेचरोपैथ
कुदरती इलाज का अस्पताल
खुरजा

श्रीमती सलोचना देवी
पानी भाप बिजली का अस्पताल
कनखल

डा० भगवानदास
नेचर क्योर हास्पिटल
देहरादून

डा० महादेवप्रसाद, एन० डी०
मनसूरगंज घाट,
भागलपुर

डा० विजयपाल सिंह, एन० डी०
विश्नुपुरी,
अलीगढ़

श्रीमती आर० सी० निगम, एन० डी०
लेडी नेचरोपैथ
लखनऊ

डा० रामप्रकाश, एन० डी०
हाल बाजार,
अमृतसर

डा० गंगाराम
नेचर क्योर सेनिटोरियम
गरही साहू,
लाहौर

डा० दौलतराम
निशात रोड,
लाहौर

डा० सामादत्त
निशात रोड,
लाहौर

डा० बनारसीदास
सोहतार मन्डी,
लाहौर

डा० टोंसे श्रीनिवास
१३९ सदर बाजार,
जबलपुर

कुहनी आश्रम
बिजनौर

डा० दुर्गाशंकर जी नागर
मानसोपचारक
उज्जैन

डा० रमणलाल इन्जीनियर
नेचर क्योर क्लिनीक
३२३—डी विनसेन्ट रोड,
मतुँगा
बम्बई

डा० पी० वेंकट रामैया, एन० डी०
दन्तलूर अग्रहारम,
पिदापारू
(गन्टूर)

डा० सूर्यदेव सिंह, बी० ए०, बी० एल०
नया टोला,
मुजफ़्फ़रपुर

डा० कृष्ण वर्मा
नेचर क्योर हास्पिटल
मलाद,
बम्बई

डा० एन० एन० वर्मा, एन० डी०
लाटूश रोड,
लखनऊ

डा० शिवपाल सिंह
सिन्हा हेल्थ होम
एकजीबीशन रोड,
पटना सीटी

डा० प्रभाशंकर शर्मा
मानसोपचारक
आगरा रोड,
उज्जैन

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह
नेचर क्योर होम
८७ हिम्मतगंज,
इलाहाबाद

डा० नारीपुदी कृष्णम् राजू, एन० डी०
केशवराम, टाडीपल्लीगुडेम
(वेस्ट गोदावरी)

डा० ए० कृष्णमूर्ती, एन० डी०
ए० जी० प्रेस
बेजवादा

डा० ऐयानकी वेंकट रामैया, एन० डी०
बेजवादा

डा० गंधमू कृष्णराव, एन० डी०
सत्यनारायणपुरम्,
बेजवादा

डाक्टर के० ए० शर्मा, एन्० डी०
सत्यनारायणपुरम,
बेजवादा

श्रीमती जी० अम्बा, एन० डी०
बेजवादा

डा० सीताराम अवधूत, एन० डी०
बेजवादा

श्रीमती शिवकान्तम्मा, एन० डी०
टाडन्की
(किस्तना)

डा० पालापार्ती अन्जनेपल, एन० डी०
मछलीपट्टन

डा० मजेठी मल्लिखजन राव, एन० डी०
मछलीपट्टन

डा० ऐयान्की वेंकट रत्नम्
बेसेन्ट रोड,
बेजवादा

डा० स्वामी भिक्षू, एन० डी०
सरस्वती संघम
जार्ज टाउन, मदरास

डा० पांडुरंगम
सौन्दर्य महल
मदरास

डा० रंगाचेरी, एन० डी०
अरुणदलपत,
गंटूर

डा० डी० रामकृष्ण राव
राजमुन्द्री

डा० पुवूजा पीराजू
रजोला
(ईस्ट गोदावरी)

डा० राघवेन्द्र योगी
मोरटस्टा, रेपेल्ली
(गंटूर)

डा० शिवनाथ राव
हरीसन रोड,
कलकत्ता

डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह
नेचर क्योर होम
८७ हिम्मतगंज,
इलाहाबाद

श्री विट्ठलदास मोदी
नेचर क्योर होम
८७ हिम्मतगंज,
इलाहाबाद

BOOKS ON HEALTH

That will Change the Course of Your Life

NATURE CURE *by* H. LINDLAHR, M.D.

"That a knowledge of the health principles mentioned in this book will materially aid the reader in his sincere efforts in regaining health and prolonging life. This work will be found most instructive, inspiring and full of practical suggestions for the attainment of complete self-development...... They will afford a scientific guide to self-treatment".

Price Rs. 6.

PRACTICAL NATURE CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D.

A book that will guide you to help yourself and others—the result of Dr. Sharma's vast study and profound experience. Nature-cure made really to suit Indian people. A most practical book, which you must possess.

Latest Enlarged Edition **Price Rs. 4.**

DRUGLESS HEALING *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D.

"Will serve not only as an introduction to the study of the philosophy of Nature-cure and its practice, but also as a book of ready reference after one has studied the subject from various sources and point of view."

Price As. 6.

YOUR DIET IN HEALTH AND DISEASE *by* HARRY BENJAMIN.

This "Home Treatment" book is a complete guide to the Dietetic and Physical treatment of Diseases. It contains chapters on Food, its Digestion, Absorption, and assimilation; How the Body works; Our Daily Food; Eating for Health not Disease, the Art of combining Foods; Feeding children; and concludes with a self-treatment Chart for all Common Ailments.

Khaddar Bound. **Pages 199** **Price As. 12.**

THE FASTING CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 3.**

THE NATURE CURE OF EYE DEFECTS *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D. **Price As. 8.**

PRANAYAMA *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 2.**

To be had from:—

HEALTH BOOK DEPOT

87 Himmatganj, ALLAHABAD

स्वास्थ्य सम्बन्धी

कुछ

अनमोल पुस्तकें

रोगों की अचूक चिकित्सा—लेखक श्रीयुत जानकी शरण वर्मा। प्राकृतिक चिकित्सा की ओर लोगों की विशेष अभिरुचि देखकर वर्माजी ने इस पुस्तक को लिखकर साधारण हिन्दी-भाषा का ज्ञान रखने वालों के हाथ में तन्दुरुस्ती ठीक करने की बातों का पूरा विवरण दे दिया है। इसमें तन्दुरुस्ती क्या है? क्यों बिगड़ती है? और कैसे फिर सुधर सकती है आदि विषयों पर बहुत ही ठीक ढंग से प्रकाश डाला गया है। इसमें एक नवीनता यह है कि इसके बताए तरीकों के पालने में अपना कुछ खर्च नहीं पड़ता। इस अद्भुत और उपयोगी सचित्र पुस्तक का मूल्य २।।) मात्र।

सरल शरीर विज्ञान—लेखक श्रीयुत् जानकी शरण वर्मा। प्राकृतिक चिकित्सा करने और जानने वालों के लिये शरीर-विज्ञान का जानकार होना बहुत ही आवश्यक है। पर इस कठिन विषय पर अबतक कोई सरल पुस्तक नहीं थी जो सर्वसाधारण के काम की हो सके। यह पुस्तक इस कमी की पूर्ति करती है। मूल्य १।।)

फलाहार और फल-चिकित्सा—लेखक नारायण प्रसाद अरोड़ा। मनुष्य का वास्तविक आहार फल है और फल के प्रयोग से रोग भगाना मामूली बात है। अरोड़ा जी ने इस पुस्तक से फलाहार की समस्या हल कर दी है। मूल्य १।।)

आदर्श-भोजन—लेखक: स्व० लक्ष्मी नारायण चौधरी। हमारे लिए उचित भोजन क्या है? हमें क्या खाना चाहिए? परमोत्तम अन्न, फल और तरकारियाँ कौन कौन सी हैं? उनके गुण क्या हैं?—इन सब प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक से लीजिए। मूल्य ।।।)

कब्ज या कोष्ठबद्धता—लेखक: डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह। कब्ज से क्यों परेशान होते हैं? यह रोग भोजन, जल और कसरत के प्रयोग से सदा के लिए भगाया जा सकता है। पर उनकी विधि जाननी चाहिए। वह सभी आपको कब्ज या कोष्ठबद्धता पुस्तक में मिलेंगी। प्रचार के लिए मूल्य केवल ।-) रखा गया है।

मठा उसके गुण तथा उपयोग—लेखक: पं० महेन्द्र नाथ पाण्डेय, आयुर्वेद विशारद। "पांडेयजी ने देश और विदेश की इस विषय पर अनेक पुस्तकें पढ़ने के बाद अनुभव के आधार पर यह पुस्तक लिखी है जो प्रत्येक चिकित्सक और चिकित्सार्थी को ज़रूर पढ़ना चाहिए। मूल्य ।)

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता:—

मैनेजर—स्वास्थ्य ग्रन्थ भंडार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद।

सामाहिक साहित्य में नई लहर

देशदूत

[सचित्र साप्ताहिक]

की एक प्रति शीघ्र मँगाइये । इन्डियन प्रेस, प्रयाग से यह सचित्र साप्ताहिक-पत्र प्रकाशित हो रहा है और साप्ताहिक-साहित्य में एक

नवीन-युग

उपस्थित कर रहा है । इस समय हिन्दी में जितने भी साप्ताहिक प्रकाशित होते हैं, यह उन सब में श्रेष्ठ है। हमारा ध्येय सस्ते दाम में एक आदर्श साप्ताहिक उपस्थित करने का है । यह साप्ताहिक राष्ट्रीय है और कांग्रेस की नीति का समर्थक है । वार्षिक मू० ४), एजेन्टों की सर्वत्र आवश्यकता है ।

Do you want to be a Qualified Naturopath?

Then Apply for the Prospectus of

THE NATIONAL NATUROPATHIC COLLEGE

19, Hewett Road, Lucknow

It is Managed by

THE U. P. NATURE CURE ASSOCIATION

(*Registered under Govt. of India Act XXI of 1860*)

प्राकृतिक चिकित्सा

संकलनकर्ता : प्रिन्सिपल केदारनाथ जी गुप्त, एम० ए०

तन्दुरुस्ती के लिये लोग बेतरह इच्छुक हैं और इधर उधर डाक्टर, वैद्य, हकीम आदि के दरवाजों पर हतोत्साह ठोकरें खाते फिरते हैं। अपना पैसा तथा तन्दुरुस्ती दोनों बरबाद करते हैं। स्वार्थ तथा परमार्थ की सिद्धि के लिए स्वास्थ्य आवश्यक है। प्रिन्सिपल साहब ने अपने संकलन द्वारा सब के लिए तन्दुरुस्ती का सीधा और सरल रास्ता दर्शाया है। इस पुस्तक के चार खंड किये गये हैं। पहले में कुछ साधारण और आवश्यक विषय है। आहार विषयक सब बातों का समावेश दूसरे खंड में है। व्यायाम के विविध प्रकार का समावेश तृतीय परिच्छेद में देकर और कुछ अधिक प्रचलित रोगों की चिकित्सा देकर चतुर्थ खंड समाप्त किया गया है। इस सर्वांगपूर्ण सचित्र पुस्तक का दाम २) मात्र है ।

रोगों को दूर करने

के

सुगम उपाय

नीचे लिखी पुस्तकों में आपको मिलेंगे

नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा)--जर्मनी के डाक्टर लुई कूने की प्रसिद्ध पुस्तक का इस विषय के अनुभवी विद्वान् द्वारा किया गया सम्पूर्ण अनुवाद। अनेक चित्रों सहित। पानी के जरिए इलाज करने का यही सबसे प्रधान ग्रन्थ है। कठिन से कठिन रोग इस पुस्तक में बतलाये हुए उपायों से दूर होते हैं। मूल्य ३।)

उपवास-चिकित्सा—बरनर मैकफेडन की प्रसिद्ध पुस्तक के आधार से यह लिखी गई है और उसके बाद की भी नई खोजें शामिल कर दी गई हैं। इसमें केवल उपवास या लंघनों के द्वारा बड़े बड़े रोग कैसे आराम हो जाते हैं, सो बतलाया है। उपवास करने वालों के अनुभव भी दिये गए हैं। परिवर्धित नए संस्करण का मू० १≈)

प्राकृतिक चिकित्सा—इसमें कटिस्नान, मेहनस्नान, सूर्य की धूप का स्नान, वाष्पस्नान, कोयलों की आँच से पसीना लेना, शुद्ध जल को ज्यादा पीना, व्यायाम करना, शुद्ध वायु में श्वासोच्छ्वास लेना आदि क्रियाओं से रोगों को दूर करने की विधि लिखी है और रोग क्यों होते हैं, इसे विस्तार पूर्वक समझाया है। मू० ॥≈)

विद्यार्थियों का सच्चा मित्र—यह स्वास्थ्यरक्षा की पुस्तक विद्यार्थियों को लक्ष्य करके बड़े सुन्दर ढंग से लिखी गई है। इसमें भी प्राकृतिक उपाय ही बतलाये हैं। मूल्य ॥।≡)

संजीवनी विद्या—विवाहित स्त्री-पुरुषों को स्वस्थ रहने के लिए ब्रह्मचर्य की शिक्षा। मू० ॥।)

दुग्ध-चिकित्सा मू० ≈) **योग-चिकित्सा मू० ≡)**

नोट--हमारे प्रकाशक का विस्तृत सूचीपत्र मँगाइए। हमारे यहाँ हिन्दी का श्रेष्ठ साहित्य हमेशा विक्री के लिए तैयार रहता है।

संचालक—**हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई**

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए० ..	२॥)
(२) प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदारनाथ गुप्त०, एम० ए० ..	२)
(३) मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले० श्रीयुत महेन्द्रनाथ पाण्डेय ..	।)
(४) दूध ही अमृत है : ले० हनुमान प्रसाद गोयल ..	१॥)
(५) स्वास्थ्य के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय ..	=)॥
(६) शक्तिदर्शन : ले० शंकरलाल तिवारी ..	॥)
(७) आनन्दमय जीवन का ह्रास और उसके कारण ..	।=)
(८) क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ..	।)
(९) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द ..	।॥)
(१०) आदर्श-भोजन : ले० एल० एन० चौधरी ..	।॥)
(११) स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर सुकुल ..	१)
(१२) कब्ज या कोष्ठबद्धता : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ..	।-)
(१३) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए० ..	१)
(१४) फलाहार फल-चिकित्सा : ले० नारायणप्रसाद अरोड़ा ..	१॥)
(१५) स्वास्थ्य-रक्षा : ले० गांधीजी ..	।=)
(१६) स्वास्थ्य-साधन : ले० स्व० रामदास गौड़ ..	३)
(१७) आकृति-निदान : ले० लूईकूने ..	१)
(१८) बच्चों की रक्षा : ले० लूईकूने ..	।-)
(१९) मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लुईकूने ..	।)
(२०) जल-चिकित्सा (तीन भाग) : ले० राखालदास ..	३॥)

	Rs.	a.
(२१) **Nature Cure** by H. Lindlahar, M.D. ..	6	0
(२२) **Practical Nature Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D. ..	4	0
(२३) **Fasting Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D. ..	0	3
(२४) **Pranayama** by Dr. K. L. Sharma, N.D. ..	0	2
(२५) **Drugless Healing** by Dr. L. Kamesvaram, M.A., N.D. ..	0	6
(२६) **The Nature Cure of Eye defects** by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D. ..	0	8
(२७) **Your Diet in Health and Disease** by Harry Benjamin ..	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

Reg. No. A-172

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले
रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलता-पूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, कब्ज़, संग्रहणी, प्लुरिसी, दमा, बवासीर, निद्राभाव, आमाशय का ज़ख्म, आँतों की खराबी, सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arteriosclerosis), रक्त चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), उपान्त्रदाह (Appendicitis), जहरबाद (Carbuncle), गठिया, पित्ती उछलना, पेचिश, सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह (बहुमूत्र), मोटापा, दुबलापन, यक्ष्मा आरम्भ काल में (Consumption, First Stage) कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर ग्रांड-ट्रंक-रोड पर एक आठ एकड़ के सुन्दर उपवन में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने की स्वयं प्रेरणा होती है।

नियमावली पांच पैसे का डाक-टिकट भेजकर आज ही मँगाइए।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

PRINTED BY [illegible] SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY SRI. BALESHWAR PRASAD SINHA, 87 HIMMATGANJ, ALLAHABAD

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

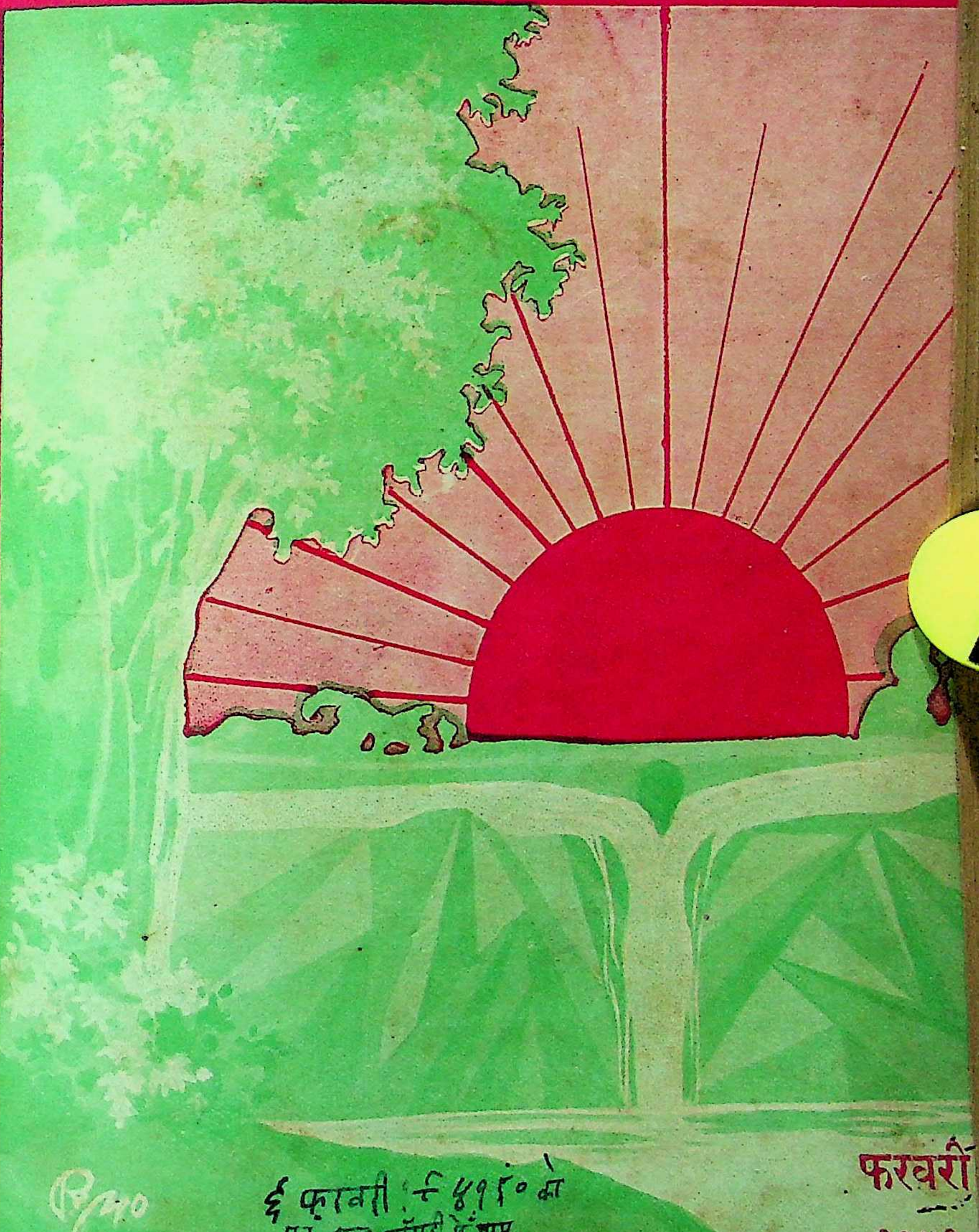

६ फरवरी ई० ४१९५० को
गुरुकुल काँगड़ी में प्राप्त.

फरवरी
१९४१

संपादक :: बालेश्वरप्रसाद सिंह :: विट्ठलदास मोदी

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है ।

१—एक छटाँक शहद पानी में मिलाकर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है ।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है ।
३—शरीर में ताकत आती है ।
४—दूध में मिलाकर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुरुषत्व बढ़ता है ।
५—शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है ।
६—यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है ।
७—शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है ।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं । पूरे लाभ के लिये **जीवन-मधु** का उपयोग कीजिए । इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है ।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=) एक रुपया दो आना ।

मिलने का पता—-

मैनेजर—**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह**

८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

दुग्ध-चिकित्सा रोगों को धो डालती है

दूध शरीर को तो पुष्ट करता ही है रग-रग, नस-नस को धोकर शरीर को निर्मल बना देता है । रक्त शुद्ध हो जाता है और रोग इसके कल्प से चले जाते हैं । रोगों में मृगी से मानसिक रोगों को छोड़ कर इस कल्प से सभी रोग जाते हैं । पाचन-क्रिया की गड़बड़ी से पैदा होने वाले हर प्रकार के रोगों के लिए तो यह कल्प रामवाण है, पर दूध का कल्प दवा के सहारे नहीं प्रकृति के सहारे करना चाहिए । इसकी सारी व्यवस्था स्वास्थ्य गृह में की गई है । नियमावली के लिए पांच पैसे का डाक टिकट आज ही भेजिए ।

मैनेजर——

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

फरवरी
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क २

इस अङ्क में

विषय लेख	पेज
१. अपने विचार—मातृत्व और यौवन ..	११८
२. प्राकृतिक चिकित्सा और जलवायु—श्रीयुत वंशीधर शर्मा	११९
३. भोजन बनाम ज्वर—डा० के० एल० शर्मा	१२१
४. मेरे पाँच वर्ष के बच्चे का यकृत और प्लीहा रोग कैसे गया ?—श्रीयुत महेन्द्र नाथ पाण्डेय, आयुर्वेद-विशारद ..	१२५
५. चाय का विनाशक प्रचार—श्रीयुत कृष्ण दत्त भट्ट स० संपादक 'आज', काशी ...	१२७
६. आधुनिक युग और महिला-स्वास्थ्य—श्रीयुत देववौहरा आचार्य—योगाश्रम, लायल पुर	१३१
७. शरीर का वजन कितना होना चाहिए—श्रीयुत विश्वनाथप्रसाद, एम० एस० ..	१३४
८. बालू की महिमा—श्रीयुत आनन्दवर्धन ..	१३६
९. चिट्ठी-पत्री	१३९
१०. प्रश्नोत्तर	१४१

अगले अंक

में

क्या रहेगा ?

१ बापू और मिट्टी
श्रीयुत प्रभूदयाल विद्यार्थी, वर्धा

२ उपवास क्यों ?
श्रीयुत ओम प्रकाश

३ ध्यान के लिये दो आसन
श्रीयुत ब्रजभूषण मिश्र, एम० ए०

४ आलू
प्रो० भवानी प्रसाद प्राकृतिक स्वास्थ्य-शास्त्रोपाध्याय

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

अपने विचार

मातृत्व और यौवन

आज यह साधारण विश्वास हो रहा है कि बच्चा पैदा होने पर स्त्री का स्वास्थ्य खराब हो ही जाता है। कई लोग तो गर्भावस्था को बुढ़ापे की प्रस्तावना समझते हैं और उनकी समझ से बच्चेवाली स्त्री अपने शारीरिक गठन को कदापि कायम नहीं रख सकती। ये विचार निराधार न होकर नित्य मिलनेवाले प्रमाणों पर अवलंबित हैं। रोज दिखाई देता है कि आज की स्वस्थ सबल युवती एक ही बच्चे की माता होने पर कल कुछ दूसरी ही हो जाती है। उसके कपोलों की लाली का स्थान पीलापन ले लेता है और ताजगी सुस्ती में बदल जाती है। और जबतक गर्भवती और जच्चा के बारे में प्रचलित नियमों का आधार खड़ा रहेगा इन खेद जनक एवं करुणोत्पादक दृश्यों के बदले जाने की संभावना नहीं है।

जिन घरों में स्त्रियाँ सबेरे से शाम तक कुछ करती रहती हैं दशा कुछ अच्छी है। श्रम से ही जीवन है—यह नियम जितना साधारण जन के लिए उपयोगी है उससे कहीं अधिक गर्भवती के लिए। यदि केवल इस एक ही नियम का पालन किया जाय तो गर्भावस्था एवं प्रसव समस्या न होकर एक साधारण प्रश्न भर रह जाय। गाँवों में रहनेवाली बहनों के जीवन पर दृष्टिपात किया जाय तो यह बात स्पष्ट हो जायगी। शहर की स्त्रियों को उनका जीवन सादा एवं सरल होने पर भी उनका स्वास्थ्य उन्हें ईर्षाजनक प्रतीत होगा।

गर्भवती स्त्री को चाहिए कि वह उन सभी दैनिक कार्यों को करती रहे जो वह गर्भावस्था के पूर्व करती थी। यदि किसी को बहुत अधिक श्रमसाध्य कार्यों के करने की आदत रही हो तो अवश्य ही उसे उनके बदले हलके काम चुनने चाहिए। पर सभी काम बंद करना तो बड़ी भारी गलती होगी।

क्या आप से कभी दस बारह बच्चों की माता को तीन चार बच्चों की माता और चार पाँच बच्चेवाली को कुमारी समझने की गलती नहीं हुई है? यदि ऐसे सुन्दर स्वास्थ्य वाली स्त्री के स्वास्थ्य के रहस्य का पता लगावें तो एक ही बात मालूम होगी—वह है श्रम। इससे यह सिद्ध होता है कि यदि शरीर सशक्त एवं मांसपेशियाँ सुदृढ़ बनाई जायँ तो प्रसव कभी सौंदर्य-संहारक न होगा। हमारा तो विश्वास है कि यदि समुचित ध्यान दिया जाय तो मातृत्व सौंदर्य रक्षा एवं सौंदर्य संवर्धन में सहायक हो सकता है। बच्चा होने के पहले और बाद में भी यदि ऐसा व्यायाम किया जाय जिससे अंग प्रत्यंग की कसरत हो जाय तो स्त्री का शरीर कभी ढीला और बेडौल न होगा—गठन खराब न होगा, वरन् उन बे-बच्चेवाली गृहणियों से बहुत अच्छा होगा जो कसरत नहीं करतीं।

विदेशों में स्त्रियाँ गर्भावस्था में अपना दैनिक कार्य करती रहती हैं। मिल में काम करनेवाली स्त्रियाँ कुछ ही हफ्ते के लिए अपना काम बन्द करती हैं। वहाँ के स्वास्थ्य के विशेषज्ञ इस विषय पर विचार करते रहते हैं और उचित सलाह देते रहते हैं। हमारे यहाँ इसकी बड़ी कमी है। राष्ट्र के नव-निर्माण की कोई भी योजना सफल नहीं हो सकती जिसमें देश की स्त्रियों को गर्भावस्था के पहले और बाद में स्वास्थ्य ठीक रखने के उचित विचारों के प्रचुर प्रचार को स्थान न हो।

× × ×

श्रीयुत आनन्दवर्धनजी को बधाई

गत वर्ष 'प्राकृतिक चिकित्सा गरीबों के लिए है अथवा नहीं' जो विवाद जीवन-सखा में चला था उसमें आनन्दवर्धन जी ने 'प्राकृतिक चिकित्सा गाँवों के लिए है' का समर्थन करते हुए जो लेख लिखा था उसे हमारे पाठकों ने बहुत पसन्द किया था और अनेक प्रशंसात्मक

पत्र लिखे थे। जनवरी '४१ के अंक में आपके लेख 'प्रकृति बनाम दवा' को दिल्ली निवासी श्री लक्ष्मी नारायण जी गाडोदिया ने बहुत पसन्द किया है और पुरस्कार स्वरूप आनन्दवर्धनजी के लिए, ५० रु० का चेक भेजते हुए जो पत्र हमें लिखा है उसकी नकल हम यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं।

लक्ष्मी नारायण गाडोदिया	टेलीफून नं० ५२३२
तार का पता—	चाँदनी चौक, कूँचा नटवाँ
'Gadodia, Delhi'	दिल्ली २०.१.४१

श्रीमान् संपादकजी

जीवन-सखा, प्रयाग

आपके जनवरी के विशेषांक में श्रीयुत आनन्दवर्धनजी का लेख 'प्रकृति बनाम दवा' बहुत ही सुन्दर है और इसके लिए पुरस्कार स्वरूप एक चेक नं० १६८८४४ पचास रुपये का इलाहाबाद बैंक कानपुर ऊपर भेजता हूँ। पहुँच लिखें।

भवदीय

(हस्ता०) ल० ना० गाडोदिया

आनन्दवर्धनजी को इस पुरस्कार के प्राप्त करने पर हम सहर्ष बधाई देते हैं और गाडोदियाजी को यह उत्साहवर्धक पुरस्कार प्रदान करने पर अनेक धन्यवाद।

गाडोदियाजी को पुनः धन्यवाद

उपरोक्त लाइनें लिखने के बाद श्रीमान् गाडोदिया जी से हमें सौ रुपये का एक चेक और प्राप्त हुआ है कि इस धन के द्वारा उन सार्वजनिक पुस्तकालयों की सहायता की जाय जो 'जीवनसखा' मँगाना चाहते हैं। गाडोदिया जी इस सहृदयता के लिए हमारे और उन सब सार्वजनिक पुस्तकालयों के धन्यवाद के पात्र हैं जिनके लिए जीवन-सखा अब मँगाना सभव हो जायगा। गाडोदियाजी की इस सहायता से पचास सार्वजनिक पुस्तकालयों को जीवन-सखा एक रुपये में साल भर के लिए देना निश्चित किया गया है। पाठकों से हमारी प्रार्थना है कि वे यह सूचना अपने यहाँ के सार्वजनिक पुस्तकालयों तक पहुँचानें की कृपा करें।

प्राकृतिक-चिकित्सा और जलवायु

श्रीयुत वंशीधर शर्मा

शर्माजी जयपुर रियासत के एक गाँव में बैठ कर उत्पादक-श्रम में लगे हुए हैं। प्राकृतिक चिकित्सा से आपका सहज प्रेम है। आपसे हमने जीवन-सखा के लिए कुछ लिख भेजने की प्रार्थना की थी पर समयाभाव के कारण आप लेख तो न लिख सके किन्तु हमारे पत्र का जो उत्तर आपने दिया है उसका कुछ अंश हम यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। आपके इस पत्र द्वारा प्राकृतिक-चिकित्सा और जलवायु का जो सम्बन्ध है उस पर स्पष्ट प्रकाश पड़ता है।—सं०

आपने जीवन-सखा के लिए कुछ अनुभव मुझे लिखने की आज्ञा दी है परन्तु शिक्षित जनता को देने के लिए मेरे पास है क्या? हम सब समझदार ही हैं और जितनी जितनी समझदारी बढ़ रही है उतनी ही रोगों की संख्या और विभिन्न आरोग्यता प्राप्त करने की प्रणालियाँ चालू होती जा रही हैं। हमारे समूचे प्रयत्नों की पहुँच मूल कारण तक नहीं हो रही है। मेरे दृष्टिकोण से तो आधुनिक संसार को यह देन—अर्थात् भयंकर रोगों की प्राप्ति—शहरों के कारण हुई है। शहरों का अप्राकृतिक जीवन—जनसमूह के एकत्रित निवास के

कारण उत्पन्न हुई दूषित वायु—शुद्ध जल, वायु, भोजन का अभाव, खाद्य सामग्री का मिश्रण—रोगों के मूल कारण प्रमाणित हुए हैं। अवश्य इससे मनुष्य के विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान की वृद्धि हुई है। मनुष्य शरीर के बाहर और भीतर की प्रत्येक क्रियाओं का शरीर-रचना शास्त्रज्ञों ने सुन्दर विश्लेषण किया है। साथ ही खाद्य सामग्री सम्बन्धी विज्ञान भी आज अधूरा है—यह नहीं कहा जा सकता—और इसमें उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। अस्तु।

परन्तु आजकल मैं जिस प्रदेश और परिस्थिति में निवास कर रहा हूँ—वह तथा आसपास का भाग भी दीर्घ काल तक रहने वाले संक्रामक रोगों से मुक्त-सा है। शहरी जीव भयंकर रोगों को लेकर कभी कभी आ टपकते हैं। लूईकूने की बाथ-पद्धति, शुद्ध हवा एवं फावड़े के व्यायाम ने उनके रोग दूर करने में आशातीत सफलता प्राप्त की है। चूँकि फलों का—स्थानीय फलों का तो प्रायः—यहाँ अभाव ही है—मैंने गेहूँ के मोटे आटे और हरे पत्तों के साथ—कच्चे और पक्के दोनों तरह के प्रयोग करके देखे हैं। गरीब से गरीब व्यक्ति को भी यह सुगम है—यह सर्वांश में लाभदायक सिद्ध हुआ है।

लूईकूने की पद्धति से जिन रोगियों के शरीर से दूषित पदार्थ निकलना प्रारम्भ हो गया था, उन्हें पास ही कस्बे में भेज देने से उनके शरीर से रोग निकलना बन्द हो गया। परन्तु ज्योंही उन्होंने शुद्ध हवा में प्रवेश किया उनकी हालत पूर्ववत् हो गई, अर्थात् दूषित पदार्थ फिर निकलने लगा। इससे मैं स्वभावतः इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि शुद्ध हवा और पानी का मेल ही ठीक बैठता है। बिना शुद्ध हवा के पानी लाभ करता है अवश्य, पर उतनी मात्रा में नहीं जितना शुद्ध हवा के सहारे।

मेरे पड़ोस में खेती करने वालों की बस्ती है; उनमें से जो रोगी आये, उनके रोगों का मूल कारण उनका अप्राकृतिक भोजन था। उसे ज्योंही ठीक किया गया और बाथ की सहायता ली गई, तुरन्त सफलता मिली। उनकी देखादेखी शहरी लोग भी आये। पर जिनकी रग रग में दूषित पदार्थ समाया हुआ है वे उतनी शीघ्रता से स्वास्थ्य कैसे सुधार सकते थे? उनमें प्रायः स्थिरता का अभाव मैंने पाया। लाभ उन्हें भी हुआ पर प्राकृतिक इलाज तो प्राकृतिक ही है; जो शरीर की जीवनशक्ति के आश्रित है। यदि रोग जोर पर है और जीवन शक्ति उसे निकालने में पूरा कार्य नहीं करती तो यह जीवन शक्ति का स्वयं निर्णय करने का अपना विषय है, —रोग बाहर निकलने की हालत में अथवा जिसे हम विजातीय द्रव्य (foreign matter) कहते हैं उस दूषित पदार्थ को जीवनशक्ति एक साथ निकाल दे अथवा थोड़ा थोड़ा करके। हम अपने उपचारों से जीवनशक्ति को बढ़ाने में सहायता ही तो करते रहते हैं, जिससे वह शक्तिशाली हो और रोग को शरीर में न रहने के लिए बाध्य कर सके। एक बार स्वास्थ्य लाभ कर लेने के बाद यह आवश्यक है कि जीवनशक्ति पर आघात करने वाले कार्यों से हम उसे बचावें अर्थात् हम अपना जीवन संयमित रक्खें। मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि लूईकूने की विधि सात्विक भोजन के साथ और शुद्ध हवा अर्थात् शहर से बाहर किसी खेत या बगीचे में निवास, ईश्वर की एक ऐसी स्वाभाविक देन है जो भयंकर से भयंकर रोगी को, जिसमें जीवनशक्ति का स्रोत बन्द नहीं हो गया है, तात्कालिक उत्पन्न, जैसे हैजा इत्यादि तथा दीर्घ काल से भोगी जाने वाली पीड़ा, जैसे स्वास, क्षय आदि से, छुटकारा दिला सकती है।

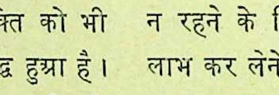

भोजन बनाम ज्वर

डाक्टर के० एल० शर्मा

एक प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सक का कहना है कि यदि चिकित्सा-काल में रोगी को बुखार आ जाय तो कोई भी जीर्ण रोग अच्छा किया जा सकता है। इस कथन में सत्य का अंश बहुत अधिक है क्योंकि ज्वर शरीर का अपने को शुद्ध करने का बहुत ही शक्ति-पूर्ण प्रयास है और इस बात का सूचक है कि रोगी में जीवन शक्ति का अच्छा संचार हो गया है। विद्वान् एवं अनुभवी लेखक ने ज्वर पर इस लेख में उसके प्रकार आदि बताकर उसकी चिकित्सा का उचित ढंग बताया है।—सं०

लेखक

रोगों में तीव्र रोग ही ऐसे हैं जिन्हें दूर करना सबसे अधिक आसान है। वे अपने आप अच्छे हो जाते हैं क्योंकि वे खुद शरीर की कुछ उन खराबियों को दूर करने वाले होते हैं जिन्हें वास्तविक रोग कहा जा सकता है। इसलिए तीव्र रोगों को कोई खास रोग समझना गलत होगा—इन्हें अस्वस्थता ही कहा जा सकता है।

बुखार एक तीव्र बीमारी है। इसलिए जो लोग बुखार के असली रूप को जानते हैं, उनके लिए बुखार को दूर कर देना बहुत ही आसान बात है। इसलिए एक होशियार चिकित्सक इस बात की कभी डींग न मारेगा कि उसने बुखार अच्छा कर दिया।

किसी तीव्र रोग को दूर करने के दो तरीके हैं। जो लोग इसे वास्तविक रोग समझते हैं—जिनका यह ख्याल है कि यह एक दुश्मन है जिसे निकाल बाहर करना अथवा नष्ट कर देना चाहिए—वे जहरीली दवाएँ खिला कर इसे दूर करने की कोशिश करते हैं और दूसरी ओर रोगी को पौष्टिक भोजन देकर उसकी ताकत भी कायम रखना चाहते हैं और वे रोगी को भरसक कई बार भोजन करने की सलाह देते हैं। लेकिन जो लोग यह समझते हैं कि यह बीमारी खुद ही एक जीवन-दायक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा हम खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करते हैं, वे बीमारी को दबाना नहीं चाहते बल्कि वे उसे प्रकृति के नियमों पर ही छोड़ देते हैं। हाँ, वे ऐसी अवस्था अवश्य उत्पन्न कर देते हैं जिसके अन्दर रोगी का प्राकृतोपचार होता रहे और इसके लिए ` रोगी की उन गलतियों को सुधार देना चाहते हैं जिसके कारण उसे बीमार होना पड़ा। इन गलतियों में सबसे मुख्य गलती बिना भूख के भी भोजन करने की गलती शामिल है। इस गलती को सुधारने के लिए उपवास की विधि बताई गई है। उपवास और जल—केवल यही दो दवाएँ हैं जिन्हें बुखार की हालत में प्रकृति चाहती है।

ऊपर जो उपचार के दो तरीके बताए गए हैं उनमें पहला तरीका रोग को दबा देने का है और दूसरा है रोग

का वास्तविक उपचार। बिना किसी तरह की हिचकिचाहट के यह कहा जा सकता है कि ऊपर बताए गए पहले तरीके से वही चिकित्सक काम लेते हैं जो दवाओं में विश्वास रखते हैं; तथा वे लोग हैं जो अपने को होमियोपैथ बताते हैं। चूँकि होमियोपैथ बहुत कम मात्रा में 'समान' औषधि देते हैं, इसलिए मुमकिन है कि वे इस बात का विरोध करें कि वे, रोग को दवा कर अच्छा कर देने के तरीके से काम लेते हैं। लेकिन रोगियों को भोजन देने के प्रश्न पर वे अन्य डाक्टरों के विचारों से मतभेद नहीं रखते, इसलिए होमियोपैथ भी तीव्र रोगों को दवा देते हैं। यह एक सच्ची बात है कि दबाया गया बुखार ही आगे चलकर शरीर में उत्पन्न होने वाले सभी सम्भावित भयानक रोगों का मूल कारण होता है। यदि सभी प्रकार के बुखारों का प्राकृतिक ढंग से इलाज किया जाय—अगर किसी भी बुखार को दवा देने की कोशिश न की जाय तो मनुष्य को सताने के लिए इतने अधिक रोग जो दिखाई पड़ते हैं उनकी संख्या इतनी कम हो जायगी कि डाक्टरों को कोई पूछने वाला न रह जायगा। इसलिए अन्य रोगों की अपेक्षा बुखार के निदान और उपचार का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना बड़ा आवश्यक है।

इलाहाबाद के एक धनी मानी व्यक्ति काफी लम्बे अरसे से बुखार से परेशान हो रहे थे। यह बुखार वास्तव में उन्हें बिना भूख के भोजन करने के कारण हुआ था जो पुराने कब्ज के रूप में बदल गया था। उन्होंने अपना इलाज एक एलोपैथिक डाक्टर से कराया। डाक्टर उन्हें कुनैन देता और साथ ही उन्हें भोजन करने की भी सलाह देता। उन्हें यह महसूस हुआ कि कुनैन उन्हें नुकसान कर रहा है, इसलिए उन्होंने उस डाक्टर को विदा कर दिया और एक होमियोपैथ को बुलवाया। उसने बुखार को जल्द अच्छा कर दिया। लेकिन बुखार चले जाने पर उस होमियोपैथ ने इस बात पर बहुत अधिक जोर दिया कि रोगी को जहाँ तक हो सके खूब पौष्टिक भोजन दिया जाय ताकि वे तगड़े हो जायँ। उन्होंने डाक्टर का कहना मान लिया, लगे पौष्टिक भोजन करने। लेकिन उन्हें फिर बुखार आने लगा। यही सिलसिला बहुत दिनों चलता रहा। अन्त में उन्होंने उस होमियोपैथ को भी अन्तिम नमस्कार किया।

मैंने उनकी हालत सुनी और तब उन्हें बताया कि बुखार के फिर-फिर लौट आने का कारण क्या है? इसका कारण उनका भोजन ही था। इसलिए मैंने उनसे कहा कि आपको न केवल बुखार के समय तक, बल्कि उसके बाद भी जब तक आप सचमुच भोजन करने के योग्य नहीं हो जाते तब तक उपवास करने के लिए तैयार होना पड़ेगा। पूर्ण उपवास करने से उनका बुखार चला गया, लेकिन उसके बाद भी कुछ दिनों तक उपवास चलता रहा। कुछ दिनों तक उन्हें बहुत ही हलका भोजन, फलों का रस, दिया गया। उनका आहार इस सिद्धान्त पर निर्धारित किया गया कि भोजन की मात्रा बढ़ाई जाने के पहले भोजन पचाने की शक्ति में वृद्धि साफ तौर से जाहिर हो जाय। इस प्रकार बुखार चले जाने के बाद एक महीने तक रोगी को उपवास और रसाहार पर रक्खा गया। और तब उसके बाद रोगी को अपनी इच्छा के मुताबिक भोजन करने की अनुमति दी गई।

अजमेर में मैं एक रोगिणी को देखने के लिए बुलाया गया जो १५ महीने से चारपाई पर पड़ी थी। उसे बुखार आता था जिसका इलाज एलोपैथी डाक्टरों ने किया था। नतीजा इसका यह हुआ कि उसके शरीर में हाड़ और चाम ही रह गया था और वह मर रही थी। केवल प्रयोग के लिए उसे प्राकृतिक चिकित्सा कराने की लोगों ने सलाह दी थी, क्योंकि उसे बचने की कोई आशा न रह गई थी। प्राकृतिक चिकित्सा शुरू हुई। हलका धूप-स्नान, गीली मिट्टी की पट्टी, पैरों को गरम जल से धोना—इस क्रिया से आरम्भ में रोगिणी में नया जीवन संचार होते देखा गया। लेकिन उसमें कोई वास्तविक सुधार न हुआ, क्योंकि भयानक एलोपैथिक दवाइयों के सेवन से उसके शरीर के प्राणात्मक अवयव विनष्ट हो गए थे और यह साफ जाहिर था कि वह स्त्री कुछ ही हफ्तों में मर जायगी।

/ Vital organs

इसी तरह की एक दूसरी घटना मेरे जन्म-स्थान में ही देखने को मिली जब कि रोगी को लगभग ९ महीने के अन्दर मर जाना पड़ा। उसका इलाज एलोपैथी चिकित्सा-प्रणाली के अनुसार हुआ था। इस रोगी के सम्बन्ध में ऐसी बहुत सी बातें थीं जिनके आधार पर यह कहा जा सकता था कि रोगी की मृत्यु न होनी चाहिए थी। वह शरीर से काफी हृष्ट-पुष्ट और तन्दुरुस्त तथा सुशिक्षित और सभ्य श्रेणी का व्यक्ति था। वह अधेड़ अवस्था का और बहुत ही चरित्रवान था। उसमें एक भी दुर्व्यसन नहीं था जिसके कारण उसकी यह असामयिक मौत होने का लेशमात्र सन्देह किया जा सके। उसका सिर्फ यह कसूर था कि वह ठीक ठीक यह न समझ सका था कि एलोपैथी चिकित्सा कितना भयानक खतरा पैदा कर सकती है। उसे पहले सिर्फ बुखार आता था, लेकिन डाक्टरों की दवा और भोजन जारी रखने से वह बुखार घातक जलोदर के रूप में बदल गया। जब कि वह मृत्यु-शय्या पर पड़ा हुआ था उसने मेरे सामने यह स्वीकार किया कि उसने जो प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली के अनुसार इलाज नहीं कराया इसका उसे भारी दुःख है। उसको यह यकीन हो गया था कि एलोपैथिक इलाज के ही कारण उसकी यह दशा हुई।

बहुत से रोगों में रोग को दवा देने वाली डाक्टरी दवाओं के सेवन से जाहिरा फायदा हो जाता है। और यही कारण है कि लोग अब भी एलोपैथी डाक्टरों के पास जाते हैं। लेकिन असली उपचार-प्रणाली का अन्दाज इन असाधारण मरीजों की दशाओं से लगता है। एलोपैथी चिकित्सा-प्रणाली के अनुसार चिकित्सा किए जाने वाले सभी रोगियों के प्राणधारक अवयवों पर आघात पहुँचता है। कुछ लोगों के सम्बन्ध में यह आघात प्राण ले लेने वाला होता है और कुछ रोगियों पर इसका उतना गहरा असर नहीं पड़ता—बस इतना ही अन्तर समझिए। जिन लोगों के प्राणधारक अवयवों पर घातक प्रभाव नहीं पड़ता उनकी तन्दुरुस्ती में कोई खास किस्म की खराबी तो आ ही जाती है जो आगे चलकर दूसरे तरह के रोगों का कारण बनती है और सम्भवतः आगे चलकर इस तरह के लोगों को कोई न कोई संक्रामक रोग ही धर दबाता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी किस्म के बुखार में दवा न देना और उपवास कराना यही दो प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के अनुसार आवश्यक नियम हैं। क्षय रोग के बुखारों में भी इसी नियम के अनुसार उपचार करना चाहिए। जहाँ पर यह देखा जाय कि रोगी के लिए पूर्ण उपवास करना उपयुक्त नहीं है उसके लिए इतना हलका भोजन देना होगा कि जिसके कारण तापमान बढ़ने की सम्भावना न की जा सके। अगर शरीर का तापमान पहले से आध डिगरी भी अधिक बढ़ जाय तो उससे यह समझना चाहिए कि रोगी को आवश्यकता से अधिक भोजन दिया गया है और उसे कम कर दिए जाने की आवश्यकता है। इस समय (अक्टूबर सन् १९४०) में जिस रोगी का उपचार कर रहा हूँ उसे पहले एक वक्त पानी मिला फलों का रस और दूसरे वक्त कच्चा दूध दिया गया लेकिन भोजन के बाद उसका बुखार हर बार तेज हो जाया करता। लेकिन उसे दूध देना बन्द कर देने तथा उसके आहार में कमी कर दिए जाने पर अब उसे बुखार नहीं आता।

अब इस सम्बन्ध में एक और बात पर भी विचार कर लेना चाहिए। वह यह कि अँतरा या पारी वाले बुखार की हालत में इस नियम को किस प्रकार से बरता जाय? क्या इसका मतलब यह है कि इस तरह के रोगी को बुखार न रहने की हालत में भोजन दिया जा सकता है? बहुत से लोग—यहाँ तक कि प्राकृतिक-चिकित्सक लोग भी—यह समझते हैं कि जब रोगी को बुखार नहीं मालूम होता तो उसे भोजन कराया जा सकता है। लेकिन यह एक भयानक गलती है। अभी बुखार आने की सम्भावना की जाती है, जिसका मतलब यह है कि बुखार अच्छा नहीं हुआ है बल्कि वह केवल छिप गया है, ऐसी हालत में रोगी को भोजन कराने का मतलब बुखार को और भयानक बनाना होगा। ऐसा करने

से बुखार आता ही रहेगा और अन्त में रोगी की तन्दुरुस्ती नष्ट हो जायगी। इसके बाद सम्भव है कि रोगी मर जाय या उसे किसी दूसरे संक्रामक रोग का शिकार होना पड़े।

पारी वाले बुखार को नष्ट करने का सबसे अचूक उपाय यह है कि रोगी तब तक पूर्ण उपवास करे जब तक कि बुखार अन्तिम रूप से न चला जाय और उसे यह विश्वास न हो जाय कि अब उसे फिर बुखार होने की कोई सम्भावना नहीं है।

मैं अपने गाँव में जिस पारी वाले बुखार के रोगी का उपचार कर रहा था उसे हर तीसरे दिन किसी खास वक्त बुखार हो जाया करता। रोगी हृष्टपुष्ट और तन्दुरुस्त नहीं था इसलिए उसकी जिन्दगी के लिए भी कुछ खतरा जान पड़ने लगा था। पहले इस आशा से, कि सम्भवतः बुखार आना अधिक दिन तक न जारी रहे, उसे बुखार न आने के दिन फलों का रस या नारियल का हलका पानी दिए जाने की अनुमति दे दी गई। लेकिन इसके बाद जल्द ही मालूम हुआ कि कम से कम कुछ हफ़्तों तक बुखार आते रहने की सम्भावना है। तब रोगी को पूर्ण उपवास कराया गया। थोड़ा सा नीबू का रस मिलाकर गरम पानी, ठंढा पानी उसे बिना किसी हिचकिचाहट के और बार बार दिया जाने लगा। इससे यह हुआ कि बुखार आने के वक्त में अन्तर पड़ गया। पहले की अपेक्षा अब बुखार जब होता तो वह जल्द उतर भी जाता। यही नहीं बल्कि धीरे धीरे बुखार का समय पहले से कम होता चला गया। इस प्रकार अब दो हफ़्ते के बाद ही रोगी का बुखार बिलकुल जाता रहा और प्राकृतोपचार आरम्भ होने के बाद उसे बिलकुल चंगा होने में कुल तीन हफ्ते ही लगे। अगर उसका बुखार अधिक समय तक जारी रहता तो उसका जीवन खतरे में पड़ गया होता। इस तरह की हालतों में लगातार उपवास कराने का मतलब यह है कि एक दिन का अन्तर देकर आने वाले बुखार के इस क्रम को तोड़ दिया जाय। इन बुखारों का अन्तर देकर आना ही खतरनाक होता है। मतलब यह कि अगर बुखार के इस क्रम को तोड़ न दिया जाय, तो उसका सिलसिला तब तक चलता रहेगा जब तक कि रोगी की तन्दुरुस्ती अन्तिम रूप से नष्ट नहीं हो जाती। इस खतरनाक हालत से बचने का उपाय केवल यही है कि बीमारी के समय में लगातार पूर्ण उपवास करके बुखार आने के क्रम को तोड़ दिया जाय और बुखार उतर जाने के कम से कम दो दिन बाद तक भी उपवास जारी रक्खा जाय। उसके बाद अपना आहार इस तरह का रक्खा जाय जिससे फिर बुखार होने की कोई सम्भावना न रहे। इस प्रकार हम यह समझ सकते हैं कि हमारे यहाँ जो यह कहा गया है कि 'लंघनं परमौषधम्' वह कितना अधिक सत्य है।

✠

कहा जा सकता है कि 'भूल-सुधार करने के लिए कभी भी बहुत देर नहीं होती' पर साथ यह मसल भी मशहूर है 'आखिरी वक्त में क्या खाक मुसलमाँ होंगे'। इसी लिए स्वास्थ्यार्थी को सदैव सावधान रहना चाहिए। और स्वास्थ्य सुधार का सबसे पहला अवसर ग्रहण कर उसमें संलग्न हो जाना चाहिए। यह तो हुई रोगियों और तन्दुरुस्ती चाहने वालों की बात। चिकित्सकों का तो सिद्धान्त होना चाहिए 'जब तक साँस तब तक आस'।

रोग प्रकृति की ओर से बहुमूल्य सहायता की आयोजना है। उसका उद्देश्य शरीर को सुरक्षित रखना है। वैसे तो रोग होना ही नहीं चाहिए लेकिन जब तक मनुष्य मनुष्य है रोग होगा ही। रोग कल्याणकारी है, यह इसीसे सिद्ध होता है कि यदि समय समय पर शरीर रोग द्वारा निर्विकार और परिष्कृत न होता रहता तो मानव-जाति कभी की लुप्त हो जाती।

इसीसे रोग को अप्राकृतिक औषधि व्यवहार और भोजन पद्धति से दबाना न चाहिए।

मेरे पाँच वर्ष के बच्चे का यकृत और प्लीहा रोग कैसे गया ?

प्राकृतिक चिकित्सा को चमत्कार कहा जाय तो गलत न होगा। इसका जादूसा असर मनको मोह लेता है, वरवस मन में एक ऐसी प्रेरणा करता है जिससे उसका गुणगान करने को जी लालायित हो उठता है।

इस चिकित्सा ने मेरा मन कैसे मोहा वह इस घटना से प्रतीत होगा। ५ सितम्बर सन् १९४० का दिन था। दोपहर को आदमी दफ्तर में पहुँचा। उसने वताया छोटे बच्चे की तवीयत ज्यादा खराब है। घर गया देखा तो १०५ डिग्री बगल का टेंपरेचर। पड़ोस में ही एक नामी डाक्टर थे, उनका इलाज शुरू किया। सात दिन इलाज करने पर भी कोई लाभ न देख इलाज वदल दिया। एक वैद्यजी को बुलाया। उनके इलाज से लाभ इतना हुआ कि ज्वर उतरने चढ़ने लगा। परन्तु उनके बाहर चले जाने के कारण उनका इलाज बन्द करके एक दूसरे नामी डाक्टर का इलाज आरम्भ हुआ। १५ दिनों के बाद इलाज बन्द करना पड़ा क्योंकि कुछ लाभ न था। हाँ बच्चे को थोड़ा जाड़ा देकर ज्वर आने लग गया था। उसके यकृत और प्लीहा बढ़ गये थे। बच्चे में सहनशीलता थी, वह चुपचाप लेटा रहता। जव ज्वर आता तो बगल का टेम्परेचर १०४, १०५ से कम न रहता था। यह ज्वर दो दिनों तक रहता था। और दो दिन उतरा रहता था। डाक्टर ने मलेरिया बताया। फिर 'सप्ततिक्त' जो मलेरिया के लिए अव्यर्थ औषधि समझी जाती है, दिया गया। और भी कुछ पेटेंट दवाएँ दी गईं, लाभ कुछ न हुआ। बीचमें दो चार दिनों के लिए आयुर्वेदीय औषधि भी जैसे 'अमृतारिष्त' आदि दी गई। दुनिया भरके टोटके किये गये, जड़ी बाँधी गई। ज्वर छोड़ने का नाम न लेता था। घरसे बाहर जाने पर जी में खटका लगा रहता, अनेक दुर्भावनायें घर किये बैठी थीं।

साढ़े चार वर्ष का बच्चा, इतना ज्वर। रात रात भर बच्चे के सिर पर बरफ का पट्टा रखते जागते रहते। बच्चा हिम्मत न हारता था बुलाने से हँस देता यही एक सहारा था। भोजन दूध और फल था। कभी कभी ज्वर न रहने की हालत में थोड़ा बहुत भोजन दे दिया जाता। बच्चे को कम से कम दो महीने तक केवल फल और दूध पर रखा गया। औषधियाँ चलती रहीं।

मेरे एक मित्र ने सलाह दी कि अमुक डाक्टर को बच्चा दिखाया जाय। उसी दिन उन्हें बच्चा दिखाया गया। यह १० या ९ नवम्बर सन् १९४० की बात है। दवा शुरू हुई। रक्त परीक्षण किया गया। कुनीन दिया गया। कोई लाभ नहीं। रक्त परीक्षा से मालूम हुआ कि मलेरिया के कीटाणु रक्त में नहीं हैं। डाक्टर ने दूसरी दवा बदली। कोई लाभ नहीं। २० नवम्बर सन् १९४० को मैंने डाक्टर से पूछा—"कहिए, बच्चा कब तक अच्छा होगा। अभी तक तो आप के इलाज से कुछ लाभ नहीं हुआ।" डाक्टर ने उत्तर दिया "यकृत बढ़ने के कारण ज्वर आ रहा है, इन्फैन्टाइल लीवर है। मैं आपको वचन नहीं दे सकता कि बच्चा अच्छा हो सकेगा या नहीं।" इस उत्तर से माता पिता के मन में क्या भावनायें उदय होंगी यह पाठक स्वयं समझ सकते हैं, मैं कुछ लिखना उचित नहीं समझता। हाँ, डाक्टर ने कहा परसों (२२ नवम्बर) को आप लाइए हम पिचकारी से उसमें रक्त डालेंगे शायद लाभ हो जाय। मैं इसपर तैयार था। किन्तु यह सुन रखा था कि रक्त डालने से कभी कभी तुरत मृत्यु हो जाती है; इस कारण जी डरता भी था, अपने लिये नहीं, बच्चे के लिए। उस दिन बच्चे को १०४ डिग्री ज्वर था।

उसी दिन संध्या समय डा० बालेश्वर प्रसादजी से मुलाकात हुई। उस बीमारी के बीच में कई बार उनसे मिल चुका था किन्तु किसी दिन बच्चे की बीमारी का जिक्र नहीं किया था। यह भी संयोग ही था,

उस दिन मेरे एक परम हितैषी ने मेरे बच्चे की बीमारी का हाल उनसे कहा और परामर्श चाहा। बच्चा भी डाक्टर साहब को दिखाया गया। डाक्टर साहब ने बच्चे को देखा और कहा कि बच्चे को ५ दिन में अच्छा होना चाहिए। उसी दिन दवा आरंभ हुई।

उनका इलाज था—सब दवा बन्द करो। मट्ठा और फल बच्चे को खिलाओ। फलों में पहले सन्तरा फिर टमाटर की इजाजत हुई। सूर्य-किरण द्वारा पकाया नीली और पीली शीशियों का जल[1] मिलाकर एक-एक चम्मच दो-दो घंटे पर दो। आप चाहे पानी का गुण समझें या मठे का, हुआ उसका असर जादू का-सा। उसी दिन जो ज्वर उतरा फिर नहीं आया। इसको हम क्या कहें? जादू न कहें तो और क्या कहें?

यही चिकित्सा १८ दिसम्बर तक चलती रही। बच्चे का वजन बढ़ने लगा। १८ दिसम्बर को बच्चे को दोपहर में थोड़ा दलिया दिया गया और दो दिन बाद से रोटी दी जाने लगी। अब बच्चे का जिगर और प्लीहा भी बिलकुल ठीक है। मेरी दृष्टि से बच्चा नीरोग हो गया है, केवल थोड़ी कमजोरी रह गई है। भोजन में बच्चा अब भी फल, मट्ठा और सादी रोटी तरकारी ही पसन्द करता है।

यदि प्राकृतिक भोजन ग्रहण किया जाय तो अन्य चीजें हमें अस्वाभाविक लगने लगें पर पहले कुछ दिन इसका अभ्यास करना ही चाहिए। चिकित्सा के बतौर जो जादूका-सा असर मुझे प्राकृतिक चिकित्सा में दिखाई दिया किसी भी चिकित्सा पद्धति की शीशियों में न मिला।

—श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद-विशारद

◆ ◆ ◆

---

[1] **सूर्य-किरण द्वारा औषध-जल तैयार करने के लिए साफ रंगीन बोतलों को लेकर उनमें तीन चौथाई कूएँ या नदी का स्वच्छ जल भर कर सूर्य के प्रकाश में तीन-चार घंटे रखना चाहिए। दवा तैयार करते समय और बाद में भी बोतल को लकड़ी की पटिया पर रखना चाहिए।**

क्या आपको भी कुछ कहना है ?

क्या आपने जीवन सखा के सिद्धान्तों के अनुसार खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने का अनुभव किया है? यदि हाँ तो उसे दूसरों की सहायता, तथा मार्ग-प्रदर्शन के लिए लिख भेजें। उन्हें हम जीवन सखा के इस स्तम्भ में सहर्ष स्थान देंगे। यदि सम्भव हो सके तो यह चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व और बाद का अपना फ़ोटो भी भेजें। आप का अनुभव दूसरों के बड़े काम का हो सकता है। अपने अनुभव निष्पक्ष भाव से तथा सच्चाई के साथ लिखें। यदि आपने किसी अन्य व्यक्ति को इस चिकित्सा-प्रणाली के द्वारा लाभ पहुँचाया हो तो उसके सम्बन्ध में भी अपने अनुभव भेज सकते हैं।—सम्पादक

चाय का विनाशक प्रचार

श्रीयुत कृष्णदत्त भट्ट स० सम्पादक "आज", काशी

चाय अन्य मादक-द्रव्यों की भाँति ही स्वास्थ्य के लिए हानिकर है पर चिन्ता का विषय तो यह है कि अधिकतर लोग इसे साधारण पेय ही समझते हैं। यह भ्रमात्मक धारणा कितनी खतरनाक है? एवं चाय का प्रचार किस मक्कारी के साथ किया जाता है? यह इस लेख में पूरी तौर से बताया गया है।—सं०

"विल यू गिव मी टू पाइस प्लीज ?"

(क्या आप कृपा करके मुझे दो पैसे देंगे ?)

राजघाट स्टेशन पर उतर कर हलवाई की दूकान पर मेरे पहुँचते ही कमर में एक लुंगी लपेटे मद्रासी सज्जन ने मुझ से कहा।

"व्हाट फार ?" (किस लिए ?)—मैंने पूछा।

"फार ए कप आफ टी !" (एक प्याला चाय के लिए !)—उसने तुरन्त उत्तर दिया।

"कान्ट यू लिव विदाउट टी, जैण्टिलमैन ?" (महाशय, आप बिना चाय के नहीं रह सकते ?)—मैंने पूछा।

"नो सर, आइ कान्ट !"

(जी नहीं, श्रीमान् !)—उसने उत्तर दिया।

"आल राइट, हैव ए कप आफ टी !"

(अच्छी बात है, आप एक प्याला चाय पी लीजिए।)

दो पैसे हलवाई की ओर फेंकते हुए मैंने कहा—'इन्हें एक प्याला चाय दे देना जी !'

"थैन्क यू, सर !" (आपको धन्यवाद) कह कर वह चाय पीने लगा।

× × ×

बात छोटी सी है, बहुत छोटी—परन्तु है वह खटकने वाली। मैं चाय नहीं पीता, केवल इसीलिए नहीं; वरन् इसलिए कि आज हमारे भीतर चाय का इतना व्यापक प्रचार किया जा रहा है और हमें उसकी ऐसी दूषित लत लगाई जा रही है कि हम पास में पैसा न रहने पर उसके लिए भीख तक माँगते नहीं शर्माते ! खाने को मिले या न मिले, पहनने ओढ़ने को मिले या न मिले पर हमें चाय चाहिए ! चाय अवश्य हो !! चाय के बिना हमारा काम नहीं चल सकता !!!

स्वागत की वस्तु—चाय !

कोई भी पार्टी की जाती है, किसी भी तरह का उत्सव मनाया जाता है, किसी भी भले आदमी का स्वागत सत्कार किया जाता है तो—सबसे पहले हमारी दृष्टि जिस वस्तु पर जाती है वह है—चाय ! चाय के बिना किसी भी पार्टी का रंग नहीं जमता, किसी भी दावत में रौनक नहीं आती, किसी भी बड़े आदमी का स्वागत नहीं बनता और किसी भी क्लब की शोभा नहीं बढ़ती !

सबेरा हुआ नहीं कि हमारे कानों में आवाज पड़ती है—"गरमा गरम चाय !" कोई भी स्टेशन का प्लेटफार्म आया नहीं कि हमें सुन पड़ा—"चा, गरमा गरम चा !" बड़े बड़े नगरों की ही बात नहीं, हमारे छोटे से छोटे गाँवों में, देहातों में भी दूकानदार "चाय" रखने लगे हैं ! रखें क्यों न ? लोगों को चाय की लत लगती जा रही है। वे चाय पियेंगे ही, फिर दूकानों पर चाय क्यों न रखी जाय ?

× × ×

चाय का प्रचार

सभा सोसाइटी, कल कारखाने के आस पास जिधर नजर डालिए आपको चाय पिलाने वाले आसपास घूमते हुए दिखेंगे। ऐसे प्रत्येक स्थान में चाय की दूकान आपको दिखाई पड़ेगी जहाँ पर जन समागम होता है अथवा होने की सम्भावना है। जहाँ पर चाय का प्रचार नहीं है वहाँ पर भी उसके प्रचारार्थ प्रयत्न किया जाता है। वहाँ पर प्रचारक लोग अपने स्टाल खड़े करते हैं, प्रचार करते हैं, लोगों को मुफ्त चाय पिलाते हैं, चाय बनाने की तरकीब सिखाते हैं—मुफ्त, एक दम मुफ्त ! शुद्ध परोपकारी भावना (?) से !

आदत पड़ने भर की देर

ये प्रचारक खूब जानते हैं और अच्छी तरह जानते हैं कि यह लत लोगों को लग भर जाय, बस, हमारा काम खतम ! आदत पड़ने भर की देर है-फिर तो लोग झख मार कर चाय खरीदेंगे ! बिना चाय पिये फिर उनसे रहा ही न जायगा ! तब हमारा द्वार खटखटाये बिना उन्हें चैन कहाँ ? प्रचारक लोग भली प्रकार जानते हैं कि इस नशे का मनुष्य आदी हुआ नहीं कि फिर उससे इसके बिना रहा ही नहीं जा सकता। फिर तो वे जैसे बनेगा वैसे चाय पियेंगे ही ! लत होती ही है ऐसी बुरी चीज !

नशे की लत

किसी भी नशे की लत ऐसी ही हुआ करती है। समय पर वह न मिले बस देखिए नशैलों की हालत ! उनका जी न जाने कैसा कैसा कर उठता है ! न तो उसे पाये बिना उनका काम करने में मन लगता है न आराम करने में ही। और तो और, उनकी पाचन क्रिया भी शिथिल जैसी हो गई जान पड़ती हैं। बाज बाज हुक्का, तमाखू, या बीड़ी सिगरेट पीने वाले लोग भी शौच जाने के पूर्व दो चार कश लगा लिया करते हैं। किसी दिन यदि कश न लगायें तो उन्हें शौच नहीं होता ! यही हाल चाय का है। चाय पीने वालों को भी यदि समय से चाय पीने को न मिले तो बस ऐसा ही हाल देख लीजिए ! इससे बढ़कर इसके नशा होने का और क्या सबूत दिया जाय !

और नशों से भेद

चाय नशा है—तब भी लोग उसे नशा नहीं समझते। नशा यदि समझें तो वे उसका इतने व्यापक रूप में न तो कभी प्रयोग ही करें और न उसे ऐसी स्वागत सत्कार या दैनिक आवश्यकता की वस्तु ही समझें। मादक वस्तुओं को सभी घृणा की दृष्टि से देखा करते हैं उनका सेवन करने वाले व्यक्ति तक प्रकट रूप में उनका व्यवहार करने में कुण्ठित होते हैं और लज्जा का बोध करते हैं—परन्तु चाय ? चाय के विषय में तो बात ही उलटी है। राजा या महाराजा, गरीब या अमीर, अफसर या अहलकार—किसी के भी पधारने पर वह मजे में, फख्र के साथ पेश की जा सकती है ! न तो उसमें मेहमान को ही किसी प्रकार की लज्जा का बोध होता है न मेजबान को ही ! दोनों उसे गौरव की ही वस्तु समझते हैं !

ऐसा है क्यों ?

इसका एकमात्र कारण है—उसका भयावह प्रचार। इण्डियन टी मार्केट एक्सपेंशन बोर्ड कितना पैसा खर्च करता है इसके लिए—यह बात हम सब लोग नहीं जानते। नीचे के कुछ आँकड़ों से पाठकों को उसका थोड़ा सा आभास मिल सकेगा :—

	रु०	आ०	पा०
प्रधान कार्यालय का खर्च	१४१५९	११	९
इस्टैब्लिशमेण्ट : वेतन	२७७३६	५	६
सुपरवाइजरों और घूमने वालों का खर्च	१९२४५	१४	९
प्रचार	१३६२४	५	७

अखबारों में १२०४४।।।≡)।।।

वाहर १५७६।-)१०			
सिनेमा	३११	७	०
माडेल टी स्टाल	२११	१	२
चाय वितरण	७०७७२	१	६
	१४६०६०	१५	६

उपर्युक्त आँकड़े मई १९४० के हैं। जरा सोचिए १॥ लाख रुपया मासिक खर्च कुछ कम है—महज इसलिए कि हम दरिद्र भारतवासी चाय के आदी बनें!

प्रचार के विभिन्न साधन

प्रचार के जितने भी सम्भव उपाय हैं इस बोर्ड से वे अछूते नहीं बचे। दो चार इने गिने पत्रों को छोड़ कर आप सभी पत्रों में देखेंगे कि चाय का विज्ञापन मौजूद है! एक ढंग से नहीं, तरह तरह से! कहीं धर्म-शास्त्रों की दुहाई दी जा रही है तो कहीं लोकमान्य नेताओं की! कहीं खिलाड़ियों द्वारा की गई प्रशंसा का बखान किया जा रहा है तो कहीं सिनेमा अभिनेत्रियों की! और तो और, मद्यनिषेध का आन्दोलन चलने पर किस मजेदार ढंग से चाय पीने के लिए शराबियों और ताड़ी पीने वालों को उकसाया गया, उसका पता पाठकों को इस विज्ञापन से लगेगा :—

चाय का नैतिक मूल्य

हिन्दुस्तान में शराब बन्दी का प्रयोग जारी होने से इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड को अपना काम करने के लिये एक बिल्कुल नया क्षेत्र मिल गया है। इस क्षेत्र में प्रवेश करने से, ऐसा मालूम होता है कि इस देश में चाय के प्रचार कार्य ने उस भविष्यवाणी को पूरा कर दिया जिसे एक लेखक ने आज से कई साल पहले 'इंगलिशमैन' नामक पत्र में जो आजकल बन्द है, प्रकाशित अपने एक लेख में व्यक्त किया था। वह लेख इस प्रकार था—

"चाय ने अँगरेज जाति के शराब पीने के व्यसन में महान् क्रान्ति उत्पन्न कर दी है और शराब-बन्दी के आन्दोलन को सहायता पहुँचाई है, जिससे उसे इतनी बड़ी सफलता मिली है। अगर चाय का प्रभाव न होता तो शराब पीने का व्यसन जो सौ वर्ष पहले था, आज भी ज्यों का त्यों बना रहता। अब यह शराब का एक सफल प्रतिद्वन्द्वी है।

"पेय के रूप में चाय शिथिल शक्ति और कल्पना को स्फूर्ति देने के लिये बहुत लाभदायक है। यह मस्तिष्क में प्रवेश कर उसे शान्ति पहुँचाती है। यह स्त्रियों के सुरुचि-सम्पन्न कामों में उनका साथ देती है और तमाम रुखाइयों और बाहरी आडम्बरों को दूर कर बातचीत को सरस और मजेदार बनाती है। और इस प्रकार सामाजिक व्यवहार को सुन्दर बनाने में सहायता पहुँचाती है।

"अब यह निर्विवाद है कि चाय छोटी श्रेणी के लोगों की शराब पीने की आदत को दूर करती है। गरीबों को यह बतलाने की जरूरत है कि वे इस बात को अच्छी तरह समझ लें कि चाय में किसी तरह भी हमेशा कम खर्च नहीं पड़ता और इसके लिये अगर दो चार पैसे ज्यादा खर्च भी हो जाय तो उसे फिजूलखर्च नहीं कह सकते।

"आजकल चाय सभी श्रेणियों के लोगों में एक फैशनेबुल पीने की चीज हो गई है। इसमें अपना एक खास आकर्षण है। सभी सार्वजनिक या व्यक्ति के प्रीति-भोजों में जहाँ महिलायें भी उपस्थित रहती हैं, चाय सर्वजनप्रिय पेय होती है। और जैसा ऊपर बताया गया है, इसके प्रभाव से सभी प्रसन्न होते हैं। भिन्न भिन्न रूपों में इसकी व्यावहारिक उपयोगिता सर्वविदित है। इस देश में खास तौर से, एक प्याला चाय के बिना हमारा काम कैसे चल सकता है, सवेरे अपने बिस्तरे से उठने पर और हवाखोरी या काम पर जाने के पहले इसे पीना जरूरी है।"

शराबबन्दी के आन्दोलन में चाय ने जो भाग लिया है उससे प्रमुख कांग्रेसमैनों ने इसकी भूरि भूरि प्रशंसा की है। मद्रास के प्रधान मन्त्री ने, सलेम जिले में ताड़ी की दूकान के बदले खोली गई एक चाय की दूकान में तैयार किये गये पहले चाय के प्याले को पीकर ताड़ी

पीने वालों के सामने एक आदर्श रखा और कहा कि मुझे उम्मीद है कि चाय, ताड़ी पीने वालों के शरीर से ताड़ी के कलंक को दूर करने में उचित साधन साबित होगी। मध्यप्रान्त के आबकारी और उद्योग मन्त्री मि० सी० जे० भारुका कहते हैं—"ताड़ी पीने वालों के लिए चाय का पीना आमोद प्रमोद और थकावट दूर करने में बड़ा सहायक है।" मि० भारुका के पूर्ववर्ती मन्त्री मि० पी० बी० गोले ने भी मध्यप्रदेश के मद्य वर्जित क्षेत्रों में पहली आदर्श चाय की दूकान खोलते समय इसी आशय के विचार अपने भाषण में प्रकट किये थे। उन्होंने कहा था—" उस जगह में जहाँ ताड़ी की बदबू भरी रहती थी, अब हमें चाय की तरो ताजगी देने वाली सुगन्धि मिलती है।"

देखा आपने ! कैसा सुन्दर ढंग है प्रचार का ? कितना मोहक जाल है भोलेभाले लोगों को फँसाने का ?

और एक नमूना

एक समाचार है—

"कोलम्बो, २१ नवम्बर।

सिंहल चाय प्रचार बोर्ड की ओर से शीघ्र ही सिंहल के सिंहली और तामिल स्कूलों में शिशु कक्षाओं से ऊपर के सभी छात्र-छात्राओं को प्रतिदिन एक प्याला चाय मुफ़्त पिलाई जायगी ! अनुमानतः इसमें बोर्ड का प्रति वर्ष १,५०,०००) खर्च होगा। यह उपाय गरीबों को चाय की आदत डालने के लिए है ! अंग्रेजी स्कूलों के बच्चे तो चाय पीकर घर से आते ही हैं अतः उनके लिए इसका आयोजन न किया जायगा !"

हाय, ये गरीब छात्र भी बोर्ड की इस कृपा (?) से न बचने पाये। अभी तो वे बेचारे मुफ़्त चाय पियेंगे और कुछ दिनों बाद लत पड़ जाने पर अपने निर्धन माता पिताओं से रो झगड़ कर पैसे माँगेंगे ! पैसा न मिलेगा तो चोरी की आदत सीखेंगे अथवा ऐसे ही किसी अन्य अवांछनीय मार्ग का सहारा पकड़ेंगे !

यह तरोताज़गी क्यों ?

लोग चाय पीकर तरोताजगी महसूस करते हैं—पर क्या वह सच्ची तरोताजगी है ! और नशों के पीने पर भी तो नशा करने वाले तरोताजगी महसूस करते हैं पर कौन नहीं जानता कि वह तरोताजगी चन्द मिनट की होती है ? थोड़ी देर में उसका नशा जाता रहता है और मनुष्य उससे भी अधिक पस्त होकर पड़ रहता है जितना विना नशा पिये होता है। नशे से कभी भी सच्ची तरोताजगी मिल नहीं सकती और हमें यह बात कभी भूलनी न चाहिए कि चाय भी नशा है। उसमें मादकता है। हम में पल भर फुर्ती लाने का माद्दा है और इस लिए वह हमारे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

चाय का चस्का छोड़ो

आप में यदि चाय पीने की आदत है तब तो आप समझते ही होंगे, अनुभव करते ही होंगे कि चाय में नशा है। और नशा बुरी चीज है इससे आप इन्कार कर नहीं सकते। इसलिए आपको चाय की लत छोड़ देनी चाहिए।

परमात्मा की दया से यदि आप में अभी तक चाय पीने की लत नहीं है तो भविष्य के लिए सावधान हो जाइए। भूल करके भी चाय का प्याला मुँह से न लगाइए। चायपार्टियों में या तो जाइए ही नहीं और यदि जाइए भी तो—चाय मत पीजिए। अपने मेजवान से हाथ जोड़ कर प्रार्थना कर दीजिए कि आप बुरा न मानिए। मैं चाय नहीं पीता। प्रचार, आग्रह अथवा अनुरोध में आकर आपने यदि चाय पीना शुरू कर दिया तो आप अपने हाथ ही अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारेंगे—यह बात कभी न भूलिए।

* * *

आधुनिक युग और महिला-स्वास्थ्य

श्रीयुत देव बौहरा, आचार्य—योगाश्रम, लायलपुर

आधुनिक सभ्यता ने जितनी हानि पुरुषों को पहुँचाई है उससे कहीं अधिक स्त्रियों को। चक्की, चर्खा, चूल्हा छिन जाने से उनके पास व्यायाम का कोई साधन नहीं रह गया है जिससे उनके स्वास्थ्य में दिनोंदिन ह्रास होता जा रहा है। बौहराजी ने प्रस्तुल लेख द्वारा इस मार्मिक प्रश्न की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित कर स्त्रियों के स्वास्थ्य सुधार के साधन हठयोग के कुछ आसन आदि की ओर संकेत किया है।—सं०

लेखक

पाश्चात्य विचारों तथा रीतियों के आगमन ने हमारे जीवन के ढाँचे को एक दम वदल दिया है। हमारे रहन-सहन पर इसका प्रभाव अत्यधिक हुआ है। हमारा जीवन, ग्राम्य-जीवन से वदल कर नागरिक जीवन हो गया है और इसका असर सारी की सारी जाति पर अत्यन्त गम्भीर पड़ा है। यहाँ पर हम महिला-स्वास्थ्य के विषय में ही विचार करेंगे।

ग्राम्य-जीवन की विशेषताएँ हैं—खुली हवा, प्रकाश, स्वच्छ जल, दूध, घी तथा अनाज—शुद्ध अवस्था में—इनकी प्राप्ति। ग्राम-जीवन में सादगी रहती है—प्राकृतिक-जीवन है, प्रकृति की गोदी में व्यतीत किया जाता है। ग्राम्य-जीवन में स्त्रियों को व्यायाम के लिए अवसर स्वभाव से ही अधिकता से मिलते हैं। कूओं से जल खींचना और घड़ों को कन्धों पर, सिर पर और बगल में उठा कर लाने का मौका प्रायः प्रतिदिन ही मिलता है। घर-घर में प्रातः चक्की की मधुर ध्वनि, अथवा चर्खे की अनवरत गूँज उठा करती है। ग्राम्य-जीवन का आवश्यक अंग है, पशुपालन। इसमें भी कई प्रकार का व्यायाम होता है। पर पाश्चात्य रीतियों ने हमारे गाँवों तक को नहीं छोड़ा और आज प्रायः गाँवों में भी प्राकृतिक अवस्था दीखनी कठिन हो रही है और उसके फलस्वरूप उनकी शारीरिक अवस्था भी पतित हो रही है। पैदल चलने का रिवाज था। मातायें भी पैदल चलती थीं और हृष्ट-पुष्ट होती थीं। और विषयों के प्रलोभन भी अब से बहुत कम थे, और जट्ट की साड़ियों के लिए जट्टियाँ अपने बच्चों, पति और अपने आपको घी से वंचित न रक्खा करती थीं। परिणाम था—मानसिक शान्ति, शारीरिक स्वास्थ्य और पारिवारिक आनन्द। अब भी नागरिक-जीवन से ग्राम्य-जीवन शतशः अच्छा है। ऐसे ही वातावरण में पली भारत की माताएँ, अबलाएँ न हो कर, आततायियों का मुकाबला करती थीं। आज भी कभी कभी कान में पड़ जाता है—अमुक स्थान पर एक देवी ने बाघ को मार डाला और अमुक ने चोर को पकड़ा।

ग्रामों से भी अब ऊपर लिखी हुई सुप्रथाएँ दिन प्रति दिन लुप्त हो रही हैं और ग्रामीण-बहनों का स्वास्थ्य भी गिर रहा है, परन्तु शहरों में तो दयनीय अवस्था हो रही है।

हमारी माताओं तथा बहनों को व्यायाम के लिए अवसर नहीं मिलता। चक्की तथा चर्खे का प्रायः लोप हो गया है। पशुपालन का अवसर किसी सौभाग्यवती को ही प्राप्त होता है। पानी के लिए म्युनिसिपल नल

हैं। इस पर तंग मकान जिनमें खुली हवा तथा सूर्य का प्रकाश प्राप्य नहीं। दूध-घी मिलावट वाला, और निकृष्ट आटा प्राप्त होता है। गलियों में बिकने वाली चाटें, छोले और कुलचे जो शहरी देवियों को प्रायः अधिक रुचिकर होते हैं—उनके स्वास्थ्य को बिगाड़ने में और भी सहायक होते हैं। और भी, नित्य प्रति नए नए फैशन देखने में आते हैं, जिनके लिए पेट काटा जाता है। हमारे जीवन-कोश में 'स्वास्थ्य' ऐसा शब्द नहीं रह गया है। अतः इसकी ओर ध्यान जाना और इसके लिए प्रयत्न करना, यह सम्भव ही कैसे हो? आधुनिक युग की नागरिक तड़क-भड़क मन को भी व्यस्त रखती है। परिणामस्वरूप शारीरिक अवस्था दिन प्रति दिन बुरी होती जा रही है। बवासीर, रक्तन्यूनता, हिस्टीरिया, तथा दूसरी जननेन्द्रिय सम्बन्धी बीमारियों की भरमार है। क्षय का भयंकर रोग तो बड़े शहरों में महामारी की भाँति फैलना आरम्भ हो गया है। शहरों में जिधर देखें, महिलाओं के पीले चिट्टियैले मुखमण्डल, ढीली ढलकीली चाल और बेढब सी मोटी मोटी देहें देखने में आती हैं। स्वस्थ युवती के दर्शन तो कभी ही हो पाते हैं।

किसी जाति तथा देश के भविष्य के लिए मातृ-स्वास्थ्य का अत्युत्तम होना बहुत ही आवश्यक है। इस विषय पर अत्युक्ति नहीं हो सकती। माता मनुष्य जाति की जननी है। माता के अनुकूल ही सन्तान हुआ करती है। भला जीवनशून्य रोगग्रस्त हताश माताएँ वीरों और सत्पुरुषों को उत्पन्न कर सकती हैं? संसार को, विशेषतः भारतवर्ष को, आवश्यकता है पुरुषों और देवियों की जो मन से तथा शरीर से स्वस्थ हों और मानव जाति को उच्चादर्शों की ओर प्रवृत्त कर सकें।

भारत आज पुनः अपने पाँवों पर खड़ा होने को उत्सुक है। राजनैतिक जागृति के चिह्न चारों ओर दृष्टिगोचर हो रहे हैं। समाज-सुधार की ओर भी लोगों का कुछ ध्यान है। सबसे अधिक भूला हुआ कोई विषय है तो वह है स्वास्थ्य——मातृस्वास्थ्य जिससे देश का भविष्य और वर्तमान जुड़ा हुआ है। भारतीय माताओं के स्वास्थ्य का सुधार किए बिना देश की वास्तविक उन्नति कदापि सम्भव नहीं। इस विषय में शक की गुंजाइश नहीं। परन्तु आज भी हमारे नेताओं का, जो उन्नति के पथ-प्रदर्शक होने का दावा करते हैं, इस ओर समुचित ध्यान नहीं है। शासकों का तो क्या कहना? गायों और घोड़ों की नस्लें अच्छी करने के लिए प्रयत्न किए जाते हैं, व्यय किया जाता है, परन्तु स्त्रियों के स्वास्थ्य-रक्षा तथा शारीरिक उन्नति की ओर ध्यान नहीं दिया जाता। कैसी विचित्र बात है!

क्षयादि रोगों की वृद्धि देख कर कुछ दानी पुरुषों में स्त्रियों के लिए चिकित्सालय बनवाने की ओर झुकाव हुआ है। मातृ-गृहों की ओर भी जनता की कुछ दृष्टि आकृष्ट हुई है। पर चिकित्सालयों तथा मातृगृहों से कहीं अधिक आवश्यकता है इस बात की कि हम रोग के मूल कारण को ढूँढ़ निकालें और उसका नाश कर दें। आज स्थान स्थान पर स्वास्थ्य विषयक चर्चा की आवश्यकता है। जीवन में स्वास्थ्य का जो स्थान है वह उसे देना होगा। नहीं तो प्रकृति अपने नियमों के भंग करने का बदला अवश्य लेगी।

नागरिक जीवन के विषय में हम जो कुछ ऊपर लिख आए हैं उससे यह स्पष्ट ही है कि स्त्रियों के बुरे स्वास्थ्य के कारणों में से मुख्य कारण है व्यायाम का अभाव। जब तक इस अभाव की पूर्ति नहीं होती उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं हो सकता। घर घर में व्यायाम का प्रचार होना ही चाहिए और इसके लिए स्थान स्थान पर स्वास्थ्य-केन्द्र बनने ही चाहिए।

स्त्रियों के लिए ऐसे व्यायाम जिनमें मांसपेशियों का अत्यधिक आयाम हो ठीक नहीं रहते। स्त्रियों की प्रजनन सम्बन्धी विशेषताएँ हैं और कठोर व्यायाम उनके लिए उचित नहीं हैं। टेनिस, फुटबाल, क्रिकेट आदि न अच्छे ही हैं और न सर्वसाधारण को प्राप्य। इनसे प्रतिस्पर्धा के भाव उत्पन्न होते हैं और मृदुता, कोमलता तथा सहनशीलता जो स्त्रीत्व के भूषण हैं का ह्रास होता है। प्रसव सम्बन्धी विकारों की भी सम्भावना रहती

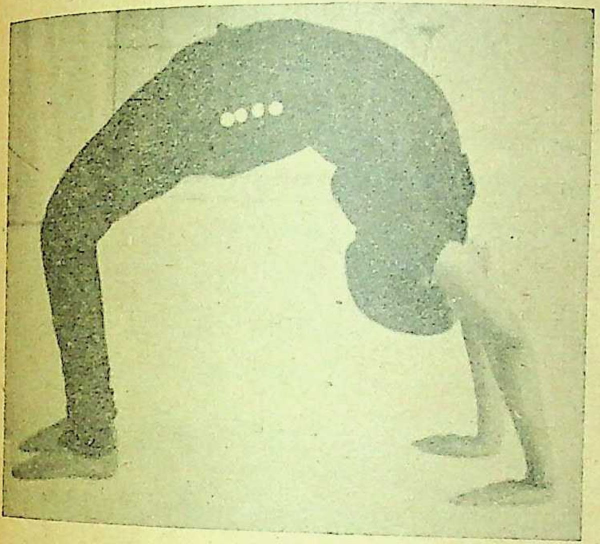

चक्रासन--पाचन क्रिया को शक्तिशाली बनाता है, पेट को ढीला होने और बढ़ने से रोकता है तथा ऊँचाई बढ़ा कर सौन्दर्य-वृद्धि करता है।

है। यौगिक व्यायाम स्त्रियों के लिए अतीव अनुकूल और विशेष लाभकारी हैं। कोई भी से कर सकता है। जननेन्द्रिय पर इसका विशेष प्रभाव रहता है। इसका असर मन पर भी रहता है, इसलिए स्त्री-समुचित गुणों का सहज में उदय होता है। मोटापा दूर करने में यह विशेषत: सहायक हो सकते हैं, और प्रजननेन्द्रिय सम्बन्धी बीमारियों का इलाज भी बड़ी सुगमता से आसनों द्वारा किया जा सकता है।

हमने नमूने के लिए सर्वांगासन् का चित्र दिया है। इसके निम्नलिखित लाभ हैं—

१. सर्वांगासन पेट को भारी तथा ढीला होने से रोकता और ठीक करता है।

२. इसका पाचन सम्बन्धी सभी अवयवों पर लाभदायक प्रभाव पड़ता है और यह पाचन सम्बन्धी विकारों को दूर करता है।

३. कोष्ठवद्धता को जरूर रोकता है।

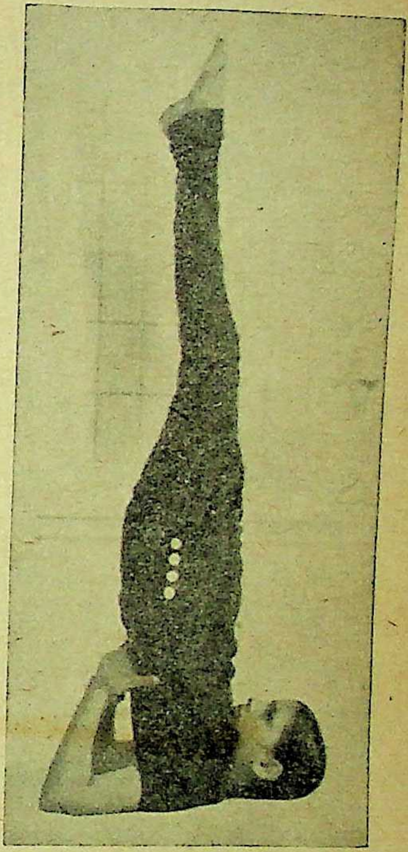

सर्वांगासन

४. इससे हार्निया (आँतों की स्थानच्युति) ठीक हो जाती है।

५. एक व्यक्ति जो नियमपूर्वक सर्वांगासन करता है वह ऐपैंडिसाइटिस (appendicitis) नामक रोग से कभी ग्रस्त नहीं हो सकता।

शरीर का वजन कितना होना चाहिए

श्रीयुत विश्वनाथप्रसाद, एम० एस०

यदि शरीर स्वस्थ हो तो यह कतई जानने की जरूरत नहीं है कि वजन कितना है, कितना नहीं ? फिर भी मोटापा जिस तरह एक रोग है उसी तरह अधिक दुबलापन भी। और इसमें भी सन्देह नहीं कि अनेक रोगों में रोगी और चिकित्सक के लिए घटता बढ़ता वजन कुछ इशारा रखता ही है। इसी दृष्टि से अवसत के आधार पर बनाई हुई वजन की तालिका कुछ उपयोगी होगी।—सं०

मनुष्य के स्वास्थ्य के बारे में जानने के लिए उसके शरीर का वजन जानना बहुत आवश्यक हो जाता है। यदि कोई व्यक्ति भोजन के अभाव से तंग रहता है तो उसके वजन से यह बात मालूम की जा सकती है। असल में देखा जाय तो प्रत्येक व्यक्ति का वजन अलग अलग होता है लेकिन बहुत आदमियों का वजन ले कर एक औसत निकाल लिया गया है जिसके सहारे हम बहुत कुछ जान पाते हैं। यदि किसी मनुष्य का वजन औसत से बहुत कम हो तो उसे अपने भोजन और रहन-सहन के ऊपर ध्यान देना चाहिए और उचित परिमाण में भोजन प्राप्त कर शरीर के वजन को बढ़ाना चाहिए। यदि वह ऐसा किसी कारणवश नहीं कर पाता है तो उसे नाना प्रकार की व्याधि सता सकती हैं, विशेषतः राजयक्ष्मा हो सकता है जिससे उसका जीवन नष्ट हो सकता है। इसी प्रकार जो व्यक्ति औसत से ज्यादा वजन का हो उसे भी सावधान होने की जरूरत है। १०-१५ फी सदी ज्यादा वजन कोई खास अर्थ नहीं रखता परन्तु यदि ५० प्रतिशत औसत से ज्यादा वजन हो तो शीघ्र ध्यान देना चाहिए। अब हम औसत वजन की सारिणी देते हैं।

स्वस्थ लड़के-लड़कियों का कद और वजन अनुमान से

लड़के

आयु	ऊँचाई	वजन
५ वर्ष	४१। इंच	२० सेर ४ छटाँक
६ ,,	४४ ,,	२२ ,, ७ ,,
७ ,,	४५॥	२५ ,, ,,
८ ,,	४७॥ ,,	२७ ,, ६ ,,
९ ,,	४९॥ ,,	३० ,,
१० ,,	५१॥। ,,	३३ ,, ४ ,,
११ ,,	५३॥ ,,	३५ ,, ९ ,,
१२ ,,	५५ ,,	३९ ,, ४ ,,
१३ ,,	५७ ,,	४२ ,, १ ,,
१४ ,,	५९॥ ,,	४८ ,,
१५ ,,	६२। ,,	५३ ,,

लड़कियाँ

आयु	ऊँचाई	वजन
५ वर्ष	४१ इंच	१९ सेर १२ छटाँक
६ ,,	४३। ,,	२१ ,, २ ,,
७ ,,	४५ ,,	२४ ,,
८ ,,	४७ ,,	२६ ,, १ ,,
९ ,,	४९	२८ ,, ९ ,,
१० ,,	५१ ,,	३१ ,, ४ ,,
११ ,,	५३। ,,	३४ ,, ८ ,,
१२ ,,	५५॥। ,,	४० ,,
१३ ,,	५८ ,,	४४ ,,
१४ ,,	६० ,,	४९
१५ ,,	६१ ,,	५४ ,,

स्वस्थ पुरुषों का वजन* और कद

आयु	फु.इं. ५ ०	फु.इं. ५ २	फु.इं. ५ ४	फु. इं. ५ ६	फु. इं. ५ ९	फ़ु. इ. ५ १०	फ़ु. इ. ६ १०
	म०से०	म०से०	म० से०	म०से०	म०से०	म०से०	म०से०
१६	१ ९	१ ११½	१ १५	१ १९	१ २३	२ ७१	१ ३२
२०	१ १३।	१ १६	१ १९	१ २३	१ २७	३ ११	१ ३५
२५	१ १७	१ १९	१ २३	१ २७	१ ३०	३ ४१	१ ३८
३०	१ १९	१ २०	१ २४	१ २८	१ ३२	१ ३५	२ १
३५	१ २०	१ २२	१ २६	१ ३०	१ ३२	२ ०	२ ४
४०	१ २१	१ २३	१ २७	१ ३१	१ ३३	२ २	२ ४
४५	१ २१	१ २३	१ २७	१ ३१	१ ३३	२ २	२ ५
५०	१ २१	१ २३	१ २७	१ ३१	१ ३३	२ २	२ ५

स्वस्थ स्त्रियों का वजन और कद

आयु	फु. इं. ४ ८	फु.इंच ५ ०	फु. इं. ५ ४	फु. इं. ५ ६	फु. इं. ५ ८	फु. इं. ५ १०
१६	१ ८	१ १०	१ १०॥	१ १३।	१ १७॥	१ ३०
२०	१ १०	१ १४	१ १६॥	१ २०	१ २७	१ ३१
२५	१ १२	१ १६	१ २१	१ २४	१ २९	१ ३३
३०	१ १३	१ १७	१ २२	१ २५	१ ३०	१ ३४
३५	१ १५	१ १९	१ २४	१ २६	१ ३२	१ ३६
४०	१ १६	१ २०	१ २५	१ २७	१ ३३	१ ३७
४५	१ १७	१ २१	१ २६	१ २८	१ ३३	१ ३८
५०	१ १८	१ २२	१ २७	१ २८	१ ३४	१ ३९

यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि किसी आदमी को मोटा कहने के पहले उसके शरीर की बनावट और उसमें कितनी चर्बी है जान लेना आवश्यक है। बहुत से ऐसे आदमी मिलेंगे (विशेत: शारीरिक परिश्रम करने वालों में से) जो औसत से ज्यादा वजनी हैं परन्तु उनमें बलगम नहीं है ऐसे लोगों के लिए 'मोटा' शब्द का व्यवहार नहीं किया जा सकता। वे काफी तन्दुरुस्त और अच्छे हैं, उन्हें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है।

'मोटा होना पाप है'। किसी किसी परिवार में देखा जाता है कि लोग ज्यादातर मोटे होते हैं इससे यह न समझना चाहिए कि यह कोई पैदायशी बीमारी है बल्कि इसका कारण यह है कि ये लोग अधिकतर बलगमी होते हैं और अपने खाने पीने में उचित नियमों का पालन नहीं करते हैं। किसी किसी जाति में भी अधिक मोटे लोग इसी कारण से देखे जाते हैं। औरतों में यह बीमारी ज्यादातर पाई जाती है क्योंकि उनका बहुत समय सुस्ती और आराम में बीत जाता है। जिन्हें बार बार गर्भ धारण करना पड़ता है, वे भ्रांत धारणा से खूब भोजन करती हैं और उसका परिणाम मोटापा होता है। औरतों में विशेष कर तीस से चालीस वर्ष तक में और मर्दों में ४०-५० वर्ष तक में यह बीमारी होती है।

लक्षण

जब तक मोटापा साधारण रहता है कोई विशेष कष्ट नहीं मालूम होता परन्तु यदि यह विशेष हो जाता है तो निम्नलिखित उपद्रव प्रकट होते हैं—

(१) हृदय बहुत कमजोर हो जाता है, धीरे धीरे यह इतना कमजोर हो जाता है कि थोड़ी सी मिहनत करने ही से मोटे आदमी का दम फूलने लगता है। उनकी रक्त-वाहक नालियाँ कड़ी एवं शून्य सी हो जाती हैं।

(२) श्वास सम्बन्धी रोग होते रहते हैं। मोटापा कम होने से ये रोग दूर हो जाते हैं।

(३) पेट में दर्द, पेट फूलना, कोष्ठबद्धता और बवासीर होता है।

(४) यकृत में अनेक प्रकार के उपद्रव आरम्भ होते हैं और यह बढ़ जाता है।

(५) गुर्दे अपना काम ठीक से नहीं करते हैं।

(६) नामर्दी की बीमारी हो जाती है।

(७) औरतों का मासिक धर्म ठीक समय पर और उचित परिमाण में नहीं होता है।

(८) मधुप्रमेह की बीमारी हो जाती है।

[शेष १३८ पृष्ठ पर]

---

*१ मन में ८२ पौंड होते हैं, इसी हिसाब से वजन पौंडों में जाना जा सकता है।

बालू की महिमा

श्रीयुत आनन्दवर्द्धन

राजपूताने की खुश्क हवा स्वास्थ्य प्रदान करने में सहायता पहुँचाती है। वहाँ कब्ज भी नहीं होता। बालू के उपयोग से कब्ज जाता है और राजपूताना भी बालुकामय है।—तो क्या बालू में स्वास्थ्य प्रदान करने की शक्ति है? यह वह सहज प्रश्न है जिस ओर लेखक ने इस विषय के विशेषज्ञों का ध्यान आकर्षित किया है।—सं०

कलकत्ता में एक डाक्टर थे 'कैलाश बावू'। वहाँ के मारवाड़ियों में तो वह धन्वन्तरि की तरह पुजते थे। बिना 'कैलाश' को दिखाये उन्हें चैन नहीं मिलती। सम्पन्न मारवाड़ियों में तो उस समय शायद कोई था जिसने कभी कैलाश को न बुलाया हो। बहुतेरे घरों के तो वह फेमिली डाक्टर की तरह ही थे। जिन्दगी में खूब रुपया कमाया था मारवाड़ियों से। चार से चलते चलते फीस सोलह रुपये कर ली थी। जब कलकत्ता में यह अच्छी तरह रोगी को दुह चुकते और आराम नहीं हो पाता तो उसे देश—राजपूताना जाने की सलाह देते। आजकल के डाक्टर तो पहाड़ों पर जाने की सलाह देते हैं। पर उन्हें मारवाड़ियों को राजपूताना भेजना अधिक उपयुक्त जँचता था। और बिना किसी दवा दारू के हवा पानी के फेर से वहाँ जाकर लोग चंगे हो आते और 'कैलाश बाबू' का गुण मानते। मारवाड़ियों में तो यह संस्कार सा है कि राजपूताने का जल वायु बहुत अच्छा है और आज भी जब किसी मारवाड़ी को कलकत्ते में मन्दाग्नि या मलेरिया की शिकायत हुई तो सीधे देश—राजपूताना—भागता है और महीने दो महीने वहाँ बाजरे की रोटी और दही का स्वाद लेता है और जो कहीं हुआ मौसम मतीरे (तरबूज) का तो फिर क्या पूछना है। मतीरे, काकड़ी, और सिट्टों के खानपान से स्वास्थ्य सुधार लाता है। बस रेल का किराया ही खर्च होता है बाकी तो खाने पीने के खर्चे में कलकत्ता से बहुत किफायत में रह जाता है।

मैं भी राजपूताने की आबहवा की तारीफ तो बराबर सुनता आ रहा था। और वहाँ दो-चार चक्कर दो-चार दिन के जब तब लगा भी आया था पर आबहवा के ख्याल से इसी बार गया था। सचमुच वहाँ का हवा पानी बेहतर है। भूख खूब लगती है, पेट साफ रहता है। लिहाजा खाया हुआ हज्म होता है। या खाया हुआ हज्म होता है इससे पेट साफ रहता है और भूख लगती है। तबियत खुश रहती है। वहाँ मैं सोचता कि इतनी अच्छी आबहवा का क्या कारण है। संस्कार है मन में कि पानी जहाँ का ज्यादा नीचा होता है वहाँ का अच्छा होता है। हाँ तो राजपूताना में जहाँ की आबहवा बहुत अच्छी मानी जाती है पानी १००-१२५ फुट गहरा है। जो लोग इस विषय के पंडित हों उन्हें इसपर प्रकाश डालना चाहिए। पर मैं तो एक और चीज सोचता था कि राजपूताने का बालुकामय होना भी क्या स्वास्थ्य को लाभ पहुँचाने में कोई कारण है। वहाँ तो मुझे इसके समर्थन में कोई बात नहीं मिली लेकिन उस दिन कूने के 'आकृति निदान' को उलटते उलटते उसमें बालू की बड़ी तारीफ मिली। वह यहाँ 'जीवन-सखा' के पाठकों की भेंट है।—

"एक चीज का नाम मैं यहाँ खास तौर पर लेना चाहता हूँ जो मनुष्य-शरीर के लिए बहुत जरूरी है, पर जिसे लोग बिलकुल बेफायदा समझते हैं। यह चीज और कुछ नहीं सिर्फ बालू है। बालू से पाचन-शक्ति में निस्सन्देह सहायता पहुँचती है। प्राकृतिक दशा में खाते

की चीजों के साथ हमेशा कुछ न कुछ बालू जरूर मिली रहती है। खाने की चीजें कितनी ही ज्यादा क्यों न धोई जायँ पर उनमें से बालू पूरी तरह से दूर नहीं हो सकती। बहुत सी बातों में तो पानी से धोना फायदेमन्द है पर धोने से एक ऐसी चीज निकल जाती है जो बदन के लिए बहुत ही जरूरी है।

"जानवर लोग कुदरती तौर पर बालू खाया करते हैं। बालू उन्हें नहीं मिलती तो बीमार हो जाते हैं। उदाहरण के तौर पर मुर्गियों को लीजिए। अगर बालू उन्हें खाने को न मिले तो उनके पर बहुत जल्द भद्दे और खुरखुरे हो जायँ। शुतुर्मुर्ग के पर कितने बढ़िया होते हैं, पर वे रेगिस्तान के ही रहने वाले हैं। जिन जगहों में बालू ज्यादा नहीं होती वहाँ शुतुर्मुर्ग के पर अधिक सुन्दर नहीं होते। उन्हें कितना ही बढ़िया से बढ़िया खाना क्यों न दिया जाय मगर बिना बालू के उनके पर नहीं सुधर सकते। इसी तरह से मनुष्य के लिए भी थोड़ी सी बालू बहुत ही जरूरी है। इसलिए महीन आटे और मैदे की बनी हुई रोटी खाने की अपेक्षा दलिया और मोटे आटे की रोटी खाना ज्यादा अच्छा है, क्योंकि अनाज के ऊपर की ओर बालू के छोटे छोटे कण जरूर लगे रहते हैं।

"जानवरों के बारे में खूब जाँच करने के बाद मैं इस बात के निश्चय करने में लग गया कि बालू के छोटे छोटे कणों के खाने से मनुष्यों पर क्या प्रभाव पड़ता है। इस जाँच के जो नतीजे निकले हैं उनसे मुझे बड़ा सन्तोष हुआ है और मैं उन्हें यहाँ पर प्रकाशित कर देना चाहता हूँ। मैंने समुद्र के किनारे पर की बढ़िया से बढ़िया बालू चुनकर मँगवाई, पर नदी के किनारे वाली बढ़िया बालू से भी काम चल सकता है। मैंने बालू जर्मन समुद्र के किनारे पर से मँगवाई थी। यह बालू इतनी उम्दा और महीन थी कि आसानी के साथ निगली जा सकती थी। इस तरह की बालू में छुतैले जहर को मारने वाली खासियत भी रहती है। यह आजमाइश आप खुद कर सकते हैं। जिस कमरे की हवा बिनौला या दूध जलने से खराब हो गई हो उसमें दो चार मुट्ठी बालू को तपे हुए तवे पर गरम कर लीजिए। आपको यह देखकर ताज्जुब होगा कि इस उपाय से उस कमरे की दुर्गन्ध कैसे जल्दी गायब हो गई। जब तक यह आजमाइश जारी रहे तब तक खिड़कियों और दरवाजों को बन्द रखना चाहिए, जिसमें कि बालू का पूरा असर ज्यादा अच्छी तरह देखा जा सके।

"बालूदार प्रदेशों की हवा हमेशा साफ रहती है, क्योंकि वहाँ बालू प्रकृति की ओर से मानो छूत और जहर मारने वाली दवा का काम करती है। अगर बालू में किसी कदर चिकनी मिट्टी मिली होगी तो असर इतना अच्छा न होगा।

"अब आप यह पूछ सकते हैं कि क्या बालू शरीर के भीतर की खराब हवा और खराब चीजें बरबाद करके वैसा ही अच्छा असर नहीं पैदा कर सकती अर्थात् क्या बालू शरीर के अन्दर उस चहबच्चे को नहीं सुखा सकती जिसमें भयानक बीमारियों के जहरीले कीटाणु पैदा होते और बढ़ते हैं?

"बालू का असर क्या होता है इसका निश्चय करने के विचार से मैंने कई आजमाइशें की हैं। इन आजमाइशों के नतीजों से पता लगा है कि बालू में बहुत बड़े गुण हैं। मैं यहाँ पर इस बात का एक अच्छा उदाहरण देना चाहता हूँ।

"एक स्त्री को युवावस्था से ही कोष्ठबद्ध का रोग था। उसने कई तरह के इलाज किए पर किसीसे भी कुछ फायदा न हुआ। पचास बरस की उमर में उसकी यह शिकायत इतनी बढ़ गई और उसे इतनी तकलीफ होने लगी कि उसकी हालत बहुत ही खतरनाक दिखलाई पड़ने लगी। किसी तरह के जुलाब से भी उसका पेट साफ न होता था। कभी कभी तो हफ़्तों तक और एक बार तो लगातार पाँच हफ़्ते तक उसे दस्त न हुआ। जब वह मेरे पास आई तो मैंने उससे कहा कि वह दिन में चार या पाँच मर्तबा पेड़ू नहान ले और दलिया तथा खट्टे फल खाए। इस इलाज से कोष्ठबद्ध में जरूर फायदा

होता है, पर इस स्त्री के सम्बन्ध में यह इलाज काफी न था। इसलिए मैंने यह आजमाइश की कि अगर खाने के बाद ही उस स्त्री को एक चुटकी समुद्री बालू दिन में दो तीन बार दिया जाय तो उससे क्या नतीजा होगा। जैसी आशा न थी उससे कहीं अच्छा नतीजा बड़ी तेजी के साथ दिखलाई पड़ा। दूसरे ही दिन पेट की आँतें ढीली पड़ गईं। पहले तो पाखाना काले रंग का, सख्त और गोल हुआ, पर बाद को बिलकुल ठीक ढंग का होने लगा। जिस तरह का स्नान और जिस तरह का भोजन पहले बतलाया गया था वही जारी रखा गया।

"अब आप देख सकते हैं कि बालू का कितना अच्छा असर उस स्त्री की बीमारी पर पड़ा। निःसन्देह बालू पाचन-शक्ति को ठीक हालत में रखने और उसे सुधारने का एक अच्छा कुदरती जरिया है।

"अपनी पुरानी प्रणाली के अनुसार डाक्टर और हकीम इस बात को कभी न मानेंगे कि बालू खाने से कुछ फायदा हो सकता है, क्योंकि बालू प्रायः घुल नहीं सकती।"

आशा है कि हिन्दुस्तान में भी जिन प्राकृतिक चिकित्सकों ने बालू को आजमाया है वह इसपर अपने अनुभव लिखेंगे अथवा आजमा कर लिखने की कृपा करेंगे।

[पृष्ठ १३५ का शेषांस]

(९) गठिया भी मोटे आदमी को बहुत सताता है।

(१०) किसी तरह की बीमारी, घाव इत्यादि में बहुत समय लगता है।

उपाय

मोटापा दूर करने के लिए दो ही उपाय हैं।

(१) भोजन में रदबदल करना और परिमाण कम करना।

(२) आवश्यक कसरत करना।

इसके साथ और भी स्वास्थ्य सम्बन्धी उपचार करना चाहिए। मालिश कमजोर व्यक्तियों के लिए आवश्यक है। शरीर का वजन धीरे धीरे कम करना चाहिए। ज्यादा से ज्यादा एक महीने में ५ सेर तक कम कर सकते हैं। इस हिसाब से समय तो अवश्य अधिक लगता है परन्तु शरीर अभ्यस्त हो जाता है और रोगी को कमजोरी नहीं मालूम होती। यदि मोटापे के कारण हालत बहुत खराब हो तो एक महीने में १५ सेर तक घटा सकते हैं। भोजन में चिकनाई बहुत कम कर देनी चाहिए। यदि गठिया का रोगी हो तो प्रोटीन की मात्रा भी कम कर देनी चाहिए और ५० (ग्राम) से ज्यादा प्रोटीन नहीं देना चाहिए। यह दूध और हरी सब्जी से पूरा कर सकते हैं। इन उपचारों से यदि कुछ विशेष फायदा न हो तो समझना चाहिए शरीर के अन्दर उचित परिमाण में तरह तरह के रस नहीं निकलते हैं और इसके लिए किसी विशेषज्ञ से परामर्श लेना चाहिए।

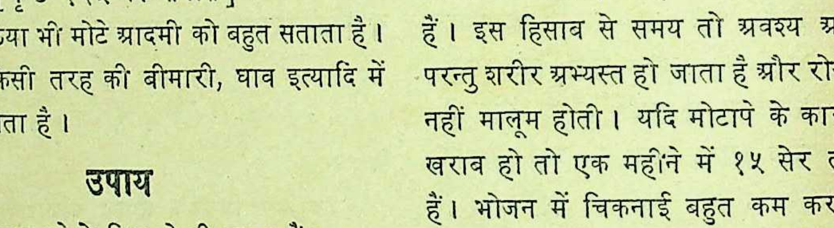

चिट्ठी-पत्री

'प्रश्नोत्तर' स्तम्भ में प्रत्येक मास पाठकों के स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर में उसकी सारी बातों को मद्दे नजर रखते हुए घर पर चल सकने लायक निरापद रास्ता ही बताया जाता है। गत अक्तूबर मास में दिए गए कुछ उत्तरों के औचित्य के बारे में जीवन-सखा के एक सजग पाठक ने कुछ शंकाएँ उठाते हुए हमें एक पत्र लिखा है। उनका पत्र हमारे उत्तर के साथ हम यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। आशा है पाठकों के सामने हमारा दृष्टिकोण स्पष्ट हो जायगा।—सं०

दिल्ली ६–११–४०

प्रिय महोदय,

अक्तूबर '४० के जीवन-सखा में प्रश्नोत्तर शीर्षक से आपने कुछ प्रश्नों का जो उत्तर दिया है, उनसे मैं सहमत नहीं। पृष्ट ३०८ पर एक विद्यार्थी को राय देते समय कहा गया है कि कुछ पदार्थ जिनमें फासफोरस अधिक पाया जाता है, हैं—लौकी, सेब, हरी मटर। फासफोरस तो रोटी दाल में सबसे अधिक होता है। साग में चने का साग, सोया, फलों में अनार, खजूर, कैथा।

इसी प्रकार क्षय-रोग से पीड़ित श्री गोपीनाथ गोयल से कहा गया है कि दूध और शन्तरे में सबसे अधिक कैलशियम होता है। यह भी बताया गया है कि कैलशियम के दृष्टिकोण से पूर्ण दूध व मक्खन निकाले दूध में कोई अन्तर नहीं है। मैं तो कहूँगा कि अधिक कैलशियम, दाल, चने का साग, सैंजन, धनिया पदार्थों में होता है। सबसे अधिक कैलशियम तिल में होता है। शन्तरे में तो तिल का $\frac{१}{३३}$ व दूध में उसका $\frac{१}{१२}$ गुना ही कैलशियम मिलता है। पूर्ण दूध की अपेक्षा मखनिया दूध में $\frac{१}{४}$ गुना ही कैलशियम होता है।

यदि पत्र से लाभ उठाने के इच्छुकों को ऐसी उलटी सीधी राय दी जायगी तो परमात्मा ही रक्षा करे! इससे कहीं बेहतर होगा कि राय दी ही न जाय। यदि किसी को रास्ता बताया जाता है तो सच्चा रास्ता बताया जाए। यह मैं मानता हूँ कि ऐसा करने के प्रयत्न में कुछ खोज-बीन करनी पड़ा करेगी।

अस्तु। मैं एक प्रार्थना करता हूँ। आप कृपया दो आने की Health Bulletin No. 23 की एक प्रति Kitabistan, कमला नेहरू रोड, प्रयाग से मँगा लें। उससे आपको अवश्य सहायता मिला करेगी। उक्त बुलेटिन सरकार का प्रकाशन है।

भवदीय

× × ×

प्रियवर,

कृपा-पत्र मिला। आपके पथप्रदर्शन के लिए मैं बहुत ही अनुग्रहीत हूँ। फासफोरस पाए जाने वाले प्रधान खाद्य-पदार्थों में चने के साग, सोया, अनार, खजूर, कैथा जोड़ लेने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आप जो यह कहते हैं कि रोटी-दाल में सबसे अधिक फासफोरस होता है, वह भी सही है। इसमें भी संदेह नहीं है कि तिल में सबसे अधिक कैलशियम पाया जाता है और दूध शन्तरे इसकी तुलना में बहुत ही कमजोर पड़ते हैं। पर जो उत्तर जीवनसखा में दिए जाते हैं उनमें एक ही दृष्टिकोण से विचार नहीं होता। रोगी के रोग का भी ख्याल करना होता है और यह भी कि वह खाद्य वस्तु हर दृष्टि से रोगी के लाभ की हो।

रोटी दाल तो रोगी खाता ही है पर जब उससे उसका पूरा नहीं पड़ता तभी और चीजों की खोज है। वह औषध रूप में मिलनी चाहिए। रोटी दाल अधिक खाने से तो पेट भारी हो जायगा, पाचन बिगड़ेगा और

रोग बढ़ेंगे। अतः लौकी सेब सी हलकी चीजों की शिफारस है। आप यह भी ध्यान रखें कि जो भोजन बताया जाय वह अधिकतर खून में क्षार पैदा करने वाला हो। और भी कि जहाँ तक होसके प्राकृतिक दशा में कच्चा ही खाया जा सके। हम तरकारियों का रस पीने की शिफारस 'जीवन-सखा' द्वारा बराबर करते रहते हैं। लौकी में खूब रस निकलता है और सस्ती भी है। सेब मौसम का फल है और हरे मटर अभी आने ही वाले हैं। उनमें कोमल अवस्था में प्रोटीन बहुत थोड़ी मात्रा में होती है, अधिकतर प्राकृतिक लवण, जल, विटामिन और फुजला ही होता है। इस दृष्टि से तो चने का साग, सोया, अनार, खजूर भी ठीक हैं।

इसके अलावा एक बात और ध्यान देने की है कि कौन चीज कितनी खाई जा सकती है। वह किस वजह से बताई जा रही है और इसके अलावा उसके गुण दोष क्या हैं? तिल में कैलशियम सबसे अधिक है, इससे कौन इनकार कर सकता है। पर एक क्षय के रोगी को आप कितना तिल खिलावेंगे? तिल में पाया जाने वाला तेल क्या सहज में पचने वाली चीज है और फिर तिल कच्चा खाया जायगा कैसे? पर दूध तो दुग्ध चिकित्सा में रोगी छ-सात सेर और यूँ भी डेढ़-दो सेर मजे में पी लेते हैं। जो कल्प नहीं कर सकते उन्हें अधिकतर दूध और शन्तरे के रस पर रहने को कहा जाता है। वयस्क के भोजन में नित्य दस ग्रेन ही कैलशियम की तो जरूरत है। यह अधिकतर खाए जाने वाले खाद्य-पदार्थ चोकर रहित आटे की रोटी, छँटे चावल, केले, मूँगफली, नारियल, खजूर, आलू, हरी मटर आदि में तो करीब ढाई सेर में मिलता है और बादाम, अंजीर, खजूर में करीब एक सेर में। आध सेर फूल गोभी, टमाटर, लौकी, खीरा, गाजर, पालक में भी दस ग्रेन कैलशियम मिल जाता है। पर वही दस ग्रेन कैलशियम नौ छटाँक दूध और औसत कद की सात नारंगियों में मिलता है।

अब समस्या यह है कि कौन से खाद्य-पदार्थ की मात्रा रोगी के भोजन में बढ़ाई जा सकती है जिससे रोगी को कष्ट न हो। ऐसी हालत में दूध और शन्तरे के रस की शिफारिस को आप भी बुरा न कहेंगे। दूध और शन्तरे को दूसरी दृष्टियों से भी देखिए। तगड़ा बनाने वाला और शक्ति देने वाला दूध से बढ़कर सुपाच्य भोजन और कौन सा है? दूध में पाई जाने वाली चिकनाई से बढ़कर हलकी और सुपाच्य दुनिया में दूसरी चिकनाई नहीं है; दूध की चीनी पचा हुआ भोजन है। लोहे को छोड़ कर प्रायः सभी प्राकृतिक लवण और विटामिन इसमें बहुतायत से पाए जाते हैं। शन्तरे का रस तो पचा हुआ भोजन कहलाता ही है। प्रोटीन के पचाने के लिए खटाई सहायक होती है, अतः दूध और शन्तरे का बहुत अच्छा मेल बैठता है। अकेले शन्तरे में प्राकृतिक लवण और विटामिन जिस मात्रा में हैं उनके कारण तो यह उनका राजा कहा जा सकता है।

इस पत्र में कई जगह बिना आग के सम्पर्क में आए भोजन की बात की गई है—उसके बारे में भी। कैलशियम आदि आग पर चढ़ने पर नष्ट नहीं होते—यह सही है, पर कोरे विज्ञान की दृष्टि से। हम तो उसमें बहुत कुछ नष्ट हुआ मानते हैं। उस हानि को मापने का हमारे पास कोई साधन नहीं है, पर उसे यूँ समझिए। अन्न को भून लेने पर उसके अंकुरित होने की शक्ति चली जाती है। वही अन्न जम सकता है जो प्राकृतिक दशा में हो। अन्न की जमने की जो शक्ति आग पर चढ़ने से चली जाती है उसे हम बहुत ही मूल्यवान समझते हैं। इस शक्ति से विहीन खाद्य-पदार्थ का ग्रहण करना प्राणविहीन खाद्य-पदार्थ का ग्रहण करना है।

इसी दृष्टि से क्षय से पीड़ित रोगी को बिना उबाले खाए जा सकने लायक कैलशियम प्रधान सुपाच्य शन्तरे और दूध पूर्ण और मखनिया (दही के लिए)—की राय दी गई है।

११-११-४० }

विनीत
विट्ठलदास मोदी

* * *

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि दो से अधिक प्रश्न वे एक बार में न पूछें और अपने प्रश्न जहाँ तक हो सके संक्षेप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन अवश्य आना चाहिए जो १४३ पृष्ठ पर मिलेगा।—सं०

प्रश्न—मुझे पेशाब के साथ फासफेट जाने की शिकायत कई वर्षों से है, पर इस समय इस रोग से अधिक कष्ट पा रहा हूँ? कृपया इस रोग का कारण और उसके दूर करने के उपाय बताइए। मेरे इस प्रश्न के उत्तर से बहुतों का लाभ होगा।

—केदारनाथ गुप्त, मुंगराबादशाहपुर

उत्तर—फासफेट आने का सीधा कारण है, अनपच। जब भोजन अधिक कर लिया जाता है अथवा ऐसा गरिष्ट किया जाता है जो कठिनाई से पचे तो वह शरीर में फासफेट के रूप में बदलने लगता है और इसका कुछ भाग पेशाब के साथ अधिकतर पेशाब के पहले आ जाता है। आपका अनुभव होगा कि जब उपवास किया जाता है अथवा फलाहार किया जाता है तो फासफेट नहीं आता। अतः आप समझ सकते हैं कि इसका संबंध भोजन एवं पाचन से ही है, किसी दूसरी वस्तु से नहीं। पर भ्रमवश लोग इसे कुछ दूसरी चीज समझ लेते हैं और परीशान रहते हैं। तो इस रोग की चिकित्सा के लिए पहली बात है अधिकतर फल खाना। समझ कर केवल ऐसा भोजन करना जो आसानी से पच सके। पहले एक सप्ताह फल दूध पर रह कर फिर एक वक्त सादी रोटी सब्जी लेने लग जाना चाहिए। स्थाई लाभ के लिए यह आवश्यक है कि शरीर को अधिक स्वस्थ्य बनाया जाय। उसके लिए कसरत को प्रमुख स्थान देना चाहिए। यदि आप कोई दूसरी कसरत न कर सकें तो रोज शक्ति के अनुसार प्रातःकाल चार पाँच मील अवश्य टहलें। जब भी फासफेट आने का जोर हो, फलाहार करें। आशा है इस विधि से आप शीघ्र इस रोग से छुटकारा पा जायँगे।

प्रश्न—मुझे आज १५-१६ वर्ष से सिर-दर्द होता है अब तो वह जीर्ण रोग सा हो गया है, बल्कि उम्र के साथ साथ उसका जोर भी बढ़ रहा है। कृपया जीवन सखा में जो भी उपाय बतावें उनमें खर्च कम से कम होना चाहिए। तभी वे हमारे ऐसे ग्रामीण 'जन्तु' के लिए उपयोगी होंगे। मैं जीवन सखा का पुराना ग्राहक हूँ।

—देवीसिंह कुर्वावी "कुवर", रानीखेत

उत्तर—जीवन-सखा के मार्च सन् १९४० के अंक में सिर-दर्द पर एक विस्तृत लेख प्रकाशित हुआ है। आप कृपा कर उसे पढ़ जायँ। रोग मुक्त होने के लिए बताए तरीकों पर चलने से आपको अवश्य लाभ होगा। उस लेख में बताए भोजन में फल की जगह साग-सब्जियों का उपयोग कर आप अधिक लाभान्वित हो सकते हैं। टीन के टब की जगह मिट्टी के नाँद से काम लिया जा सकता है। काठ का भी टब बनवाया जा सकता है।

प्रश्न—मैं नियमित समय पर खाता हूँ और जहाँ तक होता है, ठीक ही खाता हूँ। प्रातः साढ़े चार बजे उठकर स्नान, व्यायाम, संध्या, वायु सेवन सब कुछ करता हूँ। पौने पाँच बजे सबेरे जब मैं नाक से पानी पीकर

शौच जाता हूँ तो दस्त बिलकुल नहीं होता और नौ बजे सवेरे दुबारा जानेपर होता है यद्यपि हो जाता है साफ पर यह आदत अच्छी नहीं है, कृपया लिखिये इससे मुक्त होने के लिये क्या करूँ ? शाम को फिर शौच जाता हूँ ।

—नानकचन्द, सहारनपुर

उत्तर—मनुष्य अधिकतर आदतों का ही तो गुलाम है और आदत एक दिन में नहीं धीरे धीरे ही पड़ती और छूटती है । यदि पेट ठीक साफ हो जाता है तो यह जरा भी चिन्ता का विषय नहीं है कि आपको कब शौच होता है । बहुत से लोग सोने से ठीक पहले पाखाने जाते हैं और ऐसों की तो संख्या बहुत अधिक है जो भोजन करने के बाद शौच होते हैं । अमेरिका के एक बड़े प्राकृतिक-चिकित्सक डा० जी० एच० केलाग का तो कहना है कि सवेरे, दोपहर, शाम तीन बार भोजन करना चाहिए और इसके बाद ही शौच जाना चाहिए । उनका कहना है कि खाने के बाद शौच जाने से सफाई अधिक होती है, क्योंकि जब हम खाते हैं तब बड़ी आँतों में मल की चाल नीचे की ओर चौगुनी बढ़ जाती है । अतः भोजन के बाद ही शौच का उपयुक्त समय है । पर मेरा ख्याल है कि यदि आप दोपहर के भोजन में नाशपाती, अमरूद मकोय के फल और पालक, भतुआ पातगोभी से साग को अधिक स्थान दें तो सवेरे पाखाना होना चाहिए ।

प्रश्न—मेवा, दूध, भीगे चने, और फल इनमें से प्रातःकाल के नाश्ते के लिए सबसे अच्छी चीज कौन सी हैं ? क्या हर मौसम में एक ही चीज नाश्ते में ली जा सकती है ? अगर नहीं तो किस मौसम में क्या खावें ?

—ज्ञानचन्द्र, जैपुर

उत्तर—हिन्दुस्तान के बुद्धि-जीवियों के काम का समय कुछ ऐसा है कि उन्हें प्रातःकाल दस बजे के पहले ही भोजन करना पड़ता है । श्रम-जीवी ही भोजन के उपयुक्त समय दोपहर को भोजन करते हैं । यदि आप भी पहली ही श्रेणी में से हैं तो कुछ भी जलपान न करना अच्छा होगा । यदि करना ही चाहें तो फलों या तरकारियों का पाव डेढ़पाव रस लिया जा सकता है । अधिक से अधिक सन्तरा, टमाटर, रसभरी, खरबूजा, अनन्नास से फल खाये जा सकते हैं । जो बारह बजे भोजन करते हों तो फल खाने के बाद पाव भर कच्चा दूध भी लिया जा सकता है । भीगे चने सर्वसाधारण के लिए बिलकुल अनुपयुक्त हैं क्योंकि इनको पचाने में बड़ी कठिनाई होती है जिसके लिए प्रातःकाल मेदा बिलकुल तैयार नहीं होता । मेवों में बादाम अखरोट से तैलयुक्त मेवे तो नहीं पर किशमिश मुनक्का से चीनीयुक्त मेवे जलपान के लिए इस्तेमाल किये जा सकते हैं, पर इनकी मात्रा बहुत थोड़ी होनी चाहिए । हर मौसम में मौसम का फल लेना चाहिए, अथवा तरकारियों का रस शहद और नीबू का रस मिलाकर । यह प्रबन्ध न हो सके तो किशमिश भिगोकर बराबर ली जा सकती है ।

प्रश्न—१५ दिसम्बर के 'सात्विक जीवन' के अंक में जीवन सखा से उद्धृत लेख 'तरकारियों का मूल्य' पढ़ा । लौकी, परवल, पातगोभी और पालक तो कच्चा खाया नहीं जाता । उसे पकाया जाय तो किस प्रकार ? कच्ची तरकारियाँ खाई जायँ तो किस प्रकार ?

—महादेवलाल अग्रवाल, किशनगंज

उत्तर—लौकी, पातगोभी और पालक भी कच्चा खाया जाता है । गाजर, खीरा, ककड़ी, चुकन्दर, मूली, टमाटर, प्याज शलजम आदि में से दो चार चीजों को लेकर पतला पतला काट लेना चाहिए और उसे भोजन से पहले एक आदमी को तीन-चार छटांक खाना चाहिए । स्वाद के लिए नीबू का रस और नमक भी मिलाया जा सकता है । कच्ची तरकारियों के इस मेल को सलाद कहते हैं । तरकारियाँ भाप से कुकर में अच्छी पकती हैं ?

—वि० दा० मोदी

* * *

जीवन सखा एक रुपए में

सार्वजनिक पुस्तकालयों को

दिल्ली निवासी श्रीमान् लक्ष्मीनारायणजी गाडोदिया ने हमें सौ रुपया उन सार्वजनिक पुस्तकालयों के सहायतार्थ भेजा है जो जीवन सखा मँगाना चाहते हैं।

आपकी इस सहायता से हमने पचास पुस्तकालयों को साल भर तक जीवन-सखा एक रुपये में देना निश्चित किया है। इस रियायत से लाभ उठानेवालों को जनवरी में प्रकाशित एक रुपये मूल्य का विशेषांक भी मिलेगा।

केवल सार्वजनिक पुस्तकालयों को ही इस सूचना से लाभ उठाना चाहिए। रियायती चन्दा मनीआर्डर से भेजें। वी० पी० नहीं जायगी।

मैनेजर—जीवन सखा, इलाहाबाद

अपना स्वास्थ्य और दूसरों का स्वास्थ्य

प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह इलाहाबाद के तत्वावधान में योग तथा प्राकृतिक-चिकित्सा पद्धति सिखाने का विशेष प्रबंध किया गया है। शिक्षाकाल तीन-तीन सप्ताह का तीन बार करके कुल नौ सप्ताह में समाप्त होगा। शिक्षणकाल पहली मार्च से आरंभ होता है, जो शिक्षार्थी इस अवसर से लाभ उठाना चाहें वे १५ फरवरी तक अपने प्रार्थना-पत्र भेजें। प्रत्येक तीन सप्ताह के शिक्षण-काल के लिए फीस केवल पाँच रुपया होगी। प्रथम शिक्षणकाल की फीस प्रार्थनापत्र के साथ भेजना अनिवार्य है। शिक्षण का विस्तृत विवरण-पत्रक चार आने के टिकट भेजने से प्राप्त हो सकेगा।

शिक्षणकाल की समाप्ति पर शिक्षार्थियों की परीक्षा होगी जो उत्तीर्ण होंगे वे एन० डी०, डी० वाई० (N.D.,D.Y.) डिगरी प्राप्त करेंगे।

८७ हिम्मत गंज
इलाहाबाद

बालेश्वरप्रसादसिंह
डाइरेक्टर—प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह

प्रश्नोत्तर कूपन, फरवरी १९४१

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

AWAY WITH DISEASE

Enjoy bubbling health & real happiness,
Build up a cheerful, harmonious home,
Construct the Social Structure on firm foundation,
Become a Master of yourself and your environment

By Reading

Human Culture and Cure by E.D. BABBITT, M.D., LL.D.

FOR DETAILED PROSPECTUS APPLY TO THE PUBLISHERS
THE CHROMOPATHIC INSTITUTE
Andhra Grandhalaya Press Buildings, Bezwada, India

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें खरीदिए

सन् १९३६ (फरवरी, मार्च के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९३७ (जनवरी, मार्च के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९३८ (जनवरी, फरवरी, अप्रैल के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९३९ (जनवरी, फरवरी के अंक नहीं हैं) मूल्य २॥)
सन् १९४० मूल्य ३)

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी' ही बचा सकती है

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।
(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।
(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है

'कहानी'

सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

इस उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २।।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट

मनुष्य को देवता बनाने का प्रयत्न !

अखंड ज्योति

यह आपको क्यों पढ़नी चाहिये ? क्योंकि

(१) इसमें मैस्मरेजम, हिप्नोटिज्म, योग की चमत्कारिक क्रियाएं, तंत्र शास्त्र, मनोविज्ञान आदि गढ़ विषयों पर वैज्ञानिक चर्चा रहती है। (२) यह सदाचार, धर्म निष्ठा, भ्रातृभाव और मानवता का प्रचार करती है। (३) इसमें धुरंधर विद्वान और महात्माओं द्वारा ऐसे उपाय बताये जाते हैं, जिनसे आप अपनी मानसिक शक्ति बढ़ा कर सब प्रकार की उन्नति कर सकें। (४) इतनी सुन्दर और सस्ती मासिक पत्रिका ढूँढने पर भी नहीं मिल सकती। वार्षिक मूल्य १।।) नमूना मुफ़्त मँगा लीजिये।

हमारी प्रकाशित कुछ अद्भुत पुस्तकें

(१) **मैं क्या हूँ ?**—अपनी आत्मा के सच्चे स्वरूप का दर्शन करने के अनुभूत अभ्यास। मूल्य ।=)
(२) **प्राण चिकित्सा विज्ञान**—आध्यात्मिक प्राण शक्ति से समस्त रोगों को दूर करने की शिक्षा। मू० ।=)
(३) **सूर्य चिकित्सा विज्ञान**—सूर्य की प्रचण्ड शक्ति से कठिन बीमारियों के इलाज की विधि। मू० ।=)
(४) **पर काया प्रवेश**—आत्मशक्ति को दूसरों के शरीर में प्रवेश करके उसे अपनी इच्छानुसार चलाने की गुप्त प्रक्रिया। मूल्य ।=)

उपरोक्त सभी पुस्तकें वर्षों के अनुभव से लिखी गई हैं।

मैनेजर—'अखण्ड ज्योति' कार्यालय, मथुरा।

स्वास्थ्य सम्बन्धी

कुछ

अनमोल पुस्तकें

रोगों की अचूक चिकित्सा—लेखक—श्रीयुत जानकी शरण वर्मा। प्राकृतिक चिकित्सा की ओर लोगों की विशेष अभिरुचि देखकर वर्माजी ने इस पुस्तक को लिखकर साधारण हिन्दी-भाषा का ज्ञान रखने वालों के हाथ में तन्दुरुस्ती ठीक करने की बातों का पूरा विवरण दे दिया है। इसमें तन्दुरुस्ती क्या है? क्यों बिगड़ती है? और कैसे फिर सुधर सकती है आदि विषयों पर बहुत ही ठीक ढंग से प्रकाश डाला गया है। इसमें एक नवीनता यह है कि इसके बताए तरीकों के पालने में अपना कुछ खर्च नहीं पड़ता। इस अद्भुत और उपयोगी सचित्र पुस्तक का मूल्य २।) मात्र।

सरल शरीर विज्ञान—लेखक—श्रीयुत् जानकी शरण वर्मा। प्राकृतिक चिकित्सा करने और जानने वालों के लिये शरीर-विज्ञान का जानकार होना बहुत ही आवश्यक है। पर इस कठिन विषय पर अबतक कोई सरल पुस्तक नहीं थी जो सर्वसाधारण के काम की हो सके। यह पुस्तक इस कमी की पूर्ति करती है। मूल्य १।।)

फलाहार और फल-चिकित्सा—लेखक—नारायण प्रसाद अरोड़ा। मनुष्य का वास्तविक आहार फल है और फल के प्रयोग से रोग भगाना मामूली बात है। अरोड़ा जी ने इस पुस्तक से फलाहार की समस्या हल कर दी है। मूल्य १।।)

आदर्श-भोजन—लेखक—स्व० लक्ष्मी नारायण चौधरी। हमारे लिए उचित भोजन क्या है? हमें क्या खाना चाहिए? परमोत्तम अन्न, फल और तरकारियाँ कौन कौन सी हैं? उनके गुण क्या हैं?—इन सब प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक से लीजिए। मूल्य ।।)

कब्ज या कोष्ठवद्धता—लेखक—डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह। कब्ज से क्यों परेशान होते हैं? यह रोग भोजन, जल और कसरत के प्रयोग से सदा के लिए भगाया जा सकता है। पर उनकी विधि जाननी चाहिए। वह सभी आपको कब्ज या कोष्ठवद्धता पुस्तक में मिलेंगी। प्रचार के लिए मूल्य केवल ।~) रखा गया है।

मठा उसके गुण तथा उपयोग—लेखक— ० महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद-विशारद। पांडेयजी ने देश और विदेश की इस विषय पर अनेक पुस्तकें पढ़ने के बाद अनुभव के आधार पर यह पुस्तक लिखी है जो प्रत्येक चिकित्सक और चिकित्सार्थी को जरूर पढ़ना चाहिए। मूल्य ।)

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता:—

मैनेजर—स्वास्थ्य ग्रन्थ भंडार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद।

विशेषाङ्क ! विशेषाङ्क !!

गुलदस्ता

पाठकों को जान कर प्रसन्नता होगी, कि फ़रवरी, सन् १९४१ के अंक-द्वारा 'गुलदस्ता' का प्रथम खण्ड सकुशल और निर्विघ्न समाप्त हो रहा है और इसकी

माँग यकायक इतनी बढ़ गई है,

कि हमारे लिए उसे पूरी करने में अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ हो रही हैं; केवल मेसर्स ए० एच० ह्वीलर कम्पनी ने रेलवे बुक-स्टॉलों पर 'गुलदस्ता' के प्रथमाङ्क को डरते-डरते २०० प्रतियाँ मँगाई थीं, जो आज लगभग २,००० तक पहुँच चुकी हैं। इच्छा और समुचित साधनों का नितान्त अभाव होते हुए भी पाठकों के अनुरोध को हम टाल नहीं सके और फलतः होली के अवसर पर 'गुलदस्ता' का एक छोटा-सा

विशेषांक

प्रकाशित करने का निश्चय कर लिया गया है। इस अंक का मूल्य यद्यपि लागत-मात्र, अर्थात् केवल आठ आना रखना निश्चित किया गया है; पर हमें भय है, कि अधिकांश ऐसे पाठकों को निराश होना पड़ेगा,

जो अब तक स्थायी ग्राहक नहीं हैं

क्योंकि नए एजण्टों की माँगों को पूरा करना, इसलिए सम्भव नहीं है, कि विशेषांक की छपाई अभी से शुरू हो गई है और इन लोगों से सौदा करने में (जिसके वे आदी हैं) कुछ समय का लग जाना स्वाभाविक ही है, अतएव हमारी सलाह है, कि जो लोग अभी तक स्थायी ग्राहक नहीं हैं, उन्हें तुरन्त

५) रु० मनीऑर्डर-द्वारा भेज कर पूरे साल के लिए

निश्चिन्त तथा विशेषांक के हक़दार हो जाना चाहिए:

बुद्धिमान विज्ञापनदाता भी लाभ उठा सकते हैं

मैनेजर :: कर्मयोगी प्रेस, लिमिटेड, :: इलाहाबाद

BOOKS ON HEALTH

That will Change the Course of Your Life

NATURE CURE *by* H. LINDLAHR, M.D.

"That a knowledge of the health principles mentioned in this book will materially aid the reader in his sincere efforts in regaining health and prolonging life. This work will be found most instructive, inspiring and full of practical suggestions for the attainment of complete self-development...... They will afford a scientific guide to self-treatment".

Price Rs. 6.

PRACTICAL NATURE CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D.

A book that will guide you to help yourself and others—the result of Dr. Sharma's vast study and profound experience. Nature-cure made really to suit Indian people. A most practical book, which you must possess.

Latest Enlarged Edition **Price Rs. 4.**

DRUGLESS HEALING *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D.

"Will serve not only as an introduction to the study of the philosophy of Nature-cure and its practice, but also as a book of ready reference after one has studied the subject from various sources and point of view."

Price As. 6.

YOUR DIET IN HEALTH AND DISEASE *by* HARRY BENJAMIN.

This "Home Treatment" book is a complete guide to the Dietetic and Physical treatment of Diseases. It contains chapters on Food, its Digestion, Absorption, and assimilation; How the Body works; Our Daily Food; Eating for Health not Disease, the Art of combining Foods; Feeding children; and concludes with a self-treatment Chart for all Common Ailments.

Khaddar Bound. **Pages 199** **Price As. 12.**

THE FASTING CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 3.**

THE NATURE CURE OF EYE DEFECTS *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D. **Price As. 8.**

PRANAYAMA *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 2.**

To be had from:—

HEALTH BOOK DEPOT

87 Himmatganj, ALLAHABAD

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१)	रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले॰ जानकी शरण वर्मा, बी॰ ए॰	२॥)
(२)	प्राकृतिक चिकित्सा : सं॰ केदारनाथ गुप्त॰, एम॰ ए॰	२)
(३)	मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले॰ श्रीयुत महेन्द्रनाथ पाण्डेय	।)
(४)	दूध ही अमृत है : ले॰ हनुमान प्रसाद गोयल	१।)
(५)	स्वास्थ्य के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय	=)॥
(६)	शक्तिदर्शन : ले॰ शंकरलाल तिवारी	।)
(७)	आनन्दमय जीवन का ह्रास और उसके कारण	।=)
(८)	क्या और कैसे खायें : ले॰ डा॰ बालेश्वर प्रसाद सिंह	।)
(९)	ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले॰ स्वामी शिवानन्द	॥)
(१०)	आदर्श-भोजन : ले॰ एल॰ एन॰ चौधरी	॥)
(११)	स्वास्थ्य और योगासन : ले॰ विद्याभास्कर सुकुल	१)
(१२)	कब्ज या कोष्ठबद्धता : ले॰ डा॰ बालेश्वर प्रसाद सिंह	।-)
(१३)	हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम॰ ए॰	१)
(१४)	फलाहार फल-चिकित्सा : ले॰ नारायणप्रसाद अरोड़ा	१।)
(१५)	स्वास्थ्य-रक्षा : ले॰ गांधीजी	।=)
(१६)	स्वास्थ्य-साधन : ले॰ स्व॰ रामदास गौड़	३)
(१७)	आकृति-निदान : ले॰ लूईकूने	१।)
(१८)	बच्चों की रक्षा : ले॰ लूईकूने	।-)
(१९)	मैं निरोग हूँ या रोगी : ले॰ लुईकूने	।)
(२०)	जल-चिकित्सा (तीन भाग) : ले॰ राखालदास	३॥)

		Rs.	a.
(२१)	**Nature Cure** by H. Lindlahar, M.D.	6	0
(२२)	**Practical Nature Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	4	0
(२३)	**Fasting Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	3
(२४)	**Pranayama** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	2
(२५)	**Drugless Healing** by Dr. L. Kamesvaram, M.A., N.D.	0	6
(२६)	**The Nature Cure of Eye defects** by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D.	0	8
(२७)	**Your Diet in Health and Disease** by Harry Benjamin	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

Reg. No. A-172

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले
रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलतापूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, क़ब्ज़, संग्रहणी, प्लुरिसी, दमा, बवासीर, निद्राभाव, आमाशय का ज़ख़्म, आँतों की खराबी, सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arterioselerosis), रक्त चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), उपान्त्रदाह, (Appendicitis), ज़हरबाद (Carbuncle), गठिया, पित्ती उछलना, पेचिश, सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह (बहुमूत्र), मोटापा, दुबलापन, यक्ष्मा आरम्भ काल में (Consumption, First Stage) कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर ग्रांड-ट्रंक-रोड पर एक आठ एकड़ के सुन्दर उपवन में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने की स्वयं प्रेरणा होती है।

नियमावली पांच पैसे का डाक-टिकट भेजकर आज ही मँगाइए।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY SYT. BALESHWAR PRASAD SINHA, 87 HIMMATGANJ, ALLAHABAD

भवानी प्रसाद:

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

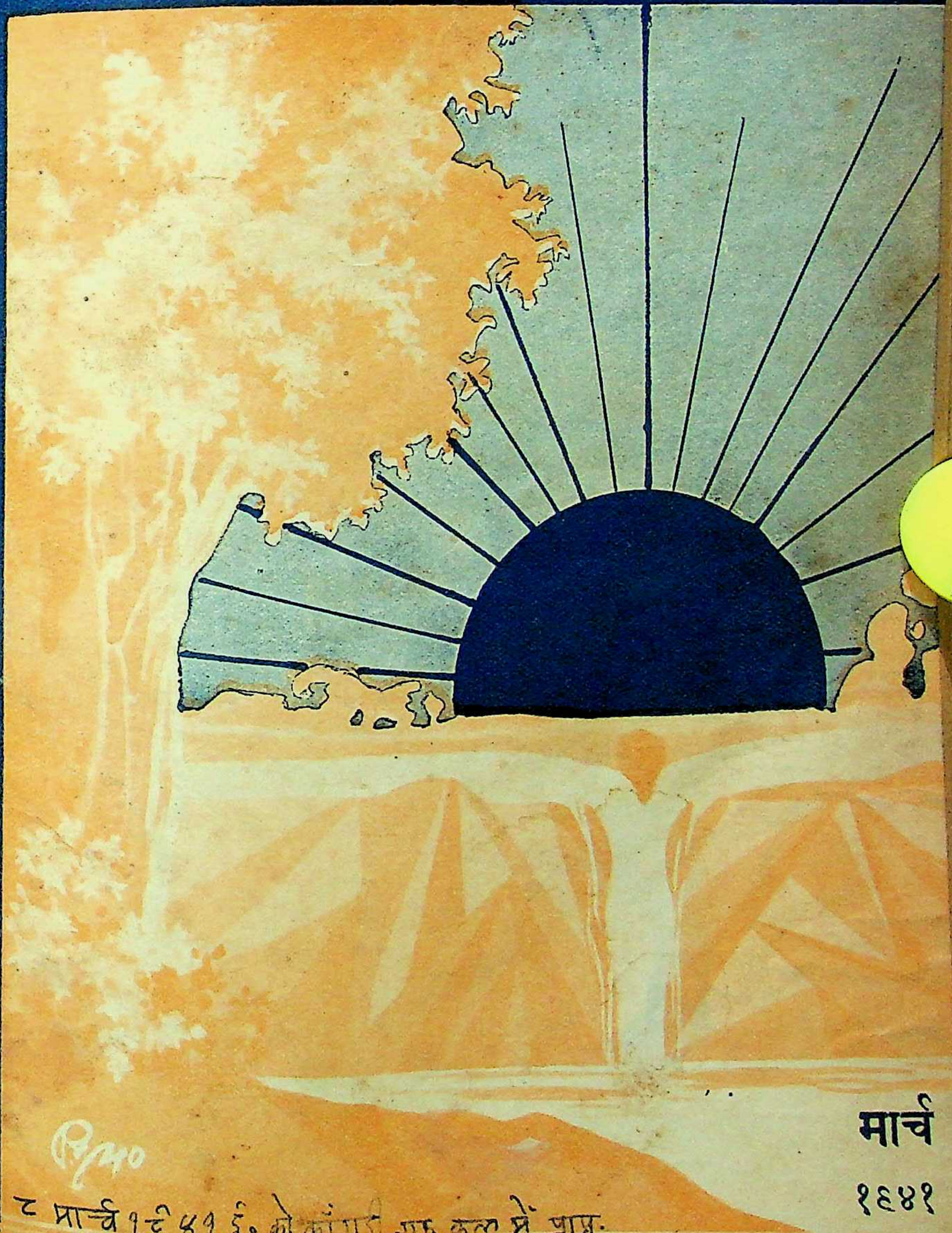

मार्च

१९४१

८ मार्च १९४१ ई. को कांगड़ी गुरुकुल में प्राप्त.

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह : : विट्ठलदास मोदी

NATURE CURE HOME

ALLAHABAD

Try Nature's way. It is simple yet very effective. Nature only heals diseases, while Medicine suppresses them.

Disease—Can only be cured by, and through the blood and its circulation in the living parts of the body.

Any means that improves the quality, the quantity and the movement of the blood will assist in eliminating disease.

All these conditions are fulfilled by our method of treatment.

The following diseases are cured permanently and within a short time of 45 days by our method of milk treatment:

Nervous prostration, general debility, auto-intoxication, mild skin troubles, such as pimples, eczema, sallowness, wrinkles, etc., simple anæmia, catarrh, biliousness, ringing in the ears, pleurisy, constipation, dyspepsia, indigestion, asthma, piles, insomnia, ulcer of the stomach, colitis, ulceration of bowels, goitre, malaria, arterio-sclerosis, (hard arteries), neuralgia, neurasthenia, acidity of stomach, chronic appendicitis, arthritis, urticaria or hives, carbuncles, diarrhœa or dysentery dilation of stomach, gastritis, gout, importence, neuritis, lumbago, sciatica, migrains, leucorrhœa, enlargement of prostate gland, gallstones and liver troubles, rheumatism, kidney diseases, and the first stage of consumption, high and low blood pressure, diabetes, obesity, jaundice etc.

All diseases are curable but not all patients.

Treatment used—Hydropathy, chromopathy, geotherapy, massage, corrective exercises, Asanas and Pranayams, milk treatment, electricity, etc.

Write for prospectus with one anna stamp to

The Manager

THE NATURE CURE HOME

87 Himmat Ganj : ALLAHABAD

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

जीवन-सखा

मार्च
१९४१

वर्ष ६
अङ्क ३

इस अङ्क में

विषय	लेख	पेज
१. सूर्यो: देवता		१४४
२. उपवास क्यों	श्रीयुत ओम्प्रकाश आनन्द	१४६
३. मिट्टी या सोना	भदन्त आनन्द कौसल्यायन	१५१
४. सेवा गाँव की एक झलक	पंडित सुन्दरलाल	१५५
५. ध्यान के लिए दो आसन	पंडित ब्रजभूषण मिश्र, एम० ए०	१५८
६. आलू	प्रो० भवानीप्रसाद जी, प्राकृत स्वास्थ्य शास्त्रोपाध्याय, कांगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार	१६०
७. चिकित्सा के आधुनिक ढंग	डा० शिवरतनलाल, एच० एम० बी०	१६२
८. प्रश्नोत्तर		१६७

अगले अंक

में

क्या रहेगा ?

१ हिस्टीरिया (मूर्छा)

डा० पी० वेंकट रमैया

[अधिकतर स्त्रियों को होने वाला एक रोग, उसका कारण और निवारण]

२ शीर्षासन (सचित्र)

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

[शीर्षासन की सही और सरल विधि : चिकित्सा के तौर पर प्रयोग : कब नहीं करना चाहिए]

३ यूरप के प्राकृतिक चिकित्सा गृह, ए० विजय घोष

[आँखों देखा विवेचनात्मक एवं रोचक वर्णन]

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

अपने विचार

'सूर्यो: देवता'

प्रातःकाल अँगड़ाई लेते हुए आदिम-पुरुष ने जब प्रकृति पर नजर डाली तो उसने देखा कि पक्षीगण स्वागत-गान गा रहे हैं, पशु दौड़ दौड़ कर किसी के आने की खुशियाँ मना रहे हैं और तरुगण रास्ता देने को श्रद्धापूर्वक सिर झुकाए खड़े हैं। नजर दौड़ाई तो पूर्व दिशा की ओर उसने उदित होते हुए बाल रवि को देखा। तेज और सौन्दर्य ने उसे अभिभूत कर लिया। सूर्य रश्मियों का उसके शरीर पर एक स्फुरणकारी प्रभाव पड़ा, हृदयगत सारी भावनाओं को उँडेल कर वह कह उठा "सूर्यो: देवता।"

हजारों वर्षों से वेद के इस मन्त्र-खंड को लाखों नर नारी नित्य सायं-प्रातः गाते आए हैं। यह इतना गाया गया है कि आज इसका अर्थ समझना भी कठिन हो गया है। भावना का स्थान मश्क ने ले लिया है। आज तो जब हम कहीं सूर्यो: देवता सुनते हैं तो यह मंत्र अपने को मोटे मोटे कपड़ों से ढँके रखने की हमारी आदत, सूर्य प्रकाश से हमें छिपाए रहने वाले हमारे महल एवं अट्टालिकाओं पर व्यंग करता ही जान पड़ता है।

पर वैज्ञानिक उन्नति के साथ साथ सूर्य-प्रकाश एवं स्वास्थ्य के सम्बन्ध को अधिकाधिक समझा जाने लगा है। आधुनिक युग में रोग छुड़ाने के लिए सूर्य-रश्मियों का प्रयोग पहले पहल डेनमार्क निवासी डाक्टर एन० आर० फिनसेन ने सन् १८९३ ई० में किया। इसके दश वर्ष बाद स्विट्जरलैंड में डाक्टर रोलियर ने यक्ष्मा के रोगियों के लिए पहली धूप-शाला खोली। उनके किए गए प्रयोगों के परिणाम को देखकर तो धूप की रोग नाशक शक्ति का कायल सारा चिकित्सा-संसार हो गया है।

प्रायः उन सभी लोगों का, जिन्होंने धूप की रोग नाशक शक्ति के सम्बन्ध में अनुसन्धान किए हैं, कहना है कि सूर्य-किरण में पाई जाने वाली अल्ट्रा वायलेट किरणें ही मनुष्य के विशेष काम की हैं। अधिक तादाद में अल्ट्रा वायलेट किरणें उपजाने वाली मशीनें भी बना ली गई हैं पर देखा गया है कि इन मशीनों द्वारा प्राप्त किरणें उतनी लाभदायक नहीं होतीं जितनी सूर्य की किरणें। ऐसी भी मशीनें बनी हैं जो अल्ट्रा वायलेट किरणें बिल्कुल नहीं देतीं वे केवल इन्फ्रा-रेड किरण डालकर रोगों पर अपना प्रभाव दिखाती हैं। घर में इस्तेमाल किए जाने वाले साधारण बल्ब में भी यदि कुछ खास तौर के रिफ़्लेक्टर लगा दिए जायँ तो उनके प्रकाश में भी कुछ औषध-गुण पैदा हो ही जाता है गो कि उस प्रकाश में न अल्ट्रा वायलेट किरणें होती हैं न इन्फ्रा-रेड। इससे यह साबित होता है कि सूर्य को किसी भी अकेली किरण में चाहे वह सूर्य से ली जाय या किसी मशीन से पैदा की जाय वह प्रभाव नहीं होता जो सूर्य की सीधी इकट्ठी किरणों में।

अब किसी ऐसे व्यक्ति के शरीर पर ध्यान दीजिए जिसे अधिकतर धूप में रहना पड़ता हो। उसकी तपे ताँबे सी देह को उनकी देह से मिलाइए जो कपड़ों, छातों और ऊँचे ऊँचे घरों की सहायता से अपने को धूप से दूर रखते हैं। पीली, मुर्झाई, निस्तेज त्वचा में न तो ठंडक-गरमी बर्दाश्त करने की ताकत होती है और न रक्त की गन्दगी को पसीने के रूप में बाहर निकाल डालने की शक्ति।

पर यह आवश्यक नहीं है कि हर समय धूप में ही रहा जाय। अवश्य ऐसे अवसर का उपयोग किया जाय जब दिन भर बाहर रहने का मौका मिले। दस-पन्द्रह मिनट रोज तो धूप ली ही जाय। इसके लिए खुले बदन धूप में लेटना चाहिए। केवल सिर ढका रहे। जो लोग देर से स्नान करते हैं वे धूप लेने के बाद स्नान करें तो

उनके चर्म रोग होने की कभी सम्भावना ही न रहे । धूप लेने के बाद यदि स्नान न किया जा सके तो सारे बदन को गीले कपड़े से अवश्य ही पोंछ डालना चाहिए ।

भोजन शास्त्री जब गरीबों के लिए भोजन बताने लगते हैं तो वे इस चक्कर में पड़ जाते हैं कि विटामिन डी उनके भोजन में किस प्रकार दी जाय । दूध मक्खन, क्रीम अंडे से दूर उनकी नजर नहीं जा पाती । यह काम धूप से पूरी तौर से लिया जा सकता है । धूप को गरीबों का दूध, मक्खन क्रीम ही समझिए ।

हमारे स्कूलों में बच्चों को पाँचवें दर्जे से हाइजीन पढ़ाई जाती है और यह पढ़ाई आठवें दर्जे तक जारी रहती है। बच्चे उसे किताबों में पढ़ते हैं अध्यापक किताबों से पढ़ाते हैं । अध्ययन एवं शिक्षण, ज्ञान के लिए होता है व्यवहार के लिए नहीं । यदि केवल धूप लेने की बात भी लोगों के गले उतर जाय तो पौध बढ़ जाय और यक्ष्मा की बढ़ती ही न रुक जाय बल्कि उसकी जड़ भी कट जाय ।

* * *

योग और प्राकृतिक-चिकित्सा का शिक्षण

प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के तत्वावधान में योग और प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति सिखाने का एक विशेष आयोजन हुआ है । शिक्षण काल १५ मार्च से आरम्भ होगा जो दो सप्ताह तक चलेगा । दो-दो सप्ताह के ऐसे शिक्षण काल सुविधा के लिए साल भर में तीन बार होंगे जिससे सीखी हुई बातों को घर पर अभ्यास करने का विद्यार्थियों को पूरा मौका मिल सकेगा। विषय क्रम में उन सभी बातों का समावेश किया गया है जिन्हें जानकर प्रत्येक विद्यार्थी अपने को स्वस्थ रख सकेंगे और दूसरों के भी स्वस्थ रहने में सहायक हो सकेंगे।

स्वास्थ्य के प्रत्येक प्रेमी को इस सुअवसर से लाभ उठाना चाहिए ।

* * *

बारह वर्ष की लड़की के संतान हो इसमें आनन्द मनाने की कौन सी बात धरी है कि जिसके लिए ढोल पीटे जायं। बारह वर्ष की लड़की का माता बन जाना ईश्वर का महाकोप है या और कुछ ? तुरन्त बोये हुए पेड़ में जो फल लगते हैं वे कमजोर होते हैं, यह सब लोग जानते हैं। यही कारण है कि हम तरह तरह के उपाय करके उनमें फल नहीं लगने देते । पर बालक स्त्री और बालक बर के संतान होने पर हम आनन्द मनाते हैं। यह हमारी निरी मूर्खता नहीं है तो और क्या ? हमसे तो वे पशु ही भले हैं जिनमें नर और मादा का संयोग तभी कराया जाता है जब उनसे बच्चे उत्पन्न कराने होते हैं। स्त्री-पुरुष का संसर्ग होने से लेकर उस समय तक को बिलकुल पवित्र समझना चाहिए जब तक बच्चा मां के पेट से उत्पन्न होकर दूध पीना न छोड़ दे । इस काल में स्त्री और पुरुष को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए । पर हम इसके विषय में जरा भी विचार न कर अपना काम किए ही जाते हैं। यह मन का असाध्य रोग है। यह रोग मौत से हमारी भेंट कराता है। इसलिए विवाहित स्त्री-पुरुषों का कर्तव्य है कि वे विवाह का झूठा अर्थ न कर सच्चा अर्थ करें और जब सचमुच सन्तान न हो तभी वंश चलाने की इच्छा से ही संतान पैदा करें।

—महात्मा गांधी

उपवास क्यों ?

श्रीयुत ओम्प्रकाश आनन्द

उपवास और भूखों मरना दो अलग अलग चीजें हैं। उन दोनों के अन्तर को समझ कर ही उपवास क्यों ?—का उत्तर दिया जा सकता है। अध्ययनशील एवं अनुभवी लेखक ने उपवास और भूख मरने पर स्पष्ट प्रकाश डाला है और बताया है कि उपवास की माँग तो हमारे शरीर द्वारा स्वतः होती है, "हमारी शारीरिक क्रिया में जहाँ किसी प्रकार का व्यतिक्रम होता है, हमारी भूख बन्द हो जाती है और इस प्रकार वह उपवास के महत्त्व की घोषणा करती है। पर मनुष्य अपनी अतिरिक्त बुद्धि लगाकर भूख की इस कमी को भी एक रोग बतला देता है।"—सं०

प्रसिद्ध फ़ान्सीसी उपन्यासकार विक्टर ह्यूगो का एक दार्शनिक पात्र गरीबी की गहरी यन्त्रणा कम करने के लिए इसकी महिमा और लाभों का वर्णन करता है। क्या उपवास की प्रशंसा भी भूखे लोगों की यातना भुलाने के लिए ही की जाती है ? अगर भूखों मरना ही रोग निर्मूल करने की सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है तो अकाल को प्रकृति का मनुष्य के लिए सबसे बड़ा रोग-विनाशक बरदान मानना पड़ेगा। और भी भारत जैसे देश में जहाँ अधिकांश लोग जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाली सामग्री से भी रीते हैं रोग होने ही न चाहिए। जो लोग पीढ़ियों से अन्न को ही प्राण समझते आये हैं उनके लिए ऐसी शंका उठाना अनुचित हो सकता है, पर अस्वाभाविक नहीं। सबसे पहले उपवास और भूखों मरने में अन्तर समझना आवश्यक है। और इसके लिए भोजन का मनुष्य की जीवन प्रक्रिया में क्या स्थान है, जानना अनिवार्य है।

मानव शरीर में भोजन तीन प्रकार के कार्य करता है। (१) शारीरिक मेहनत के समय जो कोष (सेल) आदि टूट जाते हैं उनकी मरम्मत करना। (२) जीवन सत्ता बनाए रखने के लिए आवश्यक जीवनदायिनी शक्ति उत्पन्न करना। (३) खाद्य-पदार्थों के जलने से शरीर को गर्मी प्रदान करना। नम्बर एक में भोजन के अन्य कार्य यथा विटामिन और प्राकृतिक लवण प्रदान करना सम्मिलित किए जा सकते हैं।

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि भोजन शरीर में टूटे हुए कणों के स्थान पर नए कण उत्पन्न करता है और जो आदमी जितना ही कठिन शारीरिक श्रम करेगा, उसके कणों का क्षय उतना ही अधिक होगा। इनके पुनर्निर्माण के लिए उसे उतने ही अधिक भोजन की आवश्यकता होगी। पर साधारणतया मनुष्य के लिए कितना भोजन आवश्यक है ? अगर हम यह जान सकें तो यह कहना सरल होगा कि उक्त छीजन को पूरा करने के लिए कितनी भोजन सामग्री आवश्यक होगी। अगर हम उन लोगों के जो उपवास करते हुए अपना साधारण जीवन कार्य चलाते हैं, प्रति भोजन छोड़ने से वजन की कमी जान सकें तो उक्त भोजन सामग्री की मात्रा निर्धारित की जा सकती है। उपवास-चिकित्सा के विशेषज्ञ डा० कैरिंगटन साहब के मतानुसार इस कमी का मान आध सेर है। अतएव यह स्पष्ट है कि इस कमी को पूरा करने के लिए हमें आध सेर पोषक द्रव्यों की आवश्यकता होती है।

इस दृष्टि से हम अपने चारों ओर के लोगों के भोजन

की परीक्षा करें तो ज्ञात होगा कि साधारण व्यक्ति आवश्यकता से काफी अधिक मात्रा में खाता है। दूसरे शब्दों में शरीर को स्वस्थ और सबल बनाए रखने के लिए आवश्यक जीवनोपयोगी सामग्री से वे अधिक खाते हैं। वे इतना भोजन कर सकते हैं, केवल यह सिद्ध करने के लिए काफी नहीं है कि अन्ततोगत्वा उन्हें इससे हानि नहीं होती। प्रश्न यह नहीं है कि हम कितना अधिक खा कर स्वस्थ रह सकते हैं पर यह कि कम से कम कितना खाकर हम अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को क्षीण होने से बचाए रख सकते हैं। इतनी ही मात्रा में भोजन की शरीर के लिए वास्तविक आवश्यकता है और इससे अधिक जो कुछ भी खाया जाता है वह बेकार ही नहीं वरन् हानिकर भी है। क्योंकि हमारी जीवनशक्ति का कुछ भाग इस अनावश्यक भोजन से जूझने में—पचाने अथवा निकालने में—व्यय हो जाता है। अतिरिक्त भोजन का शरीर में पूर्ण उपयोग न होने के कारण कई प्रकार के ज़हर और विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

जहाँ तक मानसिक शक्तियों का सम्बन्ध है अधिक भोजन और भी अधिक हानिकारक है। पेट से अनावश्यक काम न लेने से मनुष्य की बहुत सी शक्ति व्यर्थ नष्ट होने से बच रहती है। मस्तिष्क और उदर एक दूसरे के विरोधी प्रतीत होते हैं। यदि पेट भरा रहे तो मस्तिष्क से काम नहीं लिया जा सकता, और मस्तिष्क से काम लिया जाय तो पाचन-क्रिया में बड़ी बाधा पड़ती है। दोनों एक दूसरे के वैसे ही बाधक हैं जैसे नींद आने में शोर गुल। मस्तिष्क से सबसे अच्छा काम उसी समय लिया जा सकता है जब पेट को अपनी चक्की चलाने से फ़ुर्सत रहे।

प्रति दिन बढ़ते हुए वैद्य डाक्टरों की संख्या इस बात का सबूत है कि हमारी जीवन प्रणाली में कोई गम्भीर ग़लती है। बहुत सी बीमारियाँ आवश्यकता से अधिक भोजन का ही परिणाम हैं। इनकी चिकित्सा का सबसे सरल और स्वाभाविक तरीका रोगी का भोजन बन्द कर देना है, और मलजनित विकार विसर्जन करने वाले अवयवों की क्रिया को तीव्रतर बना देना है।

अब हम उपवास और भूखों मरने का अन्तर समझ सकते हैं। प्रकृति ने हमारे शरीर में बहुत सा सामान भर रक्खा है जो विशेष आवश्यकता के समय हमारे काम आ सकता है। जब हमें बाहर से पोषण के लिए सामान मिलना बन्द हो जाता है तो यह हमारे पोषण में सहायता देता है। उपवासकाल में लोगों का शरीर दुबला हो जाता है, चेहरा उतर जाता है, आँखें अपने गड़हों में धँस जाती हैं। शारीरिक ह्रास का मुख्य कारण यही है कि वह भाग शरीर के पोषण में लग जाता है। फालतू अंश के समाप्त होने के बाद हमारे शरीर का पोषण उन पदार्थों पर होने लगता है जो हमारे शरीर के आवश्यक अंश हैं और जिनके द्वारा शरीर का संगठन हुआ है। मनुष्य उसी समय मरता है जब कि शरीर के फालतू अंशों की समाप्ति के बाद आवश्यक अंग भी नष्ट हो चुकते हैं। उपवासकाल उसी समय तक माना जाता है जब तक कि शरीर का पोषण उसके फालतू पदार्थों पर होता रहे पर जब आवश्यक अंशों की नौबत आ जाय तो वह उपवास नहीं बल्कि भूखों मरना है। मनुष्य के भोजन बन्द करते ही उसकी सारी शक्ति रोग शमन करने में लग जाती है। भोजन पर से आदमी की रुचि हट जाती है। पहले एक-दो दिनों तक भूख मालूम पड़ सकती है पर वह वास्तविक भूख न हो कर केवल अभ्यासजन्य कृत्रिम भूख होती है। शरीर के निर्मल होने पर ही वास्तविक भूख जागती है। जैसे सूर्य के प्रकाश के समीप अन्य सब प्रकाश धुँधले प्रतीत होते हैं, उसी तरह वास्तविक भूख के समीप कृत्रिम भूख भी तुच्छ प्रतीत होती है। डा० कैरिंगटन ने भूखों मरने और उपवास का अन्तर यों स्पष्ट किया है। "उपवास प्रथम भोजन छोड़ने से प्रारम्भ होकर वास्तविक भूख लगने तक समाप्त होता है और भूखों मरना वास्तविक भूख लगने से प्रारम्भ होकर मृत्यु में समाप्त होता है।"

इसीसे सम्बन्धित एक और पहलू की ओर डा० कैरिंगटन ने ध्यान दिलाया है। साधारण मनुष्य समझता

है कि एक दो दिन न खाने से प्राणों पर आ बनेगी और मनुष्य चर्बी आदि खो कर हड्डियों का ढांचा मात्र ही रह जायगा। उपवास में किन अंगों का वजन घटता और किनका पहले जितना ही बना रहता है ? जो लोग बिना अन्न के भूखों मरे हैं उनके शव की परीक्षा करके यह जाना गया है कि मरने के समय तक शरीर के अंग नीचे लिखे मान में घटते हैं।

चरबी	..	९७%
यकृत	..	६३%
प्लीहा	..	५६%
मांसपेशियाँ	..	३०%
खून	..	१६%

ज्ञानतन्तुओं का कोई अंश नष्ट नहीं होता। इन अंकों के ध्यानपूर्वक अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि उपवास काल में शरीर का वही अंश सबसे अधिक नष्ट होता है जिसका उपयोग हमारे शरीर को बनाए रखने में बहुत कम होता है। ज्ञानतन्तु जो शरीर का अत्यन्त आवश्यक अंग है, उनका कोई अंश नष्ट नहीं होता। शरीर के गले, सड़े, अनावश्यक भाग और चर्बी आदि से मुक्त होकर हम अधिक स्वस्थ और निरोग हो जाते हैं क्योंकि अधिकतर यही रोग के मूल हैं।

डाक्टर डेवी का प्रसिद्ध कथन सर्वथा सही है। "रोगी का भोजन बन्द कीजिए और आप रोगी को भूखों मारने के बदले रोग को ही भूखा मारेंगे।" वस्तुतः रोगी का भोजन रोगी को बल प्रदान करने के बदले उसके रोग को ही पोषण और रक्षण देता है। आजकल लोग भोजन की सहायता से रोग का पालन करते हैं और औषधियों की सहायता से उसकी वृद्धि करते हैं, तिसपर समझते यह हैं कि अपनी चिकित्सा करा रहे हैं।

हमारे भोजन का जो भाग पच कर शरीर में लग जाता है वही पुष्टिकर और बलवर्द्धक सिद्ध होता है। अतः लाभ हमारे खाने की मात्रा पर निर्भर नहीं करता। और जब शरीर ऐसी अवस्था में है कि वह जरा सा या नहीं के बराबर ही भोजन पचा सकता है तो साधारण भोजन करते जाना खाद्य द्रव्यों की ही फ़जूलखर्ची नहीं बल्कि और प्रकारों से भी हानिकर है। ऐसे समय किया हुआ भोजन शरीर को केवल शक्तिहीन और विषयुक्त बनाता है और भूखों मारने जैसा प्रभाव ही उत्पन्न करता है। शक्तिहीन इसलिए कि जीवनशक्ति का बहुत बड़ा भाग इस अनावश्यक भोजन को पचाने और निकालने में खर्च हो ज़ाता है। विषयुक्त इसलिए कि इसके फलस्वरूप अनेक विकार और विष उत्पन्न हो जाते हैं। भूखों मरना इसलिए कि पतली रक्तनालियाँ इस अनावश्यक द्रव्य से रुँ जाती हैं और इससे रक्तसंचरण में बाधा उपस्थित होने लगती है। थोड़ी देर के लिए अपने शरीर को रसोईघर और पक्वाशय को रसोइया समझ लीजिए। अगर आँधी ने रसोईघर का छप्पर गिरा दिया है, दो चार ईंटें निकाल दी हैं, गर्द गुबार इकट्ठा कर दिया है तो आप पहले रसोईघर को साफ कराएँगे न कि वहाँ रसोई बनाने की आज्ञा दे देंगे। जब शरीर रोगयुक्त है तो उससे भोजन पचाने का काम लेना वैसा ही है जैसे गन्दे रसोईघर में रसोई बनाने की इजाजत देना। यह ठीक है कि रुग्ण शरीर दिन पर दिन निर्बल होता जाता है, पर कोई भोजन इस छीजन को रोक नहीं सकता। डा० कैरिंगटन इस मत का—कि निर्बल और शक्ति-विहीन शरीर को नवीन जीवन प्रदान करने के लिए भोजन आवश्यक है—प्रतिवाद करते हुए लिखते हैं कि शरीर को नवीन शक्ति विश्राम और सोने से मिलती है। अगर हमें शक्ति केवल भोजन से ही मिलती तो काम करने से खोई शक्ति को हम भोजन और व्यायाम द्वारा वापस पा सकते। पर सब जानते हैं कि हम चाहे जितना खायें और कसरत करें काम करने के बाद एक ऐसी अवस्था आती है जब हमें अपनी शक्ति को पूरा करने के लिए विश्राम की आवश्यकता प्रतीत होती है। कुछ लोग तो पचीस-तीस दिनों के उपवास के पश्चात् पहले से अधिक सबल हो जाते हैं। लेखक स्वयं एक ऐसी स्त्री को जानता है जिनका तेरह दिनों के उपवास में एक छटाँक वजन भी नहीं घटा।

साधारण शिक्षित आदमी भी आज सैकड़ों रोगों

के नाम जानता है। सच पूछिए तो प्रत्येक अप्राकृतिक लक्षण समूहों को हमने रोग विशेष समझ कर उसका नामकरण कर दिया है। पर अगर ऊपरी विभेद को भेद कर रोगों की आन्तरिक एकता को देखने का प्रयत्न करें तो रोगों को तीन भागों में बाँट सकते हैं—(१) तीव्र (Acute), (२) जीर्ण (Chronic), (३) मारक (Fatal)। प्रत्येक प्रकार का रोग किसी न किसी प्रकार के विकार द्वारा ही उत्पन्न होता है। साधारण मनुष्य रोगों को कोई वस्तु समझता है जो हमारे शरीर में किसी प्रकार प्रविष्ट हो गई है। और औषधियों द्वारा जिसे वाहर कर देने से खोया हुआ स्वास्थ्य वापस लौट आएगा। उदाहरण स्वरूप, कोई कहता है कि मुझे सर्दी लग गई है तो दूसरा झट पूछ बैठता है कि कहाँ लगी। सर्दी लगना भी भूत लगने जैसा हो गया जो किसी सुन्दर स्त्री या वस्तु देख कर वहाँ जा बैठा। रोग शरीर की एक दशाविशेष का नाम है जो गलत जीवन-प्रणाली के फलस्वरूप उत्पन्न हो जाती है। वह एक कार्य है जिसका निश्चित **कारण** है। दूसरे शब्दों में रोग एक **परिणाम** अथवा **फल** है और जब तक उसका कारण निर्मूल न किया जाय परिणाम से छुटकारा पाना असम्भव है। टोने-टामन, जन्तर-मन्तर, दवा-दारू से इस **कार्य, परिणाम, फल** से पीछा छूटने की आशा दुराशा मात्र है। 'बोतल में स्वास्थ्य नहीं बन्द किया जा सकता,' यह कथन जितना सत्य है उतना ही लोगों को अविश्वसनीय मालूम होता है।

तीव्र रोग तो आपकी प्रबल जीवन-शक्ति का आपके शरीर में इकट्ठे मल, विष, विकार आदि द्रव्य विसर्जन के प्रयत्न मात्र हैं। यह इस बात के इंगित है कि विसर्जन के जो स्वाभाविक मार्ग (जैसे पेशाब, पाखाना, त्वचा, साँस) हैं वे अपना कार्य स्वाभाविक रूप से नहीं कर रहे हैं अथवा उनपर काम का बोझ अत्यन्त अधिक है। दूसरे शब्दों में आप शरीर के भीतर इतना अनावश्यक द्रव्य ठूँस रहे हैं कि उन्हें निकालने के लिए आपके शरीर को कुछ असाधारण तरीके की सहायता लेनी पड़ रही है। इस विसर्जन प्रक्रिया को ही रोग कहते हैं। छींक से हम सब परिचित हैं—नाक में किसी वस्तु का कण चला गया, आपके अवयवों ने उसे निकालने का बलपूर्ण प्रयत्न किया और आपको छींक आ गई। छींक रोग नहीं, रोग की चिकित्सा है। रोग का कारण तो वह कण है जो आपके नाक में चला गया है। इसी प्रकार तीव्र रोगों में जो लक्षण दीख पड़ते हैं वे केवल शरीर का अनावश्यक विकारों को निकालने का प्रबल एवं प्राकृतिक प्रयत्न मात्र हैं। ऐसे रोगों में तो भोजन सर्वथा निषिद्ध होगा ही, यह बात सर्वथा प्रकट है। सब चिकित्सा-प्रणालियों में ऐसे समय किसी न किसी रूप में उपवास अवश्य कराया जाता है। अगर ऐसे समय भोजन किया जाय तो उसका अत्यन्त हानिकारक प्रभाव उसी समय प्रकट हो जाता है। इससे यह प्रकट है कि उपवास का महत्त्व सब जानते और मानते हैं। पर मनुष्य जब इन नियमों से थोड़ा सा लाभ उठा चुकता है तो इन्हीं का अतिक्रमण करता है। इसका कारण यह है कि इस स्थिति में भोजन का हानिकारक प्रभाव कुछ काल उपरान्त प्रकट होता है। कोई भी डाक्टर जो प्राकृतिक-चिकित्सा द्वारा रोग दूर करने वाली विधि बतलाते हैं, अपने रोगियों को बादाम का हलुआ और अंडा खाने को नहीं देते। अगर लोग रोग को भोजन द्वारा पोषण देकर फिर उसे दवा द्वारा दबाने का प्रयत्न न कर कुछ दिनों और उसी प्रकार संयम रक्खें तो अपेक्षाकृत जल्दी और सरलता से स्वास्थ्य लाभ कर सकते हैं।

अब हम दूसरे प्रकार के रोगों पर विचार करेंगे। विकारों की अधिकता और अस्वास्थ्यकर आदतों से कुछ लोगों की जीवन-शक्ति का ह्रास इतना अधिक हो जाता है कि उनमें शरीर के अन्दर उपस्थित विकारों को निकालने का प्रयत्न करने की शक्ति ही नहीं रह जाती। ऐसी अवस्था में जिस अंग में सबसे अधिक विकार जमा होते हैं या जो अन्य कारणों से अपना कार्य सुचारु रूप से करने में असमर्थ होता है रुग्ण हो जाता है या हलके ज्वर की भाँति का रोग सारे शरीर में व्याप्त हो जाता है।

जैसे जैसे समय बीतता जाता है इसकी जड़ें गहरी बैठती जाती हैं, जीवन-शक्ति का ह्रास दिन दूनी रात चौगुनी गति से होता है। ऐसी अवस्था में कोई भी दवा आपको रोग निर्मूल करने में सहायता नहीं दे सकती। यह अलबत्ता सम्भव है कि आपका रोग अपना परिचित रूप बदल डाले, और कोई नया बुर्का पहन, नया श्रृंगार सजा कर आपको आ डसे।

आप भोजन बन्द करते हैं, आपकी क्षीण जीवनशक्ति विष और विकार के शमन में लग जाती है। भोजन न मिलने पर वह धीरे धीरे रोग को खाना प्रारम्भ करती है। जैसे ही रोज रोज का अनावश्यक द्रव्य आना बन्द हुआ पुराना विकार निकालने का प्रयत्न प्रारम्भ हो जाता है। जल्दी ही रोग की जान पर आ बनती है, और जैसे आप जान पर आ बनने पर मरने मारने को तैयार हो जाते हैं, आपका रोग और आपकी जीवन-शक्ति दोनों अपनी सेनाएँ सुसज्जित करते हैं। आपका शरीर कुरुक्षेत्र बनता है और जिस प्रकार बुझते हुए दीपक की लौ एक बार ऊँची उठती है आपका रोग नष्ट होने के पहले तीव्र हो उठता है। दूसरे शब्दों में जीर्ण रोग तीव्र रोग में परिणत हो जाता है जो अपना चिकित्सक स्वयं है। रोग समाप्त होने पर ही आपको स्वाभाविक भूख लग सकती है।

तीसरे प्रकार के रोगों में जीवन-शक्ति का ह्रास इतना अधिक हो गया रहता है और जिस तरह जले हुए कोयले में फिर से गरमी देने की शक्ति नहीं होती उसी तरह जीवन-शक्ति का पुनर्निर्माण असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य होता है। इन रोगों में जब तक मौत की अटल तिथि आ नहीं पहुँचती प्राकृतिक-चिकित्सा या अन्य कोई भी चिकित्सा रोगी को केवल थोड़ा सा आराम पहुँचा सकती है। ऐसे लोगों को उपवास नहीं कराना चाहिए और अगर करना ही हो तो दो एक दिन से अधिक नहीं।

एक बात और बता कर यह लेख समाप्त करेंगे। किसी भी रोग अथवा व्याधि के समय हमारी सारी शक्ति रोग से जूझने में लगी रहती है। ऐसे समय हमें स्वभावतः भोजन से अरुचि हो जाती है मानो हमारी जठराग्नि यह सूचना दे रही है कि रसोईघर की मरम्मत की आवश्यकता है, मैं अपना काम भंडार में रक्खी हुई चीजों से चला कर वह मरम्मत कर डालूँगी। दूसरे शब्दों में हमारी शारीरिक क्रिया में जहाँ किसी प्रकार का व्यतिक्रम होता है हमारी भूख बन्द हो जाती है और इस प्रकार वह उपवास के महत्त्व की घोषणा करती है। असाधारण मानसिक चिन्ता, कुढ़न या क्रोध आदि का भी पाचन-क्रिया पर वैसा ही प्रभाव पड़ता है। पर मनुष्य अपनी अतिरिक्त बुद्धि लगा कर भूख की इस कमी को भी एक रोग बतला देता है।

* * *

भूख न लगना और बहुत ज्यादा भूख लगना दोनों ही असाधारण अवस्थाएँ हैं। वे यह सूचित करती हैं कि उपवास किया जाय अथवा भोजन को बहुत कम करके केवल फल और तरकारी का प्रयोग किया जाय।

जो लोग रोग भगाकर स्वास्थ्य प्राप्त करना चाहते हैं उन्हें फल और तरकारियों का उपयोग अधिक करना चाहिए। जब रोटी वगैरह का इस्तेमाल कम कर दिया जाता है तो पहले कुछ कमजोरी जरूर मालूम होती है पर जब शरीर इनपर रहना सीख जाता है तो उस शक्ति और ताजगी का अनुभव होता है जिसका पहले कभी अनुभव नहीं किया गया था।

मिट्टी या सोना

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

"किसी जोहड़ या तालाब की शुद्ध चिकनी मिट्टी ! घर में ही भिगो कर रक्खी हुई मिट्टी ! समय पर ही कूट भिगो कर तैयार की गई मिट्टी ! मैं जानना चाहता हूँ कि तू मिट्टी है या सोना ? तेरी प्रशंसा में तुझे सोना बनाना अधिक ठीक है या सोने की प्रशंसा में उसे मिट्टी कहना ?"—बौद्ध भिक्षु की यह जिज्ञासा किसी ममता के कारण नहीं तर्क पर आधारित है। पाठक भी देखें।—सं०

जिस व्यक्ति को प्राकृतिक चिकित्सा के कुछ प्रेमी उसका विरोधी समझते हों और विरोधी प्रेमी उसके अनुभव कुछ सावधान रहकर ही पढ़े जाएँगे !

१९२६

स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक कलकत्ते में अपने एक भक्त के यहाँ ठहरे थे। दुर्भाग्यवश इस समय उन सज्जन का नाम स्मृति-पट से मिट गया है पर याद ज्यों की त्यों बनी है। वे महाराज दरभंगा के प्रतिनिधि-वकील (Attorney) थे[1]। एक तो अतिथिप्रिय पंजाबी, दूसरे सम्पन्न घराना। किसी चीज की कमी न थी। स्वामी जी के साथ में मैंने भी लगभग दो-तीन सप्ताह उनके यहाँ रह कर घर के सुख का अनुभव किया।

उन दिनों मेरी पिण्डली में न जाने कहीं से कोई खरोंच लग गई थी या फोड़ा हो गया था। इतना याद है कि यह बुरी तरह तंग कर रहा था। बीच बीच में मैंने उसपर कई चीजें लगाईं लेकिन पैर का जख्म अच्छा होने ही में न आता। जब देखो तब उसमें से कुछ न कुछ बहता रहता। जिस प्रकार अपने किसी दुर्गुण को छिपाए रखने का प्रयत्न प्राय: असफल होता है उसी प्रकार मैं अपने जख्म को भी छिपाए न रख सका।

एक दिन हमारे मेजबान ने पूछा :—"तुम्हें क्या हो गया ? लँगड़ा कर क्यों चलते हो ?' मैंने उन्हें अपना जख्म दिखाया और जिज्ञासा की—"क्या लगाऊँ ?" उन्होंने कहा—"नीचे कमरे में जाकर देख लो। आलमारी दवाइयों से भरी पड़ी है। उनमें से कुछ लगाना चाहो, वह लगाओ। यदि वह दवाई करना चाहते हो जो मैं स्वयं करता हूँ तो वह बता दूँ।"

"मैं आपकी ही दवा करना पसन्द करूँगा।"

"तो जीने से ऊपर चढ़ जाओ और वहाँ टंकी में बहुत-सा गारा पड़ा है। उसमें हाथ डालकर दिन में जब जब मन करे उस गारे से अपने जख्म को पोत लो।"

मैंने उनकी बात मानी। ऊपर गया। वहाँ एक बड़ी भारी लोहे की टंकी में मनों मिट्टी घुली पड़ी होगी। उसमें किसी का क्या लगता था। मैंने थोड़ी सी लेकर अपने जख्म पर पोत ली। पहली पोताई से ही जख्म की सफाई शुरू हो गई। उसके बाद जब जब मिट्टी सूख जाती मैं उसी पर और नई चढ़ा देता। दो-तीन दिन इसी तरह करता रहा। जिस जख्म ने मेरी अकल हैरान कर रक्खी थी, तीन चार दिन के मिट्टी प्रयोग से न जाने कहाँ गया ?

१९३३

कलकत्ते से जर्मनी दूर की उड़ान है। पहला अनुभव है सन् १९२६ का और यह सन् १९३३ का—पूरे सात साल बाद का।

जर्मनी के डा० ठालके इतने बड़े दार्शनिक हो गए हैं कि यदि वे बौद्ध न होकर ईसाई होते तो उनकी ख्याति वैसे ही फैलती जैसे प्रसिद्ध दार्शनिक शापनहार की। उनकी बहन मिस बर्था ठालके ने मुझे जर्मनी आने के

---

[1] यह महाशय श्री अमोलक राम डाबर कांगड़ी गुरुकुल के डाबर धर्मशाला के दानी निर्माता है

लिए निमन्त्रित किया। डाक्टर ठालके स्वयं जीवित न थे, इसलिए उनका घर मेरे लिए तीर्थ-स्थान हो गया था। जब मैं वहाँ पहुँचा, तो उनके परिवार में सब स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ थीं--अपवाद था एक चौदह वर्ष का बालक पाल ठालके। मैं पीत वस्त्रधारी भिक्षु और वह सब मेरी माँ बहनें--स्वभावतः काम-काज से जब मुझे छुट्टी मिलती, तो मेरा साथी होता वही पाल ठालके। वह मुझे जर्मन पढ़ाता और मैं उसे अंग्रेजी।

एक दिन मेरा ध्यान उसके हाथों की तरफ गया तो मैंने देखा उसकी उँगलियाँ पकी पड़ी हैं। छोटे छोटे जखम, लेकिन उनमें से पीब निकलता है। बालक हाथों को छिपाए रखने की कोशिश करता था। मेरी सहानुभूति उसे अच्छी न लगती थी। ऐसी सहानुभूति जो सहानुभति-कर्ता के साथ जिसके प्रति प्रकट की जाए उसे भी अच्छी लगे सहज कार्य्य नहीं। लोगों की सहानुभूति प्रायः किसी के दोष को दूर हुआ देखने के लिए नहीं, बल्कि उसे उघाड़ कर देखने के लिए होती है। मुझे अपनी कलकत्ते वाली दवा याद आई--वही मिट्टी।

बर्लिन के पास का वह कस्बा जिसके खम्भे लोहे के और सड़कें पत्थर की, वहाँ मिट्टी कहाँ मिले? जिस मकान में हम रहते थे वह बालू के ढेर पर बना हुआ था, वहाँ की मिट्टी किस काम की? मैं सुबह शाम सैर को निकलता, मेरी आँखें मिट्टी खोजती रहतीं। सड़क के दोनों ओर जो पैदल चलने का रास्ता, वह भी पक्का। तीन चार दिन मैं बराबर मिट्टी के लिए हैरान रहा। कभी कभी तो मैं उन सड़कों पर खीझ उठता कि कम्बख्त पक्की क्यों हैं?

एक दिन कहीं सड़क की मरम्मत होती देखी। जमीन के अन्दर का कोई पाइप ठीक करने के लिए बहुत नीचे से खोदकर निकाली हुई मिट्टी सड़क के किनारे पड़ी थी। मुझे बड़ी खुशी हुई। नजदीक जाकर देखा, उसमें भी मिट्टी कम तथा बालू और पत्थर ही अधिक।

जिस मकान में ठहरा था, उसीमें एक डब्बा पड़ा था--खासा खूबसूरत। गत्ते का बना हुआ। उसमें देखा मैदे की तरह की कोई चीज है। मिट्टी भी हो सकती है, ऐसा लगा। मैंने थोड़ी-सी ली। पानी से भिगोकर सूँघी। मिट्टी की सी भीनी भीनी खुशबू आई। एक तशतरी में थोड़ी सी घोलकर मैंने पाल ठालके की उँगलियों पर पोत दी। पहले ही दिन की पोताई में उसको इतना लाभ हुआ कि फिर मुझे उसे कुछ कहने की जरूरत न हुई। वह सुबह शाम स्वयं पोत लेता और दौड़कर खुशी खुशी आकर दिखाता कि उसकी उँगलियाँ कितनी साफ हो गई हैं। डिब्बा समाप्त होते होते उसकी उँगलियाँ लगभग बिल्कुल साफ हो गईं।

एक दिन मैंने उस डिब्बे को ध्यान से देखा तो उस पर जर्मन भाषा में लिखा था--नेचर क्योर (प्राकृतिक चिकित्सा)--और उसके साथ लिखा था १) मार्क। तब मेरी समझ में आया कि इस डिब्बे में किसी प्राकृतिक चिकित्सालय द्वारा साफ की गई मिट्टी रही है और उस लगभग डेढ़ पाव मिट्टी का मूल्य रहा है एक मार्क अथवा एक रुपया।

१९३८

बीमार आदमी से बढ़कर कोई बेबस नहीं होता; और विशेष कर जब उसके और उसके हितचिन्तकों के दिमाग में इस मिथ्या-विश्वास ने घर कर रक्खा हो कि स्वास्थ्य वैद्यों और डाक्टरों की दुकान पर रुपए खर्च करने से ही मिलता है। मैं भी कुछ समय तक इस प्रकार की बेबसी से बहुत दुःखी रहा हूँ।

उन दिनों गोरखपुर में मेरे साथ ४०,५० शिक्षार्थी रहते थे। जिनमें किसी न किसी को कोई न कोई रोग लगा ही रहता। आस पास कोई दुःखी न हो और यदि किसी को कोई बीमारी हो तो मैं उसे दूर कर सकूँ--इसी इच्छा के वशीभूत होकर मैंने चिकित्सा-पद्धतियों की ओर ध्यान दिया। डाक्टरों की हजारों शीशियाँ और उनमें क़ैद नाना प्रकार की रंग-बिरंगी दवाइयों की बात तो मैं सोच ही न सकता था। वैद्यों की वैद्यक कुछ सरल मालूम दी, लेकिन उसमें भी दवाइयों को कूटने छानने, अर्क निकालने का झंझट। उन्हीं दिनों मुझे

श्री० जानकीशरण वर्मा की ‘रोगों की अचूक चिकित्सा’ हाथ लगी। पढ़कर दिल की कली खिल गई। समय समय पर प्राकृतिक-चिकित्सा-सम्बन्धी साहित्य म पहले भी पढ़ चुका था; लेकिन इसमें सारी चीज एक सिलसिले से मिली। वर्मा जी को अनेक साधुवाद !

मैंने अपने और अपने आसपास के रोगियों पर अनुभव करने आरम्भ किए। मिट्टी, वस्ती-क्रिया (एनीमा) और गर्म पानी—इन्हीं तीन चीजों के हेर फेर से प्रायः मेरा सब काम चल जाता। ज्यों ज्यों सफलता होती गई, विश्वास बढ़ता गया। दो चार प्रयोगों की सफलता पर तो मुझे स्वयं अत्यधिक आश्चर्य्य हुआ। हाँ, जब कभी मैं अपने रोगी विद्यार्थियों के लिए थोड़ा सा दूध, या थोड़ी सी उबली हुई सब्जी भी न जुटा पाता तो अवश्य खीझ होती; लेकिन उसमें बिचारी शिक्षा-पद्धति का क्या दोष ? उसका क्या कसूर ? अभागा है वह समाज जिसमें लोगों को थोड़े से स्वच्छ पानी के लिए, थोड़ी सी साफ हवा के लिए, पाव भर दूध के लिए और आध-पाव हरी तरकारी के लिए भी तरसना पड़े।

१९३९-१९४०

‘रोगों की अचूक चिकित्सा’ के बाद मैं प्राकृतिक-चिकित्सा पद्धति के और भी कई ग्रन्थ पढ़ गया। नेचर-क्योर (Nature-cure), ले० डा० लिन्डलहर मुझे विशेष जँचा। उसमें प्रचारक के अत्यधिक उत्साह की कमी और वैज्ञानिक की सावधानता दिखाई दी। इन पुस्तकों के पढ़ने से ऐसा तो नहीं हुआ कि मैं सभी रोगियों अथवा किन्हीं भी रोगियों की कुछ विशेष सेवा कर सका होऊँ; लेकिन इतना अवश्य हुआ—और यह लाभ कम नहीं—कि अब मैं अपनी अथवा पास पड़ोस में किसी की बीमारी से पहले की तरह घबराता नहीं। एक दो उदाहरण देने की आज्ञा चाहता हूँ :—

(१) मेरे एक अजीज को शाम को दस्तों और उलटी की एक साथ शिकायत हो गई। पेट में वायु भर गया। बजाने पर ढोल की तरह बजाया जा सकता था। लोगों ने मुझे खबर दी। मैं गया। सलाह हुई कि डाक्टर को बुलाकर दिखाया जाए। लेकिन रात थी। डाक्टर को बुलाना सम्भव न था। मैंने पूछा कि क्या तब तक मैं अपनी दवाई करूँ ? रोगी ने कहा—‘कुछ भी तो हो।’ मैंने गर्म पानी में नीबू निचोड़ कर पिलाने की व्यवस्था की और पेड़ू पर गीली मिट्टी की आध इंच मोटी रोटी रखने को कहा। रात में केवल दो बार मिट्टी की रोटी रखनी पड़ी। प्रातःकाल रोगी बिल्कुल चंगा हो गया। डाक्टर के यहाँ जाना ही न पड़ा।

(२) एक लड़के को जो मेरे निकट रहता है, मैंने रात को बेचैन पाया। वह कभी कमरे से बाहर जाता, कभी भीतर आता। पूछने पर पता लगा कि उसे पेशाब नहीं उतर रहा है। तकलीफ हो रही है। यह रोग मेरे लिए नया था। मैं कुछ घबराया। लेकिन तब भी रात के ग्यारह बजे और कोई उपाय न देख, मैं पास के अखाड़े से अपने भिक्षा-पात्र भर मिट्टी ले आया। पानी से अच्छी तरह गूँथ कर रोटी बना उसे नाभी से नीचे पेड़ू पर रख दिया। थोड़ी ही देर में लड़के का पेशाब उतर आया और रात भर आराम से सोया।

ऊपर के दो अनुभव उन कइयों में से हैं जिनके कारण मैं अपने ऐलोपैथी-भक्त मित्रों द्वारा मजाक का साधन बनकर भी समय समय पर मिट्टी के प्रयोगों से लाभ उठाता ही हूँ। इधर का एक ताजा उदाहरण सुन लें :—

एक भाई को धातु-पतन की बीमारी हो गई। उनका कहना था कि उन्हें चलते फिरते दिन में भी दो-दो तीन-तीन बार धातु-पतन हो जाता है। वे छटाँक छटाँक भर और सेर सेर घी भर दूध पीते हैं, तब भी मिट्टी हुए जाते हैं। उनका कहना था कि यदि वह इतनी खुराक न खाएँ, तो बस ढेर हो जाएँ। लेकिन मुश्किल यह थी कि वह खुराक हजम ही न होती—खट्टी डकारें आतीं। छाती पर पत्थर पड़ा रहता।

जब वह भाई मेरे पास आए तो मैंने देखा कि रोग से ज्यादा वह रोग की मानसिक पृष्ठ-भूमि से दुःखी हैं। जुकाम की चर्चा हम खुले आम कर सकते हैं, पेट-दर्द की शिकायत भरी सभा में की जा सकती है; लेकिन धातु-

पतन की बीमारी की चर्चा करके क्या कोई 'भला आदमी' भला-आदमी रह सकता है? समाज के इस अभिशाप के कारण पिछले दिनों देश का एक अन्यतम सेवक, जिसकी हिम्मत उसे देश के कला-कौशल के अभाव की पूर्ति के लिए जापान ले गई थी——अकाल-मृत्यु से मर गया——हाँ, अपनी समझ में उस भाई ने बड़ी ही हिम्मत और निर्लज्जता का काम किया था, जब मुझे आकर अपनी बात कही। उन्हें वैसा करने की जरूरत न थी। क्योंकि आखिर शरीर के सभी अंगों के रोग रोग ही हैं। उनमें कौन अच्छा और कौन बुरा? मैंने उन्हें अपनी समझ के अनुसार चार बातें कहीं :——

(क) जो खाते हो तुम्हें वह आगे ही हजम नहीं होता, तुम खुराक खाने के मिथ्या-विचार के वशी-भूत हो यह जो आध आध पाव घी और सेर सेर भर दूध पीते हो——एक दम छोड़ दो।

(ख) तुम सुबह भीगे हुए चने खाओ और उनका पानी पीओ।

(ग) रात को पैर धोकर सोओ और पेड़ू पर मिट्टी की रोटी रक्खो।

(घ) किसी नाँद में बैठ कर ही सही, पेड़-स्नान लो।

उसने यह सब करना आरम्भ किया। पेड़ू-स्नान शायद कभी नहीं ले सका। चना अभी पिछले दिनों तक खाता रहा है। फिर उसने कभी अपने रोग की शिकायत नहीं की। मैंने भी जान-बूझ कर नहीं पूछा——अनुमान लगा लिया कि अवश्य लाभ हुआ होगा।

× × ×

अभी उस दिन हमारे अपने एक कर्मचारी को एक विच्छू काट गया। बड़ी लहर उठ रही थी। जब किसी दवाई से कुछ न हुआ तो लोग उसे मेरे पास ले आए। मैं साधारण तौर पर विच्छू के कटे पर पान का पत्ता और हींग पिसवा कर बँधवा देता हूँ। उससे लाभ होता है। उस दिन हींग न मिलती थी। कई दवाइयों का प्रयोग असफल हो चका था। मैंने कहा——चलो, इसपर भी मिट्टी। आदमियों में वह भाई भी थे, जिनके रोग का ऊपर जिकर किया है। वे बोले——'स्वामी जी के पास एक मिट्टी है। बस जादू करती है।' मैं समझ गया कि तीर ठीक निशाने पर लगा है।

विच्छू के दर्द पर मिट्टी के प्रयोग से तत्काल पूरा लाभ नहीं हुआ; लेकिन जलन अवश्य कुछ कम हो गई थी।

किसी जोहड़ या तालाब की शुद्ध चिकनी मिट्टी! घर में ही भिगोकर रक्खी हुई मिट्टी! समय पर ही कूट भिगो कर तैयार कर ली गई मिट्टी! मैं जानना चाहता हूँ कि तू मिट्टी है या सोना? तेरी प्रशंसा में तुझे सोना बनाना अधिक ठीक है वा सोने की प्रशंसा में उसे मिट्टी कहना?

सोने में वह गुण कहाँ, जो मिट्टी में!!!

सेवागाँव की एक झलक

पण्डित सुन्दरलाल

गांधीजी प्राकृतिक चिकित्सा के प्रेमी हैं यह सभी जानते हैं पर इस समय उनका दैनिक जीवन क्या है ? वे और उनके निकट रहने वाले प्राकृतिक चिकित्सा का किस हद तक सहारा लेते हैं ? आदि प्रश्नों पर 'भारत में अंग्रेजी राज' के प्रणेता पंडित सुन्दरलाल जी के 'विश्ववाणी' में प्रकाशित इस पत्र द्वारा अच्छा प्रकाश पड़ता है ।—सं०

सुबह ठीक चार बजे उठने की घंटी बजती है। नींद में मैं कभी कभी घंटी नहीं सुन पाता। एक सज्जन कृपा करके मुझे आकर उठा देते हैं। चार बज कर बीस मिनट पर प्रार्थना होती है किन्तु मैं आजकल उसमें नहीं जा सकता। चार बजे सुबह से पाँच बजे तक एक घंटा मेरी ड्यूटी शास्त्री जी की सेवा में बँधी हुई है। ये शास्त्री जी पचास से कुछ ऊपर उमर के एक दक्खिनी ब्राह्मण हैं। संस्कृत के पूरे पण्डित, वेदों और शास्त्रों के पूरे ज्ञाता और अङ्गरेजी के अच्छे विद्वान, धर्मनिष्ठ और ईश्वर-भक्त। करीब दस वर्ष हुए इन्हें किसी तरह कोढ़ की बीमारी लग गई। बापू (गांधी जी) दूर दूर से अपने बीमार प्रेमियों और मित्रों को बुला कर यहाँ रखते हैं, इलाज कराते हैं और खुद हर मरीज की देखभाल करते हैं। आचार्य नरेन्द्र देव को भी इस सिलसिले में यहाँ आकर रहने के लिए तार दिया गया था। शास्त्री जी के लिए एक अलग सुन्दर कुटिया बनी है। इलाज हो रहा है। लेकिन बीमारी पूरे जोर पर है। आज सात दिन से वे निर्जल उपवास कर रहे हैं। २४ घंटे कोई न कोई उनकी सेवा में रहता है। ड्यूटियाँ बदलती रहती हैं। सुबह चार से पाँच तक मेरी ड्यूटी रहती है।

× × ×

इस बार यहाँ आकर मैं कभी कभी यह महसूस करता हूँ कि दुनिया में जिस एक आदमी को समझना चाहिए था, उसे पिछले २४ साल के अन्दर इतना अच्छा परिचय होते हुए भी, अभी तक पूरी तरह समझने की कोशिश न की। जिस आदमी के सर पर चर्खा संघ, ग्राम उद्योग संघ, तालीमी संघ, हरिजन संघ जैसी संस्थाओं को चलाने का पूरा बोझ है, जो इतनी बड़ी सरकार के साथ ऐसा अनोखा युद्ध छेड़े हुए है, जिसे रोज प्रान्त प्रान्त के नेताओं और काम करने वालों को बहसें करके हिदायतें देनी पड़ती हैं और उन्हें गुमराही से बचाना पड़ता है, जिसे हिन्दुस्तान में शायद सबसे ज्यादा पत्रों का जवाब देना पड़ता है, और जिसकी मुलाकातों में नौ नौ घंटे से ऊपर खर्च होते हैं—वह सुबह सैर से लौट कर कुष्ट रोग के एक ऐसे मरीज की कुटिया की, जिसका मर्ज अपने पूरे जोर पर है, अपने हाथ से सफाई करता है, खास सामान एक जगह से हटा कर दूसरी जगह रखता है, कुटिया में झाड़ू देता है, और फिर रोज नियम पूर्वक अपने हाथ से धीरे धीरे उस रोगी के सारे शरीर की मालिश करता है, उसके जख्मों से दबाकर पीप निकालता है और उसके खुरंट उतारता है।

× × ×

मेरे साथ एक दूसरे सज्जन श्री एच० सी० दासप्पा हैं। ये मैसूर के बड़े वकील थे। वहाँ की स्टेट कांग्रेस के सदर थे। एक तरह की गठिया हो गई जिससे बदन हिलाना तक मानो आरे से चीरना जैसा हो गया। डाक्टरों से ज्यादा फायदा न हुआ। तब बापू ने मैसूर

से यहाँ बुलाकर रखा। इलाज कराया। अभी इलाज चल रहा है। सिर्फ मौसम्बी के रस पर रह रहे हैं। अब इतना फर्क है कि तीन मील पैदल सैर कर आते हैं। बड़े प्रेमी और सरल स्वभाव हैं।

× × ×

डेढ़ बजे से दो भाई और बहिन मुझसे हिन्दी-उर्दू पढ़ने आते हैं। डेढ़ घंटे तक उन्हें पढ़ाना पड़ता है। फिर चार से पाँच तक डाक्टर सतीशचन्द्र दास को हिन्दी पढ़ाता हूँ। डाक्टर दास साठ बरस की उमर के स्वस्थ, बड़े प्रेमी और भावुक व्यक्ति हैं। विलायत में डाक्टरी की तालीम पाई। नैपाल में चीफ मेडिकल अफसर रहे। फिर दस बरस दार्जिलिंग में चोटी के डाक्टर रहे। अब सब छोड़कर अपनी स्त्री और एक बच्चे समेत आश्रम में रहते हैं। आश्रम के मेडिकल अफसर हैं। बापू के बड़े भक्त हैं।

मैंने एक दिन पूछा आपने दार्जिलिंग की प्रैक्टिस क्यों छोड़ दी? कहने लगे—"मैं रोज देखता था कि जो लोग मुझे इलाज के लिए बुलाते थे, उनके रोजमर्रा के खाने में या उनकी आदतों में छोटी छोटी तब्दीलियाँ कर देने से वे अच्छे हो सकते थे। यदि मैं यह कहता तो वे न सुनते। वे दवाइयाँ ही चाहते थे और दवाइयाँ फायदा कम करती हैं, नुक्सान ज्यादा। मुझे रुपये की जरूरत थी, वैसा ही करना पड़ता था। धीरे धीरे मेरी अन्तरात्मा मुझे धिक्कारने लगी। मैं छोड़कर चला आया। यहाँ मेरी आत्मा सन्तुष्ट है।" डाक्टर दास उपवास को बहुत मुफीद बताते हैं और खुराक ठीक करने पर बहुत जोर देते हैं। एक तरह के प्राकृतिक इलाज के मानने वाले हैं। खाने के बारे में और खास कर क्या क्या चीजें एक साथ खाई जा सकती हैं और क्या क्या नहीं, इस बारे में मैंने उनसे बहुत सी नई बातें सीखी हैं।

शाम को पाँच बजे फिर घंटी बजती है और खाने को पहुँचना होता है। बापू के खाने की खास चीजें हैं—कच्चा लहसन पिसा हुआ, कच्ची प्याज कटी हुई, एक डब्बे में पालक या और कोई कच्चा साग, बकरी का दूध और कुछ डबल रोटी के टुकड़े या खाखरा (सोडा डालकर पापड़ की तरह सिकी रोटी), नाश्ते में दूध के साथ सन्तरा या मौसम्बी और कुछ ताड़ का गुड़। दोपहर और शाम के खाने के वक्त किसी किसी को अपने डब्बे में से थोड़ा सा पिसा हुआ लहसन और थोड़ी सी कटी प्याज और कच्चा साग दे देते हैं। मेरे दूध के कटोरे में भी आजकल दोनों समय करीब छै छै माशे पिसा हुआ लहसन डाल देते हैं। उनकी यह खास कृपा है और मुझे दूध में लहसन मिलाकर खाने की आदत पड़ गई है।

× × ×

यहाँ की मंडली सचमुच बड़ी प्यारी है। किसी किसी को शुरू में देखकर बड़ा धोखा होता है। एक सज्जन बड़े मिहनती और हर जगह काम करते दिखाई दिये। मैं समझता था शायद थोड़ी सी हिन्दी जानते होंगे। फिर मालूम हुआ कि इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के एम० एस-सी० हैं। बड़े खामोश और सच्चे काम करने वाले हैं। फैजाबाद के रहने वाले हैं और नाम है कृष्णचन्द्र। एक दूसरे सज्जन जो यहाँ गाँव में ज़ाकर काम करते हैं उन्हें भी मैं ऐसा ही समझा था। बाद में मालूम हुआ कि वे नागपुर यूनिवर्सिटी के बी० ए०, एल-एल० बी० हैं। ये बुरहानपुर के रहने वाले हैं और नाम है मुन्नालाल।

कई लोग यहाँ सकुटुम्ब रहते हैं। एक सज्जन बम्बई यूनिवर्सिटी के ग्रैजुएट हैं, विलायत हो आए हैं, गुजरात कालेज के प्रोफेसर रह चुके हैं और कई भाषाओं के विद्वान हैं, यहाँ रहते हैं। एक बार जब इन्हें तपस्या की सूझी तो ५७ दिन उपवास किया और होठ सी लिये। अब बापू की राय से होठ खोलकर दिन भर चरखा कातते और आश्रम और गाँव के छोटे छोटे बच्चों को अंग्रेजी हिन्दी वगैरह पढ़ाते हैं। इनका नाम भनसाली जी है।

एक दिन सुबह भनसाली जी गुसलखाने से नहा कर निकले। मैंने कहा—"अगर आप अपना कनस्तर मुझे दे सकें तो मैं इसीसे नहा कर आपको लौटा दूँ।" कहने लगे—"आप मुझे माफ करेंगे। यह वह कनस्तर है जो पाखाने धोने वगैरह के भी काम आता है। मैं इसीसे

नहा लेता हूँ। आपको एतराज न हो तो ले लें।" मैंने एक क्षण सोचा और फिर जवाब दिया—"जिससे आप नहा सकते हैं उससे मैं भी नहा सकता हूँ।" उनसे कनस्तर ले लिया।

× × ×

बापू जितना काम करते हैं वह सचमुच एक चमत्कार है। कभी कभी रात को दो-तीन बजे जब सब सोते रहते हैं वे खत लिखते या लिखाते नजर आते हैं। अकसर रात को ८-९ बजे तक दिन भर की मेहनत से चूर हो जाते हैं और खून का दबाव उस समय दो सौ से ऊपर पहुँच जाता है। तब डाक्टर जबरदस्ती आकर उनका काम बन्द करता है। एक बार शाम को छै बजे दो बंगाली सज्जन उनसे बंगाल की परिस्थिति पर कुछ जरूरी बातें कर रहे थे। बापू उनसे अरविन्द बाबू के आजकल के विचारों के बारे में पूछ रहे थे। बातों में शाम की सैर का वक्त निकल गया। प्रार्थना की घंटी बजी। दोनों सज्जनों ने बिदा ली। मैंने पूछा—"बापू! आज तो आप सैर को नहीं जायँगे, अब प्रार्थना होगी।" जवाब दिया—"नहीं, सैर को जरूर जाऊँगा। मैं और कुछ भी काम छोड़ दूँ, सैर करना नहीं छोड़ सकता। विलायत में (राउंड टेबल कान्फरेंस में) मुझे और वक्त नहीं मिलता था तो ढाई बजे रात को टहलने जाता था! प्रार्थना के बाद चलूँगा।"

एक दिन शाम को सैर में रास्ते भर बातें होती रहीं। लौट कर कोई सवा आठ बजे बापू अपने कमरे में घुसे। मैं कुछ कर ही रहा था कि एकदम दीवार से लग गये। पहले मुझे हाथ से इशारा किया और फिर कहने लगे—"अब समझ लो बापू नहीं है, मर गया!" मैं घबरा गया। डाक्टर ने इशारा किया। मैं कमरे से बाहर चला आया। खून का दबाव काफी बढ़ गया था। ऐसे अवसर पर बापू को अन्दर से मालूम होने लगता है कि अब 'बस'। रोज जान की बाजी लगी रहती है। शायद ही दुनिया में कोई दूसरा शख्स इस तरह काम करता हो। एक दिन मुझसे कहने लगे—"ब्लड प्रेशर बढ़ कर फिर घट जाता है; जो किसी दिन न घटे तो बस...।" बापू इस तरह कार्य कैसे चला लेते हैं उसके ऊपरी कारण मैं यह समझ पाया हूँ—

(१) करीब दो मील सुबह और दो मील शाम का टहलना कभी बन्द नहीं होता। बारिश में उतना ही देर बरामदे में टहलते हैं। लकड़ी के सहारे या किसी के कन्धे पर हाथ रख कर ही वे टहलते हैं।

(२) टहलते समय बच्चों के साथ हँसते हुए चलते हैं। लेकिन कभी कभी किसी को गम्भीर बातचीत का समय भी देते हैं।

(३) सुबह करीब ८॥ से ९॥ तक उनके शरीर की तेल की मालिश होती है। मालिश करने वाले अपने हुनर में निपुण हैं। मालिश में कभी कभी पत्र व्यवहार भी करते रहते हैं। कभी कभी मालिश कराते कराते सो लेते हैं।

(४) मालिश के बाद रोज गरम टब में लेट कर देर तक स्नान करते हैं। कभी कभी टब में लेटे लेटे भी कुछ सो लेते हैं। जिस दिन इस तरह टब में नींद आ जाय उस दिन बड़े खुश होते हैं।

(५) तीसरे पहर को पेडू पर गीली मिट्टी रख कर कुछ देर तक लेटे रहते हैं। जिस दिन आँखें ज्यादा थक जाती हैं उस दिन दोनों आँखों पर भी गीली पट्टी रख लेते हैं। इस बीच दूसरों से बातचीत बराबर जारी रहती है। एक दिन मौलाना अबुल कलाम से भी इसी तरह बातें कीं।

(६) खुराक का खास ख्याल रखते हैं और खाने में भी खूब समय लेते हैं। दूध, कच्चा लहसन, कच्ची प्याज, कच्ची पत्तियाँ, साग वगैरह सब एक में मिला कर खाते हैं। खाना चबाने में करीब एक घंटा वक्त लेते हैं।

(७) गम्भीर से गम्भीर बातों में भी बीच बीच में हँसते और कहकहा लगाते रहते हैं। बड़े आदमियों में इतना हँसमुख व्यक्ति दुनिया में बिरला ही होगा।

(८) जहाँ तक मुमकिन हो बिलकुल खुले मैदान में सोते हैं। गरदन तक कपड़े ओढ़े रहते हैं।

ध्यान के लिए दो आसन

श्रीयुत पंडित ब्रजभूषण मिश्र, एम० ए०

"यह बात सच है कि ध्यान किसी भी तरह किया जा सकता है पर कम कठिनाई से अधिक लाभ उठाने के इच्छुकों को बैठने के कुछ विशेष तरीकों को ध्यान में रखना चाहिए।" इन तरीकों में से पद्मासन की साधकों ने बड़ी प्रशंसा की है और वज्रासन पर बैठने से "भोजन पचने में सुविधा होती है और ध्यान बड़े ठिकाने का जमता है।"—सं०

आजकल ध्यान करने की ओर प्रवृत्ति बहुत देखी जाती है। यह बात मौखिक ही अधिकतर रहने पर भी कुछ लोग इसकी आवश्यकता भी महसूस करते हैं। विद्यार्थी समाज के लिए ध्यान की आवश्यकता अतीव है। पढ़ना तपस्या है। ध्यान तपस्या के अन्तर्गत है अतः पढ़ने वाले को ध्यान की चिन्ता स्वाभाविक है। ध्यान शब्द ईश्वर-ध्यान के लिए साधारणतः प्रयुक्त होता है तथापि साधारण चिन्तन के अर्थ में भी अप्रयुक्त नहीं होता।

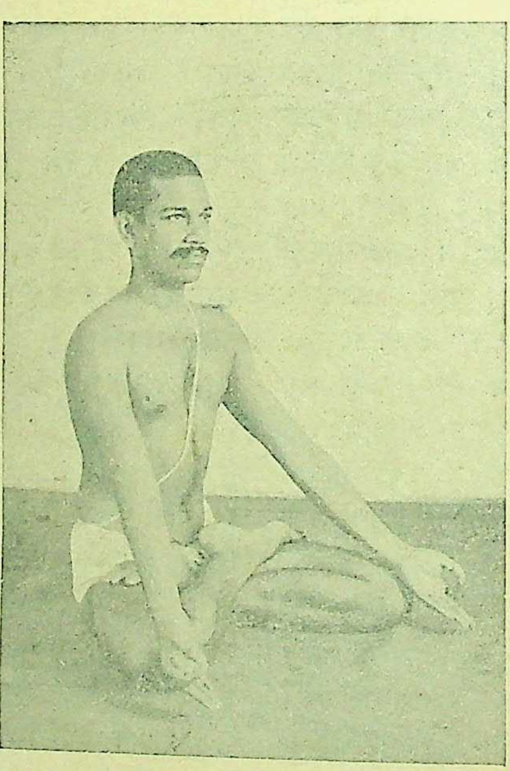

लेखक : वज्रासन पर

ध्यान की आवश्यकता चंचल मन को रोक कर किसी एक ओर केन्द्रित करना है। क्योंकि कोई काम चारों ओर की बाधाओं को हटा, पूर्ण ध्यानस्थ या एकात्मा होकर न किया जाय तो वह अधूरा ही रहेगा। इससे यह पता चलता है कि यह क्रिया मन की है इसमें शरीर की अवस्था का ध्यान निरर्थक है। इसमें सत्य का अंश अधिक है पर पूर्ण नहीं। शरीर से मन को एकाग्र करने में सुविधा मिलती है।

यह बात सच है कि ध्यान किसी भी तरह किया जा सकता है पर कम कठिनाई से अधिक लाभ उठाने के इच्छुकों को बैठने के कुछ विशेष तरीकों को ध्यान में रखना चाहिए। इससे उनको लाघव अनुभव होगा। इन आसनों से रक्त संचालनादि ठीक होने के कारण शारीरिक गड़बड़ी की सम्भावना कम से कम हो जाती है। वह साम्यावस्था में रहता है, जिस किसी भी काम में प्रयुक्त किया जा सकता है। मेरा तो कुछ ऐसा अनुभव है कि इन पर बैठते ही एक हलकापन और आनन्द का अनुभव स्वतः होने लगता है। मन की चंचलता को हटाने के लिए

यम[1] और नियम[2] के व्यवहार आवश्यक हैं। अस्तु इन आसनों के साथ उनका भी सक्रिय व्यवहारारम्भ अति सहायक होगा।

यहाँ पर मैं ध्यान में रखने की तीन मुख्य बातों का ज़िक्र कर देना चाहता हूँ। ध्यान के आसन करने वालों को अपनी साधना के लिए कुछ समय निर्धारित कर लेना चाहिए। नित्य उसी समय अभ्यास करना बहुत ही हितकर होता है। दूसरी बात है उचित स्थान को चुनना। ध्यान के लिए ऐसा स्थान स्वयमेव चुन लेना चाहिए जहाँ कम से कम बाधा की सम्भावना हो। इसके लिए एक स्वच्छ हवादार कमरे की जरूरत है। सर्वोत्तम तो यह है कि इस काम के लिए कोई एक कमरा ही निश्चित कर लिया जाय और उसका वातावरण पूर्ण आध्यात्मिक बना लिया जाय। तीसरी ध्यान देने की चीज है बिछाने का आसन। परम्परागत कुश और मृगचर्म के आसन बहुत अच्छे रहते हैं; पर इनके ऊपर नित्य शुद्ध खादी का टुकड़ा बिछाना आवश्यक है। साधक का अपना आसन शाहंशाह के तख्ते से कहीं बढ़ कर आनन्द देता है।

पद्मासन

साधक को अपने दोनों पैर आगे की ओर फैला सीधे बैठ जाना चाहिए। फिर एक पैर को घुटने से मोड़ दूसरे पैर के जंघे पर नाभि के पास एँड़ी को लगाते हुए रखना चाहिए। पैर का तलवा ऊपर की ओर रहेगा। इसी तरह दूसरा पैर भी रख लेना चाहिए। पैर की एड़ियाँ पेट पर हलका दबाव डालेंगी। अब हाथ या तो इस तरह रखना चाहिए जैसा चित्र में दिया है या सामने नाभि के पास एक पर एक रख लेना ठीक होगा। दृष्टि नासिका की ओर लगी रहनी चाहिए।

सावधानता

इस आसन का महत्त्व बन्धों के साथ ही विशेष है। मुख्यतः जालंधर और मूलबन्ध बहुत ही मुफ़ीद हैं; पर इनका व्यवहार साधारण साधक को बिना पूरा अभ्यास किए नहीं करना चाहिए। यदि इस आसन को देर तक करना हो तो बन्ध का व्यवहार हटा देना ही उचित है। बिना बन्ध के यह आसन नब्बे मिनट तक बिना हानि किया जा सकता है।

वज्रासन

सामने की ओर पैर फैला कर सीधे बैठ जाना चाहिए। तब कोई एक पैर (बायाँ ही सही) घुटने से

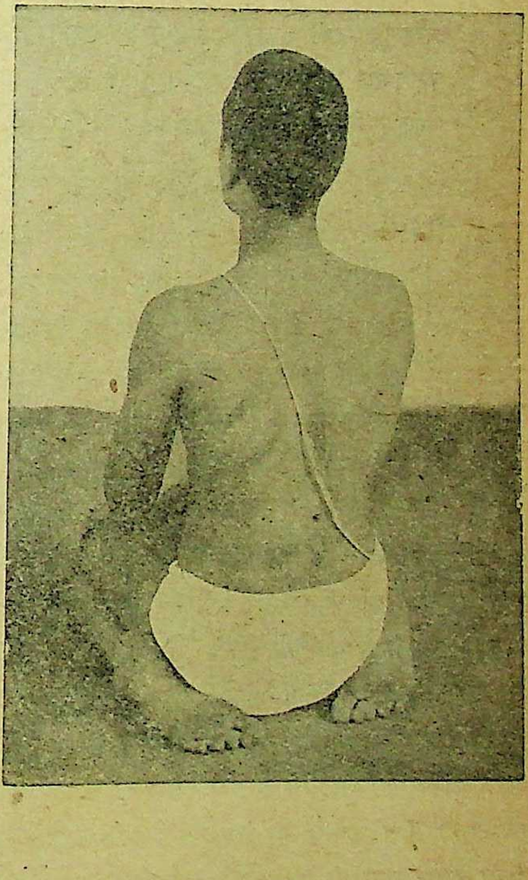

---

[1] अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना) ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह (न बटोरना) यम कहलाते हैं।

[2] शौच, सन्तोष, तपस्या, स्वाध्याय और ईश्वर- प्रणिधान नियम कहे जाते हैं।

मोड़ कर जंघे के पास लाइए। ऐसा करने में पैर उठ जायगा। बाएँ हाथ से उसे उठा कर बाएँ नितंब के नीचे ले जाकर रख दीजिए जिससे घुटना जमीन पर आ जायगा; एड़ी शरीर से सटी हुई एक ओर रहेगी और पैर का पंजा पीछे हो जायगा। इसी तरह दूसरे पैर से भी करना चाहिए। दोनों घुटने आपस में सटे रहेंगे पर पैर के तलवे अलग अलग रहेंगे। दोनों हाथों को घुटने पर रख कर वज्रासन पर बैठ जाइए।

इस आसन से भोजन पचने में सुविधा होती ही है, ध्यान बड़े ठिकाने का जमता है।

आलू—आहार के रूप में

ले०—प्रोफेसर भवानीप्रसाद जी, प्राकृत स्वास्थ्य शास्त्रोपाध्याय, कांगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार

एकाहार का बहुत महत्त्व है, उससे बहुत से रोग जाते हैं पर बहुत कम ऐसे खाद्यपदार्थ हैं जिन्हें खाकर आदमी बहुत दिन तक रह सकता है। उनमें से आलू भी एक है यह साबित हो गया है, पर इसके चिकित्सा-गुण क्या हैं? इसपर अनुसन्धान होने की बहुत बड़ी गुंजाइश है। जिन सज्जनों ने इस दिशा में कुछ अनुभव किये हों वे कृपा पूर्वक जीवन-सखा में प्रकाशनार्थ हमें लिख भेजें।—सं०

डा० हैंडिड डेन्मार्क के चीफ हेल्थ अफसर हैं। उन्होंने अपनी सारी आयु इस बात की खोज में लगाई है कि मनुष्य के पोषण के लिए सबसे बढ़कर उपयोगी कौन सा पदार्थ है। उन्होंने आलू के विषय में अनुभव करके यह सिद्धान्त स्थिर किया है और उससे सारे डेन्मार्क देश में तहलका सा मच गया है कि आलू में अति पौष्टिक तत्त्व होते हैं और मनुष्य केवल आलू खाकर ही सशक्त रह सकता है। आलू खाने वालों में अच्छे से अच्छे पौष्टिक आहार खाने वालों की अपेक्षा किसी भी प्रकार की कमी न होगी। भूतपूर्व यूरोपीय महायुद्ध के समय डेन्मार्क के अधिकारियों ने डा० हैंडिड की सम्मति से अपने देश में खाया जाने वाला सारा मांस जर्मनी को बेच दिया था और स्वदेश के लिए केवल आलू ही बचाकर रख लिया था और सारे डेन्मार्क वालों का निर्वाह आलू से ही हुआ था। आलू खाने से किसी के बल और प्रकृति में कोई त्रुटि नहीं उत्पन्न हुई। तब से सारे डेन्मार्क में डा० हैंडिड का नाम डाक्टर पुटैटो (Doctor Potato) पड़ गया और वह प्रत्येक बच्चे की जिह्वा पर चढ़ा हुआ है। उन्होंने अपने अनुभवों की कथा स्वयं लिख कर प्रकाशित की है जो संक्षेपतः इस प्रकार है:—

मेरी आयु का अब ६६वाँ वर्ष है। मैंने अपने ३३ वर्ष इसी खोज में बिताये हैं कि मनुष्य के लिए कौन-सा आहार उपयोगी है? मेरे अनुभव की विशेषता यह है कि मैंने उसका परीक्षण मनुष्यदेह पर ही किया है। बहुधा वैज्ञानिक विद्वान् और डाक्टर अपने परीक्षण चूहों पर करते हैं। वे चूहों को विविध आहार खिलाकर उसके परिणामों को लिखते रहते हैं और तदनुसार ही मनुष्य के लिए उपयोगी वा बलप्रद आहार का विधान करते हैं। किन्तु वस्तुतः मनुष्य के लिए उपयोगी वा हानिकर आहार का निर्णय मनुष्य पर परीक्षण करके ही करना आवश्यक है। आज से ३३ वर्ष पूर्व मैंने अपना परीक्षण अपने घर के ही एक व्यक्ति पर किया। उस समय

मैंने उसको केवल मांसपोषक तत्त्व (protein) वाला आहार ही खिलाने का निश्चय किया। १० वर्ष तक यही परीक्षण चलता रहा और विलक्षण बात है कि इस परीक्षण से मेरी ४ पुत्रियाँ बड़ी बलवती बन गईं। उनमें इतना बल है कि वह सहस्रों पुरुषों में ढूँढ़ने से भी नहीं मिल सकता। इसके पश्चात् मैंने सर्वसाधारण में शाकाहार का प्रचार प्रारम्भ किया। मेरे इस परीक्षण से भी जनता में एक खलबली मच गई। मेरे बतलाये आहार पर केवल चार आना प्रति दिन व्यय होता था, यही सब के आश्चर्य की बात थी। किन्तु अन्त में मेरे परीक्षणों का यह परिणाम निकला कि स्वयं सरकार ने मेरे लिए एक परीक्षण-गृह बनवा कर मेरे परीक्षणों को देखना शरू किया। यह मेरे परीक्षणों की सचाई और महत्त्व का प्रमाण था। निःसन्देह मेरे अनुभव तब से अब तक बराबर चल रहे हैं। यहाँ मुझे केवल आलू के विषय में ही कुछ कहना है। सन् १९१२ ई० से पूर्व किसी भी डाक्टर वा वैज्ञानिक ने यह खोज न की थी कि केवल आलू ही सर्वोत्तम आहार के रूप में खाया जा सकता है। यह केवल मेरा ही काम था और मैं तथा मेरे एक मित्र जनवरी १९१२ ई० से केवल आलू खाकर ही जीवन-यापन कर रहे हैं। पूर्व मुझे आशंका थी कि आलू से शरीरपोषणार्थ आवश्यक तत्त्व (प्रोटीन) न मिल सकेगा और हमें अंडे-मांस का प्रयोग करना पड़ेगा। किन्तु इसकी जरूरत बिलकुल नहीं हुई और हमारा स्वास्थ्य वैसा ही अच्छा रहा जैसा अन्य बलप्रद आहार करने वालों का रहता है। मैं केवल अपने एक माली का उदाहरण देता हूँ। वह ६ मास तक केवल आलू, शाकों के रस और सादे जल से निर्वाह करता रहा। वह मेरी परीक्षणशाला में प्रातः ८ से मध्यान्होत्तर ३ बजे तक काम करता था और ग्रीष्म ऋतु में तो प्रातः ३ बजे से ही उठकर सारा दिन काम में लगा रहता था। इतना कठोर परिश्रम करते हुए भी उसे तनिक थकावट प्रतीत न होती थी, उसके आहार की मात्रा ढाई सेर आलू और आध छटाँक शाक का रस था। तत्पश्चात् मैंने उसको खेत में मजदूरों के काम पर भेज दिया। वहाँ उसे ३ मास तक १४-१४ घंटे काम करना पड़ा। उस समय उसे आहार की मात्रा बढ़ानी पड़ी। ढाई सेर के स्थान में चार सेर आलू और आध छटाँक के स्थान में पौन छटाँक शाक का रस वह ग्रहण किया करता था। हमारे कार्यविवरण के देखने से पता लगा कि उसके कार्य की मात्रा घटने के स्थान में बढ़ गई थी। उन दिनों काम के समय केवल भोजनार्थ उसको एक-डेढ़ घंटे की छुट्टी मिलती थी। एक बार तो दो दिन और एक रात भर उससे काम लिया गया। मेरे इन विलक्षण परीक्षणों के पश्चात् जर्मनी के अन्य प्राफेसरों ने भी आलू के आहार का परीक्षण कर के देखा और सम्मति प्रकट की कि केवल आलू खा कर ही मनष्य पूरा पुष्ट, बलवान और स्वस्थ रह सकता है। आलू में पूरा-पूरा पोषकतत्त्व विद्यमान है। कोलोन के दो प्रोफेसरों ने भी आलू के परीक्षण कर के लिखा था कि हमें अपने परीक्षण में डा० हैंडिड के समान ही पूरी सफलता मिली हैं। हम कह सकते हैं कि १ पौंड मांस में जितना पोषक तत्त्व है उतना ही १ पौंड आलू में भी है। इसमें विशेषता यह है कि हमने ऐसे आलुओं पर परीक्षण किया था, जिनमें मांसपोषक तत्त्व कम था, फिर भी कोई अन्तर नहीं पड़ा। आलू केवल उत्तम आहार ही नहीं है, प्रत्युत उत्तम औषधि भी है। इससे मूत्राम्ल (Uric acid) का दोष कम हो जाता है, अतएव यह रुग्णावस्था में औषध-रूप में भी प्रयुक्त हो सकता है। आहार-रूप में इसको खाते हुए एक बात ध्यान में रखिये। जिस पानी में इसे उबाला जाय, उसे फेंक न देना चाहिए क्योंकि उस पानी में आलू से प्राप्त भोज्यौज (vitamins) और क्षारीय द्रव्य (alkaline) पर्याप्त मात्रा में विद्यमान रहते हैं।

* * *

निदान और चिकित्सा के आधुनिक ढंग

डा० शिवरतनलाल, एच० एम० बी०

औषध चिकित्सा-प्रणाली के चिकित्सकों के सामने उपचार के पहले समस्या उपस्थित होती है कि रोग कौन सा है, उसका पता लगाओ। पर रोग तो शरीर पर आने के बहुत पहले ही शरीर में आरम्भ हो जाता है। किन्तु रोग न दिखाई दे तो चिकित्सा कैसी?---डाक्टरों की इस उपहासास्पद एवं दैनीय परिस्थिति का विश्लेषण तो इस लेख में किया ही गया है साथ ही यह भी बताया गया है कि स्वास्थ्य और मानस का क्या सम्बन्ध है? हमारे विचार रोग लाने और रोग भगाने में कहाँ तक उत्तरदाई हैं।---सं०

निदान और चिकित्सा के आधुनिक ढंग का वर्णन करने के पहले यह आवश्यक जान पड़ता है कि हम जान लें कि रोग क्या है? कैसे होता है? और रोगी किसे कहते हैं?

मानव जाति के विकास के साथ ही रोग भी आया, बहुतों की ऐसी धारणा है। महामति डारविन साहब के मतानुसार यदि मानव जाति के विकास को मानें तब तो अवश्य ही हमें रोग के आदि इतिहास का पता लगाना कठिन हो जायगा। क्योंकि उनके मतानुसार मानव जाति के विकास का क्रम जड़ता से चेतनता की ओर है। परन्तु इसके विपरीत रोग का क्रम चेतना से जड़ता की ओर है अर्थात् 'सूक्ष्म से भौतिक विकास' ऐसा है। किन्तु हम उन झगड़ों में न पड़ कर सीधे इस प्रश्न पर विचार करेंगे। आप मनुष्यों के आदि पितामह की कल्पना कीजिए। शायद कोई ऐसा समय भी रहा हो जब केवल एक ही पुरुप और एक ही स्त्री सृष्टि में रही हो और क्रमश: मानव जाति की वृद्धि हुई। उनकी सन्तानें भी एक परिमित संख्या में रही होंगी। धीरे धीरे उनकी संख्या में वृद्धि हुई। परन्तु उस समय सम्भवत: रोग का नामोनिशान भी नहीं था। इसकी एक खास वजह थी। यद्यपि उस प्रारम्भिक अवस्था में हम असभ्यों की श्रेणी में क्यों न गिने जाते रहे हों फिर भी हम में वर्तमान युग की कृत्रिमता के अवगुण नहीं थे। उस समय सभ्यता ने आधुनिक रू नहीं ग्रहण किया था।

सोचिए एक वह भी समय था संसार के इतिहास में जब लोग कन्द मूल फल खाकर जीवन व्यतीत करते, सरिता का निर्मल जल पीते और मुक्त वायु में स्वच्छन्द होकर विचरण करते थे। वे प्राकृतिक सौंदर्य का पूर्ण उपभोग करते थे और उनका आहार-विहार सभी प्राकृतिक था। उस समय लोगों में कहाँ रोग था? वे कितने बलवान, हृष्ट पुष्ट व सुन्दर होते थे? आधुनिक सभ्यता में तो बनावट का ही स्थान सर्वोपरि हो गया है।

इसके विरुद्ध जो प्राकृतिक ढंग अख्तियार करे वह असभ्य, जंगली और मनुष्यता की श्रेणी से गिरा हुआ समाज के बाहर का जन्तु समझा जाता है।

हाँ तो रोग के प्रादुर्भाव के पूर्व मनुष्य जाति में

कोई ऐसी खराबी पैदा हुई जिसने रोग को प्रश्रय प्रदान करने में सहायता दी। यही बात अगर समझ में आ जाय तो बहुत हद तक रोग के कारण, उसकी उत्पत्ति, उसका इतिहास और उसके प्रकृति का पता लगाना सरल हो जायगा।

मनोभावना और रोग

वस्तुतः यह देखा गया है कि मनुष्य जैसा सोचता है, जैसी इच्छा करता है वैसा ही वह बन भी जाता है। अथवा यों कहा जाय कि मनुष्य सोचने और इच्छा करने से उसी के अनुरूप कार्य भी करने लग जाता है। प्रत्येक कार्य के पहले मनःशक्ति मनुष्य को उसके लिए प्रेरित करती है। अनायास ही कोई कार्य नहीं हुआ करता है। अगर हमारे मन में कोई कमजोरी न हो तो हमें भय नहीं हो सकता। अगर मनुष्य की मानसिक शक्तियाँ प्रबल होतीं तो कदाचित रोग जैसे शब्द का कोई महत्व ही न होता। मानसिक दुर्बलताओं ने रोग को मानव जाति में प्रश्रय दिया। जब तक मनुष्य सच्चाई के साथ सत्य को ही सोचता था, अच्छी अच्छी बातों पर मनन करता था, नैतिकता का ह्रास उसमें नहीं हुआ था, न्याय और दृढ़ता का अभाव भी उसमें नहीं था, उसने दूषित प्रकार के आहार विहार और मनोविनोद को नहीं अपनाया था, उसका जीवन प्राकृतिक था—तब तक वह रोग की छाया से भी दूर था।

निर्मल जल में जिस प्रकार कीचड़ मिल जाने से उसकी स्वच्छता का लोप हो जाता है उसी तरह पवित्र मानसिक अवस्था में बुरी भावनाओं का समावेश होने के साथ ही उसकी स्वच्छता भी जाती रही है और वह दिन प्रति दिन पतनोन्मुख होकर एक न एक विपत्ति में फँसता ही गया। रोग नाम से जब हम कोई बात कहते हैं तो उसका अर्थ शरीर मात्र से लगाया जाता है। मानो शरीर (या शारीरिक कारण) ही रोग का मूल कारण है। किन्तु थोड़ा ध्यान पूर्वक मनन करने से यह पता लग जायगा कि स्वयं शरीर न तो अपने आप परिचालित हो सकता है और न अपने में कोई रोग ही ग्रहण करने की सामर्थ्य रखता है।

रोग से मतलब वास्तविक रोग से है जिनका कोई सम्बन्ध वाह्य उपादानों से नहीं है। बल्कि उनका प्रवाह भीतर से वाहर की ओर है। उदाहरण के लिए—खुजली, चेचक, कण्ठमाला, घेघा, बदन में अक्सर फोड़ों का निकलना आदि। जिन आन्तरिक शक्तियों द्वारा शरीर की क्रियाएँ होती हैं, वह परिचालित होता है और उसमें स्फूर्ति आती है—उनपर जब तक कोई विपरीत (दूषित) प्रभाव नहीं पड़ता शरीर में कोई विकार नहीं आ सकता; यद्यपि यह सही है कि वाह्य कारणों से वे भीतर के रोग जरा और जल्द प्रकाश में आ जाते हैं और प्रस्फुटित हो जाते हैं जिन्हें हम तात्कालिक उत्तेजक कारण (Immediate Exciting cause) कहते हैं। यह वाह्य कारण अप्राकृतिक जीवन, आहार विहार आदि हैं। किन्तु रोग का मूल कारण तो उन्हीं आन्तरिक शक्तियों पर विपरीत प्रभाव का पड़ना है जो सूक्ष्म रूप से (Dynamic form में) होता है और जो शरीर में नाना प्रकार के रोगों के रूप में परिणाम स्वरूप दिखाई पड़ते हैं। आन्तरिक ह्रास का, आन्तरिक प्रभाव का वाह्य रूप शरीर पर रोग के फलस्वरूप नाना प्रकार के लक्षणों द्वारा प्रकट होता है। तभी हम जानते हैं कि रोग शरीर में आया। एक प्रकार से दोनों एक ही वस्तु हैं। जब तक वह शरीर पर प्रकट नहीं होता उसे हम रोग नहीं मानते। किन्तु वास्तव में रोग वही है। वहीं इसका मूल कारण भी।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति के समर्थक इस बात में विश्वास करते हैं कि रोग शरीर में होता है। आन्तरिक सूक्ष्म मानसिक अवस्थाओं से स्थूल शरीर के रोग का कोई सम्बन्ध नहीं है। उनको तो भौतिकता में विश्वास है। उनकी समझ में शरीर में रोग है और उसीमें उसका कारण भी। हर एक रोग के लिए वे शारीरिक कारणों की तलाश करते हैं। उनका ख्याल है कि मनुष्य के शरीर के तत्वों में विकार युक्त परिवर्तन ही रोग है। जिसे वह इन्द्रियों द्वारा या अँगुली से टटोल

कर, आँखों द्वारा देख कर, स्पर्श करके अथवा दूसरे भौतिक-आधुनिक-वैज्ञानिक-परिष्कृत यंत्रों द्वारा निरीक्षण करके पता न लगा सकें उसको रोग मानते ही नहीं।

शारीरिक लक्षण—रोग नहीं

इन सब बातों की एक खास वजह है। वह यह कि अज्ञानवश लोगों ने शारीरिक लक्षणों को ही रोग का आदि और अन्त मान लिया है। जब हम कहते हैं कि 'मोहन रोगी है' तो तुरन्त यह समझा जाता है कि मोहन का शरीर बीमार है। लेकिन बीमारी का फल मात्र ही शरीर में दृष्टिगत होता है। बीमारी तो इतनी सूक्ष्म है और उसका कारण (मूल) तो ऐसा है जो इन्द्रियों की अनुभूति से परे है। उसे समझने के लिए न तो स्टेथसकोप की आवश्यकता होती है न अनुवीक्षण यन्त्र की। शरीर के तत्वों की क्रियाओं के विज्ञान को समझने वाले इस बात को नहीं मानते कि जीवनी शक्ति, जो सूक्ष्म है और इन्द्रियों से परे है या अंग्रेजी में जिसे Dynamic कहते हैं, उस पर कोई विपरीत प्रभाव पड़ने से बीमारी पैदा होती है।

आपको बहुत से रोगी ऐसे मिलेंगे जो अपने को बीमार बतावेंगे। वे पन्ने के पन्ने रोग के लक्षणों को बयान करेंगे। अपनी तकलीफों की एक लम्बी फेहरिस्त लिखा जायेंगे। देखने में वे बीमार भी मालूम पड़ेंगे। लेकिन साथ ही वह यह भी कहेंगे कि मैं बड़े बड़े मशहूर डाक्टरों के पास गया था। फेफड़े के विशेषज्ञ ने मेरा फेफड़ा देखा है। दिल के विशेषज्ञ (Cardiac Specialist) ने मेरे दिल की परीक्षा की है। स्नायु रोग विशेषज्ञ (Neurologist) ने मेरे स्नायु रोगों की देख भाल की है। आँख, नाक, कान, मस्तिष्क और प्राय: प्रत्येक अंगों के विशेषज्ञों ने मेरी पूर्ण परीक्षा मनोयोग से की है पर सब ने यही कहा है "तुम्हें कोई रोग नहीं है। तुम बीमार नहीं हो। तुम्हें सिर्फ शक है। पुष्टई की दवा (Tonic) खाओ।" तो फिर इसके क्या माने हैं 'मुझे भूख नहीं लगती। खाना अच्छा नहीं लगता, नींद ठीक नहीं आती। काम करने को जी नहीं चाहता। मन उचटा सा रहता है। जरा जरा सी बात पर गुस्सा आता है। बदन टूटता है। दर्द सा रहता है। शरीर भारी सा रहता है।' आदि। यदि यही अवस्था आगे बढ़ती गई तो उसके किसी न किसी अवयव में कोई न कोई खराबी अवश्य हो जायगी। यह अवस्था उस भौतिक रोगावस्था—जब शरीर में रोग के लक्षण प्रकट हो जाते हैं—का पूर्व रूप है। आभास है। फिर यह कहना कहां तक सत्य है कि रोग के वाह्य लक्षण स्थूल शरीर पर प्रकट होने के पहले रोग मनुष्य में आया ही नहीं और वह उसके पहले से ही रोगी नहीं है। क्या यह सम्भव नहीं कि रोगी शैशवावस्था से ही बीमार है अथवा बीमारी पुश्तैनी है। परम्परागत रीति से औषधि व उपचार अथवा नियम की व्यवस्था करने के पहले यह आवश्यक समझा जाता है कि रोग का ठीक ठीक निदान हो जाय या रोग का नामकरण हो। लेकिन बहुत से रोगियों को देखने से पता लगेगा कि तब तक रोग का ठीक ठीक निदान हो ही नहीं सकता जब तक रोग इतना बढ़ न जाय कि उसके लक्षण यान्त्रिक या अन्य बाह्य परीक्षाओं द्वारा स्थूल शरीर पर प्रकट न हो जायँ और रोगी उस अवस्था को न पहुँच जाय जब उसका निरोग होना असम्भव हो जाय। (Subjective symptoms) उन लक्षणों को जिन्हें रोगी स्वयं अनुभव करता है जब तक उनके महत्त्व को गौड़ समझा जायगा जैसा आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में उसका स्थान है तब तक यही क्रम चलता रहेगा। क्योंकि बिना स्थूल कारण के रोग का अस्तित्व ही नहीं समझा जाता।

रोगों के दबाने का फल

आइए अब जरा हम आधुनिक वैज्ञानिक चिकित्सा के ढंग को देखें। मूल कारण को न हटा-कर केवल परिणाम को ही हटाने की चेष्टा की जाती है। इसका नतीजा यह होता है कि शरीर पर प्रकट होने वाले रोग

के लक्षणों को, जो भीतरी विकार को बाहर लाते हैं और इस प्रकार विष को प्राकृतिक ढंग से निकाल बाहर कर देते हैं, दबा दिया जाता है। बजाय इसके कि उस विष को बाहर निकल जाने में सहायता दी जाय उसका निकलना ही रोक दिया जाता है। इस तरह ऊपर से देखने में तो अवश्य ही बाहर आने वाले विकार (रोग के लक्षण) गायब से हो जाते हैं पर भीतर से शरीर जर्जर हो जाता है। अनेक बार तो वे पुनः पुनः निकलने की कोशिश करते हैं और पहले की अपेक्षा ज्यादा ज़ोर के साथ। पर अज्ञानवश मूल कारण को ठीक ठीक न जानने के कारण औषधियों का व्यवहार करा कर उन्हें पुनः पुनः दबाने का प्रयत्न किया जाता है। इस तरह भीतरी विष को जो बाहर आने के लिए बारम्बार प्रयत्न करता है शरीर से बाहर न निकलने देकर भीतर भीतर रोग को इतना प्रबल बना दिया जाता है कि वह रोगी को मृत्यु के पास ला पटकता है। रोगी समझता है कि वह नीरोग हो रहा है उसके रोग के लक्षण गायब हो रहे हैं पर सच तो यह है कि उसके भीतरी कीमती अवयव इतने जर्जर हो जाते हैं कि घुल घुल कर वह मृत्यु के मुख में आ गिरता है। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं कि यह सब जान बूझ कर किया जाता है। वरन् अज्ञानवश, फल को ही कारण मानने व उसे (रोगी को) नाना प्रकार की तीव्र (Crude) औषधियाँ अधिकाधिक मात्रा में केवल परिणाम हटाने के लिए देने तथा बाहर आने वाले विष को भीतर ही ढकेल देने का प्रयत्न करने का सत्फल है! यही भौतिकवाद की माया है और नये नये वैज्ञानिक आविष्कारों तथा सिद्धान्त-हीन चिकित्सा पद्धति के अवलम्बन करने का फल है। प्रमाण के लिए कुछ उदाहरण दे करके इस लेख को हम समाप्त कर देंगे।

कब्ज पर दवा का प्रभाव—
एक उदाहरण

अच्छा पहले कब्जियत को लीजिए। कब्जियत के लिए दस्तावर फंकियाँ या दूसरे जबरदस्ती मेदे को मजबूर करके दस्त लाने वाली औषधियों का (जुलाब) व्यवहार किया जाता है। फल यह होता है कि दवा की (Physiological action) क्रिया से पाखाना तो होता है और थोड़ी देर के लिए मालूम पड़ता है कि पेट साफ हो गया। परन्तु स्वाभाविक तौर पर मल रोज पेट से साफ बाहर नहीं आता। यह देखा गया है कि जुलाब लेने वाले जुलाब के आदी हो जाते हैं। यह भी सदा देखा गया है कि जुलाब से दस्त आने के बाद रोगी प्रायः कमजोर हो जाते हैं और जुलाब की जब प्रतिक्रिया होती है तब रोगी का रोग—कोष्ठबद्धता हद दर्जे की हो जाती है। पहले की अपेक्षा अधिक जोर की कब्जियत होती है। और साथ ही भोजन आदि में जो अप्राकृतिकता बरती जाती है उसे भी दूर नहीं किया जाता है। हम सदा ऐसी चीजें खायँ जो मेदे को खराब करती रहें (समालेदार भोजन आदि) हमारे रहने का ढंग भी अस्वाभाविक हो; हम रात भर जागें सिनेमा व नाटक देखें, दिन में देर तक सोयें, आराम से मोटे मोटे गद्दे पर बैठे रहें, शारीरिक श्रम या व्यायाम आदि न करें, हलवा पूड़ी उड़ाते जायँ तो भला जुलाब हमारा क्या कर सकता है? सदा ही हम पेट के रोग से पीड़ित रहेंगे। इसी प्रकार खुजली आदि को लीजिए। डाक्टर लोग क्या करते हैं। कोई दवा लगाने को दे दी जायगी और उद्भेदों का निकलना रोक दिया जायगा। या जुलाब दे दिया जायगा जिससे शरीर की शक्तियों की सारी ताकत दस्त लाने की तरफ हो जाय और खून में कमजोरी सी हो जाय, तथा उद्भेद कमजोर पड़ जायँ। परन्तु जहाँ जुलाब की क्रिया रुकी कि दाने और जोरों से कमजोर शरीर में निकलेंगे या अगर न निकल सके तो भीतरी अन्य जरूरी व कीमती अंगों में खराबियाँ पैदा कर देंगे। उनके दबने से अक्सर क्षय तक हो जाता है। अँतड़ियाँ कमजोर पड़ जाती हैं और शरीर में शिथिलता आ जाती है। जब भी बाहरी उपचारों द्वारा उद्भेदों का निकलना रोका जायगा यही सब परिणाम होगा जो बराबर वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति करती जा रही है। इस प्रकार गलत ढंग पर दवा

करके असंख्य नर नारियों को सदैव के लिए पीड़ित बना दिया जाता है। चाहिए तो यह था कि उस विष को उद्भेदों द्वारा जोरों के साथ शरीर से बाहर निकल जाने दिया जाय और भोजन आदि सरल कर दिये जायँ, उत्तेजक और दूषित तथा अप्राकृतिक चीजों को खाने से मना कर दिया जाय। इस प्रकार प्राकृतिक ढंग से विष बाहर होने दिया जाय। आतशक (Syphilis) के चिन्ह और उद्भेदों को दबा कर, नाना प्रकार के बाहरी प्रयोगों से उस शरीर के बाहर आकर निकलने वाले विष को रोक कर क्या रोगी को सदा के लिए दुख भोगने को नहीं छोड़ दिया जाता है? सूजाक (प्रमेह) (Sycosis) के रोग में बाहर मवाद से आने वाले प्रमेह-विष को झटपट तीव्र अप्राकृतिक औषधियों द्वारा बन्द करके क्या हम मानव-जाति का उपकार करते हैं? पाठकगण आप इसे समझ लें, यह मामूली चीजें नहीं हैं। यह इतनी भयंकर बात है कि जिसका बयान नहीं किया जा सकता। हम सारी मानव-जाति के रोग-पीड़ित होने के लिए जिम्मेदार, आजकल के आधुनिक वैज्ञानिक चिकित्सा विधान (पद्धति) को ही समझते हैं। एक गलती मनुष्य ने की कि उसने अप्राकृतिक जीवन को अपनाया, वह बुरी भावनाओं का शिकार हुआ। इस तरह रोग का आवाहन उसने किया। और दूसरी सबसे भयंकर गलती यह हुई कि गलत चिकित्सा पद्धति द्वारा रोग को दबा दिया गया तथा स्थाई रूप से मानव-जाति में रोग को जमा दिया गया अब पीढ़ियों से हम सब बेबस हाथ पैर फेंकते जा रहे हैं। लाचारी है। जब तक हम उस विष को ढंग से प्राकृतिक नियमानुकूल निकालने का प्रयत्न नहीं करेंगे तब तक हम इसी तरह और हमारी सन्तानें इसी तरह पीड़ित होती रहेंगी। इस कार्य में सदियाँ लग सकती हैं और लगेंगी, यदि हम अब से भी चेत गये! पागलपन, मृगी, कैंसर, अलब्यूमिन का आना, मधुमेह, यक्ष्मा, दमा, पुरानी सर्दी, भगन्दर, उकवत, गठिया, फोड़ों का निकलना, घावों का पक जाना, यकृत, फेफड़ा, दिल, गुरदे आदि की बीमारियाँ, कण्ठमाला, (गण्डमाला) घेघा, नासूर, चेचक, सूखा आदि अनेकानेक बीमारियाँ आज मानव-जाति में इसीलिये वर्तमान हैं कि रोग का ठीक ठीक उपचार व नियम प्राकृतिक ढंग पर नहीं हो रहा है। गलत तरीकों से रोग दबा दिया जाता है और उपरोक्त तरह तरह की बीमारियों को बुलाया जा रहा है। यह सब लिखने का खास मतलब मेरा यह है कि हम सब को अज्ञानान्धकार से बाहर आना चाहिए। रोग को झटपट दबा देने की कोशिश नहीं करनी चाहिए और प्राकृतिक ढंग से विष को बाहर हो जाने देना चाहिए। प्राकृतिक-जीवन व आहार, विहार आदि का नियम से पालन करना चाहिए तभी मानव-जाति और हमारी आने वाली पीढ़ियाँ सुखी व रोग-विहीन हो सकेंगी।

मनुष्य जाति को रोगों से बचाने के लिए क्या चाहिए?

प्राकृतिक जीवन के सिद्धान्तों का अधिकाधिक प्रचार।

प्राकृतिक-चिकित्सा का व्यावहारिक ज्ञान और उसके अनुसार दैनिक जीवन के आहार-विहार का समुचित सुधार।

प्राकृतिक-चिकित्सकों की संख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि।

जीवन-सखा और ऐसे ही दूसरे और स्वास्थ्य सम्बन्धी पत्रों का नियमित अध्ययन।

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रशनों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और अपने प्रश्न जहाँ तक हो सके संक्षेप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन अवश्य आना चाहिए जो १७० पृष्ठ पर छपा है। महीने की आठ तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का ही उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा।—सं०

प्रश्न—मेरे चार महीने के बच्चे ने अभी अँगूठा चूसना शुरू किया है। मैं उसे केवल अपना ही दूध पिलाती हूँ पर देखती हूँ कि बच्चे को अक्सर कब्ज रहता है। कब्ज दूर करने के लिए मैंने उसे आधी आधी चम्मच कई बार जैतून का तेल भी पिलाया पर कोई लाभ नहीं होता। बच्चे के पाखाने में सफेद फुटके-फुटके रहते हैं, मेरा ख्याल है, ऐसा अन-पच के कारण है। क्या कोई ऐसी विधि है कि बच्चे की अँगूठा चूसने की आदत चली जाय और कब्ज दूर हो जाय?

—चन्द्रप्रभा, बी० ए०, दिल्ली

उत्तर—बच्चा केवल आप ही का दूध पीता है तो बुद्धिमानी का काम यह होगा कि आप अपने भोजन में सुधार के द्वारा बच्चे का कब्ज दूर करें। मैं आपको सलाह दूँगा कि आप अपने भोजन का कार्यक्रम इस प्रकार रखें।

प्रातःकाल—कोई ताजा फल, किशमिश और कच्चा दूध।

दोपहर —कच्ची तरकारियों का थोड़ा सलाद, चोकरदार आटे की रोटी, पकी सब्जी, मक्खन और अन्त में दो-तीन अंजीर।

शाम को —पाव डेढ़ पाव दूध और उसके आध घंटे बाद रोटी सब्जी मक्खन और अन्त में थोड़ी नारियल की गिरी और मुनक्के।

इसके अलावा दिन में तीसरे पहर इच्छा हो तो कोई फल या फल का रस थोड़ी मात्रा में ले सकती हैं। सवेरे उठते ही नीबू निचोड़ा हुआ एक गिलास पानी भी पीयें। यदि चाय पीने की आदत हो तो कृपया उसे छोड़ दें नहीं तो बहुत ही हल्की चाय का इस्तेमाल करें।

ऊपर बताए भोजन से आपको कब्ज नहीं होना चाहिए पर यदि फिर भी रहे तो आप थोड़े से चोकर का इस्तेमाल कभी कभी कीजिए। चोकर लेकर उसे अच्छी तरह पानी से धोकर, सुखा लीजिए। फिर उसे तवे पर हलकी भून कर किसी बोतल में बन्द का रख दीजिए। यह चोकर सवेरे नाश्ते के साथ तोला दो तोला खाई जा सकती है।

बच्चे को दूध पिलाने के बाद प्रतिबार आपको थोड़ा सादा पानी जरूर पीना चाहिए और रात को देर तक जागते रहना भी आप और आपके बच्चे के लिए हानिकारक है।

बच्चे को आधी आधी चम्मच गाजर या किशमिश का रस देना शुरू कीजिए। दो एक मरतबा दिन में उसे शन्तरे का रस मिला थोड़ा पानी भी पिलाइए।

जब बच्चों को बराबर कुछ कष्ट बना रहता है तब इसे भुलाने के लिए वे अँगूठा चूसते हैं। शायद आप उसे अधिक और अधिक बार दूध पिलाती हैं। जब बच्चा सो जाय तो धीरे से बच्चे के मुँह में से अँगूठा निकाल दीजिए। अगर आदत पूरी तरह से न पड़ गई तो बच्चे का कब्ज दूर होने पर उसे अँगूठा चूस कर आराम खोजने की जरूरत न रहेगी।

प्रश्न—मेरी आँखों में हमेशा रोहे निकला करते हैं, जाड़े की ऋतु में उनकी अधिकता होती है। उनपर क्या लगाया जाय कि अच्छे हो जायँ?

—कान्तीलाल, अहमदाबाद

उत्तर—बाहरी उपचार से कोई लाभ न होगा। आप कृपया गत जनवरी के अंक में प्रकाशित 'जीर्ण रोग, उनका कारण और निवारण' लेख पढ़िए और उसीके अनुसार अपना उपचार चलाइए। आशा है आपको जल्द लाभ होगा। आँखों पर कोई औषधि तो लगाइए ही नहीं। उनको सवेरे शाम हलके गरम पानी से धोने के बाद उन पर ठंडे पानी के छिपके मारिए।

प्रश्न—मैंने थोड़े दिनों से जीवन-सखा पढ़ना शुरू किया है। कृपया लिखिए कि मेरे भोजन में कितने प्रोटीन, कितने श्वेतसार और कितनी चिकनाई की जरूरत है? मेरी उम्र साठ वर्ष की है।

—उजागरसिंह, लाहौर

उत्तर—आपके प्रश्न कि आपके लिए कितने श्वेतसार प्रोटीन और स्टार्च की जरूरत है?—का जवाब देना इतना ही कठिन है जितना इस प्रश्न का कि 'मेरी मोटर के लिए कलकत्ते से दिल्ली तक ले जाने में कितना तेल, पेट्रौल और पानी खर्च होगा?' जिस प्रकार इस प्रश्न के उत्तर का जवाब, मोटर की हालत, ताकत, बोझ और चाल पर निर्भर करता है उसी प्रकार आपके प्रश्न का भी जवाब। मैं आपकी सहायता भोजन के वजन के बारे में तो नहीं पर अनुपात के बारे में अवश्य कर सकता हूँ। पैंतीस वर्ष की उम्र के बाद प्रायः बदन का बनना बन्द हो जाता है अतः उसे बहुत थोड़ी प्रोटीन की जरूरत रह जाती है। कुल मिलाकर आपके भोजन में साठ प्रतिशत फल तरकारियाँ होनी चाहिए और चालीस प्रतिशत में श्वेतसार प्रोटीन और चिकनाई।

प्रश्न—करीब साल भर से मेरा बायाँ हाथ कमजोर पड़ गया है अब वह कुछ पतला भी पड़ रहा है। पहले इसी हाथ में ललाई लिए हुए कुछ दाग से पड़े थे पर वे अब काले पड़ रहे हैं। मैंने इन्हें दूर करने के लिए तो इन्जेक्शन भी लिए पर कोई लाभ नहीं होता? आप कृपा कर मुझे कोई रास्ता बताइए जिससे मैं अपना हाथ फिर से पा सकूँ।

—रामदीन, लखनऊ

उत्तर—मुझे दुःख है कि मैं बिना आपका हाथ देखे आपकी सहायता करने में असमर्थ हूँ। आप लखनऊ के किसी भी प्राकृतिक-चिकित्सक से मिलिए वे आपको जरूर लाभ पहुँचा सकेंगे। हिन्दुस्तान के प्राकृतिक-चिकित्सकों के नाम और पते जनवरी महीने के जीवन-सखा में प्रकाशित किए गए हैं।

—वि० दा० मोदी

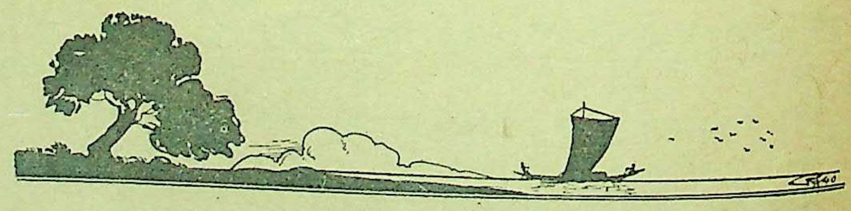

BOOKS ON HEALTH

That will Change the Course of Your Life

NATURE CURE *by* H. LINDLAHR, M.D.

"That a knowledge of the health principles mentioned in this book will materially aid the reader in his sincere efforts in regaining health and prolonging life. This work will be found most instructive, inspiring and full of practical suggestions for the attainment of complete self-development...... They will afford a scientific guide to self-treatment".

Price Rs. 6.

PRACTICAL NATURE CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D.

A book that will guide you to help yourself and others—the result of Dr. Sharma's vast study and profound experience. Nature-cure made really to suit Indian people. A most practical book, which you must possess.

Latest Enlarged Edition **Price Rs. 4.**

DRUGLESS HEALING *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D.

"Will serve not only as an introduction to the study of the philosophy of Nature-cure and its practice, but also as a book of ready reference after one has studied the subject from various sources and point of view."

Price As. 6.

YOUR DIET IN HEALTH AND DISEASE *by* HARRY BENJAMIN.

This "Home Treatment" book is a complete guide to the Dietetic and Physical treatment of Diseases. It contains chapters on Food, its Digestion, Absorption, and assimilation; How the Body works; Our Daily Food; Eating for Health not Disease, the Art of combining Foods; Feeding children; and concludes with a self-treatment Chart for all Common Ailments.

Khaddar Bound. **Pages 199** **Price As. 12.**

THE FASTING CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 3.**

THE NATURE CURE OF EYE DEFECTS *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D. **Price As. 8.**

PRANAYAMA *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 2.**

To be had from:—

HEALTH BOOK DEPOT

87 Himmatganj, ALLAHABAD

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी' ही बचा सकती है

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।

(२) अन्तर्राष्ट्रीय व अन्तर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।

(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है

'कहानी'

सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इण्डियन पी० ई० एन०--'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं... यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिए।

श्री जैनेन्द्र--"...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...।"

श्री सुदर्शन--'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम कीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'--'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब--सब विचार के अंक सर्वाङ्ग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा--'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है--अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्च कोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय--'...कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट--'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की सम्पूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र--'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो ही गई...'

श्री पहाड़ी--'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी-पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेगी।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट

प्रश्नोत्तर-कूपन मार्च, ४१

आपको यह जानना ही चाहिए

कि

नये विचार

नई भावनायें और राष्ट्र निर्माणकारी नई क्रान्ति का सन्देश देने वाले

'जीवन-साहित्य' मासिक पत्रिका

[सम्पादक हरिभाऊ उपाध्याय, वार्षिक मूल्य २), मंडल ग्राहकों से १)]

तथा

सस्ता साहित्य मण्डल का नया प्रकाशन

(१) बापू--ले० घनश्याम दास बिड़ला, १३ सुन्दर चित्रों सहित दाम ।।।), सजिल्द १) और हाथ के कागज पर २) सिर्फ ।

महात्मा गाँधी की छोटी से छोटी और महान् से महान् बातों का नजदीक से बिन्दुस्पर्शी अध्ययन ।

(२) खादी मीमांसा--ले० भालू भाई मेहता, मूल्य १।।)। खादी पर लिखी गई पुस्तकों में से प्रधान पुस्तक ।

(३) बिनोबा और उनके विचार--मूल्य ।।), प्रथम सत्याग्रही आचार्य बिनोबा के जीवनमय विचार ।

(४) समाजवाद पूँजीवाद--मूल्य ।।।), बर्नार्ड शा की Intelligent woman's guide to socialism and capitalism के आधार पर लिखी ।

(५) मेरी मक्ति की कहानी--मूल्य ।।); महात्मा टाल्स्टाय के जीवन संस्करण और उनकी जीवन कहानी ।

(६) लड़खड़ाती दुनिया--ले० पं० जवाहरलाल नेहरू ।

आपके स्थान के खादी भंडारों और प्रधान पुस्तक विक्रेताओं के पास पहुँच चुकी है ।

और

१--युद्ध और अहिंसा--लेखक महात्मा गांधी ।

२--मालवीयजी के साथ ३० दिन--ले० रामनरेश त्रिपाठी ।

ये पुस्तकें और छप रही हैं

यदि आप इन पुस्तकों को अभी न खरीद सके हों तो बिलम्ब से पूर्व ही हमें आर्डर भेजिए । संस्करण की समाप्ति की नौबत आ गई है ।

सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सरकस, नई दिल्ली

शाखायें दिल्ली, लखनऊ और इन्दौर

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है ।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है ।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है ।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना कार्यालय को दे देनी चाहिए ।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए । उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है ।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए । लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं ।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है ।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

दीदी

स्त्रियों और लड़कियों के लिए सुन्दर, सचित्र मासिक पत्रिका । सम्पादक—श्रीनाथसिंह और पाँच प्रमुख महिलाएँ । वार्षिक मूल्य सिर्फ २); नमूना मुफ़्त ।

जो देखता है वही कहता है कि ऐसी पत्रिका की बड़ी जरूरत थी । दिसम्बर, जनवरी के अङ्क समाप्त हो गये । नये ग्राहक फरवरी से बनाये जा रहे हैं ।

पता—**प्रेमलतादेवी संचालिका 'दीदी',**
कटरा, इलाहाबाद

जीवन-मधु

शुद्ध शहद के लिए अधिक परीशान होने की जरूरत नहीं, सीधे हमें लिखिए ।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=)

मैनेजर—**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह,**
८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें खरीदिए

सन् १९३६ (फरवरी, मार्च के अंक नहीं हैं) मूल्य २।।)
सन् १९३७ (जनवरी, मार्च के अंक नहीं हैं) मूल्य २।।)
सन् १९३८ (जनवरी, फरवरी, अप्रैल के अंक नहीं हैं) मूल्य २।।)
सन् १९३९ (जनवरी, फरवरी के अंक नहीं हैं) मूल्य २।।)
सन् १९४० मूल्य ३)

जीवन सखा एक रुपए में

सार्वजनिक पुस्तकालयों को

दिल्ली निवासी श्रीमान् लक्ष्मीनारायणजी गाडोदिया ने हमें डेढ़ सौ रुपया उन सार्वजनिक पुस्तकालयों के सहायतार्थ भेजा है जो जीवन सखा मँगाना चाहते हैं।

आपकी इस सहायता से हमने पचहत्तर पुस्तकालयों को साल भर तक जीवन-सखा एक रुपये में देना निश्चित किया है। इस रियायत से लाभ उठानेवालों को जल्दी करनी चाहिए।

केवल सार्वजनिक पुस्तकालय ही इस सूचना से लाभ उठावें। रियायती चन्दा मनीआर्डर से भेजें। वी० पी० नहीं जायगी।

मैनेजर—जीवन सखा, इलाहाबाद

मनुष्य को देवता बनाने का प्रयत्न!

अखंड ज्योति

यह आपको क्यों पढ़नी चाहिये ? क्योंकि

(१) इसमें मैस्मरेजम, हिप्नोटिज्म, योग की चमत्कारिक क्रियाएँ, तंत्र शास्त्र, मनोविज्ञान आदि गूढ़ विषयों पर वैज्ञानिक चर्चा रहती है। (२) यह सदाचार, धर्मनिष्ठा, भ्रातृभाव और मानवता का प्रचार करती है। (३) इसमें धुरंधर विद्वान और महात्माओं द्वारा ऐसे उपाय बताये जाते हैं, जिनसे आप अपनी मानसिक शक्ति बढ़ा कर सब प्रकार की उन्नति कर सकें। (४) इतनी सुन्दर और सस्ती मासिक पत्रिका ढूँढने पर भी नहीं मिल सकती। वार्षिक मूल्य १।।) नमूना मुफ़्त मँगा लीजिये।

हमारी प्रकाशित कुछ अद्भुत पुस्तकें

(१) **मैं क्या हूँ**—अपनी आत्मा के सच्चे स्वरूप का दर्शन करने के अनुभूत अभ्यास। मूल्य ।=)
(२) **प्राण चिकित्सा विज्ञान**—आध्यात्मिक प्राण शक्ति से समस्त रोगों को दूर करने की शिक्षा। मू० ।=)
(३) **सूर्य चिकित्सा विज्ञान**—सूर्य की प्रचण्ड शक्ति से कठिन बीमारियों के इलाज की विधि। मू० ।=)
(४) **पर काया प्रवेश**—आत्मशक्ति को दूसरों के शरीर में प्रवेश करके उसे अपनी इच्छानुसार चलाने की गुप्त प्रक्रिया। मूल्य ।=)

उपरोक्त सभी पुस्तकें वर्षों के अनुभव से लिखी गई हैं।

मैनेजर—'अखण्ड ज्योति' कार्यालय, मथुरा।

सिरीज़ का प्रकाशन
पहली जनवरी से आरम्भ

हमारी प्रथम योजना १०० पुस्तकें प्रतिवर्ष के हिसाब से ५ वर्ष में ५०० पुस्तकें निकालने की है। ये पुस्तकें सभी मुख्य-मुख्य विषयों पर होंगी और इनसे एक सुन्दर

घरेलू-पुस्तकालय

बन जायगा। प्रत्येक पुस्तक की पृष्ठ-संख्या २००-२५०, गेट-अप सुन्दर और मूल्य आठ आना होगा।

ग्राहक बनने के नियम

प्रत्येक पाठक (क) सिरीज़ की कुल पुस्तकों के लिए, (ख) कुछ विभागों की कुल पुस्तकों के लिए या (ग) चुनी हुई किन्हीं २० पुस्तकों के लिए ग्राहक बन सकता है।

पेशगी चन्दा १) है।

२० पुस्तकें मिल जाने के बाद यह फिर से जमा होगा। पोस्टेज-पैकिंग माफ़ रहेगा। चुनने के लिए पूरी पुस्तकों की सूची फ़ार्म भर कर आने पर भेज दी जायगी।

निम्नलिखित १० पुस्तकें पहली जनवरी को तैयार हो जायँगी।

१ दैनिक जीवन और मनोविज्ञान २ क्रान्तिकारी ३ समरकंद की सुन्दरी ४ चक्रभेद ५ रूसी कहानी-संग्रह ६ सूर-संदर्भ ७ रामकृष्ण चरितामृत ८ आधुनिक जापान ९ पृथ्वी का इतिहास १० मेरा संघर्ष (हिटलर)

सरस्वती-सिरीज़
क्रान्तिकारी
क्रान्तिकारी
२
आठ
आना

दस पुस्तकें
पहली जनवरी को तैयार

५०० पुस्तकें निम्न प्रकार से १० विभागों में निकलेंगी—

विचारधारा	५०	विश्व उपन्यास	५०	आधुनिक उपन्यास और नाटक	५०
कहानी-संग्रह	५०	रहस्य-रोमांच	१००	ऐतिहासिक विचित्र कथा	५०
विज्ञान	३०	जीवनचरित्र	२०	हिन्दी-साहित्य	६०
		धर्मग्रन्थ	४०		

सरस्वती-सिरीज़, इंडियन प्रेस, लि॰ प्रयाग

मेरा नाम पूरी सिरीज़ के / विभाग के / २० पुस्तकों के ग्राहकों में लिख लीजिए।

चन्दा वी॰ पी॰ भेजकर वसूल कर लीजिए। / मनीआर्डर से भेज रहा हूँ।

नाम

पता

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१)	रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	२।।)
(२)	सरल शरीर विज्ञान ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	१।)
(३)	प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदारनाथ गुप्त०, एम० ए०	२)
(४)	मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले० श्रीयुत महेन्द्रनाथ पाण्डेय	।)
(५)	दूध ही अमृत है : ले० हनुमान प्रसाद गोयल	१।।)
(६)	स्वास्थ्य के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय	=)।।
(७)	शक्तिदर्शन : ले० शंकरलाल तिवारी	।।)
(८)	आनन्दमय जीवन का ह्रास और उसके कारण	।=)
(९)	क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।)
(१०)	ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द	।।।)
(११)	आदर्श-भोजन : ले० एल० एन० चौधरी	।।।)
(१२)	स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर सुकुल	१)
(१३)	कब्ज या कोष्ठबद्धता : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।-)
(१४)	हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	१)
(१५)	फलाहार फल-चिकित्सा : ले० नारायणप्रसाद अरोड़ा	१।।)
(१६)	आरोग्य साधन : ले० गांधीजी	।=)
(१७)	स्वास्थ्य-साधन : ले० स्व० रामदास गौड़	३)
(१८)	आकृति-निदान : ले० लूईकूने	१।।।)
(१९)	बच्चों की रक्षा : ले० लूईकूने	।-)
(२०)	मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लुईकूने	।)
(२१)	जल-चिकित्सा (तीन भाग) : ले० राखालदास	३।।।)

		Rs.	as.
(२२)	**Nature Cure** by H. Lindlahar, M.D.	6	0
(२३)	**Practical Nature Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	4	0
(२४)	**Fasting Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	3
(२५)	**Pranayama** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	2
(२६)	**The Nature Cure of Eye defects** by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D.	0	8
(२७)	**Your Diet in Health and Disease** by Harry Benjamin	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

Reg. No. A-172

जीवन सखा का जनवरी, ४१ में प्रकाशित विशेषांक

पत्र-पत्रिकाओं की दृष्टि में

आज, काशी—"शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य के जबरदस्त हामी और प्राकृतिक चिकित्सा के सचित्र मासिक-पत्र 'जीवन-सखा' ने पांच वर्ष के भीतर अपना एक विशेष स्थान बना लिया है। वह जिस उद्देश्य को लेकर कार्यक्षेत्र में अवतरित हुआ है उसे अनेक अंशों में पूरा कर रहा है। इस विशेषांक में . . कही गई बातों के अनुसार जीवन व्यतीत करने से हम अपार लाभ उठा सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को प्रस्तुत विशेषांक से लाभ उठाना चाहिए।"

सरस्वती, प्रयाग—"प्रत्येक साध्य तथा असाध्य मर्ज का निवारण प्रकृति द्वारा हो सकता है यही इस पत्र का सन्देश है।"

जीवन-साहित्य, नई दिल्ली—"जीवन-सखा के अंकों और इस विशेषांक को देखकर यह कहना होगा कि इसका नाम बिल्कुल सार्थक है। आरोग्यशास्त्र का सुन्दर मासिक होने से यह वास्तव में 'जीवन-सखा' ही है। विशेषांक में **प्राकृतिक चिकित्सा, इन्द्रिय निग्रह की समस्या, प्रकृति बनाम दवा, आधार निदान, भाजी और फल, भोजन और धूप, योग और स्वास्थ्य, विटामिन की कहानी, विद्युत-चिकित्सा** आदि लेखों से पता चलता है कि सम्पादक स्वास्थ्य के विषय में सब विचार-धाराओं के लेख जुटाने में कितने सतर्क हैं। कहना नहीं होगा कि एक-एक लेख इसके पठनीय और आचरणीय हैं।"

हिन्दुस्तान, दिल्ली—"जीवन-सखा . . . के विशेषांक में स्वास्थ्य सम्बन्धी पारायण करने योग्य भरपूर सामग्री दी गई है।"

विशाल भारत, कलकत्ता—"जीवन सखा का विशेषांक सब तरह से उपयोगी है।"

हंस, बनारस—". . . हिन्दी में जीवन-सखा अपने ढंग का विशेष पत्र है। विशेषांक . . में स्वास्थ्य व्यायाम चिकित्सा आदि के सम्बन्ध में प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञों . . के पठनीय लेख हैं। हिन्दुस्तान के प्राकृतिक चिकित्सकों के पते देकर एक उपयोगी कार्य किया गया है।"

नवशक्ति, पटना—"यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं में जीवन-सखा का सर्वोच्च स्थान है। छपाई सफाई तो आदर्श है।"

हल, प्रयाग—". . . अंक सुपाठ्य और संग्रहणीय है प्राकृतिक-चिकित्सा के छोटे कोष का काम करता है।"

"The Leader"—Allahabad

"The special January number is sumptuously got-up and contains a number of useful, informative, suggestive and thought-provoking articles . . . well written which require a careful perusal. Needless to say, the highly educative value of the monthly is obvious and commendable and we have no doubt about its success in the world of Journalism".

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY SYT. BALESHWAR PRASAD SINHA, 87 HIMMATGANJ, ALLAHABAD

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

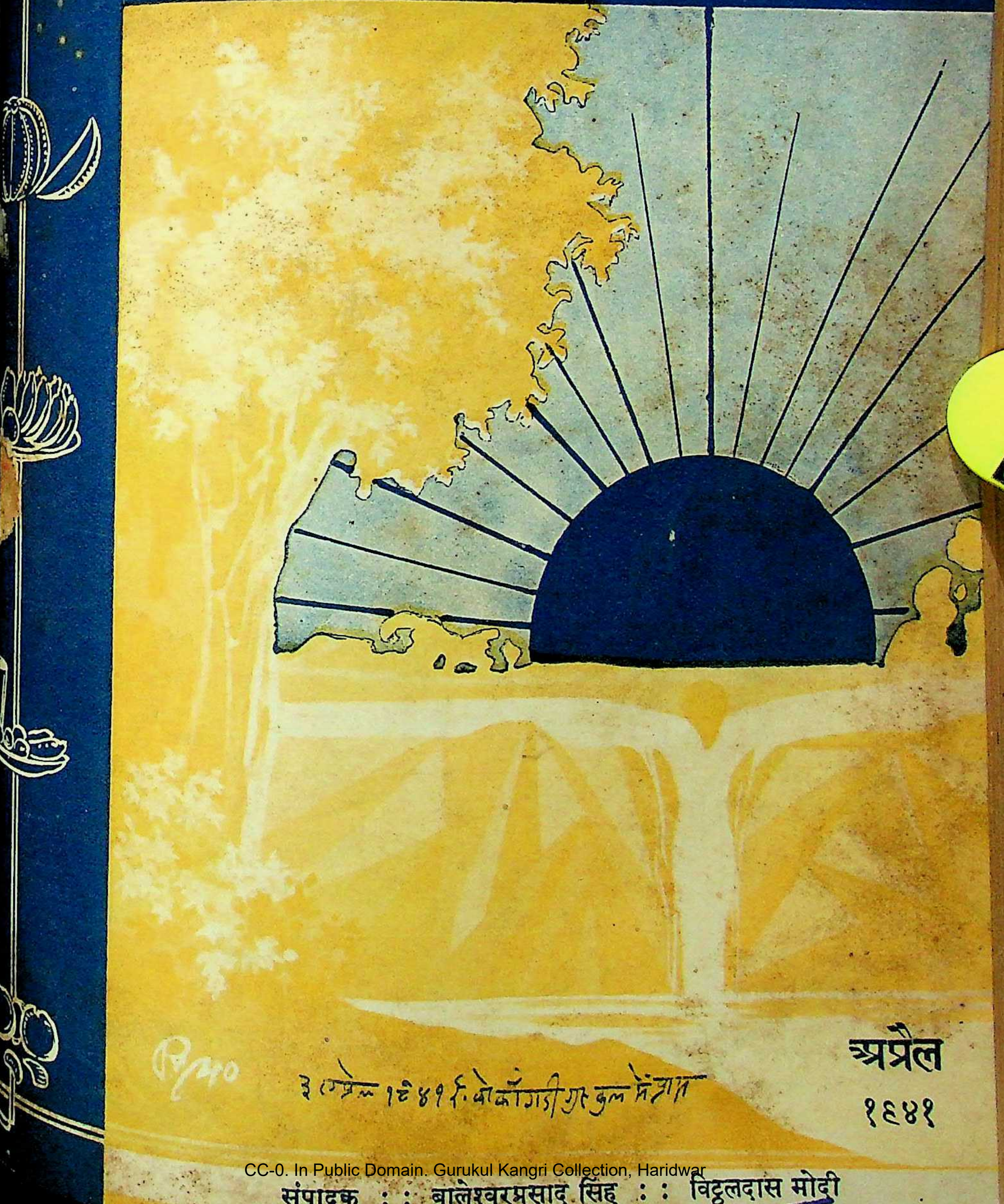

अप्रैल
१९४१

३ अप्रैल १९४१ ई. को काँगड़ी गुरुकुल में आया

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह : : विट्ठलदास मोदी

जीवन सखा का जनवरी '४१ में प्रकाशित विशेषांक

पत्र-पत्रिकाओं की दृष्टि में

'आज', काशी––"शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य के जबरदस्त हामी और प्राकृतिक-चिकित्सा के सचित्र मासिक-पत्र 'जीवन-सखा' ने पाँच वर्ष के भीतर अपना एक विशेष स्थान बना लिया है। वह जिस उद्देश्य को लेकर कार्यक्षेत्र में अवतरित हुआ है उसे अनेक अंशों में पूरा कर रहा है। इस विशेषांक में. . .कही गई बातों के अनुसार जीवन व्यतीत करने से हम अपार लाभ उठा सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को प्रस्तुत विशेषांक से लाभ उठाना चाहिए।"

'सरस्वती', प्रयाग––"प्रत्येक साध्य तथा असाध्य मर्ज का निवारण प्रकृति द्वारा हो सकता है यही इस पत्र का सन्देश है।"

'जीवन-साहित्य', नई दिल्ली––"जीवन-सखा के अंकों और इस विशेषांक को देखकर यह कहना होगा कि इसका नाम बिल्कुल सार्थक है। आरोग्यशास्त्र का सुन्दर मासिक होने से यह वास्तव में 'जीवन-सखा' ही है। विशेषांक में **प्राकृतिक चिकित्सा, इन्द्रिय निग्रह की समस्या, प्रकृति बनाम दवा, आधार निदान, भाजी और फल, भोजन और धूप, योग और स्वास्थ्य, विटामिन की कहानी, विद्युत-चिकित्सा** आदि लेखों से पता चलता है कि सम्पादक स्वास्थ्य के विषय में सब विचार-धाराओं के लेख जुटाने में कितने सतर्क हैं। कहना नहीं होगा कि एक एक लेख इसके पठनीय और आचरणीय हैं।"

'हिन्दुस्तान', दिल्ली––"जीवन-सखा. . .के विशेषांक में स्वास्थ्य सम्बन्धी पारायण करने योग्य भरपूर सामग्री दी गई है।"

विशाल भारत, कलकत्ता––"जीवन-सखा का विशेषांक सब तरह से उपयोगी है।"

'हंस', बनारस––". . .हिन्दी में जीवन-सखा अपने ढंग का विशेष पत्र है। विशेषांक. . .में स्वास्थ्य व्यायाम चिकित्सा आदि के सम्बन्ध में प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञों. . .के पठनीय लेख हैं। हिन्दुस्तान के प्राकृतिक चिकित्सकों के पते देकर एक उपयोगी कार्य किया गया है।"

'नवशक्ति', पटना––"यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं में जीवन-सखा का सर्वोच्च स्थान है। छपाई सफाई तो आदर्श है।"

'हल', प्रयाग––". . .अंक सुपाठ्य और संग्रहणीय है प्राकृतिक चिकित्सा के छोटे कोष का काम करता है।"

'The Leader'—Allahabad

"The special January number is sumptuously got-up and contains a number of useful, informative, suggestive and thought-provoking articles . . . well written which require a careful perusal. Needless to say, the highly educative value of the monthly is obvious and commendable and we have no doubt about its success in the world of Journalism".

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

अप्रैल
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क ४

इस अङ्क में

विषय लेखक पेज

१. सम्पादकीय—टहलिए १७६

२. यूरोप के प्राकृतिक चिकित्सा-गृह—श्रीयुत ए० विजय घोष १७७

३. चिकित्सक से—श्रीयुत वियोगी हरि .. १८०

४. बापू और मिट्टी—श्रीयुत प्रभुदयाल विद्यार्थी १८३

५. फोड़ा—डाक्टर पी० वेंकट रमैया एन० डी०, डी० एम० .. .. .. १८६

६. शीर्षासन—डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह .. १८८

७. मलेरिया बुखार, आठ वर्ष बाद लौटा!—श्रीयुत भोलासिंह १९३

८. मिठाई और स्वास्थ्य—प्रो० भवानीप्रसाद १९५

९. हमारी नजरों में १९७

१०. प्रश्नोत्तर १९९

अगले अंक में क्या रहेगा ?

१ शिथिली करण (Relaxation)
स्वामी कुवलयानन्द

२ तैराकी और स्वास्थ्य
रोबिन चैटरजी

३ कुष्ठ रोग कैसे गया ?
प्रो० भवानीप्रसाद

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

अपने विचार

टहलिए

आज अनगिनत व्यायाम पद्धतियाँ निकल आई हैं। कोई केवल मांसपेशियों को सशक्त करने वाली अँगरेजी कसरतों पर ही जोर देता है तो कोई दण्ड-बैठक के पीछे पागल है। पर जितनी सरल एवं अंग प्रत्यंग को स्वाभाविक रूप में सशक्त रखनेवाली कसरत टहलना है दूसरी नहीं। बहुत से ऐसे आदमी मिलेंगे जिन्हें यदि केवल एक ही कसरत हमेशा करते रहने को बाध्य किया जाय तो वे टहलने को ही चुनेंगे। टहलना ही वह कसरत है जिससे कभी जी नहीं ऊबता क्योंकि टहले जाने के रास्ते बदल बदल कर इसकी नूतनता भी हमेशा कायम रखी जा सकती है।

टहलने से हमारे शरीर की सारी कार्यप्रणाली की सजीवता बनी रहती है; एवं फेफड़े और हृदय की शक्ति बढ़ती है। भोजन अच्छी तरह पचता है और शरीर की सफाई में लगे अवयव अपना काम तेजी से करते हैं।

टहलना हमारे जीवन के साथ लगा हुआ है। जब से बच्चा चलना सीखता है और बुढ़ापे तक टहलता ही है पर आजकल शहरों में जब मोटर-ताँगों का जोर बढ़ गया है, पैदल चलना हेय दृष्टि से देखा जाता है और कोई कोई तो इसे फैशन के खिलाफ भी समझते हैं। पर यदि सच पूछा जाय तो गद्दे तकिये पर बैठे रहने वालों के लिए तो टहलने से बढ़कर दूसरी कसरत है ही नहीं। टहलने से उनका स्वास्थ्य तो ठीक रहेगा ही, उम्र बढ़ जायगी और जीवन में वे अधिकाधिक सजीवता का अनुभव करेंगे।

टहलना जवानी को कायम रखता है, कमजोर अणु इन्द्रियों को हमारे शरीर से बाहर कर उनके स्थान में दूसरी नई जानदार बिठाता है। यह बुढ़ापे को आपकी हड्डियों एवं मांसपेशियों से निकाल बाहर करता है। आँखों में चमक आ जाती है और त्वचा पर आभा झलकने लगती है।

आज हमारे यहाँ की पढ़ी लिखी नवयुवतियाँ बनाव शृंगार में घंटों लगाती हैं और लिपस्टिक, पाउडर का जो खर्च पड़ता है वह अलग। यदि ये युवतियाँ यही समय टहलने में लगावें तो उन्हें सौन्दर्य सम्वर्धन के लिए अपने शरीर और मुँह को रंगने की जरूरत जाती रहेगी। सौन्दर्य साज-सामान में नहीं है न वह ऊपर से मढ़ने की चीज है। सौन्दर्य तो हमारे शारीरिक स्वास्थ्य का परिचायक है जो बरबस अपनी शुभ छाया हमारे मुख पर डालता है।

लोग स्वास्थ्य-सुधार के लिए यात्रा करते हैं। पैदल नहीं रेल और मोटर में सवार होकर और हजारों रुपए खर्च करते हैं पर पल्ले स्वास्थ्य नहीं, खर्च का अफसोस पड़ता है। यदि वे टहलना शुरू करें और टहलने की दूरी क्रमशः बढ़ाकर पाँच-सात मील टहलना नित्य जारी रखें तो साल छ महीने के अन्दर ही वे अपने को कुछ दूसरा ही पावेंगे। उनकी सुस्ती ताजगी में बदल जायगी, चेहरे के पीलेपन का स्थान ललाई ले लेगी और बूढ़े एवं अधेड़ अपने यौवन को लौटता हुआ देखेंगे।

हमारे देश में नई दिशा में कदम बढ़ाने की हिम्मत की बहुत कमी है, पर अब कुछ लोग कई नए नए स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रयोग करने लगे हैं। कइयों ने कई दिन चलकर रिकार्ड स्थापित किए हैं। पर होना यह चाहिए कि व्यायाम-विशेषज्ञ टहलने वालों की टोली बनाएँ स्वास्थ्यप्रद स्थानों में महीनों की यात्रा हो और इस यात्रा का उपयोग इस चतुराई एवं सावधानी से किया जाय कि टोली के सदस्यों का स्वास्थ्य उन्नत हो। इस प्रकार प्राप्त सुन्दर फल की ओर राष्ट्र का ध्यान आकर्षित किया जाय और बच्चे, बूढ़े, जवान, रोगी, स्वस्थ सब के लिए समान उपयोगी इस सस्ती कसरत का अधिकाधिक प्रचार किया जाय।

* * *

यूरोप के प्राकृतिक चिकित्सा-गृह

श्रीयुत ए० विजय घोष

"रुपया कमाने पर हम लोग मन्दिर और मसजिद बनाते हैं। यूरोपियन लोग रुपया कमाने पर सुन्दर स्वास्थ्य-मन्दिर बनाते हैं। हमारे मन्दिर और मसजिद हिन्दू-मुसलिम प्रश्न खड़ा करते हैं, प्रायः धार्मिक दंगे कराते हैं; किन्तु यूरोपियनों के स्वास्थ्य-मन्दिर उन्हें स्वस्थ स्फूर्ति शाली बनाते हैं।"

जीवन-सखा के बड़े ही निर्भीक तथा अपनी बात पर अड़े रहनेवाले सम्पादक महोदय ने मुझे आदेश किया है कि मैं यूरोप के प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों के सम्बन्ध में एक लेख लिखूँ। मैंने उन्हें यह कहकर टाल देना चाहा कि मैं आजकल बहुत व्यस्त हूँ और मुझे इस तरह का लेख लिखने की फुर्सत नहीं है। लेकिन वह अपनी जिद पर अड़े रहे। मुश्किल तो यह है कि वह मुझसे 'नहीं' सुनना ही नहीं चाहते। अतः मैं जीवन-सखा के पाठकों के सामने फिर कुछ कहने जा रहा हूँ।

इस लेख में मैं मोटे तौर से यह बताने की कोशिश करूँगा कि प्राकृतिक चिकित्सा-गृह किस तरह का होता है। मैं यहाँ पर जो रूप-रेखा दूँगा उसके द्वारा यूरोप के सभी तो नहीं किन्तु अधिकांश प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों के बारे में मेरा मतलब स्पष्ट हो जायगा।

पहली बात तो यह है कि ये प्राकृतिक चिकित्सा-गृह नयनाभिराम प्राकृतिक दृश्यावलियों के बीच में स्थित हैं। ऐसा जान पड़ता है कि प्राकृतिक चिकित्सा-गृह बनाए जाने में प्राकृतिक दृश्यों को विशेष महत्त्व दिया जाता है। यूरोप में मैंने जिन जिन स्वास्थ्य-गृहों को देखा वे सभी बड़े रमणीक स्थान पर बनाए गए थे। एक अजीब बात तो यह है कि मैं इंगलैंड अथवा स्काटलैंड के किसी भी स्वास्थ्य-गृह का निरीक्षण करने नहीं गया। कारण यह कि ग्रेट ब्रिटेन और स्काटलैण्ड के सबसे प्रसिद्ध स्वास्थ्य-गृहों के संचालक ऐसे व्यक्ति हैं जो डाक्टर नहीं हैं। दूसरी ओर यूरोप में यदि सभी नहीं तो उनमें से अधिकांश स्वास्थ्य-गृहों के संचालक डाक्टर लोग हैं।

यह भेद क्यों? हम डाक्टर लोग थोड़े-बहुत अंशों में प्राचीन पंथी हैं। हम उन नई विचार-धाराओं को जो हमारी शिक्षा के विपरीत जाती हैं आसानी के साथ ग्रहण नहीं कर सकते। प्राकृतिक चिकित्सा, इंगलैण्ड में प्रचारित होने से बहुत समय पहले इसके मूल भावना की उत्पत्ति यूरोप में हुई। आप देखेंगे कि यूरोप में प्राकृतिक चिकित्सा आन्दोलन के आरम्भिक प्रवर्तकों में से यदि सभी नहीं तो अधिकांशतः ऐसे लोग थे जो डाक्टर नहीं थे। उस समय के डाक्टरों द्वारा बुरी तरह से परेशान किये जाने के बावजूद भी जब प्राकृतिक चिकित्सा के प्रारम्भिक आचार्यों ने प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों को दृढ़ता के साथ स्थापित कर दिया तो उसके उपरान्त डाक्टरी चिकित्सा करने वालों में से साहसी लोगों ने पहले तो सावधानी के साथ और कुछ डरते डरते और फिर बाद में साहसपूर्वक और खुले तौर से प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली को अपना लिया। यही बात इंगलैण्ड में भी हुई और आज हम अपने देश में इसी तरह की बात होने के लक्षण देख रहे हैं।

ऐसा क्यों है? बात यह है कि जब आप अपने जीवन की साधारण अवस्था में कई वर्षों तक निर्दिष्ट सिद्धान्तों का अध्ययन करते हैं तो आप उन्हें बिना किसी प्रकार का सवाल जवाब किये सन्देह रहित

होकर स्वीकार कर लेते हैं। आगे चलकर वे सिद्धान्त आपके मानसिक जीवन के एक अंग प्रतीत होने लगते हैं। आप उन सिद्धान्तों के सम्बन्ध में तर्क नहीं करते, और आप ऐसा कर भी नहीं सकते। मेडिकल कालेजों में प्राप्त शिक्षा के मानसिक बन्धनों को तोड़ने के लिए मुझे आरम्भ में जिस संघर्ष का सामना करना पड़ा था वह मुझे भूला नहीं है। मेडिकल कालेजों में जिन डाक्टरी सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाती है उनके विरुद्ध तर्क या सवाल करना भद्दा मालूम होता। ऐसा करना बहुत कुछ अंशों में 'भारी विश्वासघात' के समान था। फिर भी मैंने उन बन्धनों को तोड़ ही डाला। लेकिन इसके लिए मुझे वर्षों तक कष्ट सहन तथा लड़ते रहना पड़ा था। इस तरह की मानसिक स्थिति के साथ ही ऊपर से जब मेरे सहपाठी, इष्ट-मित्र और सगे सम्बन्धी लोग मुझे झक्की कहकर पुकारने तथा गलतफहमी पैदा करने लगे तो मुझे ऐसा जान पड़ा कि अब मेरा साहस छूटने ही वाला है। अतः परम्परागत धारणाओं के बन्धन को,—खास करके प्राकृतिक चिकित्सा आन्दोलन की आरम्भिक स्थितियों में—जो कुछ ही डाक्टर तोड़ सकने में समर्थ हो पाते हैं उसका एक कारण यही है। बाद में जब अनाड़ी कहे जाने वाले साहसी तथा क्रियाशील व्यक्तियों के अनवरत तथा त्यागपूर्ण प्रयत्न के फलस्वरूप प्राकृतिक चिकित्सा का सिद्धान्त दृढ़ता के साथ प्रतिपादित हो जाता है तो पहले की अपेक्षा अधिक संख्या में डाक्टर लोग भी इसमें शामिल होने लग जाते हैं। हम अपने देश में अभी उस स्थिति में नहीं पहुँचे हैं, हालाँकि इंगलैण्ड में, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, बात ही भिन्न प्रकार की है। मैं उन आदर्शों और सच्चे अनाड़ी व्यक्तियों को, जिन्हें सत्कार्य के लिए लड़ना पड़ा है, प्रणाम करता हूँ।

यूरोप के प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों के सम्बन्ध में दूसरी बात यह देखने को मिलती है कि अब उनमें से अधिकांश ८ बीघे से लेकर २० बीघे जमीन में बनाए जाते हैं। इमारत के अलावा उनमें टहलने, दौड़ने तथा वैडमिंटन, टेनिस, वालीवाल आदि खेल के लिए काफी जगह अनिवार्य रूप से होनी चाहिए। इनके अतिरिक्त वहाँ के स्वास्थ्य-गृहों में आपको तैरने के लिए झरने, खुली वायु में जिमनेज़ियम, चीरने के लिए लकड़ी के बल्ले भी आपको देखने को मिल सकते हैं। कुछ स्वास्थ्य-गृहों में तो घोड़े की सवारी का भी अभ्यास करने की जगह होती है। स्वास्थ्य-गृहों का कुछ हिस्सा छोटे जंगल से भी ढँका पाया जा सकता है। आजकल यूरोप के सभी प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों में सूर्य-रश्मि चिकित्सा के लिए स्थान बनाया गया है। वहाँ पर लोग सूर्य की रोशनी में जमीन पर लेट जाते हैं और तब तक लेटे रहते हैं जब तक कि उतना शरीर पूरी तौर से सेंक नहीं उठता। उसके बाद वे अपनी शारीरिक शक्ति के अनुसार कुछ सेकेण्ड या कुछ मिनट तक पानी की शीतल फुहार के नीचे खड़े हो जाते हैं। शरीर अच्छी तरह से शीतल हो जाने के बाद वे फिर धूप में आकर लेट रहते हैं या खेलने लगते हैं। यह क्रिया रोगी की शारीरिक अवस्था को ध्यान में रखते हुए कई बार उससे कराई जाती है।

स्वास्थ्य-गृहों में दो तरह के कमरे हैं—एक तो रोगियों के केवल उपचार के लिए और दूसरे रोगियों के रहने के लिए। चिकित्सा के लिए बनाए गए कुछ कमरों को मैंने देखा। वे स्वप्न के समान सुन्दर थे। रुपया कमाने पर हम लोग मन्दिर और मसजिद बनाते हैं। यूरोपियन लोग रुपया कमाने पर रमणीक स्वास्थ्य-मन्दिर बनाते हैं। हमारे मन्दिर और मसजिद हिन्दू-मुसलिम प्रश्न खड़ा करते हैं, प्रायः धार्मिक दंगे कराते हैं, किन्तु यूरोपियनों के स्वास्थ्य-मन्दिर उन्हें स्वस्थ और स्फूर्तिशाली बनाते हैं।

ये स्वास्थ्य-मन्दिर हाइड्रो-इलेक्ट्रिकल औजारों, जिनमें एक्स-रे भी शामिल है, से सुसज्जित रहते हैं। उनमें पेशाब, रक्त, कफ और पाखाने की जाँच करने के लिए आधुनिक ढंग की प्रयोगशाला (Laboratory) भी रहती है। कुछ स्वास्थ्य-गृहों में पाचन-क्रिया सम्बन्धी मौलिक अनुसन्धान कार्य करने का भी प्रबन्ध किया गया है।

इनमें से अधिकांश स्वास्थ्य-गृहों में पेट की पूरी तौर से सफाई करने के लिए यन्त्र रहता है। सबसे अधिक प्रचलित दो यंत्र 'गानो कोलन' और 'स्टूडा चेयर' हैं। कुछ रोगों में तो ये आश्चर्यजनक लाभ दिखाते हैं। मुझे यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इन यन्त्रों का परिणाम केवल अस्थायी होता है। और इनके प्रयोग से रोग जड़ से आराम न होकर केवल कम हो जाता है।

मैं आपको यह भी बता देना चाहता हूँ कि उन स्वास्थ्य-गृहों में जिनमें अपेक्षाकृत अधिक और आधुनिक यंत्र हैं न केवल आधुनिकतम जिमनेज़ियम के यंत्र बल्कि विभिन्न प्रकार के ऐसे यंत्र हैं जिनके द्वारा बिना किसी शारीरिक श्रम के आपके समूचे शरीर का व्यायाम हो सकता है। वहाँ पर कई किस्म की रोलर मशीनें हैं जिनके बारे में यह समझा जाता है कि वे आपके शरीर की चरबी, जिससे बदन में मोटापन आ जाता है, को दूर कर सकती हैं और तारीफ तो यह कि इसके लिए आपको स्वयं कोई भी शारीरिक श्रम न उठाना पड़ेगा। मैं इस तरह के स्वास्थ्य प्राप्त करने के साधनों में विश्वास नहीं करता।

इनमें से अधिकांश संस्थाओं में उन मरीजों के रहने का प्रबन्ध है जो यह चाहते हैं कि वे डाक्टर की व्यक्तिगत और प्रत्यक्ष निगरानी में रहकर इलाज करावें। मेज-कुर्सी आदि की तादाद और कमरे की लम्बाई चौड़ाई इस बात पर निर्भर करती है कि रोगी कितना खर्च कर सकता है। साधारण कमरों के साथ रोगी को बिछौना, मेज, कुर्सी, आलमारी, कपड़े रखने के लिए रैक, और आइना मिलते हैं। आवश्यकता के अनुसार आपको स्वास्थ्य-गृह से मलमल, तौलिया, साबुन, बिछौना और मसहरी भी मिल सकते हैं।

अधिकांश प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों में एक बड़ा सा 'हाल' होता है जहाँ पर सप्ताह में एक या दो बार मैजिक लैनटर्न अथवा सिनेमा की सहायता से स्वास्थ्य-विषयक भाषण हुआ करते हैं। इन लेक्चरों को साधारणतः उन संस्थाओं में इलाज कराने वाले लोग मुफ्त सुन सकते हैं लेकिन बाहरी लोगों को प्रति बार ५ रु० से लेकर १० रु० तक शुल्क देना पड़ता है। प्राकृतिक चिकित्सा विषयक भाषण के लिए प्रायः किसी बाहरी प्रामाणिक व्यक्ति को बुलाया जाता है। इस प्रकार इन भाषणों से अच्छी रकम भी मिलती है। मैं वहाँ के उन सुप्रसिद्ध भाषण-दाताओं को जानता हूँ जो इसके द्वारा एक हजार से लेकर चार हजार रुपए प्रति मास कमा लेते हैं।

लेकिन इसके विपरीत अगर हम अपने देश में इस तरह के व्याख्यानों का आयोजन करें तो उनमें बहुत कम लोग उपस्थित होंगे। अगर आप इन भाषणों के लिए कुछ प्रवेश-शुल्क या फीस लगा दें तो सम्भवतः वहाँ पर एक भी आदमी न उपस्थित होगा। यही कारण है कि हम इतने शक्तिहीन और अस्वस्थ हैं।

उन प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों में प्रायः रोगियों को पास पड़ोस के रमणीक अथवा ऐतिहासिक स्थलों का भ्रमण कराने का आयोजन किया जाता है, जिसमें काफी संख्या में लोग भाग भी लेते हैं। रोगियों के लाभ के लिए विभिन्न प्रकार के खेल-कूद का प्रबन्ध रहता है। उन संस्थाओं के संचालकों का यह विचार है कि वहाँ पर जब तक रोगी रहे उसे यथा सम्भव हर तरह से प्रसन्न चित्त रक्खा जाय और वह वहाँ के जीवन में विविधता का अनुभव करे जिससे उसमें उचाट न पैदा हो।

आप यह जानकर आश्चर्य प्रकट करेंगे कि उन संस्थाओं में बहुत से लोग केवल यह सीखने के लिए १ से लेकर ४ सप्ताह तक ठहरते हैं कि हमें क्या खाना और किस तरह रहना चाहिए। रोग हो जाने पर इलाज करने के बजाय रोग होने ही न देने के लिए सावधान रहना कहीं अच्छा है। यूरोपियनों ने स्वास्थ्य की कद्र करना सीख लिया है और इसलिए वे स्वास्थ्य को कायम रखने के लिए काफी अधिक धन और शक्ति लगाते हैं। वह दिन आयेगा जब हम लोग भी इसे सीख लेंगे। हम लोग धीरे-धीरे और कष्ट के साथ इसे सीख भी रहे हैं। इस सम्बन्ध में हम लोग जो सक्रिय और व्यावहारिक

(शेष पृष्ठ १८५ पर)

चिकित्सक से

श्रीयुत वियोगी हरि

वियोगी हरि जी हिन्दी के उन इने गिने लेखकों में से हैं जो केवल लिखने के लिए ही नहीं लिखते वरन् कुछ ऐसे ही विचार देने के लिए लिखते हैं जो सर्वथा मौलिक होते हैं। अभी आपने कवि से, पत्रकार से, नेता से, वैज्ञानिक से, आदि लेख लिखकर इन लोगों को कुछ सोचने पर विवश कर दिया है। आपका लेख 'चिकित्सक से' हम यहाँ पाठकों के विचारार्थ 'सर्वोदय' से दे रहे हैं।—सं०

चिकित्सक, तुम्हें तो सारा जगत् रुग्ण या अस्वस्थ ही नजर आता होगा? मनुष्य-शरीर का पुर्जा-पुर्जा तुम्हें ढीला-ढाला और अस्तव्यस्त ही दिखाई देता होगा? और उन्हें कसने की या फिर से अपनी अपनी जगह पर बिठाने की तुम्हें रात दिन चिन्ता रहती है। पर यह गनीमत है कि इस चिन्ता में तुम्हें सच्चा आनन्द आता है।

हमेशा रोगों के ही सम्पर्क में रहते-रहते तुम्हें आरोग्य का कभी अनुभव भी नहीं होता होगा? स्वस्थ आदमी इसीलिए तुम्हें अजनबी-सा लगता है।

मनुष्य प्रकृति के संसर्ग में रहे, यह तुम्हें बिलकुल पसन्द नहीं। तुम नहीं चाहते कि श्रेष्ठ मानव-प्राणी वन्य पशुओं का अनुकरण करे। तुम्हारी मान्यता है कि प्रकृति के सहारे स्वस्थ बने रहने में कोई तारीफ नहीं, कोई पुरुषार्थ नहीं। पुरुषार्थ तो इसमें है कि प्रकृति के नियमों की अवज्ञा करके रोगों को बुलाया जाए और फिर चिकित्सा के शस्त्रों द्वारा उनका अच्छी तरह मुकाबिला किया जाए।

और प्रकृति की अवहेलना करने में तुम उसे खास कर शहरों में पूरा उत्तेजन देते हो। तुम्हारे बल पर वह प्रकृति के कानून को कुछ भी नहीं समझता।

पशुओं में इतना साहस कहाँ कि वे प्रकृति के विरुद्ध जा सकें? उन अपूर्ण प्राणियों में अभी इतना बौद्धिक विकास नहीं हो सका कि स्वास्थ्यरक्षक नियमों की अवहेलना करें। दुर्भाग्य से उन्हें निर्भय बनाने वाला कोई वैद्य-डाक्टर नहीं मिला।

और मनुष्य कैसे निर्भय बन गया? क्योंकि पहले तुमने कदम कदम पर उसके अन्दर भय का संचार किया—जैसे, धूप और सर्दी में खुले बदन घूमना खतरे से खाली नहीं; ओस में सिर खोल कर सोना हानिकारक है; पानी, हवा और मिट्टी का अधिक संसर्ग भयावह है।

मनुष्य ने विकास पा कर यह बड़ी बुद्धिमानी का काम किया कि प्रकृति की गोद छोड़ कर तुम्हारी निर्भय शरण में चला आया।

और यही कारण है कि तुम्हारा अस्तित्व आज उसे बड़ा आवश्यक हो गया है, मानव-जीवन के तुम एक अविच्छिन्न अंग बन गए हो। खर्चे का अन्दाज-पत्र बनाते वक्त तुम्हारी भी अमंगल-सूचक मद रखनी पड़ती है।

सद्भाग्य से तुम्हें ऐसे भी कुछ समझदार लोग मिल जाते हैं, जिन्हें किसी-न-किसी दवा का नियमित सेवन करने अथवा साल में एक बार शरीर-यन्त्र की परीक्षा कराने की तुम सलाह देते रहते हो।

परन्तु जो शिक्षित और श्रद्धालु होते हैं, वे खुद ही निश्चित भेंट लेकर तुम्हारे दरवाजे पर सलाह लेने पहुँच जाते हैं।

तुम भेंट अर्थात् फीस लेते समय कभी संकोच या मुरौवत करने की कमजोरी नहीं दिखाते। अमीर-गरीब सुखी-दुखी, सब का रुपया तुम्हारे उदर में समभाव से स्थान पाता है।

नाई, बढ़ई या लुहार वैसी मूर्खता कर सकता है, पर तुम नहीं। कारण कि अपने असीम बुद्धिबल से तुमने यह सिद्ध कर दिया है कि तुम्हारा पेशा उनके पेशों से बहुत ऊँचा और पवित्र है।

तुम जो कुछ करते हो, प्रयोग की शुद्ध दृष्टि से, अनासक्ति की उच्च भावना से, ही करते हो। इसीलिए रोगी के जीवन-मरण का तुम्हारी निश्चित फीस पर कोई असर नहीं पड़ता।

रोगी के शरीर-यंत्र की परीक्षा जब तुम करते हो, तब तुम्हारी मुख-मुद्रा बड़ी गम्भीर हो जाती है। जब तुम उसे नतीजा सुनाते हो, तो उसका चेहरा फक पड़ जाता है। उसे प्रतीत होने लगता है कि उसके प्राण तुम्हारे ही हाथ में हैं।

नये नये रोगों की लम्बी फेहरिस्त पेश करके उसकी मानसिक चिन्ता बढ़ाने में तुम कुछ उठा नहीं रखते। कभी तो वह मृत्यु का चिन्तन करता है, और कभी तुम्हारा। फिर तुम में भी अनेक प्रकार और कई दरजे हैं। कभी वह तुम में से एक का दरवाजा खटखटाता है, कभी दूसरे का। एक कुछ रोग बताता है, दूसरा कुछ और। एक चीर-फाड़ कराने की सलाह देता है, दूसरा दांत उखड़वाने की और तीसरा सारा काम-काज छोड़ कर विश्राम लेने की।

रोगी अजीब चक्कर में पड़ जाता है। आधी इसकी सुनता है, आधी उसकी। पर दक्षिणा तो हर एक चिकित्सक के चरणों पर पूरी ही चढ़ानी पड़ती है।

बाद में कभी कभी यह भी सिद्ध होता है कि उसे कुछ भी रोग नहीं था। उसकी एक-एक हड्डी तो तुम्हारे दिये हुए चिन्ता-रोग से ही घुल गई थी।

फिर भी, शरीर-यन्त्र के कितने ही पुर्जों की मरम्मत अपना घरबार बेच कर भी, तुमसे कराने के लिए वह श्रद्धावान् मरीज तैयार हो जाता है।

शरीर के अन्दर का चित्र लेकर तुम अक्सर रोगी का विषैला अंग काट डालने की निस्संकोच सलाह दे देते हो, किन्तु कोई कोई ऐसे मूढ़ग्राही होते हैं कि मृत्यु का जोखिम लेकर भी मरीज का पैर या हाथ कटवाने को राजी नहीं होते! यह भी देखा गया है कि कमबख्त रोगी मामूली तेल मालिश से ही अच्छा हो जाता है, और जिन्दगी-भर के लिए अपंग हो जाने के परम सुख से अभागा वंचित ही रहता है।

तहाँ कोई कोई अश्रद्धालु मरीज शल्य-क्रिया कराते-कराते ही स्वर्ग सिधार जाते हैं।

पर कोई भाग्य का मारा अपने हाथ या पैर से अथवा प्राणों से ही हाथ धो बैठे, तो उसके तुम जवाबदेह नहीं। तुम्हारे लिए बस इतना काफी है कि तुम्हारी चिकित्सा ताजी-से-ताजी वैज्ञानिक शोध का परिणाम थी और तुम्हारा हेतु भी शुद्ध था।

इसमें शक नहीं कि तुम्हारे वैज्ञानिक आविष्कार अद्भुत हैं। ब्रह्मा ने खाने-पीने के लिए केवल मुँह बनाया था। वह तुम्हें अपर्याप्त मालूम दिया और तुमने एक नई शोध कर डाली। शरीर में कहीं भी छेद करके पिचकारी के द्वारा तुम दवा का प्रवेश बड़ी आसानी से करा देते हो, इस सुन्दर अप्राकृतिक शोध का तुम्हारे उपचारों में आज बड़े महत्त्व का स्थान हो गया है।

तुम ऐसे कितने ही अपेय और अभक्ष्य पदार्थों को उदरस्थ करा देते हो, जिनकी शायद कल्पना भी इन्सान घृणा के साथ करेगा।

मानव-कल्याण की तुम्हें इतनी अधिक चिन्ता है कि उसकी खातिर तुम लाखों निरीह प्राणियों का बध कर डालते हो।

तुम्हारे सद्भाग्य से जब कोई संक्रामक रोग फैलता है, तब तुम्हें मंगलोत्सव का अनुभव होता है। किसान को जैसे वांछित समय पर वर्षा होने से महान आह्लाद होता है, वैसा ही आनन्द और उल्लास तुम्हें संक्रामक रोगों के प्रकोप से होता है। उन दिनों घर-घर तुम्हारा स्वागत-सत्कार होता है, और तुम्हारी जेबें फूली नहीं समातीं।

मगर जिस साल लोगों की प्रकृति में कोई खास फेरफार नहीं होता, या वे अपना आहार-विहार ठीक रखते हैं, वह साल तुम्हारा सूखा ही जाता है।

तब तुम्हें तलाश तलाश कर स्वस्थ मनुष्यों में भी अस्वास्थ्य का आरोप करना पड़ता है। किसी अद्‌भुत रोग से या उसके आने की आशंका से ही तुम उन्हें चिन्तित और भयभीत कर देते हो।

तुम्हारे बड़े बड़े दावे होते हैं। नियम से अखबार पढ़ने वालों को इस बात का प्रमाण मिलता रहता है। अखबार तुम्हारी चमत्कारी दवाइयों की महिमा गाते कभी अघाते ही नहीं। जहाँ धुवाँ, वहाँ आग—जहाँ अखबार, वहाँ दवा का विज्ञापन। तुम्हारी दवाएँ काया तक पलट देने का सामर्थ्य रखती हैं। धर्म और ईश्वर की ओर जाने की चिन्ता रखने वाले वृद्ध मानव के हृदय में वे एक बार फिर कामिनी-कांचन से लिपटने की लालसा जगा देती हैं।

बूढ़े च्यवन ऋषि को चिर यौवन दिला देने वाली औषधियों का स्तुति-पाठ जब सुनते हैं, तो तुम्हारे चरणों पर अतृप्त कामियों का मस्तक आप-से-आप झुक जाता है।

सभ्य धनिकों के घरों में तुम्हारी हितकारी सलाह की बड़ी कद्र है। कैसे पानी से नहायें, कहाँ सोयें, क्या खायें, क्या पीयें, क्या पहनें आदि गूढ़ प्रश्नों पर वे तुम्हारी सलाह लेना बहुत जरूरी समझते हैं।

तुमने उन्हें कीटाणुओं से इतना ज्यादा डरा दिया है कि सामान्य लोगों के सम्पर्क से—जो अक्सर गन्दे होते हैं—वे अपने को बिलकुल अलग रखते हैं।

उनका स्वास्थ्य तुमने मकड़ी के जाले की तरह नाजुक बना दिया है। जरा जरा में उन्हें जुकाम हो जाता है, सिर दर्द करने लगता है, हरारत हो आती है।

बड़े घरों में तुम संयत जीवन को घुसने भी नहीं देते, और तुम्हारा उत्तेजन पाकर विषय-भोगों का धड़ल्ले से लोग सेवन करते हैं। परिणामतः तुम्हारे कई शुभ-चिन्तक वहाँ पहुँच जाते हैं—जैसे मन्दाग्नि, मधुमेह, रक्तदवाव, दमा, हृद्‌रोग और राजयक्ष्मा।

दिन में कई बार ताप-मापक यन्त्र का प्रयोग होता है, दीवार पर तालिका टँगी रहती है, मल-मूत्र की परीक्षा शुरू हो जाती है, शरीर बार-बार तोला जाता है, अन्तर्चित्र उतरने लगते ह, घर शीशियों और बोतलों से भर जाता है—सारा वातावरण भय-संचारक बना दिया जाता है।

दवाखानों और अस्पतालों की संख्या जिस तरह दिन-ब-दिन बढ़ती जाती है, उसे देख कर मानवी सभ्यता के विकास का माप आज आसानी से किया जा सकता है।

चिकित्सालयों के संचालकगण जब बड़े गर्व से यह सुनाते हैं कि उनके मरीजों की संख्या क्रमशः कितनी बढ़ गई है, तब तुम्हारे अथक और अकथ प्रयत्नों का ठीक ठीक पता चलता है कि तुमने अस्वस्थ समाज को कितना अधिक आरोग्य प्रदान किया है।

दुर्भाग्य से जिस साल मरीजों की संख्या गिर जाती है, उस साल की रिपोर्ट सुनाते हुए संचालकों को लज्जा और दुःख का अनुभव होता है।

तुम्हारा अद्‌भुत गणित रोगों की वृद्धि और दवाइयों की खपत से समाज के आरोग्य का माप निकालता है।

किसी-न-किसी व्याधि से मनुष्य पहले भी मरता था; पर मरना वह जानता नहीं था। उसे या उसके आस-पास वालों को मृत्यु का भान हो जाता था। औषधियों की उपेक्षा कर दी जाती थी, और ईश्वर को वैद्य का स्थान दे दिया जाता था। रोगी की चारपाई के पास भगवान का नाम जपने लोग बैठ जाते थे, और दान-पुण्य होने लगता था।

पर तुम तो आज दूसरा ही दृश्य उपस्थित कर देते हो। आखिरी दम तक तुम प्रयत्नशील रहते हो। तुम्हें यह पसन्द नहीं कि रोगी शान्ति से प्राण छोड़े।

तुम उस समय आक्सिजन का संचार करते ही जाते हो। तुम्हारा विश्वास है कि धर्म-ग्रन्थों के पाठ से या ईश्वर के नामस्मरण से तुम्हारे रचे वातावरण में खलल पहुँचता है। उस प्रयाणशील प्राणी के सामने तुम्हारी भयंकर आकृतियाँ ही घूमती हैं, और शायद तुम्हें ही वह भ्रमवश यमदूत समझने लगता हो।

चिकित्सक, तुम्हारा एक प्राचीन नाम 'यमराज सहोदर' भी तो है।

बापू और मिट्टी

श्रीयुत प्रभुदयाल विद्यार्थी, विशारद, रा० भा० प्र० समिति, वर्धा

श्री प्रभूदयाल जी को अक्सर गांधीजी के पास रहने एवं उन्हें निकट से अध्ययन करने का मौका मिलता है। गांधीजी प्राकृतिक चिकित्सावादी तो हैं ही वे उसके नियमों के अनुसार चलते भी हैं। वे मिट्टी के उपयोग को कितना गुणकारी समझते एवं पसन्द करते हैं आदि प्रश्नों का उत्तर तो इस लेख में मिलेगा ही यह भी ज्ञात होगा कि गांधीजी कब कब मिट्टी का उपयोग स्वयं करते हैं।—सं०

कहाँ बापू और कहाँ मिट्टी ? ऐसा प्रश्न बापू को देख कर अनायास ही उठ खड़ा होता है। बापू से मिलने वाले अक्सर हैरत में पड़ जाते हैं। देखते हैं सिर पर मिट्टी, पेट पर मिट्टी की पट्टी अक्सर बँधी रहती है। बापू से मिलने वालों में एक छोटे बच्चे से लेकर बूढ़े तक और एक गरीब से लेकर धनी तक, और एक निरक्षर से लेकर बड़े बड़े फिलासफर और वैज्ञानिक तक आ जाते हैं।

यूरोप के लोग महात्मा गांधी को सिर या पेट पर मिट्टी की पट्टी रखे हुए देख कर बहुत आश्चर्य करने लगते हैं और उनसे तरह तरह के सवाल मिट्टी के प्रयोग को ही लेकर करने लगते हैं। बापू हँसते हुए कहने लगते हैं—इसी मिट्टी का शरीर है और एक दिन इसी मिट्टी में मिलना है। इसीलिए पृथ्वी माता को सिर पर और पेट पर रक्खे हुए काम करने में अच्छा लगता है। मुझे डाक्टरी इलाज में उतना विश्वास नहीं है जितना इस मिट्टी में है। बापू मिट्टी की तारीफ में कभी कभी बहुत तन्मय हो जाया करते हैं। और मिट्टी की बड़ी तारीफ करते हैं और कहते हैं कि शरीर की सारी खराबियों को यह मिट्टी खींच लेती है। इसका गुण अद्भुत है। इसमें तो एक ईश्वरीय चमत्कार छिपा बैठा है। परन्तु इसका प्रयोग श्रद्धा और ईश्वर पर भरोसा रख कर करना चाहिए तभी सफलता मिल सकती है। यह तो मैंने गांधीजी की बातों का थोड़े में जिक्र किया है यानी बहुत कम शब्दों में सार बात कह दी है लेकिन गांधीजी तो मिट्टी के चमत्कार पर घंटों बात करने पर भी नहीं थकते।

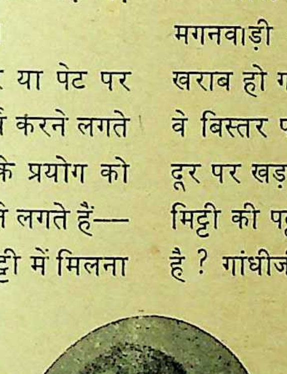

लेखक

जनवरी सन् १९३९ की बात है।

जापान के महाकवि योन नागुची गांधीजी से मिलने मगनवाड़ी आये हुए थे। उस समय उनकी तबियत खराब हो गई थी और सिर पर मिट्टी की पट्टी बाँधे हुए वे बिस्तर पर लेटे हुए थे। मैं भी उस वक्त वहीं कुछ दूर पर खड़ा था। योन नागुची ने गांधीजी के सिर पर मिट्टी की पट्टी बाँधे हुए देख कर प्रश्न किया। यह क्या है ? गांधीजी ने खिलखिला कर कहा—भारत की मिट्टी में मैंने जन्म लिया है और इससे भारत की यह मिट्टी मैंने अपने मस्तक पर धारण कर रक्खी है। इसी तरह से कितने ही आगन्तुकों को गांधीजी मिट्टी की एक पहेली में छोड़ दिया करते हैं। वे लोग पश्चिमी डाक्टरी के वायु मण्डल में पले पोसे होते हैं; उन्हें मामूली मिट्टी का महत्त्व क्या मालूम हो ?

लगभग चार-पाँच साल से देख रहा हूँ बापू मिट्टी के प्रयोग खूब करने लगे

हैं। ऐसा कोई दिन खाली नहीं जाता जब वे मिट्टी की पट्टी सिर या पेट पर न रखते हों। क्या गर्मी, क्या बरसात, क्या जाड़ा, सभी दिनों में वे इसका प्रयोग करते ही रहते हैं। उनके लिए यह रामबाण दवा है। पेट में कुछ खराबी है तो मिट्टी का प्रयोग, सिर में दर्द है तो मिट्टी का प्रयोग, चेचक है तो मिट्टी का प्रयोग, बुखार है तो मिट्टी का प्रयोग, और यदि खून का दबाव बढ़ा, तो भी मिट्टी का ही प्रयोग चलता है।

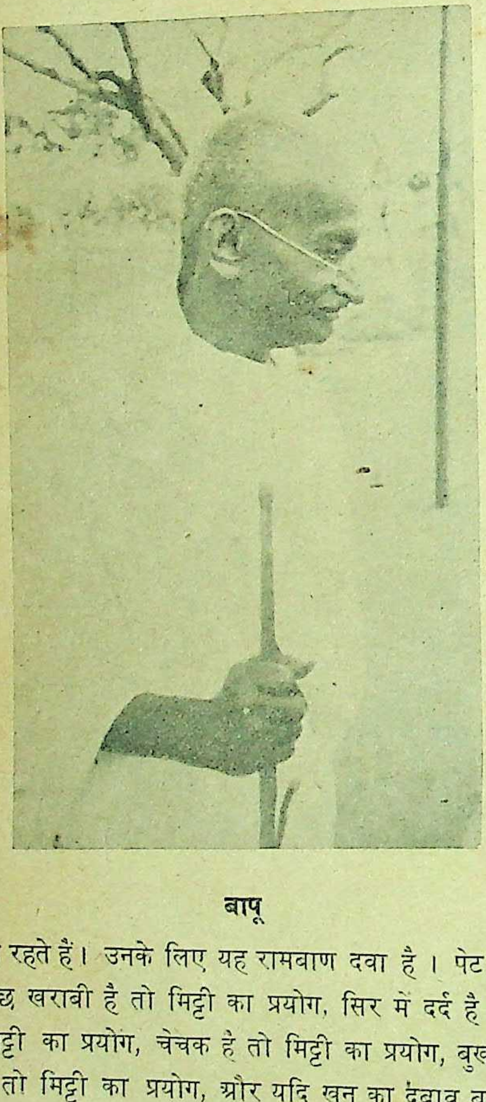

बापू

गर्मी पड़ती है तो गीली मिट्टी की पट्टी सिर और पेट पर रख कर गर्मी से बचने के लिए इससे खस की टट्टी का काम लेते हैं। बरसात की बीमारियों से बचने के लिए बापू का कुनैन मिट्टी की पट्टी ही है।

जेठ वैशाख की जब लू चलती है और सूरज आग उगलता है तब उससे बचने के लिए बापू सिर पर गीली मिट्टी की पट्टी बाँध कर बड़ी तेजी से काम करते हैं। कभी कभी तो रात को भी मिट्टी की पट्टी बाँध कर सो जाते हैं इससे उन्हें नींद खूब आती है। कोई फोड़ा या फुन्सी या घाव हुआ तो उस पर भी मिट्टी की पट्टी ही बाँधते हैं। रामगढ़ कांग्रेस से आते समय उनके पैर में कहीं रास्ते में चोट लग गई थी, जिससे चलने फिरने में उन्हें कुछ कष्ट होता था। कई दिनों तक उस घाव पर मिट्टी की पट्टी ही बँधती रही। दस-बारह घंटे के बाद पट्टी बदल दी जाती थी। लगातार चौबीस घंटे से अधिक एक पट्टी नहीं रखी जाती। बीच बीच में बदल कर नई मिट्टी ली जाती है।

आश्रम के मरीजों को भी अक्सर गीली मिट्टी का ही प्रयोग कराया जाता है। बापू तो इसी राम बाण दवा से बीमारियों को दूर भगाने की कोशिश करते हैं। एक मर्तबे की बात है कि वर्धा में हैजे की बीमारी से कुछ लोग पीड़ित थे और कुछ मर भी गए थे। उसी समय बापू के निकट के भारतीय संस्कृति की रक्षा करने वाले और सेवा परायण एक प्रसिद्ध साहित्यिक भी उस बीमारी के शिकार हुए। सेवाग्राम से बापू उन्हें देखने के लिए अक्सर वर्धा जाते थे। डाक्टर के इलाज से उन्हें कुछ आराम नहीं हो रहा था, तब एक दिन बापू ने डाक्टरों से कहा—आप लोग क्यों नहीं अच्छा कर रहे हैं। यदि अच्छा नहीं कर सकते तो मेरा चमत्कार कर के देखिए, जल्दी अच्छे हो जायँगे। डाक्टर बापू का मुँह देखने लगे। बापू ने कहा—गीली मिट्टी की पट्टी पेट पर रखो। डाक्टरों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। प्रश्न था—क्या हम इस भयंकर बीमारी में मिट्टी का प्रयोग करें? यहाँ तो बापू की मिट्टी पर अटल श्रद्धा और अटूट विश्वास जाहिर होने लगा कि वे भयंकर से भयंकर बीमारी में भी मिट्टी का ही चमत्कार देखना चाहते हैं।

दो तीन हाथ गहराई के नीचे की मिट्टी निकाल कर उसे बारीक करके पानी के साथ गीली कर ली जाती

है। और एक मिट्टी की हाँडी में उसे रख लिया जाता है। आवश्यकतानुसार मिट्टी हाँडी में से निकाल कर कपड़े में रख कर नीचे से मिट्टी पर कपड़ा लपेट कर सिर या पेट पर बापू गीली मिट्टी की पट्टी बाँधते हैं। कपड़ा गन्दा न हो इसलिए कपड़े में मिट्टी बाँधते समय नीचे एक लकड़ी की मामूली सी पट्टी रख ली जाती है इससे पट्टी बाँधने में भी सुविधा होती है।

मैं देखता हूँ यदि बापू की चले तो वे गाँवों में मिट्टी के औषधालय ही स्थापित करावें। अगर हमें अपनी मिट्टी सुधारनी है तो विदेशी दवाइयों की व्यर्थ की फिज़ूल खर्ची में न पड़ कर ईश्वर की दी हुई इस अनुपम और मुफ़्त की मिट्टी की चिकित्सा का ही उपयोग करें।

(पृष्ठ १७९ का शेषांश)

दिलचस्पी प्रकट करने लगे हैं वह एक शुभ लक्षण है।

उन स्वास्थ्य-गृहों के रसोई-गृह तो आश्चर्यजनक हैं। अधिकांश चीजें बिजली द्वारा पकाई जाती हैं। वहाँ के किसी रसोईघर में जाइए। आपको दूध की तरह सफेद पोशाक पहने हुए सुघर स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के भोजन पकाते देखने को मिलेंगी। साधारणतः उन स्वास्थ्य-गृहों में आहार-सम्बन्धी विशेषज्ञ रहते हैं जो यह देखते हैं कि उनके द्वारा बताए गए ढंग से रोगी को भोजन दिया जाता है अथवा नहीं। हर एक चीज रोगी को खाने के लिए दी जाने के पहले उस विशेषज्ञ के सामने लाई जाती है। रसोईघर की प्रत्येक वस्तु इतनी साफ रहती है जिसकी कि आप कल्पना भी नहीं कर सकते। अगर आप यह जानना चाहते हैं कि सफाई किसे कहते हैं तो आप जर्मन या इससे भी अधिक अच्छा होगा किसी स्विस नगर की यात्रा कीजिए। वहाँ की सड़कें आपको हमारे यहाँ के भोजनागार से भी स्वच्छ मिलेंगी। उनके शौच-गृह हमारे शयनागार से भी साफ सुथरे मिलेंगे। इनके द्वारा आप उनके रसोईघरों की सफाई का मोटे तौर पर अन्दाज लगा सकेंगे।

जब तक आप उन रसोईघरों में तैयार किए गए भोजन को चखते नहीं तब तक आप इस बात का अन्दाज नहीं लगा सकते कि वे कितने सुस्वाद होते हैं। हम लोग बहुत अधिक मसाला, घी और मिर्च डालकर भोजन के वास्तविक स्वाद और सौन्दर्य को नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन दूसरी ओर यूरोपियन लोग भोजन के प्राकृतिक स्वाद को बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं और वे इसी में कला दिखाते हैं। उस भोजन से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को लाभ पहुँचता है।

मुझे आशा है कि कुछ समय के बाद हम इतने संस्कृत हो जायँगे कि हम भारत में आधुनिकतम ढंग की प्राकृतिक चिकित्सा की संस्था कायम कर लेंगे। श्री घनश्यामदास बिड़ला, जो इस काम में बहुत अधिक व्यावहारिक दिलचस्पी रखते हैं, यह आशा रखते हैं कि वे भारत के किसी एक बड़े नगर में प्रथम श्रेणी का प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह स्थापित करेंगे। ईश्वर को, उनका यह प्रयत्न सफलीभूत हो।

यूरोप के उन प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृहों में उपचार कराने का खर्च, जिसमें कमरे का किराया और भोजन खर्च भी शामिल रहता है, ६७२ रु० से लेकर १४००८ रु० तक प्रति मास पड़ता है।

* * *

फोड़ा

डाक्टर पी० वेंकट रमैया, एन० डी०, डी० एम०

फोड़े, शरीर द्वारा विजातीय द्रव्य निकाले जाने के प्रयास के फलमात्र हैं। इनका उपचार तीव्र रोग की तरह ही होना चाहिए। दवा अथवा शस्त्र से छेड़-छाड़ होने पर वे अच्छे होने में समय तो अधिक लेते ही हैं, हमारी शरीर की सफाई का काम भी उनके द्वारा जितना होना चाहिए उतना नहीं हो पाता।——सं०

फोड़ा क्या है? यह एक प्रयत्न है जो कि प्रकृति शरीर के भीतर जमा हुए अनावश्यक मल को बाहर निकाल देने के लिए करती है। जो भोजन ठीक तौर से पचता नहीं है वह शरीर के अन्दर मल के रूप में जमा होने लगता है और शरीर में विकार पैदा करने लगता है। इसी तरह का पदार्थ क्रम से अम्ल या ऐसिड का रूप धारण कर लेता है। उस अम्ल पदार्थ से मुक्त होने तथा रक्त में क्षार और अम्ल के बीच ६०::४० का अनुपात कायम रखने के लिए हमारे शरीर का संचालन करने वाली मशीन जोरदार प्रयत्न करती है। रक्त के अन्दर घुसा हुआ वह अम्ल-पदार्थ प्राकृतिक शक्तियों द्वारा हटाया जाकर शरीर के किसी कमजोर भाग में आ जाता है और आरम्भ में वहाँ पर गाँठ पैदा कर देता है। आगे चलकर वह गाँठ मुलायम पड़ जाती है और पीब तथा रक्त के रूप में शरीर से बाहर निकल पड़ती है।

हानिकारक भोजन

अब प्रश्न यह उठता है कि वे कौन से भोजन हैं जो शरीर की संचालन-क्रिया में इतनी गड़बड़ी पैदा करते हैं। 'जीवन-सखा' के पाठक यह तो जानते होंगे कि हमारे शरीर की संचालन-क्रिया को अम्ल या खटाई पैदा करने वाले भोज्य पदार्थों की अपेक्षा क्षार पैदा करने वाले पदार्थों की अधिक जरूरत होती है।

पालिश किया हुआ चावल अथवा गेहूँ भोजन किए जाने पर शरीर में अधिक अंशों में अम्ल पैदा करता है। चावल और गेहूँ के अलावा श्वेतसार और चिकनाई आवश्यकता से अधिक मात्रा में खाए जाने पर अम्ल पैदा करते हैं। ४० साल से अधिक अवस्था वाले किसी भी व्यक्ति को प्रोटीन की कतई जरूरत नहीं रहती और जौ गेहूँ आदि तथा तरकारियों तथा इसी प्रकार के अन्य पदार्थों में जो प्रोटीन मौजूद रहता है वह शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति कर देने के लिए काफी होता है बशर्ते कि वे पदार्थ अच्छी तरह से पच जायँ। अगर बिना जरूरत के ही प्रोटीन ग्रहण किया जाता है और कोई अपने मन में यह अनुमान लगा लेता है कि प्रोटीन से शरीर की निर्माण-शक्ति बढ़ेगी तो उसके विपरीत वह जमने लगेगा और शरीर में गड़बड़ी पैदा कर देने का प्रधान कारण बन जायगा। यहाँ पर मैं मांसाहारियों को दुखित करना नहीं चाहता किन्तु मैं उन्हें सावधान कर देना चाहता हूँ कि अगर वे अपने जीवन में वास्तविक स्वास्थ्य और सुख का अनुभव करना चाहते हैं तो वे मल पैदा करने वाले मांस, मछली, मुर्गी आदि खाने बन्द कर दें। अगर भोजन का रस ठीक तौर से बनकर शरीर के अवयवों में पहुँचता नहीं है और शरीर उसका उपयोग नहीं कर पाता तो वह कारबन डाइआक्साइड के रूप में बदल जाता है। हमारे शरीर के अन्दर रक्त, मांस और अवयवों में जो क्षार प्रधान पदार्थ मौजूद रहते हैं वे इस कारबन डाइआक्साइड पर प्रतिघात करते हैं और इस प्रकार के

घातप्रतिघात के फलस्वरूप शरीर के अन्दर क्षार-प्रधान पदार्थ का अनुपात कम हो जाता है।

जब शरीर का संचालन करने वाली मशीन कमजोर पड़ जाती है और जब वह आँतों, गुर्दे, त्वचा, और फेफड़ों के जरिए मल को समुचित ढंग से बाहर नहीं निकाल पाती तो उसके फलस्वरूप शरीर में जमा हुए विकार फोड़े, जहरीले घाव अथवा जहरवाद और नहारुआ के रूप में बाहर निकलने के लिए गाँठ के रूप में बदल जाते हैं।

बचाव

अन्य शारीरिक रोगों की भाँति इस रोग के भी सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि रोग का इलाज करने की अपेक्षा ऐसा उपाय करना कि रोग होने ही न पाए अधिक अच्छा है।

गन्दा से गन्दा पदार्थ जब धूप में फेंक दिया जाता है और वह सूख जाता है तो उसकी गन्दगी मिट जाती है। यह बात सभी जानते हैं। रेफ़्रीजेटरों के द्वारा फलों को काफी समय तक सुरक्षित रक्खा जा सकता है। इसी प्रकार यदि आप अपने शरीर पर सूर्य की किरणें पड़ने दिया करें, और अगर आप हर रोज काफी तौर से कसरत किया करें तो आपके शरीर से पसीने के रूप में रोम-छिद्रों के मार्ग से अन्दर के विकार निकल जाया करेंगे। कसरत के समय शरीर के अंगों का जो नियमित संचालन होता है उसके द्वारा हमारा शरीर भोजन-से उत्पन्न हुए विकारों को नष्ट कर देता है। स्वच्छ वायु सेवन करना तथा स्वच्छ जल पीना—यही दो मूल सिद्धान्त हैं जिनपर हमारा शरीर कायम है। हमें इस सम्बन्ध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है।

फोड़े

रक्त के साथ प्रवाहित होने वाले विकार अथवा मल शरीर में उस कमजोर स्थान को ढूँढ़ते हैं जहाँ से वे आसानी के साथ बाहर निकल जायँ। वे कमजोर स्थान की ही तलाश इसलिए करते हैं क्योंकि वहाँ पर शरीर का तापमान कम रहता है और वहाँ पर विकारों के बाहर निकल जाने के सम्बन्ध में अधिक अनुकूल मौका रहता है। अगर दवा की पट्टी आदि के रूप में बाहर से फोड़े के कार्य में बाधा डालने की कोई कोशिश नहीं की गई तो वहाँ पर मल पदार्थ चमड़े के फैलाव के हिसाब से अधिक से अधिक लम्बाई में एकत्र हो जाते हैं। इसके विपरीत अगर वहाँ पर दवा लगाई गई तो चमड़े के फैलाव में बाधा पड़ती है और तब वह मल पदार्थ रक्त में पुनः प्रवेश कर जाता है जो कि शरीर के लिए हानिकारक होता है। इसलिए आपको यह ध्यान में रखना चाहिए कि फोड़ा निकलने के समय उस पर किसी प्रकार की भी दवा की पट्टी रखना हानिकारक है।

अगर एलोपैथ डाक्टर फोड़े के पूरी तौर से निकल आने के पूर्व ही दवा के द्वारा हस्तक्षेप करता है तो उसके कारण मल के पूरी तौर से एकत्र होने के कार्य में बाधा पहुँचती है और तब उस हालत में फोड़े के जहरीले फोड़े के रूप में बदल जाने की भी सम्भावना हो जाती है। इसलिए बुद्धिमानी की बात यह होगी कि जहाँ पर फोड़ा निकल रहा हो वहाँ पर नम गरमी, भाप या गरम पानी की पट्टी के द्वारा पहुँचा कर उस स्थान पर चमड़े के फैलाव की शक्ति बढ़ाई जाय। भाप आदि देने के बाद ठंढी मिट्टी की पट्टी देना अथवा तौलिए को पानी से भिगो कर वहाँ पर रगड़ना तथा उसे वहाँ पर रख छोड़ना अच्छा होगा। ठण्ढी मिट्टी की पट्टी देने से भी मल के एकत्र होने और गरम पट्टी या भाप देने से चमड़े का फैलाव बढ़ने में सहायता मिलती है।

अगर अधपके फोड़े को एलोपैथिक डाक्टर अपने नश्तर के द्वारा छेड़ता है और फोड़े को चीर देता है तो उसके कारण पकने में भी बाधा पहुँचती है। फलस्वरूप पीब के बाहर निकल जाने में प्राकृतिक अवस्था की अपेक्षा काफी अधिक समय लगेगा।

इलाज

जैसा कि अन्य सभी तीव्र रोगों के सम्बन्ध में होता

(शेष पृष्ठ १९८ पर)

शीर्षासन

डा० बालेश्वरप्रसादसिंह

शीर्षासन सिर के सहारे किया जाता है इसलिए इसे शीर्षासन कहते हैं। शीर्ष अर्थात् सिर और आसन—ये दो शब्द मिलकर शीर्षासन शब्द बनाते हैं। आसनों में शीर्षासन बहुत अधिक प्रचलित है। जो दो चार आसन भी करना जानता है वह शीर्षासन जरूर करता है। इसकी इस सर्वप्रियता का कारण इसके अभ्यास से प्राप्त होने वाले अनगिनत लाभ हैं। पर जितनी गलती की गुंजाइश इस आसन में है दूसरे आसन में नहीं। यही कारण है कि वे समझे बूझे इस आसन के करने वालों के दिमाग तक खराब होते देखे गए हैं और अपनी आँखों की रोशनी तो कितनों ने ही कम या अधिक मात्रा में गवाँ दी है। यही नहीं इस आसन को करने की ठीक तरकीब जानने वाले भी इसके प्रयोग में गलती करने के कारण बहुत बार लाभ के बदले हानि उठाते हैं। यहाँ इस आसन की शुद्ध एवं सरल विधि बताने के साथ साथ इस आसन से होने वाले लाभों के अतिरिक्त इसके अनुचित प्रयोग से होने वाले नुकसानों का भी वर्णन किया जायगा।

अभ्यास

इस आसन के लिए फर्श पर एक दो फीट लम्बी और दो फीट चौड़ी कम्बल की तह की हुई मुलायम गद्दी बिछाओ। गद्दी बहुत मोटी नहीं होनी चाहिए और न इसके लिए रूई की गद्दी ही काम की होगी। मोटे कपड़े की पाँच सात तह की हुई गद्दी भी काम में लाई जा सकती है।

गद्दी के एक किनारे पंजों पर बैठो (चित्र नं० १)। दोनों हाथों की उँगलियों से गस्सा बाँध लो और हाथों को जमीन पर रखो। दोनों कुहनियों के बीच में सवा फीट का फासला होगा। सिर के पिछले हिस्से को गस्से के पास लाओ (चित्र नं० २)। शीर्षासन में सिर के बीच और अधिकतर सिर के पीछे का हिस्सा जमीन पर लगाना चाहिए। यदि सिर के आगे के हिस्से पर खड़े होने की कोशिश की जायगी तो मेरुदण्ड सीधा नहीं रह सकेगा। अब घुटनों से पैर को सीधा करो (चित्र नं० ३) पर पैर के पंजे स्थान से न हटें। पहले

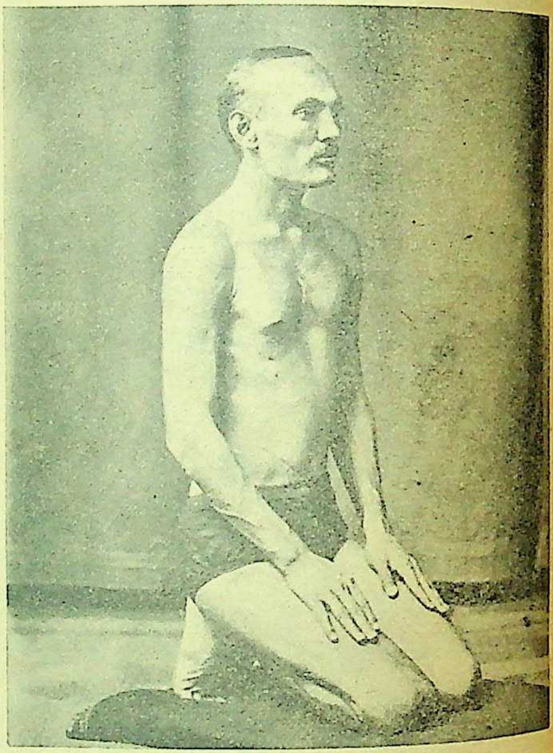

नं० १

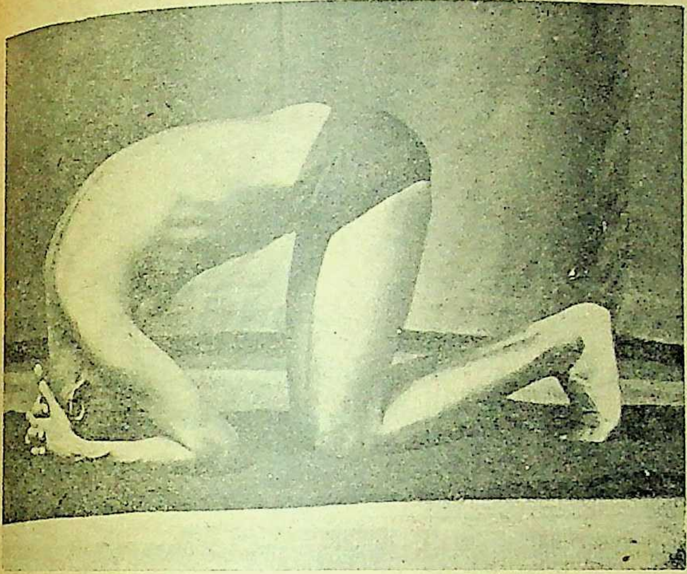

नं० २

एक उसके वाद दूसरा घुटना चेहरे के पास लाओ, अब पंजों को जमीन से सिर्फ चार इंच उठाकर (चित्र नं० ४) वहीं पर, पन्द्रह बीस सेकेण्ड रोको। दो तीन दिन में इस अवस्था का अभ्यास हो जायगा। इसके बाद एड़ी को उठाकर जाँघों से मिलाओ (चित्र नं० ५)। एड़ी को उसी अवस्था में रखते हुए घुटनों को धीरे धीरे ऊँचा कर धड़ को समकोण बनाओ (चित्र नं० ६) इस अवस्था में एक मिनट तक रहने का अभ्यास हो जाने पर ही आगे बढ़ना चाहिए। इतना तक अभ्यास होने में एक सप्ताह तक लग सकता है। अब घुटनों को उठाकर पीठ से सीधी रेखा में लाओ; एड़ी नितम्बों को छूती रहेंगी (चित्र नं० ७)। इसके बाद शीर्षासत् की पूर्णावस्था आती है। एड़ियों को उठाकर पैरों को सारे शरीर की सीध में लाओ। (चित्र नं० ८) यही शीर्षासन है।

शीर्षासन प्रति सप्ताह एक मिनट के हिसाब से बढ़ाकर धीरे धीरे १५ मिनट तक किया जा सकता है। बहुत से लोगों को एक एक घंटे तक शीर्षासन करते देखा गया है और उनका स्वास्थ्य सराहनीय ही रहा है; पर सर्वसाधारण के लिए पन्द्रह मिनट तक शीर्षासन करना यथेष्ट है।

गुण

हमारा स्वास्थ्य स्नायुजाल की शक्तता एवं सजीवता पर निर्भर है। स्नायुजाल सारे शरीर को अपने तारों की तरह के जाल से घेरे हुए है। स्नायुजाल-केन्द्र है मस्तिष्क। इसलिए मस्तिष्क के स्वास्थ्य पर ही हमारा शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य निर्भर है। शीर्षासन करने से रक्त सिर की ओर जोरों से प्रवाहित होता है जिससे उसके अंग प्रत्यंग की पुष्टि होती है, आँख, नाक, कान जिह्वा में सजीवता आती है।

प्रणाली सहित ग्रन्थियाँ भी हमारे स्वास्थ्य का

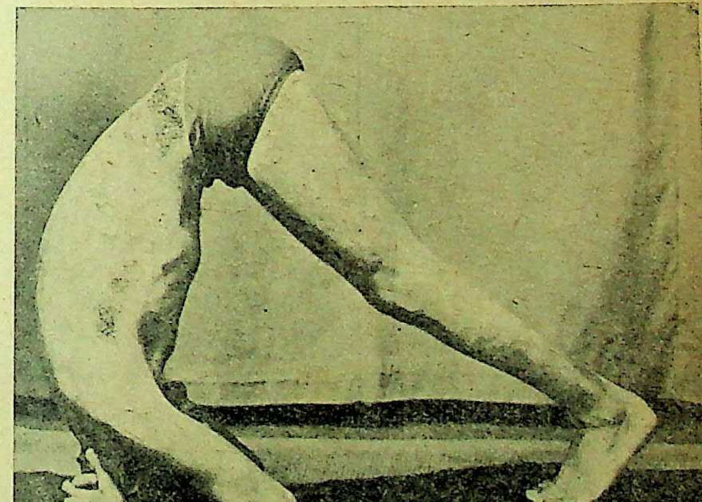

नं० ३

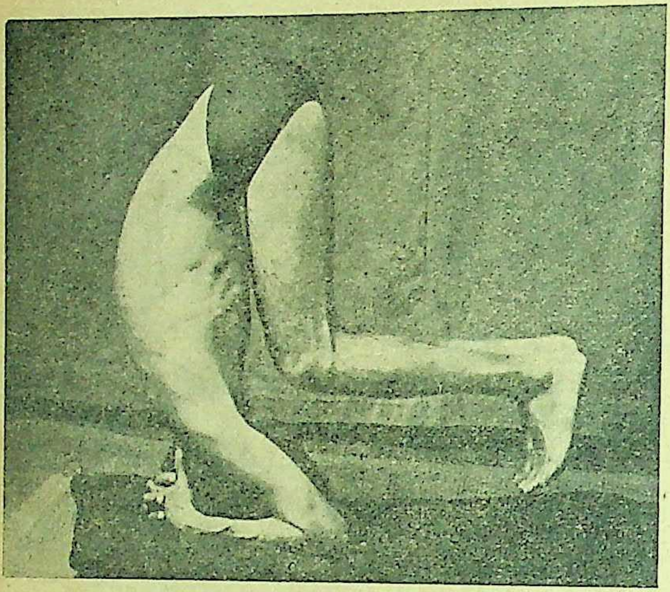

नं० ४

बहुत कुछ नियंत्रण करती हैं। ये ग्रन्थियाँ अधिकतर हृदय के ऊपर स्थित हैं। शीर्षासन करने पर रक्त का श्राव उनकी ओर अधिक हो जाता है जिससे ये ग्रन्थियाँ पुष्ट हो जाती हैं और पुनर्यौवन प्राप्त करने में सहायक होती हैं।

शीर्षासन करते समय खून का दौरान पाचन प्रणाली के नीचे की ओर दौड़ता है। खून जहाँ से जाता है उसकी ओर फिर ज्यादा लौटता भी है—यह स्वाभाविक नियम है। खून के दौरान के इस प्रकार बढ़ने से पाचन प्रणालीं सशक्त होती है। शीर्षासन से पाचन-रसों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।

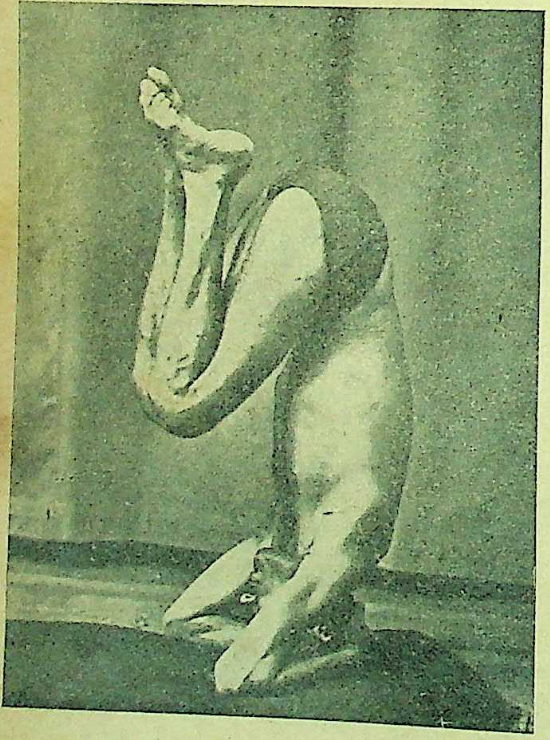

नं० ५

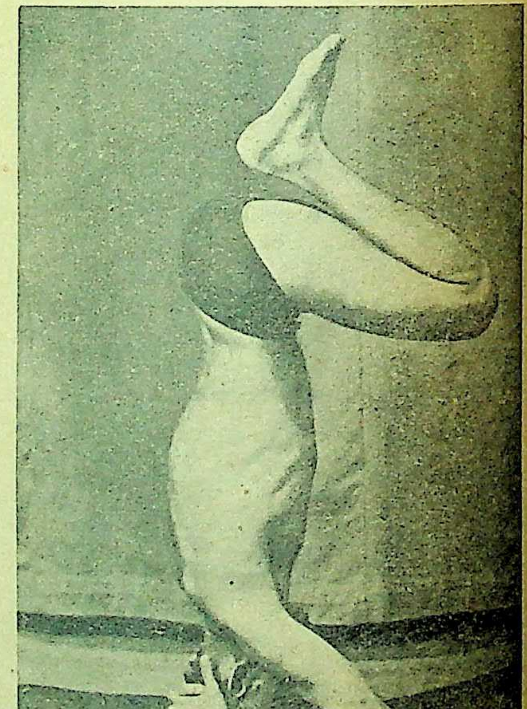

नं० ६

ऊपर की बातों से स्पष्ट हो गया कि शीर्षासन से स्नायु-संस्थान, प्रणाली सहित ग्रन्थियाँ एवं पाचन-प्रणाली सशक्त होती है अतः इनसे सम्बन्धित रोग शीर्षासन करने से जाते हैं। स्नायुदौर्बल्य, मन्दाग्नि, कब्ज, गले का भारीपन, यकृत और प्लीहा की दुर्बलता, आँतों की कमजोरी, आँत उतरना, वीर्यदोष आदि रोगों में और दमे की कुछ हालतों में शीर्षासन से लाभ होता है। जिन लोगों को स्नायुदौर्बल्य एवं वीर्य-दोष के कारण नींद कम आती है वे शीर्षासन से लाभान्वित हो सकते हैं। स्वप्नदोष से पीड़ित तो शीर्षासन से बहुत अधिक लाभ उठा सकते हैं।

वीर्य अण्डकोष में बनता है और अण्डकोष से एक नली चलती है जो मूत्रेन्द्रिय से मिलती है। मूत्रेन्द्रिय की जड़ से दोनों तरफ दो गिल्टियाँ (Prostrate Glands) हैं। इनसे जो रस निकलता है वह वीर्य में मिलकर वीर्य को कुछ पतला कर देता है। इस रस में मिल जाने पर ही वीर्य बाहर होता है। इस प्रकार इन ग्रन्थियों का वीर्य से घनिष्ट सम्बन्ध है। वीर्य-प्रणाली के आसपास की धमनियाँ बड़ी हैं और शिराएँ छोटी, अतः बार बार उत्तेजना होने से यहाँ का खून शिराएँ आसानी से खाली नहीं कर पातीं। इसी कारण धीरे धीरे वीर्य-प्रणाली कमजोर हो जाती है और वीर्य सम्बन्धी अनेक रोगों का जन्म होता है। शीर्षासन में शिराएँ आसानी से इन जगहों के खून को हृदय की ओर भेज पाती हैं अतः वीर्य प्रणाली को पुनः स्वस्थ होने का मौका मिलता है। जिससे इस प्रकार वीर्य सम्बन्धी अनेक रोग शीर्षासन द्वारा भगाए जा सकते हैं।

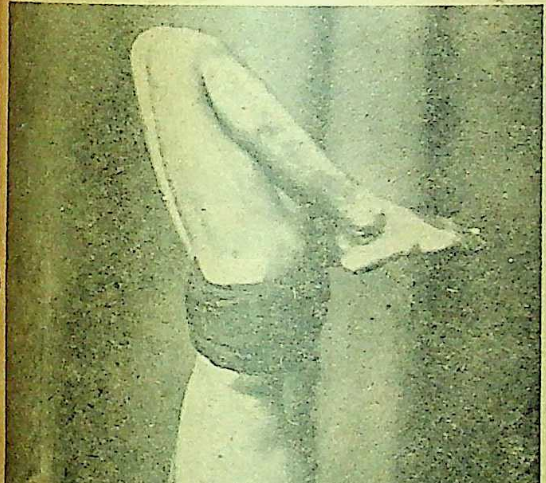

नं० ७

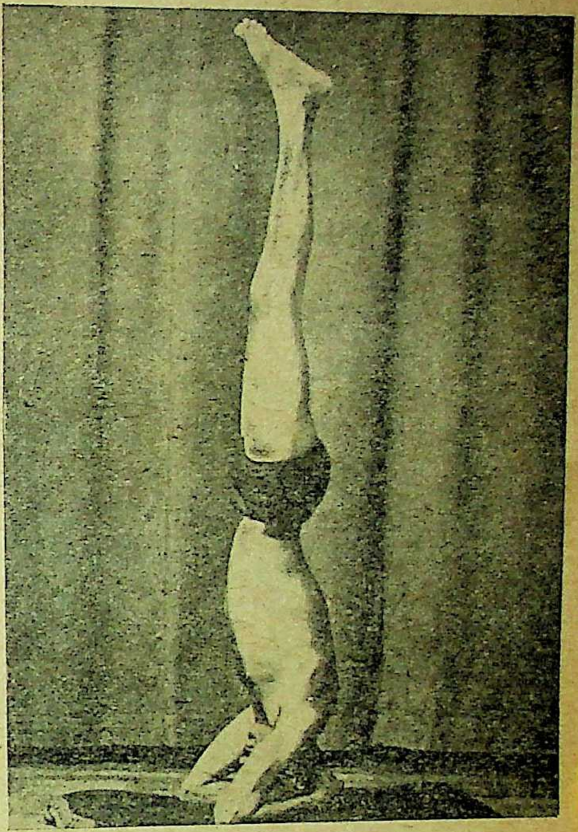

नं० ८

शीर्षासन से ब्रह्मचर्य धारण करने में बहुत सहायता

मिलती है। वीर्य-शक्ति, ओज-शक्ति में परिणत हो जाती है और इसी प्रक्रिया द्वारा कामेच्छा का शमन होता है; ओज-शक्ति ऊर्ध्वमुखी हो जाती है और मस्तिष्क की शक्ति बढ़ाने में विशेष सहायक होती है।

स्त्रियों के लिए भी यह आसन बहुत उपयोगी है। इस आसन के करने से वन्ध्यापन दूर होता है, बच्चेदानी की अनेक प्रकार की बीमारियाँ जाती हैं। पर यह आसन न तो गर्भिणी को करना चाहिए और न रजस्वला को।

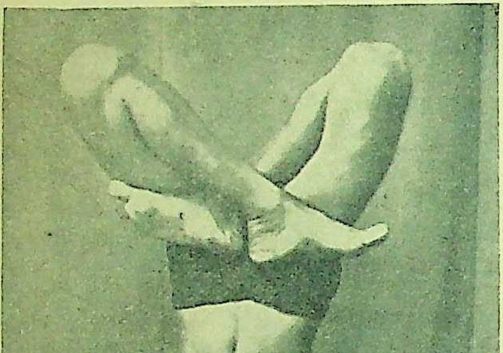

नं० ९

दोष

जिनका कान दर्द करता हो अथवा बहता हो उन्हें शीर्षासन नहीं करना चाहिए। इन रोगों के रोगियों को रोगमुक्त होने पर भी कुछ दिन बाद ही शीर्षासन करना चाहिए।

जिनकी आँखें लाल रहती हों, वे भी शीर्षासन न करें। जिनका रक्तचाप १०० से कम और १५० से अधिक रहता हो उनके लिए भी शीर्षासन वर्जित है। कमजोर दिल वालों को शीर्षासन करते ही दिल की धड़कन शुरू हो जा सकती है उन्हें भी शीर्षासन न करना चाहिए। जिन्हें कब्ज के कारण टट्टी बिल्कुल ही सूखी आती हो उनके लिए भी यह आसन मना है।

अकसर देखा जाता है कि अखाड़े में लड़ने के बाद ही पहलवान शीर्षासन करने लग जाते हैं। यह प्रथा हानिकारक है। किसी प्रकार की भी कसरत और शीर्षासन के बीच कम से कम आध घंटे का अन्तर जरूर होना चाहिए।

पाश्चिम शीर्षासन

शीर्षासन करते करते जब उसमें पूर्णता प्राप्त हो जाय एवं पाँच मिनट तक बिना किसी तकलीफ के शीर्षासन करते रहने का अभ्यास हो जाय तो शीर्षासन से सम्बन्धित आगे का अभ्यास आरम्भ किया जा सकता है। शीर्षासन की अवस्था में पहले एक पैर को मोड़ कर जंघा पर लाना चाहिए और फिर दूसरे को भी मोड़ कर दूसरी जंघा पर (चित्र नं० ९)। इस प्रकार शीर्षासन में ही पद्मासन हो जाता है। इसे उत्थित ऊर्ध्व पद्मासन कहते हैं। इसे करने की एक दूसरी रीति यह है कि पद्मासन लगा कर तब शुरू किया जाय।

यह आसन आसानी से हो जाय इसके लिए शीर्षासन की अवस्था में दाएँ पैर को मोड़ कर बाईं जंघा पर लाना चाहिए फिर बाएँ पैर को मोड़ कर दाहिनी जंघा पर आगे की ओर। अब यह उत्थित ऊर्ध्व पद्मासन बन गया।

अब पैरों को मोड़ कर पेट के पास लाओ। इसके बाद दोनों घुटनों को इतना मोड़ो कि ये दोनों दोनों हाथों के बगल में आ जायँ। पैरों के नीचे आ जाने के बाद धीरे धीरे फिर ऊपर ले जाना चाहिए। यह क्रिया पाँच छः बार तक की जा सकती है।

इस आसन से पीठ की मांसपेशियाँ दृढ़ और रीढ़ लचीली बनती है और सभी जानते हैं कि रीढ़ की हड्डी के लोच को कायम रख कर सदा जवान बना रहा जा सकता है।[1]

---

[1] लेखक की अप्रकाशित पुस्तक से।

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

मलेरिया बुखार आठ वर्ष बाद लौटा !

श्रीयुत भोलासिंह, कलकत्ता

मैं सुनता तो था कि औषधोपचारक एक रोग को अच्छा तो कर देते हैं पर एक दूसरे रोग का बीज भी रोगी को फिर अपने पास बुलाने को डाल देते हैं। यह बात सही है, पर दूसरे तरीके से। डाक्टर के हाथ में हो तो वह रोगी को अच्छा ही कर दे और फिर रोग आने ही न दे पर वह पद्धति ही ऐसी है कि रोग को अच्छा नहीं करती पर रोग को दबा देती है और वह रोग दूसरा रूप, दूसरा नाम लेकर कुछ दिनों अथवा वर्षों बाद बाहर आता है। यह मेरे अनुभव की बात है। सुनी-कही नहीं।

करीब दस वर्ष पहले मुझे मलेरिया हुआ था जिसे कलकत्ते के एक नामी डाक्टर ने कुनैन देकर अच्छा कर दिया था। मैंने भी समझा अच्छा हो गया और घर वाले भी निश्चिन्त हो गए; पर उसी समय से मुझे हाजमे में कुछ गड़बड़ी प्रतीत होने लगी और दो वर्ष बाद मैं स्वप्न दोष की बीमारी में बुरी तरह फँस गया जिसकी दवा मैं पाँच वर्ष तक कभी यहाँ कभी वहाँ कराता रहा। लाभ होना तो दूर मैं बहुत कमजोर हो गया और अण्डकोष भी बढ़ गया। लोगों ने मुझे प्रसिद्ध मारवाड़ी रिलीफ सुसाइटी के औषधालय में जाने की राय दी। वहाँ एक वैद्य जी ने मेरी नाड़ी पकड़ी और स्वर्णभस्म खिलाना शुरू किया। महीनों दवा की पर लाभ कुछ यहाँ भी न दिखाई दिया बल्कि कमजोरी और बढ़ गई। सिर में चक्कर आने लगे और अकेले रास्ता चलना भी कठिन हो गया। इसके बाद मैंने एक बायोकेमिक डाक्टर से दवा कराई। उनकी चिकित्सा के दौरान में एक नई व्याधि शुरू हो गई। नीचे के दाँत और जीभ के बीच में एक गाँठ पैदा हो गई जिसकी चिकित्सा मैंने मेडिकल कालेज में करानी तै की। वहाँ खून की जाँच हुई। रोग फाइलेरिया बताया गया। महीनों इन्जेक्शन चले पर लाभ कुछ भी न हुआ। हाँ कुनैन, स्वर्ण भस्म और इन्जेक्शनों द्वारा शरीर में गरमी इतनी बढ़ गई कि माघ महीने में भी चादर ओढ़ कर सोना मुश्किल हो गया। सारा शरीर हर समय जलता रहता।

कलकत्ते के डाक्टरों से निराश होकर मैं देश (राजपूताना) गया वहाँ पं० बलदेव जी मिश्र से दवा कराई। उनकी दवा से कुछ लाभ हुआ परन्तु बीमारी जड़ से नहीं गई और मुँह में जो गाँठ हो गई थी वह बढ़ती गई और इतनी बढ़ी कि मुँह खोलने और बन्द करने में भी तकलीफ होने लगी। वापस कलकत्ता आकर फिर कई डाक्टरों से दवा कराई जिसमें करीब एक हजार रुपया खर्च हो गया पर बीमारी से मुक्ति नहीं मिली। जिस किसी डाक्टर के पास जाता वह इन्जेक्शन और आपरेशन के सिवा दूसरी बात नहीं करता। सब तरफ मुझे निराशा ही निराशा दिखाई देने लगी।

इसी समय मेरे एक भाई ने प्राकृतिक चिकित्सा कराने की राय दी। वे गठिया से बहुत दिनों से पीड़ित थे और डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह के प्राकृतिक तरीके के इलाज में रह कर आश्चर्यजनक रूप से थोड़े समय में अच्छे हो गए थे। मैं डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह से इलाज कराने इलाहाबाद न जा सकता था और न उन्हें कलकत्ते ही बुला सकता था। मैं उनके शिष्य श्री फतहचन्द जी ढड्ढा से उनके चिकित्सालय नम्बर ३१ बड़तल्ला स्ट्रीट में मिला। उन्होंने परीक्षा के बाद मेरी चिकित्सा करनी स्वीकार की। सबसे पहले उन्होंने मेरा पेट साफ करना

शुरू किया। इसके लिए मिट्टी की पट्टी और एनिमा का प्रयोग होने लगा। चिकित्सा के बतौर पेड़ू-नहान शुरू कराया। भोजन में अन्न उन्होंने पहले बिल्कुल बन्द करा दिया। पहले दिन उपवास रहा, दूसरे दिन रसाहार। तीसरे दिन से सवेरे शाम फल और दोपहर को कच्ची सब्जियों का सलाद खाने को मिलने लगा। मुँह में जो गाँठ थी उसपर मिट्टी की पट्टी और बाद में भाप दी जाने लगी।

इस भोजन और उपचार से दो सप्ताह के अन्दर ही शरीर में जो जलन रहती थी वह बहुत कुछ शान्त होगई और मुँह में की गाँठ, पूरी महीना बीतते न बीतते गायब हो गई। भूख इतनी बढ़ गई कि भोजन पहले से दूना करने लगा।

इस चिकित्सा के साथ आसन और प्राणायाम भी कराया जाता था जिसका फल यह हुआ कि पेट बहुत नरम हो गया और ठीक साफ रहने लगा।

मुझे जो लाभ हुआ था उससे मुझे सन्तोष था पर ढड्ढा जी कहते थे जब तक कोई उभाड़ न हो तब तक लाभ को स्थाई न समझना चाहिए। और इन्हीं के कहने से, चिकित्सा क्रम बन्द करने की इच्छा रहने पर भी मैं उसे चलाए ही जा रहा था। चिकित्सा चलाते करीब दो महीने हुए होंगे कि एक दिन मुझे जोरों का मलेरिया ज्वर चढ़ा और वह १०५ डिगरी तक पहुँचा। मैं तो बहुत डरा पर ढड्ढा जी ने मुझे हिम्मत बँधाई और मैं इस ज्वर में भी मिट्टी की पट्टी, पेड़ू-नहान और एनीमा चलाता गया। सारे बदन की गीली पट्टी का भी प्रयोग हुआ पर भोजन सर्वथा बन्द कर दिया गया। प्यास लगने पर केवल सादा जल दिया जाता और बुखार कम होने पर थोड़ा सन्तरे का रस पानी मिलाकर। आठ दिन के अन्दर ही बुखार मुझे छोड़ कर भाग गया और मैं अपने को अधिक स्वस्थ और सजीव अनुभव करने लगा। ताकत इतनी जल्दी बढ़ी कि मैं तीसरे दिन सुबह दो मील टहल भी आया।

ढाई महीने की चिकित्सा से मुझे पूरा निश्चय हो गया कि आजकल जो इन्जेक्शनों द्वारा चिकित्सा की जाती है एवं भस्म खिलाए जाते हैं वे बहुत ही घातक हैं। वह चिकित्सा नहीं है, पैसा पैदा करने का एक नया तरीका है और पैसे वाले इन प्रणालियों को धर्मादा दवाखाना खोलकर और भी प्रोत्साहन देते हैं। वे नहीं जानते कि वे धर्म नहीं कर रहे हैं बल्कि देश के स्वास्थ्य पर कुठाराघात कर रहे हैं। इन्जेक्शनों से एक रोग दबता है तो दूसरा उससे भी बढ़कर और विचित्र निकल आता है जिसका गरीब आदमी कुछ इलाज नहीं कर सकता और मृत्यु के मुख में पहुँच जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा शरीर को शुद्ध करती है और जीवन शक्ति को बढ़ाती है। आर्थिक हिसाब से भी अनेक दृष्टियों से सुलभ है और पुराने से पुराने रोगों को भी शरीर के बाहर निकाल फेंकने की शक्ति रखती है।

क्या आपको भी कुछ कहना है ?

क्या आपने जीवन सखा के सिद्धान्तों के अनुसार खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने का अनुभव किया है ? यदि हाँ तो उसे दूसरों की सहायता, तथा मार्ग-प्रदर्शन के लिए लिख भेजें। उन्हें हम जीवन सखा के इस स्तम्भ में सहर्ष स्थान देंगे। यदि सम्भव हो सके तो यह चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व और बाद का अपना फ़ोटो भी भेजें। आप का अनुभव दूसरों के बड़े काम का हो सकता है। अपने अनुभव निष्पक्ष भाव से तथा सच्चाई के साथ लिखें। यदि आपने किसी अन्य व्यक्ति को इस चिकित्सा-प्रणाली के द्वारा लाभ पहुँचाया हो तो उसके सम्बन्ध में भी अपने अनुभव भेज सकते हैं।—सम्पादक

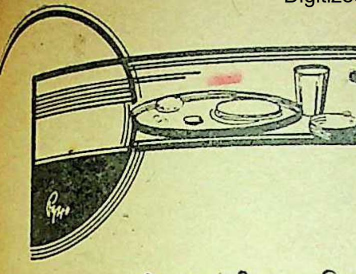

भोजन-विज्ञान

मिठाई और स्वास्थ्य

प्रो० भवानीप्रसाद जी, प्राकृतिक स्वास्थ्यशास्त्रोपाध्याय, कांगड़ीगुरुकुल-विश्वविद्यालय, हरिद्वार

"मनुष्य मननशील प्राणी होते हुए भी इस बात के सोच-विचार का कष्ट नहीं उठाता है कि वह जो कुछ खाता है, उसका उद्देश्य स्वाद मनाने और रसना की तृप्ति के अतिरिक्त कुछ और भी है। यदि मनुष्य का आहार उसके स्वास्थ्य का पोषक और स्वास्थ्यवर्धक नहीं है तो उसके खाने से पाचनसंस्थान पर पाचनक्रिया का वृथा भार डालने के सिवाय और कुछ फल नहीं है।"

आजकल सभ्य संसार में श्वेतशर्करा (निखरी हुई खाँड) की खपत इतनी बढ़ रही है कि उसके परिमाण का अनुमान लगाना अति कठिन है। नगरों और कसबों में मिठाइयों की दूकानों की बढ़ोत्तरी बर्साती मेंढकों के समान बाजारों और गली-कूचों तक में तीव्र गति से हो रही है। आबालवनिता सब मिठाई के लिए लालायित रहते हैं। माँ बाप अपने नयनों के तारे बालकों को रात दिन मिठाई खिलाने में ही अपने लाड़ का परिचय देते हैं। भारत में पूर्व ही मिठाइयों के नाना प्रकारों की कुछ कमी न थी. अब योरप के देशों से भी रंग बिरंगी विविध प्रकार की मिठाइयाँ आने लगी हैं और बालक बड़े चाव से उनको लेकर खाते फिरते हैं। मनुष्य मननशील प्राणी होते हुए भी इस बात के सोच-विचार का कष्ट नहीं उठाता है कि वह जो कुछ खाता है, उसका उद्देश्य स्वाद मनाने और रसना की तृप्ति के अतिरिक्त कुछ और भी है। यदि मनुष्य का आहार उसके शरीर का पोषक और स्वास्थ्यवर्धक नहीं है, तो उसके खाने से पाचनसंस्थान पर पाचनक्रिया का वृथा भार डालने के सिवाय और कुछ फल नहीं है।

पाश्चात्य देशों के आहारशास्त्री आहार के विविध द्रव्यों के परीक्षण करके यह सिद्ध करते रहते हैं कि मनुष्य-देह के लिए कौन से आहार आवश्यक और उपयोगी हैं और कौन कौन आहार निरर्थक और हानिकारक हैं। अमरीका की मिचिगन युनिवर्सिटी के दंतविशेषज्ञ डा० फिलिप ने अपने एक लेख में दाँतों पर मिठाई के प्रभाव विषयक अपने अनुभव का वर्णन किया है। उक्त अनुभव उन्होंने एक स्कूल के विद्यार्थी बालकों पर किया था। उन बालकों को अच्छा आहार नहीं मिलता था और वे कई भोज्यौजों (विटामिनों) से भी वंचित रहते थे। फिर भी उनके दाँत बहुत नहीं बिगड़े थे और उनमें से अधिकांश बालकों को कोई दाँतों का रोग न था। एक बात यह उल्लेखनीय है कि उन बालकों ने अभी मिठाइयाँ नहीं खाई थीं। उन बालकों में से कुछ को चुनकर उनको मिठाइयाँ खिलाई गईं। उनके प्रतिदिन के आहार में मिठाई भी सम्मिलित कर दी गई। इस अनुभव का परिणाम यह हुआ कि उन बालकों के दाँत बिगड़ने लगे। पाँचवें मास के अन्त में उनके दाँतों में गढ़े (Cavity) पड़ गए। फिर उनके आहार में से मिठाई निकाल दी गई, तो दाँतों के उक्त गढ़े भरने लगे।

आजकल जो सभ्य जनों में दंतपूयमेह अर्थात् पायरिया रोग इतनी बहुतायत से फैला हुआ है, उसका कारण मिठाइयों के आहार की प्रचुरता ही है।

आजकल जनता जो दूध के बने हुए खोया आदि श्वेतशर्करा और श्वेतसार (निशास्ता) के बने मिठाई आदि आहार अधिकता से खाती है, उससे मनुष्यों के देह में असाधारण अम्लता बढ़ जाती है। इस अम्लता के कारण देह को अधिक ख़टिक (चूने) वा किन्हीं दूसरे क्षार द्रव्यों की आवश्यकता होती है, क्योंकि चूना और

क्षार अम्लता के प्रभाव को नष्ट कर देते हैं अर्थात् रसायन-शास्त्र की परिभाषा में उनको न्यूट्रलाइज अर्थात् निरर्थक कर देते हैं। यह चूना और क्षारद्रव्य मनुष्य के मसूड़ों में एकत्रित रहता है। वहीं से खिचकर यह उक्त बढ़ी हुई अम्लता के निरर्थकीकरण के लिए प्रयुक्त होता है। मसूड़ों और दाँतों में से चूने और क्षारद्रव्य का अपसारण वा न्यूनता ही दंतपूयमेह रोग का मूल कारण है। इससे आप भली प्रकार समझ सकते हैं कि यदि मिठाइयों का प्रचलित प्रयोग न किया जाय तो दंतपूयमेह रोग (पायरिया) का प्रसार ही बन्द हो जाय। पुराने काल में जब वर्तमान सभ्यता न फैली थी, जनता मिठाइयाँ न खाती थी। उस समय दंतपूयमेह रोग को भी साधारण लोग जानते तक न थे। यह रोग वर्तमान सभ्यता की ही देन है।

आहार के भले प्रकार न चबाने से दाँत निर्बल पड़ जाते हैं। हमारे देह के सब अंगों के समान दाँतों को भी व्यायाम की आवश्यकता है। इसलिए हमको ऐसे कठोर पदार्थ खाने चाहिए, जिनके चर्वण से दाँतों का व्यायाम भले प्रकार हो सके।

प्रकृति ने मनुष्य को शाक और फल खाने वाला जंतु बनाया है। मनुष्य के दाढ़, दाँत बन्दर आदि शाक-फलाहारी जंतुओं से ही मिलते जुलते हैं। उसके पाचन-संस्थान की आँतें आदि अंग भी उन्हीं के समान हैं। उक्त जन्तु शाक और फलों को छोड़कर कभी मांस आदि अप्राकृतिक आहारों को नहीं खाते हैं। मनुष्य मननशील होने के कारण सब जंतुओं से श्रेष्ठ होकर भी प्राकृतिक पथ से विचलित होकर मांस आदि अप्राकृतिक आहारों का सेवन करता है और अपनी मननशीलता का दुरुपयोग प्राकृतिक पदार्थों को विकृत करके उनसे नाना प्रकार के स्वास्थ्यविनाशक अप्राकृतिक आहार बनाने में करता है। मिठाइयाँ भी इन्हीं अप्राकृतिक द्रव्यों की श्रेणी में हैं। मनुष्य का प्राकृतिक आहार तो गाजर, मूली आदि शाक और सेब, अमरूद आदि फल ही हैं। उनके आहार से उसके दाँतों को व्यायाम का अवसर प्राप्त होकर उसके शरीर का प्राकृतिक पोषण पूर्णरूप से हो सकता है। मिठाइयाँ तो उसके स्वास्थ्य को चौपट ही करने वाली हैं इसलिए हमको चाहिए कि हम अपने बिगड़े हुए स्वाद के वश में न पड़ कर मिठाइयों से यथासामर्थ्य बचे रहें और अपनी प्यारी सन्तानों को भी इस स्वास्थ्यनाशक आहार से बचायें। इसमें ही हमारा कल्याण है।

* * *

भूल-सुधार

गत मार्च '४१ के अंक में पृष्ठ १५८ पर छपे चित्र के नीचे—'लेखक : वज्रासन पर' की जगह 'लेखक : पद्मासन पर' होना चाहिये। पाठक कृपया सुधार लें।—सं०

सूचना

पाठकों को चाहिये कि किसी प्रकार का भी पत्र-व्यवहार करते समय अपना ग्राहक-नम्बर अवश्य लिखें। अन्यथा पत्रोत्तर में बहुत देरी हो सकती है। ग्राहक-नम्बर प्रत्येक मास भेजे जाने वाले 'जीवन-सखा' के रैपर पर लिखे ग्राहक के नाम-पते के पहले लिखा रहता है।

मैनेजर

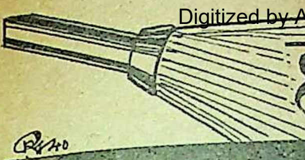

हमारी नज़र में

नेचर क्योर (अंग्रेजी)—ले० स्वर्गीय एच० लिन्डल्हार, एम० डी० । प्रकाशक डाक्टर एम० बी० गाडबोले, पूना । मूल्य ६ रुपया ।

यदि ऋषि टालस्टाय महात्मा गांधी के गुरु कहे जा सकते हैं तो डा० लिन्डल्हार को भारत के अधिकतर प्राकृतिक चिकित्सकों के गुरु कहना अनुचित न होगा । डा० लिन्डल्हार अपने समय में अमेरिका के माने हुए चोटी के एलोपैथिक डाक्टर थे और दुनिया में मशहूर वियना स्थित वेडनवीयर अस्पताल के होम फिजिशियन थे। आपने जो धन एवं मान डाक्टरी चिकित्सा द्वारा अर्जन किया था वह आपके अनेक सहयोगियों के ईर्षा का कारण था पर धीरे धीरे डाक्टर लिन्डल्हार स्वयं अपनी प्रैक्टिस से असन्तुष्ट होते गए । द्रव्य अर्जन में कमी हो गई हो इसलिए नहीं बल्कि अपनी चिकित्सा के फलों को देखकर । वे देखते कि एक रोग से रोगी अच्छा होकर फिर दूसरे रोग में फँस जाता है—यह परिणाम अन्त में जाकर एलोपैथी से उनकी विरक्ति का कारण बना और वे प्राकृतिक चिकित्सा की ओर आकृष्ट हुए । उसके सिद्धान्त आपको बहुत जँचे और आपने उनकी पूरी तौर से आजमाइश की । जो सैकड़ों रोगी आपसे और एलोपैथी से निराश होकर चले गए थे उन्हें डाक्टर लिन्डल्हार ने पुनः बुलाकर प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा अच्छा किया और अपने अनुभवों के आधार पर जो पुस्तक लिखी उसी पुस्तक की आलोच्य पुस्तक संक्षिप्त रूप है ।

अब तक प्राकृतिक चिकित्सा ऐसों के हाथ में थी जिन्हें विज्ञान से अधिक परिचय न था । अधिकतर बातें वे अनुभव और प्रकृति-निरीक्षण द्वारा लिखते थे । डाक्टर लिन्डल्हार ने प्राकृतिक चिकित्सकों के अनुभव-जन्य सिद्धान्तों को विज्ञान की दृढ़ नींव पर खड़ा किया और औषधविज्ञों को ललकारने वाली एक ग्रन्थमाला लिखी । जिसमें प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त, उनका विधिवत प्रयोग आदि सभी विषयों पर पूर्णतया प्रकाश डाला गया । दुर्भाग्य की बात है कि आपके वे ग्रन्थ अब अप्राप्य हैं पर खुशी की बात है कि उक्त ग्रन्थमाला की तमाम बातों को लेते हुए यह संक्षिप्त संस्करण किया गया । यह पुस्तक इतनी लोकप्रिय हुई कि इसके अब तक चौबीस संस्करण बिक चुके हैं । साफ छपा एवं पक्की जिल्द का पचीसवाँ सुन्दर संस्करण हमारे सामने है । पुस्तक विश्वख्याति प्राप्त कर चुकी है । प्राकृतिक चिकित्सा के प्रत्येक विद्यार्थी को इसका विधिवत अध्ययन करना चाहिए ।

प्रैक्टिकल नेचर क्योर (अंग्रेजी)—लेखक डाक्टर के० एल० शर्मा। मिलने का पता—स्वास्थ्य-ग्रन्थ-भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद। पाँचवाँ संस्करण। मूल्य ४)

डाक्टर शर्मा भारत के प्रथम प्राकृतिक चिकित्सक हैं जिन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा के विभिन्न अंगों पर प्रकाश डालने वाली पहली पुस्तक भारतीय दृष्टिकोण से लिखी है । प्राकृतिक-चिकित्सा पर लिखने वाले लेखक लगभग सभी विदेशी हैं जहाँ का जलवायु, भोजन, रहन-सहन सभी भारत से भिन्न हैं। अतः उनके प्रयोगों को काम में लाते समय प्राकृतिक-चिकित्सा के प्रत्येक विद्यार्थी को बड़ी कठिनाई होती थी। शर्मा जी द्वारा लिखी गई इस पुस्तक ने यह कठिनाई हल कर दी।

शर्मा जी स्वयं रोगी रहे हैं। हर चिकित्सा पद्धति से निराश होकर आप प्राकृतिक चिकित्सा की शरण गए और उसी के सहारे आपने अपने को अच्छा किया । यहीं से आपका प्राकृतिक चिकित्सा से परिचय हुआ । अनुभव और अध्ययन दोनों होने के कारण आपकी पुस्तक बहुत ही काम की बन पड़ी है क्योंकि प्रयोग में पग पग पर नित्य कठिनाई होने वाली बातों पर पूर्ण प्रकाश डाला गया है । आपने कई तरह के नहान एवं गीली पट्टी के

प्रयोगों का आविष्कार भी किया है जो बड़े काम के हैं।

इस पुस्तक को पढ़कर अपनी चिकित्सा बड़े मजे में घर पर चलाई जा सकती है।

योर डाइट इन हेल्थ एन्ड डिज़ीज (अंग्रेज़ी)—लेखक, हैरीबेन्जामिन। प्रकाशक जूठाभाई अयारशी शा, हरिजन आश्रम, साबरमती। पृष्ठ संख्या दो सौ। छपाई सफाई साफ। खद्दर की बँधी जिल्द। मूल्य ।॥) बारह आना।

प्रस्तुत पुस्तक में भोजन कैसे पचता है? हमें रोज क्या और कितना करना चाहिए? स्वास्थ्यकर भोजन क्या है? किन खाद्यपदार्थों का मेल हो सकता है? बच्चों का भोजन कैसा हो? आदि प्रश्नों का उत्तर बड़ी सुन्दरता एवं तर्कशीलता पूर्वक दिया गया है। अन्त में साधारण रोगों को दूर करने की सरल चिकित्सा भी दी गई है।

प्रस्तुत पुस्तक के इङ्गलैण्ड में पाँच संस्करण हो चुके हैं और मूल्य भी साढ़े तीन शिलिङ्ग अर्थात् ढाई रुपया है। लेखक से इजाजत लेकर इस उपयोगी पुस्तक को श्री जूठाभाई ने प्रकाशित किया है और मूल्य लागत मात्र ही रखा है। पुस्तक की एक कापी प्रत्येक घर में रहनी चाहिए और दर्जनों कापी खरीद कर मित्रों को उपहार में देनी चाहिए।

वि० दा० मोदी

(पृष्ठ १८७ का शेषांश)

है उसी प्रकार फोड़े के भी सम्बन्ध में दो एक उपवास कर जाने तथा सभी प्रकार के गरिष्ट भोजन ग्रहण करना बन्द कर देने से लाभ पहुँचता है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, भाप और मिट्टी की शीतल पट्टी के उपयोग से बड़ी आसानी और सहूलियत के साथ फोड़ा पक जाता है। और इसी भाप और मिट्टी और शीतल जल की सहायता से फोड़ा फूट कर जल्द आराम भी हो जाता है।

इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि रोगी को सुबह शाम पाखाना साफ हो जाय और पेशाब में कोई दिक्कत न होती हो। फोड़े की हालत में अन्न से तिगुनी मात्रा में सब्जी और फल खाना आवश्यक है। अन्न के स्थान पर रसदार फल का सेवन बहुत अच्छा होगा। इस उपचार के द्वारा आपको साधारण फोड़ों के सम्बन्ध में प्रायः कोई परेशानी या दिक्कत न उठानी पड़ेगी। एलोपैथिक डाक्टर लोग घाव को भरने के लिए जो दवा देते हैं वह भी आपत्ति-जनक है। घाव के भरने के लिए कोई विशेष ध्यान रखने की जरूरत नहीं। क्योंकि मवाद के निकल जाने के बाद फोड़ा अपने आप ही सूख जायगा। पूरी तौर से मवाद निकल जाने के पहले ही आइडोफार्म, टिंचर आयोडीन अथवा कारबोलिक अथवा बोरिक ऐसिड से घाव को सुखा देने पर कुछ न कुछ मवाद उसमें बच रहेगा जिससे वहाँ के अवयवों को और भी नुकसान उठाना पड़ेगा।

आयुर्वेदिक वैद्य लोग फोड़े को सुखाने के लिए जो गन्धक तथा इससे बनी दवाएँ देते हैं वे भी हानिकारक हैं। इसलिए फोड़े के सम्बन्ध में डाक्टर या वैद्य की सहायता लेने की कोई जरूरत नहीं है।

असाधारण फोड़े

असाधारण फोड़े की हालत में रोगी को केवल फल तथा कच्ची या उबाली हुई शाक-भाजी पर ही रखना चाहिए। लुईकुने द्वारा बताई गई विधि के अनुसार रोगी को पेडू-स्नान तथा मेहन-स्नान दिन में दो या तीन बार १० या १५ मिनट तक कराने से बहुत लाभ पहुँचेगा। संध्या समय सूर्य की रोशनी में शरीर से पसीना निकलने देने से घाव के जल्द अच्छा होने में सहूलियत होगी और रोगी का कष्ट भी बहुत कुछ कम हो जायगा।

ऊपर बताई गई बातों से आप यह आसानी के साथ समझ सकते हैं कि मल को शरीर से बाहर निकालने के सम्बन्ध में फोड़ा न केवल एक अनिवार्य प्रक्रिया है बल्कि यह निदान सम्बन्धी एक आवश्यकता भी है जो कि स्वास्थ्य ठीक रखने के सम्बन्ध में बहुत ही लाभदायक है।

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और अपने प्रश्न जहाँ तक हो सके संक्षेप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन अवश्य आना चाहिए जो २०४ पृष्ठ पर छपा है। महीने की आठ तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का ही उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा।--सं०

प्रश्न--मुझे गठिया का रोग है। मैं जीवन-सखा में बताए जाने वाले नियमों के अनुसार उसकी चिकित्सा करना चाहता हूँ। पर मैं एनीमा लेने से बहुत घबराता हूँ। लगता है मैं एनीमा लेने लगूँ तो कभी भी ठीक से ले नहीं पाऊँगा।

--जयपालसिंह, जम्मू

उत्तर--एनीमा लेने में जरा भी घबराने की जरूरत नहीं है। अब तो ऐसे ऐसे एनीमा के यन्त्र चले हैं कि उसमें कुछ करना ही नहीं पड़ता। पर डेढ़-दो रुपए में मिलने वाले साधारण यन्त्र से भी पूरी तरह काम लिया जा सकता है। एनीमा के बर्तन में शरीर-ताप के इतना गरम पानी भरना चाहिए और उसे एक दीवार में जमीन से चार फीट की ऊँचाई पर टाँग देना चाहिए। अब पैरों को दीवार की ओर करके जमीन पर सीधे लेट जाना चाहिए। अच्छा हो कि किसी खाट पर या तख्ते पर लेटा जाय और उसके पैताने के पायों के नीचे एक एक ईंट रखकर उन्हें ऊँचा कर दिया जाय। अब रबर की नली के अन्त में लगी लकड़ी की नली को चिकनाई लगा कर गुदा द्वार के अन्दर रख देना चाहिए और पेंच को धीरे से घुमा देना चाहिए। पानी जाने लगेगा। अब पेट पर धीरे धीरे हाथ फेरिए। पानी पूरा चढ़ जाने पर पाँच से दस मिनट तक रुकना चाहिए और फिर पाखाने जाना चाहिए। पानी चढ़ते समय पेट में ऐंठन-सी होने लगे तो कुछ देर के लिए पानी जाना रोककर फिर शुरू करना चाहिए। पानी पेट में चढ़ाया जाय इसके पहले नली से कुछ पानी गिराकर उसके अन्दर की हवा निकाल देना चाहिए। वरना हवा पेट में जायगी तो दर्द पैदा करेगी और पानी भी ठीक से अन्दर न जा सकेगा।

पानी डेढ़-दो सेर तक चढ़ा सकते हैं।

प्रश्न--मेरी उम्र तेईस वर्ष की है और वजन केवल एक मन सात सेर। मुझे एक मन बीस सेर का तो होना ही चाहिए। मैं सब उपाय कर चुका पर किसी प्रकार वजन न बढ़ा। मुझे कोई रोग भी नहीं है। मैं क्यों नहीं तगड़ा बनता? आप कोई उपाय लिखिए और मैं अब तक जो मोटा न हो सका उसका कारण भी कृपा करं बताइए।

--मलखानसिंह, लायलपुर

उत्तर--मोटे होने के लिए आप पहले दो दिन का उपवास कीजिए। एक दुबले आदमी को उपवास बताया जा रहा है यह सुन कर लोगों को ताज्जुब होगा पर अनेक रोगियों पर किए अनुभवों से उपवास की आवश्यकता एवं उपयुक्तता साबित हो चुकी है। दो दिन के उपवास के बाद एक दिन केवल फलों का रस पीकर रहिए। उपवास और रसाहार के दिनों में एनीमा नित्य अवश्य लीजिए। रसाहार के बाद आप कुछ दिन क्या कुछ सप्ताह केवल गाय का कच्चा दूध पीकर रह जाइए।

दूध के कल्प की पूरी विधि जीवन-सखा में प्रकाशित हो चुकी है पर मैं वह आपके लिए यहाँ संक्षेप में बताता हूँ।

पहले दिन दो-दो घंटे पर एक-एक पाव दूध पीजिए, दूसरे दिन डेढ़-डेढ़ घंटे पर और तीसरे दिन घंटे-घंटे पर चौथे दिन से पचपन-पचपन मिनट पर। और इसी प्रकार नित्य दूध पीने के समय में पाँच-पाँच मिनट का समय कम करते हुए आप आध-आध घंटे पर दूध पीने लग जाइए। दूध सवेरे सात-साढ़े सात बजे से शाम को सात-आठ बजे तक पीया जायगा। और इस प्रकार आप नित्य ६-७ सेर दूध पीवेंगे।

दूध सवेरे से शाम तक कच्चा एवं सादा ही पीया जायगा। सवेरे लिया हुआ दूध काँच के वर्तन में, उसका मुँह पतले कपड़े से ढक कर पानी भरे मिट्टी के नाँद में रखा रहेगा। यह इसलिए कि दूध खट्टा होकर खराब न हो जाय। पर जाड़े के दिनों में इसकी आवश्यकता नहीं होती।

दूध-कल्प के दिनों में जहाँ तक हो सके आराम कीजिए।—पूरा आराम। हमेशा लेटे रहिए और बन सके तो कम पढ़िए और कम बोलिए भी।

दूध पीते समय किसी-किसी को कब्ज होता है और किसी-किसी को दस्त आते हैं। कब्ज हो तो एनीमा लेना चाहिए और दस्त आने लगें तो दिन में पाँच-सात बार दूध के साथ एक-एक खजूर खाना चाहिए।

नित्य सवेरे ९-१० बजे स्नान कीजिए। पर स्नान के पहले पन्द्रह-बीस मिनट तक धूप में लेटे रहिए। धूप में लेटे लेटे ही दूध पीया जायगा। दूध पीने का क्रम दिन में यदि नींद आ जाय तभी बन्द होगा वर्ना चलता रहेगा। नींद आ जाय तो उठते ही फिर दूध पीना आरम्भ कीजिए और शाम को देर तक पीकर बीच म दूध छूट जाने की कमी पूरी की जा सकती है। ऐसा न कीजिए कि आध घंटे के बदले पच्चीस या बीस मिनट पर दूध पीना शुरू कर कमी को पूरी करने की कोशिश करें।

दूध पीने का यह क्रम तोड़ने के लिए तीन-चार दिन तक दोपहर के एक-दो बजे तक पूर्ववत ही दूध पीया जायगा और शाम को सन्तरे-सा रसदार फल खाया जायगा। दूसरे दिन सेब नाशपाती सा कोई ठोस फल और तीसरे दिन पकी सब्जी और एक फुलका। फिर सवेरे, दोपहर, शाम को साधारण भोजन करने लग जाइए।

आशा है इस विधि से आपका वजन महीने-सवा महीने में काफी बढ़ जायगा।

आपके दुबले रहने का कारण एक यह हो सकता है कि मोटे होने की आशा में आप ज्यादा खाते हों जो बिना पचा ही बाहर निकल जाता हो, या आप भोजन खूब चबा-चबा कर न करते हों। आगे से भूख लगने पर ही भोजन करें। आप यह भी जान लें कि सभी बहुत मोटे नहीं हो सकते। कुछ लोग प्रकृत्या मोटे और कुछ लोग दुबले होते हैं।

प्रश्न—मुझे चिन्ता लगी रहती है कि कहीं मैं बीमार न पड़ जाऊँ और रात को इसी चिन्ता के कारण कभी कभी मेरी नींद उचट जाती है और फिर रात भर नहीं आती। भोजन के बाद मेरा पेट भारी हो जाता है और मुझे डर है कि कहीं मुझे आपरेशन न कराना पड़े?

—भोलानाथ, गोंदिया

उत्तर—आपके पाचन की गड़बड़ी स्नायु दौर्बल्य का कारण है। आपका व्यर्थ का भय पाचन-रसों को अव्यवस्थित कर देता है जिससे वायु पैदा होती है। भोजन के बाद पेट का भारीपन इसी वायु के कारण प्रतीत होता है। यह रोग नहीं रोग का लक्षणमात्र है। अपने भोजन में सुधार कीजिए; अधिकतर हलकी चीजें खाइए। कब्ज न होने दीजिए। नित्य कसरत कीजिए। सोते समय शरीर को ढीला और विचारों को शान्त कीजिए और पूर्ण विश्वास के साथ कहिए 'मैं स्वस्थ हूँ, मुझे खूब अच्छी नींद आएगी और सवेरे मैं तरोताजा होकर उठूँगा।' इस प्रकार बनाए गए अपने नव चित्र को विचार की आँखों से देखिए और उसपर विश्वास कीजिए।

—वि० दा० मोदी

सिरीज़ का प्रकाशन पहली जनवरी से आरम्भ

हमारी प्रथम योजना १०० पुस्तकें प्रतिवर्ष के हिसाब से ५ वर्ष में ५०० पुस्तकें निकालने की है। ये पुस्तकें सभी मुख्य-मुख्य विषयों पर होंगी और इनसे एक सुन्दर

घरेलू-पुस्तकालय

बन जायगा। प्रत्येक पुस्तक की पृष्ठ-संख्या २००-२५०, गेट-अप सुन्दर और मूल्य आठ आना होगा।

ग्राहक बनने के नियम

प्रत्येक पाठक (क) सिरीज़ की कुल पुस्तकों के लिए, (ख) कुछ विभागों की कुल पुस्तकों के लिए या (ग) चुनी हुई किन्हीं २० पुस्तकों के लिए ग्राहक बन सकता है।

पेशगी चंदा १०) है।

२० पुस्तकें मिल जाने के बाद यह फिर से जमा होगा। पोस्टेज-पैकिंग माफ़ रहेगा। चुनने के लिए पूरी पुस्तकों की सूची फ़ार्म भर कर आने पर भेज दी जायगी।

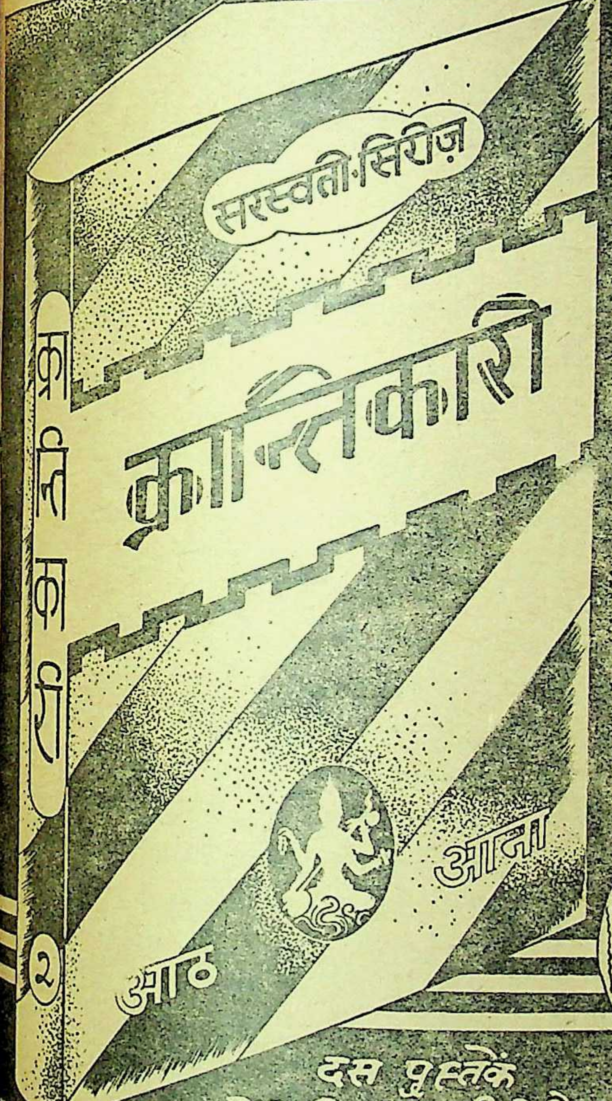

दस पुस्तकें पहली जनवरी को तैयार

निम्नलिखित १० पुस्तकें पहली जनवरी को तैयार हो जायँगी।

१ दैनिक जीवन और मनोविज्ञान
२ क्रान्तिकारी ३ समरक़ंद की सुन्दरी
४ चक्रभेद ५ रूसी कहानी-संग्रह ६ सूर-संदर्भ ७ रामकृष्ण चरितामृत ८ आधुनिक जापान ९ पृथ्वी का इतिहास
१० मेरा संघर्ष (हिटलर)

५०० पुस्तकें निम्न प्रकार से १० विभागों में निकलेंगीं—

विचारधारा	५०	विश्व उपन्यास	५०	आधुनिक उपन्यास और नाटक	५०
कहानी-संग्रह	५०	रहस्य-रोमांच	१००	ऐतिहासिक विचित्र कथा	५०
विज्ञान	३०	जीवनचरित्र	२०	हिन्दी-साहित्य	६०
		धर्मग्रन्थ	४०		

सरस्वती-सिरीज़, इंडियन प्रेस, लि॰ प्रयाग

मेरा नाम पूरी सिरीज़ के / विभाग के / २० पुस्तकों के ग्राहकों में लिख लीजिए।

चन्दा वी० पी० भेजकर वसूल कर लीजिए। / मनीआर्डर से भेज रहा हूँ।

नाम ____________________

पता ____________________

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है ।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है ।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है ।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना कार्यालय को दे देनी चाहिए ।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए । उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है ।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं ।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है ।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

जीवन-मधु

शुद्ध शहद के लिए अधिक परीशान होने की जरूरत नहीं, सीधे हमें लिखिए ।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=)

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह,
८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

दीदी

स्त्रियों और लड़कियों के लिए सुन्दर, सचित्र मासिक पत्रिका । सम्पादक—श्रीनाथसिंह और पाँच प्रमुख महिलाएँ। वार्षिक मूल्य सिर्फ २); नमूना मुफ़्त।

जो देखता है वही कहता है कि ऐसी पत्रिका की बड़ी जरूरत थी। दिसम्बर, जनवरी के अङ्क समाप्त हो गये । नये ग्राहक फरवरी से बनाये ज़ा रहे हैं।

पता—**प्रेमलतादेवी संचालिका 'दीदी',**
कटरा, इलाहाबाद

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें खरीदिए

सन् १९३६ (एक अंक नहीं है) मूल्य २।)
सन् १९३७ (एक अंक नहीं है) मूल्य २।)
सन् १९३८ (दो अंक नहीं हैं) मूल्य २)
सन् १९३९ (एक अंक नहीं है) मूल्य २।)
सन् १९४० मूल्य ५)

जीवन सखा एक रुपए में

सार्वजनिक पुस्तकालयों को

दिल्ली निवासी श्रीमान् लक्ष्मीनारायणजी गाडोदिया ने हमें डेढ़ सौ रुपया उन सार्वजनिक पुस्तकालयों के सहायतार्थ भेजा है जो जीवन सखा मँगाना चाहते हैं।

आपकी इस सहायता से हमने पचहत्तर पुस्तकालयों को साल भर तक जीवन-सखा एक रुपये में देना निश्चित किया है। इस रियायत से लाभ उठानेवालों को जल्दी करनी चाहिए।

केवल सार्वजनिक पुस्तकालय ही इस सूचना से लाभ उठावें। रियायती चन्दा मनीआर्डर से भेजें। वी० पी० नहीं जायगी।

मैनेजर—जीवन सखा, इलाहाबाद

THE

LIFE NATURAL

An Illustrated English Bi-monthly on Nature-Cure

To be published from the 1st of April, 1941

Editor

Dr. Sarma K. Lakshman, B.A., B.L., N.D.,

the pioneer Naturopath of India

Will contain articles from prominent Naturopaths in India and abroad.

Annual Subscription Re. 1-8-0

THE NATURE-CURE PUBLISHING HOUSE
Pudukkottai, S. I. Ry.

शरत बाबू के उपन्यास पथ के दावेदार का जवाब

दादा—कॉमरेड

शरत बाबू के वर्णन के अनुसार क्रान्तिकारी लोग स्वप्न और रहस्य के जगत में विचरने वाले भ्रान्त जीव होते हैं। निजी अनुभव की भूमिका पर विप्लव सम्पादक यशपाल का कहना है, क्रान्तिकारी तर्क, युक्ति और उद्देश्य की कसौटी को लेकर जीवन मरण का खेल खेलते हैं। वे मनुष्य होते हैं, आकर्षण, भय और स्पर्धा उनके जीवन में भी रहती है। भारत के क्रान्तकारियों के क्रियात्मक और मनोवैज्ञानिक जीवन का विश्लेषण और उनका बौद्धिक विकास और इससे आगे भविष्य की ओर संकेत इस उपन्यास की विशेषता है।

यह पुस्तक क्रान्तिकारियों के राजनैतिक, सामाजिक विचारों का दिग्दर्शन है एक रोमांचकारी कथानक के रूप में, जो पाठक के विचारों और सहानुभूति को सुस्त नहीं रहने दे सकता।

मूल्य सजिल्द १।।) डा० व्यय ≡) पृष्ठ संख्या अढ़ाई सौ से अधिक

यशपाल की सूक्ष्म और सहृदय शैली का परिचय पिंजरे की उड़ान में, विद्रूप का न्याय के संघर्ष में और विचारों की गम्भीरता का मार्क्सवाद में आपको मिल चुका है। दादा-कॉमरेड इन सबका समन्वय है परन्तु बहुत अधिक उग्ररूप में।

इलाहाबाद—हिन्दी साहित्य मंदिर चौक

मैनेजर, विप्लव कार्यालय, लखनऊ

कहानी लिखना एक कला है, परन्तु उसका एक उद्देश्य भी है। विप्लव और विप्लवीट्रेक्ट में प्रकाशित कहानियों का सदा एक दृष्टिकोण रहा है। कहानी क्या कर सकती है, इस बात को देखने के लिए आप विप्लवी ट्रेक्ट का यह नया विशेषांक पढ़िए।

विप्लवी ट्रेक्ट का (मार्च का विशेषांक)

कहानी अंक है

इस अंक की प्रत्येक कहानी प्रगतिशील कहानी साहित्य की प्रतिनिधि होगी। कहानियों के विषय-राजनैतिक क्रान्ति, सामाजिक विषमता, आर्थिक शोषण, स्त्रियों की पुकार आदि। मूल्य ।≡)॥

मैनेजर, विप्लव कार्यालय, लखनऊ

सस्ता साहित्य मण्डल

हिन्दी की एकमात्र प्रगतिशील, सार्वजनिक और लोकप्रिय प्रकाशन-संस्था है उसके १४ वर्षों का कार्य ही उसकी निश्चित और ठोस प्रगति का तथा लोकप्रियता का जीवित प्रमाण है

- सन १९४० के अन्त तक मण्डल ने एकसौ पैंतीस पुस्तकें प्रकाशित कीं।
- मण्डल से प्रकाशित इन पुस्तकों की पृष्ठ-संख्या इकत्तीस हज़ार एक सौ होती है।
- मण्डल से पूरे सेट का दाम एक सौ रुपया होता है।
- इन १४ वर्षों में मण्डल ने अपनी प्रकाशित पुस्तकों की चार लाख चालीस हज़ार प्रतियाँ बेची हैं।
- इन १४ वर्षों में मण्डल ने वर्ष भर में कम से कम चार हज़ार और अधिक से अधिक साठ हज़ार प्रतिवर्ष की बिक्री की है।

यह सब क्यों और कैसे हुआ ?

इसलिए कि मण्डल ने अपने लाभ की अपेक्षा पाठकों के लाभ का सदैव ध्यान रखा है।

इसलिए कि मण्डल ने हमेशा पाठकों के मन को लुभानेवाला नहीं, बल्कि दृढ़ और शुद्ध बनाने वाला साहित्य दिया है।

इसलिए कि देश के परखे हुए नेता और सेवक मण्डल का संचालन करते हैं।

इसलिए कि राष्ट्र-पुरुषों और नेताओं ने मण्डल को अपने आशीर्वाद दिये हैं।

अतः आप

निःशंक होकर अपने लिए मण्डल से समय पर और रिआयती दाम में पुस्तकें पाने के लिए

'मण्डल' और जीवन-साहित्य (मासिक पत्र) के ग्राहक बनिए

(सम्पादक : हरिभाऊ उपाध्याय)

"जीवन-साहित्य" जीवनदायी विचारों के अलावा मंडल के अन्य पुस्तकों के समाचार भी देता है

सस्ता साहित्य मण्डल, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली

इस पते से
पत्र-व्यवहार करें—

-शाखायें-

दरीबा कलाँ	अमीनुद्दौला पार्क	खजूरी बाजार
दिल्ली	लखनऊ	इन्दौर

BOOKS ON HEALTH

That will Change the Course of Your Life

NATURE CURE *by* H. LINDLAHR, M.D.

"That a knowledge of the health principles mentioned in this book will materially aid the reader in his sincere efforts in regaining health and prolonging life. This work will be found most instructive, inspiring and full of practical suggestions for the attainment of complete self-development...... They will afford a scientific guide to self-treatment".

Price Rs. 6.

PRACTICAL NATURE CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D.

A book that will guide you to help yourself and others—the result of Dr. Sharma's vast study and profound experience. Nature-cure made really to suit Indian people. A most practical book, which you must possess.

Latest Enlarged Edition **Price Rs. 4.**

DRUGLESS HEALING *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D.

"Will serve not only as an introduction to the study of the philosophy of Nature-cure and its practice, but also as a book of ready reference after one has studied the subject from various sources and point of view."

Price As. 6.

YOUR DIET IN HEALTH AND DISEASE *by* HARRY BENJAMIN.

This "Home Treatment" book is a complete guide to the Dietetic and Physical treatment of Diseases. It contains chapters on Food, its Digestion, Absorption, and assimilation; How the Body works; Our Daily Food; Eating for Health not Disease, the Art of combining Foods; Feeding children; and concludes with a self-treatment Chart for all Common Ailments.

Khaddar Bound. **Pages 199** **Price As. 12.**

THE FASTING CURE *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 3.**

THE NATURE CURE OF EYE DEFECTS *by* Dr. L. KAMESVARAN, M.A., N.D. **Price As. 8.**

PRANAYAMA *by* Dr. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 2.**

To be had from:—

HEALTH BOOK DEPOT
87 Himmatganj, ALLAHABAD

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१)	रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	२।।)
(२)	सरल शरीर विज्ञान ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	१।।)
(३)	प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदारनाथ गुप्त०, एम० ए०	२)
(४)	मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले० श्रीयुत महेन्द्रनाथ पाण्डेय	।)
(५)	दूध ही अमृत है : ले० हनुमान प्रसाद गोयल	१।।)
(६)	स्वास्थ्य के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय	=)।।
(७)	शक्तिदर्शन : ले० शंकरलाल तिवारी	।।)
(८)	आनन्दमय जीवन का ह्रास और उसके कारण	।=)
(९)	क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।)
(१०)	ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द	।।।)
(११)	आदर्श-भोजन : ले० एल० एन० चौधरी	।।।)
(१२)	स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर सुकुल	१)
(१३)	कब्ज या कोष्ठबद्धता : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।-)
(१४)	हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	१)
(१५)	फलाहार फल-चिकित्सा : ले० नारायणप्रसाद अरोड़ा	१।।)
(१६)	आरोग्य साधन : ले० गांधीजी	।=)
(१७)	स्वास्थ्य-साधन : ले० स्व० रामदास गौड़	३)
(१८)	आकृति-निदान : ले० लूईकूने	१।।)
(१९)	बच्चों की रक्षा : ले० लूईकूने	।-)
(२०)	मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लुईकूने	।)
(२१)	जल-चिकित्सा (तीन भाग) : ले० राखालदास	३।।)

		Rs.	as.
(२२)	**Nature Cure** by H. Lindlahar, M.D.	6	0
(२३)	**Practical Nature Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	4	0
(२४)	**Fasting Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	3
(२५)	**Pranayama** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	2
(२६)	**The Nature Cure of Eye defects** by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D.	0	8
(२७)	**Your Diet in Health and Disease** by Harry Benjamin	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

Reg. No. A-178

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलतापूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, कब्ज, संग्रहणी, प्लुरिसी, दमा, बवासीर, निद्राभाव, आमाशय का जख्म, आँतों की खराबी, सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arteriosclerosis), रक्त-चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), उपान्त्रदाह (Appendicitis), जहरबाद (Carbuncle), गठिया, पित्ती उछलना, पेचिश, सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह (बहुमूत्र), मोटापा, दुबलापन, यक्ष्मा, कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर ग्रांड-ट्रंक-रोड पर एक आठ एकड़ के सुन्दर उपवन में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने की स्वयं प्रेरणा होती है।

नियमावली पांच पैसे का डाक-टिकट भेजकर आज ही मँगाइए। संक्रामक (Infectious) रोगों के रोगियों के लिए स्वास्थ्य-गृह में प्रबन्ध नहीं है।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHA
PUBLISHED BY SYT. BALESHWAR PRASAD SINHA, 87 HIMMATGANJ, ALLAHA

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

मई

१९४१

४ प्रे० [illegible] को प्राप्त

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह : : विट्ठलदास मोदी

कांगड़ी [illegible]

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख काग़ज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

जीवन-मधु

शुद्ध शहद के लिए अधिक परीशान होने की
जरूरत नहीं, सीधे हमें लिखिए।
शत प्रतिशत शुद्ध होने की गारंटी
मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=)

मैनेजर—**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह,**
८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

दीदी

स्त्रियों और लड़कियों के लिए सुन्दर, सचित्र मासिक पत्रिका। सम्पादक—श्रीनाथसिंह और पाँच प्रमुख महिलाएँ। वार्षिक मूल्य सिर्फ २); नमूना मुफ़्त।

जो देखता है वही कहता है कि ऐसी पत्रिका की बड़ी जरूरत थी। दिसम्बर, जनवरी के अङ्क समाप्त हो गये। नये ग्राहक फरवरी से बनाये जा रहे हैं।

पता—**प्रेमलतादेवी संचालिका 'दीदी',**
कटरा, इलाहाबाद

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें

सन् १९३६ (एक अंक नहीं है) मूल्य २॥)
सन् १९३७ (एक अंक नहीं है) मूल्य २॥)
सन् १९३८ (दो अंक नहीं हैं) मूल्य २)
सन् १९३९ (एक अंक नहीं है) मूल्य २॥)
सन् १९४० मूल्य ५)

मठा उसके गुण तथा उपयोग

मठा उपयोगी क्यों है ? क्या आपने कभी इस पर विचार किया है ? यदि नहीं तो इस पुस्तक को पढ़िए और मठा के लाभालाभ से परिचित हो कर उसके उपयोग की समुचित विधि जानिए।

पता—जीवन-सखा, इलाहाबाद

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

मई
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क ५

इस अङ्क में

विषय लेखक	पेज
१. सम्पादकीय--भोजन के पाँच नियम ..	२०२
२. यौगिक शिथिलीकरण--स्वामी कुवलयानन्द	२०३
३. पश्चिम-शीर्षासन--डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह	२०८
४. श्रीयुत जानकीशरणजी वर्मा से मेरा परिचय--श्रीयुत विट्ठलदास मोदी ..	२०९
५. तैराकी और स्वास्थ्य--मेरा अनुभव--श्रीयुत रोबिन चैटरजी	२१३
६. कुष्ठ रोग कैसे गया ?--प्रो० भवानी प्रसाद कलेजे का फोड़ा अच्छा हुआ--काशीनाथ झा 'साधक'	२१५
७. हमारे दाँत और उनका स्वास्थ्य--श्रीयुत वासुदेव शर्मा	२१७
८. प्रकृति माता का नवादेश--श्रीयुत मनोहरसिंह पँवार डाइरेक्टर, रेडिएण्ट हेल्थ सेंटर सीया गंज, इन्दौर	२२१
९. चिट्ठी-पत्री--श्रीयुत महावीरप्रसाद पोद्दार	२२२
१०. प्रश्नोत्तर--	२२४

अगले अंक में क्या रहेगा ?

१ सप्राण खाद्य
श्रीयुत गंगा सहाय

२ रंग और स्वास्थ्य
श्रीयुत गंगाप्रसाद गौड़ 'नाहर'

३ पुराने को नया
श्रीयुत जानकीशरण वर्मा

४ रोगों की एक रूपता

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

अपने विचार

भोजन के पाँच नियम

भोजन के सम्बन्ध में पाँच नियम याद रखने योग्य हैं। पहला नियम यह है कि बिना भूख के भोजन न किया जाय। इस धारणा का तो त्याग ही कर देना चाहिए कि यदि भोजन न करेंगे तो कमजोर हो जायँगे। दिन में तीन-चार बार भोजन करने या कुछ न कुछ खाने बैठ जाना शरीर के प्रति अन्याय करना है और इस अन्याय का फल भी हमें भोगना ही पड़ता है। प्रकृति मनुष्य को यूँ ही नहीं छोड़ती। उसे सजा देकर सिखाती है कि वह अपनी बुरी आदतों को सुधारे। पेट में दर्द, खटास, वायु, कलेजे में जलन एवं एक नहीं अपच के अनेक लक्षण बिना भूख के खाने से पैदा हो जाते हैं।

पूछा जा सकता है कि यह कैसे जाना जाय कि वास्तविक भूख लगी है या नहीं? उत्तर में हम आपका ध्यान 'भूख में रोटी मीठी लगती है' कहावत की ओर आकर्षित करना चाहते हैं। जब भूख नहीं होगी तो हलवा भी मीठा नहीं लगेगा। सच्ची भूख वही है जिसमें हमें बिना मिर्च मसालों का, बिना किसी छौंक-बघार का, सादा सात्विक भोजन रुचिकर एवं स्वादिष्ट प्रतीत हो और उस रूखे-सूखे भोजन को हम इतना चबाएँ कि वह मुँह में तरल होकर स्वयं पेट में चला जाय, उसे निगलने के लिए रसे-रायते अथवा पानी की जरूरत न पड़े।

दूसरा नियम भी पहले सा ही महत्त्वपूर्ण है। जो भोजन आकर्षक प्रतीत न हो, जिसे खाने में आनन्द न आए, कभी ग्रहण न किया जाय। भोजन अच्छी तरह पच सके इसके लिए आवश्यक है कि भोजन करने में आनन्द आवे और वह तृप्तिकर हो। जब भोजन स्वाद ले-ले कर किया जाता है तो मुँह और आमाशय से पाचक-रस यथेष्ट श्रवित होते हैं। किसी स्वादिष्ट भोजन का नाम ही याद आने पर लोगों का मुँह भर आता है। सच पूछिए तो ठीक यही दशा हमारी प्रत्येक भोजन आरम्भ करने के पहले होनी चाहिए। तभी भोजन का पाचन ठीक ठीक हो सकेगा और हम में उस शारीरिक और मानसिक शक्ति को पैदा कर सकेगा जिसके लिए प्रत्येक स्त्री-पुरुष लोलुप रहते हैं। यदि आपका मन किसी ऐसे भोजन की ओर जाय जो अस्वास्थ्यकर हो तो आपको उसके बजाय कोई ऐसा दूसरा भोजन ग्रहण करना चाहिए जिसमें वे ही चीजें हों जो कि उस चीज में हैं जिन पर आपका मन जाता है। उदाहरणार्थ यदि आपकी इच्छा बाजारू मिठाई पर आए तो यह आपके शरीर का संकेत हो सकता है कि उसे मीठे की जरूरत है। ऐसी हालत में आप मिठाई के बजाय शहद अथवा खजूर, किशमिश, मुनक्का-से मीठे फलों का प्रयोग कर इस आवश्यकता की पूर्ति कर सकते हैं।

भूख से ज्यादा न खाया जाय—यह तीसरा नियम है। यदि हमें स्वाभाविक भूख लगे तो अधिक खाने का खतरा ही न रहे। पर अधिकांश लोग तो वर्षों से भूख का ऐसा अनादर करते आए हैं कि उन्हें उसके आने और जाने का ज्ञान ही नहीं होता। अतः इसके लिए हमें अपनी बुद्धि से सहायता लेनी होगी। कुशल इसी में है कि हम गलती भी करें तो यही कि भूख से कम खायँ। यदि प्रत्येक ग्रास स्वाद ले-लेकर खाया जाय तो आवश्यकता से कम खाने की संभावना ही न रहेगी। 'पेट भरने के पहले ही हाथ रोक लेना दो चार ग्रास अधिक खा जाने से अच्छा है। तोला भर भी अधिक किया गया भोजन या तो हमारे शरीर में फालतू मोटापा बन कर रहेगा या अगर शरीर ने उसे बाहर निकाल भी दिया तो व्यर्थ की शक्ति खर्च होगी।

हमें भोजन करने के लिए नहीं वरन् जीने के लिए भोजन करना चाहिए। ऐसा कर हम अपनी उम्र दस से तीस वर्ष तक अधिक बढ़ा ले सकते हैं। अधिकतर रोग तो पेट में ही शुरू होते हैं और पेट ही उन्हें पालता

है। पाचन जब खराब हो जाता है तब शुद्ध खून बनता ही नहीं और उसमें अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न हो जाते हैं। फिर भी लोग यह आश्चर्य करते रहते हैं कि वे स्वस्थ क्यों नहीं हैं; उनमें से अधिकांश को यह आश्चर्य होना चाहिए कि वे जिन्दा कैसे हैं ?

केवल उतना ही भोजन ताकत देता है जो पचकर शरीर में लग जाता है। अतः आवश्यकता से अधिक भोजन करने वाले, भोजन के प्रकार में विशेष परिवर्तन किए बगैर भी यदि अपने भोजन की मात्रा तीन चौथाई कर दें तो अधिक ताकत का अनुभव करने लगेंगे, क्योंकि अधिक किए गए भोजन को निकालने में लगी ताकत काम में आने लगेगी।

केवल स्वास्थ्यकर भोजन किया जाय यह भोजन का पाँचवाँ नियम है। बहुत सी स्वास्थ्यकर समझी जाने वाली चीजें वास्तव में अस्वास्थ्यकर हैं। सफेद चीनी एवं मैदा से बने पदार्थ हमें मृत्यु की ओर घसीटते हैं। आटे से चोकर निकाल कर खाने के रिवाज के कारण आज बहुतों के दाँत खराब हो गए हैं। चोकर में ही वह सामान होता है जो दाँतों को स्वस्थ रखता है। दाँत तो हमारी जिन्दगी भर चलने चाहिए। उनमें शिकायत की अधिकाधिक बढ़ती का कारण चीनी मैदे के बने पदार्थों के प्रति हमारा प्रेम ही है।

जो भी खाया जाय खूब चबा कर खाया जाय यह भोजन का पाँचवाँ एवं अन्तिम नियम है। यदि भोजन अच्छी तरह चबाया नहीं जायगा तो वह अच्छी तरह पचेगा नहीं। चबाना भी पाचन-क्रिया का एक अंग है, इससे भोजन में लार अच्छी तरह मिल जाती है। विना चबाए ही निगल जाना, विना भूख के भोजन करने के पाप से कम नहीं है। हम अपने दाँतों से चबाने का काम न लेकर उनसे अपनी कब्र खोदने का काम लेते हैं।

आँख, कान की तरह दाँत भी हमें उपयोग के लिए ही मिले हैं। जितना ही हम उनका उपयोग करेंगे वे स्वस्थ रहेंगे और चलेंगे।

यौगिक शिथिलीकरण

स्वामी कुवलयानन्द

आज के अर्थप्रधान युग में मनुष्य की शारीरिक शक्ति का ह्रास कम, पर स्नायविक शक्ति का ह्रास बहुत अधिक होता है। इस ह्रास की पूर्ति का एक मात्र उपाय है आराम—शरीर के सारे अवयवों का शिथिलीकरण। पर इस विषय के अज्ञान के कारण ही आज लोगों में अनेकानेक रोग फैल रहे हैं। सौभाग्य का विषय है कि योग-शास्त्रों में इस विषय पर पूर्णतः प्रकाश डाला गया है। उन्हीं ग्रन्थों के आधार एवं स्वानुभव पर आश्रित लब्धप्रतिष्ठ स्वामी कुवलयानन्द जी का बम्बई रेडियो स्टेशन से पढ़ा गया यह अभिभाषण अनेक पाठकों के लिए अमृतवटी का काम देगा।—सं०

आज मैं आपको यौगिक शिथिलीकरण (Relaxation) अर्थात् उन यौगिक आसनों के विषय में, जिनके द्वारा शरीर की स्नायु-प्रणाली और मांसपेशियों का शिथिलीकरण होता है, कुछ बातें बताना चाहता हूँ। किन्तु इन आसनों के टेकनीक अथवा विशेषता के सम्बन्ध में विचार प्रकट करने तथा आधुनिक युग के मनुष्य के लिए इनकी महान उपयोगिता

बताने के पूर्व मैं यह आवश्यक समझता हूँ कि शरीर के भीतर स्नायु और मांस-प्रणालियों के कार्यों का संक्षिप्त-रूप से सिंहावलोकन करा दूँ।

स्नायुप्रणाली

पहले मैं स्नायुप्रणाली को लेता हूँ। हम देखते हैं कि हमारे समस्त कार्य शरीर के ढाँचे को ढँकने वाली मांसपेशियों के संकोचन पर निर्भर करते हैं। कूदना, दौड़ना, टहलना, फेंकना, उठना, बैठना, लिखना, बातचीत करना अथवा साँस लेना आदि जो भी हम कार्य करते हैं वह हमारे शरीर की निर्दिष्ट मांसपेशियों के संकोचन के ही द्वारा होता है। कुछ वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हमारे सोचने अथवा विचार करने की मानसिक क्रिया में भी मांसपेशियों में कुछ संकोचन होने की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार आप देखेंगे कि सम्पूर्ण जाग्रतावस्था में हमारी मांसपेशियों में बराबर संकोचन होता रहता है। संकोचन की यह क्रिया किस हद तक होती है यह हम जो कार्य करते हैं उसके प्रकार अथवा किस्म पर निर्भर है।

अब इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि मांसपेशियों के जिस संकोचन का उल्लेख ऊपर किया गया है वह स्नायुप्रणाली द्वारा नियन्त्रित होता है। यह स्नायुप्रणाली मस्तिष्क में और मेरु-दण्ड में शक्ति का सृजन करती है और तार-की-सी नाड़ियों के मार्ग से शरीर के प्रत्येक अवयव में पहुँचती है जिसमें शरीर को ढँकने वाली मांसपेशियों के अवयव भी सम्मिलित हैं। स्नायविक-शक्ति संवेग के रूप में नाड़ियों के मार्ग से संचारित होती हैं। और जब किसी मांसपेशी में प्रविष्ट हो जाती हैं तो वहाँ पर संकुचन होता है। इस संकुचन का दायरा वहाँ पर पहुँचाई गई शक्ति की मात्रा पर निर्भर करता है। इस प्रकार स्नायु-संवेग जितना प्रबल होगा उसी अनुपात से मांसपेशियों का संकुचन भी होगा। ये स्नायु-संवेग बिजली का-सा गुण रखते हैं, और यद्यपि सम्भव है हम में से अधिकांश इससे अपरिचित रहते हों, किन्तु सच बात तो यह है कि हमारे शरीर में मस्तिष्क और मेरुदण्ड से लेकर मांसपेशियों तक और फिर ज्ञानेन्द्रियों से चलकर मस्तिष्क और मेरुदण्ड तक नाड़ियों के मार्ग से विद्युतधाराएँ लगातार प्रवाहित होती रहती हैं। ये विद्युत-धाराएँ साधारण विद्युत-धारा की गति नहीं रखतीं। इनकी गति प्रति सेकेण्ड केवल ४० गज से लेकर १०० गज तक ही होती है। ये विद्युत-धाराएँ मनुष्य की चेतना में भी प्रविष्ट नहीं होतीं।

स्नायु-संवेग की विद्युत का सबसे पहले पता सन् १८४२ में लगाया गया था, लेकिन इस विद्युत की क्षीणतम धारा को व्यक्त करने के लिए यंत्र तैयार करने में वैज्ञानिकों को करीब एक शताब्दी का समय लग गया। अब डा० जैकोब्सन ने 'बेल टेलीफोन' प्रयोगशाला की सहायता से एक ऐसा यंत्र तैयार किया है जो एक 'वोल्ट' के $\frac{१}{१०,००,०००}$ अंश को भी माप सकता है। आपके लिए यह एक दिलचस्पी की बात होगी कि यह यंत्र बिजली की शक्ति का माप एक ऐसे तार से करता है जिसका व्यास केवल $\frac{१}{१०,०००}$ इंच है।

डा० जैकोब्सन तथा उन्हीं के समान अन्य कई वैज्ञानिकों द्वारा तैयार किए गए यंत्रों के द्वारा स्नायुओं के तनाव का ठीक ठीक माप किया जाना सम्भव हो गया है। आधुनिक सभ्य देशों में निवास करने वाला मनुष्य प्रति दिन के कार्यों को पूर्ण करने में अपार स्नायविक शक्ति खर्च करता है। आज कल के जीवन में कितनी अधिक स्नायविक शक्ति व्यय करने की जरूरत पड़ती है इसे समझने के लिए हमें केवल अपने कार्य में व्यस्त हुए किसी डाक्टर, वकील, व्यवसायी, राजनीतिक या अधिकारी के कार्यों का अवलोकन मात्र करने की आवश्यकता है। इन लोगों को हर रोज बहुत अधिक व्यक्तियों से निबटना होता है जिनमें से प्रत्येक अपनी एक अलग समस्या उपस्थित करता है और उसे तत्काल हल करा लेना चाहता है। उस डाक्टर, उस वकील, उस राजनीतिक या उस व्यवसायी को हर बार नए

आने वाले व्यक्ति के कारण शक्ति रूपी बिजली का बटन दबाना और छोड़ना पड़ता है । जिस गति अथवा तेजी के साथ हम अपने जीवन को बिता रहे हैं उसका अन्दाज हम रेलगाड़ियों, इंजनों, वायुयानों तथा तार; टेलीफोन, रेडियो आदि को देखकर लगा सकते हैं । इन तेज़ रफ़्तार वाले कार्यों के फलस्वरूप हमारे शरीर के 'डाइनमो' को प्रायः अविराम चलते रहना पड़ता है, जिसका फल यह होता है कि हमारे स्नायुओं को लगातार ऊँचे दरजे के तनाव की अवस्था में रहना पड़ता है और हमारे शरीर की मांसपेशियाँ स्वभावतः संकुचित हो जाती हैं । वैज्ञानिक-परीक्षाओं से यह प्रकट हो चुका है कि आवश्यकता से अधिक कार्य करने वाले व्यक्ति के स्नायु नींद की अवस्था में भी शान्त नहीं होते और उसकी मांसपेशियाँ शिथिल नहीं होतीं । उनका शरीर बराबर तनाव की अवस्था में रहता है जो एक प्रकार की आदत बन जाती है ।

आजकल के अधिकांश रोगों के कारण

आमतौर पर हम सभी यह जानते हैं कि मशीनें भी बिना विश्रान्ति अथवा आराम के नहीं कार्य कर सकतीं । अगर मशीनों को आराम न करने दिया जाय तो जल्द खराब हो जायँगी । तो, फिर जिन व्यक्तियों के स्नायु विश्राम करना जानते ही नहीं उन्हें स्नायविक रोगों का अगर शिकार होना पड़े तो क्या यह कोई आश्चर्य की बात होगी ? प्रत्येक चिकित्सक यह जानता है कि स्नायु-दौर्बल्य के कारण अजीर्ण, कोष्ठबद्धता, अनिद्रा का रोग, रक्त-चाप का बढ़ना, नपुंसकता और उन्माद रोग हमारे नगरों की घनी आबादियों में लगातार बढ़ते जा रहे हैं । इसका कारण हम आसानी के साथ समझ सकते हैं । वह यही है कि हम बिना विश्राम के लगातार आवश्यकता से अधिक स्नायविक शक्ति खर्च कर रहे हैं ।

बचाव कैसे हो ?

इन बुराइयों से हम छुटकारा कैसे पा सकते हैं ? क्या हमें अधिक स्नायविक तनाव पैदा करने वाले कार्यों से अपना पिण्ड छुड़ाकर अपने स्नायुओं को आराम देना चाहिए यां हमें इसके लिए रेलवे लाइनें तोड़कर टेलीफोन और तार की लाइनों को नष्ट करके, रेडियो स्टेशन बन्द करके तथा वायुयानों द्वारा सफर करने पर रोक लगा, हमें इन तेज रफ़्तार से कार्य करने वाले साधनों से मुक्त हो जाना चाहिए । यह प्रायः सभी स्वीकार करेंगे कि हम चाहने पर भी ऐसा नहीं कर सकेंगे । जो भी हो, अगर हम चाहते हैं कि हमारा भविष्य सुखपूर्ण हो तो हमें अपने शरीर को बराबर तनाव की अवस्था में न रख कर उसे विश्राम देना होगा । और चूँकि हमारे जीवन के दायरे के चारों तरफ जो अवस्थाएँ उत्पन्न हुई हैं उन्हें हम बिल्कुल बदल नहीं सकते इसलिए हमें इसके लिए व्यक्तिगत रूप से ही मुक्त होने के लिए उपाय करना पड़ेगा । हमारे लिए केवल यही एक मार्ग खुला है ।

स्नायविक रोग और डाक्टरी इलाज

इसमें कोई सन्देह नहीं कि रूढ़िवादी डाक्टर स्नायविक खराबियों को दवाएँ देकर दूर करना चाहेगा । डाक्टरी चिकित्सा करने वाला मनोवैज्ञानिक कुछ हद तक रोगी का मनोविश्लेषण करके इलाज करेगा । इन चिकित्सा पद्धतियों और विशेषतः पुराने स्नायविक रोगों की कीजाने वाली चिकित्सा प्रणालियों की सफलता अथवा असफलता के सम्बन्ध में व्यक्तिगत रूप से कोई विचार प्रकट करने के बजाय मैं आप लोगों को यह बताना चाहता हूँ कि डाक्टरों का एक ऐसा भी वर्ग है जिसके सदस्यों का ख्याल है कि स्नायविक विकार से पीड़ित होने वाले रोगी को आराम तथा उसकी मांसपेशियों को विश्राम दिलाकर उसे रोगमुक्त किया जा सकता है ।

हमारे रूढ़िवादी डाक्टर भी स्नायु सम्बन्धी रोगियों को आराम करने की सलाह देते हैं । लेकिन खेद की बात यह है कि मांसपेशियों के शिथिलीकरण के बिना

आराम करने का कोई विशेष लाभ रोगी को नहीं पहुँचाया जा सकता। रोगी चारपाई पर लेट तो जाता है लेकिन वह बराबर बेचैन बना रहता है और अपने शरीर को आराम पहुँचाने वाली स्थिति में करने के लिए खींच-तान करता रहता है। इसका कारण यह है कि उसकी नाड़ियों के मार्ग से विद्युत-शक्ति लगातार मांसपेशियों की ओर प्रवाहित होती रहती है, जिसके कारण नाड़ियों में बहुत अधिक तनाव और मांसपेशियों में संकुचन रहता है। वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में किए गए प्रयोगों के द्वारा अन्तिम रूप से यह प्रमाणित किया जा चुका है कि जब तक शरीर की मांसपेशियों का शिथिलीकरण नहीं किया जाता तब तक नाड़ियों के मार्ग से प्रवाहित होने वाली विद्युत-धारा को रोका नहीं जा सकता और नाड़ियों के तनाव को दूर नहीं किया जा सकता। उन प्रयोगों से यह भी प्रकट हुआ है कि शरीर की मांसपेशियों को पूर्ण विश्राम पहुँचा कर मांसपेशियों में विद्युत-शक्ति के प्रवेश को भी पूरी तौर से रोका जा सकता है और नाड़ियों को पूरा पूरा आराम पहुँचाया जा सकता है।

शिथिलीकरण का ऐच्छिक साधन

डाक्टर जैकोब्सन ने शरीर की मांसपेशियों का ऐच्छिक शिथिलीकरण करने का साधन निकाला है जो संक्षेप में इस प्रकार है—रोगी पीठ के बल चारपाई पर लेट जाता है और तब वह धीरे धीरे और सजगता पूर्वक अपने शरीर के किसी खास अंग की,—उदाहरण के लिए दाहना हाथ ले लीजिए—मांसपेशियों को सिकोड़ता है। इसके साथ ही दूसरी ओर वह मांसपेशियों को संकुचन पैदा होने के ज्ञान का अधिकाधिक अनुभव करने की चेष्टा करता है। जब उसे मांसपेशियों के संकुचन का ज्ञान प्राप्त करने की पूर्ण सफलता मिल जाती है तो उसके उपरान्त वह उस मन्द संकुचन को भी रोकने की चेष्टा करता है जो कि आराम करने की हालत में भी मांसपेशियों में बना रहता है और जिसे अवशिष्ट संकुचन कहते हैं। इस बचे हुए संकुचन को भी दूर करने का प्रयत्न इच्छाशक्ति के द्वारा किया जा सकता है। और जब इसमें सफलता मिल जाती है तो उसके उपरान्त यह अवशिष्ट संकुचन मिट जाता है और मांसपेशियों का पूर्ण शिथिलीकरण हो जाता है। इसी प्रकार जब शरीर की समस्त मांसपेशियों का शिथिलीकरण हो जाता है तो उसे साधारण शिथिलीकरण कहते हैं।

एक ओर शरीर के अन्य अंगों को सक्रिय बनाये हुए किन्तु दूसरी ओर उसके किसी निर्दिष्ट अंग का पूरी तौर से शिथिलीकरण करना भी सर्वथा सम्भव है। उदाहरण के लिए, कोई व्यक्ति अपने मेरुदण्ड को सक्रियता पूर्वक सीधा रख कर बैठ सकता है और इसके साथ ही शरीर के अन्य अंगों को पूर्ण शिथिल भी बनाए रख सकता है। किसी अंग विशेष के इस प्रकार के शिथिलीकरण को स्थानीय अथवा प्रभेदात्मक शिथिलीकरण कहते हैं। डा० जैकोब्सन और उनके मतानुयायियों ने स्नायविक दोषों का इलाज करने में, साधारण और स्थानीय अथवा प्रभेदात्मक दोनों प्रकार के शिथिलीकरण के प्रयोग का काफी अधिक लाभ उठाया है। आज हम शिथिलीकरण द्वारा जिस चिकित्सा पद्धति को 'रिलैक्सेशन थैरेपी' के नाम से पुकारते हैं उसका वे निर्माता अथवा प्रवर्तक होने का दावा करते हैं।

यौगिक शिथिलीकरण

जहाँ तक यूरोप का सम्बन्ध है उनका यह दावा करना उचित हो सकता है। लेकिन जब हम मानव सभ्यता के सम्पूर्ण इतिहास पर विचार करते हैं तो इस तरह के दावे टिक नहीं पाते। आज से शताब्दियों पूर्व साधारण और स्थानीय दोनों तरह के शिथिलीकरणों को हमारे यहाँ के योगियों ने समुन्नत बनाया था जो कि शिथिलीकरण की इन पाश्चात्य प्रणालियों की अपेक्षा, जिनका उल्लेख ऊपर मैंने किया है, कहीं अधिक पूर्ण और आसान हैं। शताब्दियों से इन प्रणालियों का

उपयोग हमारे यहाँ के योगि-गण सांस्कृतिक तथा रोगों का निवारण दोनों उद्देश्यों से करते आ रहे हैं। अब हम बतायेंगे कि शिथिलीकरण के ये तरीके क्या हैं ?

साधारण शिथिलीकरण के लिए दो तरह के आसन करने की सलाह दी जाती है। वे हैं शवासन और प्राणधारण। शवासन करने के लिए पीठ के बल लेट कर जहाँ तक सम्भव हो सके वहाँ तक अपने शरीर को ढीला करना चाहिए। आँखें बन्द करके शरीर की मांसपेशियों के स्थानीय ढीलेपन अथवा शिथिलीकरण का बोध करना चाहिए। इसके लिए पाश्चात्य-पद्धति के अनुसार संकुचन की अनुभूति को उन्नत बनाने की आवश्यकता नहीं है। इस नियम के अनुसार जब कोई व्यक्ति शिथिलीकरण की दिशा में कुछ उन्नति कर लेता है तब वह दूसरे आसन––प्राणधारण––का लाभ उठाता है। इसके लिए आसन करने वाला व्यक्ति एक ओर मांसपेशियों के शिथिलीकरण में कोई बाधा इत्यादि उत्पन्न नहीं होने देता तो दूसरी ओर साँस के बाहर निकलने तथा भीतर आने की क्रिया पर ध्यान आकर्षित करता है और धीरे धीरे श्वास-निःश्वास के संचालन के बीच पूर्ण सामंजस्य स्थापित कर लेता है। इस सतर्क तथा सामंजस्यपूर्ण साँस लेने की क्रिया का समूची स्नायुप्रणाली पर निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है। इसके द्वारा न केवल हृदय तथा फेफड़े को काफी शिथिलता प्राप्त होती है बल्कि शरीर की मांसपेशियों के प्रत्येक अवयव का पूरी तौर से शिथिलीकरण हो जाता है। शिथिलीकरण के सम्बन्ध में प्राणधारण आसन के उपयोग से न केवल शिथिलीकरण की क्रिया कहीं अधिक आसान हो जाती है बल्कि श्वास संचालन क्रिया पर अधिकार स्थापित कर लेने के फलस्वरूप मांसपेशियों का शिथिलीकरण अपेक्षाकृत अधिक पूर्ण हो जाता है और इसके द्वारा वह मनुष्य दिन के चौबीसो घंटे श्वास को स्थिर रख सकने में समर्थ हो सकता है। यह सब बातें तो साधारण शिथिलीकरण के सम्बन्ध में हुईं। सिद्धासन अथवा समासन आदि योग में आये हुए किसी आसन के साथ प्राणधारण का उपयोग करके उससे स्थानीय अथवा प्रभेदात्मक शिथिलीकरण के सम्बन्ध में भी लाभ उठाया जा सकता है। किन्तु हमारे यहाँ के योगियों ने प्रभेदात्मक शिथिलीकरण को साधारण शिथिलीकरण की अपेक्षा कहीं अधिक आसान बना दिया है। प्राणधारण के पूर्व वे विभिन्न प्रकार के प्राणायाम अथवा यौगिक नियमों के अनुसार गहरी साँस क्रिया की सलाह देते हैं। ये प्राणायाम स्नायु-प्रणाली पर निषेधात्मक प्रभाव डालने में इतनी प्रबल शक्ति रखने वाले होते हैं कि पूरी तौर से अभ्यास हो जाने पर ये शरीर के अन्दर नाड़ियों में प्रवाहित होने वाली स्नायविक शक्ति तक को रोक सकते हैं और उसे मेरुदण्ड (Spinal cord) तथा मस्तिष्क में ले जाकर केन्द्रीभूत कर सकते हैं। प्रभेदात्मक शिथिलीकरण के लिए प्राणायाम की इतनी अधिक निपुणता की आवश्यकता नहीं है। प्राणायाम में साधारण सफलता तथा प्राणधारण क्रिया के समुचित विकास से प्रभेदात्मक शिथिलीकरण हो जायगा। इसके अलावा मनोभावों को वश में रखने से भी, जिसके लिए योगी लोग बहुत अधिक जोर देते आए, हैं शिथिलीकरण की क्रियाएँ काफी अधिक आसान, पूर्ण तथा प्रभावकारी बनाई जा सकती हैं।

मेरे उपरोक्त कथन का समर्थन न केवल प्राचीन योगसम्बन्धी ग्रंथों के द्वारा बल्कि स्वस्थ योगाभ्यासियों को हुए अनुभवों द्वारा भी होता है। मैंने व्यक्तिगत रूप से चिकित्सा सम्बन्धी जो अनुभव प्राप्त किया है उसके द्वारा भी मेरे उपरोक्त कथन का समर्थन हुआ है। इस समर्थन के बल पर मैं यह निरापद रूप से कह सकता हूँ कि आधुनिक सभ्यता के युग में ऊँचे दरजे के स्नायविक तनाव से पूर्ण जीवन व्यतीत करने के बावजूद अगर हम अपने स्नायुओं को सशक्त और सतेज बनाए रखना चाहते हैं तो हमें इसके लिए यौगिक शिथिलीकरण के अलावा कोई अन्य प्रभावपूर्ण साधन प्राप्त नहीं हो सकता।

पश्चिम-शीर्षासन

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

शीर्षासन का पूरा अभ्यास हो जाने के बाद ही पश्चिम शीर्षासन का अभ्यास आरम्भ किया जा सकता है। पिछले महीने के 'जीवन-सखा' में इसके करने की जो विधि बताई गई थी वह कठिन होने के कारण एक दूसरी सरल विधि बताई जा रही है। पहिली विधि के अनुसार पैरों को जंघा पर लाते समय शरीर को सँभालना कठिन हो जाता है और लोग गिर जाते हैं। वे इस दूसरी पद्धति द्वारा बड़े मजे में अभ्यास कर सकते हैं। वह यह है कि पद्मासन लगाकर तब यह आसन आरम्भ किया जाय। जैसा कि चित्रों में बताया गया है (चित्र नं० १, २, ३)

नं० १→

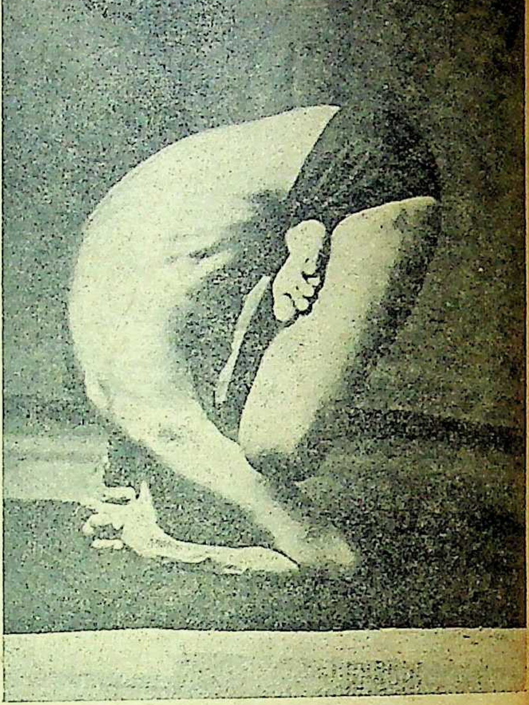

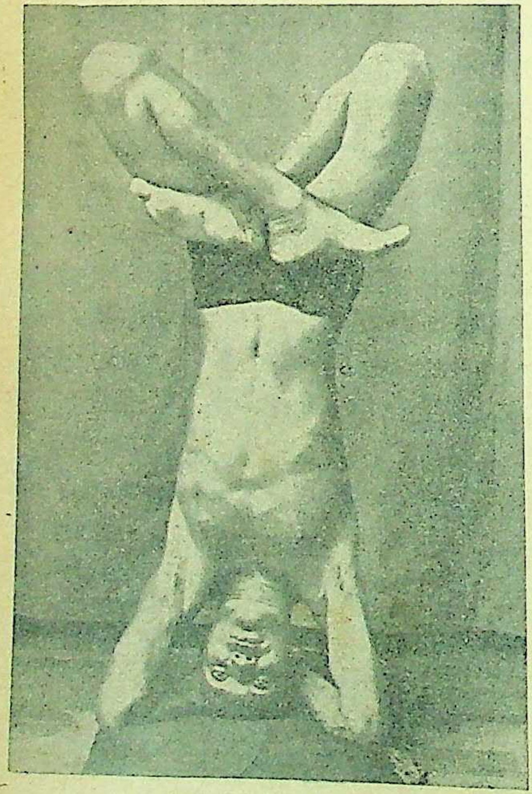

नं० ३

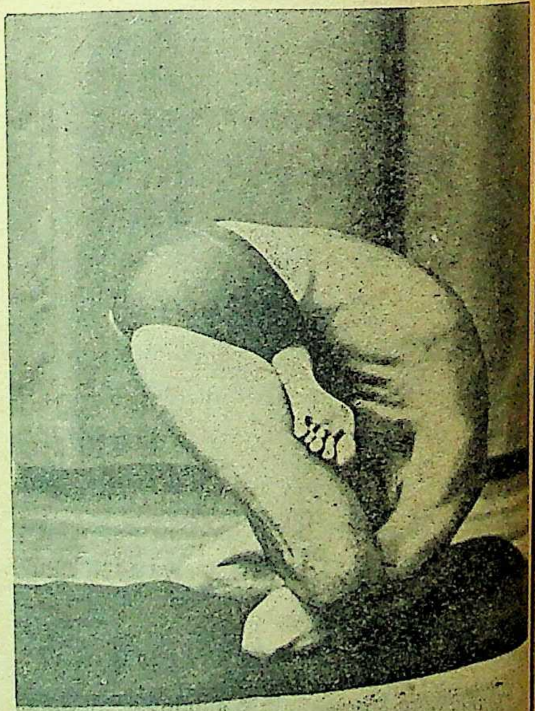

नं० २

श्रीयुत जानकीशरणजी वर्मा से मेरा परिचय

श्रीयुत विट्ठलदास मोदी

यदि आप कभी हिन्दुस्तान स्काउट असोसियेशन के दफ़्तर में पहुँच जायँ और कहीं वहाँ के कर्मचारियों की मण्डली जुटी हो तो आप वर्मा जी को बड़ी आसानी से पहचान सकते हैं । जो जरा-जरा सी बात पर दाद देता दिखाई दे वही हैं श्रीयुत जानकीशरणजी वर्मा । उनकी उम्र इस समय पचास के करीब है पर यदि आप उस मण्डली में उन्हें उम्र के हिसाब से पहचानने की कोशिश करेंगे तो जरूर धोका खायँगे, क्योंकि दस पन्द्रह वर्ष उम्र से छोटा समझने की गलती आप जरूर करेंगे ।

× × ×

सजीवता के इस पुंज से मेरा परिचय पत्र व्यवहार द्वारा हुआ । मैं लूईकूने की पुस्तक के आधार पर नहान ले रहा था । इसी बीच मुझे 'रोगों की अचूक चिकित्सा' मिल गई । पढ़ गया । लगा तो कि लेखक अनुभवशील हैं पर यह शंका बनी रही कि कहीं हिन्दी की आज की बागबानी और खेती की अधिकतर पुस्तकों की तरह यह पुस्तक भी केवल पुस्तकें पढ़ कर ही न लिखी गई हो ? युवा-जनित सहज कुतूहल ने निश्चय करना चाहा । मैंने उन्हें एक पत्र अपने चिकित्सा-क्रम पर लिखा और राय माँगी । लौटती डाक से पत्र का उत्तर आया और ऐसे प्रभावकारी शब्दों में कि रोटी-सब्जी और नहान छोड़ कर पत्र के अनुसार फलाहार, मिट्टी की पट्टी और एनीमा में लगा । एक कार्यक्रम माँगा । पहले पत्र की तेजी से ही पत्रोत्तर मिला, चेतावनी भी आई "यह जान कर खुशी हुई कि आपने फलाहार शुरू कर दिया । चार पाँच दिन पहले कमजोरी मालूम होगी, पर आप इससे घबरायें नहीं । उसे चुपचाप सह जायँ । अगर टहलने की इच्छा भी न हो तो लेटे रहें । चार पाँच दिन के बाद ही कमजोरी कम होने लगेगी और तब शक्ति भर टहल घूम सकते हैं । ......नमूने के बतौर कार्यक्रम नीचे देता हूँ उसमें सुविधा के अनुसार हेर फेर कर सकते हैं पर जिसके लिए जो समय निश्चित किया जाय उसका पालन हर रोज हो ।"

वर्माजी अपनी सजीवता अपने तक ही सीमित नहीं रखते । उसे बिखेरते रहते हैं । कोई कितना भी मुर्दा-दिल हो, हो नहीं सकता कि इनके साथ रह कर न हँसे, न मुसकराए । बात बात में जोश भरते रहते हैं, हताश तो होते ही नहीं । किसी कार्य को शुरू करके उसे पूरा करने के लिए कटिबद्ध रहते हैं । जिस प्रकार उनका आरम्भ में विश्वास रहता है उसी प्रकार अन्त में । मैंने प्राकृतिक चिकित्सा को भी औषधोपचार ही समझ रखा था जिसे आरम्भ करते ही आराम मालूम होने लगता है और न उभाड़ के लिए जहाँ स्थान है । फलाहार आदि करते दिन हो गए और लाभ नजर न आया तो मैं इनसे घबरा घबरा कर पूछता मैं कब तक अच्छा हो जाऊँगा ? यह उभाड़ का बखेड़ा क्या है ? न सही एलोपैथी, बायो केमिस्ट्री या होमियोपैथी तो हानिकर दवा नहीं है, कहिए उसका सेवन करता चलूँ । जो उत्तर आते उनसे मेरी धारणाएँ निर्मूल हो जातीं, विचलित मन सुस्थिर होता और दृढ़ता-पूर्वक चिकित्सा चलाए जाने की शक्ति मिलती । "यह कहना कि रोगी का शरीर कितने दिनों में विकार

रहित हो जायगा कठिन है । अँधेरी कोठरी का ठीक ठीक हाल जानना, रग-रेशे की बनावट को समझना कठिन है । फिर भी आशा है कि आप जल्द भले चंगे हो जायँगे । ....जब तक शरीर पूरा शुद्ध न हो जायगा, विकार निकलता जायगा । इसलिए धैर्य रखना चाहिए । ....होमियोपैथी से ऐसे जीर्ण रोग में कुछ नहीं हो सकता । मैंने २२ वर्ष होमियोपैथी और बायोकेमिस्ट्री प्रैक्टिस करके छोड़ दी । नये रोगों में तो लाभ हो जाता है, पर पुराने रोगों में कुछ ही लक्षणों को दूर करने के बाद लाभ स्थगित हो जाता है । सो नये रोग नेचरोपैथी से बिना औषध के ही जल्द दूर हो जाते हैं । मालूम नहीं आप मेरे इस विचार को कैसा समझेंगे पर मैं अपने अनुभव की बात कह रहा हूँ । जब कि पेट में मल भरा है, मांसपेशी और पुट्ठों में विकार घुस गया है और स्नायुजाल भी विकार-पूर्ण हो रहा है तब तो उपवास, फलाहार, नियमिताहार, हवा, पानी, धूप इत्यादि से ही शरीर स्वस्थ हो सकता है ।" साल भर के चिकित्सा-काल में कितनी ही बार वजन पन्द्रह पन्द्रह सेर घटा, मैं घबराता, दोस्त-एहबाब सहानुभूति एवं चिन्ता प्रगट करके घबराहट और भी बढ़ाते । मैं वर्माजी को लिखता, उनके जवाब आते "आप जब तक वजन और कमजोरी के चक्कर में रहेंगे रोगों से लड़ न सकेंगे । आप vitality (जीवनी-शक्ति) को देखना और समझना सीखिए । यहाँ तो सिद्धान्त है—The greater the weakness the quicker the cure (जितनी अधिक कमजोरी आएगी रोग उतनी ही जल्दी जायगा।) ...... आप वजन घटने से क्यों घबराते हैं ? आप नाड़ी देखिए, आँखों और दाँतों का रंग देखिए और यह देखिए कि शरीर पर कैसी चमक है ? इन सब बातों से अन्दर की हालत का पता लगाइए । हम यक्ष्मा रोग में वजन का ख्याल जरूर रखते हैं, और किसी रोग में नहीं । कभी कभी लगातार तीस दिन तक उपवास कराने का मौका आता है और इस अर्से में वजन बहुत घट जाता है । वजन तो घटने बढ़ने वाली चीज है । जिस दिन पेट अच्छी तरह साफ नहीं हुआ वजन बढ़ा रहता है ।' ...... इस चिकित्सा में पहले वजन जरूर घटता है क्योंकि इसमें सिर्फ वही रोग नहीं जाता जिसके लिए चिकित्सा हो रही है बल्कि सारी खराबियाँ एक ही बार में दूर हो जाती हैं और शरीर नया बन जाता है ।" दूध-चिकित्सा चल रही थी । वजन बढ़ने पर खुशी जाहिर की तो लिखा "यह तो आपने लिखा ही नहीं कि पन्द्रह दिन की चिकित्सा के बाद और लक्षणों का क्या हाल है । आपने तो वजन और ऊपरी ताकत की बातें लिखीं, जिनका मूल्य मेरी नजरों में तब तक कुछ नहीं है जब तक कि शरीर में विकार मौजूद हैं । कृपा कर उन लक्षणों का हाल लिखिए ।"

मनोविज्ञान की प्रत्येक क्षेत्र में आवश्यकता होती है और यदि चिकित्सक मनोविज्ञान नहीं जानता तो कभी सफलता-पूर्वक रोगियों को अच्छा नहीं कर सकता। वर्माजी इस विषय के अच्छे ज्ञाता हैं । जब कभी प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह में आते हैं मैं देखता हूँ रोगियों के हृदय में एक एक वाक्य से आशा का संचार करते हैं, दृढ़ता लाते हैं और चिकित्सा को चिकित्सा न समझ कर कार्यक्रम को सरलता-पूर्वक चलाए जाने की राय देते हैं । वे अपनी बातें कुछ ऐसे ढंग से कहते हैं कि प्रत्येक बात रोगियों के मन पर पूरा असर डालती है ।

प्रत्येक रोग में उपवास की जरूरत नहीं होती पर मेरे लिए उपवास की आवश्यकता वर्माजी को मालूम हुई । जिस सावधानी और चातुर्य से उन्होंने मुझे इसके लिए तैयार किया वह आपके मनोविज्ञान के व्यावहारिक ज्ञान का परिचय देने के लिए काफी है । एक ऐसे आदमी के मन में, जिसकी जानकारी शून्य हो, केवल पत्र द्वारा ही एक चीज बैठा सकने की कठिनाई को पाठक ध्यान में रखें । एक पत्र में उन्होंने मुझे लिखा "अगर आप रोटी-साग खा कर नहान लेते रहेंगे तब भी साल डेढ़ साल में अच्छे होंगे । अगर इसके बीच बीच में हर महीने तीन दिन का उपवास और चार दिन का

फलाहार करेंगे और तब रोटी और फलों पर रहेंगे तो दो से चार महीने में अच्छे हो जायँगे। और अगर हिम्मत करके १५-१६ दिन का उपवास कर जायँ तो ज्यादा से ज्यादा महीने डेढ़ महीने में स्वस्थ हो जायँगे। मैं अभी लम्बे उपवास के लिए नहीं कहता, लेकिन तीन दिन के उपवास के लिए किसी ख़ास हिम्मत की जरूरत नहीं है। मुझे अक्सर दौरे पर जाना होता है जिसमें बदपरहेज़ी होती है। मैं जब वापस आता हूँ तो उपवास कर लेता हूँ। कोई जानता भी नहीं। मेरे यहाँ बच्चे भी २-३ दिनों का उपवास हँसते खेलते कर लेते हैं। इसलिए निवेदन है कि तीन दिन के उपवास से बिल्कुल न डरिये।" फिर कई पत्र ऐसे आए जिनसे उपवास की सरलता एवं लाभ पर प्रकाश पड़ा। "......नागपुर में मेरे एक दाँत में दर्द हुआ था। वहाँ से लौटने पर मैं कुछ दिन फल दूध पर रहा, पर २७ सितम्बर से मैंने उपवास शुरू कर दिया। इच्छा है कि ३ अक्तूबर तक मैं इसी तरह रहूँ और फिर ४ से १० अक्तूबर तक फल खाऊँ। इस बीच में मैंने अपने सब काम जारी रखे, सिर्फ कसरत बन्द कर दी है और टहलने में भी कमी की है। विशेष कमजोरी है पर दाँत का दर्द नहीं है। ......मैंने ४ ता० को फल खाना शुरू किया। १० ता० से एक समय एक रोटी खाऊँगा। मैं दो ही वक्त खाता हूँ। यह उपवास अच्छा रहा, पर मैं तो गर्मियों में एक लम्बे उपवास के लिए तैयार हो रहा हूँ। दूसरा छोटा उपवास दिसम्बर के शुरू में और तीसरा छोटा उपवास फरवरी के अन्त में करके अप्रैल या मई में तीन सप्ताह का उपवास करना चाहता हूँ, अगर अवकाश मिल गया तो।" वर्माजी को अवकाश न मिला और वे उपवास न कर सके पर उनके पत्रों का मेरे पर यह प्रभाव हुआ कि मैंने ४० दिन का उपवास किया और उसके बाद ही बीस दिन तक केवल फलों का रस पी कर रहा।

प्राकृतिक चिकित्सा को लोग हँसी में संक्रामक रोग (भ्रम) के नाम से पुकारते हैं। कम से कम यह इस मानों में तो आप जरूर सही है कि इसका करने वाला इसे केवल अपने ही नहीं करता दूसरों को भी कराता है, और इसका जानकार दूसरों को भी बनाता रहता है। वर्माजी विशेषतया इस रोग से आक्रान्त हैं। वे चलते फिरते लोगों को प्राकृतिक-चिकित्सा जानने की सलाह देते हैं, पत्रों में लिखते हैं। उनके प्रत्येक पत्र में मुझे कुछ न कुछ पढ़ने की सलाह रहती थी। मैं एक पुस्तक पढ़ता और दूसरी के लिए सलाह आ जाती। "...... आप कृपा कर किताबिस्तान, इलाहाबाद, की मार्फत Health for All के ग्राहक बन जायँ, वार्षिक चन्दा ६।)।......अगर आप चाहें तो (१) Everybody's Guide to Nature Cure और (२) Your Diet in Health and Disease by Harry Benjamin मँगा कर पढ़ लें। (३) Sharma's Practical Nature Cure भी।... आप कृपा कर दो पुस्तकें और पढ़ें Fasting for Health by Macfadden और Rational Fasting by Ehret। यह दोनों पुस्तकें आपको Madon's Health Home, Santa Cruz, Bombay से मिलेंगी। ......आप कृपा कर नेचरोपैथी की बहुत सी पुस्तकें अच्छी तरह पढ़ जाइए। दो पुस्तकों के नाम और लिख भेजता हूँ—Ehret's Mucusless Diet Healing System और Rational Fasting; Sharma की Fasting Cure भी अच्छी किताब है।...... Eeman की किताबें (१) How do you sleep? (२) Subconscious made Conscious (३) Self and Superman पुस्तकें आप जरूर पढ़िए। उनसे आप यह सीखिएगा कि सुप्तावस्था में भी शरीर की मरम्मत, पुष्टि और उन्नति की कार्रवाई जारी रखी जा सकती है।...... यह जान कर सन्तोष हुआ कि आप Miracles of Milk पढ़ गए। Dr. Hay की Health via food भी जरूर पढ़िए।" बहुत कम ऐसे रोगी होंगे जो वर्माजी के हाथों अच्छे हुए हों और लोगों को राय देने लायक

न हो गए हों। वे उसके लिए उत्साहित करते रहते हैं, शाबाशी देते हैं। "आपने इस बार के उभाड़ में बहुत उचित उपचार किए। अब आप पास हो गए। ..... आप इस चिकित्सा-पद्धति को और रोगियों पर भी आजमाइए। .... और रोगियों को आप सँभालिए। मैंने किसी कालेज में इसकी शिक्षा नहीं पाई है। अनुभव से ही थोड़ा बहुत सीखा है। आपको भी काफी अनुभव हो गया और आप उसे बढ़ा सकते हैं। ...... मेरी राय है कि आप अच्छी तरह पुस्तकों को पढ़कर गोरखपुर में एक प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह खोल दीजिए। मैं इसके बारे में आपको पूरी सलाह दे सकता हूँ।"

पाठक! कहीं यह न समझ बैठें कि वर्माजी को चिकित्सा के सिवा दूसरा काम है ही नहीं है। चिकित्सा तो आपकी हाबी है, प्रधान कार्य है हिन्दुस्तान स्काउट असोसियेशन के अखिल भारतीय केन्द्र और साथ ही यू० पी० विभाग का कार्य-संचालन। इसके अलावा और भी अनेक कार्य रहते हैं जिनसे सिर उठाने की भी फुर्सत नहीं मिलती। असोसियेशन सम्बन्धी पत्र-व्यवहार, रिपोर्ट तैयार करना, दौरा करना एवं लोगों से मिलने आदि से दबे से रहते हैं, फिर भी स्काउट की सहज सहायता-प्रियता के कारण मरीजों को भी देखते रहते हैं और उन्हें सलाह देते हैं। इस व्यस्तता में भी आप जीवन को ऊँचा बनाने वाली छोटी छोटी चीजों पर भी ध्यान रखते हैं। व्यवस्था आपके जीवन का एक विशेष अंग है। इनकी किसी चीज को माँगिए, अँधेरे में भी खोज दे सकते हैं। तिस पर सारा हिसाब ठीक ठीक रखते हैं। इनकी गैरहाजिरी में मेरे तीन पत्र पहुँचे। उत्तर के लिए सब में टिकट भेजा गया था। तीसरे का उत्तर आया, लिख भेजा "आपके दो पोस्टेज स्टाम्प मेरे पास हैं, जब तक इन्हें खर्च न कर लूँ और न भेजें।" आप जिस प्रकार समय से और सजग होकर पत्र लिखते हैं बहुत कम लोग करते हैं। आप अपने यहाँ से इलाहाबाद आने-जाने का समय जोड़ लीजिए और इतनी ही देर में आपके पत्र का उत्तर चला जायगा। परवाह नहीं आपने कितना बड़ा पत्र लिखा है, संक्षेप में ही सही सभी बातों का उत्तर रहेगा।

वर्माजी व्यवहार-कुशल एवं मृदु हैं। कोई भी समय माँगे देने को तैयार रहते हैं। पूरा आदर-सत्कार करते हैं। इसी कारण इनके यहाँ इनके मित्रों एवं सम्बन्धियों का ताँता लगा रहता है। मैं जब आपसे मिलने गया तो आपने मुझे घर पर ही भोजन कराया। मुझे नमक खाने की इजाजत न थी। फिर भी जो स्वादिष्ट भोजन आपने कराया उसने मुझे भोजन बनाने की विधि जानने की ओर प्रेरित किया। पर आपको सुस्वादु भोजन न करा सकने का खेद बना रहा। यहाँ तक कि पत्र में लिखा "मुझे खेद है कि मैंने आपको दूर से भोजन के लिए बुलाया और अच्छा भोजन न दे सका।"

इस सहज सरलता के कारण लोग आपको परीशान किए रहते हैं। आराम का भी समय नहीं मिलता, जिसे आपने कई बार इस तरह व्यक्त किया है "असल में सब जगह से लाचार होकर रोगी यहाँ आते हैं और बात की बात में अच्छे हो जाना चाहते हैं। मुझे बहुत माथा-पच्ची करनी पड़ती है, जिससे मुझे कभी आराम का मौका नहीं मिलता। ...... My life is miserable, I cannot have enough rest or relaxation and this is why I do not keep very fit." अर्थात् मेरा जीवन दुःखमय हो रहा है। मुझे आराम के लिए समय नहीं मिलता, यही कारण है कि मेरा स्वास्थ्य ऊँचे दर्जे का नहीं हो पाता।

देश की गुलामी राष्ट्र की आर्थिक दशा को ही छिन्न भिन्न नहीं करती वह हमें प्रत्येक दिशा में पंगु बनाती रहती है। इसी को लक्ष करके विश्वविख्यात पुरातत्ववेत्ता प्रो० प्राणनाथ जी विद्यालंकार ने अपने विद्यार्थियों के सामने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में कहा था कि "मेरे जैसे पुरातत्ववेत्ता को रोटी के लिए अर्थशास्त्र पढ़ाना पड़ रहा है।" यही हाल है वर्माजी का।

उनका पैनी दृष्टि का प्राकृतिक-चिकित्सक अपने प्रिय कार्य प्राकृतिक-चिकित्सा में अपनी सारी शक्ति नहीं लगा पा रहा है। दुःख यहीं तक समाप्त नहीं होता। इच्छानुसार पुस्तकें तक पढ़ने को नहीं मिलतीं। उन्हीं के शब्दों में सुनिए। "...... कृपा से मैं भी मैकफेडन की कुछ किताबें पढ़ना चाहता हूँ। क्या उन्होंने हेल्थ होम लाइब्रेरी की दो पुस्तकें मँगाई हैं। मैं इन्हें और Walking Cure पढ़ना चाहता हूँ। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि किताबें सयत्न रखूँगा और पढ़ कर लौटा दूँगा। अब मेरे पास रुपए नहीं कि मँगवाऊँ।"

देश की गवर्नमेन्ट का जो काम है वह व्यक्ति को करना पड़ रहा है। इन कठिनाइयों में भी जो वर्मा जी ने किया है उस पर भारत के प्राकृतिक-चिकित्सकों को अभिमान होना चाहिए।

* * *

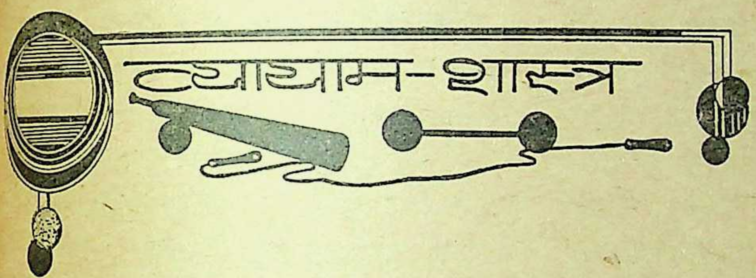

तैराकी और स्वास्थ्य

— मेरा अनुभव —

श्रीयुत रोबिन चैटरजी]

श्रीयुत रोबिन चैटरजी विश्व-विख्यात तैराक हैं। आपने लगातार पानी में तैरते रहने का नया रिकार्ड स्थापित किया है। पर बहुत कम लोग हैं जो यह जानते हों कि उन्हें तैरने का चस्का कैसे लगा? एवं अन्य व्यायाम पद्धतियों के प्रति उनके क्या विचार हैं? 'तैराकी और स्वास्थ्य' लेख में आपने इन प्रश्नों पर जो प्रकाश डाला है आशा है वह पाठकों को बहुत ही रुचिकर एवं लाभदायक प्रतीत होगा।—सं०

विद्यार्थी जीवन में मैं कई बार मनुष्य के शरीर में देव की शक्ति रखने वाले टार्जन को सेनिमा के रजतपट पर देखने के लिए स्कूल से भाग निकलता था। जंगली जानवरों के साथ उसके निशंक खेल ने मुझे अभिभूत कर लिया था, मैं टार्जन का प्रशंसक ही नहीं उपासक भी हो गया था। उसकी शक्ति, सुगठित शरीर और उसकी साहसयुक्त क्रीड़ा को देख कर मैं हक्का बक्का रह जाता। एक बार तो मैं उसे घड़ियालों के बीच तैरते हुए देख सेनिमा हाल में चीख उठा था। मेरा चीखना देख एक महाशय ने मेरी ओर तिरस्कारयुक्त नेत्रों से देख कर कहा "बड़ा डरपोक लड़का है।" मुझे बड़ी लज्जा आई पर मनुष्य के शरीर में इतनी शक्ति कहाँ से आ सकती है—यह चीज मेरे लिए पहेली ही बनी रही।

बचपन में मैं हमेशा बीमार रहता था। कभी मलेरिया धर दबाता कभी कुछ। उकवत भी कभी होता, कभी छूटता। मैं अपने रोगों से परीशान था। शायद यही कारण है कि मुझ जैसे कमजोर दुबले पतले लड़के को टार्जन बहुत भाता था। बीमारी में मैं खाट पकड़ लेता तो मेरे मित्र मुझे सान्त्वना देने आते। एक दिन एक मित्र ने बड़े दुःख के साथ मुझसे जल्द ही विदा चाही क्योंकि उन्हें कसरत करने जाना था। मैंने पूछा तो उन्होंने बताया कि वे नित्य ही कसरत करते हैं और

अपनी कसरत में अधिकतर 'चेस्ट इक्सपैन्डर', 'बारवेल' और डम्बुल आदि का प्रयोग करते हैं ।

तब मुझे टार्जन फिर याद आया । क्या टार्जन को भी कसरत करने के ये सभी सामान जंगल में सुलभ थे ? यदि नहीं तो फिर उसका शरीर इतना सुगठित और शक्तिशाली क्योंकर हुआ ?—यह समस्या बहुत दिनों बाद ही मैं सुलझा पाया ।

मेरी माता पुराने विचारों वाली धर्मपरायणा स्त्री हैं, वे नित्य ही गंगास्नान करने जाती हैं । मैं ही उनका एक मात्र पुत्र हूँ अतः वे स्वभावतः मुझे बहुत अधिक प्यार करती हैं । उन्होंने मुझे स्वस्थ देखने के लिए सभी कोशिशें कीं पर मैं दिन-दिन कमजोर होता गया और मेरा बदन पीला पड़ता गया। एक बार जब मैं कुछ अच्छा हुआ तो मेरी माता जी ने मुझे अपने साथ गंगास्नान के लिए ले जाना प्रारम्भ किया और यहीं से मेरे तैराकी-जीवन का आरम्भ हुआ । शुरू में ही मुझे गंगा नहाने में बड़ा आनन्द आया और मैंने तैरना सीखना आरम्भ किया । वह तैराकी न वैज्ञानिक ढंग पर निर्धारित थी न उसमें कोई विशेषता थी । उसका आरम्भ केवल बालसुलभ भावुकता एवं क्रीड़ा-प्रिय स्वभाव के कारण हुआ था। पर तैराकी, स्नान, जल, ताजी हवा एवं प्रातःकालीन सूर्य की मृदु रश्मियों का मुझ पर एक चमत्कारी प्रभाव पड़ा । शरीर में जो हर समय गरमी बनी रहती थी शान्त हो चली, सुस्ती की जगह चपलता ने लेना प्रारम्भ किया । मेरे जीवन का नया अध्याय शुरू हुआ । मैं इसे पुनरुज्जीवन प्राप्त होना ही कहूँगा । मेरे सभी रोग चले गए । मैं स्वस्थ हो गया और टार्जन के सुगठित शरीर की समस्या भी मेरे लिए हल हो गई ।

कीमती से कीमती यन्त्रों द्वारा कमरे में की जाने वाली अच्छी से अच्छी कसरत कभी भी उतनी फलदायक न होगी जितनी कि खुले मैदान में की जाने वाली वह साधारण कसरत जिसमें शरीर के अंग प्रत्यंग की कसरत हो जाती है । मनुष्य प्रकृति का वरद पुत्र है, उसका विकास मानसिक हो अथवा शारीरिक, प्रकृति के ही अनुरूप होना चाहिए । प्रकृति के नियमों को तोड़ कर हम कभी सुखी नहीं हो सकते । हमें प्रकृति की ओर पुनः लौटना ही होगा । टार्जन ने अपने व्यक्तित्व को प्रकृति में मिला दिया था यही उसके स्वास्थ्य एवं शक्ति का रहस्य है ।

मुझे याद नहीं पड़ता कि तैरना शुरू करने के बाद मैं कभी किसी भयंकर बीमारी का शिकार बना होऊँ । मेरा पूर्ण विश्वास है और मेरी यह निष्पक्ष राय भी है कि तैराकी ही नहीं कोई भी कसरत चाहे वह दौड़ना, कूदना, मुष्टि-युद्ध या योगासन अथवा किसी भी प्रकार की कसरत क्यों न हो—यदि खुली हवा में की जाय, जहाँ मनुष्य प्रकृति के सजीव प्रभाव में आ सके तो सभी रोग भाग जाते हैं और संक्रामक रोग भी पास फटकने का नाम नहीं लेते । प्रकृति और मनुष्य का अटूट सम्बन्ध है । दोनों का ही समान विकास होता है । प्रकृति भी मनुष्य का साथ चाहती है पर क्यों, और कैसे ?—इस प्रश्न का उत्तर देना तो मेरा नहीं दार्शनिकों का काम है।

तैराकी, दौड़ना, कूदना, मुष्टि युद्ध आदि किसी में भी दक्षता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि शरीर लचीला, हलका और फुर्तीला हो, क्योंकि इन सभी में यह आवश्यक है कि कम समय में अधिक हाथ चलाए जायँ अथवा कदम रखे जायँ—और यह तभी संभव है जब हमारा बदन लचीला हो । इन खेलों से सम्बन्धित जो भी कसरतें बताई जाती हैं वे ऐसी ही होती हैं जिनसे मांसपेशियाँ बहुत अधिक न बढ़ने पाएँ और शरीर की मृदुता एवं लचीलापन बना रहे । शरीर को सुगठित बनाने वाली अथवा मांसपेशियों को बढ़ाने वाली प्रचलित कसरतों से शरीर का वजन बढ़ जाता है और मांसपेशियों के मोटे हो जाने के कारण हाथ एवं पैर के जोड़ों से जल्दी जल्दी हरकत कर सकना कठिन हो जाता है । इस अतिरिक्त बोझ के कारण बदन लद्धड़ हो जाता है, मानसिक शक्ति का भी ह्रास होता है और थोड़ा भी शारीरिक श्रम करने के बाद ऐसी थकान आती है जैसे बहुत अधिक श्रम किया हो और आराम करने की तबियत होने लगती है ।

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

कुष्ठ रोग कैसे गया ?:

कलेजे का फोड़ा अच्छा हुआ

कुष्ठ रोग कैसे गया

रोगी श्री प्रभुदयाल, आयु ५० वर्ष के लगभग, निवास, डौहकी ग्राम, रीवाड़ी से तीन मील उत्तर को, जि० गुड़गाँवा (पंजाब) उसके यहाँ ज्येष्ठ सम्वत् १९९३ वि० को भारी डाका पड़ा। उसमें डाकुओं की बन्दूक से उसके बायें हाथ के कन्धे के जोड़ पर बहुत से छर्रे लगे। गुड़गाँवा अस्पताल में १२ छर्रे निकाले गए। डाक्टर ने हाथ को काट देने को कहा, किन्तु उसने उसको कटवाया नहीं। छर्रों के विष के प्रभाव से उसके मुख और हाथों पर कभी कभी कुछ बड़ी बड़ी फुंसियाँ सी हो जाती थीं और दब जाती थीं। छर्रे निकल जाने पर डाक्टरी इलाज से उसके घाव तो भर कर अच्छे हो गए थे, किन्तु वह हाथ न तो सीधा होता था, न उठता था और न कुछ काम ही कर सकता था। इसके एक वर्ष पश्चात् वह श्री मथुरा की तीर्थयात्रा को गया। वहाँ श्री यमुना जी को, जो श्रावण में खूब चढ़ी हुई थीं, उसने अपने कई हमजोलियों के साथ तैर कर पार किया। बीच धारा में पहुँचने पर, जब, उसके दाहिने हाथ ने तैरने से जवाब दे दिया, तो उसने निराशा की दशा में उक्त अकर्मण्य बायें हाथ से बलात् तैरना प्रारम्भ किया और लहरों के साथ संघर्ष करता हुआ यमुना को पार कर गया। प्रकृति के पाँचों महाभूतों में से अन्यतम महाबली जल का उसके उक्त अकर्मण्य हाथ पर ऐसा प्रबल और विलक्षण प्रभाव पड़ा कि वह तत्काल ठीक हो गया और वह यथापूर्व काम देने लगा। इसके पश्चात् भी वह जब तक मथुरा में रहा, प्रति दिन यमुना में तैरता रहा। उसका हाथ तो ठीक हो गया, किन्तु आठ मास पश्चात् उसके सारे शरीर पर यत्रतत्र कुष्ठ के फोड़े हो गए, जिसके लिए उसने एलोपैथिक डाक्टर से इंजेक्शन लगवाए। इससे कोई लाभ न होकर उक्त कुष्ठ का कष्ट और भी बढ़ गया और मुख, हाथों, पीठ, पेट, पैरों पर उकवत (एकजिमा) सा हो गया। इस दशा में उसके हाथ पैरों में बड़ी जलन रहती थी। और प्यास बहुत लगती थी।

इसी दशा में उक्त रोगी कांगड़ी गुरुकुल में मेरे पास प्राकृतिक चिकित्सार्थ लाया गया। किन्तु गुरुकुल के इंचार्ज डाक्टर ने उस कुष्ठ के संक्रामक रोगी को यहाँ रहने की आज्ञा नहीं दी, उसने उसके रक्त की परीक्षा करके उसको कुष्ठ रोग ही निश्चित किया था।

यहाँ के समीपवर्ती आर्य विरक्त आश्रम ज्वालापुर के डाक्टर ने भी उसको अपने यहाँ इसी रोग के कारण न रहने दिया। विवशतः उसको यहाँ से दो मील पर कनकल में रख कर श्री डाक्टर टहलदास जी शर्मा प्राकृतिक चिकित्सक के सहयोग तथा निरीक्षण में उसकी प्राकृतिक चिकित्सा हुई। उसको कई छोटे छोटे उपवास कराए गए। उसको एक मास तक प्रति दिन एनीमा दिया गया, प्रति दिन ही उसके शरीर पर श्वेत मृत्तिका (पिंडोल) का गाढ़ा लेप लगाया जाता था और उसके पीछे प्रति दिन ही उदर (पेड़ू) स्नान तथा सायंकाल को एक मेहन स्नान भी कराया जाता था। इस अवधि में उसका आहार प्रायः सन्तरा, टमाटर आदि फल ही रहे थे। इसी चिकित्सा के मध्य में उसको एक बार कई दिन तक

१०५ मात्रा तक का प्रबल ज्वर भी चढ़ा था, जिसे हम उभाड़ कह सकते हैं और उभाड़ तो जीवनी शक्ति के जग उठने का प्रमाण है। उभाड़ ही की सहायता से शरीर विजातीय द्रव्य को थोड़े समय में अधिक निकाल पाता है।

ढाई महीने की चिकित्सा से उसका रोग जड़ से जाता रहा, अब प्रायः दो वर्ष से वह उक्त रोग से बिलकुल मुक्त है। अब उसके देह पर दाग-धब्बे वा कुष्ठ का कोई चिह्न भी दृष्टि गोचर नहीं होता। इस रोगी का स्वास्थ्य-लाभ सचमुच प्राकृतिक-चिकित्सा का चमत्कार ही है।

प्रो० भवानी प्रसाद

कलेजे का फोड़ा अच्छा हुआ

जून का महीना था। जोरों की गर्मी पड़ रही थी। बालक कपिल देव नारायण खाट पर लेटा रो रहा था। मैंने समझा कि शायद अपने पूज्यपिता की गिरफ्तारी तथा वियोग से रो रहा है। लेकिन बात कुछ दूसरी ही थी। उसके पेट में जोरों की पीड़ा आरम्भ हो चुकी थी। कुछ खा-पी नहीं सकता था। यहाँ तक कि जल पीना भी मुश्किल हो गया था। ग्रीष्म के उस ज्वालामय युग में जल पीने में भी कष्ट हो रहा था। हठपूर्वक यदि जल पिलाया भी जाता था तो वह सिकुड़ कर गठरी सा हो जाता था। लड़के की दयनीय दशा देखकर हम लोग घबरा रहे थे। झटपट दौड़ धूप करना शुरू कर दिया गया। शुरू शुरू में वैद्यों से इलाज कराया गया। 'मर्ज बढ़ता गया, ज्यों ज्यों दवा की' वाली कहावत चरितार्थ होने लगी। लगभग ३ सप्ताह तक ये दवाइयाँ चलीं। कुछ लाभ न देखकर होमियोपैथिक डाक्टरों की सेवा में लड़का पेश किया गया। सौ नम्बर, हजार नम्बर और लाख नम्बर तक की दवाइयाँ सेवन कराई गईं। शुरू शुरू में दो चार रोज तक कुछ आराम तो अवश्य हुआ किन्तु इसके बाद तो रोग इतने भीषण रूप में बढ़ा कि फिर कब्जे में न आ सका।

तत्पश्चात् निश्चय हुआ कि अब शहर में चलकर प्रमाणिक वैद्य डाक्टरों से इलाज कराया जाय। इसी निश्चयानुसार हम लोग आरा शहर में एक किराए का मकान लेकर रहने लगे। आरा शहर में बहुत बड़े प्रख्यात डाक्टर वैद्य पड़े हुए हैं। जिस वैद्य या डाक्टर की फीस अधिक होती है, वही प्रख्यात या प्रकाण्ड समझा जाता है न। मोटी से मोटी रकम देकर प्रायः सभी डाक्टर वैद्यों का अक्सीर इलाज लगभग तीन महीने तक चलता रहा। बहुत रुपया खर्च हुआ, बेहद बर्बादी हुई, लेकिन निराशा के सिवाय कुछ हाथ नहीं लगा। अन्त में हम लोग पटना शहर को चल दिए। पटना जनरल हासिटल के आलीशान महल और डाक्टरों के ठाटबाट तथा व्यवस्था के चमक दमक से हम लोगों को विश्वास हो गया कि यहाँ सफलता अवश्य मिलेगी। दुख के दिन समाप्त हुए। लेकिन यहाँ आकर हमलोगों को जो कष्ट झेलना पड़ा उसका वर्णन नहीं हो सकता। डाक्टरों और सिविल सर्जनों ने घोषित कर दिया कि लड़के के कलेजे में फोड़ा हो गया है। बिना आपरेशन के उद्धार होना असम्भव है। एक डाक्टर महोदय जो बहुत बड़े अनुभवी और विशेषज्ञ समझे जाते थे, उन्होंने यहाँ तक कह डाला कि इस रोग में सैकड़े पीछे ९५ रोगी अवश्य मरते हैं। मैंने डाक्टरों से अनुरोध किया कि गरीब परवर! यह गरीबों और अभागों का लड़का है, खुदा के नाम पर इसका इलाज कीजिए। "आपरेशन के सिवाय दूसरा इलाज कारगर नहीं होगा" ऐसा डाक्टरों ने शान में आकर ऐलान किया। पण्डित जी जेल में हैं। उनकी माता तथा धर्मपत्नी घर पर हैं। बिना उन लोगों की इजाजत के आपरेशन कराना मैंने उचित न समझ, राय सलाह के लिए लड़के को साथ लेकर गाँव चला आया।

निराश, खिन्न और दुखी होकर लड़के को लेकर पटना से लौटती समय ट्रेन के जिस डब्बे में मैं बैठा था सौभाग्य से उसी कमरे में जल-चिकित्सा के एक विशेषज्ञ महोदय भी थे। बातचीत के सिलसिले में उन्होंने हमें जल चिकित्सा ही करने की राय दी। उनके बातचीत

(शेष २२६ पृष्ठ पर)

हमारे दाँत और उनका स्वास्थ्य

श्रीयुत वासुदेव शर्म्मा

आधुनिक सभ्यता द्वारा आविष्कृत भोजन सामग्रियों के व्यवहार का सबसे बड़ा अभिशाप यह है कि दाँत खराब हो जाते हैं और असमय में ही गिर जाते हैं फलस्वरूप अनेकों को नकली दाँत लगवाने पड़ते हैं। शर्मा जी द्वारा लिखे गए इस उपयोगी लेख में आपको ऐसी बातों की एक पूरी सूची मिलेगी जिनकी सहायता से आप अपने गिरते हुए दाँतों को बचा सकते हैं और उन्हें पुष्ट बना सकते हैं।—सं०

वर्तमान सभ्य समाज की अव्यवस्थित भोजन प्रणाली और भोजनातुरता की भयंकरता से दुखित होकर एक विद्वान् ने सत्य ही कहा है कि—"हम अपने दाँतों से अपनी कबरें खोद रहे हैं।"

बढ़ती हुई विलासिता, मिष्ट और नरम भोजन हमारे दाँतों को रसातल में पहुँचा रहे हैं। जंगली जाति के दाँत आज भी ईर्ष्या की वस्तु हैं। प्रकृति उनकी रक्षा कर रही है, परन्तु उनमें भी जिन जिन लोगों के सिर पर सभ्यता देवी का चक्कर चढ़ गया है उनके दाँत इस देवी की बलि चढ़ रहे हैं। असमय में बूढ़ा बनाने वाले इन दाँतों को क्या कहें, जो जिन्दगी के मजे को किरकिरा कर देते हैं, परन्तु इनका कोई अपराध नहीं। हमें जंगली जातियों से आज बहुत कुछ सीखना है। भले ही हम कितने ही सभ्य बनते जायँ, कितने ही रंग विरंगे भड़कदार शीशियों में भरे हुए नये नये डेन्टल क्रीम, टूथपेस्ट बनाते जायँ, परन्तु उनसे हम अपने दाँतों की रक्षा न कर सकेंगे। आज बेचारे टूथब्रश भी असहाय हो अपनी असमर्थता के लिए अत्यन्त दुखित हैं। न्यूजीलेंड के स्कूल मेडिकल सर्विस रिचमंड डून डेंटल रिकार्ड में अक्टूबर १९२० में इन दाँतों के ब्रश और पेस्ट आदि की निरर्थकता पर लिखते हैं "क्यों हम जनता को दाँतों के मंजन और ब्रशों के झूठे विज्ञापन दे देकर ठगते हैं? क्या यह सत्य नहीं है कि इनके द्वारा आज तक कोई भी दाँत का रोगी अच्छा नहीं हुआ? हम क्यों व्यर्थ इनका उपयोग किये जाते हैं। यह कैसी बात है कि जो सज्जन नियम पूर्वक इन ब्रशों और पाउडरों का उपयोग करते हैं वे ही डेंटिस्टों को अच्छी कमाई देने वाले हैं। क्या इनसे हमारे दाँतों के रोग बढ़ नहीं रहे हैं।"

अब भी समय है

चिन्ता करने की कोई बात नहीं। जो दाँत अभी जुड़ा है, जिसमें अभी जीवन है वह अच्छा हो सकता है है। ऐसे कई उदाहरण हैं। होरेस फ़्लेचर ने तो संसार को चकित कर दिया। उसके नियम कितने सरल हैं। 'खूब चबाओ।' खूब चबाने के गुण अवर्णनीय हैं। जो भोजन आदि नहीं चबाते उनके दाँत और उनकी जड़ें खुली हुई पाई जाती हैं। दाँतों में खोल, उनकी रंगत पीली व काली, मसूड़े काले या नीले, और दाँत और मसूड़े के पास काले कीट की पर्त जमी मिलती है। ये सब अच्छा न चबाने वाले की अवस्थाएँ हैं। अच्छा चबानेवाले के दाँत दृढ़, चौड़े, सफ़ेद, चमकीले, मसूड़े लाल रंग के और सब दाँत एक पंक्ति में पाये जाते हैं। बैल, गाय, भैंस आदि पशु बड़े अच्छे चबानेवाले हैं उनके दाँत ऐसे ही होते हैं। क्या वे कभी दतौन करते हैं? सूखी घास को चबा कर उससे पूरे शरीर का पोषण कर

लेते हैं; और मनुष्य जाति दूध, घृत, मिठाई से पौष्टिक पदार्थों को निगल कर भी भूखों मरती और कृशांगी बनी रहती है। पशुओं को कभी कब्जियत नहीं होती न दस्त ही उनके गुदाद्वार के आसपास लिपटा रहता है। बारीक चबाने वाले का मल सूक्ष्म चिकना और बँधा हुआ निकलता है तथा एक ही बार में आँत साफ हो जाती है।

खूब चबाने से मीठे, तीखे, चरपरे पदार्थ भी हानि नहीं पहुँचा सकते। कारण कि वे इतने चबाये जाते हैं कि चबाते चबाते मुँह में घुल जाते हैं और उनका मीठापन या चरपरापन सब राल में मिल जाता है। अब उनका वह प्रदाहीपन या मीठापन शेष रहा ही कहाँ? इससे यह न समझना चाहिए कि इन हानिकर पदार्थों का भर पेट सेवन किया जाय। अन्य भोजन के साथ और दाँत स्वास्थ्य के अनुसार ये खाये जायँ तो हानि की सम्भावना कम रहती है। अच्छा चबाना दाँतों का बीमा है यह आपको हृदयंगम कर लेना चाहिए।

(१) दाँतों में खोल आदि शक्कर-मैदा आदि पदार्थों से होती है अतः इनका सेवन सोच समझ कर करो।

(२) अच्छा भोजन न चबाने से दाँत ऊँचे नीचे रहते हैं। पुष्ट नहीं होते और चर्वण करने वाले स्नायु निर्बल पड़ जाते हैं। अतः अच्छा चबाने की आदत डालो।

(३) भोजन का अन्त कड़ी रोटी, फल, तरकारी आदि के द्वारा करो।

(४) भोजन के पश्चात् दाँतों की अच्छी सफाई करो।

(५) दो भोजन के बीच कुछ न खाओ।

(६) रात्रि को सोने के पूर्व दूध मत पीओ। यदि पीना ही हो तो मुँह को नमक आदि के कुल्ले से साफ करना चाहिए।

(७) मुँह से साँस लेना छोड़ो।

(८) दिन में दो या तीन बार भोजन करो।

'ऐड्स टू फिटनेस' नामक एक छोटे से पर्चे के द्वारा दन्त स्वास्थ्य के कुछ सरल और उत्तम नियम जनता में प्रचारित किये गये थे। और १५ मई १९१२ ई० को टाइम्स ने भी विशेष लेख लिख कर जनता का ध्यान इन पर आकृष्ट किया था। उन नियमों का यहाँ देना अत्यन्त लाभकारी होगा।

(१) अपने दाँतों की ओर ध्यान दो। शरीर के दूसरे अंगों के समान इन्हें भी व्यायाम की आवश्यकता है और बिना व्यायाम के वे नष्ट हो जाते हैं।

(२) बिना व्यायाम के तुम्हारे जबड़े भी पूरे विकास को प्राप्त नहीं होंगे। मुलायम भोजन निगलने से दाँतों को व्यायाम नहीं मिलता और न जबड़ों का ही विकाश होता है।

(३) प्रसिद्ध अमेरिकान होरेस फ़्लेचर का किस्सा याद रक्खो कि वह ४० वर्ष की अवस्था में जीवन से निराश हो गया, उसने बारीक चबाना आरम्भ किया ५० वर्ष की अवस्था में वह बलिष्ठ होने लगा और ५९ वर्ष की अवस्था में उसने कई कॉलेज और यूनिवर्सिटी के शक्ति और सहनशीलता के रिकार्ड तोड़े।

(४) यदि फ़्लेचरिज्म का पालन पूर्णतया न हो तो जितना पालन हो उतना करने का भरपूर प्रयत्न करो।

(५) सूखी और अच्छी कड़ी सेंकी हुई रोटी के चबाने के मौके को कभी हाथ से मत जाने दो। हलुवा, मिठाई, मुरब्बा कम खाओ। फल से भोजन का अन्त करना सीखो। अन्त में रसदार ताजे फल, नारंगी, सेब आदि के खाने से दाँत प्राकृतिक रूप से अच्छे साफ होते हैं। प्रत्येक भोजन के अन्त में मुँह को खूब कुल्ले करके साफ करो।

(६) भोजन के साथ जितना कम हो सके उतना कम पानी पियो। भोजन में पानी का विशेष भाग रहता ही है और अच्छा चबाने वाले को पानी की आवश्यकता नहीं रहती।

(७) दो भोजनों के बीच के समय में और प्रातः काल उठते ही तथा रात को सोने के पूर्व पानी पीना अच्छा है।

(८) मुरब्बे, मिठाई आदि की अपेक्षा शहद, मीठे और ताजे फलों का उपयोग करो और उन्हें अच्छा समझो।

(९) मांस खाना भी आवश्यक नहीं है।

(१०) अचार, खटाई, मसालों का सेवन संयम से करो।

(११) जब भूख न हो बिलकुल न खाओ और भोजन कर चुकने पर जब-तब पेट में कुछ न कुछ मत ठूंसो।

(१२) विशेष कर भोजन कर लेने के बाद बिस्कुट, चाकलेट, शक्कर, गोली, मिठाई, दूध, रबड़ी खोया, चाय आदि मत छुओ। ये वस्तुएँ रात को सोने के प्रथम भी मत खाओ।

(१३) मिठाइयों की दूकानें, होटल आदि स्वास्थ्य को चौपट कर देने वाले भयंकर शत्रु हैं। जिन कॉलेजों में ये हों उन्हें इन दूकानों को एक दम हटा देना चाहिए इन नियमों का पालन करने से साधारण रोग जैसे सिर-दर्द, दाँत-दर्द, अजीर्ण, मिचली, उबकाई आना आदि शीघ्र ही दूर हो जाते हैं।

नीम की दतौन

नीम की दतौन दाँतों के लिए अमृत तुल्य है। इसका प्रयोग इस प्रकार किया जावे—

(१) दाँतों से चाब कर इसकी अच्छी कूँची बनाई जावे।

(२) एक गिलास पानी में थोड़ा नमक घोलकर उस पानी के साथ दाँत साफ किये जावें। पानी को मुँह में भरकर नीम की कूँची आहिस्ते आहिस्ते दाँतों पर फेरी जावे। मैला पानी थूक दिया जावे। फिर दूसरा पानी लेकर दाँतों को कूँची से साफ किया जावे।

(३) दतौन को दाँतों के बीच अच्छी तरह दबाकर दतौन का दूसरा सिरा हाथ से पकड़ कर बाहर की ओर खींचा जावे। इसमें दाँतों का व्यायाम होगा। अब उसी प्रकार दतौन को दाँतों में दबाकर अन्दर की ओर हल्का धक्का दिया जावे।

(४) दतौन जोर से सब दाँतों से चबाया जावे। राल नीचे टपकाई जाय।

(५) दतौन को चीरकर उसकी एक चीप से दाँत का मैल निकाला जावे।

(६) नमक के पानी से कुल्ले कर मुँह साफ किया जावे। अँगुली को मसूड़ों पर फेरो जिससे वे मजबूत होंगे।

(७) सावधानी रहे कि मसूड़ों से खून न आने पावे। आरम्भ में आहिस्ते आहिस्ते काम लेना चाहिए। बबूल की कूँची अच्छी बनती है, वह मसूड़े मजबूत कर मुख के छाले मिटाती।

प्रातःकाल, दोपहर और सोने के पहले इस प्रकार दाँत साफ करने वाले कभी दंतरोगी हो ही नहीं सकते। खराब दाँतवालों के दाँत अच्छे हो गये हैं और उन्होंने दाँत के डॉक्टरों को आश्चर्य में डाल दिया है। पायरिया रोग तक से मुक्ति मिल जाती है।

एक अमेरिकन के बाइस वर्ष की अवस्था में दाँत बिगड़ गये। वह कॉलेज का एक परिश्रमी विद्यार्थी था। उसे फुर्सत नहीं थी कि वह अपने दाँतों को साफ करे। दाँतों के खराब होने से उसकी स्मरणशक्ति जाती रही। किसी काम में उसका चित्त नहीं लगता था। डॉक्टर ने उसे सलाह दी कि सब दाँत धीरे धीरे उखड़वा डालो। दाँत को उखड़वा देना और नकली दाँत इस नई उम्र में बिठाना इस बात की कल्पना से ही उसके रोंगटे खड़े हो गए। क्या वह और किसी उपाय से अपने प्रकृति दत्त दाँतों को बचा नहीं सकता? वह घर आया और शान्त चित्त से विचार करने लगा। उसने दंत स्वास्थ्य पर बड़े बड़े ग्रन्थ पढ़े और इस तथ्य पर पहुँचा कि दाँतों से काम न लेने से वे निर्बल पड़ जाते हैं और यदि उनसे अच्छा काम लिया जावे तो वे कभी नष्ट नहीं होते। चबाने से दाँतों के नीचे का माँस विभाग और नसों में रक्त-संचार की वृद्धि होती है शुद्ध रक्त के संचार से दाँत भी बलवान बनते हैं। अतः उन्हें व्यायाम देना चाहिए। उसने चार कसरतें जो

नीचे दी जाती हैं करना आरम्भ किया। इन कसरतों के करने में एक बार में दो से तीन मिनट लगते हैं और दिन में दस बार वह इन कसरतों को करता था। वह लिखता है कि "पहले महीने तो मेरे दाँत कुछ दर्द करते रहे पर दूसरे महीने से उनका दर्द दूर हो गया। छः महीने बाद जब मैंने डॉक्टर को दाँत दिखलाए तो वह बड़ा विस्मित हुआ और बोला कि तुम्हारे दो तीन दाँत ही रोगी हैं शेष सब अच्छे हैं। दो वर्ष के बाद एक भी दाँत खराब न रहा। मेरे दाँत स्वस्थ, दृढ़, चमकीले और सफेद हो गये और मेरे स्वास्थ्य में कई गुना अन्तर पड़ गया। इन व्यायामों को मैं दिन भर में दस बार खासकर भोजन के पूर्व और पश्चात् तथा प्रातः उठते ही और रात को सोने से पूर्व और भोजनों के बीच के घंटों में किया करता था। मैंने धार्मिक रूप से अनिवार्य समझ बिना नागा इन व्यायामों को किया है।"

पहली बात यह है कि मसूड़ों के चारों ओर खून का अच्छी तरह दौरान हो इसके लिए

(१) झूठमूठ चवाना—मान लो कि कुछ वस्तु मुँह में है और उसे तुम चवा रहे हो। नीचे के जबड़े को इधर उधर फेरकर दाँतों पर दवाव दो। सब दाँतों को इसे प्रकार व्यायाम दो। नीचे के दाँत ऊपर के दाँतों को हल्के हल्के दवावेंगे इससे जबड़े और दाँतों के नीचे की गद्दी और नसों में रक्त का संचार होगा। बार बार इस प्रवाह के आने से दाँत की जड़ें पुष्ट होंगी और उनका पोषण होगा।

(२) अब एक दाँत को अँगुली से पकड़ कर आगे पीछे धीरे धीरे हिलाओ। इस प्रकार सब दातों को बारी बारी से हिला जाओ।

(३) अँगुली के सिरे से मसूड़ों पर धीरे धीरे रगड़कर मालिश करो। (तैल की जरूरत नहीं)

(४) प्रातः सायं दाँतों को ब्रश से साफ करो।

(५) पानी के कुल्ले से मुख साफ कर लो।

ब्रश की अपेक्षा नीम की ताजी लकड़ी की दतौन श्रेष्ठ है। ब्रश से दाँत की जड़ें खुल जाती हैं। ब्रश नित्य नित्य साफ नहीं किये जा सकते। उन्हें गर्म पानी में नित्य उवाल नहीं सकते। बाल झड़ जाते हैं। पाउडर और पेस्ट आदि दाँतों की सन्धियों में घुसकर सड़ते हैं और सूजन पैदा करते हैं। रोगों से वचने का नीम और बबूल की दतौन सरल उपाय हैं। इसको चवाने से दाँतों को उत्तम व्यायाम मिलता है। नीम में गंधक होने से कीटनाशक गुण है। ताजा रस दाँतों को बलवान बनाता है और रोग दूर करता है। इससे मुँह में मिठास आती है और दुर्गन्ध दूर होती है। मैं समझता हूँ कि अब आपके दाँतों को दर्द करने की कोई आवश्यकता नहीं।

मैं चाहता हूँ और हृदय से चाहता हूँ कि आप स्वस्थ दंत-पंक्तियों के स्वामी बनें तभी ये पंक्तियाँ सार्थक होंगी।

कहा जा सकता है कि 'भूल-सुधार करने के लिए कभी भी बहुत देर नहीं होती' पर साथ यह मसल भी मशहूर है 'आखिरी वक्त में क्या खाक मुसलमाँ होंगे'। इसी लिए स्वास्थ्यार्थी को सदैव सावधान रहना चाहिए। और स्वास्थ्य सुधार का सबसे पहला अवसर ग्रहण कर उसमें संलग्न हो जाना चाहिए। यह तो हुई रोगियों और तन्दुरुस्ती चाहने वालों की बात। चिकित्सकों का तो सिद्धान्त होना चाहिए 'जब तक साँस तब तक आस'।

रोग प्रकृति की ओर से बहुमूल्य सहायता की आयोजना है। उसका उद्देश्य शरीर को सुरक्षित रखना है। वैसे तो रोग होना ही नहीं चाहिए लेकिन जब तक मनुष्य मनुष्य है रोग होगा ही। रोग कल्याणकारी है, यह इसीसे सिद्ध होता है कि यदि समय समय पर शरीर रोग द्वारा निर्विकार और परिष्कृत न होता रहता तो मानव-जाति कभी की लुप्त हो जाती।

इसीसे रोग को अप्राकृतिक औषधि व्यवहार और भोजन पद्धति से दबाना न चाहिए।

प्रकृति माता का नवादेश

श्रीयुत मनोहर सिंह पँवार, डाइरेक्टर, रैडिएन्ट हेल्थ सेन्टर, सीयागंज, इन्दौर

लेखक

आज हम एक बड़ी नाजुक स्थिति में से गुजर रहे हैं। हमारा अस्तित्व भी खतरे में है। ऐसा मालूम होता है कि एक नई व्यवस्था का निर्माण होने वाला है।

यदि हम अपने स्वास्थ्य का विचार करें तो वह भी कम नाजुक हालत में नहीं है। दिन प्रति दिन, मास प्रति मास, वर्ष प्रति वर्ष, हमारा स्वास्थ्य अधिकाधिक चिन्ता का कारण बनता जा रहा है। मुश्किल से हम एक बीमारी से छुटकारा पाते हैं कि दूसरी और भी भयंकर, और भी अधिक निराशाप्रद बीमारी हमारे सामने आ खड़ी होती है। जैसे स्थाई स्वास्थ्य हमें कभी भी नसीब न होगा।

वैज्ञानिक रात दिन उस स्वास्थ्य की देवी की खोज में लगे रहते हैं जो कि सदा के लिए मनुष्य को तन्दुरुस्त, युवा और सुखी बना सके, एवं बीमारियों, बुढ़ापे और दुखों का विध्वंस कर सके। परन्तु फिर भी आज स्वास्थ्य के मन्दिर से हम इतने दूर हैं जितने शायद किसी समय भी न थे। बीमारियाँ मानव-समाज पर और भी अधिक निर्दयता और तेजी के साथ हमला करती जा रही हैं। हमारा मार्ग बड़ा विकट और अन्धकारमय है, निराशा के घनघोर बादल छाए हुए हैं। हम किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गए हैं। पर अब निराशा के ये काले बादल फट जायँगे, ज्ञानसूर्य चमक उठेगा और संसार में एक नए सन्देश की दुन्दुभी बज उठेगी।

दवाई की वे घातक मोहकारी शीशियाँ जो हमें जीवन में अविवेकपूर्ण अनियमितता सिखलाती हैं जल्द ही अदृश्य हो जायँगी। हमारा स्वास्थ्य उनके बन्धन से सदा के लिए मुक्त हो जायगा।

प्रकृति-माता की वे जीवन-शक्तियाँ जो कि प्राणी मात्र का जीवन-आधार हैं हमें रक्षा का कवच पहनाएँगी।

स्वच्छन्द सूर्य-रश्मियाँ, साफ हवा, स्वच्छ जल, स्वास्थ्यप्रद भोजन, व्यायाम और यथोचित शारीरिक और मानसिक विश्रान्ति ही अतीत काल से हमारे स्वास्थ्य के आधार स्तंभ रहे हैं। ये प्राकृतिक शक्तियाँ ही हमारी सृष्टि करती हैं, हमें ज़ीवित रखती हैं और उनमें हमें चंगा करने की शक्ति भी गर्भित है। दुर्भाग्य से हम इस अटल सत्य को भूल बैठे हैं और यही कारण है कि हमारे स्वास्थ्य का प्रश्न इतना जटिल हो गया है।

परन्तु अब वह दिन दूर नहीं जब हमें फिर प्रकृति माता की शरण लेनी पड़ेगी। वह हम बिछुड़े हुए बच्चों को गले से लगाएगी, हमारी अज्ञानता को दूर करेगी और हमें अखंड स्वास्थ्य का वरदान देगी।

तब हमारे लिए व्याधियाँ केवल भूत काल की एक धुँधली स्मृति रह जाँयगी और दर्दभरा कराहना, जीवन का ह्रास करने वाली चिन्ताएँ, विधवाओं का रुदन, माताओं की करुण पुकारें सदा के लिए बन्द हो जायँगी, और सारे संसार में अमिट स्वास्थ्य और स्वर्गीय खुशी का साम्राज्य छा जायगा।

आओ अब हम प्रकृति-पथ से उस देश में चलें जहाँ पर स्वास्थ्य, शक्ति और उत्साह का रोमांचकारी नृत्य होता है। जहाँ पर यौवन सौन्दर्य और आकर्षण के मधुर संगीत का श्रोत बहता है।—जहाँ पर प्रेम प्रकाश और प्रशान्ति का सुधापान होता है।—जहाँ पर चिन्ता, भय और घृणा का नाम भी नहीं है।—जहाँ पर दर्द-दुःख और क्रोध का कोई स्थान नहीं है।

प्रकृति माता की चिरायु गोद नित्य नूतन है—उधर ही हमारा कदम बढ़ता रहे।

चिट्ठी-पत्री

"अपने यहाँ प्रयोग का उत्साह ही नहीं है। अरे, हो गया किसी का नुकसान भी तो वह नुकसान क्या ? समाज का तो कुछ भला ही होगा। सिद्ध हो गया तो लोग उसे ग्रहण कर लेंगे अन्यथा उन भूलों से बचेंगे। आखिर तो इस शरीर को जाना ही है। इसे से-से कर रखने से बहुत क्या अच्छा है ?"

प्रिय विट्ठल जी,

जीवन सखा के कल फरवरी मार्च के अंक मिले। 'उपवास क्यों ?' अच्छा है। श्री सुन्दरलाल जी का पत्र 'रोमांचकारी' है। हम आलसी जीवों को उपदेश लेना चाहिए बापू के जीवन से। स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है एक जगह कि लोहे का मुर्चा लगकर नष्ट होने की अपेक्षा घिस घिसकर नष्ट होना कहीं अच्छा है। घिसने से चमक रहती है। इसीसे इस बुड्ढे में है। आनन्द जी[1] का 'मिट्टी या सोना' मजेदार है।

डाक्टर 'पोटैटो' खूब हैं। मुझे तो 'आलू' खाते अभी पन्द्रह दिन ही हुए हैं। पर कोरमकोर आलू ही नहीं दूध और खजूर और थोड़ा कोई साग भी पका हुआ साथ रहता है। वजन घटा हो ऐसा तो नहीं जान पड़ता। उत्साह खासा है। इस लेख से तो प्रयोग को कुछ दिन और चलाने का उत्साह आ गया। लेख ऐसा है कि इसे पढ़कर कोई कोई आलू पर रहने का इरादा कर सकते हैं। लेकिन मेरा खयाल है कि हर किसी को ऐसे प्रयोग में नहीं पड़ जाना चाहिए। पुराने समय में अस्त्र चलाना और वापस लेना दोनों साथ सिखाया जाता था। कोई कोई अनाड़ी रहे जो फेंक तो देते हैं पर वापस लेना नहीं जानते थे उनकी दुर्गति हुई दिखाई गई है शास्त्रों में। जो सावधान हैं, अर्थात् जिन्हें प्रयोग का ढंग है—यह भी एक कला है अर्थात् 'बाबा वाक्यं प्रमाणं' मानकर जो नहीं चलते अपने हिसाब से कमी बेशी कर लेते हैं, जिनमें सूक्ष्म अनुभव शक्ति है उन्हीं को प्रयोग करना चाहिए। अखबार और पोथियों में पढ़ते ही प्रयोग में लग जानेवाले कभी कभी बड़ी गड़बड़ में पड़ जाते हैं। मैं तुम्हें एक किस्सा सुनाया करता हूँ न। गुजराती में शायद 'योगतत्त्व' नाम की एक किताब है। उसमें पानी पर एक प्रकरण है। बड़ी तारीफ है पानी की उसमें। उन दिनों जवानी थी। प्रयोग का जोश था। उसमें बताया कम से कम ६ सेर पानी रोज पीना चाहिए स्वस्थ रहने के लिए। पोथी का पढ़ना खत्म भी नहीं किया था कि शुरू कर दिया पानी पीना। ६ सेर तो बहुत होता है। दो दिन किसी तरह पाँच-पाँच, साढ़े पाँच-पाँच सेर पीया। कुछ ठीक नहीं बैठी। पोथी जो आगे पढ़ी तो खुला भेद कि यह सेर अहमदाबादी है। जहाँ पाउंड ही सेर है। तब जचा जाँचा। तीन ही सेर तो हुआ और इतना पीना आसान था। इसी सेर के बखेड़े में इस बार अहमदाबाद में फिर गलती हुई। ताँबे का एक गरमावा लेने की इच्छा हुई। अहमदाबाद में दूकानों पर बहुत बढ़िया गरमावे पड़े देखे। मुलवाये, ।।।=) सेर। बड़े सस्ते हैं भाई—ताँबे का भाव तो लड़ाई की वजह से बढ़ा हुआ है और सस्ते दिनों में वर्धा में मुलवाया था तो १=) था और यहाँ ।।।=), इतना सस्ता कैसे ? एक पसन्द किया, अन्दाज किया ७–८ सेर होगा, तौलने को कहा तो बोला १५–१६ सेर होगा। लेना हो तो तौल दें। याद पड़ा अरे यहाँ तो तोल की पोल है। तज दिया इरादा लेने का। ऐसे ही समझने समझाने में भूल हो जाती है।

---

[1] **भदन्त आनन्द कौसल्यायन।**

जो प्रयोग बहुत समझ बूझकर न किये जायँ तो कर्त्ता को हानि होती है और वस्तु बदनाम होती है। लिखने बतानेवालों को भी 'सांगोपांग' बताना चाहिए। आधा तीतर आधा बटेर करके समझ लिया कि सामनेवाला समझ गया होगा।

हिन्दुस्तान में आलू पर किसी होशियार आदमी ने प्रयोग किया है या नहीं पता नहीं। पर तुम्हारी ताई ने एक समय फलाहार करके जो पिछला चौमासा किया उसमें प्रधान आहार तो पाव भर आलू ही थे। तस्वीरवाले शिव पल्टन शुक्ल आलू और उबले हुए हरे साग वगैरह पर साल सवा साल रहे और अच्छे रहे। वह सेरों की मात्रा में खाते रहे। लेख में अढ़ाई सेर से चार सेर तक की बात है—हिन्दुस्तान में यह मात्रा अधिक है—यूरोप की खुराक यहाँ से अधिक है। मौसम में भी भिन्नता है। बड़े-छोटे पेट (थैली) पर भी निर्भर है। काम पर तो है ही। ऋतु पर भी है। मेरा खयाल है शाक का रस जो आध छटाँक है वह पाव तक बढ़ाना चाहिए। आलू के छिलके पर ध्यान नहीं दिलाया है छिल्का रहना ही चाहिए। 'जीवन-सखा' पढ़कर प्रयोग करनेवाला देहाती नहीं होगा, शहराती होगा, उस बेचारे से अढ़ाई तीन सेर आलू कहाँ खाये जायँगे। जो कुदार चलाता है वह तो खा जायगा। अपने राम तो दोनों वक्त में आध सेर आलू लेते होंगे। आज तौलकर भी देखेंगे।

आनन्द बहुत बिगड़ा है मेरे प्रयोगों पर। एक बड़ा लंबा पत्र अंग्रेजी में लिखा है। उसमें इन तुच्छ बातों पर जरूरत से ज्यादा ध्यान देने की भर्त्सना की है। उसे क्या मालूम कि लेनिन को रूस के काया पलट के प्रयोग में जो मजा आता था उससे मुझे कुछ ही कुछ कम अपने प्रयोगों में आता है। उस वक्त जब करता हूँ। बाद को कई बेकार भी साबित होते हैं। 'आलू' वाला लेख प्रयोग के लिए उत्साह वर्द्धक सामग्री देता है। मैं जेल में तो खाली आलू पर नहीं रहना चाहता। बाहर निकलकर शायद देखूँ। किसी मजबूत ढाँचेवाले को करके देखना चाहिए। अपने यहाँ प्रयोग का उत्साह ही नहीं है। बालू[*] का ही देखो। अरे, हो गया किसी का नुकसान भी तो वह नुकसान क्या। समाज का तो कुछ भला ही होगा। सिद्ध हो गया तो लोग उसे ग्रहण कर लेंगे अन्यथा उन भूलों से बचेंगे। आखिर तो इस शरीर को जाना ही है। इसे 'से-से' कर रखने से भी बहुत क्या फायदा है?

शुभ चिन्तक—**महावीरप्रसाद पोद्दार**

क्या आपको भी कुछ कहना है ?

क्या आपने जीवन सखा के सिद्धान्तों के अनुसार खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने का अनुभव किया है? यदि हाँ तो उसे दूसरों की सहायता, तथा मार्ग-प्रदर्शन के लिए लिख भेजें। उन्हें हम जीवन सखा के इस स्तम्भ में सहर्ष स्थान देंगे। यदि सम्भव हो सके तो यह चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व और बाद का अपना फ़ोटो भी भेजें। आप का अनुभव दूसरों के बड़े काम का हो सकता है। अपने अनुभव निष्पक्ष भाव से तथा सच्चाई के साथ लिखें। यदि आपने किसी अन्य व्यक्ति को इस चिकित्सा-प्रणाली के द्वारा लाभ पहुँचाया हो तो उसके सम्बन्ध में भी अपने अनुभव भेज सकते हैं।—सम्पादक

---

[*] गत फरवरी के अंक में प्रकाशित 'बालू की महिमा' लेख में श्रीयुत आनन्दवर्धन जी ने लिखा था कि जिन लोगों ने बालू से कब्ज हटाने पर प्रयोग किए हों वे कृपा पूर्वक लिख भेजें। पर कोई उत्तर नहीं आया।

प्रश्नोत्तर ?

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर कूपन अवश्य आना चाहिए जो २२९ पृष्ठ पर छपा है। महीने की दस तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का ही उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा। ---सं०

प्रश्न---मेरा छोटा भाई जो करीब छ महीने का है उसे टीका लगाया गया है। टीका पक गया है और दानों में मवाद भर गया है। लूईकूने लिखत 'आकृति-निदान' में मैंने पढ़ा कि टीका लगवाने से कोई फायदा नहीं है। मुझे भी कुछ कुछ ऐसा ही अनुभव हुआ है। क्या कोई ऐसा उपाय है जिससे बच्चे का कष्ट मिट सके।

कुँवर चन्दनसिंह, बर्दवान

उत्तर---आप जो अनुभव के बल पर यह समझ रहे हैं कि टीका लगवाना फायदेमन्द नहीं है, वह ठीक है। यह बहुत ही घातक प्रथा है और एक रोग के भय से गन्दी दवा---मुँह की राह न सही---खाना है। टीका लगाने से अनेक अनर्थ हुए हैं। लोगों को कोढ़ तक हो गया है, ऐसी मिसालें मौजूद हैं। आप बच्चे को दूध पीने के समय के बीच में थोड़ा थोड़ा शन्तरे का रस पिलाइए। घाव पर पानी में भिगोया हुआ पाँच-चार तह कपड़ा रखिए। यह पट्टी बार बार बदलनी चाहिए और बच्चे के पेड़ू पर मिट्टी की हलकी सी पट्टी भी सवेरे शाम आध आध घंटे के लिए रखनी चहिए। आशा है आपका बच्चा शीघ्र अच्छा हो जायगा।

प्रश्न---हमारे घर में एक सवा वर्ष का बच्चा है। डाक्टरों का कहना है कि पूरे दाँत न निकलने तक---दो वर्ष तक उसे दूध पिला कर ही रखना चाहिए। बच्चे को अभी छ दाँत---चार ऊपर और दो नीचे---ही निकले हैं और वह अन्न शाक आदि जो हम लोगों का आहार है, के लिए मचलता है और दूध पीने से आनाकानी करता है। इस बारे में आपकी क्या राय है?

---मोतीलाल लाठ, कलकत्ता

उत्तर---आप के डाक्टरों ने जो राय दी है वह ठीक है। दाँत आने पर ही अन्न देना चाहिए। जब और कुछ दाँत निकल आवें तो बच्चे को सेव नाशपाती से फल का टुकड़ा कुचलने को दीजिए। जब दांत निकलते हैं तो स्वभावतः उनमें कुछ काटने की इच्छा पैदा हो जाती है पर अन्न तो पूरे दाँत निकल जाने पर ही देना चाहिए। यदि बच्चे को दूध देने के बीच बीच में कुछ खट्टे फलों का रस दिया जायगा तो दूध पीने की रुचि बनी रहेगी। आपने बच्चे को अन्न खाना सिखा दिया इसी से वह अन्न के लिए मचलता है। आप कृपा कर उसे जहाँ भोजन बनता है एवं जिस कमरे में भोजन किया जाता है से दूर रखिए। धीरे धीरे उसे फल दूध से तृप्ति होने लगेगी।

प्रश्न---मेरी कन्या जिसकी आयु १३-१४ वर्ष की है पहले बहुत हकलाती थी। पर यह हकलाहट धीरे धीरे स्वयं चली गई और सात वर्ष तक ठीक रही पर इधर वह हकलाहट फिर पैदा हो गई है। प्रचलित उपायों से कुछ लाभ नहीं हुआ। आप कोई उपाय बतावें?

---अमरनाथ चोपड़ा बजाज, जम्मू

उत्तर---यदि आप लिखते कि आपने कौन कौन से उपचार आजमाए तो उत्तर देने में सहूलियत होती।

बहुत से लोगों का मत है कि हकलाने का बहुत कुछ कारण मनोवैज्ञानिक है। जब किसी के सामने अपने विचार स्पष्ट नहीं होते तो वह उनको शब्दों का रूप देते हिचकिचाता है, बारम्बार सोचता है। यह कहें या वह—में रह जाता है और स्पष्ट बोल नहीं पाता। हकलाहट स्वर-प्रणाली में खराबी पैदा हो जाने से भी हो सकती है। आप अपनी लड़की को गाना सिखाइए। ऊँचे स्वर से गायन का अभ्यास कर कितने ही लोगों ने हकलाने की आदत मिटा ली है।

प्रश्न—मेरे एक मित्र को बहुत कब्ज रहता है। प्रातःकाल उठ कर एक लोटा पानी पी लेने के बाद फिर थोड़ी बहुत देर दौड़ लगा लेने पर भी शौचगृह में काफी देर लगती है परन्तु तौ भी तबियत साफ नहीं होती। आपकी सम्मति में उनको अपना यह कठोर कब्ज दूर करने के लिए क्या उपचार करना चाहिए?

—देवकीनन्दन गोयल, नई दिल्ली

उत्तर—कब्ज का बहुत अधिक सम्बन्ध भोजन एवं कसरत से है। जब तक इन दोनों का उचित सहारा नहीं लिया जायगा कब्ज दूर होना कठिन है। कृपा कर आप अपने मित्र का ध्यान इस अंक में प्रकाशित 'भोजन के पाँच नियम' लेख की ओर आकर्षित करें। उन्हें वे अवश्य बर्तें और अपने भोजन में साग-सब्जी और फलों को यथेष्ट स्थान दें। अच्छा हो कि वे कुछ दिन तक शाम को केवल तरकारी खाकर रहें और सवेरे के भोजन में केवल फल। दोपहर को चोकर समेत आटे की रोटी और सब्जी। साथ में गाजर, टमाटर, मूली वगैरह तीन चार छटाँक कच्चा ही खायँ। सवेरे शाम तीन-चार मील टहलना उनके लिए ठीक रहेगा। पानी भी दिन में उचित मात्रा में पीना चाहिए। कई लोगों को पानी कम पीने के कारण ही कब्ज रहता है। सोते समय यदि पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी बाँध ली जाय तो पेट अवश्य ही साफ होता है।

प्रश्न—सन्तान-निग्रह पर कुछ प्रकाश डालिए। यह तो हर कोई जानता है कि इसका सबसे उत्तम उपाय ब्रह्मचर्य है परन्तु साथ ही साथ यह भी किसी से छिपा नहीं है कि यह कार्य-रूप में परिणित हो सकना कितना कठिन है।

—कृष्णप्रसाद, दिल्ली

उत्तर—ब्रह्मचर्य पूर्वक रह सकना निश्चय ही बहुत कठिन है और साधारण भोजन ग्रहण करते हुए ऐसा कर सकना तो असम्भव है। यदि दाल नमक और बहुत सी हालतों में दूध का भी पूर्णतया अथवा अंशतः प्रयोग बन्द कर दिया जाय तो इन्द्रिय-निग्रह में बहुत अधिक मदद मिलती है। गत अगस्त सन् ४० में प्रकाशित लेख 'इन्द्रिय निग्रह की समस्या' में इस विषय पर यथेष्ट प्रकाश डाला गया है। सन्तान निग्रह के अप्राकृतिक साधन तो हमसे अधिक एवं स्पष्ट रूप से आपको कोई भी एलोपैथ डाक्टर बता सकता है।

प्रश्न—मोतियाबिंद और गुरदे की पथरी कटने का प्राकृतिक इलाज क्या है?

—रामरत्न एच० मेहता, इन्दौर

उत्तर—आपके इस छोटे प्रश्न का उत्तर 'प्रश्नोत्तर' स्तम्भ में दे सकना बहुत कठिन है पर इस विषय पर कुछ प्रकाश अवश्य ही डाला जा सकेगा। अनुचित मात्रा में इकट्ठा कफ जब आँखों की पुतलियों पर जम जाता है तो उसे मोतियाबिंद रोग का नाम दे दिया जाता है। जब यह रोग शुरू होने लगे तब इसका इलाज आसान है। मोतियाबिंद पक जाने पर तो आपरेशन ही एक जरिया रह जाता है। इकट्ठे मल को प्रकृति भी निकालना चाहती है, आपरेशन कराकर आप उसकी सहायता ही करते हैं। दवा के सहारे विजातीय द्रव्य को शरीर के अन्दर रहने के लिए विवश करना ही अप्राकृतिक है।

गुरदे की पथरी गलत रहन सहन के कारण अधिकतर बैठ कर काम करने वालों को होती है। शुरू होते मोतियाबिन्द और गुरदे की पथरी में भी यदि जीवन-सखा के गत जनवरी अंक में प्रकाशित लेख 'जीर्ण रोग उनका कारण और निवारण' के अनुसार उपचार किया

जाय तो अवश्य लाभ होगा। मोतियाबिन्द के रोगी को नित्य सवेरे नाक से पानी पीना चाहिए। ताकि नाक साफ रहे और कफ ऊपर न चढ़े।

प्रश्न--जब कभी मैं नीबू खाता हूँ मुझे जुकाम हो जाता है और पेट दर्द करता है?

--मनोहर राव, दमोह

उत्तर--नीबू के रस में मिले प्राकृतिक लवणों की सहायता पाकर आपका शरीर सर्दी के रूप में अपनी गन्दगी को निकालना चाहता है। सर्दी होने पर यदि आप तीन-चार दिन का उपवास कर लें और एनिमा लेते रहें तो आपको नीबू फिर उपद्रवकारी प्रतीत न होगा।

प्रश्न--भोजन करने के दो घंटे बाद पानी पीना चाहिए।--मेरे एक मित्र ने इस नियम का पालन एक सप्ताह किया। फल यह हुआ कि पेशाब में जोरों की जलन होने लगी। फिर भोजन के साथ एक दो गिलास पानी पीने लगे तो यह शिकायत जाती रही। भोजन के साथ पानी पीने का नियम जाड़े के दिनों में ही सध सकता है, पर गर्मी में विना पानी के भोजन कैसा?

--'शिक्षक', धरमपुरा

उत्तर--भोजन करने और पानी पीने का समय निश्चय ही अलग अलग होना चाहिए। यदि सवेरे उठते ही एक गिलास पानी पी लिया जाय और जलपान और भोजन के बीच में दो गिलास तो दोपहर को भोजन करते समय पानी की आवश्यकता शायद ही प्रतीत हो। भोजन करने के आध घंटे पहले याद करके पानी पी लेने से यह आदत और भी अच्छी तरह डाली जा सकती है। यदि पाचन-क्रिया को पानी की आवश्यकता होगी और आप पानी न पीएँगे तो आवश्यकता की पूर्ति के लिए पेट की दीवारों से पानी श्रवित होगा अतः जरूरत होने पर पानी पीना ही चाहिए। भोजन के साथ लोटे दो लोटे पानी पीना अवश्य बुरा है पर पाव भर तक पी लेने में कोई हानि नहीं है।

--वि० दा० मोदी

(पृष्ठ २१६ का शेषांश)

का असर मेरे आकुल चित्त पर इतना अधिक हुआ कि मैं गाँव न आकर पुनः आरा ही में ठहर कर जल-चिकित्सा कराने लगा, उसी किराएवाले मकान में रह कर। एक टब तलाश कर लाया। दस ग्यारह सेर कुएँ का जल भरकर सुबह-शाम और दोपहर को तीनों समय लड़के को टब में नियमानुसार बैठा देता था। १५ मिनट से शुरू करके आध घंटे तक नित्य प्रति तीन बार नहान कराया करता था। अन्न एक दम छुड़वा दिया। केवल फल और थोड़ा दूध कच्चा ही दे दिया करता था। लगभग २० दिन जल-चिकित्सा करने के बाद लड़के को पतले बदबूदार और रंग-विरंग के पैखाने होने लगे। कुछ दिन के बाद आँख के नजदीक चारों ओर छोटे छोटे फोड़े होने लगे और कुछ बुखार भी आने लगा। मैं कभी कभी घबरा भी जाता था, पर धैर्य नहीं छोड़ता था। क्योंकि वैद्य डाक्टरों पर अब मेरा विश्वास नहीं रह गया था। मैं इसको अन्तिम चेष्टा समझता था। अन्त में प्रकृति देवी ने असहाय बालक पर अपनी दया दृष्टि फेरी। लगभग दो महीने के अल्प प्रयत्न में लड़का कुछ कुछ प्रसन्न चित्त दिखाई पड़ने लगा। दर्द में भी कुछ कुछ कमी होने लगी। तीन महीने की चिकित्सा के बाद दर्द एकदम चला गया। कभी कभी दो-तीन दिन पर १०, १५ मिनट के लिए दर्द हो जाता था। वह भी मेरी गलती से। रोग में कमी के कारण मैं कुछ लापरवाह भी होता जा रहा था। पथ्य में अन्न और भूजा भी दे देता था। खैर, छः महीने की जल-चिकित्सा से वह एकदम चंगा हो गया। तब मैं उसको गाँव पर लाया। इस समय यह लड़का बिछिया इँगलिश स्कूल में पढ़ रहा है। उस दिन से आज तक यह क़भी रोगी नहीं हुआ। मोटा ताजा, स्वस्थ और पढ़ने लिखने में तेज है।

क्या हमारे देश वासी प्राकृतिक-चिकित्सा के इस महत्त्व को हृदयंगम करेंगे। **श्री काशीनाथ झा 'साधक'**

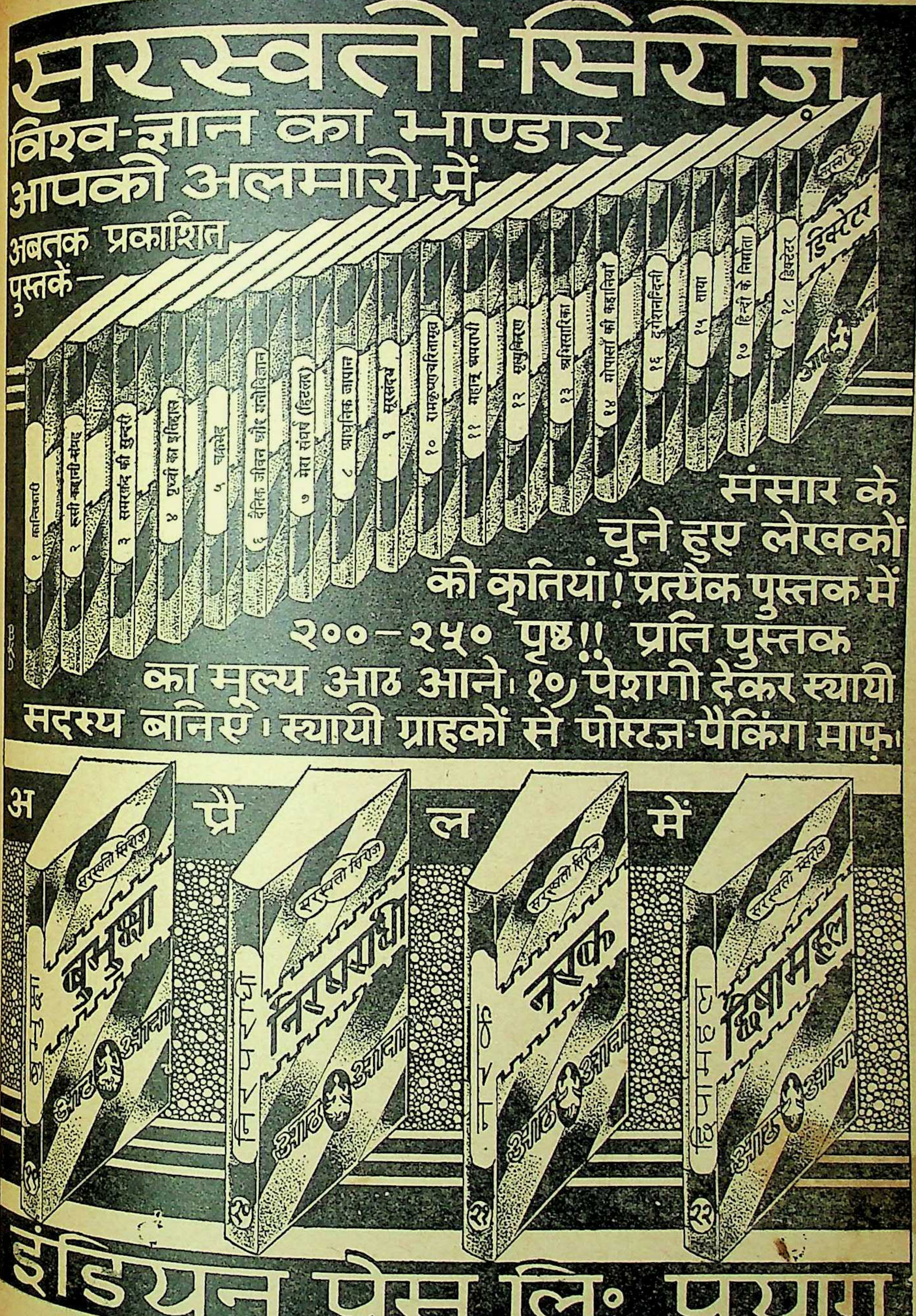
१ क्रान्तिकारी
२ रूसी कहानी-संग्रह
३ समरकंद की सुन्दरी
४ पृथ्वी का इतिहास
५ चकलेट
६ दैनिक जीवन और मनोविज्ञान
७ मेरा संघर्ष (हिटलर)
८ आधुनिक जापान
९ सूरसंदर्भ
१० रामकृष्णचरितामृत
११ महान् अपराधी
१२ मृत्युकिरण
१३ अभिसारिका
१४ मोपासाँ की कहानियाँ
१६ दुर्गेशनन्दिनी
१५ माया
१७ हिन्दी के निर्माता
१८ डिक्टेटर
डिक्टेटर
सरस्वती सिरीज़
आठ आना
बुभुक्षा
निरपराधी
नरक
शिशमहल

सरस्वती-सिरीज़

विश्व-ज्ञान का भाण्डार आपकी अलमारी में

अबतक प्रकाशित पुस्तकें—

संसार के चुने हुए लेखकों की कृतियां! प्रत्येक पुस्तक में २००—२५० पृष्ठ!! प्रति पुस्तक का मूल्य आठ आने। १०) पेशगी देकर स्थायी सदस्य बनिए। स्थायी ग्राहकों से पोस्टज-पैकिंग माफ़।

अ प्रै ल में

इंडियन प्रेस, लिः प्रयाग

जीवन सखा के सन् '३६ के अंकों में प्रकाशित कुछ लेख

रोग किस प्रकार उत्पन्न होता है
भोजन और स्वास्थ्य
गठिये को मार भगाया
भोजन के नियम
मेरी आँखें फिर से नई हो गईं
लेटे लेटे कसरत
बुखारों का अचूक इलाज
बच्चों की पालन विधि
गर्मी के महीनों में भोजन
कब्ज
स्नान की विधि और उपयोग
जीवन शक्ति
हैजा: कारण और अचूक चिकित्सा
आम और जामुन
बहुमूत्र रोग का अचूक इलाज
जवान और सुन्दर बने रहो
मेरी खाँसी कैसे अच्छी हुई
मैलेरिया या जाड़ा बुख़ार
मोटापा को दूर करो
बवासीर का शर्तिया इलाज
स्वास्थ्य के लिये १५ मिनट
सुन्दरता बढ़ाने का नुस्खा
बेरीबेरी
बालों की रक्षा
प्रकृति की अचूक शक्ति

सैकड़ों चित्रों से विभूषित एवं अनेक जीवनोपयोगी लेखों से भरे ३५० से अधिक पृष्ठों के इस पोथे का मूल्य डाक खर्च समेत केवल २।) है। आज ही लिखिए।

मैनेजर,
जीवन-सखा, इलाहाबाद

Do you want to be a Qualified Naturopath?

Then Apply for the Prospectus of

THE NATIONAL Naturopathic College

19 Hewett Road, LUCKNOW

It is Managed By

The U. P. Nature Cure Association

(Registered under Government of India Act XXI of 1860)

CONSULT

B. S. Gopalrow, Rajahmundry

for correspondence treatment and the latest approved

"UNIVERSAL UNCOOKED FOOD"

with

Two annas postage stamps for details

स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ

शाक तरकारियों के गुण दोष क्या हैं? उनका स्वास्थ्य की अवस्था में और रोग हटाने के लिए किस प्रकार उपयोग किया जाय? किन शाक तरकारियों में कौन से विटामिन और प्राकृतिक लवण होते हैं और उनका कार्य क्या है? आदि प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए वैद्यकशास्त्र से लेकर आज तक वैज्ञानिक अनुसंधानों एवं प्राकृतिक चिकित्सकों के अनुभवों के आधार पर लिखी हुई यह पुस्तक पढ़िए। मूल्य १।)

पता :: **जीवन सखा, इलाहाबाद**

ब्रह्मचर्य-विवेक

[मानव-धर्म तथा वीर्य-रक्षा सम्बन्धी सर्वोत्तम ग्रन्थ]

(ले०—स्वामी विश्वनाथ 'विश्वेश', राजवैद्य)

यह ब्रह्मचर्य विषय पर विस्तृत रूप से लिखा हुआ सर्वोत्तम ग्रन्थ है, इसमें उन प्रबल अस्त्रों के उपयोग का साधन बतलाया गया है जिसके द्वारा कामान्ध नर-पशु भी काम पर विजय पा सकता है—इसमें वह विवेक है जिसके द्वारा अज्ञ का आवरण नहीं रहता, यह वह आलोक है जिसके द्वारा मनुष्य अपने को पहचान सकता है तथा यह वह संजीवनी बूटी है जिससे निःशक्त और निर्वीर्य शक्ति सम्पन्न तथा वीर्यवान हो सकते हैं। इसमें दीर्घ जीवन-मन्त्र सदाचार की शिक्षा, मनुष्य बनने के सरल साधन तथा वीर्य की महत्ता कूट-कूट कर भरी है निश्चय ही, इसके द्वारा—मनुष्य अपने खोये हुए ब्रह्मचर्य को प्राप्त कर सकता है। अब तक ब्रह्मचर्य विषय पर हिन्दी में इतना बड़ा सांगोपांगपूर्ण ग्रन्थ नहीं है। पृष्ठ संख्या ४००, सजिल्द मूल्य १॥।)

पता—भार्गव पुस्तकालय, बनारस सिटी

हिन्दी की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका

वीणा

सम्पादक
श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

प्रकाशक
श्रीमध्यभारत-हिन्दी साहित्य-समिति

डॉक्टर बाबूराम सक्सेना, एम. ए., डी. लिट्, भू. पू. प्रधान-मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग:—'वीणा' हिन्दी की उच्च कोटि की पत्रिका है और मातृ-भाषा और साहित्य की प्रचुर सेवा कर रही है।

आगामी विशेषांक दीवाली के अवसर पर

वार्षिक मूल्य ४) नमूने का अंक फ्री नहीं भेजा जाता एक प्रति ।=)

व्यवस्थापक—'वीणा' इन्दौर

मासिक पत्रिकाओं की अद्भुत त्रिवेणी!

चाँद

वार्षिक मूल्य ६।।)
अर्द्धवार्षिक मूल्य ३।।)
एक प्रति का ।।=)

'चाँद' अब इतनी पुरानी पत्रिका हो गई है कि उसके विषय में साधारण विज्ञापन के शब्द इस्तेमाल ही नहीं किये जा सकते। उसकी समाज-सेवा, स्त्री-सुधार-सम्बन्धी उसके फड़कते लेख, उसके क्रान्तिकारी विचार, सुन्दर कविताएँ, चिट्ठी-पत्री, स्वास्थ्य, विज्ञान आदि स्तंभ सभी एक से एक बढ़ कर होते हैं। इधर हमने यह भी कर दिया है कि जो लोग पूरे दो वर्ष के ग्राहक बनेंगे उनसे १३) के बजाय हम केवल ११) लेंगे। आशा है प्रेमी पाठक यथा शीघ्र 'चाँद' के ग्राहक बनने की कृपा करेंगे।

पता—'चाँद' कार्यालय, पोस्ट-बैग नं० ३, इलाहाबाद

नई कहानियाँ

वार्षिक मूल्य ५।।)
अर्द्धवार्षिक मूल्य ३)
नमूना ।=)

"नई कहानियाँ" अब प्रथम वर्ष समाप्त कर दूसरे वर्ष में आगई है। कहानीसाहित्य में आज जो युगान्तर आ गया है, आज जो कम्पिटीशन छिड़ा हुआ है, उसका एक मात्र श्रेय 'नई कहानियाँ' को है। इसकी जीती-जागती कहानियाँ अपने ढंग की निराली होती हैं। इधर पृष्ठ-संख्या भी बढ़ा दी गई है। लकी कूपन भी लगाया जाता है। यही नहीं, बल्कि १।।) की पुस्तक, वार्षिक ग्राहक बनने वालों को बिना मूल्य भेंट भी की जाती है। आज ही ग्राहक-चन्दा भेजने का कष्ट कीजिए।

पता—'नई कहानियाँ' कार्यालय, पोस्ट-बैग नं० ३, इलाहाबाद

रसीली कहानियाँ

वार्षिक मूल्य प्रयाग का ३)
बाहर का ... ४)
नमूना ... ।)

आप अपनी बेचैनी 'रसीली कहानिआँ' पढ़ कर मिटा सकते हैं। 'रसीली कहानियाँ' की एक-एक कहानी क़लम की उस नोक से निकलती है, जिस नोक से एक से एक सरस साहित्य की रचना हो चुकी है। यदि आप प्रेम-रस का पान करना चाहते हैं, यदि आप दो उद्दीप्त, बेचैन हृदयों का मिलन देखना चाहते हैं, यदि आप समाज के कठोर अनुशासन के कारण दो प्रेमियों का वियोग देखना चाहते हैं—उस वियोग में प्रेमियों का तड़पना, बेकल होना देखना चाहते हैं तो 'रसीली कहानियाँ' पढ़िए। लकी कूपन की व्यवस्था की गई है। पूरे वर्ष भर का ग्राहक बनने वालों को १।।) की पुस्तक बिना मूल्य दी जायगी।

पता—'रसीली कहानियाँ' कार्यालय, पोस्ट-बैग नं० ३, इलाहाबाद

ये तीनों पत्रिकायें ह्वीलर के रेलवे बुक-स्टालों पर बिकती हैं

समाज-सेवक का सम्मेलनांक

पृष्ठ संख्या ११८
रंगीन कलापूर्ण चित्र—तीन
सादे चित्र-पृष्ठ सोलह
और
कार्टून
ओजस्वी कविताएँ
और
कहानियाँ

मारवाड़ी समाज का संक्षिप्त
'एनसाइक्लोपीडिया'
मारवाड़ी समाज का
जीता-जागता चित्र
राजनैतिक, साहित्यिक, सामाजिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक।
विशाल राजस्थान के विभिन्न कर्म-क्षेत्र

मूल्य केवल आठ आना

प्राप्ति के लिए लिखिए—
व्यवस्थापक
समाज-सेवक
१५२ बी, हरिसन रोड, कलकत्ता।

मारवाड़ी समाज में माल की खपत के
लिए विज्ञापन का एक मात्र
साधन 'समाज-सेवक'

विशेषांक मँगाने के लिये ३० अप्रैल १९४१ के पहिले सूचित करें।

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

१—एक छटाँक शहद पानी में मिलाकर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है।
३—शरीर में ताकत आती है।
४—दूध में मिलाकर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुरुषत्व बढ़ता है।
५—शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है।
६—यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है।
७—शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये **जीवन-मधु** का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=) एक रुपया दो आना।

मिलने का पता — मैनेजर—**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह** — ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

BOOKS ON HEALTH

That will Change the Course of Your Life

NATURE CURE *by* H. LINDLAHR, M.D.

"That a knowledge of the health principles mentioned in this book will materially aid the reader in his sincere efforts in regaining health and prolonging life. This work will be found most instructive, inspiring and full of practical suggestions for the attainment of complete self-development...... They will afford a scientific guide to self-treatment".

Price Rs. 6.

PRACTICAL NATURE CURE *by* DR. K. L. SHARMA, N.D.

A book that will guide you to help yourself and others—the result of Dr. Sharma's vast study and profound experience. Nature-cure made really to suit Indian people. A most practical book, which you must possess.

Latest Enlarged Edition **Price Rs. 4.**

DRUGLESS HEALING *by* DR. L. KAMESVARAN, M.A., N.D.

"Will serve not only as an introduction to the study of the philosophy of Nature-cure and its practice, but also as a book of ready reference after one has studied the subject from various sources and point of view."

Price As. 6.

YOUR DIET IN HEALTH AND DISEASE *by* HARRY BENJAMIN.

This "Home Treatment" book is a complete guide to the Dietetic and Physical treatment of Diseases. It contains chapters on Food, its Digestion, Absorption, and assimilation; How the Body works; Our Daily Food; Eating for Health not Disease, the Art of combining Foods; Feeding children; and concludes with a self-treatment Chart for all Common Ailments.

Khaddar Bound. **Pages 199** **Price As. 12.**

THE FASTING CURE *by* DR. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 3.**

THE NATURE CURE OF EYE DEFECTS *by* DR. L. KAMESVARAN, M.A., N.D. **Price As. 8.**

PRANAYAMA *by* DR. K. L. SHARMA, N.D. **Price As. 2.**

To be had from:—

HEALTH BOOK DEPOT
87 Himmatganj, ALLAHABAD

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलता-पूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, क़ब्ज़, संग्रहणी, प्लुरिसी, दमा, बवासीर, निद्राभाव, आमाशय का ज़ख्म, आँतों की ख़राबी, सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arterioselerosis), रक्त चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), उपान्त्रदाह, (Appendicitis), ज़हरवाद (Carbuncle), गठिया, पित्ती उछलना, पेचिश, सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह (बहुमूत्र), मोटापा, दुबलापन, यक्ष्मा, कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर ग्रांड-ट्रंक-रोड पर एक आठ एकड़ के सुन्दर उपवन में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने की स्वयं प्रेरणा होती है।

नियमावली पाँच पैसे का डाक-टिकट भेजकर आज ही मँगाइए। संक्रामक (Infectious) रोग के रोगियों के लिए स्वास्थ्य-गृह में प्रबन्ध नहीं है।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

Reg. No. A-172

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

[illegible], स्वास्थ्य और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहियें

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा, (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए० .. २॥)
(२) सरल शरीर विज्ञान : ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए० .. १॥)
(३) प्राकृतिक चिकित्सा : ले० केदारनाथ गुप्त, एम० ए० .. [illegible]
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय .. ।)
(५) दूध ही अमृत है : ले० हनुमान प्रसाद गोयल .. १॥)
(६) [illegible] के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय .. [illegible]
(७) शक्तिवर्धक : ले० [illegible]लाल तिवारी .. [illegible]
(८) आनन्दमय जीवन का ह्रास और उसके कारण .. [illegible]
(९) [illegible] : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह .. [illegible]
(१०) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द .. ॥)
(११) [illegible] : ले० एन० एल० चौधरी .. ॥)
(१२) स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर शुक्ल .. [illegible]
(१३) कब्ज या कोष्ठबद्धता : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह .. [illegible]
(१४) दूध [illegible] : ले० केदारनाथ गुप्त, एम० ए० .. [illegible]
(१५) [illegible] उसके गुण तथा उपयोग : ले० [illegible] कुमार ठाकुर .. [illegible]
(१६) आरोग्य साधन : ले० गांधीजी .. [illegible]
(१७) स्वास्थ्य-[illegible] : ले० [illegible] .. [illegible]
(१८) आकृति-निदान : ले० लूईकूने .. [illegible]
(१९) बच्चों की रक्षा : ले० लूईकूने .. [illegible]
(२०) मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लूईकूने .. ।)
(२१) जल-चिकित्सा (तीन भाग) : ले० [illegible] .. [illegible]
(२२) स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय .. [illegible]

Rs. as.
(२३) Nature Cure by H. Lindlahr, M.D. .. 6 0
(२४) Practical Nature Cure by Dr. K. L. Sharma, N.D. .. 4 0
(२५) Pranayama by Dr. K. L. Sharma, N.D. .. 0 [illegible]
(२६) The Nature Cure of Eye defects by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D. .. 0 [illegible]
(२७) Your Diet in Health and Disease by Harry Benjamin .. [illegible] 12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY [illegible] BALESHWAR PRASAD SINHA, 87 HIMMATGANJ, ALLAHABAD

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

जून
१९५१

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह : : विट्ठलदास मोदी

आरोग्य-शास्त्र का प्रतिनिधि-पत्र

जीवन सखा

के

सम्बन्ध में : हम सब एक मत हैं

Dr. S. C. Das, L.M.S. (Cal.), L.R.C.P. & S. (Edin.), L.R.F.P. & S. (Glas.) L.M. (Dub.), Sewagram, Wardha, C. P.

"A splendid and noble attempt to spread correct views about health & its preservation."

पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी, टीकमगढ़

"मुझे इस समय जितने पत्र निकल रहे हैं उनमें जीवन-सखा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जँचता है।"

श्री सीताराम जी सेकसरिया, कलकत्ता

"जीवन-सखा निकाल कर आप लोग देश की सेवा कर रहे हैं। ऐसे पत्रों से पढ़नेवालों का भला होता है।"

जनार्दन राय नागर, सम्पादक 'बालहित', उदयपुर

"जीवन-सखा ने तो मेरी माँ का जीवन ही बदल दिया है। उन्होंने इसी को पढ़कर अपने शरीर का कल्प सा कर दिया है। जीवन-सखा . . . . . ने मेरी माँ को स्वास्थ्य बख़्शा है।"

'सरस्वती', प्रयाग

"प्रत्येक साध्य तथा असाध्य मर्ज का निवारण प्रकृति द्वारा हो सकता है, यही इस पत्र का संदेश है।"

'नवशक्ति', पटना

"यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं में जीवन-सखा का सर्वोच्च स्थान है। छपाई सफ़ाई तो आदर्श है।"

'विशाल-भारत', कलकत्ता

"जीवन-सखा सब तरह से उपयोगी है।"

'जीवन-साहित्य', नई दिल्ली

"आरोग्य शास्त्र का सुन्दर मासिक होने से यह वास्तव में जीवन-सखा ही है।"

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

जीवन-सखा

जून
१९४१

वर्ष ६
अङ्क ६

इस अङ्क में

विषय	लेखक	पेज
१. संपादकीय—		२३४
२. जर्मनी में प्राकृतिक चिकित्सा—	श्रीयुत ए० विजय घोष	२३५
३. पुराने को नया—	श्रीयुत जानकीशरण वर्मा	२३८
४. सेगाँव में प्राकृतिक चिकित्सा—		२४१
५. 'जय बोलो भंग भवानी की'—	श्रीयुत कृष्णदत्त भट्ट	२४२
६. 'मैंने खुद की काया पलट की है'—	श्रीयुत गौरीशंकर सिंहजी चंदेल	२४५
७. बालक का हठ—	श्रीमती तारा बहन मोडक	२४७
८. विविध-विषय—	श्रीयुत गंगा प्रसाद गौड़ "नाहर"	२५०
९. तन्दुरुस्त रहने के दस नियम—	प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	२५२
१०. कब्ज दूर करने में फल और तरकारियों का प्रयोग—	श्रीयुत विट्ठलदास मोदी	२५३
११. प्रश्नोत्तर—		२५८

अगले अंक में क्या रहेगा ?

१—आसन और व्यायाम

चरक तीर्थ दिगम्बर जी बक्षी

[बक्षी जी स्वामी कुवलयानन्द के प्रिय शिष्य हैं एवं लोनावला आश्रम में वर्षों से रहते हैं।]

२—सप्राण भोजन

श्रीयुत गंगा सहाय

[गंगा सहाय जी बीस वर्षों से अमेरिका निवास कर रहे हैं। आपने वहाँ की भोजन सम्बन्धी अनेक परीक्षाएं पास की हैं।]

३—पीटने वाले मास्टरों का अचूक इलाज

श्रीयुत अज्ञयदत्त 'अज्ञय' विशारद

४—जलोदर से मेरा छुटकारा

श्रीयुत नन्दकिशोर

अपने विचार

साधारण स्नान

स्नान नित्य की एक आवश्यक क्रिया है, पर बहुत कम लोग हैं जो स्नान के गुण एवं महत्त्व को समझते हैं, इसी लिए कितने ही लोग किसी न किसी तरह दिन में एक बार सिर पर चार लोटा पानी डालकर स्नान का रस्म अदा कर लेते हैं। वदन पर ठंडा पानी डालने के भी लाभ हैं, पर इससे स्नान की आवश्यकता पूरी नहीं होती।

स्नान दो विशेष लाभों के लिए किया जाता है — पहला शरीर की सफाई और दूसरा ठंडे पानी के स्फूर्तिदायक असर से स्नायुजाल को सशक्त बनाने एवं शरीर के रक्तसंचालन को ठीक रखने के लिए। पहला काम गरम पानी से अच्छा होता है। हमारी त्वचा में लाखों रोम-कूप होते हैं जो हमारे फेफड़ों की भाँति ही साँस लेते हैं। रोम-कूपों के बन्द हो जाने से फेफड़ों पर अधिक जोर पड़ता है और वे कमजोर पड़ते जाते हैं; इसके अलावा पसीना न निकलने से हमारे खून की सफाई का काम रुक जाता है जो हमारे स्वास्थ्य के लिए कम नुकसान दायक नहीं है।

ठंडे पानी से भी गंदगी साफ होती है। पर रोम-कूपों में बैठी चिकनाहट और छोटे-छोटे अणु साफ़ नहीं हो पाते। इसके लिए गरम पानी और नीबू का प्रयोग करना चाहिए। किसी भी तरह का खट्टा नीबू लेकर उसे आग में भून लेना चाहिए और ठंडा करके वदन पर पानी के साथ मलना चाहिए। नीबू के इस प्रयोग से जो सफाई होती है वैसी सफ़ाई करने की किसी भी साबुन में सामर्थ्य नहीं है। नित्य गरम पानी से न नहाना चाहिए। इससे सुस्ती बढ़ती है, कमजोरी आती है और पाचनक्रिया कमजोर हो जाती है। सप्ताह में दो बार गरम पानी से नहाना काफी है। गरम पानी का तापमान शरीर के तापमान से एक-दो डिग्री ही अधिक रक्खा जाना चाहिए।

गरम पानी का स्नान सोने से पहले रात को बहुत मुफीद है। नींद अच्छी आती है और गरम पानी के नहाने के बाद कुछ ओढ़कर सो जाने से ठंडक लगने का भय नहीं रहता। गरम या ठंडा किसी प्रकार का भी स्नान भोजन के एक घंटे पहले और भोजन के तीन घंटे बाद किया जा सकता है।

अधिक गरम पानी के स्नान के अलग लाभ हैं। उसका समय पर ही उपयोग होना चाहिए। जुकाम होने पर गरम पानी से नहाने के बाद गरम कपड़े ओढ़कर सोने से जुकाम दूर होता है। अधिक चलने या परिश्रम से आई थकान को दूर करने में यह स्नान टानिक का काम करता है।

यह तो हुआ गरम पानी का विशेष गुण और उसका उपयोग; पर हमें नित्य ठंडे पानी से ही नहाना चाहिए। जब हम वदन पर ठंडा पानी डालते हैं तो हमारे शरीर का रक्त, त्वचा की ओर दौड़ता है और उसमें एक विशेष गति पैदा हो जाती है, जिसके कारण रक्तसंचालन शुद्ध एवं तेज हो जाता है। यह सभी जानते हैं कि रक्तसंचालन में कमी आना बुढ़ापे की प्रस्तावना है। अतः ठंडे जल से नहाने से हम अपने यौवन को अधिक स्थायी बनाने में सहायक हो सकते हैं।

साधारण स्नान की क्रिया यह है कि स्नान के पहले सारे शरीर को तलहथी या खुरदरे तौलिए से रगड़ लेना चाहिए। पहले सिर रगड़िए, तब माथा, चेहरा और गर्दन। फिर एक-एक करके दोनों हाथों को कलाई की ओर से रगड़ना शुरू करके कंधों की ओर रगड़ना चाहिए। इस तरह हाथों की मालिश हो जाने के बाद कंधों, सीना, बगल, पेट और पीठ को रगड़िए और सबके

(शेष पृष्ठ २५२ पर)

जर्मनी में प्राकृतिक चिकित्सा

श्रीयुत ए० विजय घोष

श्रीयुत ए० विजय घोष के लेख 'भोजन और धूप' तथा 'यूरप के स्वास्थ्यगृह' पाठकों ने पढ़े। अब जर्मनी में प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह पढ़ें। घोष महोदय के ये लेख अध्ययन नहीं, निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण के आधार पर आश्रित हैं। शीघ्र ही पाठकों को आपकी लेखनी से प्रसूत लेख 'जर्मनी का स्वास्थ्यगृह--ड्रेसडन' एवं 'जर्मनी के स्वास्थ्यप्रद स्थान' लेख पढ़ने को मिलेंगे।--सं०

यह ज्ञात नहीं कि प्राकृतिक चिकित्सा का सूत्रपात किसने किया। औषधोपचार सम्बन्धी किसी विचारधारा का आविर्भाव होने के बहुत पूर्व अवश्य ही मनुष्य सूर्य, वायु, प्रकाश, जल, औपचारिक मर्दन (मालिश), आराम तथा ऊष्णता—इन प्राकृतिक साधनों का उपयोग करता रहा होगा।

जर्मनी के बारे में कुछ आगे कहने से पहले मैं यह बता देना चाहता हूँ कि वहाँ पर ऐसे हजारों व्यक्ति हैं जो हम लोगों की तरह हिटलर और उसके अनुगामियों से घृणा करते हैं। इस सम्बन्ध में मुझे एक घटना का स्मरण हो आता है। उन दिनों, जब मैं बर्लिन की यात्रा करने गया था, वहाँ के एक प्रमुख जर्मन अधिकारी की पत्नी ने मुझे बताया कि यद्यपि उनके पति नेशनल सोशलिस्ट. (नाजी) पार्टी के एक क्रियाशील तथा उत्साही सदस्य हैं, फिर भी वह नाजियों और उनके 'हर हिटलर' को कितना अधिक नापसन्द करती हैं। उन्होंने यह भी बताया कि नाजियों तथा हिटलर के प्रति उनकी इस घृणा की भावना का समर्थन करनेवाले जर्मनी में उनके कई मित्र हैं लेकिन नजर बन्द कैम्प में ले जाकर बन्द कर दिये जाने के भय से वे कुछ बोलते नहीं हैं।

एक दिन मैं बोनू में एक दूकान पर फाउन्टेन पेन खरीद रहा था। जो युवती मुझे फाउन्टेन पेन दिखा रही थी वह उस दूकान के मालिक की पुत्री थी। वह बहुत अच्छी अंग्रेजी बोलती थी। हम लोगों में बातचीत होने लगी जो आगे चलकर हिटलर के सम्बन्ध में हो गई। बातचीत प्रायः समाप्त हो चली थी कि उसने यह जान लेने के लिए कि उस कमरे में कोई अन्य व्यक्ति तो नहीं है चारो तरफ देखा। जब उसे यह इत्मीनान हो गया कि उस कमरे में उसके तथा मेरे सिवाय कोई और तीसरा व्यक्ति नहीं है तो उसने मुझसे कहा, "नाजी लोग जिन उद्देश्यों को प्रचारित कर रहे हैं उन सबको मैं घृणा की दृष्टि से देखती हूँ।"

उसका यह कथन सुनकर मैं विस्मित-सा हो उठा। मैंने तो यह समझा था कि सोशलिज़्म के इस नाजी संस्करण का तरुण जर्मनी समर्थक है। मैं किसी अधिक अवस्थावाली महिला के मुख से इस तरह की बातें सुनने के लिए पूरी तौर से तैयार था लेकिन बोनू की उस युवती की इन बातों से मुझे अनुभव होने लगा कि यहाँ एक दूसरा जर्मनी भी है यह वह जर्मनी है, जो हिटलर तथा उसके सिद्धान्तों में अविश्वास रखता है। इस दूसरे जर्मनी का प्रतिनिधित्व करनेवाले लोग उदार विचारवाले, सुसभ्य तथा विचारशील हैं। मेरा यह ख्याल है कि जर्मनी में तरुण तथा अधेड़ अवस्था वाले ऐसे ऐसे बहुत से स्त्री-पुरुष हैं जो नाज़ीवाद के विरोधी हैं। और अधेड़ अवस्थावाले व्यक्तियों में कुछ लोग ऐसे हैं जो ध्यान में रखते हैं कि अगर मैं जर्मनी के

बारे में कोई बात कहूँ तो उन उदार और विचारशील व्यक्तियों का भी जो अपने पड़ोसी देशों के साथ शान्तिपूर्वक और समझौते के साथ रहना पसन्द करते हैं, ख्याल रक्खूँ।

हाँ, तो प्राकृतिक चिकित्सा का आविर्भाव कब हुआ यह प्रश्न प्राचीनता के अन्धकार में लुप्त होगया है। संसार में औषधोपचार संबन्धी किसी विशिष्ट विचारधारा के कायम होने के बहुत पूर्व अवश्य ही मनुष्य सूर्य, वायु, प्रकाश, विशेष प्रकार की मालिश, विश्राम तथा उष्णता—इन प्राकृतिक साधनों का प्रयोग करता रहा होगा। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि आस्ट्रियनों की भाँति जर्मन-भाषा भाषी लोगों ने संसार में सबसे पहले प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों को सुसंगठित रूप से निर्धारित किया। प्राकृतिकोपचार के जगत में यह जर्मनी ही है जहाँ पर स्काथ, प्रिस्नीटिज़, लोहोमन, ब्लिज़, कूने, नीप और फ़ल्के जैसे प्राकृतिक चिकित्सा के आचार्य पैदा हुए जिन्होंने प्राकृतिकि चिकित्सा के इतिहास का निर्माण किया है।

जर्मनी प्राकृतिक-सौंदर्य-सुषमा का भी देश है। इसे "स्पा" का देश कहते हैं। "स्पा" से क्या तात्पर्य है इस पर मैं बाद में किसी अन्य लेख में बताऊँगा। जर्मनी अपने कुछ सुन्दरतम प्राकृतिक स्थलों तथा विशेष प्रकार का गुण रखनेवाले जलाशयों के लिए संसार के सम्मुख अभिमान कर सकता है। जर्मनी ने प्राकृतिक-चिकित्सा-साहित्य को जो कुछ दिया है वह भी बेजोड़ है।

डुसेलडोर्फ़ का कृत्रिम जलाशय

'डुसेलडोर्फ़' में आप "वेलेनबैड" अर्थात जल-तरंग-स्नान का आनन्द लूट सकते हैं जो जर्मनी में बहुत प्रख्यात है। यहाँ पर बन्द स्थान में एक बहुत बड़ा तालाब बनाया गया है, जिसमें यन्त्र के द्वारा पानी में लहरें उत्पन्न की जाती हैं जिनका वेग इतना प्रबल होता है कि अगर कोई सावधानी न रक्खे तो बहुत आसानी के साथ उन लहरों की चपेट में आकर गिर पड़ेगा। ये लहरें समुद्र की लहरों का अनुकरण हैं। जो लोग समुद्रतट के स्थानों में नहीं जा सकते अथवा जो समुद्र की लहरों से भयभीत होते हैं उनके लिए ये कृत्रिम लहरें ही समुद्र की लहरों का आनन्द प्राप्त करानेवाली हैं।

नीप-स्टोर्स

'डुसेलडोर्फ़' में एक "नीप-स्टोर्स" भी है जहाँ पर जड़ी-बूटियों, तेल, साबुन, स्नान सम्बन्धी आवश्यक वस्तुएँ तथा हर प्रकार के स्वास्थ्यप्रद भोजन का प्रदर्शन किया गया है। जर्मनी में नीप-बन्दस अथवा संस्थाएं कायम हैं जिनमें फादर नीप की प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के ५०,००० सदस्य हैं। जर्मनी में एक ऐसी फर्म है जिसने वहाँ के ७० नगरों में स्वास्थ्यप्रद भोजन पहुँचाने के लिए स्टोर्स कायम किए हैं। प्रत्येक पुस्तक-विक्रेताओं की दूकान में स्वास्थ्य-निदान संबंधी पुस्तकें प्रदर्शित की गई हैं। जर्मनी में प्रायः सर्वत्र आपको कैम्पिग, टहलने और साइकिल पर भ्रमण करने, नौका-विहार, सूर्य-स्नान के क्लब तथा जिमनास्टिक एसोसियेशन देखने को मिलेंगे।

कोलोन में एक निरामिष रेस्तोराँ है जहाँ पर सस्ते मूल्य में बहुत ही सुन्दर भोज़न मिलता है। हमारे भारत में बहुत से लोग अपनी धारणा के कारण नहीं बल्कि परम्परा के कारण निरामिष भोजी हैं। योरोप में निरामिष भोजियों में प्रायः हमेशा यह प्रबल विश्वास पाया जाता है कि न केवल निरामिष भोजन ही निश्चित रूप से मानवीय भोजन है बल्कि शरीर-विज्ञान के अनुसार यही मनुष्य जाति के लिए उपयुक्त भोजन भी है; जब तक आप योरोप के किसी अच्छे रेस्तोराँ में बैठकर निरामिष भोजन का आस्वादन नहीं करते तब तक आप यह अन्दाज नहीं लगा सकते कि वे कितने सुन्दर, सुरुचिपूर्ण, स्वादिष्ट और हमारे स्वास्थ्य के लिए कितने लाभदायक होते हैं? हमारे यहाँ जो भोजन तैयार होते हैं उसमें इतना अधिक घी, तेल, तरह तरह के मसाले डाले जाते हैं तथा वे इतने अधिक

पका दिये जाते हैं कि न केवल उनका स्वाभाविक स्वाद नष्ट हो जाता है बल्कि उनका पोषण-सम्बन्धी गुण भी जाता रहता है। यही कारण है जो हम लोग इतने दुर्बल और रोग-ग्रस्त रहते हैं। मेरा यह कहना यहाँ के निरामिष भोजियों के सम्बन्ध में भी है।

बैडगाडेसबर्ग का स्वास्थ्यगृह

बैडगाडेसबर्ग में मैंने पहली बार एक जर्मन स्वास्थ्यगृह को देखा। उसमें लम्बे-चौड़े भोजनागार तथा अतिथियों के रहने के लिए कमरे बने हुए थे। इसके शयनागार ऊँचाई पर बनाए गए और हवादार हैं, जहाँ सूर्य की किरणें अच्छी तरह से पड़ सकती हैं। कमरों के सामने चौड़े बरामदे बने हैं जिनपर कनवास की चारपाई डालकर लोग बड़े मजे में धूप स्नान कर सकते हैं। कड़ी धूप होने पर बचाव के लिए छाजन भी बना दिए गए हैं।

वहाँ पर विशुद्ध निरामिष भोजन मिलता है। फल, शाकभाजी, रोटी, विस्कुट, पनीर, अंडे, गिरी, और मक्खन की भरमार रहती है। रोगियों को वहाँ पर अक्सर फल के शोरवे अथवा रस दिए जाते हैं। वहाँ पर पेय पदार्थों में जल, फलों का रस, लाइम, Blossom tea और कहवे से तैयार किया गया Caffeine नामक द्रव मिलता है।

जलपान के पूर्व रोगियों को वहाँ पर बनाए गए बहुत बड़े अहाते में जमीन पर लेटकर धूपस्नान करना अनिवार्य है। वहाँ पर पुरुषों के उपचार के विभाग में चार स्नानागार बने हुए थे जिनमें विभिन्न प्रकार के जल-चिकित्सा सम्बन्धी तथा बिजली के यन्त्र लगे थे। वहाँ पर रोगियों को इस प्रकार की चिकित्सा प्रायः दो घंटे तक की जाती है जो आक्सीजन के बुलबुले में स्नान, शीत और उष्ण डूश (आँतों में पानी चढ़ाने की क्रिया), समूचे शरीर पर शीतल जल में भिगोये हुए कपड़े की पट्टी लगाने तथा सिर से पैर तक मालिश के रूप में की जाती है। वहाँ पर सिट्ज़बाथ, किरण और प्रकाश स्नान भी प्रायः कराया जाता है।

जल में स्नान कराने के बाद रोगी फिर वायु तथा धूप-स्नान कर सकता है। सूर्य की गरमी से सिर के बचाव के लिए वहाँ पर छाज़न बना दिया गया है। जब शरीर बहुत अधिक गर्म हो जाता है तो रोगी को फिर शीतल जल की फुहारों में स्नान करा दिया जाता है उसके बाद वह फिर धूप में जाकर लेट जाता है। मैंने वहाँ पर रोगियों को क्रम से दस से लेकर बीस बार तक शीतल जल स्नान और धूप स्नान करते देखा है।

कुइहान गार्शेजेन में प्रति सप्ताह ४ पौण्ड १६ शि० शुल्क लिया जाता है। इसमें रहने, भोजन तथा दैनिक उपचार की भी फीस शामिल है। डाक्टरी राय तथा परीक्षा के लिए रोगी के जाने पर एक गिनी फीस ली जाती है।

जर्मनी के समस्त प्राकृतिक गृहों के प्रधान अनिवार्य रूप से योग्य व्यक्ति बनाए जाते हैं। यद्यपि उक्त संस्था के प्रिंसिपल मुमकिन है कि गैर-मेडिकल व्यक्ति हों, फिर भी उन्हें उक्त प्रधान की निगरानी में रोगनिदान तथा दैनिक उपचार करने की अनुमति रहती है।

उदर रोगों के लिए हर गार्शेन रोगी को केवल खीरा (Cucumber) खिला कर रखते हैं। बहुत से लोगों का यह ख्याल है कि वह जल्द नहीं पचता। लेकिन हर गार्शेन का कहना है कि उन्होंने पेट की खराबियों के सम्बन्ध में खीरे (Cucumber) से असाधारण लाभ होते देखा है।

❖ ❖ ❖

पुराने को नया

श्रीयुत जानकीशरण वर्मा

"जो पुराने पड़ गये हैं या होते जा रहे हैं उन्हें एक बार तो विशेष यत्न करना ही होगा। जो अभी नये हैं वे अभी से ध्यान दें और नये को नया ही बना रहने दें। 'पुराने को नया' करने से नये को नया ही रहने देना कहीं अच्छा है, पर यह न भूलो कि पुराना भी नया किया जा सकता है।"

क्या पुराने को फिर से नया बनाया जा सकता है? क्या पुराना मकान फिर से नया हो सकता है? क्या पुराने कपड़ों की जीर्णता को दूर कर उनमें नयापन लाया जा सकता है? क्या पुराना, बुड्ढा, शरीर फिर से नया, जवान, हो सकता है?

ये प्रश्न एक ही तरह के हैं और अत्यन्त रोचक हैं। इन सब का एक ही उत्तर है––'हाँ', लेकिन यह भेद अवश्य है कि जिस हद तक पुराना मकान नया और जीर्ण-शीर्ण वस्त्र नवीन बनाया जा सकता है उससे कहीं अधिक अंश में बुड्ढा होता हुआ शरीर फिर से जवान बनाया जा सकता है। मकान की केवल मरम्मत हो सकती है। इधर-उधर, अंदर-बाहर जोड़-तोड़ लगाकर ऊपर से पलस्तर किया जा सकता है, जिससे मकान नया दिखेगा जरूर लेकिन उसके अन्दर की सामग्री पुरानी ही रहेगी और पुरानी समझी जायगी। इसी तरह पुराने कपड़ों की मरम्मत भर हो सकती है। उनमें लगे हुए सूत का अधिक भाग पुराना ही रहेगा। लेकिन मनुष्य-शरीर का कुछ और ही हाल है। उसकी विशेषता यह है कि जिन सामग्रियों से वह बना है, जो कोष और तन्तु-समूह उसको निर्मित करते हैं, वे बहुत दिनों तक अच्छी हालत में और नये रखे जा सकते हैं और पुराने पड़ने पर भी बहुत अंशों में फिर से नवीन बनाये जा सकते हैं। यह हमारा ही दोष है कि हमारा शरीर समय से पहले बुड्ढा हो जाता है, नहीं तो यत्न-पूर्वक रखने से वह बहुत दिनों तक जवान बना रहे। अनुचित भोजन से, प्रचुर मात्रा में साँस द्वारा फेफड़ों में हवा और हवा के साथ आक्सीज़न न लेने के कारण, अपनी शक्ति भर व्यायाम न कर ख़ून को अच्छी तरह तरल न रखने के कारण, इन तथा दूसरे साधनों से शरीर के अन्दर के विकारों को प्रतिदिन शरीर के बाहर न निकाल देने के कारण और आवश्यकतानुसार आराम न कर शरीर की प्रत्येक दिन की मरम्मत में अड़चन डालने के कारण हम शरीर के अन्दर एक ऐसी अवस्था पैदा करते हैं जिससे हमारे अवयवों के बनानेवाले कोष––मांस, रक्त, हड्डी इत्यादि––अपनी ताज़गी खो देते हैं और पुराने हो जाते हैं। उनसे बना हुआ शरीर भी अपनी शक्ति फुर्ती, लचीलापन, चमक, ताज़गी खो देता है और बुड्ढा हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि भौतिक पदार्थों के बने रहने की एक सीमित अवधि होती है––उस अवधि के बाद वे नष्ट होंगी ही, लेकिन शरीर के बनाने वाले पदार्थ बहुत ज़्यादा टिकाऊ होते हैं और चेष्टा करने से बहुत अंशों में कुछ दिनों के लिए फिर से नये भी बन सकते हैं।

इन दिनों मनुष्य जिस तरह समय से पहले ही बुड्ढे हो जाते हैं उसे देखकर दुःख होता है––दुःख इस लिए कि एक तो समय के पहले वे बुड्ढे हो गये और दूसरे इस लिए भी कि उन्हे इस बात की लालसा नहीं होती कि वे अपने को फिर से युवा बनायें। मैं अक्सर लोगों से उनकी उम्र पूछता हूँ। प्रायः तीस-बत्तीस के युवक ४५ वर्ष वाले अधेड़ की तरह दिखते हैं और ५०-५५ वाले तो निरे बुड्ढे ही हुए रहते हैं। हाँ, जब कभी

८०-८५ वर्ष वाले भी चलते-फिरते, हँसते-बोलते और चैतन्यावस्था में दिखाई देते हैं। उन्हें देखकर चित्त आनन्दित हो जाता है और इच्छा होती है कि सभी ८० वर्ष की अवस्था में इसी तरह जीते-जागते रहें।

एक बार मैं एक इक्के पर सवार होने जा रहा था। बग़ल-बग़ल की दोनों सीटें भरी थीं; सिर्फ़ सामने की—इक्केवान के पासवाली—सीट ख़ाली थी। इक्कावान मुझे देखकर पहले से बैठे हुए उन दो आदमियों में से एक को अपने पास बुलाने लगा, जिससे बग़ल की एक सीट मेरे लिए ख़ाली हो जाय। मैंने कहा, "यह ठीक नहीं है, जो पहले जहाँ बैठ गया वह सीट उसकी हो गई; उसे उठाना न चाहिए। मैं आगे की ही सीट पर बैठूँगा"। उन दोनों मुसाफ़िरों ने भी कहा, "ठीक है, आप जवान हैं, हमें यहीं रहने दीजिए।" मैं आगे बैठ गया। थोड़ी देर में इच्छा हुई कि उन दोनों से उनकी उम्र पूछूँ। पूछने पर मालूम हुआ कि एक साहब ४१ वर्ष के हैं और दूसरे ३९ वर्ष के। देखने में दोनों ५५ के मालूम होते थे। मैंने कहा, "दुर्भाग्यवश मैं आप दोनों से बड़ा हूँ।" उन्होंने पूछा—"आपकी उम्र क्या है?" मैंने कहा, '४८'। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। वे कहने लगे "आप तो हम से कम उम्र वाले मालूम होते हैं।" मैंने कहा, "४८ साल में कोई बुड्ढा थोड़े ही होता है।" उन्होंने पूछा, "आपके बुड्ढा न दिखने का क्या कारण है?" मैंने उत्तर दिया, "यही कि मैं अपने को बुड्ढा नहीं समझता। मैं जवानों की तरह रहता हूँ।" इस छोटी सी कहानी में मेरी निजी प्रशंसा ज़रूर है, पर मुझे खेद है कि मुझे जितना ताज़ा दिखना चाहिए उतना ताज़ा और तन्दुरुस्त मैं नहीं हूँ। थोड़ा ही सावधान रहने के कारण—खाने में बहुत असंयम न करना, सुबह को १० मिनट व्यायाम और शाम को ३-४ मील तेज़ी से टहलना, सदा प्रसन्नचित्त रहना, यथा-सम्भव उपयोगी कामों में लगे रहना, काम के समय काम करना और फिर निश्चिन्त रहना इत्यादि बातों से—मैं अपनी अवस्था वालों की अपेक्षा कुछ अच्छा ज़रूर हूँ, पर यदि मैं और सावधान हो जाऊँ तो ज़रूर ही और भी तन्दुरुस्त हो जाऊँ और अपनी उम्र से कहीं छोटा मालूम होऊँ। हाँ, यह अभिलाषा ज़रूर मेरे हृदय में बनी रहती है कि मैं ज़्यादा से ज़्यादा स्वस्थ और सबल रहूँ और बिना प्रयोजन ही बुड्ढा न बन जाऊँ। यह अभिलाषा सबों को होनी चाहिए, और वह केवल इसी कारण कि तन्दुरुस्त और जवान बना रहना हमारा कर्त्तव्य है—समय से पहले बुड्ढा हो जाना पाप है।

'पुराने को नया' बनाने वाली बात जीर्ण रोगों को दूर करने में भी लागू होती है। आशा है कि पाठक यह जानते होंगे कि किन रोगों को जीर्ण रोग कहते हैं। जो रोग शरीर में थोड़ा-बहुत बराबर बने रहते हैं, जो तक़लीफ़ तो देते हैं लेकिन बुख़ार, हैज़ा, प्लेग, नई पेचिश इत्यादि तीव्र रोगों की तरह रोगी को खाट पर पड़े रहने के लिए विवश नहीं करते, उन्हें जीर्ण रोग कहते हैं। पुराना दमा, पुराना बवासीर, पुराना गठिया, पुराने चर्मरोग, पुरानी मन्दाग्नि और अपच जीर्ण रोग के उदाहरण हैं। जीर्ण रोग शरीर में तभी बसेरा करते हैं जबकि शरीर अन्दर से जीर्ण या जीर्ण-प्राय हो जाता है और ये रोग शरीर में आकर उसे और भी जीर्ण कर देते हैं। इन रोगों से छुटकारा तभी मिलता है जबकि शरीर के बनानेवाले कोष और तन्तु उचित आहार, उचित व्यायाम, पर्याप्त विश्राम और इनसे भी ज़्यादा विशुद्ध विचारों के सहारे नये कर दिये जाते हैं। जो चिकित्सक केवल औषधि के भरोसे रहते हैं वे जीर्ण रोग को कभी निर्मूल नहीं कर सकते लेकिन जो चिकित्सक और रोगी प्राकृतिक उपायों से शरीर को फिर से नया बनाने में विश्वास रखते हैं वे अवश्य ही इन रोगों को भगा सकते हैं। प्राकृतिक उपायों में औषधि-व्यवहार भी है, लेकिन औषधि विषैली न हो। औषधि-व्यवहार के सम्बन्ध में मुझे यह कहना है कि निरी औषधि पुराने कोषों को नया नहीं बना सकती। नियमित भोजन, श्वास-क्रिया, व्यायाम इत्यादि का सहारा लेना ही होगा। बहुत सी हालतों में औषधि प्रयोग सर्वथा अनावश्यक है,

और उचित औषधि तो उचित भोजन से ही मिल जाती है।

बहुत से औषधि-भक्त चिकित्सक बहुत से जीर्ण रोगों को असाध्य समझते हैं, लेकिन वे असाध्य इसी कारण हैं कि चिकित्सक महोदय उचित उपचार की विधियों को नहीं जानते। प्राकृतिक चिकित्सा-पद्धति के अनुसार प्रायः सभी जीर्ण रोग साध्य हैं। वे उसी हालत में असाध्य सिद्ध होते हैं जबकि रोगी की जीवन-शक्ति इतनी कम हो गई है कि किसी भी उपचार से उसके शरीर में संतोष-जनक प्रतिक्रिया नहीं होती। प्राकृतिक चिकित्सक जीर्ण रोगों को दूर करने में रोग से नहीं लड़ता वरन् जीर्ण-शीर्ण शरीर को ऊपर बताये उपायों से फिर से नया बनाता है। इसमें अवश्य ही समय लगता है, पर जीर्ण रोगों को भगाने का अगर कोई साधन है तो एक यही है—प्राकृतिक उपचारों द्वारा।

पुराने शरीर को नया बनाने में नीचे दिये साधन सहायक होते हैं—

(१) शुद्ध, स्वास्थ्य-जनक, उत्साह-वर्द्धक विचार। शुद्ध विचारों से आचरण परिष्कृत होता है और उसका अच्छा प्रभाव जीवन पर पड़ता है। साथ ही स्वास्थ्य की भावना हृदय में बनाये रखने से सचमुच स्वास्थ्य बन जाता है। इसी लिए स्वास्थ्य ही सोचना चाहिए। दुर्बल, रोग-ग्रस्त मनुष्यों के हृदयों में प्रायः उत्साह-हीनता उठती रहती है, पर उत्साह-हीनता को अपने पास से भगाये रहना चाहिए। कठिनाइयों के होते हुए भी हठ करके उत्साह का ही सहारा लेना चाहिए। सदा उत्साह-पूर्ण रहो और उत्साह-वर्द्धक विचार सोचो।

(२) उचित भोजन। भोजन से ही खून बनता है और खून पर स्वास्थ्य निर्भर है। अगर हम स्वास्थ्य-वर्द्धक पदार्थ खायेंगे तो खून भी स्वास्थ्य-वर्द्धक बनेगा लेकिन अगर हम रोग पैदा करनेवाले पदार्थ खायेंगे तो खून भी रोगोत्पादक होगा। भोजन से लाभ तभी होता है जबकि भूख लगने पर, उचित भोजन, उचित मात्रा में, उचित रीति से किया जाय।

(३) व्यायाम, विशेषकर पेड़ू और पीठ के अवयवों के व्यायाम। व्यायाम से खून में हरक़त होती है, विकार के बाहर निकलने में सहायता मिलती है, भीतरी यन्त्र और बाहरी अवयव पुष्ट होते हैं; वे अपने काम अच्छी तरह करते हैं और अंगों में फुर्ती और लचीलापन आता है। बहुतों के लिए टहलना ही सर्वश्रेष्ठ व्यायाम है।

(४) श्वास-क्रिया और प्राणायाम। गहरी साँस से अधिक आक्सीज़न फेफड़ों में भरने के कारण खून साफ़ होता है। प्राणायाम से नाड़ी-संस्थान प्रबल होता है।

(५) आवश्यकतानुसार विश्राम। आराम में, विशेषकर निद्रावस्था में ही, शरीर के अन्दर मरम्मत का काम होता है और शरीर में प्राण-तत्व भरता है। अच्छी नींद तभी आ सकती है, जब कि पेट में खाद्य-पदार्थ ठूसमठूस भरा नहीं गया है, मन को उद्विग्न करनेवाली कोई चिन्ता सामने नहीं है और शरीर को अच्छी तरह ढील देने का अभ्यास मालूम है।

(६) आवश्यकतानुसार विशेष उपचार, जैसे जल का विशेष प्रयोग इत्यादि।[1]

जिसे बुद्धि है, साहस है, धैर्य है और इन सबसे अधिक मात्रा में लगन है वह तो 'पुराने को नया' अवश्य कर लेगा और एक लंबी अवधि तक जवान रहकर हँसता-खेलता गाता हुआ अपने दिन सुख-पूर्वक व्यतीत करेगा। शरीर का त्याग वह करेगा अवश्य, पर तभी जब कि इस शरीर से पूरा पूरा काम लिया जा चुका है और नया शरीर धारण करना आवश्यक हो गया है।

'पुराने को नया' करने में छः महीने से लगभग २-३ साल तक का समय लग सकता है, पर है यह करने

---

[1] समय समय पर 'जीवन-सखा' के पिछले अंकों में और इस लेख के लेखक की पुस्तक 'रोगों की अचूक चिकित्सा' में इन सभी साधनों पर प्रकाश डाला गया है। सं०

योग्य काम। जिनकी उम्र ३५ और ५० के बीच है उन्हें अपने शरीर को एक बार फिर से इस तरह नया कर लेना चाहिए कि वह और ४०-५० साल अच्छी तरह चल जाय। यह विषय तो ऐसा है कि इस पर हर रोज़ ध्यान देना चाहिए, पर जो पुराने पड़ गये हैं या होते जा रहे हैं उन्हें एक बार तो विशेष यत्न करना ही होगा। जो अभी नये हैं वे अभी से ध्यान दें और नये को नया ही बना रहने दें। 'पुराने को नया' करने से नये को नया ही रहने देना कहीं अच्छा है, पर यह न भूलो कि पुराना भी नया किया जा सकता है।

चयन

सेगाँव में प्राकृतिक चिकित्सा

गत अप्रैल मास के अंक में प्रकाशित 'सेगाँव की झलक' में जिन डा० दास का जिक्र था वे प्राकृतिक चिकित्सा, विशेषतया उपवास और भोजन के प्रयोगों द्वारा सेगाँव में अनेक रोगियों को अच्छा कर रहे हैं। उनमें से एक कोढ़ के रोगी शास्त्रीजी का वर्णन करते हुए पं० सुन्दर लाल जी 'विश्ववाणी' में लिखते हैं :—

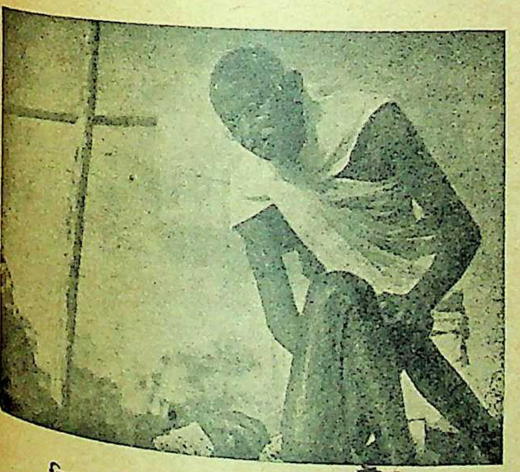

चित्र: 'विशाल-भारत' के सौज[illegible] से
गांधीजी कोढ़ी शास्त्री जी के पैर की मालिश कर रहे हैं

एक 'शास्त्री जी' जिन्हें करीब बारह साल से कोढ़ का मर्ज़ है, और मर्ज़ अपने पूरे जोर पर है। नाक बैठ चुकी। बापू के प्रेम से आश्रम में मरने के लिए आए थे। आज कल वहीं हैं। गाँधी जी ख़ुद अपने हाथ से उनके सारे शरीर की मालिश करते हैं, उनके जख़्मों से पीप निकालते हैं और उनके ख़ुरंट उतार कर फेंकते हैं। दोनों में बड़ा प्रेम है। शास्त्रीजी ने एक सप्ताह का निर्जल उपवास किया। यह मालूम रहना चाहिए कि आम तौर पर बड़े बड़े डाक्टर इस रोग में उपवास को बहुत ही बुरा बताते हैं। लेकिन इस सप्ताह में जिस तरह शास्त्रीजी के जख़्म सूखने लगे और उनका रोग साफ़ काबू में आने लगा—इतना बुरा और बढ़ा हुआ रोग, उसे देखकर सब चकित थे। फिर डाक्टर दास ने उनके खाने को ठीक करना शुरू किया। बहुत दिनों फ़ायदा होता दिखाई दिया। जो शास्त्रीजी अपनी कुटिया से नहीं हिल सकते थे, एक दिन मैं देखकर दंग रह गया कि लंबा कुरता पहने सड़क पर घूम रहे हैं। लेकिन कुछ दिन बाद रोग ने फिर कुछ नई अलामतें दिखाईं। डाक्टर दास फिर उपवास कराने की सोच रहे थे। उन्हें पक्का विश्वास है कि इन्हीं बार बार के उपवासों और व्यवस्थित ख़ुराक़ से शास्त्रीजी कुछ दिनों में बिलकुल तन्दुरुस्त हो जायँगे। रोग और इलाज में कुश्ती जारी है। लेकिन अगर डाक्टर दास जीत गए और जीतना असम्भव दिखाई नहीं देता, तो दुनिया के वैद्यक के इतिहास में यह एक नई चीज़ होगी।

जय बोलो भंग भवानी की !

श्रीयुत् कृष्णदत्त भट्ट

[स० सम्पादक "आज"]

"और अभी कल छोटी साली शान्ती कह रही थी कि उस दिन भैया के एक साले आकर उनसे पूछने लगे "ज़ीजा, यह बिजली की बत्ती क्या आपने दियासलाई से जलाई है ?" हमें भंग की तरंग में ऐसी ही बातें सूझती हैं। लोग हमारी दशा देखकर हमारी बातें सुन कर हमारे कार्य-कलाप देखकर हमारी खिल्ली उड़ाते हैं—तब भी हम मौक़ा आने पर उसकी गोली गले से नीचे उतार ही जाते हैं।"

कहिये, आपने लेख लिखा कि नहीं ?" गाँधी आश्रम में मेरे घुसने के साथ ही रामनरेश जी ने प्रश्न किया। "अभी तो नहीं" मैंने जवाब दिया "लेकिन आप निशाखातिर रहिए मैं लिखूँगा जरूर।"

"हाँ, हाँ जरूर लिखिए", वे बोले।

"क्यों न लिखूँ ? गाँधीजी मादक वस्तुओं का निषेध करें और आप लोग उनके आश्रम के कार्यकर्ता होकर भांग पियें ! और मजा यह कि भांग पीकर चाहें यह कि दुनिया में और लोग जानें भी नहीं कि आप भांग पीते हैं। बदनामी से ऐसा ही डर था तो न पीते भांग। कोई जबर्दस्ती तो थी नहीं।" मैंने कहा।

एक दूसरे भाई तब तक बोल पड़े—"अजी भांग कोई बुरी चीज थोड़े ही है। बीड़ी सिगरेट से ऊपर और शराब से नीचे दरजे की चीज है। मैं हालाँ कि उसे पीता नहीं परन्तु उसे बुरा भी नहीं समझता !"

× × ×

बात पुरानी नहीं पिछली एकादशी की ही है। शाम को मैं घूमता घामता गाँधी आश्रम में ऊपर पहुँचा तो देखा शिवलखन भाई अकेले ही डटे हैं। आश्रमवालों की उस दिन छुट्टी थी। मैंने कहा—"क्या कर रहे हो ? यहाँ मनहूसों की तरह बैठे हुए। चलो घूम आयें। कहाँ गये हैं और भाई लोग ?"

"वे लोग तो सिनेमा गये हैं।"

"और. तुम ?"

"मेरे पास इतना पैसा कहाँ ?"

"पर मुफ़्त का सिनेमा तो तुम्हारे लिए भी खुला है। तुम तो वह भी नहीं देखना चाहते। उठो, उठो ! कहीं चला जाय।"

"कहाँ चलिएगा ?" उन्होंने पूछा।

"कुछ नहीं तो चलो दशाश्वमेध घाट तक ही घूम आएँ।"

"यहीं चलिए न—कम्पनी गार्डन तक।"

बुलानाला के गाँधीआश्रम में और कम्पनी गार्डन में मुश्किल से दस कदम का फासला है। मैंने कहा—"बहुत खूब ! मुल्ला की दौड़ मसजिद तक। तुमने अगर टहलने की बात सोची भी तो कम्पनी गार्डन तक। गाँधीजी इस बुढ़ौती में भी रोजाना कई मील का चक्कर काट लेते हैं और तुम जवान होकर सोचते हो कम्पनी गार्डन तक जाने की बात।"

"आज ज़रा तबीअत ठीक नहीं, इसी से।..."

"क्यों तबीअत को क्या हुआ ?" मैंने पूछा।

"जरा कुछ सिर में दर्द सा है। पैर भी कुछ लड़-

ड़ा से रहे हैं।"

"क्यों, क्यों, ऐसा क्यों ?"

"आज हमलोगों ने जरा भंग पी ली है। इसी से शाम को भोजन की भी कुछ तैयारी नहीं देख रहे हैं।"

"अच्छा, यह बात है ! अब आपका राज खुला ? खैर, चलो। पैर लड़खड़ायेंगे तो मैं किसी न किसी तरह यहाँ वापस पहुँचा ही दूँगा।"

बहुत कुछ समझाने बुझाने पर शिवलखन भाई नीचे उतरे। थोड़ी दूर बढ़ने पर मेरे एक मित्र के साले साहब मुझे नजर आ गये। मैं जरा उनसे बात करने लगा। जल्दी जल्दी बात समाप्त कर आसपास नजर डालता हूँ तो शिवलखन भाई का कहीं नाम पता तक नहीं !

अच्छा मजा रहा। बहरहाल अकेला ही पहुँचा दशाश्वमेध। घाट के पास ही जमनाप्रसाद जी आदि से भेंट हो गई। सिनेमा का प्रोग्राम शायद उन लोगों ने रद कर दिया था। खूब झूम झूम कर चल रहे थे भाई लोग। मैंने कहा—"हाँ, भंग आ रही है अब ताव पर।"

"कुछ न पूछिए !" जमनाप्रसाद जी बोले, "होली पर दो दफा छानने के लिए भंग मँगाई थी पर छानी गई सिर्फ एक दफा। रही बची आज साफ हुई।"

"बहुत ठीक" मैंने पीठ ठोंक दी उनकी।

और तभी मैंने उनसे कहा कि गाँधीजी के उसूलों का तुम लोग इस तरह श्राद्ध करते हो इस पर मैं जरूर कुछ लिखूँगा। याद रखना।

"नहीं, नहीं, ऐसा मत करिएगा। बड़ी भद्द होगी इससे।"

"भद्द की इसमें कौनसी बात। तुम तफरीह के लिए भंग छानों तो क्या मैं तफरीह के लिए तुम्हारे छानने पर एक लेख लिखने से भी महरूम रहूँ।"

× × ×

और अभी मैं लेख का श्रीगणेश कर ही रहा था। सिर्फ एक लाइन लिखी थी—

"दर्द वह शै है कि जिस पहलू से लेटो दर्द है।"

आगे लिखने को था कि चाय हो या कहवा, बीड़ी हो या सिगरेट, शराब हो या ताड़ी, भंग हो या अफीम, चरस हो या गाँजा,—सभी नशे हैं और सबका सेवन करना हानिप्रद है।......

इतने में आधमके श्रीपति जी।

"जय बोलो भंग भवानी की !" शीर्षक देख आप बोले—"मैं भी कुछ सुना दूँ 'आप बीती' सम्पादक जी ?"

मैंने कहा—"शौक से।"

बस, आपने "आप बीती" आरम्भ कर दी। बोले—"देखिये सम्पादक जी, कई वर्ष पहले की बात है। उस दफा मैं इस भांग की बदौलत ऐसा बेवकूफ़ बना कि मैंने तब से होली के मौके पर रिश्तेदारी में जाना छोड़ दिया !"

"कौन सी रिश्तेदारी में ?" मैंने पूछा।

"रिश्तेदारी क्या," जरा वह झेंपते से बोले, "ससुराल ही की बात है।"

"बहुत ठीक !" मैंने कहा "जान पड़ता है कि आप वहाँ अच्छी तरह 'बनाये' गए !"?

"बात यह थी सम्पादकजी कि मैं उस बार वहाँ गया तो यार लोगों ने धर घसीटा नदी के किनारे। वहाँ पर खूब डट कर घुटी भंग। ऊपर ऊपर से तो और लोगों ने छान ली। तली में जो रह गयी वह मुझे दी गई।"

"असली रंग तो तलीवाली ही दिखाती है !" मैंने कहा।

"कुछ न कहिए संपादक जी, उसने तो मुझे ऐसा झेंपाया कि ताजिन्दगी याद रहेगा ! शामका वक्त था—सुनसान। और लोग तो छानछून कर दिशा मैदान को इधर-उधर खिसक गए और मैं रह गया अकेला। नदी तट पर ठंडी हवा लगी और एक लड़की को देख कर मेरी कल्पना ने जोर मारा कि हैं यह तो श्रीमतीजी हैं ! इन्हें तो मैं घर पर छोड़ आया था, यहाँ ये कैसे आ गयीं ?

बस, इतना सोचना था कि मैं लपका उसकी ओर ! एकान्त में संध्या बेला, होली का मौका, ससुराल का ठिकाना और मेरा बेतहाशा होकर उसकी ओर लपकना !

जरा सोचिए संपादक जी !

जान लेकर भगी वह बेचारी। परन्तु यह मुझे कैसे बरदाश्त होता कि श्रीमतीजी मेरी आँखों के सामने आकर ओझल हो जायँ। मैंने पीछा करने पर कमर कस ली। युवती थी तो क्या, मुझ युवक से कब तक बच पाती। गाँव के समीप एक जगह मैंने जा ही तो पकड़ा उसे और बोला—"तुम आ कैसे गईं यहाँ ? मुझसे तो कहा था कि मैं मायके जाऊँगी ही नहीं, फिर तुम कैसे चली आयीं यहाँ ?"

थोड़ी देर में मेरे चारों ओर लोगों की भीड़ थी। बड़ी मुश्किल से उस युवती को लोगों ने मेरे हाथों से छुड़ाया। बोले—"क्या होगया तुम्हें ? यह फलाँ भड़भूजे की लड़की है या तुम्हारी स्त्री ?" लेकिन मैं तब भी उससे कहे जा रहा था कि मुझसे कहे बिना आखिर चली कैसे आयीं यहाँ ?" जैसे तैसे लोगों ने मुझे समझा बुझा कर मेरी ससुराल पहुँचाया लेकिन मुसीबत वहाँ भी दूर न हुई। अबकी बार अपनी साली को मैं श्रीमती जी समझ बैठा और लगा उससे भी पूछने कि "तुम कब आगई यहाँ ? मुझसे तो घरपर कुछ न कहा था।"

बहुत रात गये कहीं मेरी समझ में आया कि यह भंग की तरंग थी और कुछ नहीं !"

"उसके बाद तो आपने फिर कभी भंग छानी न होगी ?" मैंने पूछा।

"छाननी तो न चाहिए थी सम्पादक जी !" वे बोले "परन्तु पिछली बार जब बनारस आया तो अचानक नागरी प्रचारिणी के सामने एक बहुत पुराने मित्र से भेंट हो गई और उनके साथ एक गिलास चढ़ा ही ली !"

"उसने कुछ असर नहीं दिखाया क्या ?" मैंने पूछा।

"दिखाया क्यों नहीं ?" वे बोले, "रात को लौटते समय मैं बजरंग बली का मकान भूल गया। नीचीबाग से कबीरचौरा और कबीरचौरा से नीचीबाग तक मैंने पचीसों चक्कर काटे। कहीं तीन बजे रात को मैं बजरंगबली के दर्वाजे पहुँचा। दर्वाजा एक दम बन्द। चलते चलते थक तो गया ही था। दर्वाजे पर बैठकर रोने लगा जोर जोर से।

"रोने लगे आप ?" मैंने चकित होकर पूछा।

"हाँ, सम्पादकजी, रोने लगा। सो भी जोर जोर से। बीच बीच में अपनी भाषा में पुकारता भी जाता —"बजरंगवा रे बजरंगवा, किवरियाँ खोलत काहे नाहिं।"

हम सभी श्रोतागण ठहाका मार कर हँस पड़े। इतना हँसे कि पेट में बल पड़ गये। शायद आप भी हमारा साथ दें।

और अभी कल छोटी साली शान्ती कह रही थी कि उस दिन भैया के एक साले आकर उनसे पूछने लगे "जीजा, यह बिजली की बत्ती क्या आपने दियासलाई से जलायी है।"

हमें भंग की तरंग में ऐसी ही बातें सूझती हैं। लोग हमारी दशा देखकर, हमारी बातें सुनकर हमारे कार्य कलाप देखकर हमारी खिल्ली उड़ाते हैं—तब भी हम मौका आने पर उसकी गोली गले से नीचे उतार ही जाते हैं यह कहते हुए कि—"जय बोलो भंग भवानी की।"

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

'मैंने खुद की काया पलट की है।'

श्रीयुत गौरीशंकर सिंह चंदेल
श्रीमाधोपुर, जैपुर

श्रीयुत् गौरीशंकर सिंह जी चंदेल सोलह वर्षों से जैपुर रियासत के एक गाँव अमरसर में रह कर सार्वजनिक कार्य में लगे हुए हैं। आपने अपने को हरिजन कार्य के लिए अर्पित कर दिया है। आप एक प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह भी चलाते हैं जिसके बारे में आपने अपने एक पत्र में हमें प्रसंगवश लिखा है। यहां उक्त पत्र के साथ आपका नाम प्रकाशित करने की आज्ञा हम आपसे बहुत कहने-सुनने पर ही प्राप्त कर सके हैं। पाठक! चंदेलजी के स्वास्थ्यगृह सा जीवन-दायक स्वास्थ्यमन्दिर आप भी अपने गाँव में, घर में बना सकते हैं। हमारी प्रार्थना है कि अवश्य बनावें और लोगों को बनाने को कहें। –सं०

लगभग दो साल से मैं 'जीवन-सखा' को बराबर पढ़ता आ रहा हूँ। इधर कई महीनों से 'आपको भी कुछ कहना है' के रूप में निमन्त्रण मिल रहा है। मगर अब तक कुछ न लिख सका। इसका कारण कुछ तो अवकाश की कमी और विशेष लेखबाजी से अरुचि का होना है। तीन साल पहले जितना ही लिखने का शौक था आज उतना ही लिखने से घबराता हूँ।

हाँ, मुझे बहुत कुछ कहना है। मैंने प्राकृतिक उपचारों द्वारा खुद की काया पलट की है, कइयों को मृत्यु-मुख से उवारा है और अनेकों को घोर यातना से बचाया है। यह किस प्रकार? सुनिये।

आज से सात साल पूर्व मुझे प्राकृतिक-चिकित्सा का कुछ भी ज्ञान न था। केवल इतना ही जानता था कि पूज्य महात्मा गाँधीजी सिर-दर्द की दशा में मिट्टी का लेप किया करते हैं। इसी आधार पर एक दो वार जुकाम तथा आँख दुखने की हालत में डरते डरते सिर, आँख और पेट पर मिट्टी की पट्टी रखी। इस प्रयोग का आश्चर्यजनक फल देखकर मेरा हौसला बढ़ा और मैं उक्त तीनों रोगों में दूसरों को मिट्टी का उपचार बताने लगा। मगर उनसे यही कहता था कि यह महात्मा गाँधीजी का इलाज है। इससे अधिक मैं कुछ नहीं जानता था।

मेरा स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ था—शरीर मोटा, दाँतों में पायरिया, कोष्ठबद्धता, मधुमेह आदि न जाने कितने रोग थे। रोग दूर करने के लिए खूब पौष्टिक पदार्थ—पाक आदि खाया करता था। जब माल खाने से कुछ मतलब हासिल न हुआ तो दवाइयों की ओर झुका। कई नामी वैद्य मेरे मित्र थे और आज भी हैं। उनकी कृपा से खूब गोलियाँ निगलने को मिलीं और मेरे गरीबखाने से दो ढाई सौ रुपये दवाफरोशों और वैद्य-बन्धुओं की जेब में चले गये, पर मेरी गाड़ी आगे नहीं बढ़ी। जिस किसी डाक्टर या वैद्य से अपना दुख रोया उसने नई पुरानी दवा फांकने की सहाल दी, पर सब व्यर्थ रहा।

एक दिन भाई वंशीधर जी शर्मा (श्रीमाधोपुर, जयपुर) के साथ कहीं जा रहा था। मैं उनके साथ साथ नहीं चल सका, पिछड़ गया। इसपर मेरे मित्र ने हँस कर कहा—"आप तो सेठ बन गये।" मुझे बड़ी शर्म आई और मैंने दुःख भरे शब्दों में 'पहलवान' बनने का तरीका पूछा। उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा के नाम पर 'पेड़्-स्नान'

करने की राय दी और सब विधि भी बतलायी।

जाड़े की शुरुआत, कार्तिक का महीना था। मैंने पेड़ू-स्नान आरम्भ किया। पन्द्रह दिन के बाद यह स्नान दिन में दो बार करने लगा, एक मास के बाद सुबह मेहन नहान (सिट्ज़बाथ) और शाम को पेड़ू स्नान करने लगा। स्नान के बाद दण्ड-बैठक आदि व्यायाम करके जबतक पसीना न आ जाय फावड़ा चलाता था। भोजन में मोटे आटे की रोटी, हरे साग और सलाद की जगह गाजर, मूली, प्याज, ककड़ी खाता था। शाम को दूध लेता रहा। प्रति आठवें दिन सूर्य-स्नान (धूप में अरण्ड के पत्तों से ढक कर व कम्बल ओढ़कर पसीना निकालना) करता था। यह क्रम पाँच महीने तक चलता रहा। धीरे धीरे सभी प्रगट एवं गुप्त रोग नष्ट हो गए, शरीर सुन्दर व सुडौल हो गया। सात साल पहले मेरे शरीर का वजन दो मन पाँच सेर था। आज एक मन एकतीस सेर है। अवस्था पैंतालीस वर्ष की है। अब मेरे शरीर में पहलेवाला कोई रोग नहीं रहा। मेरा भोजन यथाशक्य प्राकृतिक होता है—जौ या गेहूँ के मोटे आटे की मोटी रोटी, कच्चा खाये जा सकनेवाली चीजों का कच्चा साग। मसाला मिर्च बिलकुल नहीं। थोड़ा घी और सुबह के भोजन में दही खाया करता हूँ। व्यायाम केवल टहलने का चलता है।

मगर मैं नहीं कह सकता कि अधिक व्यायाम करने के कारण अथवा किसी और कारण से मेरे सिर में गर्मी बढ़ गई जिसका असर आँखों पर पड़ा। ज्योति कम होने लगी, यहाँ तक कि एक आँख जो बचपन में उठ आने से कुछ कमजोर पड़ गई थी नितान्त ज्योतिहीन हो गई। मैं घबराया। विशेषकर इसलिए कि ऐसा होने का कोई कारण समझ में नहीं आया। मित्रों ने संतोषजनक निदान नहीं किया।

अब चूँकि प्राकृतिक चिकित्सा के कुछ नुसखे—जल व मिट्टी का प्रयोग हाथ आ गए थे अतः सबकी आशा छोड़ मिट्टी की पट्टी चढ़ाने लगा। धीरे धीरे सिर की गर्मी शान्त हुई। फिर आँखों को घुमा-फिरा कर आँखों का व्यायाम करने लगा। नहाते समय तीन-चार लोटे पानी से आँखों पर छींटा देता रहा। तीन चार महीने के उक्त प्रयोगों से खोई ज्योति फिर लौटने लगी। अब लगभग आधा लाभ हो चुका है। उपचार के नाम पर वही जल के छींटे नित्य लगाता हूँ। हाँ, लगभग आठ महीने से चश्मा भी पहनने लगा हूँ। चश्मे से आँखों पर जोर कम पड़ता है? विचार तो यही है कि यदि ईश्वर-कृपा से आँख पूर्ववत हो गई तो चश्मा उतार दूँगा।

सर्व प्रथम, मैंने अपने ही ऊपर प्राकृतिक चिकित्सा का प्रयोग किया, और जहाँ तक प्रयोग किया, उतने का चिकित्सक बन गया। कुछ और तरीके मित्रवर श्री वंशीधर से जान लिए। अब 'जीवन-सखा' से भी काफी मदद ले रहा हूँ। इसके अलावा मैंने कहीं से कुछ नहीं सीखा है। पुस्तकों के लिए मेरे पास पहले तो पैसा ही नहीं है और मिल भी जाय तो पढ़ने का अवकाश नहीं। मेरे कहने का मतलब यह है कि मैंने प्राकृतिक उपचार सम्बन्धी जो नाममात्र का अनुभव प्राप्त कर लिया है उसी के आधार पर आश्चर्यजनक सेवा कर रहा हूँ। अब तो मेरा दवाइयों के प्रति अविश्वास सा हो रहा है। कई बार वैद्य-बन्धुओं को अनाप-शनाप औषधियाँ फँकाते या खिलाते देखकर मैं कुढ़ता हूँ, मगर करूँ क्या? लोग दवाइयों के आदी जो हो गये हैं। मेरे पास दो ही तरह के रोगी आते हैं—(१) वे लोग जो वैद्यों एवं डाक्टरों से निराश हो जाते हैं यानी जिन्हें वैद्य एवं डाक्टर कहते हैं—अब तुम अच्छे नहीं हो सकते। (२) वे लोग जिन्हें मुझमें विश्वास है, जो मेरे मित्र हैं। प्रथम श्रेणी के रोगियों की चिकित्सा में बड़ी कठिनाई होती है। देर भी लगती है। मगर अब तक सफलता ही हाथ लगी है। दूसरी श्रेणी के रोगियों की बाबत यह हैरत अंगेज बात देखी गई है कि उन्हें अपेक्षाकृत अल्प उपचार से ही लाभ होगया। इसका अर्थ मैंने यह लगाया है कि प्राकृतिक उपचार के लिए विश्वास एवं प्रेम परम सहायक होता है। अब मैं नये नये रोगों के

लिए मिट्टी, जल तथा भोजन-सम्बन्धी प्रयोगों के नये नये तरीके स्वतः ढूँढ़ लेता हूँ। कई बार आँख मूँदकर तीर चलाता हूँ और देखता हूँ कि निशाना ठीक लगा है। इसका कारण शायद मेरी प्रकृति के प्रति अटूट श्रद्धा ही है। इसी लिए प्राकृतिक उपचारों को मैं 'ईश्वरीय चिकित्सा' कहा करता हूँ। मेरा अनुभव अत्यल्प है। मेरे पास एक मँगनी के टब और टूटी अंगीठी के सिवा कोई साधन नहीं है। गाँव के बाहर एक कूएँ के पास एक छोटी सी फुलवगिया (जिसे मैंने खुद के उपचार के दिनों में 'टीवा' खोद खोद कर तैयार किया था) में एक खुद का तैयार किया हुआ खुला 'नहान-घर' है। फावड़ा चलाने के लिए कृषक-बन्धुओं के खेत हैं। और तुलसी के कुछ बिरवे जिनके पत्तों से अनुपम नुस्खे बनते हैं। लाल मिट्टी व अरण्ड के पत्तों की बहुलता है ही। बस यही मेरे 'प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह' की रूप रेखा है।

अपनी प्रशंसा के शब्दों को अंकित करने तथा अपने किए का बखान करने में मुझे भारी अन्तर्वेदना होती है। मैंने इस पर काफी अर्से तक विचार किया है कि लिखूँ या न लिखूँ। अन्ततः इसी ख्याल से कि यदि मेरे कुछ लिखने से मेरे दूसरे बन्धुओं का कुछ लाभ हो सके तो लिखना चाहिए। आज इतना लिख रहा हूँ।

बालक का हठ

श्रीमती ताराबहन मोडक

"हठ का ठीक ठीक इलाज करने के लिए सबसे पहले हमें यह जानना-सीखना चाहिए कि हठ है क्या? कई बार हठ का कोई इलाज नहीं होता। इसका कारण यह है कि हठ जैसी दिखाई देने वाली बहुत सी बातों को हम हठ मानने की भूल करते हैं अथवा वास्तविक हठ को ठीक ठीक नहीं समझते।"

हम बालक को बार बार कहा करते हैं, "अब हठ मत करना, तू कितना हठी है? कितना जिद्दी है?" ऐसा कहने से बालक को यह ज्ञात होता है कि उसमें हठ करने की शक्ति है, वह हठी है, जिद्दी है। इस प्रकार बालक अधिकाधिक हठी होता जाता है। इससे हम दुःखी होते हैं किन्तु बालक हमसे भी दस गुना दुःखी होता है। उसका सारा दिन "एँ-एँ-एँ" करने में बीतता है। फलतः बालक और हम में एक नई किन्तु अनावश्यक खटपट होने लगती है।

बालक की हठ दूर करने का सच्चा उपाय यह है कि हम अपने मन में तो यह समझ लें कि वह हठी है, किन्तु उससे न कहें कि वह हठ करता है। हठ का ठीक ठीक इलाज करने के लिए सब से पहले हमें यह जानना-सीखना चाहिए कि हठ है क्या? कई बार हठ का कोई इलाज नहीं होता। इसका कारण यह है कि हठ जैसी दिखाई देने वाली बहुत सी बातों को हम हठ मानने की भूल करते हैं अथवा वास्तविक हठ को ठीक-ठीक नहीं समझते।

हठ दूर करने का पहला उपाय है वास्तविक हठ के रूप को पहचानना। अतः "हठ क्या है?" यह सवाल सदा हमारे सामने रहना चाहिए।

एक चार वर्ष की लड़की अपनी बड़ी बहन के साथ किसी पड़ोसिन के यहाँ गई। पड़ोसिन ने कहा, "बहन, हमारा पटड़ा भिजवाना"। घर पहुँचकर लड़की पटड़ा उठाने लगी और उसके न उठने पर जोर जोर से रोने और चिल्लाने लगी। जब घर के आदमियों

ने उसके रोने की ओर ध्यान ही न दिया तो वह और भी जोर से रोने लगी। अब पिता का ध्यान उसकी ओर गया। रोने का कारण पूछने पर मालूम हुआ कि वह पटड़ा उठाकर पड़ोसिन के घर ले जाना चाहती थी। पिता के अकेले ही पटड़ा उठाने पर वह फिर रोने लगी क्योंकि वह तो सिर्फ सहायता चाहती थी। इस पर पटड़े को एक तरफ से उसके पिता ने और दूसरी तरफ से उसने और उसकी बहन ने पकड़ा। इस प्रकार पटड़ा पड़ोसिन के घर पहुँचाया गया। लड़की आनन्द से नाचने लगी, और खुश होकर पड़ोसिन से कहने लगी, "देखिए, हम आपका पटड़ा ले आए हैं।"

पटड़े के न उठने पर लड़की का रोना और चिल्लाना कोई सामान्य बाल-हठ जैसी चीज न थी। आवश्यक सहायता देने के बदले "लड़की कितनी हठीली है?" "एक बात के पीछे पड़ जाने पर उसे छोड़ती ही नहीं", "किस लिए चिल्ला रही है?" "अभी नहीं", "हम भिजवा देंगे" "क्यों मगज चाट रही है?" आदि बातों में से कोई बात उसे कही जाती तो उसको भारी दुःख होता——एक तो अपने निश्चित, अच्छे एवं निर्दोष कार्य के अधूरे रह जाने का और दूसरे अपने घर के प्रियजनों की असहानुभूति का।

वास्तविक हठ को पहचानने के लिए बालक को निकट से, उसीका बनकर, उसीकी दृष्टि से देखने और समझने का अभ्यास करना चाहिए। और जब वह ऊधम करे तब इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि असली हठ है क्या चीज।

ऐसा करने पर हमें मालूम हो जायेगा कि पहले जिन घटनाओं में हमें हठ नजर आता था, उनमें हठ नहीं था। अशक्ति, अस्वस्थता अथवा थकावट के कारण बालक के रोने और झगड़ने को ही हम हठ समझ बैठते हैं। ज्यों-ज्यों हम कारणों की खोज करेंगे त्यों-त्यों हमें हठ के असली रूप का पता लगता जायगा और एक बार तो ऐसा लगेगा कि बाल-जगत में हठ जैसी कोई चीज है ही नहीं। किन्तु यह बात भी नहीं है। बालक कितनी ही बार हठ-रोग से पीड़ित होता है जिसका तत्काल इलाज होना चाहिए।

शारीरिक अस्वस्थता या निर्बलता के कारण यदि बालक झगड़ालू और चिड़चिड़ा हो गया है तो उसका इलाज करना और उसकी सार-संभाल रखना आवश्यक है। किन्तु ऐसे समय बालक की मानसिक निर्बलता या विकार का शिकार हो जाना भी संभव है। अतः इस ओर भी हमारा ध्यान होना चाहिए। ऐसे समय बालक की बीमारी को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देने, अथवा जरूरत से ज्यादा उसकी सार-संभाल करने तथा सब कुछ उसकी इच्छानुसार करते रहने से उसके हठीला बन जाने की संभावना है।

घर में एक ही बालक होने के कारण जरूरत से ज्यादा उसका मान होने से भी वह हठीला बन जाता है। अक्सर सबसे छोटा बालक हठी बनता है। धनवानों के बालक प्रायः हठी होते हैं।

बाल-हठ में बालक की दुनिया का राजा बनकर फिरने की इच्छा होती है। इसका मतलब यह है कि जिन पर बालक का प्रभाव होता है, उन सब को वह अपनी इच्छानुसार चलाना चाहता है। ऐसी विकृत इच्छा का उदय तभी होता है जब बालक को यह ज्ञान हो जाता है कि उसके रोने और झगड़ने में बड़े से बड़े को अपने सामने झुकाने की शक्ति है।

एक चार वर्ष की इकलौती लड़की थी। उसकी सार-संभाल करने के लिए उसकी माता के अलावा एक नौकरानी भी थी। नौकरानी का यह ख्याल था कि घर में एक ही बालक है, वह जो कुछ कहे सो करना ही चाहिए। माँ का ख्याल था कि घर में एक ही लड़की है, इसलिए बड़े अच्छे ढंग से इसका पालन-पोषण होना चाहिए। जब बालिका स्वच्छंद होकर कुछ कहती तो माँ उसको रोक देती। थोड़ी देर में नौकरानी आती और कहती, "आप तो बड़ी निर्दय हैं। ले-देकर एक ही तो लड़की है, इतनी रोती है, किन्तु आपके मन में जरा भी दया नहीं आती।" यह कहकर वह उसे अपनी गोदी में उठा

लेती, खाने को देती, समझाती और 'रानी बेटी, हीरा बेटी' कहकर उसे मनाती। हृष्ट पुष्ट होने पर भी लड़की दिन में दो-तीन बार रोती और घंटों तक रोती रहती। यदि यह कहें तो बेजा न होगा कि उस लड़की को हठ-रोग हो गया था।

लड़की की माँ का ध्यान इस ओर गया। उसने एकदम एकतंत्र राज शुरू कर दिया। एक-दो बार लड़की खूब रोई, किन्तु माँ के दृढ़ रहने पर वह आठ दस दिन में ही बिलकुल बदल गई। आठ-दस दिन पहले जो लड़की दुःखी और रोती थी वही लड़की अब प्रसन्नचित्त, हँसोड़ और सुदृढ़ मन वाली बन गई।

ऊपर के उदाहरण में जो स्थान नौकरानी का था वही स्थान घर में आमतौर पर माता-पिता का होता है। नौकरानी को तो घर से अलग किया जा सकता है, किन्तु कुटुम्ब को तोड़ देना असंभव है। यही कारण है कि बालक हठ के शिकार बन जाते हैं। कन्तु लोगों की तो यह धारणा है कि जो बालक को मारता है, डाँटता है, वही उसको कैसे मना सकता है? इसलिए एक मारने वाला, डाँट फटकार बताने वाला और सख्ती करने वाला हो और दूसरा ऐसा प्रसंग आने पर बालक को प्यार से अपने पास बुलाने वाला हो। माँ मारे तो बालक नानी या दादी के पास जावे और वह "बस, अब रो मत" कहकर उसको अपने पास बिठावे। इस प्रकार नियंत्रण की दूषित कल्पना हमारे अन्दर घर कर गई है जिसके फलस्वरूप बालक व्यर्थ ही दुःखी होते हैं।

हठ की दो विशेषताएँ हैं—एक तो अपनी बात करवा कर छोड़ना और दूसरी नियमों का पालन न करना। बालक हो चाहे बड़ा, यदि वह अपनी इच्छा-शक्ति (Will) का विवेकपूर्वक उपयोग करता है तो वह इच्छाशक्ति है। इसके विपरीत यदि वह अपनी इच्छा-शक्ति का दुरुपयोग करता है, विचारपूर्वक उससे काम नहीं लेता तो वह हठ है। बालक की विकसित होने वाली इच्छा-शक्ति को बलवान बनाने तथा उसको हठ का रूप धारण करने से बचाने के लिए नियंत्रण की आवश्यकता है। दुलार में पला हुआ बालक नियमों को तोड़ना अपना विशेषाधिकार समझता है और नियमपालन कराने वाले माता-पिता को अपनी इच्छानुसार झुकाने में उसे सत्ता के विकृत आनन्द का अनुभव होता है।

हठी बालक का विकास नहीं होता। उसमें शक्ति होने पर भी वह अविकसित ही रहता है। फलतः बालक और हम दोनों ही दुःखी होते हैं।

हठ छुड़ाने का पुराना तरीका इच्छा-शक्ति को तोड़ देना है (Break the will)। किन्तु बालक की इच्छा-शक्ति को तोड़ कर उसको आज्ञाकारी बनाने का तरीका कुछ अच्छा नहीं है। इससे तो बालक उल्टा विद्रोही और द्वेषी बनता है। इस प्रकार, उसकी इच्छा-शक्ति का बल घटने के बजाय अधिक तेजी से विकृत होता है। अतः बालक डरपोक और भीरु बनता है। मतलब यह कि उसकी इच्छा-शक्ति सचमुच टूट जाती है, पराधीन बन जाती है और उसका विकास नहीं हो पाता। हठ का एक ही इलाज है, दृढ़ निश्चय। किन्तु इस बात का जरूर पता लगाते रहना चाहिए कि हमारा निश्चय ठीक है या नहीं। एक बार निर्णय कर लेने के बाद हमें चौहान की तरह सख्त और दृढ़ बन जाना चाहिए। अधिक बोलने और समझाने से भी कोई लाभ नहीं होता। फिर बालक का रोना-धोना, हाथ-पैर मारना या और कुछ करना बड़ी शान्ति और दृढ़ता से देखते रहना चाहिए। इन एक-दो अग्निपरीक्षाओं में से गुजरने के बाद बालक ठीक रास्ते पर आ जायगा।

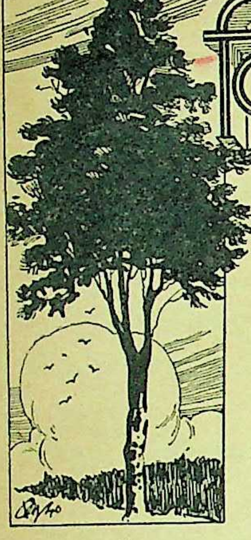

विविध-विषय

श्रीयुत गंगाप्रसाद गौड़ "नाहर"

अलग अलग रंगों की बोतलों में पानी भरकर सूर्य की किरणों से पका लेते हैं। यह जल औषध का गुण रखता है। इस विषय पर अंग्रेजी में बहुत बड़ी बड़ी पुस्तकें हैं और यह शास्त्र 'सूर्य किरण चिकित्सा' के नाम से प्रसिद्ध हो रहा है। विदेश में इसका काफी प्रचार है और यह शास्त्र काफी उन्नति भी कर चुका है फिर भी इसमें अभी काफी छान-बीन की गुंजाइश है। गौड़ जी के लेख द्वारा पाठकों का इस विषय में प्रवेश होगा।—सं०

रंग और स्वास्थ्य

सृष्टि-रचना में नानाप्रकार के रंगों की उपस्थिति न केवल उसके सौन्दर्य-छटा के अभिप्राय से ही महत्त्वपूर्ण है, अपितु उसका सम्बन्ध-सूत्र, सृष्टि-प्राणियों के स्वास्थ्य के साथ भी एक अति रहस्यमय एवं सूक्ष्म रीति से ग्रथित है। हमारी इस शरीर-प्रणाली में अनेक रंग हैं, और उन्हीं में से किसी रंग की न्यूनता अथवा आधिक्य के कारण हम बीमार पड़ते हैं। रंगों द्वारा रोग-निवारण की एक चिकित्सा-प्रणाली ही अलग है जिसको रंग-चिकित्सा-विज्ञान कहते हैं।

रंगों द्वारा रोगोपचार

भिन्न-भिन्न रंगों का, भिन्न-भिन्न रूप से स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। रंगों में बहुतसे रंग ऐसे हैं जो हमारे स्वास्थ्य के लिए हितकारी हैं, और बहुतसे ऐसे भी हैं जिनसे स्वास्थ्य को बहुत क्षति पहुँचती है। सूर्य्य की प्रातःकालीन नीलोतर हल्की किरणों में बैठ कर रोगनिवारण की विधि आज विविध प्रकार के रोगों पर जादू का असर कर रही है, इसका कारण सूर्य्य की सप्तरंगी किरणों का स्वास्थ्यकर-प्रभाव ही है।

यदि यह जानना हो कि अमुक मनुष्य के शरीर में किस रंग विशेष की अधिकता वा न्यूनता है तो उसके सामने विविध प्रकार के रंगों को रख कर, वा अनेक रंगीन वस्तुओं को दिखा कर उससे पूछें, उन रंगों में से कौन-सा रंग उसे विशेष प्रिय है। जो रंग उसे विशेष प्रिय हो, उसी रंग की कमी उसके शरीर में समझनी चाहिए। इसके विपरीत, जिस रंग को वह सबसे बुरा बतावे, उस रंग की अधिकता।

लाल रंग गर्मी उत्पन्न करता है। यह रंग आँखों के लिये बड़ा हानिकारक है। यह स्वभाव को बिगाड़ने वाला और अनिद्राजनक भी होता है। जिस कमरे की भीतरी दीवारों पर लाल रंग की पालिश हुई हो, उसे शयन-कक्ष कभी न बनाना चाहिए। लाल रंग की अधिकता पागलपन की निशानी है। जिस व्यक्ति को कुम्भकर्णी नींद आती हो, समझ लीजिए, उसके शरीर में लाल रंग की अधिकता है। हर प्रकार के मादक द्रव्य, शरीर में लाल रंग को बढ़ाते हैं, जिससे रुधिर में असाधारण तेजी उत्पन्न हो जाती है। लाल रंग, सुस्त बच्चों की निर्बलता में प्रयोग करने से अच्छा फल देता है कदाचित यही कारण है जो हमारे घरों में बच्चों द्वारा रंगीन वस्त्र, रंगीन खिलौने आदि व्यवहार करवाने की प्रचलन अनादि काल से चली आ रही है।

हरा रंग नेत्रों की ज्योति बढ़ाता है और मस्तिष्क को तरावट पहुँचाता है। क्रोधी मनुष्य यदि कुछ काल तक हरियाली भरे उपवन में निवास करें तो उसका क्रोध बहुत अंशों में शान्त हो सकता है। यह रंग रुधिर-

विकार वाले रोगों में कुष्ठ तक में, लाभदायक सिद्ध हुआ है। इस रंग की प्रकृति शीतल है।

पीला रंग, लाल रंग के समान ही नेत्रों के लिए अहितकर है, इससे पांडु रोग तक उत्पन्न हो जाता है। शरीर में इसकी अधिकता, हाथ-पैरों में जलन, मुँह में कड़वापन, तथा मन्द ज्वर उत्पन्न करता है। किन्तु मन्दाग्नि जैसे पेट के अनेक रोगों में पीला रंग बहुत लाभ करता है।

नीला रंग, मानव-स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी है। हरे रंग की भाँति, हमारे मस्तिष्क पर इस रंग का भी प्रभाव अच्छा पड़ता है। हमारे सरों पर जो नीला आकाश छाया हुआ है, यह प्रकृति की, हम लोगों के लिए, बड़ी भारी देन है। इस रंग के प्रभाव से चञ्चल हृदय स्थिरता को प्राप्त हो जाता है, यही कारण है जो रंग-विज्ञान के ज्ञाता, रोगी के कमरे की छत को नीले रंग से रँगवाने के पक्षपाती हैं। इस रंग से अनिद्रा एवं मस्तिष्क की पीड़ा को आश्चर्यजनक लाभ पहुँचता है। शरीर में नीले रंग की कमी दस्त और पित्त को उत्पन्न करता है; तथा स्वाँस, कास, पांडु रोग, मानसिक दुर्बलता, राजयक्ष्मा, प्रमेह और स्त्रियों के प्रदर रोग आदि की सृष्टि का कारण बनता है। बढ़ी तिल्ली, यकृत की सूजन, मोतीझरा, नेत्र रोग, बच्चों का रात में चौंकना, तथा पेशाब रुक-रुक कर और जलन के साथ आने में नीले रंग का प्रयोग लाभाकारी सिद्ध हुआ है। यह रंग फेफड़ों को साफ करता है, तथा शक्तिवर्द्धक एवं रक्त-वर्द्धक है।

काला रंग, लाल रंग के समान ही गर्मी उत्पन्न करने वाला होता है, अतः स्वास्थ्य की दृष्टि से, जाड़े के दिनों में काले कपड़ों का पहिनना हितकर है।

सफेद रंग स्फूर्तिदायक होता है। यही कारण है कि दिन का भाग, जिसको प्रकृति ने हमें काम करने के लिए बनाया है, उज्ज्वल और प्रकाशवान होता है। बरसात के मौसिम में जबकि कई दिनों तक सूर्य-भगवान के दर्शन तक नहीं होते और सर्वत्र अन्धकार छाया हुआ होता है, सफेद रंग की क्षति-पूर्ति के लिए हमें सफेद रंग के कपड़े ही उपयोग में लाने चाहिएँ।

बैंगनी रंग शरीर का ताप कम करने में बड़ा गुणकारी है। इस रंग की प्रकृति भी हरे रंग की भाँति शीतल है। शरीर में इसकी कमी हो जाने से हैजा, अतिसार, प्रलाप आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। पागल कुत्ते के काटे, मस्तिष्क दौर्बल्य, तथा हृदय की धड़कन में बैंगनी रंग लाभ करता है।

नारंगी रंग की कमी से मनुष्य को दर्द गुर्दा होता है और फालिज मारता है। बादी बवासीर के उत्पत्ति, का कारण भी शरीर में इस रंग की कमी ही है। यह रंग स्त्रियों की मासिक धर्म सम्बन्धी सभी शिकायतों को दूर करता है। जिस किसी के शरीर में इस रंग की अधिकता होती है उसको न्युमोनिया, यक्ष्मा, कास, दमा तथा फेफड़े के अन्य रोग नहीं होते।

मानसिक स्वास्थ्य पर रंगों का प्रभाव

गहरा लाल रंग चञ्चलता उत्पन्न करता है और स्वभाव में प्रखरता लाता है। गुलाबी रंग प्रेम का प्रतीक है। गाढ़ा पीला रंग ईर्ष्या-द्वेष आदि बुरे भाव उत्पन्न करता है। इसके विपरीत नील वर्ण भक्ति, अनुराग एवं प्रेम का जनक है। हलका कासनी, नारंगी तथा पीतवर्ण, बुद्धि विवेक एवं ज्ञान की वृद्धि करने वाले होते हैं; तथा कृष्ण अथवा गहरा भूरा रंग दम्भ, पाखण्ड एवं कपटाचार का द्योतक है। हरे रंग से मनुष्य को सब प्रकार की शान्ति प्राप्त होती है। जिस समय हृदय में अस्थिरता उग्र रूप धारण कर ले, उस समय तारों भरी रात में वा प्रातःकाल किसी हरे-भरे उद्यान में बैठ कर नील वर्ण आकाश की ओर एकाग्र चित्त होकर थोड़ी देर तक देखिए, आपके चित्त को शान्ति प्राप्त होगी और हृदय से नैराश्य छू-मन्तर हो जायगा। हिन्दू-शास्त्रों में जो राम और कृष्ण के नील वर्ण विग्रह के ध्यान का विधान किया गया है उसका एक अभिप्राय

शेष पृष्ठ २५७ पर

तन्दुरुस्त रहने के दस नियम

प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम० ए०

प्रातःकाल ४ बजे उठो और सब से पहले शौच जाओ। फिर हाथ मुँह धोकर थोड़ी देर तक रामायण या अपने धर्म की किसी पुस्तक का पाठ करो।

२. घड़ी देख कर एक घंटा खुली हवा में रोज तेजी से टहलो।

३. टहल कर वापस आने पर एक पाव गरम पानी में एक ताजा नींबू निचोड़ कर उसी का जलपान करो।

४. २४ घंटे में दो या अधिक से अधिक तीन बार सलाद और संतुलित भोजन करो। एक जवान के लिए एक पाव मोटे आटे की रोटी, थोड़ी छिलकेदार दाल, आधी छटाँक मक्खन या बढ़िया घी, आध सेर दूध, एक रकाबी भर कच्ची तरकारी, थोड़ी सी सादे ढंग पर बहुत कम मसाले के साथ पकाई हुई तरकारी, एक छटाँक किशमिश या खजूर, थोड़ा सा मेवा और थोड़े से मौसमी फल दिन भर के लिए बहुत काफी हैं, जिन्हें शारीरिक परिश्रम अधिक करना पड़ता है उन्हें इस तादाद का सवाया भोजन बहुत होगा। बच्चे और बूढ़े उम्र और शक्ति के अनुसार कम ज्यादा ले सकते हैं।

५. हर रोज कपड़े उतार कर थोड़ी देर धूप में बैठो और ठंढे पानी से स्नान करो।

६. १५ दिन में एक दिन २४ घंटे का उपवास करो। यह प्रकृति का दिया हुआ एक अचूक इलाज है जो सब बीमारियों को दूर करता है।

७. चाय, चुरुट और शराब, भंग आदि नशे की चीजों का व्यवहार-न करो।

८. ब्रह्मचर्य का पालन करो।

९. सदैव प्रसन्न रहो।

१०. रात को नौ बजते बजते सो जाओ।

[पृष्ठ २३४ का शेषांश]

अंत में पैरों को। पैरों को रगड़ते समय पैरों को सीधा रखिए और झुक कर पंजों की ओर से रगड़ते हुए हाथों को जाँघों की ओर लाइए। प्रारम्भ में धीरे धीरे ही रगड़ना चाहिए। आदत पड़ने पर कड़े हाथों और अधिक देर तक यह क्रिया की जा सकती है।

इस प्रकार बदन रगड़ने के बाद तुरन्त ठंडे पानी से इच्छा भर नहाना चाहिए। स्नान के बाद बदन और बालों को सूखे तौलिए से सुखा लेना चाहिए। सूखे बदन को रगड़ने के बाद नहाने से एक विशेष आनन्द का अनुभव होता है और कितने ही कमजोर व्यक्तियों के लिए यह स्नान और कसरत दोनों का काम दे सकता है।

यदि स्नान की इस विधि का बराबर पालन किया जाय तो फोड़े-फुन्सी, दाद-खाज होने का भय नहीं रहेगा। मुँह पर मुहाँसे न निकलेंगे और झाँई न पड़ेगी। त्वचा का पीलापन गुलाबी में बदल जायगा और रुखड़ी निस्तेज त्वचा धीरे धीरे मखमल-सी मुलायम हो जायगी। लोगों को ऐसा प्रतीत होगा कि आप रोज तेल की मालिश करवाकर स्नान करते हैं।

इस स्नान के बाद यदि बदन को तौलिए से न सुखा कर तलहथी से ही रगड़कर सुखा लिया जाय तो लाभ और अधिक हो।

भोजन-विज्ञान

कब्ज दूर करने में फल और तरकारियों का प्रयोग

श्रीयुत विट्ठलदास मोदी

कब्ज दूर करने के लिए कितने ही लोगों को गोली, फंकी और आसव का सहारा लेना पड़ता है। दवा तो थके घोड़े को चाबुक मार मार कर चलाने का काम करती है जिससे रोग अधिकाधिक बढ़ता जाता है। दवाओं के बदले यदि फल-तरकारियों का प्रयोग किया जाय तो कब्ज तो जायगा ही अनेक ऐसे रोग भी चले जायंगे जो प्राकृतिक लवण और विटामिनों के अभाव से पैदा होते हैं।

नागरिक जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है कोष्ठबद्धता अथवा कब्ज। किसी से भी पूछ देखिये वह अवश्य ही कब्ज से पीड़ित मिलेगा। यह क्यों? पशुओं में तो यह शिकायत नहीं दिखाई देती। उनका मल तो बिना मल-द्वार को गन्दा किये अनायास निकल जाता है। फिर मनुष्यों को ही क्यों घण्टों पाखाने में बैठे रहने की जरूरत पड़ती है? इसका कारण है उनका अप्राकृतिक जीवन। गद्दीपर सुबह से शाम तक बैठे रहनेवाले दूकानदार अथवा आफिस में झुक कर आठ घंटे काम करनेवाले क्लर्क के पेट की मांसपेशियाँ शिथिल होने के बजाय और क्या होंगी? जिस अंग का व्यायाम नहीं होता वह स्वभावतः कमजोर हो जाता है। यही दशा हमारे पेट की होती है। इसके अलावा, उचित भोजन, कसरत एवं आराम का भी पेट की सफाई पर बहुत प्रभाव पड़ता है, और जो लोग चाहते हैं कि उनका कब्ज सदा के लिए दूर हो जाय, उनके लिए यह आवश्यक है कि इन सभी बातों पर ध्यान दें। जब आँतें सतेज होंगी, उनमें पूरी कार्य-शक्ति होगी तो वे अनावश्यक मल को कभी समय से अधिक देर तक न रोकेंगी।

कब्ज दूर करने के लिये कितने लोगों को गोली, फंकी और आसव का सहारा लेना पड़ता है? यह इसी से जाना जा सकता है कि जितनी बिक्री इन दवाओं की होती है उतनी और किसी दवा की नहीं होती। दवा तो थके घोड़े को चाबुक मार मार कर चलाने का काम करती है जिससे रोग अधिकाधिक बढ़ता जाता है, अतः इसका प्रयोग कभी न करना ही श्रेयस्कर है। इसके बजाय यदि फल-तरकारियों का प्रयोग किया जाय तो कब्ज तो जायगा ही अनेक ऐसे रोग भी चले जायँगे जो प्राकृतिक लवण[1] और विटामिनों के अभाव से पैदा होते हैं। इसके अलावा इनके प्रयोग से भूख बढ़ती है, शरीर सशक्त एवं कान्तिमान होता है।

यों तो केले-कटहल को छोड़कर सभी फल पेट साफ होने में मदद करते हैं, पर उपयोगिता के क्रम में बेल, नाशपाती, मकोय, अमरूद, पपीता, शरीफा तथा सूखे फलों में अन्जीर मुनक्का और किशमिश आते हैं।

---

[1] प्राकृतिक लवण अर्थात् लोहा, ताँबा, चूना, आयोडिन, सोडियम, सलफर, पोटैशियम, मैगनेशियम फ्लोरीन, सिलिकन आदि।

बेल

बेल कब्ज दूर करने में सबसे अधिक उपयोगी है। यह कोष्ठ को साफ करता है और उसे सजीव बनाता है। इसके दो-तीन सप्ताह के प्रयोग से पुराना मल भी साफ हो जाता है और फिर आगे कब्ज नहीं रहता। लोग बेल का प्रयोग अधिकतर अतिसार में ही करते हैं पर बेल में दोनों गुण हैं। वह पतले दस्तों में दिये जाने पर मल को बाँधता है और कब्ज की अवस्था में उसे दूर करता है। इसके प्रयोग से मल बिना किसी प्रयास के बाहर हो जाता है। जल-चिकित्सा के आचार्य लूई कूने ने जिस प्रकार के मल को स्वास्थ्य का लक्षण बताया है बेल खाने से वैसी ही टट्टी होती है। बेल का उपयोग अधिकतर शरबत बनाकर ही किया जाता है। शरबत से भी लाभ होता है पर चीनी गरमी करती है और उसमें किसी प्रकार का विटामिन एवं प्राकृतिक लवण न होने से हानि पहुँचाती है, अतः बेल का उपयोग उसके स्वाभाविक रूप में ही करना चाहिए। सबसे अच्छा यह होगा कि दोपहर के भोजन के पूर्व इसका उपयोग किया जाय। एक वयस्क के लिए छँटाक भर की मात्रा काफी है। बेल खा लेने के बाद हाथ-मुँह साफ करके फिर थाली पर बैठा जा सकता है। अधिक स्वाद के लिए बेल में से बीज और लासे को सावधानी से अलग कर देना चाहिए। फिर गूदा किसी चम्मच या चाकू से एक रकाबी में निकाल कर क्रीम के साथ खाया जा सकता है। बेल दिमाग को भी तर रखता है एवं धातु पुष्ट करता है।

नाशपाती

बेल के बाद नम्बर आता है नाशपाती का। कब्ज दूर करने में इसका उपयोग बहुत कम लोग जानते हैं। इससे जुलाब का भी काम लिया जा सकता है। जो प्रतिवर्ष कोई न कोई रेचक लेकर अपना पेट साफ करते हैं वे नाशपाती से वही काम निकाल सकते हैं। इसके लिए नाशपाती का रस निकाल कर दिन में पाव डेढ़पाव की मात्रा में तीन-चार बार पीना चाहिए। यह रस बहुत ही स्वादिष्ट होता है नाशपाती के रस का प्राकृतिक मिठास शरीर द्वारा तुरत उपयोग में आ जाता है। अतः टट्टी होते रहने पर भी कमजोरी नहीं आती। पुराने कब्ज के रोगी को दो तीन दिन केवल यही रस पीकर या नाशपाती खा कर रह जाना चाहिए। साधारण कब्ज का शिकार यदि मँझोले कद की एक नाशपाती को अपने नाश्ते में स्थान दे या दोपहर के भोजन के बाद इस्तेमाल करे तो सहज ही इस कष्ट से थोड़े दिनों में मुक्त हो सकता है। नाशपाती का उपयोग करने पर कभी कभी लोगों को आँव आने लगती है। इसके आने पर घबराना न चाहिए। नाशपाती आँव बनाती नहीं है, आँतों में इकट्ठी पुरानी आँव को निकालती है। नाशपाती का प्रयोग जारी रखने पर आँव आना दो तीन दिन में स्वयं बन्द हो जाता है।

मकोय

मकोय का भी गुण नाशपाती के ही समान है, पर कई दृष्टियों से यह नाशपाती से भी बढ़ चढ़ कर है। मैं तो इसे गरीबों का सन्तरा कहता हूँ। इसमें भी प्रायः वही विटामिन और प्राकृतिक लवण मिलते हैं जो सन्तरे या किसी भी तुर्शाबे में होते हैं। पर लोग मकोय को हेय दृष्टि से देखते हैं और केवल बच्चों को फुसलाने के काम में लाते हैं। यह ठीक है कि मकोय खट्टी होने के कारण अधिक नहीं खायी जा सकती पर इसका रस तो बड़े मजे में पिया जा सकता है। शाम को पिया गया पाव आध पाव रस सबेरे दस्त साफ लाने के लिए काफी है। यों इसके चालीस-पचास दाने खाना बहुत लाभप्रद है। इसे लोग तरकारियों के सलाद में भी मिलाकर खाते हैं।

अमरूद

अमरूद की पेट साफ करने की शक्ति सबको विदित है। अंग्रेज़ी में यह कहावत प्रचलित है—एक सेब नित्य

खाने से डाक्टर का मुँह नहीं देखना पड़ेगा। यही उक्ति अमरूद पर भी लागू हो सकती है। एक अमरूद का नित्य सेवन आपको कब्ज से दूर रखेगा पर अमरूद को छीलकर खाने या उसके बीज निकाल देने से उसका यह गुण बहुत कुछ नष्ट हो जाता है। अमरूद में मिर्च मसाले लगा कर खाने की आवश्यकता नहीं है। जाड़े के दिनों में तो अमरूद का व्यवहार लोग कर भी लेते हैं पर बरसाती अमरूदों से अधिकतर परहेज किया जाता है। मैंने कितने ही आदमियों को प्रातःकाल अमरूद का नाश्ता करने की सलाह दी है। इससे किसी को भी लाभ के बजाय कोई नुकसान नहीं हुआ। दोपहर के भोजन के बाद भी एक अमरूद खाया जा सकता है।

केला

केला बहुत ही पुष्टकारक फल है। दुबले आदमियों को मोटा बनानेवाली अच्छी तरह पके केले से पुरअसर दूसरी चीज नहीं है। बच्चों को इसका खूब उपयोग करना चाहिए। पर अकेले केला खाने से कब्ज करता है। यदि केले के साथ साथ अमरूद का भी उपयोग किया जाय तो केला कभी कब्ज न करे।

पपीता

पपीते का व्यवहार अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है, यह प्रसन्नता की बात है। पपीता कुछ भारी होता है। इसके उपयोग के तीन-चार घंटे बाद ही फिर भूख लगती है। कब्ज दूर करने के लिए पपीता खाने का सबसे अच्छा समय है प्रातःकाल। इसका नाश्ते में खूब उपयोग होना चाहिए। पपीते को छीलने में सफाई की बहुत आवश्यकता है। यहाँ एक तरकीब बताई जाती है जिससे गूदे को छूने की भी जरूरत न पड़ेगी। पपीते को बीच से दो कर लीजिये और चम्मच से गूदा निकाल निकाल कर खाइये, पर यह तभी सम्भव है जब पपीता अच्छी तरह पका हुआ हो। अन्त में हाथ में पपीते का पतला छिल्का भर रह जायगा। अधिक स्वादिष्ट बनाने के लिए पपीते का गूदा चम्मच से एक प्याले में निकाल लिया जा सकता है। फिर गूदे के साथ दूध, क्रीम या मीठा दही मिला कर खाया जा सकता है। मीठा अधिक चाहें तो शहद या चार पाँच घंटे तक भिगोयी हुई किशमिश का भी प्रयोग उसके साथ किया जा सकता है। जो मांसाहारी हैं उन्हें तो पपीते का खूब प्रयोग करना चाहिए। पपीते में पाया जानेवाला पेप्सिन नामक पदार्थ मांस को बहुत जल्द पचाता है और कब्ज नहीं होने देता। दूध के छेने और पपीते को मिला कर बहुत ही स्वादिष्ट एवं सारपूर्ण भोजन बनता है। दमे के कमजोर रोगी जिन्हें हर चीज बायु ही करती है इस खाद्य पर रहें तो वे औषध और भोजन दोनों का लाभ पावेंगे।

शरीफा

शरीफा भी अच्छी चीज है। गठिया के रोगी इसे इस्तेमाल करें तो इससे उनका कब्ज तो जायगा ही, गठिया में भी बहुत फायदा होगा। यह फल नाश्ते में दोपहर अथवा संध्या के भोजन के साथ अथवा किसी समय भी उपयोग में लाया जा सकता है।

अञ्जीर

कब्ज दूर करने के लिए तिब्ब में अञ्जीर की बड़ी तारीफ है। हकीम लोग अपने नुसखों में पेट की सफाई के लिए अंजीर लिखते हैं। मुनक्का भी इसी उपयोग में आता है। इन दोनों ही फलों का उपयोग लोग दूध में औटा कर रात को सोते समय करते हैं। इससे पेट को साफ होने में मदद मिलती है पर औटाये हुए गरिष्ट दूध को हमारी पाचन-क्रिया सोते समय बहुत सुस्ती से काम करने के कारण पचा नहीं पाती अतः धीरे धीरे अग्निमान्द्य रोग हो जाता है। अंजीर, मुनक्के तथा किशमिश के भी उपयोग की सर्वोत्तम विधि यह है कि उन्हें फुला कर खाया जाय। इन फलों को धो कर

किसी शीशे या चीनी मिट्टी के बर्तन में थोड़े से पानी में भिगो देना चाहिए। अंजीर को बारह से चौबीस घंटे तक और किशमिश मुनक्के को आठ से बारह घंटें तक भिगोना चाहिए। बाद में जो पानी बच रहे उसे पी डालना चाहिए। अंदाज होने पर इन फलों को इतने ही पानी में भिगोना चाहिए कि फल भीग जाने पर बहुत ही थोड़ा पानी बचे। ये फल सवेरे दूध के साथ उपयोग में लाये जा सकते हैं। इन्हें खाकर कच्चा दूध पीने से कब्ज तो जाता ही है, शरीर भी पुष्ट होता है। एक वयस्क के लिए चार-पाँच अंजीर या छटाँक भर मुनक्का अथवा किशमिश काफी होगी। किशमिश का उपयोग तो दूध के साथ ही सर्वोत्तम है पर अंजीर और मुनक्के का उपयोग दोपहर और शाम को भोजन के अन्त में भी किया जा सकता है।

सब्जी के प्रयोग

फलों के अलावा तरकारियाँ भी कब्ज हटाने में बहुत मदद करती हैं। तरकारियों का रेचक गुण अधिकतर उनके फुजले के कारण होता है। तरकारियों में जो रेशे या पतले-कड़े छिलके होते हैं वे पचते नहीं और बाहर आते समय कब्ज को तोड़ देते हैं। हमारे यहाँ तरकारियों के छिलके छीलकर ही उनका उपयोग किया जाता है और मिर्च मसाले इतने अधिक डाले जाते हैं कि उनका अधिक उपयोग नहीं किया जा सकता। छीलने से तरकारियों का फुजला तो कम हो ही जाता है उनका अधिकतर प्राकृतिक लवण भी निकल जाता है क्योंकि प्राकृतिक लवण ज्यादातर छिलकों एवं तरकारियों के बाहरी हिस्से के ही निकट होता है। हम भोजन में तरकारियों को प्रधानता नहीं देते। उन्हें रोटी-भात खा सकने के लिए सहायक मात्र समझते हैं, परन्तु तरकारियों की मात्रा भोजन में रोटी-भात से अधिक होनी चाहिए। यह तभी सम्भव है जब हम सादे तौर पर बिना मिर्च-मसाले या अधिक तेल-घी की सहायता के इन्हें तैयार करें।

प्रयोग की विधि

तरकारियों के उपयोग की सर्वश्रेष्ठ विधि यह है कि उन्हें कच्चा ही खाया जाय। परवल, लौकी, नेनुआँ, तरोई, सलगम, करैली, सहजन, सेम, बोड़ा आदि को तो पकाना आवश्यक है पर गाजर, मूली, टमाटर, खीरा, ककड़ी, प्याज, पालक आदि बड़े मजे में कच्चे ही खाये जा सकते हैं। इनमें से दो-तीन को लेकर पतला पतला काट कर नीबू-नमक मिला देने से बहुत ही स्वादिष्ट खाद्य तैयार हो जाता है। इसको अंग्रेजी में सलाद कहते हैं। प्रत्येक आदमी को अपने दोपहर के भोजन में यह सलाद तीन चार छटाँक की मात्रा में अवश्य खाना चाहिए। एक रकाबी सलाद सभी विटामिनों एवं प्राकृतिक लवणों की खान है। इसका उपयोग करते रहनेवाले को कभी इनकी कमी से होनेवाले रोग नहीं हो सकते। प्यास भी कम लगती है एवं गरमी शान्त होकर तरी आती है। सलाद इस्तेमाल करनेवाले को कब्ज तो कभी होता ही नहीं। तरकारियों में कुछ ऐसी भी हैं जो पुराने से पुराने कब्ज को भी दूर करती हैं। इसमें से पालक, बथुआ, गाजर मुख्य हैं। बथुए का तो साग बनाकर ही इस्तेमाल किया जा सकता है पर यह साग बनाते समय उसका पानी उबालकर कभी भी फेंकना न चाहिए। पानी निकाल देने से उसके बहुत से गुण नष्ट हो जाते हैं। पानी निकाला ही जाय तो वह दाल में या रसदार तरकारी में डाल लिया जा सकता है।

पालक

पालक का साग भी बथुए-सा ही गुण रखता है। कच्ची पालक का रस पाखाना साफ लाता है। रात को सोते समय यदि एक आध छटाँक पालक का रस पी लिया जाय तो सवेरे निश्चय ही टट्टी होती है। किसी किसी को बतायी गई मात्रा से अधिक की भी जरूरत हो सकती है। जिनका बदन पीला बना रहता है

खून की कमी मालूम होती है, वे पालक का इस्तेमाल कर अपना रंग सुर्ख बना सकते हैं। खून की कमी का कारण है शरीर में लोहे की कमी होना और लोहा जितना पालक में होता है उतना किसी अन्य तरकारी में नहीं होता।

गाजर

गाजर पेट को उसी तरह साफ करती है जिस प्रकार नारियल का झाड़ू गन्दे फर्श को। यह आँतों को खुरच खुरच कर मल निकाल डालती हैं। अतः इसका उपयोग आरम्भ करनेवालों का मल बहुत ही दुर्गन्धपूर्ण एवं काला होता है। गाजर में कैरोटीन अधिकता से होता है जो सभी चर्म रोगों की अचूक दवा है। कुछ दिन केवल दूध और गाजर का आहार ग्रहण करने से पुरानी से पुरानी दाद, खाज, एक्ज़िमा और उकवत से पिंड छुड़ाया जा सकता है। स्त्री और बच्चों को गाजर खाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इसके प्रयोग से त्वचा सुन्दर एवं कान्तिमान होती है। दुबले इसका उपयोग कर अपना वजन कई पौण्ड बढ़ा सकते हैं।

(पृष्ठ २५१ का शेषांश)

यह भी है कि नील वर्ण अनायास ही शान्ति प्रदान करता है।

हरी तरकारियों का हरापन—तीसरा खाद्योज

कलकत्ते के सर्व श्री पाल और गुह ने हाल ही में मानव-खाद्य पदार्थों के सम्बन्ध में एक बहुत बड़ी खोज की है, जिसके फलस्वरूप उन लोगों ने यह सिद्ध किया है कि गाँठगोभी, फूलगोभी, गाजर, मूली आदि विविध प्रकार की हरी तरकारियों व शाकों को जब उबालते हैं तो कुछ खाद्योज (३) जो उन सब्जियों में संयुक्त रहता है घोल के रूप में उनसे अलग हो जाता है। इसीलिए शाकों के रसों को कभी भी नष्ट न करना चाहिए। उत्तम तो यह है कि ये शाक-तरकारियाँ कच्ची ही खाई जायँ तो विशेष लाभकारी होंगी। और यदि पकाई जायँ तो अत्यधिक गलाई न जायँ, और प्रत्येक दशा में उनका हरा रस तो कभी नष्ट होने ही न दिया जाय। क्योंकि शाकों का यही हरा रस, शरीर की पुष्टि एवं रोगों के निवारण में काम आता है। इसके सेवन से पीलिया और कोष्ठबद्धता आदि रोग सहज ही में दूर हो जाते हैं। वैज्ञानिकों ने गम्भीर अन्वेषण के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला है कि हरी तरकारियों के उक्त हरे रस में क्लोरोफिल होता है जिसमें कार्बन, हाइड्रोजन, और मग्नेशिया विद्यमान रहता है, जिससे वह रस, पांडु रोग एवं रक्त के दबाव आदि रोगों में रामबाण औषधि का काम करता है। अमेरिका की एक रासायनिक संस्था ने एक बार हरे शाकों से क्लोरोफिल निकाल कर उसकी गोलियाँ बनाई थीं और उन गोलियों को कई अस्पतालों में प्रयोगार्थ भेजा था। उन अस्पतालों में कितने ही रोगियों पर उन गोलियों का प्रयोग हुआ और आशा से कहीं अधिक सफलता मिली। यह बात तो लगभग अब सभी को ज्ञात हो गई है कि स्वास्थ्य-रक्षा के लिए हरी शाक-भाजी नित्य खाना अत्यन्त प्रयोजनीय है, किन्तु इसी बात को कुछ दिन पहले बड़े-बड़े डाक्टर भी नहीं जानते थे; और यह तथ्य तो आज भी बहुतों पर प्रगट नहीं है कि हरी शाक-भाजियों की उपादेयता को बढ़ाने वाली वस्तु, उनमें स्थित यही क्लोरोफिल तत्व है। इस क्लोरोफिल तत्त्व के आविष्करता प्रोफेसर श्री ब्युएर्जी हैं।

* * *

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर कूपन आने पर ही जवाब दिया जायगा जो पृष्ठ २६० पर छपा है। महीने की दस तारीख़ तक प्राप्त प्रश्नों का उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा। ––सं०

प्रश्न––आम का कल्प करने की विधि क्या है? इस कल्प द्वारा बढ़ाया गया वजन स्थायी कैसे बनाया जा सकता है?

––कैलाशचन्द्र जौहरी, उन्नाव

उत्तर––आम का कल्प आरम्भ करने से पहले शक्ति अनुसार दो तीन दिन का उपवास करना चाहिए। उपवास काल में नित्य सवेरे आध घंटे पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखने के बाद एनीमा लेना चाहिए। तीन दिन के उपवास के बाद पहले दिन रसदार आमों से रस निकालकर उतना ही पानी मिला कर पाव पाव भर की मात्रा में सवेरे दोपहर शाम को लें। दूसरे दिन इन्हीं तीन समयों पर रसदार आम धीरे धीरे चूसें। तीसरे दिन आम चूसने के बाद पाव-पाव भर गाय का कच्चा दूध पिएं। दोपहर के लिए दूध गरम करके भी रखा जा सकता है। दूध की मात्रा डेढ़पाव अथवा आध सेर तक बढ़ाई जा सकती है। अनेकों के लिए आम दूध का यह भोजन दिन में दो बार करना काफी होगा। जो तीन बार लें उन्हें मात्रा का ध्यान रखना चाहिए और सवेरे तो अवश्य ही बहुत थोड़ी मात्रा में लेना चाहिए। इस प्रकार आम दूध पर महीने सवा महीने अथवा इच्छानुसार अधिक दिन तक रहकर स्वास्थ्य को उन्नत एवं शरीर को नया बनाया जा सकता है।

यदि कल्प के बाद फिर पुरानी आदतें जिनसे शरीर कमजोर एवं रुग्ण हुआ, न पकड़ ली जायँ और कसरत, भोजन एवं आराम पर उचित ध्यान दिया जाय तो कोई कारण नहीं कि स्वास्थ्य फिर ख़राब हो जाय।

प्रश्न––फल और दूध का मेल अच्छा है पर क्या खरबूजा और दूध भी साथ खाया जा सकता है? कुछ लोग कहते हैं यह सम्बन्ध हानिकर है।

––उमाशंकर, लखनऊ

उत्तर––खरबूजा खाकर दूध पीने से कुछ लोगों को वह वायु कर सकता है पर थोड़े दिनों के प्रयोग के बाद वायु शान्त हो जाती है। भर पेट रोटी सब्जी खाने के बाद खरबूजा दूध लिया जाय तो शायद कुछ उपद्रव करे पर सवेरे के नाश्ते अथवा शाम को भोजन की तरह इस सम्बन्ध के उपयोग से हमने कोई अनिष्ट होते नहीं देखा।

प्रश्न––कृपाकर लिखिए कि आसनों में सबसे पहले और सबसे पीछे कौन-सा आसन किया जाय?

––बृजकिशोर, जौनपुर

उत्तर––सर्वसाधारण के उपयोग में आनेवाले आसन इस क्रम से किए जा सकते हैं। सर्वांगासन, मत्स्यासन, हलासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, अर्धमत्स्येन्द्रासन, मयूरासन, पश्चिमोत्तानासन, सुप्त-वज्रासन, शीर्षासन, ताड़ासन और सब के अन्त में शवासन।

प्रश्न––मेरा बच्चा छः महीने का है। उसे औंधे लेटने की आदत है और इससे उसे आराम भी मिलता है। सीधे लेटने से उसे नींद ही नहीं आती। उसकी इस आदत

से उसके स्वास्थ्य पर कोई बुरा असर पड़ने की आशंका हो तो इस आदत को दूर करने का कोई उपाय बताइए।

--मिसेस एम० बी० लाल, उन्नाव

उत्तर--कुछ घंटों के लिए बच्चा पेट के बल रहे तो इतना बुरा नहीं है पर हर समय इसी तरह रहना उचित नहीं। आप उसे सीधा सुलावें और उसकी नजर के ऊपर अदल-बदल कर कुछ रंग-बिरंगे खिलौने टाँगती रहें और उन्हीं में बच्चे को उलझावें। धीरे धीरे उसकी सीधे लेटने की आदत पड़ जायगी। कब्ज होने पर भी बच्चे पेट के बल लेटने में आराम पाते हैं। आप अपना भोजन मार्च' ४१ के प्रश्नोत्तर स्तम्भ में चन्द्रप्रभा जी, बी० ए० को बताए गए अनुसार करें तो आपके बच्चे का कब्ज दूर होना चाहिए।

प्रश्न--मुझे छींक बहुत आती है। शायद ही कोई दिन ऐसा जाता है जिस दिन छींक न आवे। कभी कभी तो लगातार एक साथ आठ-आठ छींक आती है। इससे मुक्ति का उपाय बता कर मुझे लोगों में बैठने लायक बनाइये।

--जवेरी चुन्नीलाल कोठारी, बम्बई

उत्तर--आप रोज सवेरे नाक से पानी पीना शुरू करें। कुनकुने आध सेर गरम पानी में तोला भर नमक मिलाकर नाक से खींचें और मुँह से निकाल दें। पानी बहुत धीरे धीरे ही खींचना चाहिए अन्यथा तकलीफ होती है। पहले दिन पाव भर पानी का ही प्रयोग करें और धीरे धीरे आध सेर तक बढ़ा लें। आशा है आपका कष्ट शीघ्र दूर हो जायगा।

प्रश्न--मेरे पाँच वर्ष के लड़के जगदीश का वजन अट्ठाइस सेर है, वह खूब हृष्टपुष्ट और स्वस्थ है। पर कभी कभी वह सुस्त सा हो जाता है और उसके मुँह से दुर्गन्धपूर्ण वायु भी निकलती है। डाक्टर बताते हैं कि उसके टान्सिल (घांटी) बढ़ गए हैं और आपरेशन द्वारा निकालने को कहते हैं। 'जीवन-सखा' से जबसे परिचय हुआ तब से मैं उसे फल और तरकारियाँ भी काफी देता हूँ। क्या आपरेशन से बच्चे को बचाने का कोई उपाय है?

--वासुकीनन्दन, हजारीबाग

उत्तर--मुझे सन्देह है कि आप अपने बच्चे को मैंदे, मावे और चीनी से बनी मिठाइयाँ बहुत अधिक खिलाते हैं और उनकी तुलना में फल बहुत कम। बच्चे का वजन साधारण से बहुत ज्यादा है और टान्सिल का बढ़ना तथा उसका सुस्त रहना बताता है कि बच्चे का भोजन ठीक नहीं है। बड़ा अच्छा होगा यदि आप उसे एक दिन फलों का रस पिलाकर रखें और फिर दो दिन केवल फल खिलाकर फिर उसका भोजन इस प्रकार रखें--सवेरे फल दूध, दोपहर को रोटी सब्जी, दिन में, तीन-चार बजे कोई फल और शाम को रोटी सब्जी। भोजन में रोटी थोड़ी और तरकारियाँ ही अधिक होनी चाहिए। यदि आप यह कार्य-क्रम महीने भर भी चला सकें तो आशा है आपका बच्चा स्वस्थ हो जायगा।

--वि० दा० मोदी

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है ।

१—एक छटाँक शहद पानी में मिलाकर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है ।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है ।
३—शरीर में ताकत आती है ।
४—दूध में मिलाकर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुरुषत्व बढ़ता है ।
५—शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है ।
६—यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है ।
७—शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है ।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं । पूरे लाभ के लिये **जीवन-मधु** का उपयोग कीजिए । इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है ।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=) एक रुपया दो आना ।

मिलने का पता — मैनेजर—**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह** — ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

हिन्दी की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका

वीणा

सम्पादक
श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

प्रकाशक
श्रीमध्यभारत-हिन्दी साहित्य-समिति

डॉक्टर बाबूराम सक्सेना, एम. ए., डी. लिट्., भू. पू. प्रधान-मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग:—'वीणा' हिन्दी की उच्च कोटि की पत्रिका है और मातृ-भाषा और साहित्य की प्रचुर सेवा कर रही है ।

आगामी विशेषांक दीवाली के अवसर पर

वार्षिक मूल्य ४) नमूने का अंक फ्री नहीं भेजा जाता एक प्रति ।=)

व्यवस्थापक—'वीणा', इन्दौर

प्रश्नोत्तर—कूपन जून' ४१

सरस्वती-सिरीज़
विश्व-ज्ञान का भाण्डार
आपकी अलमारी में
अबतक प्रकाशित
पुस्तकें—

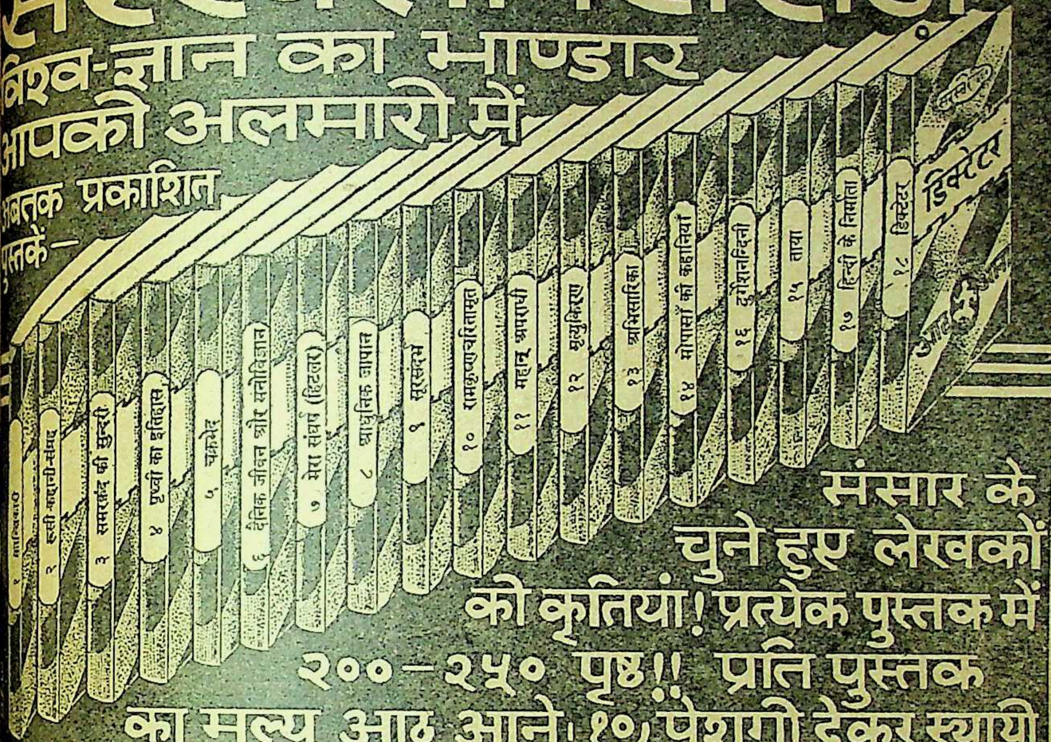

१ [illegible]
२ रूसी-कहानी-संग्रह
३ समरकंद की सुन्दरी
४ पृथ्वी का इतिहास
५ चकमेद
६ दैनिक जीवन और मनोविज्ञान
७ मेरा संघर्ष (हिटलर)
८ आधुनिक जापान
९ सूरसंदर्भ
१० रामकृष्णचरितामृत
११ महान् अपराधी
१२ मृत्युकिरण
१३ अभिसारिका
१४ मोपासाँ की कहानियाँ
१६ दुर्गेशनन्दिनी
१५ नाना
१७ हिन्दी के निर्माता
१८ डिक्टेटर
डिक्टेटर
सरस्वती सिरीज़
आठ आना

संसार के
चुने हुए लेखकों
की कृतियां! प्रत्येक पुस्तक में
२००—२५० पृष्ठ!! प्रति पुस्तक
का मूल्य आठ आने। १०) पेशगी देकर स्थायी
सदस्य बनिए। स्थायी ग्राहकों से पोस्टज़-पैकिंग माफ़।

अप्रैल में

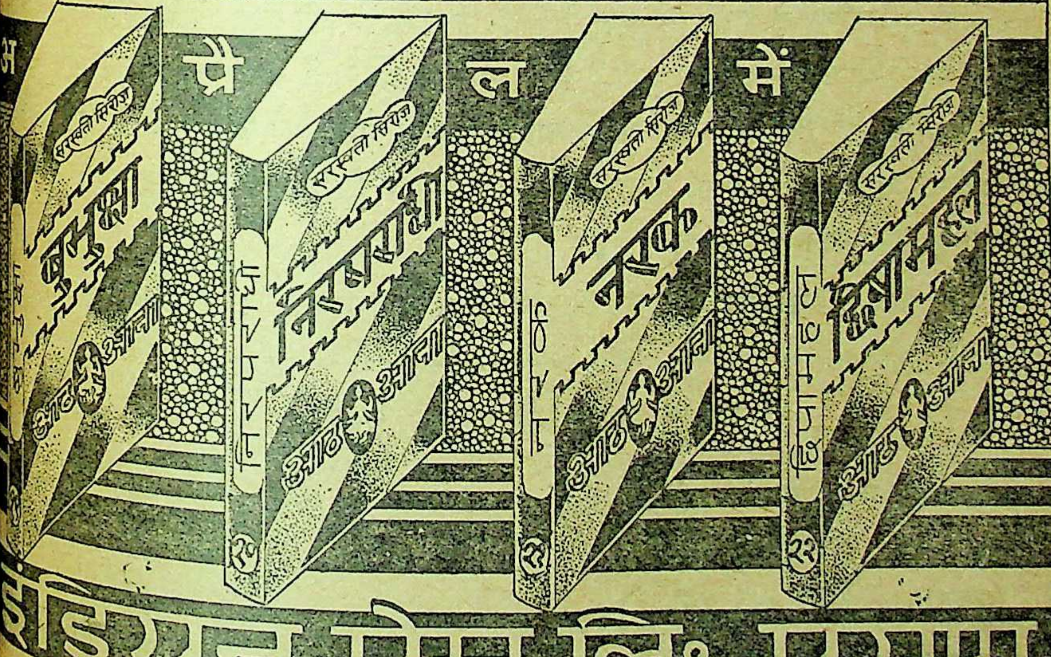

सरस्वती सिरीज़
बुभुक्षा
आठ आना
सरस्वती सिरीज़
निरपराधी
आठ आना
सरस्वती सिरीज़
नरक
आठ आना
सरस्वती सिरीज़
विषमहल
आठ आना

इंडियन प्रेस, लि: प्रयाग

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख काग़ज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—**मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद**

स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ

शाक तरकारियों के गुण दोष क्या हैं? उनका स्वास्थ्य की अवस्था में और रोग हटाने के लिए किस प्रकार उपयोग किया जाय? किन शाक तरकारियों में कौन से विटामिन और प्राकृतिक लवण होते हैं और उनका कार्य क्या है? आदि प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए वैद्यक-शास्त्र से लेकर आज तक वैज्ञानिक अनुसंधानों एवं प्राकृतिक चिकित्सकों के अनुभवों के आधार पर लिखी हुई यह पुस्तक पढ़िए। मूल्य १।)

पता :: **स्वास्थ्य पुस्तक भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद**

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें

सन् १९३६ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३७ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३८ (दो अंक नहीं हैं)	मूल्य २)
सन् १९३९ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९४०	मूल्य ५)

सस्ता साहित्य मण्डल

हिन्दी की एकमात्र प्रगतिशील, सार्वजनिक और लोकप्रिय प्रकाशन-संस्था है उसके १४ वर्षों का कार्य ही उसकी निश्चित और ठोस प्रगति का तथा लोकप्रियता का जीवित प्रमाण है

- सन १९४० के अन्त तक मण्डल ने एकसौ पैंतीस पुस्तकें प्रकाशित कीं।
- मण्डल से प्रकाशित इन पुस्तकों की पृष्ठ-संख्या इकत्तीस हज़ार एक सौ होती है।
- मण्डल से पूरे सेट का दाम एक सौ रुपया होता है।
- इन १४ वर्षों में मण्डल ने अपनी प्रकाशित पुस्तकों की चार लाख चालीस हज़ार प्रतियाँ बेची हैं।
- इन १४ वर्षों में मण्डल ने वर्ष भर में कम से कम चार हज़ार और अधिक से अधिक साठ हज़ार प्रतिवर्ष की बिक्री की है।

यह सब क्यों और कैसे हुआ ?

इसलिए कि मण्डल ने अपने लाभ की अपेक्षा पाठकों के लाभ का सदैव ध्यान रखा है।

इसलिए कि मण्डल ने हमेशा पाठकों के मन को लुभानेवाला नहीं, बल्कि दृढ़ और शुद्ध बनाने वाला साहित्य दिया है।

इसलिए कि देश के परखे हुए नेता और सेवक मण्डल का संचालन करते हैं।

इसलिए कि राष्ट्र-पुरुषों और नेताओं ने मण्डल को अपने आशीर्वाद दिये हैं।

अतः आप

निःशंक होकर अपने लिए मण्डल से समय पर और रिआयती दाम में पुस्तकें पाने के लिए

'मण्डल' और जीवन-साहित्य (मासिक पत्र) के ग्राहक बनिए

(सम्पादक : हरिभाऊ उपाध्याय)

"जीवन-साहित्य" जीवनदायी विचारों के अलावा मंडल के अन्य पुस्तकों के समाचार भी देता है

सस्ता साहित्य मण्डल, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली

इस पते से
पत्र-व्यवहार करें—

-शाखायें-

दरीबा कलाँ	अमीनुद्दौला पार्क	खजूरी बाजार
दिल्ली	लखनऊ	इन्दौर

जीवन सखा के सन् '३९ के अंकों में प्रकाशित कुछ लेख

- रोग किस प्रकार उत्पन्न होता है
- भोजन और स्वास्थ्य
- गठिये को मार भगाया
- भोजन के नियम
- मेरी आँखें फिर से नई हो गईं
- लेटे लेटे कसरत
- बुखारों का अचूक इलाज
- बच्चों की पालन विधि
- गर्मी के महीनों में भोजन
- कब्ज
- स्नान की विधि और उपयोग
- जीवन शक्ति
- हैजा: कारण और अचूक चिकित्सा
- आम और जामुन
- बहुमूत्र रोग का अचूक इलाज
- जवान और सुन्दर बने रहो
- मेरी खाँसी कैसे अच्छी हुई
- मैलेरिया या जाड़ा बुखार
- मोटापा को दूर करो
- बवासीर का शर्तिया इलाज
- स्वास्थ्य के लिये १५ मिनट
- सुन्दरता बढ़ाने का नुस्खा
- बेरीबरी
- बालों की रक्षा
- प्रकृति की अचूक शक्ति

सैकड़ों चित्रों से विभूषित एवं अनेक जीवनोपयोगी लेखों से भरे ३५० से अधिक पृष्ठों के इस पोथे का मूल्य डाक खर्च समेत केवल २॥) है। आज ही लिखिए।

मैनेजर,

जीवन-सखा, इलाहाबाद

अपना स्वास्थ्य और दूसरों का स्वास्थ्य

प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के तत्वावधान में योग तथा प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति सिखाने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। शिक्षाकाल दो दो सप्ताह का प्राय: चार मास के अन्तर पर साल भर में तीन बार होगा। पहला शिक्षणकाल गत मार्च मास में हुआ था। दूसरा १८ अगस्त '४१ को आरम्भ होगा। पुराने विद्यार्थियों को आने की सूचना एक सप्ताह पहले ही दे देनी चाहिए और नये विद्यार्थियों को १ली अगस्त तक प्रार्थना-पत्र भेज देना चाहिए।

प्रत्येक दो सप्ताह के शिक्षणकाल के लिए फीस केवल पाँच रुपया होगी जो प्रार्थना-पत्र के साथ भेज दी जानी चाहिए। शिक्षण का विस्तृत विवरण-पत्र दो आने के डाक-टिकट भेजने से प्राप्त हो सकेगा।

शिक्षाकाल की समाप्ति पर शिक्षार्थियों की परीक्षा होगी जो उत्तीर्ण होंगे वे एन० डी०, डी० वाई० (N.D.,D.Y.) डिगरी प्राप्त करेंगे।

८७ हिम्मतगंज
इलाहाबाद

बालेश्वर प्रसादसिंह
डाइरेक्टर-प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

मठा उसके गुण तथा उपयोग

मठा उपयोगी क्यों है? क्या आपने कभी इसपर विचार किया है? यदि नहीं तो इस पुस्तक को पढ़िए और मठा के लाभालाभ से परिचित हो कर उसके उपयोग की समुचित विधि जानिए।

पता—जीवन-सखा, इलाहाबाद

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलता-पूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, क़ब्ज़, संग्रहणी, प्लुरिसी, दमा, बवासीर, निद्राभाव, आमाशय का ज़ख्म, आँतों की खराबी, सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arterioselerosis), रक्त चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), उपान्त्रदाह, (Appendicitis), जहरवाद (Carbuncle), गठिया, पित्ती उछलना, पेचिश, सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह (बहुमूत्र), मोटापा, दुबलापन, यक्ष्मा, कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर ग्रांड-ट्रंक-रोड पर एक आठ एकड़ के सुन्दर उपवन में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने की स्वयं प्रेरणा होती है।

नियमावली पाँच पैसे का डाक-टिकट भेजकर आज ही मँगाइए। संक्रामक (Infectious) रोग के रोगियों के लिए स्वास्थ्य-गृह में प्रबन्ध नहीं है।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

Reg. No. A-172

पढ़िये !   लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१)	रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	२।।)
(२)	सरल शरीर विज्ञानः ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	१।।)
(३)	प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदारनाथ गुप्त०, एम० ए०	२)
(४)	मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय	।)
(५)	दूध ही अमृत है : ले० हनुमान प्रसाद गोयल	१।।)
(६)	स्वास्थ्य के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय	=)।।
(७)	शक्तिदर्शन : ले० शंकरलाल तिवारी	।।)
(८)	आनन्दमय जीवन का ह्रास और उसके कारण	।=)
(९)	क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।)
(१०)	ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द	।।।)
(११)	आदर्श-भोजन : ले० एल० एन० चौधरी	।।।)
(१२)	स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर सुकुल	१)
(१३)	कब्ज या कोष्ठबद्धता : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।-)
(१४)	हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	१)
(१५)	फल उनके गुण तथा उपयोग : ले० केशव कुमार टाकुर	१।)
(१६)	आरोग्य साधन : ले० गांधीजी	।=)
(१७)	स्वास्थ्य-साधन : ले० स्व० रामदास गौड़	३)
(१८)	आकृति-निदान : ले० लूईकूने	१।।।)
(१९)	बच्चों की रक्षा : ले० लूईकूने	।-)
(२०)	मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लुईकूने	।)
(२१)	जल-चिकित्सा (तीन भाग) : ले० राखालदास	३।।।)
(२२)	स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय	१)

		Rs.	as.
(२३)	Nature Cure by H. Lindlahar, M.D.	6	0
(२४)	Practical Nature Cure by Dr. K. L. Sharma, N.D.	4	0
(२५)	Pranayama by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	2
(२६)	The Nature Cure of Eye defects by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D.	0	8
(२७)	Your Diet in Health and Disease by Harry Benjamin	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगन्ज, इलाहाबाद

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY SYT. BALESHWAR PRASAD, 87, HIMMATGANJ, ALLAHABAD

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

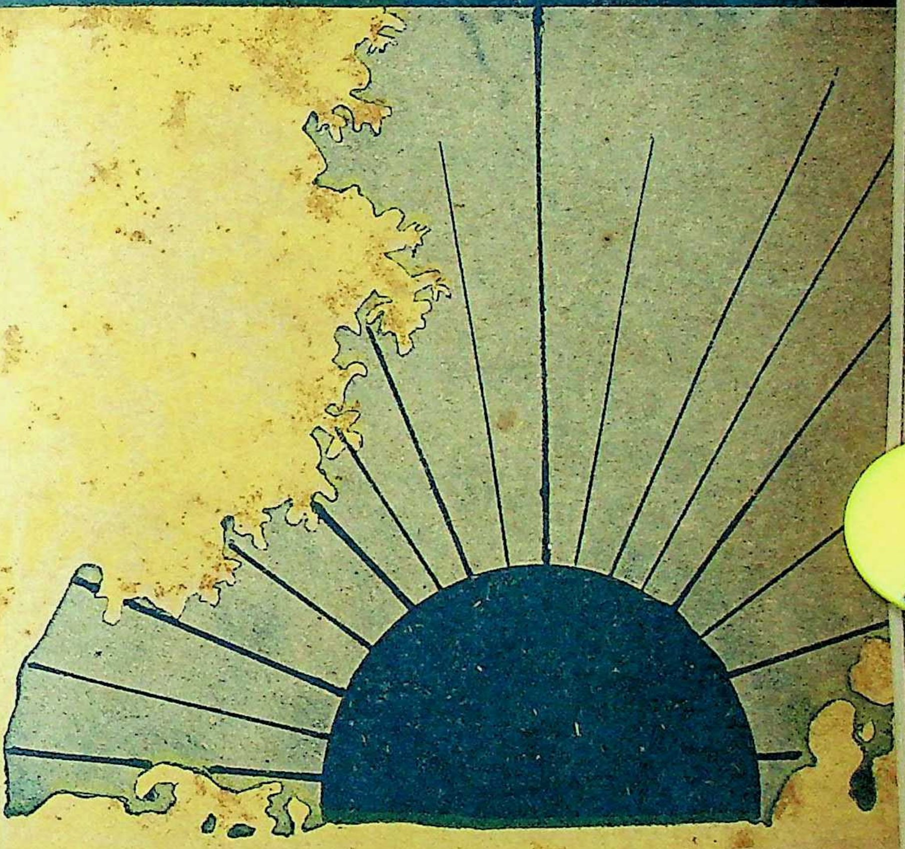

जुलाई

१९४१

गुरुकुल कांगड़ी

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह : : विट्ठलदास मोदी

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार ।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलता-पूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, क़ब्ज़, संग्रहणी, प्लुरिसी, दमा, बवासीर, निद्राभाव, आमाशय का ज़ख़्म, आँतों की ख़राबी, सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arterioselerosis), रक्त चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), उपान्त्रदाह, (Appendicitis), ज़हरबाद (Carbuncle), गठिया, पित्ती उछलना, पेचिश, सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह (बहुमूत्र), मोटापा, दुबलापन, यक्ष्मा, कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि ।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर ग्रांड-ट्रंक-रोड पर एक आठ एकड़ के सुन्दर उपवन में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने की स्वयं प्रेरणा होती है।

नियमावली पाँच पैसे का डाक-टिकट भेजकर आज ही मँगाइए। संक्रामक (Infectious) रोग के रोगियों के लिए स्वास्थ्य-गृह में प्रबन्ध नहीं है ।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

जुलाई
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क ७

इस अङ्क में

विषय लेखक पेज

१. संपादकीय २६२
२. रोगों की एकरूपता-- २६३
३. आसन और व्यायाम--चरकतीर्थ श्रीयुत दिगम्बर जी वक्षी २६६
४. बारीक अक्षर पढ़ने से नेत्र स्वस्थ रहते हैं--डा० आर० एस्० अग्रवाल .. २६९
५. जलोदर से मेरा छुटकारा--श्रीयुत नंदकिशोर शर्मा २७२
६. सप्राण भोजन--श्रीयुत गंगा सहाय डा० आफ बायोट्राफी २७४
७. पीटनेवाले मास्टरों का अचूक इलाज--श्रीयुत यज्ञदत्त, 'अक्षय' विशारद .. २७६
८. मानव जीवन एवं सूर्य प्रकाश--श्रीयुत व्रजमोहन मिहिर २७८
९. मधु--प्रो० भवानी प्रसाद २८२
१०. हमारी नजरों में-- २८५
११. प्रश्नोत्तर-- २८७

अगले अंक

में

क्या रहेगा ?

१. उपवास की महत्ता
श्रीयुत आनन्दवर्धन

२. मेरे मुँह के छाले
श्रीयुत वंशीधर शर्मा

३. मेरा चश्मा छूटा !
श्रीयुत भदन्त आनन्द कौसल्यायन

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

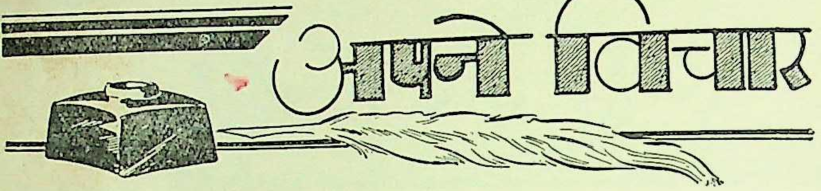

अपने विचार

शारीरिक विकास एवं व्यक्तित्व

मनुष्य स्वभावतया अपने को आकर्षक बनाना चाहता है। वह अपने व्यक्तित्व से दूसरों को प्रभावित करना चाहता है। इसके लिए बनाव-श्रृंगार पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है; पर बहुत कम लोग हैं जो पूर्ण विकसित शरीर एवं व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण संबंध को जानते हों। ऐसे कितने वयस्क नर-नारी मिलेंगे जिनके शरीर का विकास उनकी उमर के अनुरूप हुआ हो? ऐसे त्रुटिपूर्ण शरीर के धनी के जीवन में पूरी सजीवता भी नहीं होती। उसके चेहरे पर नजर पड़ते ही लोगों पर पहला प्रभाव यही होता है कि उक्त मनुष्य अकाल ही वयस्क हो गया है, जिसका अर्थ है कि यदि वह पुरुष है तो उसमें पुरुषत्व का एवं यदि वह स्त्री है तो उसमें स्त्रीत्व का पूर्ण विकास नहीं हुआ है। ऐसे मनुष्य का व्यक्तित्व प्रभावशाली न होगा—यह कथन कुछ लोगों को अत्युक्ति पूर्ण प्रतीत हो सकता है पर कुछ देर विचार करने पर उन्हें इस मत से अक्षरशः सहमत होना पड़ेगा।

अविकसित शरीरवाले मनुष्य को हर समय शक्ति की कमी का अनुभव होता रहता है और उन्हें अपने जीवन में कभी उस सजीवता का अनुभव नहीं होता जो स्वस्थ शरीर का स्वाभाविक गुण है। न उनके शरीर में चंचलता होती है एवं उनके शरीर के अंग प्रत्यंग नाचते रहने के बजाय सुस्त और बेदम दिखाई देते हैं। सुविकसित शरीर को अथवा ऐसे शरीर को जिसके अंग प्रत्यंग का पूर्ण विकास हुआ है शक्ति एवं सजीवता का पुंज अथवा केन्द्र कहा जा सकता है। शरीर की यह सजीवता उसके स्वामी की कल्पना को उत्तेजित करती है, साहस और आत्मविश्वास को जन्म देती है, सुन्दर भविष्य का चित्र उपस्थित कर जीवन में आशा का संचार करती है। उस आदमी को ऊपर उठने की हर समय प्रेरणा मिलती रहती है। काम करते समय उसके सामने कितनी ही कठिनाइयाँ क्यों न आवें वह उन्हें खेल से अधिक महत्व नहीं दे पाता। आलस्य उससे दूर रहता है, बैठना उसके लिए कठिन होता है। नित नूतन एवं रुचिकर कार्य उसके सामने आते रहते हैं—ऐसी दशा में उन्नति अवश्यम्भावी है। वह सीखता है, बढ़ता है और सफलताओं के शिखर पर चढ़ता है। संसार कहने लगता है "यह चुम्बक है।"

लोग पूछ सकते हैं—क्या इस प्रकार की सजीव शक्ति का निर्माण प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है? जो निर्जीव दिखाई देता है क्या वह भी इस अमूल्य शक्ति का स्वामी बन सकता है? जिन स्त्री-पुरुषों ने अपनी शक्तियों का पूर्ण विकास नहीं किया है यदि वे कोशिश करें तो भविष्य में इन दैवी शक्तियों के हकदार हो सकते हैं? उत्तर में यही कहना है कि मनुष्य की सभी शक्तियाँ सुप्तावस्था में ही तो रहती हैं, यदि उन्हें जगाने का प्रयत्न किया जाय तो निश्चय ही शारीरिक और मानसिक शक्तियों में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन होगा जिससे शरीर का अंग-प्रत्यंग सप्राण एवं सजीव हो उठेगा। संसार उसे बदला हुआ प्रतीत होगा। सफलताएँ उसका स्वागत करती हुई मिलेंगी।

卐 卐 卐

रोगों की एकरूपता

"सभी बीमारियों का एक ही कारण है और उनमें एकरूपता है अर्थात् रोगों के चाहे जैसे लक्षण हों और उन्हें चाहे जिस नाम से पुकारा जाय, वे प्रत्येक लक्षण और नाम के अन्तर्गत एक ही चीज हैं। इसलिए अगर एक व्यक्ति को खुजली हो, दूसरे को गठिया और तीसरे को यदि सर्दी लग गई हो तो हम कहेंगे कि सभी व्यक्ति एक ही रोग से पीड़ित हैं। आधुनिक औषधशास्त्र या तो इस बात को जानता नहीं अथवा जानता है तो उसे स्वीकार नहीं करता।"

प्रिय मित्र !

आपके पत्र के लिए धन्यवाद। मैंने इसे बहुत ही दिलचस्पी से पढ़ा है। आपने हमारी चिकित्सा-प्रणाली के सम्बन्ध में जो प्रश्न उठाए हैं उन सब का उत्तर एक ही साथ नहीं दिया जा सकता। अतः हम आपके प्रश्नों का समय-समय पर क्रमवद्ध उत्तर देकर आपको यह वतला देंगे कि हमारी चिकित्सा-प्रणाली वैज्ञानिक एवं सर्वश्रेष्ठ है।

अगर आरम्भ से ही आप जीवन-सखा पढ़ते होते तो जो प्रश्न आज आपने उठाए हैं उनमें से कई प्रश्न आप विलकुल न उठाते, क्योंकि जीवन-सखा में प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान की बहुत सी महत्त्वपूर्ण बातें रहती हैं। अतः अगर आप प्राकृतिक चिकित्सा के रहस्य को जानना चाहें तो मैं तो समय समय पर अपने पत्रों द्वारा आपकी सहायता करूँगा ही साथ ही साथ आपको भी चाहिए कि आप प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी अन्य पुस्तकों का भी अवलोकन करते रहें।

जो व्यक्ति प्राकृतिक चिकित्सा का अध्ययन प्रारम्भ करता है उसके रास्ते में सर्वप्रथम कठिनाई तो यह आती है कि इस चिकित्सा के सिद्धान्त शीघ्र ही उसकी समझ में नहीं आते। इसका प्रधान कारण है कि ये प्राकृतिक सिद्धान्त आधुनिक और वैज्ञानिक कहे जाने वाले औषधिशास्त्रों के सिद्धान्तों से बहुत कुछ भिन्न हैं एवं प्राकृतिक चिकित्सा का दृष्टिकोण भी एक प्रकार से क्रान्तिकारी कहा जा सकता है। अतएव अगर साधारण व्यक्ति की समझ में ये सिद्धान्त एकाएक न आवें तो इसमें उसका क्या दोष है।

बीमारियों की एकरूपता

सब से पहले आपने जो प्रश्न उठाया है वह बीमारियों की एकता के सम्बन्ध में है। यही सिद्धान्त तो प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत है और इसी सिद्धान्त के कारण ही यह कहा जाता है कि प्राकृतिक चिकित्सा औषधि और निदान-शास्त्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहती है। हमारा पूर्ण विश्वास है कि सभी बीमारियों का एक ही कारण है और उनमें एकरूपता भी है अर्थात् रोगों के चाहे जैसे लक्षण हों और उन्हें चाहे जिस नाम से पुकारा जाय उन प्रत्येक लक्षण और नाम के अन्तर्गत एक ही चीज है। इसलिए अगर एक व्यक्ति को खुजली हो, दूसरे को गठिया और तीसरे को यदि सर्दी लग गई हो तो हम यह कहेंगे कि सभी व्यक्ति एक ही रोग से पीड़ित हैं। आधुनिक औषधिशास्त्र इस बात को या तो जानता नहीं अथवा जानता है तो उसे स्वीकार नहीं करता। उनका कहना है कि प्रत्येक रोग का अन्य रोगों से पृथक अस्तित्व है और पृथक् पृथक् रोगों की अलग अलग दवा करनी चाहिए। अतः अब मैं आपके सामने यह कैसे साबित करूँ कि आधुनिक औषधिशास्त्र के विरुद्ध हमारा जो दृष्टिकोण है वह ठीक है?

इसके लिए आपको उदाहरण देने की आवश्यकता है। हमारा शरीर लाखों और करोड़ों सेल्स से बना हुआ है। प्रत्येक सेल का पृथक् अस्तित्व भी है किन्तु अगर

उनमें से कोई एक समूह बीमार हो जाय तो क्या हम अपने शरीर को स्वस्थ कह सकते हैं ? अर्थात् अगर सभी सेल स्वस्थ रहें तभी हमारा शरीर स्वस्थ कहलावेगा।

हम भोजन क्यों करते हैं ?

स्वस्थ रहने के लिए प्रत्येक सेल को कुछ पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इनमें से प्रत्येक सेल को भूख लगती है और इन्हें भोजन की आवश्यकता होती है। इसीलिए हम भोजन करते हैं और हमारे भोजन का परिणाम यह होता है कि हमारे शरीर की लाखों करोड़ों सेल उसीसे पोषित होते हैं और इसी भोजन की सहायता से सभी सेल बढ़ते हैं और उनमें शक्ति आती है।

दूसरा परिणाम यह होता है कि सेल अपने जीवन और शक्ति के लिए भोजन प्राप्त करके अपने में स्थित जो अनावश्यक पदार्थ हैं उनको निकाल फेंकने की चेष्टा करते हैं। अगर शरीर स्वस्थ रहा तो इस प्रकार इकट्ठा हुआ अनावश्यक और विजातीय द्रव्य बड़ी आसानी से निकाल फेंका जा सकता है।

हमारे शरीर के विजातीय द्रव्य को बाहर निकालने के चार माध्यम हैं——चमड़ा, फेफड़े, गुदा और गुर्दा। सेलों को जीवित रहने के लिए केवल इतना ही काफी नहीं है कि उन्हें जीवनदायक भोजन मिलता रहे बल्कि यह भी अत्यन्त आवश्यक है कि अनावश्यक पदार्थ शरीर से ठीक समय और तरीके पर बाहर निकल जायँ। जिस शरीर में ये क्रियायें अबाध रूप एवं नियमित तौर पर होती हैं वही शरीर स्वस्थ कहा जाता है। अतः स्वस्थ शरीर के लिए यह परमावश्यक है कि उसकी निरन्तर सफाई होती रहे और विजातीय द्रव्य उसमें न रहने पावें। उपरोक्त बातों से आपको भली भाँति विदित हो गया होगा कि हमारे 'रोगों की एकरूपता' वाले सिद्धान्त का वास्तविक अर्थ क्या है ? यद्यपि मैं जानता हूँ कि आपको पूर्णतया अपनी बात मनवाने के लिए और भी उदाहरण दिये जा सकते हैं किन्तु यहाँ पर मैं इसमें समय नष्ट न करके इतना ही कह देना चाहता हूँ कि अगर आप प्राकृतिक चिकित्सा के वास्तविक जिज्ञासु हैं तो उपरोक्त उदाहरण का आप पर गहरा असर पड़ेगा और स्वयं आप अन्य पुस्तकों द्वारा इस विषय का ज्ञान प्राप्त करने की चेष्टा करेंगे।

बीमारी क्यों पैदा होती है ?

हमारा यह सिद्धान्त है कि शरीर में विजातीय द्रव्य उत्पन्न होता रहता है अगर उसको बाहर निकलने का रास्ता न मिले तो वह शरीर में बीमारी उत्पन्न कर देता है एवं हमारे अवयवों में से कोई एक या दो अथवा ज्यादा अपना काम ठीक से नहीं कर सकते। इसी स्थिति का नाम बीमारी है।

इस विषय को अभी आगे न बढ़ा कर आपको मैं एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात बताना चाहता हूँ। हमारे शरीर में एक शक्ति है उसको हम 'जीवनीशक्ति' के नाम से पुकारते हैं। इस शक्ति में आश्चर्यजनक गुण है। यह हमेशा हमें रोगों से बचाने का यत्न करती है। इसका प्रधान काम है विजातीय द्रव्य को बाहर निकाल फेंकने का प्रयत्न करना एवं शरीर में जितने भी रोग हों उनको ठीक कर देना।

इस उपरोक्त शक्ति के अस्तित्व को प्रमाणित करने के लिए भी शायद आपको किसी प्रमाण की आवश्यकता होगी। वह भी लीजिए। आपको अनेक बार छींक आई होगी। क्या आपने कभी यह विचार किया है कि छींक क्यों आती है ? छींक इसलिए आती है कि जब कोई पदार्थ नाक में घुसकर वहाँ के स्थान से रगड़ा जाकर नाक और घ्राणशक्ति को हानि पहुँचाने का प्रयत्न करता है तब छींक आकर अपनी शक्ति से उस पदार्थ को नाक से बाहर निकाल देने का यत्न करती है। इसी प्रकार हमारे शरीर के अन्तर्गत जो जीवनीशक्ति वर्तमान रहती है वह हमेशा इस बात का प्रयत्न करती है कि शरीर के किसी भी अवयव के काम में किसी भी प्रकार की बाधा न पड़े और उसे किसी भी प्रकार की हानि न पहुँचे।

जीवनीशक्ति के अस्तित्व का दूसरा उदाहरण भी लीजिए। जब आँख में कोई चीज पड़ जाती है तो तुरन्त

आँखों से पानी निकलने लगता है वह इसलिए कि जो चीज आँख में पड़ गई है वह पानी में बह कर निकल जाय और उससे आँख को किसी प्रकार की हानि न होने पावे।

यही जीवनीशक्ति प्रत्येक बीमारी में काम करती है। जब मनुष्य के शरीर में विजातीय द्रव्य अधिक इकट्ठा हो जाता है और नियमित तरीके से वाहर नहीं निकाला जा सकता तो यही जीवनीशक्ति उस द्रव्य को वाहर निकालने के लिए अनियमित और असाधारण प्रयत्न करती है। अगर किसी को सर्दी लग जाय, नाक बहने लगे अथवा फोड़ा-फुन्सी, खुजली इत्यादि हो तो यह समझना चाहिए कि हमारी जीवनीशक्ति विजातीय द्रव्य को वाहर निकालने का यत्न कर रही है। प्रत्येक बीमारी के सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है। ऐसे ही आपको अनेकों उदाहरण दिए जा सकते हैं किन्तु हम केवल एक उदाहरण और देंगे। गठिया में जीवनीशक्ति इस बात का प्रयत्न करती है कि विजातीय द्रव्य का विष शरीर के प्रत्येक भाग में न फैल जाय। अतः वह विष स्थान विशेष में ही सीमित रह जाता है जैसे हड्डियों के जोड़। अगर जीवनीशक्ति प्रवल हुई और प्राकृतिक साधनों द्वारा उसकी सहायता की गई तव तो जीवनीशक्ति अपने बल से विजातीय द्रव्य को निकाल फेंकती है और मरीज ठीक हो जाता है। अन्यथा विष धीरे धीरे शरीर में फैल जाता है और अन्त में जीवनी-शक्ति इतनी क्षीण हो जाती है कि वह विष का मुकाविला विलकुल नहीं कर सकती और गठिया का रोगी मर जाता है।

यह शक्ति हमेशा इस बात का प्रयत्न करती है कि मनुष्य के शरीर के किसी भी अवयव के कार्य में किसी भी प्रकार की वाधा उपस्थित न हो। इस उद्देश्य के लिए वह लड़ती है और इतना होते हुए भी अगर कोई अवयव कष्ट में पड़ जाय तो समझना चाहिए कि विष की अधिकता इतनी है कि जीवनी-शक्ति उसे रोक नहीं सकती। अतः प्रत्येक बीमारी में हम एक ही बात पाते हैं अर्थात् विजातीय द्रव्य अधिक हो जाने के कारण उसे असाधारण और अनियमित तरीके पर निकालने का यत्न होता है। इसीका अर्थ है रोगों की एकरूपता। इसी स्थान पर पहुँच कर वर्त्तमान औषधिशास्त्र से गहरा मतभेद हो जाता है। एलोपैथी के डाक्टरों का कहना है कि बीमारी एक दूषित चीज है जो शरीर पर आक्रमण करती है और दवा द्वारा उसका निराकरण होना चाहिए।

‘जीवन-सखा’ के पाठक शायद यह जानते होंगे कि अनेक बार हम भिन्न प्रकार के रोगों में एक ही प्रकार की चिकित्सा पद्धति वताते हैं और इसका कारण भी हम आपको वतला चुके हैं।

जव तक रोगों की ‘एकरूपता’ के सिद्धान्त को मान नहीं लिया जाता और जव तक इसी सिद्धान्त को आधारभूत वनाकर रोगों की चिकित्सा नहीं की जाती तव तक हमें सच्चे स्वास्थ्य का आनन्द नहीं मिल सकता। अगर दुनिया प्राकृतिक-स्वास्थ्य-साधनों को ठीक तौर पर समझ जाय तो वह रोगों से छुटकारा पा सकती है।

लोगों को यह बात जान लेनी चाहिए कि प्राकृतिक चिकित्सक केवल रोगों की चिकित्सा ही नहीं करते वल्कि रोगों से वचने के प्राकृतिक उपाय भी वतलाते हैं। अगर आप रोग, स्वास्थ्य और चिकित्सा के अपने गलत दृष्टिकोण को बदल डालें तो आप अपना जीवन सुखी बना सकेंगे।

विनीत

××××

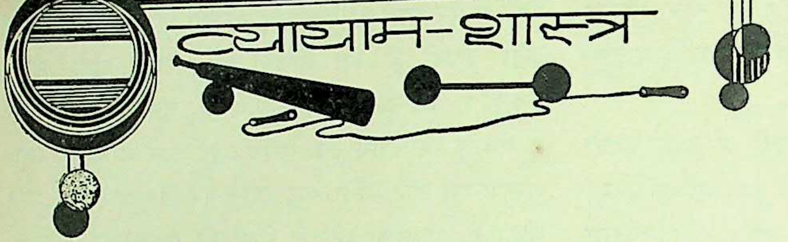

आसन और व्यायाम

चरकतीर्थ श्रीयुत दिगम्बर जी बक्षी

गत मई मास के अंक में प्रकाशित लेख 'यौगिक शिथिलीकरण' में स्वामी कुवलयानंद जी ने बताया था कि आज की दुनिया में मनुष्य की मांसपेशियों का नहीं स्नायु-संस्थान का सशक्त होना जरूरी है। प्रस्तुत लेख में पाठक पढ़ेंगे कि स्नायु-संस्थान को सशक्त बनाने के लिये सभी प्रकार की कसरतों से आसन ही क्यों अधिक पुरअसर हैं?——सं०

आजकल जो व्यायाम विषयक साहित्य चारों तरफ देखने को मिलता है, उससे यह स्पष्ट मालूम होता है कि विशेषज्ञों का झुकाव प्राचीन शास्त्रीय व्यायाम की ओर बढ़ रहा है। व्यायाम विषयक पाश्चात्य-साहित्य से यह मान्यता और भी बढ़ जाती है। अब तक सर्वसाधारण लोग ऐसा समझते थे कि व्यायाम का उपयोग केवल युद्ध, खेल अथवा आत्मरक्षा के लिए तैयारी करने अथवा शक्तिशाली बनने के लिए है। व्यायाम से उपर्युक्त दृष्टियों से भी लाभ अवश्य होता है परन्तु इसका सर्वोपरि उद्देश्य है—अपने स्वास्थ्य की रक्षा करना। यह प्रसन्नता की बात है कि अब वैज्ञानिक लोग इस अन्तिम उद्देश्य को स्वीकार करते जा रहे हैं।

स्वास्थ्य संरक्षा का जीवन में बहुत अधिक महत्व है। जैसी हमारे समाज की परिस्थिति बन चुकी है, उसमें वह और भी आवश्यक है। आज हमारा जीवन कितना कृत्रिम और अस्वास्थ्यकर बन चला है? शहरों के जीवन को देखने से तो ऐसा मालूम होता है कि जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण ही विपरीत हो गया है। विलासितामय, अविवेकपूर्ण तथा स्पर्धामय जीवन का स्नायुसंस्थान पर बहुत हानिकारक प्रभाव पड़ता है। यही क्रम जारी रहा तो हमारा न जाने कितना पतन हो जायगा, इसकी आशंका बहुत बड़े रूप में विचारशील व्यक्तियों के सामने है। इस सारी स्थिति में स्वास्थ्य संरक्षण की आवश्यकता स्पष्ट है।

शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के स्वास्थ्य की जीवन में बड़ी आवश्यकता है और दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं। क्या बदहजमी वाले का मन कभी स्वस्थ रह सकेगा? प्रसन्न रहने के लिए भी पेट का साफ रहना बहुत आवश्यक है। यहाँ तक देखा गया है कि आत्मघात तथा अन्य कुविचारों में प्रवृत्त मनुष्य का इरादा कोष्ठ शुद्धि करने मात्र से बदल गया है। उदरस्थ मल का कुप्रभाव नाड़ी (स्नायु) संस्थान पर पड़ता है और इससे मनुष्य विपरीत कार्यों में प्रवृत्त हो जाता है। उत्तेजना से उसकी बुद्धि और ज्ञान पर परदा पड़ जाता है और वह अस्वास्थ्यकर कार्यों में लिप्त हो जाता है। इस प्रकार के जीवन से वह कुविचारों के चक्र में पड़ जाता है और इसी प्रकार अधिकाधिक फँसता जाता है।

इसके विपरीत ऐसा भी अनुभव है कि स्वास्थ्य ठीक होने और कोष्ठ शुद्ध होने की स्थिति में कुविचारों का जोर कम रहता है और मन काफी शान्ति का अनुभव करता है। इन्हीं परिणामों को देखकर प्राचीन योगियों ने योगशास्त्र का प्रतिपादन किया है। उनका विश्वास

है कि योग द्वारा शारीरिक तथा मानसिक, दोनों प्रकार का स्वास्थ्य बनाया जा सकता है। यौगिक क्रियाओं का स्नायुसंस्थान पर बड़ा कल्याणकारी प्रभाव पड़ता है। मुझे इसी विषय का यहाँ प्रतिपादन करना है।

वैज्ञानिकों का मत है कि स्वास्थ्यरक्षा के लिए स्नायुसंस्थान का शक्तिशाली होना आवश्यक है। मांसपेशियों के बढ़ाने का महत्त्व व्यायाम के अन्य क्षेत्रों की दृष्टि से भले ही हो, परन्तु स्वास्थ्य रक्षा के लिए इसका महत्त्व बहुत कम है। अतः स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से उसी व्यायाम का महत्त्व है जिसका लक्ष्य मांसपेशियों की अपेक्षा स्नायुसंस्थान को शक्तिशाली बनाना हो।

स्नायुसंस्थान को अच्छी हालत में रखने के लिए श्वासक्रिया पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। श्वासक्रिया का स्नायुसंस्थान से कितना घनिष्ट संबंध है यह इसी से समझ में आ जायगा कि श्वास लेना बंद करने से आदमी की मृत्यु हो जायगी। तंग और गंदी कोठरी में काम करनेवाला व्यक्ति यदि एक दम साफ हवा में जायगा तो उसे बड़ी प्रफुल्लता का अनुभव होगा। जो लोग श्वासक्रिया का सही तरीका नहीं जानते, उनकी छाती तंग सी होती है और फेफड़े कमजोर होते हैं। श्वास लेने का रक्ताभिसरण पर विशेष प्रभाव पड़ता है और इसका प्रभाव होता है स्नायुसंस्थान पर। स्नायुसंस्थान में जो मल संचित हो जाते हैं और उसके कार्यों में विघ्न डालते हैं, विधिपूर्वक श्वासक्रिया से वहाँ अधिक परिमाण में रक्त फेंका जाता है और जो भी दोष होते हैं, वे बाहर निकल जाते हैं, और मन अधिक प्रफुल्ल होकर स्नायुसंस्थान अधिक शक्तिशाली बनता है। इसका परिणाम होता है तत् संबंधित शरीर के अंग-प्रत्यंगों का शुद्ध और स्वस्थ होना। हमारे प्रत्येक श्वास के साथ उत्पादन और उत्सर्ग ये दोनों क्रियाएँ चलती रहती हैं। इन दोनों का सामंजस्य ही आरोग्यता का मापक है। स्नायुसंस्थान के अच्छी हालत में होने से श्वास-क्रिया के ठीक ठीक होने में भी बड़ी सहायता मिलती है।

अंतःस्रवीग्रंथियां[1] भी स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ी महत्त्व की हैं—ऐसी वैज्ञानिकों की मान्यता है। स्वास्थ्य-ठीक रहे, इसके लिए यह आवश्यक है कि इनका रस बिलकुल सही परिमाण में रक्त के साथ मिलता रहे। अन्यथा रक्त दूषित हो जायगा।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो गया होगा कि स्वास्थ्यरक्षा की दृष्टि से स्नायुसंस्थान श्वसनक्रिया और अंतःस्रवीग्रंथियाँ—इन तीनों पर विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है। जो व्यायाम, इन तीनों को ठीक हालत में रखने में सहायक होगा, वही स्वास्थ्यरक्षा की दृष्टि से उपयोगी समझा जायगा। अब देखना यह है कि योगिक-क्रियायें (आसन आदि) इस कार्य को कितनी सफलता से कर सकेंगी।

जिस प्रकार व्यापार वही अच्छा माना जाता है, जिसमें कम पूँजी लगे और लाभ अधिक हो—उसी प्रकार व्यायाम भी वही उत्तम माना जायगा जिसमें शरीर की शक्ति का कम से कम ह्रास हो और शक्ति और स्फूर्ति अधिक मिलें। यह अनुभव सिद्ध है कि दंड बैठक आदि लगाने में हाथ-पैरों को जोर के साथ फेंकना पड़ता है और हृदय की गति तीव्र हो जाती है—इस प्रकार काफी शक्ति खर्च करनी होती है। —जब कि आसनादि योग-क्रियाओं में आरंभ में हृदय की गति बहुत थोड़ी मात्रा में बढ़ती है परन्तु आगे चलकर तो सामान्य ही रहती है। इनको कर चुकने के पश्चात् थकावट मालूम होने के बजाय बड़ी स्फूर्ति का अनुभव होता है।

आसनों का तरीका ऐसा है कि इनका प्रभाव पीठ और मस्तिष्क के स्नायुसंस्थान पर विशेष रूप से पड़ता

---

[1] हमारे शरीर के अन्दर ऐसी अनेक ग्रन्थियाँ हैं जिनसे रस निकलता रहता है जो स्वास्थ्य के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। रस का ठीक से निकलना इन ग्रन्थियों के स्वास्थ्य पर निर्भर है।—सं०

है। परिणाम स्वरूप वहाँ अर्से से जमा हुआ मल साफ हो जाता है और नया रक्त प्रवाहित हो जाता है। भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन और मत्स्येन्द्रासन से पीठ के अन्तर्गत सब हड्डियों का व्यायाम हो जाता है और वहाँ के स्नायु शक्तिशाली बन जाते हैं। शीर्षासन तथा सर्वांगासन का मस्तिष्क के अंतर्गत नाड़ियों तथा उनके केंद्रों पर विशेष प्रभाव पड़ता है और पृष्ठवंश के स्नायुसंस्थान को विश्रांति मिलती है। जिस प्रकार व्यायाम के द्वारा शरीर के अंग विशेष पर खिंचाव पड़ना आवश्यक है उतना ही महत्त्वपूर्ण उन अंगों को विश्राम देना भी है। ये दोनों कार्य आसनों से हो जाते हैं। साथ ही शक्ति भी बहुत अल्पमात्रा में व्यय होती है।

अंतःस्रवीग्रंथियों पर सर्वांगासन, शीर्षासन और मयूरासन का बहुत अच्छा परिणाम देखा गया है। इन आसनों से उपर्युक्त ग्रंथियों पर जोर पड़ता है परिणाम स्वरूप वहाँ रक्त अधिक मात्रा में प्रवाहित होने लगता है और इससे वहाँ के कोष अधिक समर्थ और कार्यक्षम हो जाते हैं।

श्वासक्रिया को विधिपूर्वक करना और उसका नियंत्रण—यह तो योग का प्रधान विषय है ही। इससे बहुत कम शक्ति खर्च होकर अत्यन्त स्फूर्ति प्राप्त हो जाती है। उज्जाई कपालभाति इत्यादि प्राणायामों के द्वारा उपर्युक्त अनुभव बहुत सरलता से किया जा सकता है। प्रत्येक प्राणायाम के साथ रक्त का आवागमन और प्रवाह बढ़ता जाता है और साथ ही श्वास का रक्त प्रवाह से स्पर्श भी होता है। इस प्रकार शरीर में नवीन स्वच्छ रक्त का संचार होता है और संचित मल बह जाता है। इसका शारीरिक कोषों और स्नायुसंस्थानों पर अत्यन्त कल्याणकारी परिणाम होता है। शरीर का अणु अणु प्रफुल्लित हो कर विकास को प्राप्त होता है, कांति बढ़ती है, अग्नि प्रदीप्त होती है और स्फूर्ति मिलती है।

उड्डियान और नौलिक्रियाओं का आंत्रस्थ स्नायु पर विशेष प्रभाव पड़ता है, अतः इन्हें करने में मलोत्सर्ग की क्रिया ठीक रूप में होने लगती है। अतः जिन्हें पाखाना साफ आने के लिए कृत्रम साधनों से काम लेना पड़ता है, उनके लिए उड्डियान और नौलिक्रियाएँ विशेष उपयोगी हैं।

उपर्युक्त योग क्रियाएँ सब की सब आजमाई हुई हैं अतः इनके परिणाम के विषय में शंका करने की गुंजाइश नहीं है। जो चाहें स्वयं प्रयोग करके देख सकते हैं।

यह सिद्ध है कि स्वास्थ्य-रक्षा के लिए योगासनों का बहुत अधिक सूल्य है। कैवल्यधाम आश्रम में इन पर प्रयोग करके अच्छी तरह देख लिया गया है। यह तो हुआ शारीरिक स्वास्थ्य को ठीक करने के विषय में। मानसिक स्वास्थ्य पर तो यौगिक क्रियाओं का और भी अधिक शुभ प्रभाव पड़ता है। बल्कि यह कहना चाहिए कि आध्यात्मिक और मानसिक विकास तो योग का प्रधान लक्ष्य है ही। योग में ऐसी कितनी ही क्रियाएँ हैं जिनसे सुप्त मानसिक शक्तियाँ जागृत होती हैं और आत्मा अत्यन्त शक्तिशाली हो सकती है। नवयुवकों को चाहिए कि इन सब क्रियाओं का अभ्यास करें और लाभ उठावें।

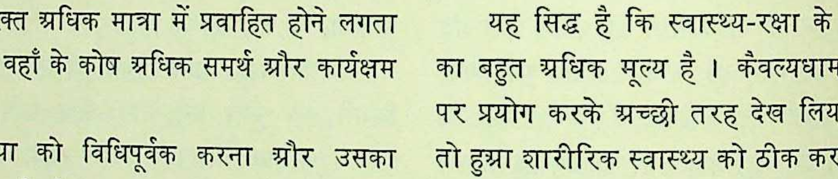

बारीक अक्षर पढ़ने से नेत्र स्वस्थ रहते हैं

डाक्टर आर० एस० अग्रवाल, नेत्र-विशेषज्ञ, दरयागंज, देहली

'माइन्ड एन्ड विजन' तथा 'त्राटक' सी अंग्रेजी में उपयोगी पुस्तकें लिखनेवाले डा० अग्रवाल का लेख 'आँखों का सौन्दर्य कैसे सुरक्षित रहे ?' गत जनवरी के जीवन-सखा के विशेषांक में प्रकाशित हुआ था। इस मास आपका यह दूसरा लेख जा रहा है। आशा है इसे पढ़कर जिनकी आँखें कमजोर हो गई हैं वे तो लाभ उठावेंगे ही, स्वस्थ आँखवाले अपनी आँखों का स्वास्थ्य बनाये रखने में भी सफल होंगे।--सं०

अक्सर लोग पढ़ते समय नेत्रों में पानी आना, खुजली, जलन होना, आँख और सर में पीड़ा होना आदि बातों की शिकायत किया करते हैं। अनेकों के लिए बुढ़ापे में बारीक अक्षर पढ़ना और किताब नज़दीक रखना असम्भव हो जाता है। पढ़ने में किसी प्रकार की भी दिक़्क़त या तकलीफ हो डाक्टर लोग तुरन्त ऐनक तजवीज कर देते हैं। ऐनक लगाने से दृष्टि कमजोर होती जाती है जिसकी वजह से बार बार ऐनक बदलनी पड़ती है। बहुत से रोगियों की तकलीफ ऐनक से भी नहीं जाती वे बार बार ऐनक-वालों की दूकान पर जाते हैं और उनके पास ऐनकों की एक दूकान सी लग जाती है।

यदि आप पढ़ने के कुछ उसूल समझ लें और उनको प्रयोग में लावें तो लिखने पढ़ने की हर तरह की दिक्कत जाती रहेगी, ऐनक की जरूरत नहीं रहेगी जिन्दगी भर नेत्र स्वस्थ बने रहेंगे। मोतिया बिन्द की बीमारी नहीं सतावेगी।

१. **किताब की पोजीशन**--पढ़ते समय नेत्रों से नीचाई पर रहे, नेत्रों के बिलकुल सामने नहीं।

२. **पढ़नेवाले की पोजीशन**--कुरसी या जमीन पर आराम से बैठे। हाथ से सर या ठोढ़ी को मत टेके। सर को आजाद रक्खे और पढ़ते समय सर को जरा जरा हिलाता रहे। लेटकर पढ़ते समय सर जरा ऊँचा रक्खे। करवट होकर न पढ़े।

३. **नेत्रों की पोजीशन**--पढ़ते समय ऊपर के पलक नेत्रों पर पड़े रहने चाहिए। आँखें ज्यादा खोलकर न पढ़ो। पढ़ते समय हलके हलके पलक झपकते रहना चाहिए।

४. **धूप में पढ़ना**--जाड़े की ऋतु में लोग अक्सर धूप में बैठकर पढ़ा करते हैं। किताब इस प्रकार रक्खो कि धूप किताब पर न पड़े चाहे चेहरे पर पड़ती रहे। यदि किताब पर धूप पड़ेगी तो चमक की वजह से आँखों पर जोर पड़ेगा। यह तो हर एक के अनुभव में आया भी होगा।

५. **कैसी रोशनी में पढ़ना चाहिए**--रोशनी इस प्रकार की हो कि उसमें चमक न हो। बिजली की तेज रोशनी जो सीधे किताब पर पड़ती है हानि पहुँचाती है, । चिराग़ मोमबत्ती, टेबुल लैम्प, मिट्टी के तेल या बिजली का दूधिया बल्ब, पढ़ने के काम के लिए ठीक हैं। अगर मामूली बल्ब से ही पढ़ना हो तो रोशनी को इस तरह लगाओ कि उसकी सीधी और तेज किरणें कागज़ पर न पड़ें।

६. **पलक झपकना आवश्यक है**—हलके हलके पलक झपकने से नेत्रों को आराम मिलता है। हर लाइन के पढ़ने में एक दो बार पलक झपक लेने चाहिये, परन्तु ठीक पलक झपककर पढ़ना जानना चाहिये। ठीक पलक झपकते समय ऊपर के पलक जरा जरा चलते रहते हैं, नीचे के पलक को नहीं छूते हैं। बहुत प्रकार की नेत्र-पीड़ा सिर्फ ठीक पलक झपकने से ही जाती रहती है।

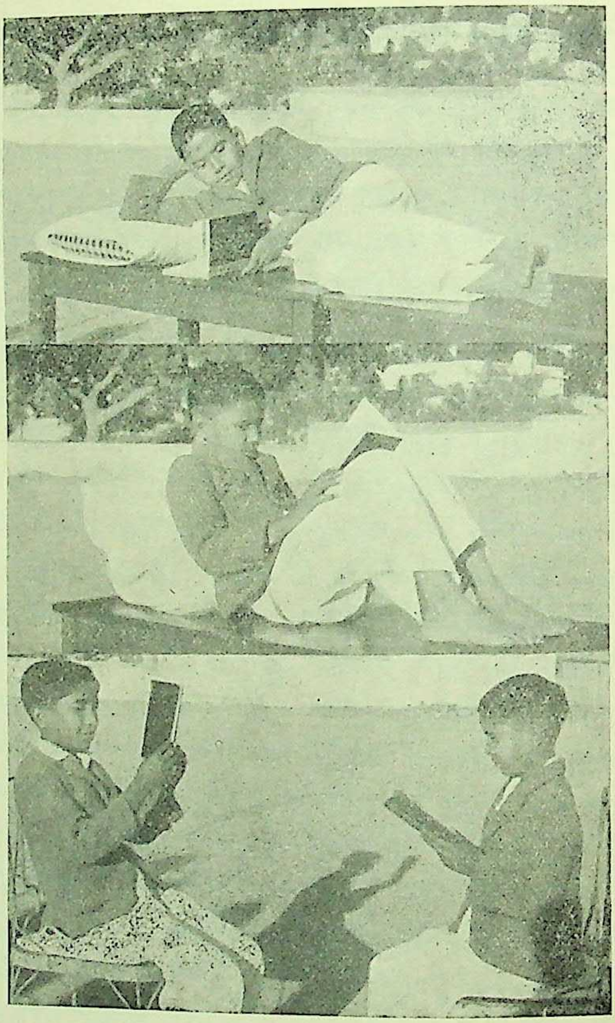

लेटकर पढ़ने का गलत तरीका

लेटकर पढ़ने का ठीक तरीका, कमर ऊँची रहे

गलत तरीका : किताब आँखों के सामने रखना

ठीक तरीका : किताब नीचे रखना

पढ़ना

७. **सूर्य चक्षु-व्यायाम**—रोज सुबह को दस मिनट सूर्य की ओर नेत्र बन्द करके बैठो और अपने बदन को हलके हलके साँप के फन की तरह हिलाते रहो। फिर साये में आकर ठंडे पानी से आँखें धोना चाहिये। रोज सूर्य-व्यायाम करने से नेत्र स्वस्थ बने रहते हैं, दृष्टि तेज होने लगती है।

८. **बारीक अक्षर पढ़ना**—आम तौर से खयाल किया जाता है कि बारीक अक्षर पढ़ने से नेत्र कमजोर

हो जाते हैं यह बात गलत है। यदि रोज खूब बारीक अक्षर पढ़े जायं तो दृष्टि ठीक बनी रहेगी। बुढ़ापे में भी ऐनक की जरूरत न पड़ेगी। बरीक अक्षर पढ़ते रहने से नेत्रपीड़ा जाती रहती है।

९. **त्राटक-क्रिया**——अच्छी आँखों में यह खूबी होती है कि किताब के जिस अक्षर या शब्द को देखती है वही औरों की बनिस्बत ज़्यादा काला प्रतीत होता है। इसके माने यह हैं कि उनकी आँखों में त्राटक का तेज मौजूद है। जिन लोगों को यह बात प्रतीत नहीं होती अर्थात् जिस अक्षर या शब्द को वे देखते हैं वह कम काला या और अक्षरों के बराबर काला मालूम होता है तो यह समझा जाना चाहिए कि उनमें त्राटक तेज की कमी है। इस तेज की कमी के कारण नेत्र पढ़ने में जल्दी थक जाते हैं, दृष्टि बराबर कमजोर होती जाती है। उन्हें इस तेज को बढ़ाना चाहिए।

तरकीब——सूर्य व्यायाम के बाद आखों पर हाथ ढको, आँखें अन्दर बन्द रहें और हाथ इस प्रकार ढको कि उनका दबाव आँखों पर न पड़े। ५ मिनट तक हाथ ढको और किसी काली या सफेद वस्तु का ध्यान करो। इसको पामिङ्ग कहते हैं। फिर हाथ हटाकर हलके से आँख खोलो पलक झपको सर को दायें बायें हलके हलके हिलाओ, और दृष्टि पुस्तक की सफेद लाइनों पर घुमाओ। सफेद लाइन उसको कहते हैं जो दो लिखी हुई लाइनों के बीच में होती है। इस तरह बिना पढ़ने की कोशिश किये आठ दस सफे खतम करो। किताब को उल्टी रखने से यह क्रिया अच्छी होती है क्योंकि पढ़ने की कोशिश कम हो जाती है। दो तीन दिन के बाद महसूस करो कि सफेद लाइनों पर दृष्टि घुमाते समय ऊपर के अक्षर और शब्द ज़्यादा काले मालूम होते हैं।

१०. **रोज का अभ्यास**——सूर्य-व्यायाम एवं पामिङ्ग करके पलक झपक कर सर को जरा जरा हिलाकर पढ़ने का दृष्टि-पट[1] (Reading Test type) पढ़ा करो। दृष्टि-पट इतने फासले पर रखो जहाँ से खूब साफ दिखता हो फिर फासला जरा जरा कम करते जाओ।

इन अभ्यासों के करने से अनेक रोगियों की दृष्टि तेज हो गई है, ऐनक छूट गई है। एक साठ साल के बुड्ढे मनुष्य की दृष्टि तीन दिन में बारीक से बारीक अक्षर पढ़ने योग्य हो गई। अनेक ऐसे भी रोगी जिनकी ऐनक भी मदद नहीं करती थी इन अभ्यासों की सहायता से अपनी दृष्टि-शक्ति बढ़ाने में सफल हो गये हैं।

---

[1] जीवन-सखा के विशेषांक (जनवरी '४१ का अंक) में प्रकाशित है।

क्या आपको भी कुछ कहना है ?

क्या अपने जीवन-सखा के सिद्धान्तों के अनुसार खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने का अनुभव किया है ? यदि हाँ तो उसे दूसरों की सहायता, तथा मार्ग-प्रदर्शन के लिए लिख भेजें। उन्हें हम सहर्ष प्रकाशित करेंगे। यदि सम्भव हो सके तो यह चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व और बाद का अपना फ़ोटो भी भेजें। आप का अनुभव दूसरों के बड़े काम का हो सकता है। अपने अनुभव निष्पक्ष भाव से तथा सच्चाई के साथ लिखें। यदि आपने किसी अन्य व्यक्ति को इस चिकित्सा-प्रणाली के द्वारा लाभ पहुँचाया हो तो उसके सम्बन्ध में भी अपने अनुभव भेज सकते हैं।——सम्पादक

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

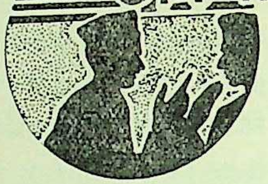

जलोदर से मेरा छुटकारा

श्रीयुत नंदकिशोर शर्मा

भिवानी, हिसार

मेरी चिकित्सा मौलवी साहब ने की थी। चिकित्सा क्या की थी, प्राण बचाये थे। पर अगर आप मुझसे मौलवी साहब का नाम पूछें तो मैं बता न सकूँगा क्योंकि मुझे उनके नाम जानने की कभी जरूरत ही नहीं हुई। पूरी भिवानी में जहाँ कहीं भी आप मौलवी साहब कह दीजिये सभी लोग जान जाते थे कि जल-चिकित्सक मौलवी साहब। वे भिवानी के मसीहा थे। कई सौ रोगियों को उन्होंने अच्छा किया और सैकड़ों को जिनको डाक्टर वैद्यों ने जवाब दे दिया था मौत के मुँह से खींच निकाला।

मौलवी साहब की चिकित्सा थी स्नान और भोजन। स्नान वे पेड़ू नहान, सेहन नहान, धूप-नहान, और भाप नहान देते थे और खाने में मोटे आटे की रोटी। मिट्टी का भी वे प्रयोग करते थे लेकिन चिकित्सा के आरम्भ में। दो चार दिन मिट्टी की पट्टी दिला कर जब वे नहान लेना शुरू करा देते तब मिट्टी प्रायः छुट जाती। रोटी भी वे एक ही बताते। कहते दो छटाँक गेहूँ के चोकर समेत आटे की एक रोटी बनाओ। यही किसी को एक चौथाई बताते, किसी को आधी और आखिर में एक। कोई बहुत लम्बा चौड़ा आदमी हुआ तो सवा या डेढ़ तक बता देते। साथ में हरी सब्जियों की बिना मिर्च मसाले की तरकारी, जो चीज कच्ची खाई जाने लायक होती वह कच्ची ही खाने को कहते। मूली, खीरा, ककड़ी वगैरह तो कभी पकाने न देते। फल अधपके ही खाने को कहते। कहते पका फल तो बुढ़ापे के रास्ते पर है अध-पका जानदार फल खाओ, जिसने जमीन को न चूमा हो और शान से डाल में लगा हुआ हो। दूध के तो वे दुश्मन थे। घी भी खाने को न देते, फिर दाल की तो बात ही क्या है। दूध अगर कोई बहुत माँगता तो कहते जितना अँगुली से चाट सको चाट जाओ। पियोगे तो वह पत्थर हो जायगा। तुम्हारे पेट में बछड़े की तरह के चार पेट नहीं हैं।

लेखक

आपको जानकर ताज्जुब होगा कि मौलवी साहब एनिमा भी न देते। वे कहते पेट अपने आप भोजन सुधार से साफ होगा। बेकार की छेड़छाड़ क्यों? और देखा भी जाता है कि पाँच सात दिन पेड़ू नहान देने के बाद जब मौलवी साहब भाप नहान देते तो दो एक दिन बाद पतली टट्टियाँ आनी शुरू हो जातीं और जब बन्द होतीं तो कब्ज को भी साथ लेती जातीं।

इन्हीं सीधे-साधे अस्त्रों के कारण मौलवी साहब भिवानी के डाक्टर, वैद्य, हकीमों के दुश्मन बन गये। उनकी दूकानों पर कोई न फटकता। वे मक्खियाँ मारा करते और मनाया करते कि मौलवी साहब की तलवार उनके सिर से हटे। तलवार हटी और सारा भिवानी रोता रह गया। मौलवी साहब सरकारी स्कूल में मास्टर थे जहाँ से डाक्टर-वैद्यों के जाल ने उनका तबादला करा दिया। मौलवी साहब के बारे में एक बात और बता दूँ तो अप्रासांगिक न होगा। वे स्कूल से जो सौ सवा-सौ रुपया महीना पाते उसमें बारह-पन्द्रह रुपये अपने पर खर्च करते और बाकी को अपने उन रोगियों को फल-तरकारी खरीदने के लिए दे देते जो ऐसा करने में असमर्थ होते। पैसे वालों से जो पैसा मिलता, वह भी इसी मद में खर्च होता।

मेरी माता जी अध्यापिका हैं उनसे मौलवी साहब से किसी जलसे में भेट हो गई। वहीं बातों में मेरी बीमारी का हाल मेरी माता जी ने मौलवी साहब से कहा। मौलवी साहब ने जो रोग और रोग का कारण बतलाया उससे वे बहुत प्रभावित हुईं और मेरी चिकित्सा तभी से मौलवी साहब द्वारा आरंभ कराई गई।

मुझे जलोदर का रोग था, पर इसके पहले मुझे पेशाब में जलन की शिकायत हुई थी जिसकी चिकित्सा एक डाक्टर से कराई गई। आराम तो हुआ पर कुछ ही दिनों बाद कब्ज तथा पेट दर्द की तकलीफ रहने लगी जिसकी चिकित्सा, क्रम से डाक्टर, वैद्य और हकीम करते रहे पर आराम होने के बजाय पेट बढ़ने लगा। पहले तो कुछ मालूम न हुआ पर धीरे धीरे हाथ पाँव भी फूलने लगे और पेट की गोलाई बढ़कर एक गज एक फुट हो गई। घरवालों को तथा मुझे इससे बहुत घबराहट हुई, भूख का कम लगना, प्यास ज्यादा लगना, पेट का तना रहना, पाखाना कभी कभी आना, और श्वास लेने में कठिनाई होना आदि शिकायतें थीं? जब मुझे मौलवी साहब के हाथों सौंपा गया तो इन्हीं तकलीफों की चिकित्सा डाक्टर साहबान कर रहे थे। इस बीच केवल दूध, सौंफ का अर्क और मकोय का रस, मुझे भोजन के रूप में सवा वर्ष तक दिया जाता रहा। मैं परहेज का पक्का होने के कारण और इस आशा में कि परहेज मुझे अच्छा कर देगा मैं इसे चलाता रहा। मौलवी साहब ने मुझे देखा भोजन के बारे में पूछा और दूध देना बन्द कर दिया और पाँच दिन का पूरा उपवास कराया। उपचार में इन पाँच दिनों में पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी दी जाती रही। पाँचवें दिन के बाद सवेरे शाम पेड़ू-स्नान शुरू हुआ, जो पहले पाँच मिनट से शुरू कराया गया और आखीर में बीस मिनट तक ले जाया गया। साथ में हर समय पेट पर फलालैन की पट्टी भी बँधी रहती। स्नान शुरू होने के बाद दिन में एक बार चौथाई रोटी, खाने को दी जाती और हफ्ते में एक भाप-नहान भी शुरू किया गया। बारह दिन बाद मुझमें ऐसी ताकत आ गई कि खुद पेड़ू-नहान लेने लगा। वजन पन्द्रह दिन बाद जब तौला गया तो तीस सेर घटा हुआ मिला। मेरी और मेरे घरवालों की खुशी का ठिकाना न रहा। एक महीने में तो रोग करीब करीब चला गया पर कमजोरी बहुत थी। चिकित्सा-क्रम चलता रहा और तीन महीने बीतते न बीतते मैं पूरा स्वस्थ हो गया। कुछ ही दिनों में मेरा स्वास्थ्य साधारण आदमियों के स्वास्थ्य से कहीं अच्छा हो गया, और आज चार वर्ष बाद भी जो मेरा स्वास्थ्य है वह मैं कह सकता हूँ मेरे अनेकों मित्रों की ईर्ष्या का कारण है।

आज भी जब कभी मैं अपनी बीमारी के बारे में सोचता हूँ तो मेरा मस्तक मौलवी साहब के चरणों में झुक जाता है।

सप्राण भोजन

श्रीयुत गंगा सहाय डाक्टर आफ बायोट्राफी[१]

श्रीयुत गंगा सहाय जी बीस वर्षों से अमेरिका के प्राकृतिक दृश्यों के लिए प्रख्यात कैलीफ़ोर्निया प्रदेश में रह रहे हैं। आपको प्राकृतिक चिकित्सा से सहज प्रेम है एवं आपने भोजन-विषय का विधिवत अध्ययन एवं अन्वेषण भी किया है। आप अपने विचारों को कार्यान्वित करने के लिए भारत आने को उत्सुक हैं। आशा है पाठक आपके लेख को ध्यानपूर्वक पढ़कर लाभ उठाएँगे।—सं०

यह सभी लोग जानते हैं कि स्वस्थ शरीर ही जीवन के कार्यों का आधार है। यदि शरीर अस्वस्थ हो तो मस्तिष्क, आत्मा अथवा प्रेरणा-शक्ति कोई भी ठीक तौर पर काम नहीं करेंगे। मस्तिष्क, आत्मा और शरीर सबका एक दूसरे पर आधार है। अतः मस्तिष्क अथवा मानसिक उन्नति पर विचार करने से पहले हमारे लिये शरीर के स्वास्थ्य पर ध्यान देना अतीव आवश्यक है। स्थिर रूप से स्वस्थ रहने की कुंजी जैसा कि मैं वर्षों, अमेरिका में रहकर समझ पाया हूँ, 'सप्राण भोजन' है। इसका सेवन करने के बाद स्वस्थ रहने के लिये किसी प्रकार के यन्त्र और जड़ी-बूटी को काम में लेने की आवश्यकता नहीं है। आपके लिये सबसे बड़ा डाक्टर, आपका वह पड़ोसी है जो आपके लिये भोजन और साग-सब्जी उत्पन्न करता है अथवा वह कुँजड़ा है जो फल बेचता है। आपको चाहिये कि उन लोगों से जान-पहचान कर लें ताकि आपको बहुत अच्छे पोषक द्रव्य मिलने लगें और उनका उतना ही सम्मान करना सीख लें जितना कि आप शताब्दियों से डाक्टरों का करते आये हैं।

हज़ारों वर्षों से मनुष्य यह समझता आया है कि भोजन को उपयुक्त बनाने के लिये पकाया अथवा उबाला जाना आवश्यक है। जब किन्हीं के ख्याल से इस सिद्धान्त के पालन में कुछ कमी रह जाती है और तबियत खराब मालूम होती है तो डाक्टर से सलाह ली जाती है। वह अक्सर यही कहता है कि भोजन को और अच्छी तरह पकाया जाय। अथवा रोग का और कारण समझ में न आया तो फिर हवा और मौसिम का दोषयुक्त बतलाया जाता है। दुनिया भर की पाकशास्त्र की पुस्तकें भी खाद्य-पदार्थों के विविध प्रकार से पका कर ही स्वादिष्ट भोजन बनाने की विधियाँ बतलाती हैं।

खाद्य पदार्थों को कच्ची स्वाभाविक अवस्था में भी मजे से खाया जा सकता है और इस प्रकार ग्रहण करने में उनमें कितना अधिक जीवनतत्व रहता है यह तथ्य इस समय के ९९ प्रतिशत सभ्य संसार की कल्पना से बाहर की बात है।

मान लीजिये हमारे कमरे में कोई मृत शरीर रक्खा है। थोड़ी देर के बाद उसमें सड़न पैदा होगी, उसमें कीड़े मकोड़े लगने लगेंगे और शीघ्र ही हमें सब कामों को छोड़कर उसे बाहर फिकवा देने को मजबूर होना पड़ेगा। इसी पर से कल्पना की जा सकती है कि खाद्य-पदार्थों को पका कर उनका प्राणतत्व नष्ट करने के बाद जब हम

---

[१] 305 West Eight street
Los Angeles California U. S. AMERICA

उन्हें ग्रहण करते हैं, तो शरीर के अन्दर उनका क्या प्रभाव होता होगा ? तुरत ही प्रकृति-माता की तरफ से बीमारी के रूप में चेतावनी दी जाती है कि शरीर को उन पदार्थों की आवश्यकता नहीं है और उन्हें वहाँ से तुरत हटा दिया जाय। परन्तु हम इस चेतावनी को सच्चे अर्थ में समझने के बजाय डाक्टर के पास भाग कर जाते हैं जो दवा देने के सिवाय और कुछ भी करने में असमर्थ हैं। दवा से कुछ समय बाद बीमारी और किसी रूप में उठती है और इसी प्रकार होता चला जाता है—जब तक कि बीमार समाप्त नहीं हो जाता है।

पकाने से भोजन का प्राणतत्व नष्ट हो जाता है और फिर उसका उपयोग हमें हानि पहुँचाने के अलावा और कुछ भी नहीं रह जाता है। कई व्यक्ति तर्क करेंगे कि यदि यही बात सही है तो फिर सारा संसार हजारों वर्षों से भोजन को पकाना ही क्यों ठीक मान रहा है ? इसका उत्तर तो यही है कि संसार में तो सदा से अनेक प्रकार का पापाचार भी होता आया है परन्तु इस कारण से हम उसे कभी ग्राह्य नहीं मान सकते। संसार में गलत परिपाटियाँ चलती रहती हैं किसी में जल्दी परिवर्तन हो जाता है और कोई देर में बदलती है। पर बदलती अवश्य है।

आज हम परिवर्तनशील युग में रह रहे हैं। जब कि प्राचीन काल से चली आई हजारों वर्ष पुरानी परिपाटियाँ भी बदल रही हैं। आज अमेरिका में सर्वत्र ही भोजन पकाने की यह गलत परिपाटी उठती जा रही है। यद्यपि ऐसे लोग संख्या में कम हैं और समाज के विचारशील व्यक्तियों ने ही यह कदम बढ़ाना प्रारंभ किया है। परन्तु इससे निराश होने की आवश्यकता नहीं है। प्रारंभ में प्रत्येक सुधार इसी प्रकार होता ही है।

जन्तुजगत में हम कहीं भी पकाया हुआ भोजन खाते हुए किसी को नहीं देखेंगे। यदि भोजन को पकाकर खाना ही वांछनीय होता तो प्रकृति की ओर से और जन्तुओं के लिए भी इस प्रकार की व्यवस्था अवश्य की जाती। सृष्टि के विकास के इतिहास से यह स्पष्ट है कि जिस क्रम से जन्तु जगत की उत्पत्ति होती गई उसी क्रम से अमुक श्रेणी के जन्तुओं के आविर्भाव से पहले अमुक प्रकार के खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति भी होती गई। जिससे जन्तु श्रेणियों को अपना अपना निश्चित प्रकार का भोजन तैयार मिलता गया। इस क्रम में वानर श्रेणी के जन्तुओं के आविर्भूत होने से पहले विभिन्न प्रकार के फलों के वृक्ष उत्पन्न हुए क्योंकि इस श्रेणी के जन्तु पेड़ों पर चढ़कर फल खा सकते थे। इसी वानर श्रेणी के जन्तुओं से धीरे धीरे मनुष्य का विकास हुआ, जो दो पैरों पर चल सकता था और बड़े मजे से फल तोड़कर खा सकता था। इसी प्रकार मनुष्य-जाति ने सृष्टि के आदिकाल में फलों पर रहकर बिना एक बार भी बीमार पड़े हजारों ही वर्ष बिताये भी हैं।

हम देखते हैं कि बालक के जन्म से पेश्तर ही उसके दूध की व्यवस्था प्रकृति की तरफ से माँ के स्तनों में कर दी जाती है। भोजन के लिए प्रकृति की तरफ से की हुई ये पूर्व व्यवस्थायें इस बात की सूचक हैं, कि वास्तव में मनुष्य को भी भोजन के लिए पशु पक्षियों से अधिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं है। सृष्टि की पूर्वावस्था में प्रकृति की तरफ से न तो मनुष्य के लिये आग की व्यवस्था ही की गई थी न किसी प्रकार के बरतनों व औजारों की ही। अतः भोजन के लिये उन साधनों का उपयोग करना जिनकी व्यवस्था प्रकृति ने करना ज़रूरी नहीं समझा—अनावश्यक है।

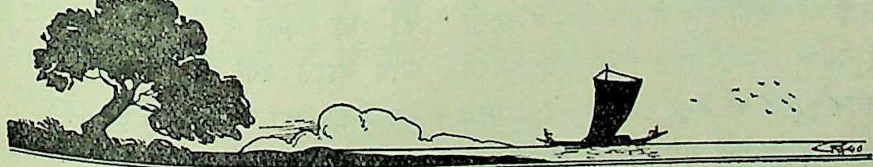

पीटने वाले मास्टरों का अचूक इलाज

श्रीयुत यज्ञदत्त 'अक्षय' विशारद

श्रीयुत यज्ञदत्त जी स्काउट मास्टर हैं एवं बाल मनोविज्ञान तथा बालकों के शिक्षण विषय की ओर भी रुचि रखते हैं। उनका कहना है कि जो मास्टर अक्सर बालकों को मारते-पीटते वा बकते-झकते हैं उसका कारण उनका बाल-मानस का अज्ञान ही नहीं बल्कि उनकी शारीरिक अव्यवस्थाएँ भी हैं। आशा है आपके इस लेख से शिक्षण-शास्त्र में शिक्षक की शारीरिक सुव्यवस्था के महत्त्व पर प्रकाश पड़ेगा।—सं०

जहाँ तक मैं समझता हूँ करीब करीब सभी को 'मारने मास्टरों' से वास्ता पड़ा होगा। पुराने ढंग की पाठशालाओं और चटशालाओं में ही नहीं आधुनिक मिडिल स्कूलों वा हाई स्कूलों में भी 'मारने मास्टरों' का 'रुद्रावतार' देखने को मिलता रहता है। हाँ, ढंग दोनों में पृथक पृथक जरूर हैं। जहाँ चटशालाओं में लात, घूँसे, थप्पड़, मुर्गा बनाना, खूँटी के लटकाना आदि के साथ फोश गालियों का दौर दौरा है वहाँ आधुनिक स्कूलों में बेंच पर खड़ा कर देना, होल्डर से कान को उमेठना, बेंत से हाथों और पीठ को रेखांकित कर देना आदि के साथ साथ डाट फटकार, जलीकटी बातों और जुर्मानों का जोर है। सहृदय पुरुष इन 'मारने मास्टरों' की मारते वक्त मुख-मुद्रा देखकर भौंचके से हो जाते हैं। लाल लाल आँखें, भौंहें चढ़ी हुई, होठ व नथुने फड़कते हुए, मुँह से गालियों की बौछार और हाथों से बेचारे निरीह बालक पर मार की भरमार करते हुए मास्टर साहब के संबंध में रौद्ररस की कवितायें लिखी जा सकती हैं। बहुत से लोग इन लोगों की उपमा 'कसाई' से देते हैं किन्तु कसाई भी इनकी होड़ में कम बेरहम ठहरते हैं। अगर कोई दयालु प्रकृति माता पिता ऐसे 'मारने के क्षणों' में मास्टर साहब को मना करते हैं तो वे क्रोध में आकर उन्हें भी घुड़कते देखे गये हैं और बालकों को बिगाड़ने का सारा श्रेय उनके मत्थे मढ़कर स्वयं उन बालकों के सच्चे हितेच्छु होने का दम भरते हैं। कहते हैं कि 'मार के आगे भूत भागता है।' किंतु मनोविज्ञान के जानकार जानते हैं कि मार के आगे भूत ही नहीं भागता बालक का वर्तमान और भविष्य भी भाग जाता है।

यद्यपि डा० मेरिया माँटेसोरी, आचार्य गिजु भाई हरभाई त्रिवेदी आदि बालमनोविज्ञान के पंडित बालकों को मारने व उन्हें डराने धमकाने के भी विरुद्ध हैं किंतु अभी इस बात का इतना अधिक प्रचार नहीं हुआ है कि बालकों को मारना बुरा समझा जाने लगे। मास्टरों के अतिरिक्त माता पिता व बड़े भाई भी बालकों को मारने व उन्हें डाटने डपटने को अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझते हैं किंतु आश्चर्य तो यह है कि जहाँ खेलों द्वारा ही शिक्षा देने का नियम है कहीं कहीं उन स्काउट ट्रुपों में भी स्काउट मास्टर साहब छड़ी का प्रयोग करते पाये जाते हैं। इस प्रकार आज के बालक को दोहरे तेहरे अत्याचारों से आक्रांत होना पड़ता है। किंतु मास्टर मारते क्यों हैं? क्या उन्हें इसमें मजा मिलता है? पूछने पर उत्तर मिलता है 'नहीं'। क्या मारने से लड़कों की बुद्धि बढ़ती है? उत्तर मिलता है 'नहीं'। फिर आप मारते क्यों हैं? तब समझदार शिक्षक उत्तर देते हैं कि क्या करें मारना ही पड़ता है, यदि न मारें तो लड़के कहना नहीं मानें, रोब में नहीं रहें, 'होम वर्क'

करना छोड़ दें, शोरगुल मचाना बढ़ा दें आदि आदि, सब तरह से गड़बड़ फैल जाय इसलिये मारना ही पड़ता है। यद्यपि मारने के बाद मन में तो हम भी पछताते हैं लेकिन कुछ ढर्रा ही ऐसा चल पड़ा है इत्यादि इत्यादि।

उपर्युक्त कथन से जो सार निकलता है वह यह है कि मास्टर अधीर हो जाने पर, क्रोध चढ़ आने पर, और आदत पड़ जाने के कारण मारा करते हैं। अब हमें देखना चाहिए कि ऐसे मास्टरों की प्राकृतिक चिकित्सा की जाय तो वे मारना छोड़ सकते हैं या नहीं?

आप शायद हँसेंगे और कहेंगे कि 'मारना' भी क्या कोई रोग है जिसकी प्राकृतिक चिकित्सा की जाय? और इसकी प्राकृतिक चिकित्सा हो भी क्या सकती है? इसके जवाब में मैं कहूँगा कि घबराइये नहीं। 'मारना' स्वयं रोग नहीं तो रोग का वाह्य लक्षण है। असली रोग तो है मन की अधीरता, चिड़चिड़ापन, क्रोध और आदत। अक्सर मास्टर इनके चक्कर में फँसकर ही 'मारने' हो जाते हैं और बाद में सिद्धहस्त हो जाने पर अपने मारने की कला की तारीफ किया करते हैं। असल में तो चिड़चिड़ापन और क्रोध मानसिक रोग हैं जो शारीरिक कब्ज रहने से उत्पन्न हो जाया करते हैं। जब कब्ज के कारण पेट में मल सड़ते हैं तो उनका मस्तिष्क के ज्ञानतंतुओं पर बुरा असर पड़ता है। सिर भारी हो जाता है। कुछ अच्छा नहीं लगता, किसी बात में मन नहीं लगता। कोई काम इच्छानुकूल नहीं होता तो मन भड़क उठता है। बस यही चिड़चिड़ापन और क्रोध की उत्पत्ति होती है और इस आवेश में मारने पीटने और बकने झकने का श्रीगणेश हो जाता है। इस आवेश का बुरा असर शरीर पर होता है और कब्ज, अपच, सिरदर्द आदि शिकायतें होने लगती हैं—इन शारीरिक खराबियों का असर पुनः मन पर पड़ता है और इस तरह चक्कर चलता रहता है। सिरदर्द, अजीर्ण कब्ज आदि की दवा जारी होने पर रोग दब जाता है और पुनः आवेश आने पर लड़कों पर क्रोध व गाली गलौज के रूप में प्रकट होता है फलतः फिर से अपच, कब्ज आदि शिकायतें होनी शुरू हो जाती हैं। मन और शरीर के रोग एक दूसरे के बाद एक दूसरे पर असर डालते रहते हैं और फलस्वरूप मास्टर साहब मोहर्रमी सूरत के 'मारने मास्टर' हो जाते हैं। वे हमेशा आँखें निकालकर बालकों को डराते और अपना रोब बढ़ाने का प्रयत्न करते रहते हैं। हँसी उन्हें बुरी लगने लगती है। न खुद हँसते हैं न बालकों का उन्मुक्त हास्य उन्हें अच्छा लगता है। बालकों के प्रसन्न बदन रहने और हँसने में उन्हें अपना अपमान मालूम होता है और मुँह लटकाकर बैठने में अपनी शान। अस्तु इस चिड़चिड़ाहट व क्रोध की प्राकृतिक चिकित्सा सहज है। कब्ज व सिर के भारीपन को दूर करने के लिये कम से कम तीन दिन का उपवास और हर रोज शाम को एनिमा प्रयोग तथा सुबह शाम एक दो मील टहलने जाना तथा मंद मंद वायु में फूलों का हँसना, रात में तारों का हँसना, ऊषा की मुस्कान आदि का दर्शन करना अर्थात् प्राकृतिक सौन्दर्य का रसपान तथा भविष्य में हितमित उचित आहार विहार —यह है मारने मास्टरों की प्राकृतिक चिकित्सा। किंतु उनकी यह चिकित्सा करेगा कौन? इसका उत्तर भी सहज है। मास्टरों में 'जीवन-सखा' का प्रचार खूब किया जाय तो वे इसके लेखों को पढ़कर प्राकृतिक जीवन के पक्षपाती बनेंगे और कब्ज आदि होने ही नहीं देंगे। और ये रोग हो जायँगे तो प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा उन्हें निर्मूल कर लेंगे। लीजिये न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी। न रहेगा कब्ज और न रहेगा चिड़चिड़ापन तथा क्रोध, एवं न रहेगा क्रोध; और न होगा मारना पीटना यही होगा प्राकृतिक चिकित्सा का फल।

मानव जीवन एवं सूर्य्य प्रकाश

श्रीयुत ब्रजमोहन मिहिर

हमारे पूर्वज बहुत दिनों तक सूर्य-रश्मियों एवं वायु के सहारे रह पाते थे––इस उक्ति में लोगों को अतिशयोक्ति दिखाई दे सकती है। पर अब वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया है कि भोजन के कई अवयवों की पूर्ति धूप द्वारा हो सकती है। यह भी सत्य है कि सूर्य का रोगों को दूर करने में चमत्कारिक प्रभाव है। इन सब बातों की विवेचना मिहिर जी ने इस लेख द्वारा बहुत ही सरल ढंग से की है। जिसे पढ़कर पाठक अवश्य लाभान्वित होंगे।––सं०

सूर्य प्रकाश मनुष्य जीवन के विकास का एक अत्यन्तावश्यक अङ्ग है। सूर्य की ही कृपा से भिन्न भिन्न वस्तुओं में उसकी आवश्यकतानुसार प्राण संचार होता है। सूर्य ही प्राण है। सूर्य के ही आधार पर संसार के समस्त पदार्थ जीवित हैं। जिस स्थान पर प्रकृति के विधानानुसार सूर्य प्रकाश कम है वहाँ साधारण स्थान की अपेक्षा शीत अधिक है। शीत प्राधान्य प्रदेशों में खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति का बाहुल्य नहीं होता। भूमण्डल पर कितने स्थान ऐसे भी हैं जहाँ पर सूर्य-प्रकाश नहीं के बराबर है। ऐसे स्थानों पर मनुष्य निवास दुरूह है क्योंकि उन स्थानों पर मनुष्योचित भोग वस्तुओं का नितान्त अभाव है।

भूमण्डल पर पृथ्वी का सबसे उत्तम भाग वह समझा जाता है जो आवश्यकता से अधिक न गरम हो और न ठंडा ही। ऐसे स्थानों पर ही पूर्ण विकसित मनुष्यों का जन्म होता है और उनके अनुकूल अन्य पदार्थों का भी। अधिक ठंडे स्थानों पर चीजों में सिकुड़न होती है। और गरम स्थानों पर फैलाव अर्थात् ठंडक वस्तुओं को संचित करती है और गर्मी उसका व्यय करती है। शीत प्रधान देशों में लोग अधिक आयु में युवा होते हैं और ऊष्ण प्रधान देशों में शीघ्र। किंतु दोनों स्थानों पर आवश्यकता से अधिक जहाँ इनका प्राधान्य है वहीं पर शक्ति का अपव्यय है। अतः दोनों ही स्थानों पर विकास का सरल अवसर नहीं प्राप्त होता। थोड़े बहुत मनुष्य तो पृथ्वी के सब हिस्सों में पाये जाते हैं और वहीं की उत्पन्न हुई चीजों को खाकर अपनी गुजरबसर भी करते हैं। किन्तु उनके जीवन में मनुष्योचित विकास का समावेश नहीं रहता।

तिब्बत में बहुत ज़्यादा ठंडक होती है और साथ ही साथ गर्मी भी। तिब्बत में खुली हुई जगह में अगर कोई मनुष्य बाहर बैठा है और उसके शरीर का आधा हिस्सा धूप में है और आधा हिस्सा छाया में है तो बदन का जो हिस्सा धूप में है और जो हिस्सा छाया में है उसमें १०० डिग्री का अन्तर रहता है। बदन का छाया वाला हिस्सा ठंड के मारे काँपने लगता है। और धूप वाला हिस्सा बालू की तरह तप्त हो उठता है। तिब्बत के स्थानों में धूप में चलना मैदान की अपेक्षा अधिक कष्टपूर्ण है। वहाँ के निवासी और स्थानों की अपेक्षा अधिक मजबूत और स्वस्थ रहते हैं। क्योंकि दोनों चीजें वहाँ पर्याप्त हैं। पर अपने उग्ररूप में। यदि एक ही चीज की प्रधानता होती तो शक्ति का, उनका मुकाबिला, करने के लिये अधिक क्षय होता। वहाँ भूख तो बहुत लगती है किंतु भोजन सामग्री की कमी से थोड़ा खाकर भी उनका काम भली प्रकार चल जाता है। तिब्बत प्रदेश की यह एक प्रशंसनीय विशेषता है। इस लेख में अब हम लोगों का ध्यान इस ओर आकृष्ट कर रहे हैं कि सूर्य रश्मि से जीवन में कितना अधिक लाभ होता है।

पहाड़ों पर (जैसे नैनीताल, अलमोड़ा या मंसूरी) सूर्य का ताप मैदान की अपेक्षा बहुत कम होता है। जलवायु के अच्छा होने से और सूर्य के साधारण ताप के होने से वहाँ लोगों को भूख अधिक लगती है। यहाँ भी जिस दिन सूर्य की गरमी कम रहती है उस दिन भोजन करने की प्रवृत्ति अधिक बलवती होती है। इसका मुख्य कारण सूर्य का न प्रगट होना ही है। प्रत्येक मनुष्य अनुभव कर सकता है कि भूख लगी रहने की हालत में अगर थोड़ी देर के लिये धूप में बैठ लिया जाय तो वही बात मालूम होगी जो कि भोजन करने से मालूम होती है लेकिन उस समय की धूप इतनी तेज न हो कि वह बदन को ही झुलसा दे। अर्थात् प्रातःकाल और थोड़े समय के लिये सायंकाल ही इसका अनुभव किया जा सकता है। भोजन करके मनुष्य को जो शक्ति प्राप्त होती है वही शक्ति हमें सूर्य के ताप से मिलती है। भोजन सामग्री की उत्पत्ति पर यदि गौर किया जाय तो इससे भी यही बात प्रमाणित होती है कि सूर्य का ताप ही तो अपनी शक्ति से अनेक पदार्थों को स्वादमय और हमारे भोजन के योग्य बनाता है, और जो लोग सूर्य से पके हुए पदार्थ को प्रयुक्त करते हैं उनका थोड़े में ही काम चल जाता है। केवल सूर्य के ताप से तैयार किया हुआ भोजन शरीर के अन्दर उतने अधिक क्षय को नहीं प्राप्त होता जितना कि वह भोजन जिसे हम अग्नि की सहायता से भोजन के योग्य बनाते हैं। अग्नि से पकाकर हम जो भोजन करते हैं वह देर से हजम होता है और शरीर में अधिक विजातीय द्रव्य उत्पन्न करता है, अपेक्षाकृत उन वस्तुओं के जो सूर्य के ताप से पकती हैं। कच्चा दूध पीने में अधिक स्वादिष्ट होता है और शीघ्र पचता है बनिस्बत गरम किये हुए दूध के। कच्चा दूध लेते हुए इस बात की ओर अवश्य ध्यान रक्खा जाय कि वह दुहे जाने के बाद जल्दी से जल्दी इस्तेमाल कर लिया जाय और यदि देर से इस्तेमाल किया जाय तो किसी ऐसे तरीके से रक्खा जाय कि उसका स्वाद और रंग न बिगड़ने पावे। फल या कुछ हरी तरकारियाँ सूर्य के ताप से तैयार होकर जिस दशा में हमारे सामने आती हैं उनको हमें उसी ढंग से खाना चाहिये। अन्न को भी अगर हम उसकी स्वाभाविक दशा में खायँ तो हमें उसको अग्नि पर पकाने की कोई जरूरत नहीं है। गेहूँ, जव, चना, बाजरा या अन्य कोई भी अनाज अगर हम उस समय खायँ जबकि सूर्य के ताप से उसका गूदा पक कर खाने योग्य हो जाय किन्तु कठोर न होने पावे और उसका रस खुश्क न हो जाय तो उन्हें खाने के लिये हमें अग्नि पर पकाने की कोई जरूरत नहीं है। हर ऋतु में और हर दिन हमें कोई न कोई ऐसी चीजें चाहे वे अन्न की शकल में हों या फल की शकल में हों या मेवे की शकल में हों बराबर मिलती जायँगी। कुछ चीजें ऐसी भी हैं जिन्हें प्रकृति ने बिलकुल पका कर ही हमारे भोजन के लिये रक्खा है जैसे कि बादाम, अखरोट, नारियल (गोला) तथा अन्य और मेवे। प्रकृति के अनुसार यदि भोजन का नियमन किया जाय तो एक दो चीज भोजन में इस्तेमाल करके शरीर के लिये सारे पोषण तत्व, विटामिन, लवण आदि प्राप्त किये जा सकते हैं। इस प्रकार के थोड़े भोजन से मनुष्य को अधिक से अधिक शक्ति मिलती है और स्वास्थ्य सदा अच्छा रहता है। हमारे भोजन में सूर्य का यह मुख्य स्थान है। शहर और गाँव दोनों स्थान के निवासी ऐसे भोजन को सुगमता पूर्वक प्राप्त कर सकते हैं। दोनों के भोजन की किस्म में जरूर अन्तर होगा। शहर में कुछ अधिक पैसेवाले रहते हैं इसलिये वे अपने पैसे की सहायता से शहर में वैसे भोजन का प्रबन्ध कर सकते हैं और गाँव वाले अपने परिश्रम के बल पर। शहर के रहनेवाले जो लोग पैसे की कमी से इस प्रकार के प्राकृतिक भोजन का प्रबन्ध नहीं कर सकते उनके लिये शहर उपयुक्त स्थान नहीं है। ऐसी दशा में किसी कारणबश यदि वे शहर छोड़ नहीं सकते तो यह समझना चाहिये कि उन्होंने अपने जीवन में कुछ ऐसी गलतियाँ कर ली हैं जिनका जीवन की वर्तमान प्रगति के साथ कोई सामंजस्य नहीं हो रहा है। उसे तो भोगना पड़ेगा ही किन्तु उस भोग से सजग हो जाने पर वर्तमान बातों पर

गौर किया जा सकता है। जीवन का ऐसा बोध हो जाने पर उसमें बहुत कुछ सुधार संभव है। भोजन का प्रश्न भी जीवन के अन्य प्रश्नों से कोई एक अलग प्रकार का या कम महत्त्व रखनेवाला प्रश्नन हीं है अतः प्रत्येक को इस-पर पूरा ध्यान देना चाहिए। इसके विरुद्ध यह बात अवश्य है कि भोजन का प्रश्न एक बहुत ही गंभीर प्रश्न है क्योंकि इससे ही शरीर और मन का निर्माण होता है। शुद्ध और स्वस्थ भोजन का परिणाम है स्वस्थ शरीर, सबल, निर्मल मन और निर्मल बुद्धि। स्वस्थ शरीर स्वाभाविक नियन्त्रित मन और चेतनात्मक बुद्धि की सहायता से परमानंद की प्राप्ति होती है जो कि जीवन का एक मात्र ध्येय है। जीवन को इस प्रकार से देखने में भोजन का बहुत बड़ा महत्त्व है। सूर्य हमारे आर्थिक प्रश्नों को हल करने में बहुत कुछ सहायता पहुँचाता है। स्वस्थ जीवन प्रदान करता है और अन्त में वह मनुष्य को उसके ध्येय तक पहुँचा देता है। इन बातों पर गौर करते हुए, यदि तनिक भी विचार शक्ति अन्दर कार्य कर रही है तो कौन ऐसा मनुष्य है जो इसके लाभ से आँख बन्द कर लेगा।

इस लेख में यही विचार किया जा रहा है कि हमारे शरीर के साथ भोजन और सूर्यताप का कितना घनिष्ट सम्बन्ध है। जैसे अधिक भोजन चाहे वह कितना ही अच्छा क्यों न हो शरीर को हानि पहुँचाता है वैसे ही सूर्यताप को भी समझना चाहिये। थोड़ी देर तक सूर्यरश्मियों के सेवन करने से हमारे शरीर को अनेकों प्रकार के लाभ होते हैं। शरीर में नवीन शक्ति का संचार होता है, हड्डियाँ दृढ़ होती हैं इससे हमें विटामिन डी मिलता है, हमारे बहुत से रोग अच्छे होते हैं इत्यादि किन्तु जब इसका दुरुपयोग किया जायगा तो इसमें हानि भी होती है। धूप में उतनी ही देर बैठना चाहिये जितनी देर शरीर धूप को आसानी से सहन कर सके। आवश्यकता से अधिक बहुत देर तक धूप में बैठने से बदन झुलस जाता है, शरीर का वर्ण श्याम हो जाता है भूख में बहुत कमी हो जाती है और शरीर की हड्डियों में भी विटामिन डी की अनावश्यक अधिकता हो जाती है। संसार में कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसका आधिक्य हानि-लाभ से रहित है। स्वाभाविकता जीवन है। औसत दर्जे के स्थानों को ले लीजिए। जहाँ सहने योग्य गर्मी पड़ती है वहाँ की जलवायु गर्मी के दिनों में और ऋतुओं की अपेक्षा अधिक अच्छी रहती है। इलाहाबाद में भी गर्मी अधिक ही पड़ती है। किन्तु अप्रैल और जून के महीनों में यहाँ की आबहवा अच्छी रहती है बीमारियों का प्रकोप भी कम रहता है। अलबत्ता, गलती और लापरवाही से कभी कभी लोगों को लू लग जाती है या छोटे बच्चों को माता की बीमारी हो जाती है। गर्मी के दिनों में माता का प्रकोप कुछ मानी रखता है। माता कोई बीमारी नहीं है। माता पिता के अनियमित जीवन से बच्चे के अन्दर जो विजातीय द्रव्य संकलित हो जाता है उसे प्रकृति स्वस्थ ऋतु में बाहर निकालने की चेष्टा करती है। जिस माता पिता का जीवन आहार विहार के दृष्टिकोण से ठीक है उनके बालकों में माता के रोग का प्रकोप नहीं होता और यदि होता भी है तो बहुत कम। जिस अंश में बालक में यह रोग दिखलाई पड़े उस अंश में यह समझना चाहिए कि उसने यह दोष माता पिता से प्राप्त किया है और उन्होंने अपना जीवन प्राकृतिक बातों को 'दृष्टिकोण में रखते हुए नहीं बिताया है। अतः माता पिता की बीमारी या लू का लग जाना ऋतु की वजह से नहीं हुआ बल्कि उसके होने का अन्य रोगों की भाँति कुछ और ही कारण है। इस ऋतु में इन रोगों के होने से यह न समझ लेना चाहिये कि मौसिम ख़राब है बल्कि इसके विरुद्ध सही बात तो यह है कि इन दिनों मौसिम बहुत अच्छा रहता है। ऋतु अपनी स्वस्थ दशा में होने के ही सबब से प्राणियों को सहायता पहुँचाने की कोशिश करती है। प्रकृति की कृपा से ही इन दिनों बहुत पुराने पुराने रोगों का भी उभाड़ हुआ करता है। रोग के उभाड़ से प्रकृति मनुष्य को बार बार मौका देती है कि वह अपनी गलतियों को समझ ले। प्रकृति तो मनुष्यों तथा इतर सब प्राणियों पर अतिशय दयालु है। उसकी यदि यह असीम कृपा न होती तो थोड़े दिनों भी मनुष्य का जिन्दा रहना

श्किल हो जाता। हम सबको प्रकृति की इस देन का और हमारा इसके साथ क्या सम्बन्ध है समझना चाहिये।

सूर्यताप का मनुष्य जीवन पर बहुत बड़ा प्रभाव ड़ता है। स्वादिष्ट और बलदायक फल उस स्थान पर धिक होते हैं जहाँ पर सूर्यताप अच्छा रहता है। रतवर्ष का अधिकांश भाग ऐसा ही है जहाँ कि सूर्य-श्मियाँ वर्ष के किसी न किसी भाग में अपनी क्रीड़ा किया करती हैं। युक्त प्रान्त में नई तरकारियाँ और नये वादिष्ट फल उन दिनों में ही अधिक उत्पन्न होते हैं ब कि सूर्य का ताप प्रखर रहता है। गर्मी के दिनों में म जैसा फल यहाँ बहुतायत से होता है, अक्टूबर में रीफा, और कुछ दिनों बाद अमरूद कसरत से मिलने गते हैं। इन दोनों मौसिमों में आकाश मेघ रहित हता है। सूर्य की किरणें पृथ्वी पर तेज पड़ती हैं।

वैज्ञानिक अन्वेषणों ने निस्संदेह बहुत सी बातों में नुष्य जीवन के उत्थान में बहुत कुछ लाभ पहुँचाया है। ऊसर खेत को उपजाऊ बनाकर विज्ञान ने जन-ल्याण के लिये लाभ का काम किया है। साथ ही साथ वन-संबंधी बातों में इसने हमें बहुत कुछ क्षति भी हुँचाई है। हमारे भोजन में आज बहुत सी चीजें [illegible], हानिप्रद और अनावश्यक हैं। भोजन कला में ब उन्नति नहीं हुई थी तो लोगों का भोजन प्रकृति के नुसार स्वाभाविक और सरल होता था। अग्नि से काई गई चीजों का बहुत कम व्यवहार किया जाता था। एक के यहाँ दूध देनेवाले पशु थे। उन पशुओं को कृति प्रदत्त भोजन मिलता था। गायों के स्तन से कले हुए दुग्ध को पीकर लोग स्वास्थ्यमय जीवन तीत करते थे। वे बिना गरम किया हुआ ही दूध ते थे। इसके अतिरिक्त सूर्य ताप से पके हुए कुछ फल दूधदार अनाजों की बालियाँ और कुछ तरकारी तेमाल करते थे। इस प्रकार प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हुए वे यह जानते ही न थे कि रोग क्या है। जीवन प्राप्त करने के पश्चात् मरण पर्यन्त वे निरोग रहते थे। काफी आयु हो जाने के पश्चात् जैसे किसी दिन पका हुआ फल वृक्ष से पृथ्वी पर टपक पड़ता है उसी प्रकार उनका भी निरापद जीवन होता था, बिना कष्ट पाये हुए प्राण शरीर छोड़कर चला जाता था।

मनुष्यों का स्वास्थ्य उस समय से बिगड़ना आरंभ हुआ जबसे अग्नि का आविष्कार हुआ और लोग अग्नि द्वारा पकाया हुआ भोजन करने लगे। पहले लोग जिन्दा रहने के लिये कुछ भोजन कर लिया करते थे। अब लोग भोजन करने ही के लिये जिन्दा रहते हैं। स्वादिष्ट भोजन के लिये ही हमारी जिन्दगी की यह सारी हाय हाय है। भोजन सामग्री एकत्रित करने और बीमारी मोल लेने में ही हम लोग अपना सारा उपार्जित धन व्यय करते हैं। घेलुए में थोड़ा धन डाक्टर, वैद्य और हकीमों को भी दे देते हैं।

जब लोग प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते थे तो भोजन की इतनी चाह और चाट नहीं थी और न लोगों को इसके लिये अधिक धन ही व्यय करना पड़ता था। थोड़ा परिश्रम करके लोग कुछ फलों के वृक्ष लगा लिया करते थे, दूधवाले पशु पाल लेते थे, और जमीन से भी अनाज तथा तरकारी की शकल में कुछ उत्पन्न कर लेते थे। हर समय उनके पास ऐसी चीजें रहा करती थीं जिन्हें वे अग्नि में पकाये बिना इस्तेमाल करते थे। उस समय रोग रहित उनका जीवन सुखी था। मैं चाहता हूँ आज भी पृथ्वी पर वह समय आ जाय जबकि कम से कम भोजन के मामले में उनका जीवन बिलकुल ही प्राकृतिक हो जाय। सूर्य से जैसे पहले लोग लाभ उठाया करते थे वैसे ही आज भी हम लोग लाभ उठावें। इससे अनेकों प्रकार के रोग तो जायँगे ही, हमें स्वस्थ रहने में सहायता मिलेगी।

मधु

प्रो० भवानी प्रसाद जी, प्राकृतिक स्वास्थ्यशास्त्रोपाध्याय, काँगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार

"मधु के गुणों की महिमा प्राचीन आयुर्वेद के ग्रन्थों में बहुत बार गाई गई है। प्राचीन भारत में मधु का प्रयोग आहार और औषध के रूप में होता था। धार्मिक कृत्यों में उसका प्रयोग प्राचीन काल से होता चला आया है। देवमूर्तियों के चरणामृत के पाँच पवित्र पदार्थों में मधु भी एक है।" पर आज इन सबको भुलाकर हम सफेद जहर की तरह काम करनेवाली सफेद चीनी के मोह में फँसे हुए हैं।——सं०

गत अप्रैल मास के अंक में मैंने एक लेख 'मिठाई और स्वास्थ्य' शीर्षक, मिठाइयों से होनेवाली हानि पर लिखा था। उसपर कई सज्जन यह शंका उठा सकते हैं कि प्राकृतिक स्वास्थ्यशास्त्र के प्रचारक तो मनुष्य को उस मधुर और मिष्ट रस से ही वंचित रखना चाहते हैं, जिसको प्राचीन ग्रंथों में सब रसों में श्रेष्ठ कहा गया है और जो सात्विक रस माना जाता है। उनके समाधानार्थ निवेदन है कि प्राकृतिक स्वास्थ्यशास्त्री जनता को किसी भी प्राकृतिक रस व स्वाद से वंचित करना नहीं चाहते हैं। उनके मत से मनुष्य प्रत्येक प्राकृतिक रस का आस्वादन उन प्राकृतिक फलों, शाकों और अन्नों में कर सकता है, जो मनुष्य के शरीर के पोषक तथा स्वास्थ्यवर्धक और अतएव उसके प्राकृतिक आहार हैं। स्वास्थ्यशास्त्र की दृष्टि में तो केवल वे विकृत पदार्थ ही वर्जित हैं, जिनको मननशीलता और विवेक के अभिमानी मनुष्य ने अपनी विपरीतबुद्धि के बल से प्राकृत से विकृत बनाकर स्वास्थ्यापहारक रूप प्रदान कर दिया है। उदाहरण के लिए प्रस्तुत मिष्ट वा मधुर रस को ही ले लीजिये। शाकों और फलों में यह रस स्वप्राकृतिक रूप से विद्यमान है। उनके उपभोग से हम मिष्ट रस के आस्वादन का आनंद ले सकते हैं। विविध प्रकार की मिठाइयाँ तो विकृत अवस्था की कई सीढ़ियाँ नीचे के विकृत पदार्थ हैं। अर्थात् गन्ने का चूसना उसका प्रथम प्राकृतिक उपभोग है। उसको पेलकर निकाला हुआ रस विकार की प्रथम सीढ़ी है। रस से बनाया हुआ गुड़ विकार की दूसरी सीढ़ी है। अग्नि पर पककर बनने पर भी आयोडीन आदि कई क्षार गुड़ में सुरक्षित रहते हैं। गुड़ को स्वच्छ करके अर्थात् उसके क्षारों को दूर करके उससे जो सफेद चीनी बनाई जाती है वह, उसके विकार की तीसरी सीढ़ी है। श्वेतशर्करा (खांड) में दूध का विकार——मावा और गेहूँ, चने आदि अन्न के विकार सूजी और बेसन के रूप में श्वेतसार मिलाकर जो नानाप्रकार की मिठाइयाँ बनाई जाती हैं, वे विकार की चौथी सीढ़ी हैं। इन विकृतातिविकृत मिठाइयों से ही बचने का उपदेश जनहितकामनापूर्वक प्राकृतिकस्वास्थ्यशास्त्री करते हैं।

गन्ने से प्राकृतिक रूप में मिठास का स्वाद लेने के अतिरिक्त एक और द्रव्य मधु भी प्राकृतिक माधुर्य अथवा मिठास प्रदान करता है। मीठे का वाचक संस्कृत का मधुर शब्द इसी मधु से निकला है। मधुर से ही भाववाचक माधुर्य शब्द बनता है। मधु सर्वथा नैसर्गिक स्वास्थ्यप्रद पदार्थ है। उसके गुणों की महिमा प्राचीन आयुर्वेद के ग्रंथों में बहुत बार गाई गई है। प्राचीन भारत में मधु का प्रयोग आहार और औषध के रूप में प्रचुरता से होता था। धार्मिक कृत्यों में उसका प्रयोग प्राचीन काल से होता चला आया है। बालक के जनमते ही जातकर्म संस्कार में उसको मंत्रोच्चारणपूर्वक

महर्षि मनु के विधानानुसार मधु में घृत मिलाकर चटाया जाता है। विवाह संस्कार में भी मधु का प्रयोग मधुपर्क विधि में आवश्यक है। देवमूर्तियों के चरणामृत के पाँच पवित्र पदार्थों में मधु भी एक है। ईसाइयों के धर्मग्रंथ बाइबिल और मुसलमानों के पवित्र ग्रंथ क़ुरान में भी स्वर्गीय पदार्थों में मधु की गणना है। प्राचीन चीन में भी मधु को पवित्र पदार्थ और बलवर्धक माना जाता था। भारत के बड़े बड़े कविराजों का अनुभव है कि जो जन नित्य प्रति तुलसी और मधुमय पंचामृत का सेवन करते हैं, उन पर राजयक्ष्मा अथवा तपेदिक का आक्रमण नहीं होता और वे बहुत से रोगों से बचे रहते हैं। वैद्यक में मधु को योगवाही माना जाता है अर्थात् मधु जिस योग के साथ मिलाकर दिया जाय, उस योग का प्रभाव उससे दुगना हो जाता है, परिणामतः मधु सभी दशाओं में सभी प्रकृति के मनुष्यों के लिये उपयोगी है।

आजकल पश्चिम के समुन्नत महाद्वीपों––योरप, अमेरिका के वैज्ञानिक आहारशास्त्री भी मधु को उत्कृष्ट आहार बतलाते हैं। इसका कारण यह है कि मधुमक्षिकाएँ पुष्पों से ताजा पुष्परस और पुष्पराग लेकर मधु को बनाती हैं और इसलिये उसमें स्वास्थ्यसंरक्षक क्षारीय द्रव्यों की पर्याप्त मात्रा विद्यमान रहती है। मधु में (१) जल १४ भाग (२) मिठास ७८ भाग (३) खनिज द्रव्य १२ भाग (४) फ़ार्मिक एसिड गोंद आदि चिपचिपे पदार्थ तथा पुष्पराग आदि ४ भाग (५) लोहा, चूना, फ़ॉसफ़ोरिक एसिड आदि आवश्यकतानुसार पाये जाते हैं। उसमें मिठास दो शर्कराओं अंगूरी शक्कर और फल-शर्करा के रूप में विद्यमान है। ये दोनों प्रकार की शर्कराएँ मानव देह में बिना किसी प्रयास या उलटफेर के सीधी पच जाती हैं। वस्तुतः मानवदेह में पाये जाने वाले अधिकांश तत्त्व मधु में स्वल्प मात्रा में मिलते हैं। उसमें आवश्यक विटामिन भी होते हैं, अतएव मधु साधारण गन्ने की शर्करा की अपेक्षा अधिक बलप्रद और सुपच आहार है। औषधरूप में मधु हानिरहित मृदुविरेचक और कफनिःसारक है। उसमें विद्यमान स्नेहमय अम्ल आँतों की आकुंचनगति और पाचनक्रिया के उत्तेजक हैं, अतः निर्बल आमाशय और आँतों की मंद गति वाले मनुष्यों को मधु की मध्यम मात्रा पाचन और क्षुधा के लिए हितकारक है। उसका बड़ा गुण यह है कि उससे तुरंत पच जाने वाला आहार मिल जाता है। मधु मांसपेशियों के लिए सामर्थ्यवान ईंधन का काम देता है और परिणामतः कभी विश्राम न लेनेवाली सबसे अधिक सजीव और सबसे बड़ी मांसपेशी, हृदय के लिए अत्यंत लाभदायक है। मधु में वर्तमान चूने में देह की ग्रंथियों के रसों को नियमबद्ध निकालने का विलक्षण गुण है, इसलिए वह प्रत्येक आयु के बाल, युवा, वृद्ध स्त्री-पुरुषों के लिए समानरूप से बलदायक और हितकारी है। जो जन नित्यप्रति मधु का आहार करते हैं, वे अपने शरीर और मस्तिष्क में कार्यकारिणी शक्ति की वृद्धि करते हैं। अतः प्रत्येक गृह में शुद्ध मधु की बोतल विद्यमान रहनी चाहिए।

उसकी मात्रा शिशुओं के लिए ६ माशा, बालकों के लिए ८ माशा और युवाओं के लिए सवा तोला नियत है। शिशुओं को तो वह प्रायः माता के दुग्ध में मिलाकर दिया जाता है व चटा दिया जाता है। हृदय की निर्बलता तथा मूर्छा की दशा में गर्म जल में घोलकर पिलाया हुआ मधु ब्रान्डी या स्पिरिट ऑफ़ अमोनिया का प्रभाव दिखलाता है और उक्त औषधियों का हानिकारक दोष भी उसमें नहीं होता। डा० जे० एन्० डब्ल्यू० टामस ने "लेन्सिट" नामक पत्र के फ़रवरी १९२५ के अंक में फुप्फुस-प्रदाह (निमोनिया) के एक रोगी को एक सेर मधु खिलाने का वर्णन किया है। इस प्रयोग के बाद उसका तापमान नहीं बढ़ा और नाड़ी की गति भी नियमित रही। खांसी में मधु और नीबू का रस सममात्रा में मिलाकर बालकों को देने से बहुत लाभ होता हुआ देखा गया है। पश्चिम में मिठुआ रोग, हड्डी के टेढ़ेपन, पोषणह्रास आदि रोगों की चिकित्सा में अब काड मछली के यकृत के तेल के बने हुए पदार्थों और अन्य पेटेन्ट आहारों के स्थान में मधु का ही प्रयोग किया जाने लगा है। योरप वाले

चाय में चीनी के स्थान में मधु मिलाकर पीते हैं। अमेरिका वाले धारोष्ण दूध को ताजे मधु से मीठा करके पीते हैं। डेनमार्क के लोग मक्खन और रोटी के साथ मधु खाते हैं। स्विट्ज़रलैण्ड में भी किसान लोग शर्करा के स्थान में मधु का ही प्रयोग करते हैं। भारत के योगियों में यह पुरानी प्रथा अब तक चली आती है कि वे रात्रि को सोते समय एक चम्मच मधु शीतल जल में मिलाकर पीते हैं, उससे उनको निद्रा भले प्रकार आती है और शौच भी खुलकर हो जाता है।

मधु में यह विशेष गुण है कि वह स्वयं कभी सड़ता व बिगड़ता नहीं है, प्रत्युत जो पदार्थ उसमें डालकर रक्खे जायँ, उनको भी वह गलने, सड़ने व बिगड़ने से बचाता है। मधु में मुरब्बे के रूप में डाले हुए फल बहुत दिनों तक ठीक रहते हैं और उनका प्रयोग अति लाभदायक है। देह के आभ्यंतर में जाकर भी मधु सड़न को रोकता और दुर्गंध को हटाता है। मधु को सदा खाली आमाशय पर ही प्रयोग में लाना चाहिये और उसमें अधिक गर्म जल मिला कर भी न पीना चाहिए। इससे हानि की संभावना है।

शिशुओं को प्रथम नौ मास नियम से मधु दिया जाय तो उनको छाती के रोग नहीं होते। डा० केलॉग के मिचिगन (अमरीका) के स्वास्थ्यगृह में इसका परीक्षण किया गया और यह परिणाम निकाला कि जिन शिशुओं को प्रतिदिन मधु दिया गया वे, अन्य शिशुओं की अपेक्षा अधिक हृष्टपुष्ट और बलवान् बन गए। डा० केलॉग का कथन है कि जो जन अपने बालकों को रोगों से सुरक्षित रखना चाहें, उनको चाहिए कि वे भूलकर भी उनको कभी खांड, मिश्री व गुड़ न दें, किंतु जब आवश्यकता हो, मधु को ही अकेला या बकरी के दूध में मिलाकर पिलाएँ। मधु का आहार करनेवालों को जुकाम कभी नहीं होता।

मधु कोई बहुमूल्य वा दुर्लभ वस्तु भी नहीं है। साधारण मनुष्यों के लिए भी वह शुद्ध रूप में सुलभ हो सकता है। वे चाहें, तो बड़ी सुगमता से मधु-मक्षिकाओं को अपने घरों में पाल-पोसकर, उनसे मधु वैसे ही प्राप्त कर सकते हैं, जिस प्रकार वे अपने यहाँ गौ और बकरियों को पालकर उनसे दूध लेते हैं। गौ बकरियों के चारे पर जो व्यय होता है, मधु-मक्षिकाओं के लिए उसकी भी आवश्यकता न पड़ेगी, वे अपना आहार वन जंगल के फूलों से स्वयं संग्रह करके ले आती हैं। उनके रहने के लिए केवल लकड़ी के बने हुए मक्षिकाकोष्ठों की आवश्यकता पड़ेगी और उनकी देखभाल भी पालन-पोषण के रूप में अवश्य करनी होगी। हाँ, मधु-मक्षिका की पालनकला को सीख लेना आवश्यक है। यह कला मेरठ आदि के कई गाँधी आश्रमों में सीखी जा सकती है। उससे मनोरंजन के साथ साथ मधु जैसे उत्तम प्राकृतिक आहार की प्राप्ति अहिंसा के बिना थोड़े से परिश्रम से ही हो सकती है।

जिन मनुष्य के घरों के आसपास कुछ स्थान खाली पड़ा हो उसमें, यदि वे शाक, फलों और पुष्पों के कुछ पौधे लगा लें, तो सोने में सुगंध हो जाय। गाजर, टमाटर आदि शाकों और पपीता, केला, संतरा, अमरूद आदि फलों और गुलाब आदि पुष्पों के कुछ पौधे बहुत ही थोड़े परिश्रम से बहुत थोड़े स्थान में लगाए जा सकते हैं। उनके लगाने से उनकी नलाई और सिचाई आदि में व्यायाम का भी अवसर मिलता रहेगा, जो स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य है। उसके साथ ही जहाँ ताजे शाकों, फलों और पुष्पों की सुगंध की प्राप्ति होगी, वहाँ अपनी पाली हुई मधुमक्षिकाओं के उक्त पौधों के पुष्पों से पुष्परस और पुष्पपराग भी पास ही मिल जाया करेंगे। उसके लिए उनको दूर दूर न भटकना पड़ेगा। उक्त पुष्पों पर मधुमक्षिकाओं के परिभ्रमण से उनके पौधों पर फल भी बहुतायत से आयँगे, क्योंकि मधुमक्षिकाएँ ही नरनारी पुष्पों के पुंकेसर और गर्भकेसर को अपने बालों पर लगाकर और उड़कर उनके परस्पर संयोग कराने का साधन होती हैं। यही उनकी गर्भाधान क्रिया कहलाती है। इसीलिए बाग-बगीचे लगानेवालों को मधुमक्षिका पालन की सम्मति उद्यान-कलाविशारदों द्वारा दी गई है किन्तु इन सब बातों के लिए मनुष्य में ज्ञान-पिपासा, उत्साह, कार्यतत्परता,

[शेष पृष्ठ २८६ पर]

हमारी नज़र में

स्वास्थ्य के लिए शाक-तरकारियाँ--लेखक आयुर्वेद विशारद श्रीयुत् पंडित महेन्द्रनाथ पाण्डेय; मिलने का पता--स्वास्थ्य पुस्तक भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद; मूल्य १।)

यह पुस्तक बहुत अनुसन्धान के बाद लिखी गई है। इसके तैयार करने में न केवल प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रंथों का सहारा लिया गया है बल्कि पाश्चात्य अन्वेषकों के द्वारा उपार्जित ज्ञान से लाभ उठाया गया है। ग्यारह अध्यायों में लेखक ने इस विषय को समझाने की चेष्टा की है। सभी अध्याय आवश्यक और उपयोगी हैं पर 'रोग-निवारण में शाक-तरकारियों का उपयोग' विशेष लाभदायक है। पुस्तक की भाषा सरल और सुन्दर है और छपाई साफ़ और आकर्षक है।

पुस्तक में वर्णित दो-चार बातों से मेरा मत-भेद अवश्य है पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि पुस्तक बड़े काम की है और पाठकों और चिकित्सकों के हाथ में स्वास्थ्य-सुधार का एक प्रबल साधन सिद्ध होगी। विद्वान लेखक फलों पर भी एक ऐसी ही पुस्तक लिखें तो हिन्दी भाषाभाषियों का बड़ा उपकार हो।

--जानकीशरण वर्मा

तरुण--(मासिक)--संपादक श्री कृष्णनंदन प्रसाद; तरुण-कार्यालय, इलाहाबाद। वार्षिक मूल्य ३)

किशोरावस्था की सीढ़ियों पर चढ़कर आए तरुण को संसार बड़ा ही सुनहरा प्रतीत होता है, उसे सभी चीजें अपनी ओर आकृष्ट करती हैं। साहित्य, कला एवं मनोविकास के सभी साधनों को वह अपनाना चाहता है पर उसमें अनुभवजनित आलोचनात्मक दृष्टिकोण न होने के कारण वह प्रायः गलत चीजों के पीछे भटकता रहता है। उसे पथ-प्रदर्शक की जरूरत होती है। पथ-प्रदर्शन का यह गुरुभार 'तरुण' ने अपने कंधों पर लिया है और प्रसन्नता की बात है कि वह इसे बड़ी सुन्दरता से निभा रहा है। यह दो वर्ष से प्रत्येक मास अपने पाठकों की सेवा में साहस, स्वास्थ्य एवं उत्साह भरनेवाले लेखों के साथ जीवनोत्कर्ष के लिए अभीप्सित सभी विषयों पर मौलिक विचार पेश करनेवाली रचनाओं से भरा-पुरा पहुँचता है। अभिभावकों को अपने रक्षितों के लाभार्थ उनसे 'तरुण' का परिचय अवश्य कराना चाहिए।

प्रजा-सेवक (साप्ताहिक)—संपादक--अचलेश्वर प्रसाद शर्मा, प्रजा-सेवक कार्यालय, गाँधी बाजार, जोधपुर; वार्षिक मूल्य ४), एक अंक का पाँच पैसा।

स्वतन्त्र एवं राष्ट्रीय विचारवाले पत्र के लिए फांसी के तख़्ते सी जगह राजस्थान से यह पत्र अभी कुछ ही दिनों से निकलने लगा है। राजस्थान के कोने कोने से प्राप्त ब्रिटिश भारत के लिए दुर्लभ समाचार तो इसमें प्रति सप्ताह रहते ही हैं वहाँ की प्रजा, विशेषतया किसानों के करुण क्रन्दन के चीत्कारों से भी यह पत्र प्रतिध्वनित होता रहता है। उसकी समस्याओं को सुलझाना एवं उनमें जाग्रति पैदा करना ही इस पत्र का मुख्य उद्देश्य है। और जिस उत्साह के साथ पत्र अपने उद्देश्य की ओर बढ़ रहा है उससे भविष्य में इस पत्र से अनेक आशाएँ की जा सकती हैं। सम्पादक महोदय इस साहसपूर्ण प्रकाशन के लिए हमारी कृतज्ञता एवं बधाई के पात्र हैं।

बाल-हित (मासिक)—संपादक—श्री कालूराम श्रीमाली और श्री जनार्दन राय; बाल-हित कार्यालय, उदयपुर। वार्षिक मूल्य २)

बच्चे राष्ट्र की नींव हैं। उनकी उपेक्षा कर हम राष्ट्र को कभी शक्तिशाली नहीं बना सकते। पर हमारे यहाँ इस ओर उपेक्षा होती है और उनका लालन-पालन एवं अध्यापन बिलकुल अवैज्ञानिक ढंग से होता है। इस गलत दृष्टिकोण को बदलने के लिए बाल-हित

छ वर्षों से स्तुत्य प्रयास कर रहा है। इसका उद्देश्य है (१) माता पिताओं को बच्चों की शिक्षा के संबंध में उनके कर्तव्यों का ज्ञान कराना, (२) घर और स्कूल में मेल स्थापित करना। (३) बालहित की समस्याओं पर विचार करना और उनको सुलझाने का उपाय सोचना और इस उद्देश्य की पूर्ति करनेवाले उपयोगी लेख बाल-हित के प्रत्येक अंक में प्रकाशित होते हैं। एक स्तम्भ अभिभावकों के समस्या मूलक प्रश्नों का उत्तर देने के लिए भी है।

पत्र प्रत्येक माता-पिता एवं शिक्षक के लिए बड़ा ही उपयोगी है।

दी लाइफ नेचुरल——अंग्रेज़ी का यह द्वैमासिक पत्र गत अप्रैल मास से भारत के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सक एवं 'प्रैक्टिकल नेचर क्योर' सी ख्यातनामा पुस्तक के लेखक डा० शर्मा के० लक्ष्मण, बी० ए०, बी० एल्०, के संपादकत्व में पुदूकोटा से निकलने लगा है। इसके दो अंक हमारे सामने हैं। प्रत्येक में अनुभवी एवं विद्वान लेखकों द्वारा लिखे गए प्राकृतिक चिकित्सा संबंधी उपयोगी लेख हैं। भारत जैसे प्रकृति-प्रधान देश में भी अंग्रेजी सभ्यता के जोम में प्रकृति की उपेक्षा करनेवाले अंग्रेजी पढ़े-लिखों तक उसका संदेश पहुँचानेवाले इस पत्र का हम सादर स्वागत करते हैं एवं इसके अपने लक्ष्य की ओर अधिकाधिक अग्रसर होने की कामना करते हैं।

पत्र के प्रत्येक अंक में साधारण पुस्तक-साइज़ के पचास पेज होते हैं और वार्षिक मूल्य है डेढ़ रुपया।

विश्व-वाणी——देश की सबसे बड़ी समस्या हिन्दू-मुस्लिम एकता के हल में मदद पहुँचाने के लिए ही मुख्यतया विश्व-वाणी का जन्म हुआ है। इतिहास, धर्म, साहित्य आदि पर लिखे गए प्रायः सभी लेख इसी दृष्टिकोण को लेकर प्रस्तुत किए जाते हैं। पत्रिका को भारत के एवं विदेश के जिस ऊँची श्रेणी के लेखकों, विद्वानों एवं कलाकारों का सहयोग प्राप्त है अभी तक हिन्दी की किसी भी पत्रिका को नहीं प्राप्त हुआ है। अब तक ६ अंक निकल चुके हैं जिन्हें देखकर कहना पड़ता है कि विश्व-वाणी ने हिन्दी पत्रिकाओं का स्टैण्डर्ड बढ़ाने के लिए एक लंबा कदम रखा है।

पत्र के संपादक हैं श्री विश्वंभर नाथ और संरक्षक लब्धप्रतिष्ठ पं० सुन्दरलाल। पता——विश्व-वाणी कार्यालय, साउथ मलाका, इलाहाबाद। सुन्दर छपाई, अच्छे काग़ज और इतने चित्रों से विभूषित, विज्ञापन के आय की उपेक्षा करनेवाली इस पत्रिका का वार्षिक मूल्य ६) इस मंहगी के जमाने में कुछ भी नहीं है।

——वि० दा० मोदी

[पृष्ठ २८४ का शेषांश]

और परिश्रमानुराग होना चाहिए। भारतीयों को तो आलस्य-असुर ने कुछ ऐसा अपने वस में कर लिया है कि उनको परमावश्यक स्वस्वास्थ्यसंरक्षण की समस्या को सुलझाने की भी इच्छा नहीं होती। यही कारण है कि हमारे शरीर और आयुष्य का दिनोंदिन ह्रास हो रहा है। आयुमान घटकर २५, ३० वर्ष रह गया है, युवावस्था आने के पूर्व ही बुढ़ापा घेर लेता है। परमपिता हमें सुमति प्रदान करें कि हम अपना उद्धार कर सकें तथा मधुप्रभृति प्राकृतिक आहारों की ओर हमारी प्रवृत्ति हो। नैसर्गिक आहार विहार से ही हमारा स्वास्थ्य सुधर सकता है।

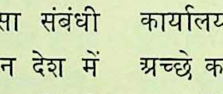

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन आने पर ही जबाब दिया जायगा जो पृष्ठ २९२ पर छपा है। महीने की १० तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा।--सं०

प्रश्न--'जीवन-सखा' पढ़कर मैंने और मेरी बहन भोजन में बहुत सुधार किया है। हम लोग सवेरे ल, दोपहर को कच्ची सब्जियों का सलाद और शाम को तीन तरह की पकी सब्जियाँ और गोश्त या अंडा ते हैं। आपको जानकर ताज्जुब होगा कि मेरी बहन वजन जो काफी मोटी है इस भोजन पर घटा है और वजन बढ़ा है। मेरे दुबले शरीर पर मांस आया है र चेहरा भी लाल हो गया है ताजगी भी ज़्यादा लूम होती है। पर एक दिक्कत है हम लोगों को जुकाम र जल्द जल्द होता है।

--अज़मत अली, क्वेटा

उत्तर--भोजन-सुधार से जो अनुभव आप लोगों हो रहा है वह बहुत ही ठीक है। आपने भोजन का बैठाया है वह तो आदर्श कहा जा सकता है। पर आपसे कहेंगे कि आप शाम के भोजन में मांस जहाँ हो सके कम उपयोग कीजिए, उसके बजाय मठा, या दूध का छेना काम में लाया जा सकता है। से अंडे ज़्यादा ठीक रहेंगे। कभी कभी उसके बजाय की घुघनी वगैरह भी ली जा सकती है या कुछ सूखे। वजन आप लोगों का धीरे धीरे और भी ठीक। इस भोजन पर जुकाम होना तो एक शुभचिह्न जिससे प्रतीत होता है कि भोजन आपके शरीर की उचित रीति से कर रहा है। इस बार सर्दी होते आप लोग दो-तीन दिन केवल फल खाकर रहें और फलाहार करते समय रोज एनिमा भी लें। सवेरे, शाम गहरी साँसें लें और अंगप्रत्यंग पर जोर डालनेवाली कुछ कसरतें करें। यदि नित्य साधारण स्नान के पहले आप अपने सारे शरीर को तलहथी अथवा सूखे तौलिए से रगड़ लिया करें तो जुकाम होना बन्द होना चाहिए।

प्रश्न--मेरा बच्चा तीन मास का है। मैं आपके बताए अनुसार ही भोजन कर रही हूँ। बच्चा खूब स्वस्थ है। कृपया बताइये कि बच्चे को अलग खाट पर या अलग कमरे में सुला सकती हूँ।

--राजकुमारी, मेरठ

उत्तर--बड़ी खुशी की बात है कि आप 'जीवन-सखा' के बताए अनुसार भोजन कर रही हैं एवं आपका बच्चा खूब स्वस्थ है। बच्चे के स्वास्थ्य के लिए यह आवश्यक है कि वह अलग बिछावन पर सोवे। उसे ज़्यादा आराम मिलेगा। सोने का समय ठीक रहने से बच्चा निर्विघ्न सोता रहेगा। उसे अलग अकेले सुरक्षित कमरे में सुलाना और भी ठीक होगा। हवा ज़्यादा शुद्ध मिलेगी। जिस कमरे में बच्चा सोता हो वहाँ कम से कम आदमियों को सोना चाहिए और कमरे की खिड़कियाँ खुली होनी चाहिए।

प्रश्न--चौंसठ वर्ष की उम्र होने पर मैंने व्यापार से हाथ खींच लिया। मेरे और मेरी स्त्री के लिए जो जायदाद खड़ी हो गई है, काफी है। परिवार में कोई है नहीं। लोगों से मिलने जुलने में मुझे उत्साह प्रतीत नहीं होता और सुस्ती सी बनी रहती है। डाक्टरों को दिखाया पर उन्हें

मेरे स्वास्थ्य में कोई भी गड़बड़ी नहीं मालूम हुई।

—वेद प्रकाश, अहमदाबाद

उत्तर—आपके प्रश्न से ऐसा प्रतीत होता है कि जो काम आप करते थे काफी बढ़ा था और उसमें आपका दिमाग़ उलझा रहता था। अब आपको उलझाव की कमी प्रतीत होती है और आप अपने भूत-जीवन एवं अपने बारे में सोचा करते हैं। आपके विचार उम्र और स्वास्थ्य पर केन्द्रित हो गए हैं। आपके पास कुछ ऐसा कार्य होना ही चाहिए जिसमें आप लगे रहें। कुछ धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन कीजिए। किसी गोशाला, विधवाश्रम, अनाथालय या ऐसी ही किसी संस्था के कार्य में हाथ बटाइए। उस संस्था की सहायता होगी और आपके दिमाग को हलका सा कार्य मिल जायगा और आप फिर जीवन में सजीवता का अनुभव करने लगेंगे।

प्रश्न—मेरा यकृत (लीवर) तो वर्षों से ठीक काम नहीं कर रहा है। इधर अपेण्डिसाइटिस की भी शिकायत हो गई है। मेरे डाक्टर साहब कहते हैं मुझे महीने भर के अन्दर अपेण्डिसाइटिस का आपरेशन करा लेना चाहिए।

—मैरिल कैलेन्डर, जबलपुर

उत्तर—अपेण्डिसाइटिस का शक मात्र होने पर या अपेण्डिसाइटिस होने पर भी आपरेशन की राय नहीं दी जा सकती। आप अपने डाक्टर से पूछ देखिए वे बतावेंगे कि अनेक बार आपरेशन करने पर अपेण्डिस में कोई गड़बड़ी नहीं मिली है। आँतों में भारीपन और दर्द जो इस रोग का लक्षण बताया जाता है वह बहुधा पुराने कड़े कब्ज के कारण होता है। कब्ज और ये सारे लक्षण धैर्यपूर्वक प्राकृतिक चिकित्सा करते रहने से कुछ दिनों में अपने आप चले जायँगे।

आपके लिए सबसे अच्छा होगा कि आप पहले दो तीन दिन का उपवास करें। उपवास में आप फलों के बजाय खीरे ककड़ी का रस या परवल तरोई सी तरकारियों का रस लें तो लीवर की तकलीफ में भी अधिक लाभ होगा। दिन में तीन चार बार वह रस पाव पाव भर की मात्रा में पिया जा सकता है। इच्छा भर पानी पीते रहें और रोज सवेरे सेर-डेढ़ सेर कुनकुने पानी का एनीमा लें।

इस उपवास काल में आपके सिर-दर्द हो जाय तो घबरायँ नहीं न इसे दूर करने के लिए आप चाय वगैरह पीने की सोचें। इस सिर-दर्द का अर्थ है कि शरीर की गंदगी खून में आगई जहाँ से जल्द ही निकलेगी। जहाँ तक हो सके आराम कीजिए। नींद सिरदर्द भगाने की बड़ी पुरअसर दवा है।

जहाँ दर्द होता हो वहाँ पर गरम पानी से भीगे तौलिए से सेकिए। सेकते समय बीच बीच में थोड़ी देर के लिए ठंडे पानी से भीगा तौलिया भी दर्दवाले मुकाम पर रखिए।

तीन दिन के रसाहार के बाद एक दिन केवल दिन में तीन बार फल खाकर रहें और इसके बाद सात दिन तक इस प्रकार भोजन का क्रम रखें:—

सवेरे सात बजे—ताजे फलों का नाश्ता।

दिन के ग्यारह बजे—कच्ची तरकारियों का सलाद और थोड़ी भिगोई हुई किशमिश।

तीन बजे शाम—पाव भर फल का रस या तरकारियों का सूप।

शाम को सात बजे—दो पकी तरकारियाँ और कुछ नारियल की गिरी या बादाम।

एक सप्ताह इस क्रम को चलाने के बाद आप दोपहर को कुछ रोटी भी लें और शाम का भोजन फल दूध (इस समय आप दूध) कर दें।

रोज तीन-चार मील टहलना शुरू कीजिए और सवेरे ठंढे पानी से नहाकर बदन को तौलिए के बजाय तलहथी से रगड़ रगड़ कर सुखा लीजिए।

आपका सा रोग दो चार सप्ताह में चला जाय सो बात नहीं है। चिकित्सा आरंभ करते ही लाभ तो आपको प्रतीत होने लगेगा पर आप इस क्रम को दो चार महीने जरूर चलाइये। सुस्त कमजोर आँतों को अपना काम पूरी तौर से करना सीखने में समय लगेगा। जब भी आपको ज़्यादा गड़बड़ी प्रतीत हो उपवास के क्रम से फिर एक बार सारी चर्या दोहरा दीजिए।

—वि० दा० मोदी

वैद्यों, हकीमों, डाक्टरों के लिये अद्भुत।

गोलीं तथा टिकियाँ बनाने की

मशीनें

हमने स्वयं पीतल की 'गोलीं तथा टिकियाँ बनाने की मशीनें' बड़े कठिन परिश्रम के साथ बनाकर तय्यार की हैं, जो कि हर छोटे बड़े साइज़ की गोलीं तथा टिकियाँ' १ घन्टे में कई हज़ार बना सकती हैं। अब तक इतनी सस्ती, सुन्दर और टिकाऊ मशीनें भारतवर्ष में किसी ने नहीं बना पाईं। केवल प्रचार तथा वैद्यों, डाक्टरों के आग्रह पर बनाई गई हैं। रेट गोली मशीन का मूल्य ३) तथा टिकिया मशीन का मूल्य ४) लागतमात्र रक्खा गया है। डाकख़र्च हर-हालत में प्रथक से देना होगा।

नोटः— दोनों एक साथ मंगाने वाले को सिर्फ़ ७) में मिलेंगी।

मिलने का पता— दी भारत फ्रेन्ड एन्ड को०,
तिलियानी-मैनपुरी।

सचित्र मासिक पत्र] **धर्म-दूत** [वार्षिक १); नमूना मुफ्त

यदि आप संसार के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष भगवान बुद्ध की जीवनी और उनका अमूल्य उपदेश पढ़ना चाहते हैं; यदि आप बौद्ध कालीन भारतीय संस्कृति, सभ्यता, साहित्य और कला का अध्ययन करना चाहते हैं; यदि आप यह जानना चाहते हैं कि संसार में भारतीय धर्म, संस्कृति, साहित्य और कला का कैसे प्रचार हुआ तो आज ही 'धर्मदूत' का ग्राहक बनिये।

पता—महाबोधिसभा, सारनाथ (बनारस)

मठा उसके गुण तथा उपयोग

मठा उपयोगी क्यों है? क्या आपने कभी इसपर विचार किया है? यदि नहीं तो इस पुस्तक को पढ़िए और मठा के लाभालाभ से परिचित हो कर उसके उपयोग की समुचित विधि जानिए। मूल्य ।)

पता—जीवन-सखा, इलाहाबाद

जीवन सखा के सन् '३६ के अंकों में प्रकाशित कुछ लेख

- रोग किस प्रकार उत्पन्न होता है
- भोजन और स्वास्थ्य
- गठिये को मार भगाया
- भोजन के नियम
- मेरी आँखें फिर से नई हो गईं
- लेटे लेटे कसरत
- बुखारों का अचूक इलाज
- बच्चों की पालन विधि
- गर्मी के महीनों में भोजन
- कब्ज
- स्नान की विधि और उपयोग
- जीवन शक्ति
- हैजा: कारण और अचूक चिकित्सा
- आम और जामुन
- बहुमूत्र रोग का अचूक इलाज
- जवान और सुन्दर बने रहो
- मेरी खाँसी कैसे अच्छी हुई
- मैलेरिया या जाड़ा बुखार
- मोटापा को दूर करो
- बवासीर का शर्तिया इलाज
- स्वास्थ्य के लिये १५ मिनट
- सुन्दरता बढ़ाने का नुस्खा
- बेरीबेरी
- बालों की रक्षा
- प्रकृति की अचूक शक्ति

सैकड़ों चित्रों से विभूषित एवं अनेक जीवनोपयोगी लेखों से भरे ३५० से अधिक पृष्ठों के इस पोथे का मूल्य डाक खर्च समेत केवल २॥) है। आज ही लिखिए।

मैनेजर,
जीवन-सखा, इलाहाबाद

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है ।

१—एक छटाँक शहद पानी में मिलाकर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है ।
३—शरीर में ताकत आती है ।
४—दूध में मिलाकर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुरुषत्व बढ़ता है।
५—शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है ।
६—यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है ।
७—शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये **जीवन-मधु** का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है ।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=) एक रुपया दो आना ।

मिलने का पता — मैनेजर—**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह** — ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

हिन्दी की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका

वीणा

सम्पादक
श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

प्रकाशक
श्रीमध्यभारत-हिन्दी साहित्य-समिति

डॉक्टर बाबूराम सक्सेना, एम. ए., डी. लिट्., भू. पू. प्रधान-मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयागः—'वीणा' हिन्दी की उच्च कोटि की पत्रिका है और मातृ-भाषा और साहित्य की प्रचुर सेवा कर रही है ।

आगामी विशेषांक दीवाली के अवसर पर

वार्षिक मूल्य ४) नमूने का अंक फ्री नहीं भेजा जाता एक प्रति ।=)

व्यवस्थापक—'वीणा', इन्दौर

प्रश्नोत्तर-कूपन जुलाई '४१

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख काग़ज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ

शाक तरकारियों के गुण दोष क्या हैं? उनका स्वास्थ्य की अवस्था में और रोग हटाने के लिए किस प्रकार उपयोग किया जाय? किन शाक तरकारियों में कौन से विटामिन और प्राकृतिक लवण होते हैं और उनका कार्य क्या है? आदि प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए वैद्यक-शास्त्र से लेकर आज तक वैज्ञानिक अनुसंधानों एवं प्राकृतिक चिकित्सकों के अनुभवों के आधार पर लिखी हुई यह पुस्तक पढ़िए। मूल्य १।)

पता :: **स्वास्थ्य पुस्तक भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद**

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें

सन् १९३६ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३७ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३८ (दो अंक नहीं हैं)	मूल्य २)
सन् १९३९ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९४०	मूल्य ५)

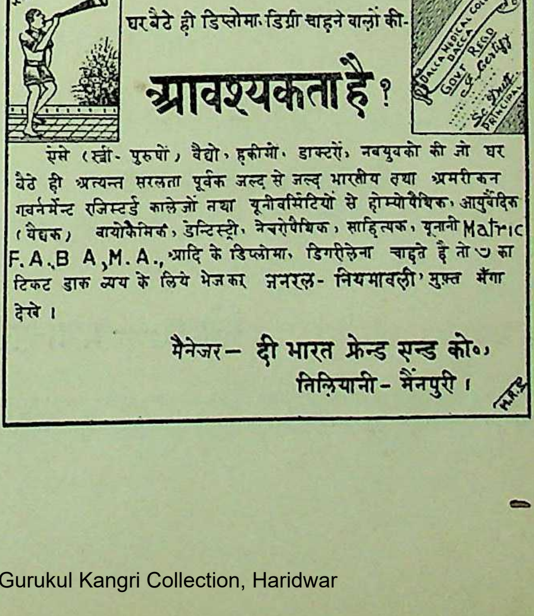

घर बैठे ही डिप्लोमा डिग्री चाहने वालों की-

आवश्यकता है?

ऐसे (स्त्री-पुरुषों), वैद्यो, हकीमों, डाक्टरों, नवयुवको की जो घर बैठे ही अत्यन्त सरलता पूर्वक जल्द से जल्द भारतीय तथा अमरीकन गवर्नमेंन्ट रजिस्टर्ड कालेजों तथा यूनीवर्सिटियों से होम्योपैथिक, आयुर्वेदिक (वैद्यक), बायोकैमिक, डेन्टिस्ट्री, नेचरोपैथिक, साहित्यक, यूनानी Matric F.A., B A, M.A., आदि के डिप्लोमा, डिगरीलेना चाहते है तो ७ का टिकट डाक व्यय के लिये भेजकर 'जनरल-नियमावली' मुफ़्त मँगा देखे।

मैनेजर— **दी भारत फ्रेन्ड एन्ड को०,**
तिलियानी-मैंनपुरी।

अपना स्वास्थ्य और दूसरों का स्वास्थ्य

प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के तत्वावधान में योग तथा प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति सिखाने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। शिक्षाकाल दो दो सप्ताह का प्रायः चार मास के अन्तर पर साल भर में तीन बार होगा। पहला शिक्षणकाल गत मार्च मास में हुआ था। दूसरा १८ अगस्त '४१ को आरम्भ होगा। पुराने विद्यार्थियों को आने की सूचना एक सप्ताह पहले ही दे देनी चाहिए और नये विद्यार्थियों को १ली अगस्त तक प्रार्थना-पत्र भेज देना चाहिए।

प्रत्येक दो सप्ताह के शिक्षणकाल के लिए फीस केवल पाँच रुपया होगी जो प्रार्थना-पत्र के साथ भेज दी जानी चाहिए। शिक्षण का विस्तृत विवरण-पत्रक दो आने के डाक-टिकट भेजने से प्राप्त हो सकेगा।

शिक्षाकाल की समाप्ति पर शिक्षार्थियों की परीक्षा होगी जो उत्तीर्ण होंगे वे एन० डी०, डी० वाई० (N.D.,D.Y.) की डिगरी प्राप्त करेंगे।

८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

बालेश्वर प्रसादसिंह
डाइरेक्टर-प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

देशी राज्योंकी चहारदिवारी से निकलनेवाला

सर्वप्रथम लोकप्रिय
राष्ट्रीय साप्ताहिक

प्रजा-सेवक

अपने ढंग का निराला
राष्ट्रीय पत्र है।

सम्पादक—अचलेश्वर प्रसाद शर्मा

यदि आप राजपूताने के देशी राज्यों में प्रजा की वर्तमान स्थिति, जागीरदारों के अवांछनीय कारनामे तथा दूसरी अन्य अजीबो गरीब बातें जानना चाहते हैं तो शीघ्र 'प्रजा-सेवक' के आज ही ४) भेजकर ग्राहक बन जाइये।

एक वर्ष में चार विशेषांक

ग्राहकों को घर बैठे मुफ्त ही मिलेंगे।

"जागीरदार अङ्क" शीघ्र ही प्रकाशित हो रहा है।

यह अख़बार प्रत्येक रियासत में जाता है और अपनी निर्भीक नीति के कारण ग्राहक-संख्या दिन-प्रति-दिन बढ़ रही है। इसलिये यह विज्ञापन का सर्वोत्तम साधन है। रेट बहुत ही उदार हैं। निम्न पते से पत्र-व्यवहार करें:—

मैनेजर—'प्रजा-सेवक' कार्यालय, जोधपुर

आरोग्य-शास्त्र का प्रतिनिधि-पत्र

जीवनसखा

के

सम्बन्ध में : हम सब एक मत हैं

Dr. S. C. Das, L.M.S. (Cal.), L.R.C.P. & S. (Edin.), L.R.F.P. & S. (Glas.) L.M. (Dub.), Sewagram, Wardha, C. P.

"A splendid and noble attempt to spread correct views about health & its preservation."

पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी, टीकमगढ़

"मुझे इस समय जितने पत्र निकल रहे हैं उनमें जीवन-सखा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जँचता है।"

श्री सीताराम जी सेकसरिया, कलकत्ता

"जीवन-सखा निकाल कर आप लोग देश की सेवा कर रहे हैं। ऐसे पत्रों से पढ़नेवालों का भला होता है।"

जनार्दन राय नागर, सम्पादक 'बालहित', उदयपुर

"जीवन-सखा ने तो मेरी माँ का जीवन ही बदल दिया है। उन्होंने इसी को पढ़कर अपने शरीर का कल्प सा कर दिया है। जीवन-सखा......ने मेरी माँ को स्वास्थ्य बख़्शा है।"

'सरस्वती', प्रयाग

"प्रत्येक साध्य तथा असाध्य मर्ज का निवारण प्रकृति द्वारा हो सकता है, यही इस पत्र का संदेश है।"

'नवशक्ति', पटना

"यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं में जीवन-सखा का सर्वोच्च स्थान है। छपाई सफाई तो आदर्श है।"

'विशाल-भारत', कलकत्ता

"जीवन-सखा सब तरह से उपयोगी है।"

'जीवन-साहित्य', नई दिल्ली

"आरोग्य शास्त्र का सुन्दर मासिक होने से यह वास्तव में जीवन-सखा ही है।"

[illegible] और अपनी जीवन के [illegible] को ये पुस्तकें [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

(१९) [illegible]

(२०) [illegible]

(२१) [illegible]

Nature Cure by H. Lindlahr [illegible]

Practical Nature Cure by Dr. K. L. Sharma [illegible]

[illegible] by Dr. K. L. Sharma [illegible]

The Nature Cure of Eye Defects by Dr. [illegible]

Food Diet in Health and Disease by [illegible]

[illegible]

[illegible]

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

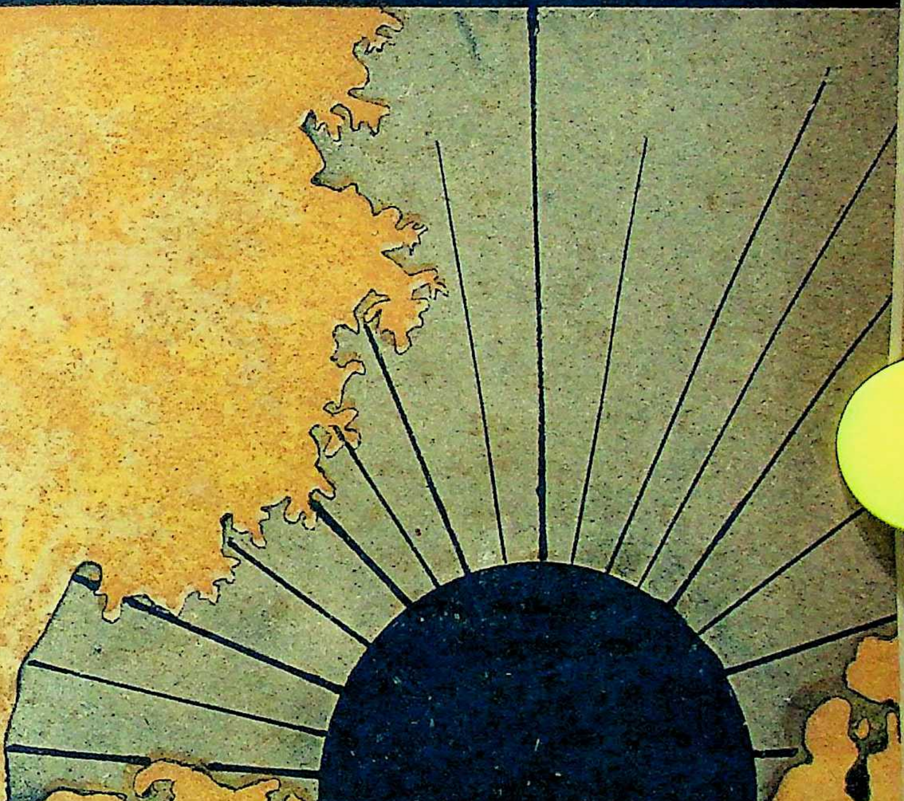

७ अगस्त को [illegible]

अगस्त
१९४१

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह : : विट्ठलदास मोदी

अपना स्वास्थ्य और दूसरों का स्वास्थ्य

प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के तत्वावधान में योग तथा प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति सिखाने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। शिक्षाकाल दो दो सप्ताह का प्रायः चार मास के अन्तर पर साल भर में तीन बार होगा। पहला शिक्षणकाल गत मार्च मास में हुआ था। दूसरा १८ अगस्त '४१ को आरम्भ होगा। पुराने विद्यार्थियों को आने की सूचना एक सप्ताह पहले ही दे देनी चाहिए और नये विद्यार्थियों को १ली अगस्त तक प्रार्थना-पत्र भेज देना चाहिए।

प्रत्येक दो सप्ताह के शिक्षणकाल के लिए फीस केवल पाँच रुपया होगी जो प्रार्थना-पत्र के साथ भेज दी जानी चाहिए। शिक्षण का विस्तृत विवरण-पत्र दो आने के डाक-टिकट भेजने से प्राप्त हो सकेगा।

शिक्षाकाल की समाप्ति पर शिक्षार्थियों की परीक्षा होगी जो उत्तीर्ण होंगे वे एन० डी०, डी० वाई० (N.D.,D.Y.) की डिगरी प्राप्त करेंगे।

८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

बालेश्वर प्रसादसिंह
डाइरेक्टर-प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

१—एक छटाँक शहद पानी में मिलाकर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है।
३—शरीर में ताकत आती है।
४—दूध में मिलाकर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुरुषत्व बढ़ता है।
५—शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है।
६—यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है।
७—शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये **जीवन-मधु** का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) १=) एक रुपया दो आना।

मिलने का पता — मैनेजर—**प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह** — ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

अगस्त
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क ८

इस अङ्क में

विषय	लेखक	पेज
१. अपने विचार--	.. ..	२९०
२. बापू का वायु-सेवन--	श्रीयुत प्रभुदयाल विद्यार्थी, विशारद	२९१
३. उपवास की महत्ता--	श्रीयुत आनन्द वर्धन	२९३
४. मेरा चश्मा छूटा--	भदन्त आनन्द कौसल्यायन	२९७
५. तम्बाकू--	श्रीयुत विश्वनाथ प्रसाद, एम० एस०	३०३
६. सप्राण भोजन--	श्रीयुत गङ्गा सहाय ..	३०८
७. प्राकृतिक-चिकित्सा का महत्त्व--	श्री भिक्षु का भाषण	३११
८. मेरे मुँह के छाले--	श्रीयुत वंशीधर शर्मा	३१३
९. हमारी नज़र में--	.. ..	३१५
१०. प्रश्नोत्तर--	.. .. ..	३१६

अगले अंक
में
क्या रहेगा ?

१. रोगों के सम्बन्ध में
डाक्टर एस० सी० दास, वर्धा

२. आँखों के सामने मक्खी उड़ना
डाक्टर-आर० एस० अग्रवाल

३. प्राकृतिक चिकित्सा ही क्यों
प्रोफेसर धर्मदेव शास्त्री

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

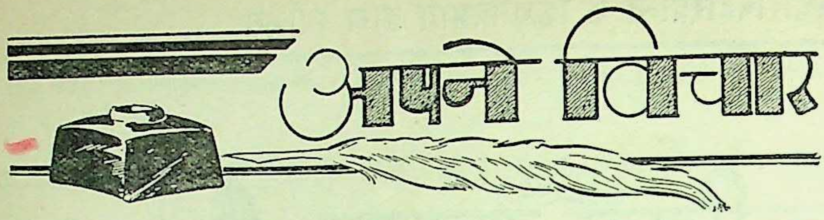

अपने विचार

भोजन की समस्या और सन्तान-निग्रह

बहुत से लोग इस फिक्र में पसामन्दा हैं कि हिन्दुस्तान की जन-संख्या बढ़ी जा रही है। बस सारी दुर्दशा की जड़ वह इसी को मानते हैं। और मानते हैं यहाँ तक कि इस बढ़ती हुई जन-संख्या को खाना कहाँ से मिलेगा। जब और कुछ समझ में नहीं आता तब संतान-निग्रह की बात उठाई जाती है। 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है' से सहज-सूत्र को वे क्यों भूल जाते हैं? जो पैदा हो जायँगे उनके खाने का ठिकाना हो ही जायगा। अभी तो जितना लोग खा रहे हैं उससे आधे में ही काम चल सकता है और आज से ज़्यादा तन्दुरुस्त रह सकते हैं—बशर्ते कि उन वस्तुओं को अपनी असली शक्ल में खायँ, आग पानी के संसर्ग से बिगाड़ें न। एक तरफ तो अंक पेश करते रहते हैं कि हिन्दुस्तान के हर आदमी के पीछे साल भर में ढाई-तीन सेर चीनी हिस्से में आती है। चीनी के ग्राहक ज्यादा तो ऐसे हैं जो साल में मनों खा जाते हैं। बेचारे बहुत गरीब तो साल में छटाँक आध छटाँक भी नहीं पाते। अगर यही चीनी, गुड़ की शक्ल में रहती तो तुरत सिर पीछे ढाई सेर के बजाय पाँच सेर मीठा पड़ जाता और वह शरीर में पोषण का काम देता जब कि चीनी तो स्वास्थ्य बिगाड़ने के काम में आती है। हाँ, जीभ का चार अंगुल का स्वाद है। पेट में जाकर तो वह गड़बड़ ही मचाती है।

ईख के मौसम में लोगों को रस पीने-पिलाने का शौकीन बनाना चाहिए। ताड़ के पेड़ से जो रस निकलता है—जिस शुद्ध रस का नाम 'नीरा' है और बिगाड़कर जिसको ताड़ी की शक्ल में बदल लेते हैं उससे करोड़ों आदमियों की मीठे की सही आवश्यकता मजे में पूरी हो सकती है।

चावल में से जितना कण बरबाद कर दिया जाता है उससे करोड़ों का पुष्टिकर खाद्य हो सकता है। आदमी चोकर के बिना कब्ज भोगता है और चोकर गाय-बैलों को खिलाया जाता है। उन्हें भी भोजन देना जरूरी है पर उनके लिए इसके बदले में दूसरी उपयोगी चीजें हैं जिनसे उन्हें पूरा पोषण मिल सकता है। जिस आदमी को छ छटाँक आटे की रोटी चाहिए उसका काम ढाई तीन छटाँक गेहूँ से मजे में चल सकता है। उबली हुई तरकारी आध सेर चाहिए तो कच्ची पाव भर बस है, यही हाल दूध का है। 'संतान-निग्रह' 'संतान-निग्रह' चिल्लानेवाले इन प्रश्नों की ओर तो ध्यान ही नहीं देते और उनका ध्यान आकर्षित भी किया जाय तो असंभव और सनक कहकर छोड़ देते हैं। इसका कारण यह है कि वे अपने यूरोपियन गुरुओं से प्रेरणा पाते हैं, उन्होंने जो पाठ पढ़ा दिया उसे तोते की तरह रटे जाते हैं। यूरोप की पोथियों में जो कुछ पढ़ लिया बस प्रमाण मानकर चलने लगे। अब यूरोपवालों का नाश होने लगा है इसके बाद वे बोलेंगे, संतान बढ़ाओ, संतान बढ़ाओ तब वे भी बोलेंगे संतान बढ़ाओ, संतान बढ़ाओ। दलीलों का क्या? उन्हीं की बात उन्हीं की दलील कुछ हेर-फेर के साथ यहाँ के लिए फिट करने की कोशिश करेंगे।

ऐसे लोगों से हम यह निवेदन करना चाहते हैं कि अन्य चाहे जिस कारण से भी संतान-निग्रह की बात की जाय, भोजन की फिक्र तो छोड़ ही देनी चाहिए, कम से कम जी पर से इसका बोझ तो उतार ही देना चाहिए। बहुत सामान है, जो नष्ट हो रहा है, उसे बचा लेना है। और इस मामले में गरीब अमीर एक ही हैं। यह सही है कि अमीर ज्यादा नष्ट कर रहा है पर गरीब भी जो इस्तेमाल करता है वह बिगाड़ कर ही करता है।

✧

बापू का वायु-सेवन

श्रीयुत प्रभुदयाल विद्यार्थी 'विशारद'

"एक दिन की बात है गाँधी जी की तबियत कुछ सुस्त और खराब थी, उस दिन काम के बोझ से काफी थके हुए से मालूम पड़ते थे। हम लोगों ने सोचा कि शायद आज उनका घूमना बन्द रहेगा। परन्तु जब एक बहिन ने आकर पूछा "बापूजी! आज घूमने जाँयगे कि नहीं?" तो बापू ने हँसते हुए कहा "जिस दिन मैं अपना घूमना बन्द कर दूँगा उस दिन मेरे बारह बज जाँयगे।"

प्रातः काल और शाम का घूमना स्वास्थ्य के लिए कितना लाभप्रद है इसको सभी लोग जानते हैं परन्तु इस नियम को मानकर कितने लोग चलते हैं यह एक मुख्य सवाल है। घूमने की तारीफ सभी लोग करते हैं परन्तु शायद ही सैकड़े में दो चार आदमी नियमित रूप से शाम-सुबह प्रकृति-सौंदर्य की शोभा निरखते हुए हवा खाने निकलते हों। बहुधा देखा जाता है कि लोग प्रातःकाल आठ-आठ बजे तक चारपाई को छोड़ना एक तरह से तनहाई की सजा समझते हैं। फिर भला उनका स्वास्थ्य क्यों नहीं खराब होगा?

संसार में जितने महापुरुष और महात्मा हुए हैं वे प्रायः खुले मैदान और शान्त वातावरण में ही अपने रहने का स्थान बनाते हैं। महात्मा गाँधी आजकल एक देहात के खेतों में अपना अड्डा जमाए हुए हैं। उधर विश्व के कवि रवीन्द्रनाथ जी ठाकुर ने मरुभूमि में जमकर उसे विश्व में ऐतिहासिक प्रसिद्धि दे दी है। ग्राम के शान्त वातावरण में सेवाग्राम का सन्त कितना रम गया है उसका अनुभव उसके निकट रहनेवाले ही कर सकते हैं। दुनिया के कोलाहल से दूर रहकर वह अपनी अमरवाणी इस छोर से उस छोर तक एक दरिद्र निरक्षर ग्राम से फैला रहा है।

उनकी महानता, त्याग और सेवा परायणता से बच्चा बच्चा वाकिफ है। परन्तु यह कम लोग जानते हैं कि उन्होंने अपने जीवन को कितना सरल बना लिया है और घड़ी की सुई की तरह अपने दैनिक कार्य और जीवन को बनाया है।

प्रातःकाल और शाम के वायु सेवन को वे कितना महत्त्व देते हैं और इस नियम का कितनी कड़ाई से वे पालन करते हैं यह शायद सब लोग न जानते हों। पहली बात तो यह है कि उन्होंने अपने रहने का मकान बहुत खुली जगह में और कच्ची मिट्टी का बनाया है। उस झोपड़ी की सादगी अपनी एक निराली शान रखती है। झोपड़ी का वातावरण बहुत शान्त और गम्भीर है। झोपड़ी का दर्शन करने से ही मालूम होता है कि इसमें कुछ अनोखा आकर्षण है। उस छोटी मड़ैया में किसी प्रकार का आडम्बर और दिखावा नहीं है। बाँस की लकड़ियों और खपरैलों की सहायता से वह बनाया गया है। उसकी बनावट भी ऐसी रक्खी गई है जिससे चारों तरफ की खुली हवा मिलती रहे। शहर की दमघोटू हवा का वहाँ स्पर्श नहीं है। सेवाग्राम के मकान भारतीय आदर्श ग्राम की तरह बनाए गए हैं। कम खर्चे से अच्छी हवा और रोशनी मिलती रहे। जीवन और स्फूर्ति के लिए खुली हवा और रोशनी कितनी आवश्यक चीज है क्या इस पर कुछ लिखने की जरूरत है?

हाँ, गाँधी जी कितने ही थके और काम में लगे हों फिर भी वे अपने घूमने का क्रम कभी बन्द नहीं करते। एक दिन की बात है? उनकी तबियत कुछ सुस्त और खराब थी; उस दिन काम के बोझ से काफी थके हुए

से मालूम पड़ते थे। हम लोगों ने सोचा कि शायद आज उनका घूमना बन्द रहेगा। परन्तु जब एक बहिन ने आकर पूछा "बापूजी! आज घूमने जाँयगे कि नहीं?" तो बापू ने हँसते हुए कहा "जिस दिन मैं अपना घूमना बन्द कर दूँगा उस दिन मेरे बारह बज जाँयगे।" थोड़ी देर के बाद ही अपनी जगह से हरे राम की अन्तरध्वनि निकालते हुए खड़े हो गए। और अपनी बाँस की छड़ी लिए हुए उसकी सहायता से एक मील का वायुसेवन करके लौटे।

घनघोर पानी गिर रहा हो, बिजली तड़प रही हो, जोर की हवा चल रही हो, दाँत कटाकट बोल रहे हों, तब भी गाँधी जी घूमने का क्रम बन्द नहीं करते। उस दिन अपने कमरे या बरामदे में ही अच्छी तरह से चक्कर लगाकर घूमने की पूर्ति करते हैं।

उनका घूमने का क्रम प्रातःकाल ७ से ८ बजे के भीतर होता है और शाम को ६ से ७ के बीच में।

हम देखते हैं जब वे कहीं बाहर प्रवास की यात्रा करते हैं या वहाँ से वापस लौटते हैं तब स्टेशन से सीधे मोटर पर बैठकर अपने निवास-स्थान पर नहीं पहुँचते बल्कि वहाँ से पैदल चलकर अपने स्थान पर पहुँचते हैं। ताकि गाड़ी में बैठे रहने का बदला यहाँ निकाल सकें और वायुसेवन का मजा ले लें। बहुत कम ऐसा देखा जाता है जब कि ये सीधे मोटर में बैठकर अपने स्थानपर जाते हैं। कभी कभी भीड़ के डर के कारण उन्हें मोटर की शरण लेनी पड़ती है। अक्सर वे पैदल ही चलना पसन्द करते हैं। कभी कभी तो पाँच पाँच मील की दूरी पैदल ही तय करके अपने स्थान पर पहुँचते हैं। अपनी शक्ति भर ये पैदल चलकर ही खुली हवा और मैदान से होकर निकलना चाहते हैं।

आश्रम के छोटे छोटे बालकों को हँसाते खिलाते हुए वे सुबह शाम को अपने साथ ही वायुसेवन के लिए ले जाते हैं। कभी कभी तो उनके साथ दौड़ भी लगाने लगते हैं जिससे बालकों में दौड़ने की शक्ति पैदा हो। ऐसा करने से बच्चों के चेहरों पर बड़ी प्रफुल्लता और चपलता आ जाती है। गाँधी जी हमेशा सुबह-शाम कम से कम एकाध घंटा अवश्य घूमने निकलते हैं। एकाध मील की दूरी तक घूमने अवश्य जाते हैं। घूमने के प्रोग्राम में रद्दोबदल कभी नहीं करते हैं। हाँ, जब कभी बहुत आवश्यक काम से उस वक्त रुक जाते हैं तब रात के आठ बजे भी घूमते हुए देखे गए हैं।

सेवाग्राम से वार्धा वर्किंग कमेटी की बैठकों के दिनों में जब रात के आठ, साढ़े आठ बजे शाम तक वे उसमें लगे रहते थे तब छुट्टी मिलते ही घूमते हुए सेवाग्राम की ओर पैदल निकल पड़ते थे। अच्छी तरह घूम लेने पर मोटर पर बैठकर सेवाग्राम पहुँचते। कभी कभी तो वहाँ तक पैदल ही चलकर पहुँचते थे।

नियमित वायुसेवन से जीवन दीर्घ तो होता ही है साथ ही साथ दिमाग में एक तरह की स्फूर्ति आती है। दिन भर का बँधा हुआ काम भी बड़ी आसानी से समाप्त होता है। बदन हल्का, प्रफुल्लित और उत्साहित रहता है। कठिन से कठिन काम आसानी से समाप्त हो जाता है। घूमने से आलस्य मिटकर बदन में स्फूर्ति पैदा होती है। बदन के लिए यह बिजली का बटन है। नियमित ठीक वक्त पर वायु सेवन से कितनी ही बीमारियाँ जड़ मूल से नष्ट हो जाती हैं। वायु सेवन में यह शक्ति और गुण है जो करोड़ों रुपए की अक्सीर दवाओं में नहीं। वायु सेवन शरीर के लिए सबसे बढ़कर अक्सीर दवा है। जो लोग बराबर वायु सेवन के आदी हैं वे कदाचित ही कभी बीमार पड़ते हैं। महापुरुषों ने केवल वायु सेवन से ही अपने जीवन को दीर्घ बनाया है। अमृतमय वायुसेवन का व्यवहार और प्रचार बच्चे बच्चे को करना चाहिए।

उपवास की महत्ता

श्रीयुत आनन्द वर्धन

> **"अख़बारों में एक विज्ञापन निकला करता है। एक हाथ से माथे पर कील रखकर दूसरे हाथ से हथौड़ा लगाना चाहता है कि इस तरह अपनी बात दिमाग़ में घुसा देते हैं। अगर हम भी इसी तरह किसी प्रकार लोगों के दिमाग़ में यह घुसा सकें कि उपवास बड़ी प्यारी हितकारी वस्तु है तो कितना काम हो। पर मालूम यह होता है कि लोग ऐसे नहीं सुनेंगे।"**

एक दिन जुकाम हो गया। जी चाहा दो-तीन दिन का उपवास कर लूँ, सफाई हो जाय। उपवास पर इतना पढ़ा कि किए बिना जी नहीं माना। इतने फायदेवाली चीज को कैसे छोड़ा जाय। मेरा खयाल है कम से कम सैकड़े नव्वे रोग उपवास से जा सकते हैं और जीवन बहुत सुखी रह सकता है। पर हमारी आदत और संस्कार खाने के प्रति कुछ ऐसे बेढब हो गए हैं कि जैसे 'राम कहत जनु जूड़ी आवई' वैसे ही 'उपवास कहत जनु जूड़ी आवई'। इसी का परिणाम है कि

'जर, जूड़ी अरु रोग अनेका ;
महा भयंकर एक ते एका।
करहिं आक्रमण नहिं तनिक डेराहीं ;
जब चाहहिं तब नेरे चलि आहीं।

अखबारों में एक विज्ञापन निकला करता है। एक हाथ से माथे पर कील रखकर दूसरे हाथ से हथौड़ा लगाना चाहता है कि इस तरह अपनी बात दिमाग में घुसा देते हैं। अगर हम भी इसी तरह किसी प्रकार लोगों के दिमाग़ में यह घुसा सकें कि उपवास बड़ी प्यारी हितकारी वस्तु है तो कितना काम हो। पर मालूम यह होता है कि लोग ऐसे नहीं सुनेंगे। कुछ धरम की पुट दी जाय तो जल्दी ग्रहण करेंगे। बिना धरम की बात गरीबों पर असर नहीं करती और अमीरों पर भी। हाँ, कुछ पढ़े लिखे नौजवानों को धर्म नाम से चिढ़ है, उनके माथे में कुछ घुसाना हो तो साथ में धर्म के नाम पर कुछ गालियाँ भी होनी चाहिए। इन्हें चिढ़ है, धर्म के नाम से, कथा पुराण के नाम से, गंगा गायत्री के नाम से, इन्हें कुछ मनवाना समझाना हो तो रूस के नाम पर, लेनिन के नाम पर, यूरोप अमेरिका के नाम पर कहना चाहिए। किसी ऋषि ने उपवास की बात कही थी तो वह पागलपन है। पर अमेरिका का कोई नामी अभिनेत्री कह दे कि उपवास से मैंने यह सुन्दरता पाई है, या अमुक खान पान से या सूरज भगवान के प्रभाव से तो उस देवी का कहना इनके दिमाग में भर जायगा। अगर कोई फुटबाल या क्रिकेट का खिलाड़ी कह दे तो भी असर हो जायगा। इसी लिए तो चायवाले फुटबाल और क्रिकेट के खिलाड़ियों के चित्र देकर उनके मुँह से चाय की प्रशंसा करवाते हैं। वे आजकल के पढ़े-लिखे की गुलाम मनोवृत्ति को जानते हैं और उसका फायदा उठाते हैं। पर मुझे उपवास की प्रशंसा किसी अभिनेत्री से कराने में कुछ तुक नहीं मालूम होता। अच्छे लोगों से ही उपवास की तारीफ करानी चाहिए। जब आज के नवजवान को अक्ल आवेगी तो वह भी अभिनेत्रियों के वाक्यों पर मोहित नहीं रह जायगा।

आज मेरे उपवास का दूसरा दिन है। वैसे तो परसों शाम को भी सिर्फ सवासेर खरबूजा खाया था। कल तो एक बेल तोड़कर घड़े में डाल दिया था और वह पानी पीता रहा। उसमें से जितना रस आ सकता था आया। सात-आठ गिलास पानी पिया प्रायः कुल पीला था। शौच

भी हुआ—प्रातःकाल और शाम को तीन बजे। शाम को टहला भी। नींद खूब आयी। आज प्रातःकाल भी मजे में टहला। दिन में आज सादा पानी ही लिया—दो-ढाई सेर ही पी सका। दो बार एनिमा लिया, मल कुछ निकला। पेट तो वैसे भी साफ ही रहता था। कोई कष्ट नहीं। इस वक्त कुछ तनिक सी कै की प्रवृत्ति हुई। वैसे तो कै और दस्तों की ओर मेरी प्रवृत्ति होती ही नहीं है। यह जरा सी अन्दर मालूम हुई तो मैंने तीन छोटे छोटे कागजी नीबू चूस डाले। क्या पूछना है स्वाद का! जी चाहा आठ-दस चूस जाऊँ। दाँत में मैं नीबू लगाने से डरता था पर आज तो नीबू का स्वाद क्या बताऊँ। मैं सोचता हूँ जिन लोगों की किसी अच्छी चीज पर अरुचि है वह अगर उपवास करें और उपवास के अन्त में उस चीज का सेवन करें तो फिर से रुचि हो सकती है। आज मैं सोचता हूँ अब दो कागजी नीबू रोज खाया करूँ।

खुराक का अभिशोषण (Assimilation) अगर शरीर में ठीक न हो तो वह काम उपवास से हो जाता है। अभिशोषण का बड़ा सवाल है। जान पड़ता है मेरे अभिशोषण में कुछ खामी है। शिब्बनलाल जी को देखता हूँ दस-बारह उपवास किये, दुबलाए, फिर अब मोटाने लगे और जरूरत से ज्यादा। मेहनत कसरत पूरी करते हैं, खाते भी खूब हैं। जान पड़ता है कि अभिशोषण अच्छा होता है। मेरा खयाल है, उपवास से उन्हें फायदा हुआ है। उपवास में स्नान तो जरूर करना चाहिए यह एक तजरबा आज हुआ। पसीने बह तो नहीं चले पर चपचपाते रहे। पसीना तो साफ हो ही जाना चाहिए। मैंने दो बार स्नान किया। यदि एक आध टब-बाथ भी लिया जा सके तो फायदेमन्द होगा। यदि त्वचा को इस समय सतेज रखा जा सके तो बहुत अच्छा हो। इसके लिए सारे बदन की गीली पट्टी बहुत अच्छी हो सकती है। एक दिन तो अच्छी गरमी थी, थोड़े थोड़े पसीने आ रहे थे—मैं एक कंबल ओढ़कर अपनी कोठरी में ही कंबल पर लेट गया। पसीनों से नहा गया। बाद को पानी से खूब नहाया।

उपवास के तीसरे दिन पानी दो सेर के लगभग ही पी सका। पाँचवें दिन एनिमा दो बार लिया। थोड़ा थोड़ा मल निकला—गाँठें या पुराना मल नहीं था। दिन भर बदन चपचपाया-सा जान पड़ता था। इससे पता चलता था कि त्वचा खूब काम कर रही थी। नहाया दोनों वक्त। आराम ही आराम करता रहा। पेट अन्दर घुसता गया। जीभ का रंग वैसा ही रहा। नींद तो दिन और रात भर आती रही। कै की ओर कुछ प्रवृत्ति थी। वह नींबू पर बस उसी दिन जोर से मन चला था। आज तीन छोटे छोटे नींबू चूसने के बाद उनपर से मन उतर गया। तीसरे दिन भी दो तीन चूसे थे पर विशेष मन नहीं था। मेरा ख्याल है कि मुझे डाभ का पानी मिले तो यह कै वाली प्रवृत्ति न रहे।

ऐसा जान पड़ता था कि सारा बदन चुसा जा रहा है। कोई कुछ खींच रहा है। चौथे दिन प्रातःकाल कुछ ज्यादा अच्छा मालूम होता था और जीभ का रंग साफ नहीं हुआ था। मुँह का स्वाद तो ज्वर के समय से भी बदतर हो रहा था। यह सब चिह्न थे इस बात के कि उपवास चलने दिया जाय। पर और चलाने की इच्छा नहीं हुई। जरूरत जान पड़ने पर फिर एक तीन दिन का कर लेंगे इस ख्याल से इसे छोड़ दिया। आध सेर दूध दो बार करके; दो घंटे बाद एक खरबूजा फिर तीन बजे के करीब एक खरबूजा, शाम को फिर आध सेर दूध लिया। दिन मौज में कटा, रात भी। ऊपर कोठरी में ही सोया, नींद डेढ़ बजे के करीब ही खुल गई पर मौज से पड़ा रहा। कल भी सुबह एनिमा लिया था, शाम को भी लिया। आज एनिमा नहीं लिया। सुबह थोड़ा शौच अपने आप हुआ। आज मैदान में टहलने गया—ठीक टहला। कोई विशेष कमजोरी या थकावट नहीं जान पड़ी। वजन के लिए पुराना काँटा मिला। उसने तो नौ पौंड कम बतलाया पर यह बात जँची नहीं। मेरा ख्याल है तीन-चार पौंड जाना चाहिए। कल ठीक काँटे पर तुलने से पता चलेगा। आज सुबह दही में थोड़ा नमक जीरा और छ केले डालकर खाया। साढ़े तीन बजे कुछ दस्त अपने आप हुआ।

जरा बँधा, कड़ा। थोड़ी सी तरकारी भी खाई थी। आज कल पर खूब नहाया। कपड़े साबुन से धोये। कोठरी झाड़ी बुहारी। मुझे ऐसा जान पड़ रहा है कि अधिकांश मर्जों के लिए उपवास ला जवाब इलाज है। मुझे कोई रोग नहीं था, तब भी मस्तिष्क ज्यादा साफ जान पड़ रहा है। सोने का यहाँ बहुत बढ़िया इन्तजाम नहीं है इससे जरा नींद का भारीपन था वह साफ हो गया। मेरा ख्याल है, सिर-दर्द, अनिद्रा, मानसिक अशान्ति, चक्कर, क्रोध, शोक वगैरह को दूर करने का बहुत बढ़िया उपाय उपवास हो सकता है। मन का व्यर्थ का वेग और बोझ हलका हो जाता है, यह कोई कम बात नहीं है। गले से ऊपर के हिस्से की बीमारियों के लिए मसलन नाक, दाँत, कान, गले वगैरह के दर्दों पर भी उपवास का शीघ्र असर होना चाहिए। नीचे के हिस्से के रोगों पर कुछ इससे कम होगा यह मैं नहीं कह सकता। मेरा कहने का मतलब है कि ज्ञान-तन्तुओं पर इसका बढ़िया असर होता है। उनमें जो भराव--मैल होता है वह इससे जैसी अच्छी तरह दूर होता है वैसे और किसी तरह नहीं। मेरा तो खास उद्देश्य अभिशोषण था सो कुछ दिनों बाद पता चलेगा। पर मैं सोचता हूँ लोगों को खब उपवास करना चाहिए--बाकायदा और उनका सूक्ष्म निरीक्षण करके नोट करना चाहिए। लोगों को उपवास के बारे में जो एक भय सा बना रहता है, वह जाना चाहिए। प्राकृतिक चिकित्सा के शस्त्रागार में सबसे बड़ा और प्रभावकारी अस्त्र विधिवत उपवास ही है; और चीजों में तो कई टंटे करने पड़ते हैं। इसमें सब टंटे मिटते हैं। न कुछ तैयारी न और। जी चाहे जब से शुरू कर दो। साफ पानी का घड़ा और मिट्टी का एक सिकोरा सिरहाने रख लिया। ढाल ढाल घंटे में आध सेर पानी पिये जाओ। दिन में एक एनिमा ले लो। भरसक खुले में रहो, सोओ। मन को मौज में रखो। शीशा लेकर सबेरे जीभ देख लो और अपने मुँह का स्वाद तो बिना आँखों के ही देख लो। उपवास से जीभ पर सफेद सा मैल आ जाता है और मुँह का स्वाद ज्वर के समय जैसा हो जाता है। जब यह दोनों दुरुस्त हो जाँय तो कड़कड़ाकर भूख भी लगेगी, बस उपवास तोड़ दो। हफ़्ते से ज्यादा हो गया हो तो एक दो दिन किसी फल या तरकारी के रस पर रह जाओ फिर धीरे धीरे साधारण भोजन पर आ जाओ। इतनी ही तो सारी रामायण की कथा है। जैसे एक राम-नाम अनेक नरकों से तारता है वैसे एक उपवास एक सौ एक रोगों से! रोग दूर भी करता है और रोगों को आने से भी रोकता है। ऐसा बिन कौड़ी पैसे का चाकर और कोई इलाज कोई बतावे न? और जितने इलाज हैं वह इलाज नहीं हैं, ज्यादातर दूकानदारी हैं और अधिकतर ठगी। लोभी गुरु और लालची चेला भये नरक में ठेलम ठेला। ठग डाक्टर और बेवकूफ मरीज।

आदमी दुनिया में जितना मौत से डरता है उतना ही रोगों से भी, क्योंकि मौत का कारण रोग बताए जाते हैं। मौत से डरने की तो कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए। फजूल का डर है और डरे होता भी क्या है। जब आजायगी मरना पड़ेगा ही। पर उपवास के रहते रोगों से भी डरने की उतनी जरूरत नहीं जान पड़ती। इसमें एक और तत्त्व है, अगर आदमी जाने कि रोग आने पर उपवास करना पड़ेगा तो जिन कारणों से वह रोग बुलाता है उन्हें पहले ही दूर रखेगा। अगर उसे पता चल जाय कि मेरे अमुक वस्तु इस मिकदार में खाने से और अमुक वस्तु न खाने से रोग आवेगा और तब मुझे उपवास करना पड़ेगा तो वह सँभलकर रहेगा। अगर आदमी को पता चल जाय कि अमुक स्टेशन पर कुली नहीं मिलते, बोझा खुद ही ढोना पड़ता है तो वह पहले से ही सामान कम घसीटेगा।

आज तो रोगों के बारे में बड़ा भ्रम फैला हुआ है कि न जाने वह कैसे क्या होते हैं। ज्वर हमारे किसी कर्म का परिणाम है यह तो कोई शायद ही माने, भाग्य का चाहे मान ले। किसी से कहो, तुम झूठ क्यों बोले, तो भला आदमी होगा तो कहेगा गलती हुई फिर नहीं बोलूँगा। पर उसी भले आदमी से कहो, तुम्हें ज्वर क्यों आया, तो कहेगा, मैं इसमें क्या करूँ। मानो बरसात की तरह ऊपर से टपक पड़ती है या बिजली की तरह

अपने आप चमक जाती है ये बीमारियाँ जिसमें हमारा कोई वश ही नहीं है। ऐसी कल्पनाओं के कारण तो रोगों का सम्बन्ध ग्रहों से जोड़ दिया गया है।

प्राकृतिक चिकित्सा में जगह जगह पढ़ा Give me fever, I will cure the disease अर्थात रोगी को ज्वर आ जाय तो रोग चुटकियों में चला जाय, बात पहले जमती नहीं थी। अब समझ में आया कि ज्वर में तो सहज ही उपवास हो जायगा और तब रोगी के चंगा होने में संशय क्या रहेगा। ज्वर जाता है तो अपने साथ और रोगों को भी भगा ले जाता है। मियादी बुखार के पाँच सात रोगियों को मैंने पन्द्रह पन्द्रह बीस-बीस दिन का उपवास कराया है। सब अच्छे हो गये। गरीब विद्यार्थी थे। पर खाने का मोह बेढब होने की वजह से बड़ी मुश्किल होती है। और फिर बाद की हालत। पर एक बार ज्वर में लंबा उपवास हो जाय तो आदमी बहुत कुछ चंगा हो जाता है। बाद को संभल कर रहे तो ज्वर का पूरा फायदा पा सकता है।

उपवास के पक्ष में मुझे एक दलील मजबूत सी जान पड़ती है कि अगर 'टर्न' लेना हो तो उसके लिए उपवास बहुत काम की चीज है। जैसे कोई तंबाकू या कोई नशा छोड़ना चाहता है पर नहीं हिम्मत हो रही है। अगर वह हिम्मत करके उपवास कर डाले तो नशा छूट सकता है, बशर्ते कि उपवास के बाद उस चीज पर फिर मन न चलावे। दिमाग से उस चीज के संस्कार कम करने में उपवास से मदद मिलेगी। दलील दी जा सकती है कि उपवास करने के जितना मनोबल होगा तो उतने मनोबल से क्या नशा नहीं छूट सकेगा। मेरा खयाल है नशा छोड़ने के मनोबल की अपेक्षा उपवास में कम मनोबल चाहिए। अलग अलग आदमियों के लिए उपायों का विधान है जिसको जो रुचे।

* * *

जिस मनुष्य को जितने भोजन की आवश्यकता हुआ करती है, उसी हिसाब से प्रायः उसे भूख लगा करती है। ठण्डे देशों में गरम देशों की अपेक्षा अधिक भोजन की आवश्यकता रहती है, अतएव वहाँ भूख भी अधिक लगती है। इसी प्रकार परिश्रमी लोगों को बैठे-ठलुओं की अपेक्षा अधिक भोजन की आवश्यकता पड़ती है, अतएव उन्हें भी अधिक भूख लगती है। बच्चों को भी बड़ों की अपेक्षा अधिक बार भोजन की आवश्यकता पड़ती है अतएव उन्हें भूख जल्दी जल्दी लगती है। इस प्रकार साधारण दशा में भोजन की मात्रा निश्चित करने के लिए हमारी भूख ही सबसे बढ़िया और स्वाभाविक पथप्रदर्शिका है और यदि खाने पीने में इसकी आज्ञा का पालन मनुष्य करता रहे तो शरीर की बहुत सी व्याधियों से छुटकारा मिल सकता है। किन्तु कुछ लोग इच्छा या रुचि को ही भूख समझ लिया करते हैं और इसलिए हानि उठाते हैं। इच्छा या रुचि वास्तव में तबियत की माँग है, शरीर की माँग नहीं। शरीर की जो माँग होती है, उसी को भूख कहते हैं। बढ़िया और स्वादिष्ट भोजन को देखकर भूख न रहते हुए भी बहुधा खाने की इच्छा हो जाती है ऐसी इच्छा को दबाकर सदैव भूख को ही प्रधानता देना हमारा कर्तव्य है।

मेरा चश्मा छूटा

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

"मैंने अश्वघोष का प्रसिद्ध काव्य-ग्रन्थ 'बुद्ध चरित' निकाला और पढ़ने के लिए चश्मा ढूँढ़ा। यह क्या चश्मा नदारद! कहाँ गया? सोचने पर ख्याल आया कि पहाड़ की तलहटी में जहाँ मैं पिछली रात सोया था वहीं रह गया। दस मील वापिस जाकर उसे खोजा जा सकता था; लेकिन एक बार तो वह दस मील की चढ़ाई जैसे-तैसे करके चढ़ा था, दुबारा चढ़ना पड़ने की कल्पना से भी डर लगता था। और वापिस जाने पर मिल ही जायगा, इसका कौन विश्वास? मैंने वापिस न जाने का निश्चय किया। रास्ते में एक दो आदमी मिले; उन्हें चिट्ठियाँ दे दीं कि किसी को मिल जाए तो पहुँचा दें। मेरा चश्मा नहीं मिला। हमेशा के लिए खो गया। मेरे चश्मे तुझे सदा के लिए विदा!"

उस दिन जब मैंने सिंधिया नेविगेशन कम्पनी (Sindhiya Navigation Co.) के डाइरेक्टर श्रीयुत नानावटी के बारे में पढ़ा कि वे अब इस लोक में नहीं रहे तो उनके अनेक उपकारों में से एक उपकार मुझे खास तौर पर याद आया। १९३० या ३१ में वह सिंधिया नेविगेशन कम्पनी की कोलम्बो ब्रांच के डाइरेक्टर थे। मैं कभी कभी उनसे कार्य्यवश मिलता। पीछे परिचय अधिक हो जाने पर तो यूँ भी मिलता रहा। एक दिन उनके बंगले पर था। वे बातचीत भी कर रहे थे और अखबार भी पढ़ रहे थे। मैंने देखा बीच बीच में वे अपनी एक आँख को ढक ले रहे हैं और दूसरी अकेली आँख से अखबार पढ़ रहे हैं। मैंने भी उनकी नकल की। यह क्या? दाहिनी आँख से तो मैं बहुत कम पढ़ सकता हूँ। मैंने नानावटी जी से कहा। बोले—आँख के विशेषज्ञ को दिखाओ। २५ वर्ष तक जो आँख "भली-चंगी" थी; आज एक मिनट में "खराब हो गई।"

लेखक

* * *

दो चार दिन में मैंने श्री जयवर्धन से जिकर किया। खेद है कि अब वे भी इस संसार में नहीं रहे। उनसे और उनके परिवार से बढ़कर सच्चा परिवार मैंने अभी तक सिंहल द्वीप में नहीं देखा। किसी दिन वह अपनी दो सौ मासिक की नौकरी पर लात मारकर सपरिवार चर्खा कताई और बुनाई सीखने के लिए सत्याग्रह आश्रम जा पहुँचे थे। उन्होंने अपने लड़के श्री हरिदास को मेरे लिए एक पत्र दिया और अपने परिचित एक डाक्टर के पास लिवा जाने के

लिए कहा। मैं उन दिनों जहाँ कहीं जाता पैदल ही जाता था। अपने परिवेण[1] से छः सात मील चलकर मैं और हरिदास कोलम्बो के उक्त डाक्टर के यहाँ गये। क्योंकि वे आँखों के विशेषज्ञ न थे; इसलिए उन्होंने हरिदास को एक चिट्ठी दे हम दोनों को एक दूसरे डाक्टर के पास—जो कि केवल आँखों का डाक्टर था—भेज दिया। डाक्टर का नाम शायद श्री बिल्मोरिया था। पहले डाक्टर ने उनका परिचय देते हुए कहा कि कोलम्बों में वे सबसे बड़े नेत्र-विशेषज्ञ हैं। डॉक्टर साहब के यहाँ पहुँचे। उन्होंने परिचय-पत्र पढ़ प्रेम से स्वागत किया। हरिदास को एक कुरसी पर बिठा मुझे अँधेर-गृह में ले गये। वहाँ बड़ी देर तक तरह-तरह के यंत्रों में से मेरी आँखों में झांककर उनकी परीक्षा की। बाहर आए और नाम-धाम पूछकर एक कागज ले उस पर चश्मे का नम्बर लिख दिया। मैंने इतना कष्ट करने के लिए हार्दिक धन्यवाद दिया और विदा चाही। चलने लगा तो सिर पर लाठी पड़ने की तरह डॉक्टर साहब की आवाज सुनाई दी—Do you wish me to do it for nothing (क्या आप मुझसे मुफ़्त ही यह काम लेना चाहते हैं ?)

मेरा ध्यान उधर आकृष्ट हुआ। समझा, यह पैसों की दुनिया है। भिक्षु-नियम के अक्षरशः पालन के फेर में मेरे पास कानी कौड़ी न थी; हरिदास के पास भी कुछ न था। मैंने नम्रता पूर्वक निवेदन किया—मुझे अफसोस है कि मेरा ध्यान इधर नहीं गया। मैं अपने पास पैसा नहीं रखता। आप कृपया कहें कि मुझे आपको कितना देना चाहिए। मैं जिम्मा लेता हूँ कि आपके पास उतना पहुँच जायगा।

मालूम होता है डॉक्टर के मन में धर्म-विरोधी संस्कारों की कुछ उथली छाप थी। बोला—लेकिन आप मेरे पास रुपया भिजवाने के लिए किसी को धोखा मत दीजिएगा।

साधु होने पर भी मेरे मिजाज में कुछ तुर्शी बाकी थी और है।

उत्तर दिया—एक डॉक्टर जब एक अकिंचन भिक्षु को लूट रहा है तो क्या हर्ज है यदि वह भिक्षु भी कहीं न कहीं से कुछ हथिया ले।

डॉक्टर को गुस्सा आ गया। उसने मुझे कुछ बुरा-भला कहा। जवाब में मैं क्या कहता! बोला—कोलम्बो में जितने अन्धे हैं उनमें यदि एक और अन्धा शामिल हो जायगा तो उनकी संख्या कुछ बहुत अधिक नहीं बढ़ जायगी। यह लें अपने चश्मे का नम्बर। धन्यवाद।

डॉक्टर ने दरवाजे की ओर इशारा कर मुझे और हरिदास को बाहर खदेड़ दिया। पैसा मिलने की आशा से जो सम्मान हुआ था वही अब पैसा न मिलने पर अपमान में परिणत हो गया। मैं परिवेण चला आया और हरिदास अपने घर।

* * *

दूसरे दिन की डाक में दो चिट्ठियाँ थीं। एक उन्हीं डॉक्टर विलमोरिया की। लिखा था—चश्मे का नम्बर भेज रहा हूँ यदि अस्वीकृत ही हो तो लौटा दें। दूसरी श्रीयुत नानावटी की। लिखा था—डाक्टर के यहाँ से चश्मे का जो नम्बर आया है वह भेज दें। मैं बम्बई से चश्मा मँगवा दूँ।

समझ गया कि हरिदास ने सारा किस्सा अपने पिता को कहा होगा। वहाँ से श्री नानावटी के यहाँ पहुँचा होगा और उन्हीं की कृपा के फल-स्वरूप दोनों पत्र मिले। मैंने डॉक्टर को फोन पर धन्यवाद दिया और नानावटी जी को नम्बर भेज दिया। कुछ ही दिन में बम्बई से मेरा चश्मा आ गया। इस प्रकार नानावटी जी मेरे प्रथम चश्मे के दाता रहे।

---

[1] भिक्षुओं का वासस्थान तथा विद्यालय।

(२)

सन् १९३२, ३३ इंगलैंड में रहा। सिंहल-द्वीप में लैम्प पर पढ़ता था; इंगलैंड में बिजली की रोशनी से। छत में टँगा हुआ बिजली का लैंप नाकाफी मालूम दिया, तो टेबुल-लैंप पर पढ़ना शुरू किया। कुछ दिनों के बाद वह भी नाकाफी मालूम दिया तो छत का और मेज का दोनों एक साथ जलाकर पढ़ने लगा। १९३४ में जब मैं सिंहल लौटा तो एक दिन साधारण लैंप के अभाव में मोमबत्ती जलानी पड़ी। यह क्या? मोमबत्ती का प्रकाश इतना कम! उस प्रकाश में पढ़ना, लिखना या कोई दूसरा काम कर सकने की बात तो दरकिनार--स्वयं मोमबत्ती को देखने के लिए भी मुझे एक लैंप की आश्यकता मालूम देती थी। समझ गया दो-दो बिजली के लैंप एक साथ जलाकर पढ़ने का फल है। काफी दिनों के बाद धीरे धीरे साधारण प्रकाश से संतोष होने लगा।

उन्हीं दिनों मैं कोलम्बो के अपने एक परिचित डाक्टर के पास गया। बातचीत करते हुए देर हो गई। शाम को मुझे अपने स्थान पर लौटना था। डाक्टर साहब कहने लगे—अँधेरा न हो गया होता, तो मैं आपको अपनी गाड़ी में पहुँचा आता। शाम को मुझे कम दिखाई देता है। गाड़ी ड्राइव करते डर लगता है। मैंने पूछा—आप चश्मा नहीं लगाते?

बोले--I am one of those medical men, who do not believe in these crutches (मैं उन डॉक्टरों में से हूँ जो इस लँगड़े की लाठी में विश्वास नहीं करते।)

दो साल तक बराबर चश्मा प्रयोग करते रहने के बाद चश्मे के खिलाफ एक डॉक्टर की राय सुनने को मिली मैं भी अपने चश्मे के बारे में सोचने लगा।

(३)

१९३४ में मैं पीनाङ्ग के कुछ चीन देशीय बौद्धों का निमंत्रण पाकर वहाँ गया था। पीनाङ्ग मलाया-प्रायद्वीप का पश्चिमीय तट पर एक छोटा सा—कुल १४ मील लंबा ९ मील चौड़ा—टापू है। बहुत ही सुन्दर जगह है। मैं वहाँ तीन महीने रहा। एक पाली ग्रन्थ के अनुवाद के कार्य में व्यस्त था। खाने पीने, ठहरने का हर तरह से सन्तोष जनक प्रबन्ध था। बारह बारह घंटे बराबर कलम चलाता। आँखों ने शिकायत करनी शुरू कीं। कोलम्बो के उस डाक्टर के तजर्बे के बाद मैं अनजाने में ही कुछ सहम सा गया था। यहाँ पीनाङ्ग में उस तरह के डर की जरूरत न थी, क्योंकि यहाँ के अनेक उदार चीनी सज्जन मेरी आवश्यकताओं की मुझसे भी अधिक फिकर रखते थे। वे मुझे पीनाङ्ग के नेत्र-विशेषज्ञ के पास ले गए। उनकी बड़ी ख्याति थी। वे जर्मन देशीय थे। मैंने जब अपने तीन महीने के जर्मनी निवास के फलस्वरूप सीखी गई टूटी फूटी जर्मन में उनसे बातचीत करनी शुरू की तो वे बड़े प्रसन्न हुए। बड़ी अच्छी तरह से मेरी आँखें देखीं भालीं। दूसरे दिन फिर आने के लिए कहा। मैंने चलते समय पूछा—डाक्टर साहब! चश्मा लगाने से अधिक अच्छा दिखाई देता है। यह तो ठीक है; लेकिन मैं जानना चाहता हूँ कि चश्मे का आँखों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

बोले—कुछ नहीं।

मैं—कुछ नहीं?

बोले—हाँ, कुछ नहीं।

अपने निवासस्थान पर लौटा तो मैं सोचने लगा जब चश्मे का आँखों पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता तो मैं चश्मा लूँ ही क्यों? क्योंकि मेरी एक ही आँख "खराब" थी। दूसरी की सहायता से मैं पढ़ तो ठीक ठीक लेता ही था। पढ़ने से मतलब, दाईं से पढ़ूँ या बाईं से। मेरे लिए चश्मे का कोई उपयोग नहीं।

दूसरे दिन जब मैं उन जर्मन विशेषज्ञ के पास गया तो मैंने उनसे अपने विचार कहे। बोले—हाँ, मैं भी यही सोचता था कि आपको चश्मे की कोई जरूरत नहीं। कहते संकोच कर रहा था।

मैंने कहा—तो चश्मा रहने दें।

बोला——नहीं, मेरे पेशे का आग्रह (Professional honesty) है कि आप आए हैं तो मैं आपको चश्मे का नम्बर दे ही दूँ। चाहे आप चश्मा लें या न लें; लगाएँ या न लगाएँ।

उसकी यह बात मुझे कुछ अजीब सी लगी। यह नहीं कहा जा सकता कि उसकी यह राय मुझसे कुछ रुपये पाने के लिए थी क्योंकि रुपये लेने से उसने पहले ही दिन इन्कार कर दिया था। उसने कहा था——यह संन्यासी हैं। मैं इनकी आँख देखने की फीस नहीं लूँगा।

उसका चश्मे का नम्बर देने का निस्वार्थ आग्रह देख मैंने नम्बर ले लिया। दो एक दिन में चश्मा आ गया। इस प्रकार कुछ चीनी बौद्धों और उस डाक्टर की दया स्वरूप मुझे मेरा दूसरा चश्मा मिला।

चश्मे में मेरी श्रद्धा घट गई थी। अब मैं कभी चश्मा लगाता, कभी नहीं।

(४)

सन् १९३५, या ३६ में सारनाथ में रहते हुए दाहिनी आँख में दर्द हुआ। कुछ दिन पढ़ने-लिखने से आँखों को छुट्टी देने के लिए मैं पटना चला गया। वहाँ बाबू अम्बिका प्रसाद पटना के प्रसिद्ध नेत्र-विशेषज्ञ डा० सुरेन्द्रनाथ घोष के पास ले गए। उन्होंने आँखों में आँख की दवाई (आईट्रोफीन) डाली; जिसके फलस्वरूप तीन चार दिन अंधा रहा। दवाई डालने से पहले और पीछे आँखों की पूरी देखभाल करके चश्मे का नंबर दिया और कहा इससे तकलीफ दूर हो जायगी। क्या करता चश्मे का नंबर सर आँखों पर लेना पड़ा। पटने के भाई बलदेव नारायण ने कलकत्ते जाने के लिए किराए के पैसे दिए और वहाँ देवप्रिय जी ने अट्ठारह रुपया खर्च करके चश्मा ले दिया। इस प्रकार मुझे तीसरा चश्मा मिला।

मुझे लगने लगा आँखों के कष्ट की चश्मे को छोड़ संसार में दूसरी दवाई नहीं; इसलिए चश्मों के फेर में रहना ही होगा।

(५)

एक साल भी न बीतने पाया था। फिर तकलीफ हुई। किसी विशेषज्ञ की फीस चुकाने के लिए न मेरे पास कभी रुपये हुए हैं, न तब थे। किसी ने सलाह दी लखनऊ के मेडिकल-कालेज में जाँच करा लो। मैं लखनऊ गया। वहाँ पूज्य बोधानन्द जी महास्थविर के यहाँ ठहरा। लखनऊ मेडिकल कालेज में एक खास सज्जन की आशा लगाकर गया था। वह पूरी न हुई। आपने किसी मोहताजखाने में 'गरीबों' को चने बँटते देखे हैं? ठीक वैसा ही मेडिकल कालेज की आँख-चिकित्सा को पाया। पहले दिन वहाँ भी एक आदमी ने एट्रोफीन डाली। मेरी ही आँखों में नहीं मेरे साथ अनेकों की। तीन चार दिन अंधे रहने के बाद जब फिर आँख दिखाने गया तो मेडिकल कालेज के एक विद्यार्थी मेरी आँखों पर चश्मे चढ़ा चढ़ाकर चश्मे और आँखों की परीक्षा करने लगे। बीच बीच में वे दोस्तों से बातें करते जाते थे, सिगरेट पीते जाते थे और जिस हाथ में सिगरेट थी उसी हाथ से चश्मे के शीशे को घुमाते जाते थे। एक बार उनके जलते सिगरेट से मेरा माथा जल गया। मैंने घबराकर सिर मलना शुरू किए। बोले——मुझे अफसोस है (I am sorry)। चश्मे से मुझे संतोष न होता था——इसलिए मैंने जब जब उन्होंने पूछा तब तब कह दिया कि मुझे इससे साफ नहीं दिखाई दे रहा है। चिढ़कर बोले——अब और कितना साफ दिखाई दे! मैं चुप रहा। उन्होंने मेरे टिकट पर नम्बर लिख दिया और किसी बड़े मेडिकल आफिसर से दस्तखत करा दिए। अब किसी की क्या मजाल है कि उस चश्मे में कोई कुछ दोष निकाल सके।

मैंने इलाहाबाद लौटकर चश्मे का वह नंबर एक चश्मे के दूकानदार को दिया। उसने कहा इसमें तो क्या का क्या नंबर लिखा है। अपनी अक्ल से उसने उसे "दुरुस्त" कर दिया।

बारह रुपया खर्च करने पर फिर चश्मा मिल गया;

लेकिन ऐसा जिसे यदि मैं आँख पर न रखता तो पछताता और यदि रखता तो भी ।

(६)

साल छः महीने तक इसी तरह चलता रहा । चश्मा था लेकिन न होने के बराबर । कभी तबीअत आई लगा लिया । कभी तबीयत आई छोड़ दिया । सन् १९३८ की गर्मियों में मैं राहुल जी के साथ लाहुल गया । वह तो जल्दी लौट आए । मैं वहीं रह गया । वापसी पर अकेला था । लाहुल से कुल्लु और कुल्लु से शिमला पैदल ही चला । एक दिन एक पहाड़ की कड़ी चढ़ाई और उतराई थी । मैं शाम को ही जाकर उस पहाड़ की तलहटी में बसे एक गाँव में सो गया । प्रातः काल चार बजे उठकर चढ़ाई शुरू की । ग्यारह बजते तक कुल दस मील की चढ़ाई चढ़ सका । बदन पसीना पसीना हो गया; टाँगें चूर चूर । पहाड़ की चोटी पर पहुँचा, तो एक चश्मे के पास बैठकर कुछ विश्राम करने और पढ़ने की सोची । मेरे छोटे से पुस्तकालय में—जिसे मैं अपने बिस्तर के साथ कंधे पर ढोता था—अश्वघोष का प्रसिद्ध काव्य-ग्रन्थ "बुद्ध चरित" था । मैंने उसे निकाला और पढ़ने के लिए चश्मा ढूँढ़ा । यह क्या, चश्मा नदारद । कहाँ गया ? सोचने पर ख्याल आया कि पहाड़ की तलहटी में जहाँ मैं पिछली रात सोया था, वहीं रह गया । दस मील वापिस जाकर उसे खोजा जा सकता था; लेकिन एक बार तो वह दस मील की चढ़ाई जैसे-तैसे करके चढ़ा था, दुबारा चढ़ना पड़ने की कल्पना से भी डर लगता था । और वापिस जाने पर मिल ही जायगा, इसका कौन विश्वास ? मैंने वापिस न जाने का निश्चय किया । रास्ते में एक दो आदमी मिले; उन्हें चिट्ठियाँ दे दीं कि किसी को मिल जाए तो पहुँचा दें । मेरा चश्मा नहीं मिला । हमेशा के लिए खो गया ।

मेरे चश्मे तुझे सदा के लिए विदा !

(७)

आँख में तकलीफ इधर भी कभी कभी हुई । दो चार दिन पढ़ना लिखना कम करने पर बन्द हो गई । एक दिन मैं "जीवन-सखा" कार्य्यालय से डा० आर० एस० अग्रवाल लिखित माइण्ड ऐण्ड विज़न (Mind and Vision)[1] उठा ले गया । पढ़ा तो कई नई बातें मालूम हुईं । सबसे बड़ी यह कि मेरे चश्मे का खो जाना मेरा सौभाग्य रहा है । डा० अग्रवाल ने अपनी पुस्तक में यह सिद्ध किया है कि चश्मा आँख की दवा नहीं है; वह एक ऐसा यन्त्र है जिसकी सहायता से मनुष्य अधिक अच्छा देख सकता है: लेकिन यदि इस यन्त्र का उपयोग करता रहे तो उसकी आँखें उत्तरोत्तर खराब ही होती जायँगी ।

उन्होंने आँख के रोगियों के लिए, क्षीण दृष्टि वालों के लिए अपनी किताब में कई उपयोगी सूचनाएँ दी हैं । आँखों को हथेलियों से ढकने की एक ऐसी विधि बताई है, जिससे आँखों को विश्राम मिलता है: और उचित विधि से अधिक समय तक करने से अन्धेपन तक को दूर किया जा सकता है । मैंने पढ़ने लिखने में इस पुस्तक की आज्ञाओं का पालन करना शुरू किया । काफी लाभ हुआ ।

(८)

हमारे सारनाथ के भाई धर्मज्योति जी को Chronic catarrh (पुराना जुकाम) है । लगभग १२ वर्ष से सिंहल द्वीप के अनेक डाक्टरों-वैद्यों की चिकित्सा करते रहे हैं । किसी चिकित्सा से कुछ कहने सुनने लायक लाभ नहीं हुआ । एक दिन 'जीवन-सखा' के सम्पादक डा० बालेश्वर प्रसादजी सारनाथ आए थे । मैंने पूछा धर्मज्योति जी का जुकाम भी किसी तरह अच्छा हो सकता है । बोले—नेति करें । मैंने कहा—कैसे ? बोले—इलाहाबाद चले आवें । मैं सिखा दूँगा ।

फिर एक दिन 'जीवन-सखा' कार्य्यालय में मैंने अपनी दाहिनी आँख के बारे में कहा कि समय समय पर थोड़ा सा भी अधिक पढ़ने लिखने से मुझे ऐसा लगता है कि मानो

---

[1] यह उपयोगी पुस्तक 'अग्रवाल-आई० इन्स्टीटयूट' १५ दरियागंज, दिल्ली से मँगाई जा सकती है ।

उसमें धूल पड़ी है और कष्ट होता है। डाक्टर साहब ने कहा—नेति करें।

आप जानना चाहेंगे कि 'नेति' क्या बला है? आपने किसी भी बैल के नाक में रस्सी पड़ी देखी होगी—उससे आप नेति की कल्पना कर सकते हैं। मामूली धागों की बटी हुई रस्सी को एक खास तौर से ऐंठन देकर गर्म मोम में भिगो सुखाकर कड़ा कर लिया जाता है। उस रस्सी को पानी में धोकर नाक में डाला जाता है। वह हलक के पास मुँह में जा निकलती है। वहाँ उँगली डालकर उसे मुँह के रास्ते आर पार कर दिया जाता है। यही 'नेति' करना हुआ। डाक्टर साहब ने दो दिन पास बैठकर अपने करके दिखा दी और मैं भी दूसरे ही दिन एक नथने से करने में सफल हो गया। मैंने कुछ उसे अपने लिए और कुछ भाई धर्मज्योति जी के लाभ के लिए सीखा था। सारनाथ जाकर मैंने उन्हें भी सिखाई।

तीन महीने से भाई धर्मज्योति और मैं प्रायः रोज 'नेति' करते हैं। वे एक दो दिन बीच बीच में छोड़ भी देते हैं, मैं नियम से रोज करता हूँ। यह कहते प्रसन्नता होती है कि धर्मज्योति जी के जिस जुकाम पर बारह वर्ष तक की गई अनेक चिकित्साओं का कुछ स्थायी और अच्छा फल न हुआ था वह तीन चार दिन की 'नेति' से ही काबू में आगया।

उनको नेति से बड़ा लाभ हुआ है; और अब उनको शायद एक रुपये में तीन आना शिकायत बाकी है।

और मैं अपनी क्या कहूँ? पिछले तीन महीनों में न मुझे जुकाम हुआ, न आँख की तकलीफ। लिखना-पढ़ना मेरा बराबर आठ-दस घंटे रोज की औसत से जारी है।

इधर मेरा यह मत है कि जिस प्रकार हम दाँतों की सफाई के लिए रोज दातुन करते हैं, उसी प्रकार यदि हम नासिका मार्ग को साफ रखने के लिए रोज या हर दूसरे तीसरे दिन नेति कर लिया करें, तो आदमी को न तो कोई आँख का रोग हो, न कान का, न नाक का।

बनी बनाई नेति[1] डा० बालेश्वर प्रसाद जी से प्राप्य है और उसकी विधि भी वह सिखा दे सकते हैं।

---

[1] सूत-नेति के पहले कुछ दिनों तक जल-नेति करना चाहिएं। सबेरे कुनकुने आधसेर गरम पानी में तोला भर नमक डालकर नाक से खींचना चाहिए। पानी भरे गिलास में नाक के दोनों छिद्रों को डुबाकर बहुत धीरे धीरे पानी खींचना चाहिए। और मुँह के रास्ते निकालते जाना चाहिए। हलके हलके बढ़ाकर एक सप्ताह में आधसेर तक पानी खींचा जा सकता है। जलनेति का गुण भी सूत-नेति की तरह ही है। इसके करने से बहुतों को सूत-नेति करने की जरूरत ही न रह जायगी।—सं०

क्या आपको भी कुछ कहना है ?

क्या आपने जीवन-सखा के सिद्धान्तों के अनुसार खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने का अनुभव किया है? यदि हाँ तो उसे दूसरों की सहायता, तथा मार्ग-प्रदर्शन के लिए लिख भेजें। उन्हें हम सहर्ष प्रकाशित करेंगे। यदि सम्भव हो सके तो यह चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व और बाद का अपना फ़ोटो भी भेजें। आप का अनुभव दूसरों के बड़े काम का हो सकता है। अपने अनुभव निष्पक्ष भाव से तथा सच्चाई के साथ लिखें। यदि आपने किसी अन्य व्यक्ति को इस चिकित्सा-प्रणाली के द्वारा लाभ पहुँचाया हो तो उसके सम्बन्ध में भी अपने अनुभव भेज सकते हैं।—सम्पादक

तंबाकू

श्रीयुत विश्वनाथ प्रसाद, एम० एस०

गाँवों में मेहमान की खातिरदारी के लिए हुक्का आता है और शहर में पान-सिगरेट। हुक्का तो अधिकतर सुबह शाम ही पिया जाता है, पर जब से तम्बाकू ने बीड़ी सिगरेट का रूप लिया है इसका प्रयोग बेतहाशा बढ़ता जा रहा है। यदि यह कहा जाय कि सिगरेट पीना फैशन का एक अंग हो गया है तो अत्युक्ति न होगी पर इसके प्रयोग से स्वास्थ्य पर कैसा बुरा प्रभाव पड़ता है वह इस लेख से जानिए।--सं०

संसार में वहुत तरह के पौधे होते हैं। इनमें से कुछ मनुष्यों के और कुछ पशुओं के भोजन के काम में आते हैं। कुछ पौधों से हम वस्त्र बनाते हैं तथा कुछ से कोई न कोई उपयोगी काम निकाल ही लेते हैं। परन्तु कई पौधे ऐसे भी हैं जिनका यदि हम अनुचित उपयोग करें, तो वे विष उत्पन्न करते हैं। तंबाकू इसी दूसरी श्रेणी से संबन्ध रखता है। चूहा, विल्ली, कुत्ता, घोड़ा, और गदहा कोई भी प्राणी न तो तंबाकू का पत्ता खाता है और न इसका धूआं लेता है। केवल मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जिसने इसकी आदत डाल रक्खी है।

तंबाकू कोई ऐसी वस्तु नहीं जो शरीर के लिए आवश्यक हो। यह अमूमन देखा गया है कि जो मनुष्य इसका उपयोग नहीं करते उनका स्वास्थ्य उपयोग करने वालों की अपेक्षा अच्छा रहता है। जिस समय तंबाकू का पीना पश्चिमीय देशों में आरम्भ हुआ, उस समय शासकों ने इसे हानिकारक समझकर कानूनन् बंद कर दिया था। सम्राट् जहाँगीर ने अपने राज्य में पूर्ण रूप से तंबाकू का निषेध कर रखा था। परन्तु आजकल बहुत से शासक स्वयं पीते हैं। इसका नतीजा यह है कि वे दूसरों को भी इसके लिए प्रेरित करते हैं।

तंबाकू विष है

तंबाकू में सख्त जहर होता है। इस जहर का नाम निकोटिन है। निकोटिन संखिया से भी अधिक भयानक विष है। यदि इसकी एक बूँद चूहे की त्वचा पर रख दें तो वह मर जायगा। इसके दो बूँद बिल्ली या कुत्ते की जीभ पर रख दिया जाय तो वह भी मर जायगा। तंबाकू निगल जाने से मनुष्य में भी भयानक लक्षण उत्पन्न होते हैं। चीन में आत्मघात करने के लिए अमूमन लोग हुक्के का पानी पी लेते हैं। पहले पहल जो आदमी तंबाकू पीना आरम्भ करता है उसका जी मचलाता है कभी कभी उल्टी तक हो जाती है। तंबाकू को लोग तीन प्रकार से व्यवहार में लाते हैं।

(१) सिगरेट या हुक्के द्वारा धूम्रपान करके
(२) नस्य या सुँघनी बनाकर सूँघने से
(३) पान में रखकर सुरती के रूप में या चूने के साथ मलकर खाकर।

परन्तु इन तीनों प्रकार से प्रकृति असंतुष्ट होती है। पीने से धुआँ बाहर निकालना पड़ता है। सूँघने से छींकना पड़ता है। खाने से थूकना पड़ता है। तात्पर्य यह है कि अन्य खाद्य सामग्रियों की तरह शरीर इसे संपूर्ण रूप से ग्रहण नहीं करता। ग्रहण न करने का कारण यह है कि इसमें निकोटिन के अलावा भी अन्य विषैले ६ तत्त्व हैं। जैसे कोलिडिन, प्रसिक एसिड, कार्बन मोनक्साइड, फुरफुरल, और एकोलीन। कोलिडीन जहरीला क्षार है, इससे स्नायु दुर्बल हो जाते हैं और चक्कर आने लगते हैं। प्रसिक एसिड ज्ञान-तन्तुओं को मलीन कर देता है।

सिर में भारीपन रखता और मन में अरुचि पैदा करता है। कार्बन मोनक्साइड दम घोटकर मार डालनेवाली विषैली गैस है इसका असर यह होता है कि साँस जल्दी जल्दी चलने लगती है, हृदय की गति तेज हो जाती है, रोमांच और ऐंठन होती हैं। आँखों की पुतलियाँ फैल जाती हैं, ठंडा पसीना चलने लगता है और बदन ठण्डा हो जाता है। यह बेहोशी और पक्षाघात भी उत्पन्न करता है। फुरफुरल मस्तिष्क के ज्ञानतन्तुओं को ढीला कर देनेवाला विष है जिससे बाद में आचार और शुद्ध विचार नष्ट हो जाते हैं। एकोलीन एक गैस है जो मन में चिड़चिड़ाहट पैदा कर देती है।

लोग तंबाकू क्यों पीते हैं

तंबाकू पीना उसी प्रकार आदत में सम्मिलित है जिस प्रकार अफीम या कोकीन खाना। पहले पहल जब कोई तंबाकू पीता है, तो वह अपने को अस्वस्थ अनुभव करता है, और जब दूसरी बार पीता है, तब भी उसे वह कम पसन्द आती है परन्तु इस पर ध्यान न देकर यदि वह पीता ही जाता है तो उसे यह वस्तु आनन्ददायक प्रतीत होने लगती है। धीरे धीरे तंबाकू पीना आदत में शुमार हो जाता है और फिर इसे छोड़ना कठिन हो जाता है। तंबाकू पीने से मस्तिष्क और नाड़ियाँ मूढ़ हो जाती हैं। जिस समय मनुष्य थका हुआ या शोकातुर होता है उस समय वह तंबाकू पीता है, और अपने को कुछ स्वस्थ समझने लगता है परन्तु वास्तव में वह स्वस्थ नहीं होता। अपने को जो स्वस्थ समझता है, उसका कारण यह है कि, तंबाकू उसके मस्तिष्क एवं वातनाड़ियों पर अज्ञान का परदा डाल देती है। इसलिए तंबाकू पीनेवाला तब तक थकान एवं दुःख को अनुभव भी नहीं करता, जब तक तंबाकू का प्रभाव उसके मस्तिष्क पर बना रहता है। दर्द, बेचैनी, तब भी वहाँ उसी प्रकार उपस्थित रहते हैं, परन्तु वह अनुभव नहीं करता।

तंबाकू पीने से सब व्यक्ति जल्दी क्यों नहीं मरते ?

तम्बाकू जलाकर हम जब पीते हैं तो उसके विष का अधिक भाग (३०% से ९५% तक) धुएँ में रह जाता है और केवल ५% रुधिर में पहुँचता है। यह ५% भी एक ही साथ नहीं प्रवेश करता। धीरे धीरे पहुँचता है। थोड़ा थोड़ा करके पहुँचने से शरीर को उसके सहन करने का अभ्यास हो जाता है। इसलिए वर्षों में वह विष अपनी मात्रा पूरी कर पाता है और तब अनेक रोगों को उत्पन्न करके मनुष्य के प्राण समाप्त करता है। हम यह कह सकते हैं कि ५० वर्ष जीनेवाला व्यक्ति ३५ वर्ष ही जियेगा। शेष १५ वर्ष तंबाकू की भेंट हो जायँगे।

तंबाकू पीने वाले शराब पीने लगते हैं

तंबाकू पीनेवाले प्रत्येक व्यक्ति का नाक और गला भीतर से फूला रहता है इसके कारण उसे प्रायः खाँसी हो जाती है। नाक के अंदर की झिल्ली खराब हो जाती है, इसलिए उसे धीरे धीरे गंध का ज्ञान नहीं रह जाता। तंबाकू पीने से जीभ पर दरारे पड़ जाते हैं, जिससे भोजन निस्वाद लगने लगता है। इसलिए तंबाकू पीने वाले व्यक्ति अधिक मसालेवाले चटपटे और स्वादिष्ट भोजन माँगते हैं। तंबाकू पीने से मुँह और गला खुश्क हो जाते हैं, और यह चटपटे भोजन मुँह और गले को और भी अधिक जला देते हैं। प्यास अधिक लगने लगती है, और यह प्यास पानी से नहीं बुझती। इसे बुझाने के लिए शराब की जरूरत पड़ने लगती है और आदमी शराबी हो जाता है। शराब का प्रभाव शरीर पर बहुत पड़ता है। शराब शरीर के भीतरी यन्त्रों में अनेक प्रकार के रोग पैदा कर देता है। वात रज्जुओं को अव्यवस्थित करता है, और रक्त को भी दूषित कर देता है। इससे पाकस्थली बिलकुल बिगड़ जाती है।

शराबी की सन्तानें प्रायः अस्वस्थ, पागल, और दुराचारी होती हैं। उनकी अनेक प्रकार के रोगों की

एक शराबी पिता और उसकी पागल सन्तान का उदाहरण

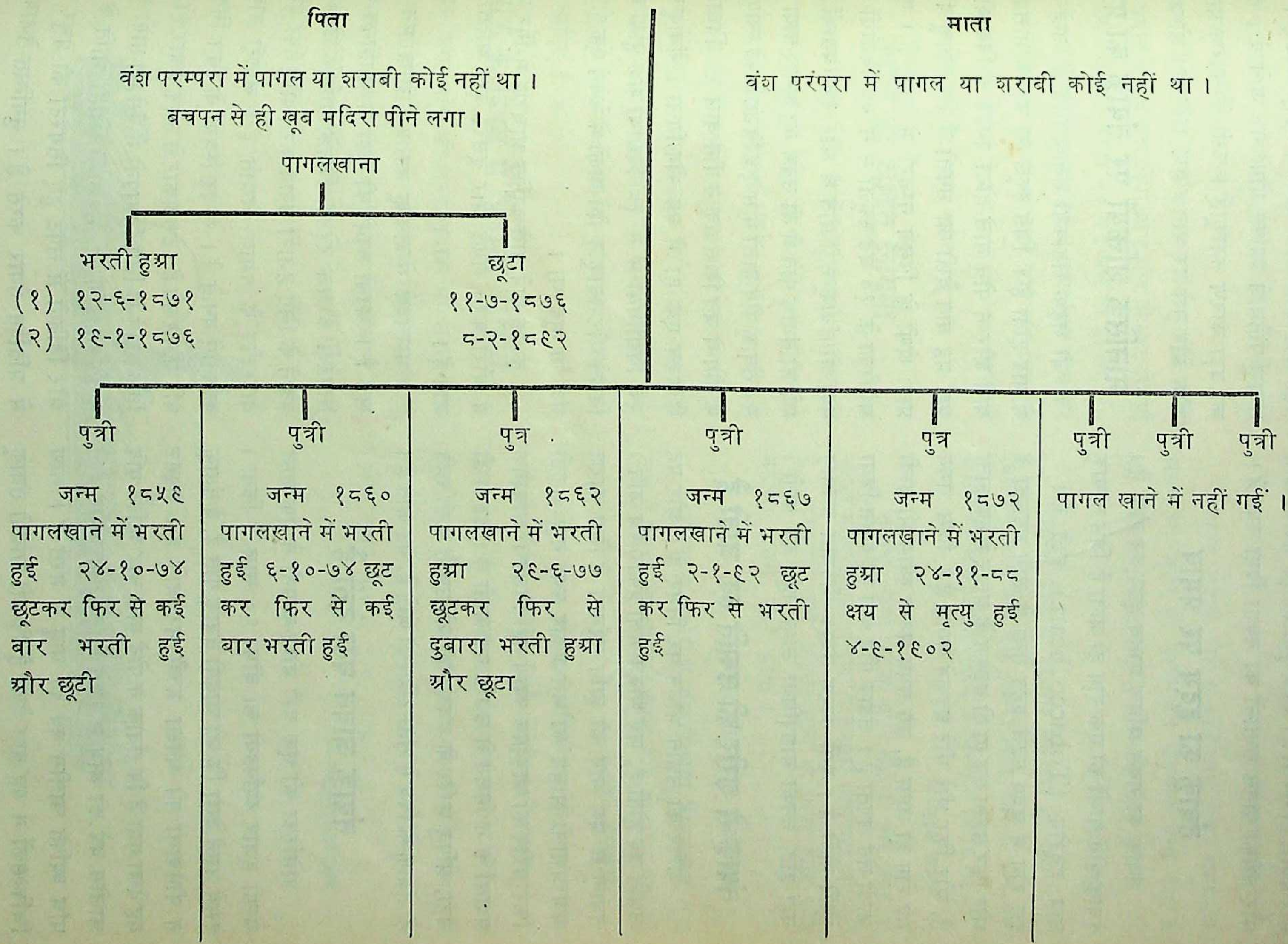

पिता

वंश परम्परा में पागल या शराबी कोई नहीं था ।

बचपन से ही खूब मदिरा पीने लगा ।

पागलखाना

भरती हुआ	छूटा
(१) १२-६-१८७१	११-७-१८७६
(२) १६-१-१८७६	८-२-१८६२

माता

वंश परंपरा में पागल या शराबी कोई नहीं था ।

पुत्री	पुत्री	पुत्र	पुत्री	पुत्र	पुत्री पुत्री पुत्री
जन्म १८५६ पागलखाने में भरती हुई २४-१०-७४ छूटकर फिर से कई बार भरती हुई और छूटी	जन्म १८६० पागलखाने में भरती हुई ६-१०-७४ छूट कर फिर से कई बार भरती हुई	जन्म १८६२ पागलखाने में भरती हुआ २६-६-७७ छूटकर फिर से दुबारा भरती हुआ और छूटा	जन्म १८६७ पागलखाने में भरती हुई २-१-६२ छूट कर फिर से भरती हुई	जन्म १८७२ पागलखाने में भरती हुआ २४-११-८८ क्षय से मृत्यु हुई ४-६-१६०२	पागल खाने में नहीं गईं ।

ओर प्रवृत्ति हो सकती है। ३०५ पृष्ठ पर एक शराबी पिता और उसकी पागल सन्तानों का नक्शा दिया गया है।

तंबाकू का हृदय पर प्रभाव

तंबाकू का सबसे अधिक प्रभाव हृदय पर होता है। तंबाकू पीने वालों को एक रोग हो जाता है जिसे तम्बाकू जन्य हृद्रोग (Tobacco heart) कहते हैं। इस रोग में हृदय पहले बहुत तेजी के साथ धड़कता है और फिर सहसा एक या दो धड़कन के अन्तर से रुक जाता है, और फिर धीरे धीरे धड़कने लगता है। जिस समय यह रोग हो जाता है, उस समय मनुष्य श्वास भी जल्दी जल्दी लेने लगता है। तंबाकू पीने वाले की श्वास-क्रिया छोटी होती है। इसी कारण तंबाकू पीनेवाले बलवान नहीं होते, उनकी मांसपेशियाँ उन्नत नहीं बन पातीं।

तंबाकू से शरीर की उन्नति रुक जाती है

शरीर की उन्नति भोजन पर निर्भर है। और यह उन्नति तब होती है, जब भोजन भली प्रकार पच जाय। तंबाकू से अन्न मार्ग को हानि पहुँचती है जिस कारण अन्न प्रणाली भोजन को भले प्रकार पचा नहीं सकती फिर शरीर को आवश्यक पदार्थ नहीं मिलते। आवश्यक पदार्थों के न मिलने से उन्नति रुक जाती है। इतना ही नहीं, अपितु शरीर के अवयव भी जो उन्नति करते रहते हैं, तंबाकू के विष से संज्ञा रहित हो जाते हैं, मर जाते हैं।

तंबाकू जीवन घटा देती है

अमेरिका की एक बड़ी बीमा-कम्पनी ने एक लाख अस्सी हजार व्यक्तियों का बीमा ६० साल में किया। इसमें उसने देखा कि जो आदमी तंबाकू पीते हैं, वे तंबाकू न पीनेवालों की अपेक्षा जल्दी मर जाते हैं। अक्सर यह देखा गया है कि तंबाकू न पीने वाले चार व्यक्ति यदि चालीस वर्ष की आयु में मरते हैं, तो तंबाकू पीने वाले पाँच व्यक्ति चालीस वर्ष की आयु में मरते हैं। शल्य चिकित्सकों ने यह बात देखी है कि जो आदमी तंबाकू नहीं पीते, उनके घाव जल्दी अच्छे हो जाते हैं। जब कि तंबाकू पीनेवाले व्यक्ति प्रायः मर जाते हैं। अंधे होने का बड़ा कारण तंबाकू है। इसी के कारण प्रायः होंठ, जीभ और गले पर घातक व्रण (कैन्सर) हो जाता है।

मानसिक शक्तियों पर तंबाकू का प्रभाव

जो लड़के लड़कियाँ तंबाकू पीते हैं, उन्हें पाठ देर में याद होता है। जिस स्कूल या कालेज में तंबाकू पीने वाले और न पीने वाले दोनों प्रकार के विद्यार्थी होते हैं वहाँ यह बात देखी जा सकती है कि तंबाकू पीने वाले प्रायः श्रेणी के पिछले नम्बरों में रहते हैं। एक बार अमेरिका के १० बड़े स्कूलों में से २० विद्यार्थी ऐसे चुने गए, जो तंबाकू नहीं पीते थे और २० विद्यार्थी ऐसे चुने गये जो तंबाकू पीते थे तो उनमें यह अन्तर पाया गया कि २० तंबाकू पीने वालों में से १४ विद्यार्थी को स्नायु संस्थान के रोग थे जब कि तंबाकू न पीने वाले २० विद्यार्थियों में से केवल एक ही में यह रोग मिला। तंबाकू पीनेवाले २० विद्यार्थियों में से १८ विद्यार्थी मंद बुद्धि और मूढ़ निकले और तंबाकू न पीने वालों में केवल एक ही विद्यार्थी मंद या मूढ़ था।

तंबाकू पीने वाले व्यक्ति आचरण में गिर जाते हैं। ये चोरी करने लगते और दूसरी बुरी आदतों में फँस जाते हैं।

भारतवर्ष में तंबाकू का ५० लाख मन सालाना खर्च है। अरबों रुपयों की पूँजी से अनगिनत कारखाने सिगरेटों के चल रहे हैं, जिनके मालिक उनका प्रचार बढ़ाने के लिए हजारों उपाय करते और ट्रेक्ट बाँटते हैं। बाइस्कोप के तमाशे दिखाते हैं। लाटरी डालते हैं। कविताएें बनाते हैं। सुन्दर स्त्रियों के चित्र सिगरेटों की पेटियों में रखते हैं। इस प्रकार से उनके प्रचार को अधिकाधिक बढ़ाने के लिए विज्ञापनों में पैसे को पानी की तरह बहाते और रंगीली, भड़कीली, भाँति भाँति के कागजों और डिबियों में लपेटे हुए सिगरेटों को प्रचुर परिमाण में प्रतिदिन तैयार करते हैं। सुगन्धित तेजाब स्पिरिट

त्यादि मिलाकर उन्हें ऐसा बनाने का प्रयत्न करते हैं कि लोगों पर उसका अधिकाधिक असर हो और वे बहुत शीघ्र तंबाकू के गुलाम बन जायँ।

भारत में १० लाख बीघे धरती में तंबाकू बोई जाती है। इतनी जमीन में यदि अन्न बोया जाय और दो बार बोआई करने से उसमें से प्रति बीघा २० मन अन्न भी हो तो, २० करोड़ मन अन्न उत्पन्न हो सकता है। प्रति दिन आध सेर के हिसाब से एक एक मनुष्य को साढ़े चार मन अन्न एक वर्ष को काफी हो जाता है। इस तरह ४४ लाख से अधिक मनुष्यों का पेट भर सकता है।

तंबाकू की आदत छोड़ना

जो तंबाकू नहीं पीते, उन्हें तो भूलकर भी इसकी आदत न डालनी चाहिए, और जो पीते हैं उन्हें भी इसकी हानि से बचने तथा स्वास्थ्य-युक्त, आनंदमय दीर्घायु प्राप्त करने के लिए इसकी आदत छोड़ देनी चाहिए। इसे छोड़ने के लिए इसका अभ्यास धीरे धीरे कम नहीं करना चाहिए, अपितु एकदम से ही पीना बंद कर देना चाहिए। इसके लिए इच्छा शक्ति, दृढ़ता एवं विचार की स्थिरता चाहिए।

तंबाकू के विषय में विद्वानों की रायें

"दारू और भांग की तरह तंबाकू भी खराब है। जो शराब को खराब मानता है, वह सिगरेट, तंबाकू कैसे पी सकता है। तंबाकू पीने वाले इतने ज्ञान शून्य हो जाते हैं कि बिना आज्ञा के दूसरों के घरों में तंबाकू पीते जरा भी नहीं शर्माते।"

—महात्मा गांधी

"चुरुट, तंबाकू पीने से बुद्धि नष्ट होकर मनुष्य की अधर्म में प्रवृत्ति हो जाती है। यह एक ऐसा नशा है, जो कई अंशों में शराब से भी बुरा है।"

—ऋषि टाल्सटाय

"तंबाकू पीने से हाजमा सुधरता है, यह विचार बिलकुल गलत है। ऐसे हजारों रोगी वैद्यों के पास आते हैं जिनकी पाचन क्रिया तंबाकू के व्यसन से बिगड़ गई है।"

—डा० मसी

"तंबाकू, चाय, शराब, आदि नशीली और जहरीली चीजों में शरीर को पोषण करनेवाला गुण जरा भी नहीं है। कमजोरी और अकाल मृत्यु के सिवा और कोई नतीजा इससे नहीं होता।"

—डा० टी० एल० निकोलस

"तंबाकू से शरीर के भीतरी भाग बिगड़ कर सूज जाते हैं यह भयंकर विष है इसमें जरा भी संदेह नहीं।"

—डा० अलमाट

"जिस पुरुष को ५० वर्ष जीना हो, वह तंबाकू पीने के कारण २०-३० वर्ष में ही मर जायगा। यह आरोग्यता का विकट शत्रु है। हम अपने प्रेमियों से अनुरोध करते हैं कि वे अपनी तन्दुरुस्ती और वीर्य्य की रक्षा चाहते हैं, तो इस 'जंगलीपन की निशानी' को सर्वथा त्याग दें।"

—स्वामी सत्यदेव

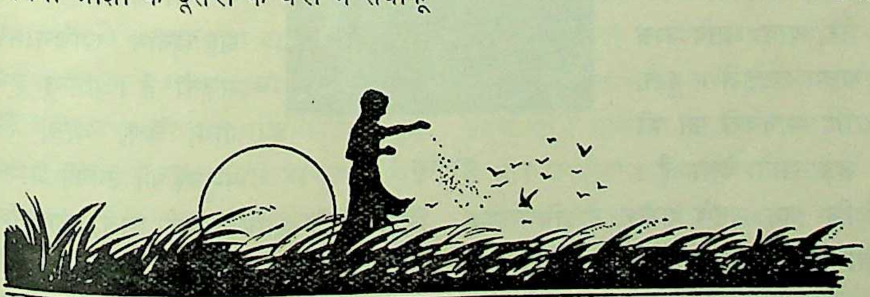

सप्राण भोजन

श्रीयुत गंगा सहाय[1] डाक्टर आफ बायोट्राफी

गत मास श्रीयुत गंगा सहाय जी ने इसी शीर्षक में भोजन सम्बन्धी अपने मौलिक विचार पेश किए थे। आपने बताया था कि हमारा भोजन फल ही क्यों हो सकते हैं। इस लेख में आपने इस विषय पर विचार किया है कि क्यों प्रचलित भोजन हानिकारक हैं। आपके लेख के सम्बन्ध में यदि पाठकों को कुछ शंकायें हों तो वे उनका समाधान भी करना चाहते हैं। पाठक उनसे अंग्रेजी में पत्र-व्यवहार कर सकते हैं। आपका पता दिया जा रहा है।—सं०

मनुष्य की शारीरिक स्थिति—दाँत, जबड़े, पेट की आंतें, पाचन व लाला-ग्रंथियाँ आदि सभी—बहुत कुछ वानर व गुरीला जाति से मिलती हुई हैं; और ये जन्तु केवल फल खाकर अपनी शक्ति प्राप्त करते हैं—अतः स्पष्ट है कि फल ही मनुष्य के लिये सबसे अधिक प्राकृतिक भोजन है। फल खाकर मनुष्य अपनी शारीरिक और मानसिक शक्ति को बहुत विकसित अवस्था में रख सकता है। शाक-तरकारी खाने में पाचन-शक्ति को बहुत अधिक काम करना पड़ेगा। हमें देखना यह है कि हमें सागतरकारी खाने की आवश्यकता क्यों पड़ती है ?

यह सर्वविदित है कि सभी मांस-भक्षी पशु जैसे शेर, बाघ आदि घास अथवा हरी जड़ें खाया करते हैं। कुत्ते, बिल्ली, बन्दर आदि जानवरों को भी मैंने घास और जड़ें खाते देखा है। क्यों ? इसलिये कि जब उनके शरीर में विजातीय द्रव्य अधिक मात्रा में इकट्ठे हो जाते हैं, तो प्रकृति उन्हें घास, जड़ें तरकारी खाने को प्रेरित करती है। घास व तरकारियों में रेशे बहुत होते हैं—ये उनके पेट को बिलकुल साफ कर देते हैं। फिर पालक, काहू, मूली, गाजर, प्याज आदि में खून में क्षार-तत्व बढ़ाने का गुण खूब है। अतः बीमारी की अवस्था में जब क्षार की शरीर में बड़ी कमी होती है तो साग सब्जी खूब खाये जाने चाहिये।

लेखक

यह याद रखिये कि प्रकृति का इरादा यह कभी भी नहीं हो सकता था कि मनुष्य अपने उदर-पोषण के लिये उतना परिश्रम करे जितना कि आजकल वर्तमान अस्वाभाविक सभ्यता के जमाने में मज़बूरन करना पड़ रहा है। आजकल के अप्राकृतिक जीवन में परिश्रम से दबे हुए मनुष्य को जीवन-धारण के लिये कुछ भी अवांछनीय खाद्यसामग्री खानी पड़ सकती है। परन्तु हम देखते हैं कि गाय, बैल, घोड़े, चिम्पांजी आदि पशुओं को उनकी आश्चर्यजनक शक्ति बिना रोटी खाये केवल घास, सागसब्जी व फलों से मिल जाती है। इससे यह सिद्ध है कि मनुष्य को भी

---

[1] 305 West eight street. Los Angeles California, U. S. AMERICA

शक्ति फलों से मिल सकती है ।

हमारे दाँतों व जबड़ों की बनावट ऐसी नहीं है कि दाल व अन्न को पूरे तौर पर चबा सकें और हज़म सकें। यह भोजन पक्षियों के लिये स्वाभाविक य है, उनके पेट की आंतें जो विशेष प्रकार की ती हैं इन अन्नों को पीस डालती हैं और हज़म कर ती हैं। फिर दालों से एक प्रकार की गैस पैदा ती है जिससे पक्षियों के लिये उड़ने में सहायता लती है। परन्तु मनुष्य के पेट में इस प्रकार की कोई लिका नहीं होती और उसे तो इन अन्नों को खाने से र, जुकाम, आदि बीमारियाँ ही मिलती हैं ।

जो भोजन हमारी घ्राण, स्वाद और दर्शन इन्द्रियों ो अपने आप से ग्राह्य नहीं है वह भोजन भी हमारे ये प्राकृतिक नहीं है । यथा मांस, देखने और सूँघने ें बहुत घृणास्पद मालूम होता है अतः हमारे लिये ाकृतिक भोजन नहीं है ।

दूध भी मनुष्य के लिये स्वाभाविक भोजन नहीं है । ध में जो चिकनाई व केसीन द्रव्य होते हैं उनसे पाचन-न्त्रों पर एक प्रकार की झिल्ली आ जाती है जिससे वे ोजन का रस आज़ादी से ग्रहण नहीं कर सकते । रिणाम यह होता है कि मनुष्य के स्वाभाविक विकास ें बाधा आ जाती है। वह, या तो बहुत दुबला रह जाता है या बहुत मोटा हो जाता है । अतः जो अपने बच्चों का वाभाविक विकास और उन्हें बलशाली देखना चाहते हैं उन्हें चाहिए कि बच्चों को सप्राण भोजन यानी फलों पर रखें। जिनके बच्चों को दुर्भाग्य से दूध उपलब्ध नहीं हो सकता उन्हें विशेष विधि से बनाया हुआ नारियल का दूध दिया जा सकता है । प्रयोग से मालूम हुआ है कि यह दूध च्चों के लिये तो बहुत उपयोगी और पुष्टि-कारक है ही, ड़ों को भी उतने ही लाभ के साथ दिया जा सकता है ।

भोजन के साथ ऊपर से नमक खाना अस्वाभाविक और हानिकारक है। इससे मूत्राशय के रोग, जल्दी बुढ़ापा आना, दृष्टि कमजोर हो जाना आदि खराबियाँ पैदा होती हैं। हमें ऊपर से नमक खाने की आवश्यकता इसलिये होती है कि भोजन को पका कर हम उसका प्राकृतिक नमक नष्ट कर डालते हैं अन्यथा ताजे फलों व वनस्पति में अपने आप से पर्याप्त नमक विद्यमान रहता है । ऊपर से नमक डालने की पूर्ति हम बहुत अंशों में नीबू से कर सकते हैं ।

चीनी अथवा बूरा बहुत हानिकारक हैं । कारण यह है कि गन्ने से अथवा जिस पदार्थ से भी चीनी बनी हो उससे अलग होते ही इसका प्राणतत्व नष्ट हो जाता है । फिर इसमें खूबी यह होती है कि यह शरीर के कैलशियम तत्व से जो चीनी बनाने की प्रक्रिया के समय, इसमें से नष्ट हो गया था, वापिस मिलना चाहती है और उसे खींचने का प्रयत्न करती है । अतः इसका परिणाम शरीर में वही होता है जो भट्ठी में मुट्ठी भर बारूद फेंकने से हुआ करता है । शरीर की हड्डियों और विशेषकर दाँतों में कैलशियम विशेष रूप से रहता है। चीनी जब इनमें से कैलशियम खैंच लेती है तो पायोरिया आदि कई रोग जो कैलशियम के अभाव में हो सकते हैं, हो जाते हैं । जैसा कि आजकल देखा भी जाता है । अतः चीनी कभी काम में नहीं लेना चाहिये––इसके बजाय मीठे फल, पिंडखजूर, गन्ना, शहद आदि से बहुत अच्छी तरह काम चलाया जा सकता है और ये चीजें शरीर के लिये बहुत लाभदायक भी हैं ।

शरीर को कायम रखने और बनाने के लिये लोहा, सोडियम, पोटैशियम, कैलशियम, मैंगेनीज़, फॉसफोरस, सलफर, सिलीकन, क्लोरीन और फ़्लूप्योराइन खनिज द्रव्य आवश्यक हैं । हरी ताजा वनस्पति में यह सभी द्रव्य सूर्यकिरणों द्वारा जो संसार की सभी वनस्पतियों अथवा जीवधारियों के प्राणों का आधार हैं, संगठित अवस्था में रहते हैं अतः उसी कच्ची और ताजी अवस्था में उन्हें ग्रहण करने से शरीर को उनसे सम्पूर्ण लाभ मिल सकता है और उपर्युक्त खनिज द्रव्य शरीर में जज़्ब होकर उसे प्राणवान बना सकते हैं । आग पर पकाने से वनस्पति का सूर्य किरण स्थित-प्राण नष्ट हो जाता है, अतः उनमें के खनिज द्रव्य असंगठित और मृतप्राय हो जाते हैं और अब शरीर में वे जज़्ब नहीं हो सकते । अतः शरीर को लाभ व

पोषण पहुँचाने के बजाय वे उसमें जमाव और सड़न पैदा करते हैं। इससे कई तरह की स्नायु-संस्थान, हृदय, लीवर, किडनी आदि विषयक बीमारियाँ खड़ी हो जाती हैं।

जिस प्रकार जले हुए कोयले से इंजन नहीं चल सकता, पुराने निर्जीव चूने से मकान नहीं खड़ा रह सकता उसी प्रकार प्राणरहित भोजन से शरीर का काम भी नहीं चल सकता। अतः स्पष्ट है कि शरीर को स्वस्थ बनाये रखना है तो हमें सप्राण भोजन करना ही होगा।

आजकल चिकित्सा-संसार में 'विटेमिन' शब्द की बड़ी महिमा गाई जाती है। यह शब्द लैटिन भाषा का है--लैटिन में "विटा" कहते हैं 'प्राण' को। वनस्पति सूर्यकिरणों को प्राणतत्व के रूप में अपने कोषों में संगृहीत रखती है और यही उनका प्राणतत्व है, जो भोजन पकाने से नष्ट हो जाता है। हमारे शरीर में जो स्फूर्ति है उसमें सूर्य के प्रकाश व किरणों का बहुत बड़ा हाथ है। भोजन द्वारा अथवा ऊपरी तरीकों से हम सूर्यकिरणों द्वारा दिये हुए इस प्राण को जितनी अधिक मात्रा में ग्रहण कर सकेंगे उतना ही अपने शरीर को प्राणवान और स्फूर्तिप्रद बनायेंगे। फल व साग सब्ज़ी आदि वनस्पति कच्ची और ताजी हालत में खाने से उनकी यह प्राणशक्ति हमें ज्यों की त्यों मिल जाती है और शरीर उसका उपयोग कर लेता है। परन्तु पकाने से वह नष्ट हो जाती है। मांस खानेवाले इस दृष्टि से बड़े घाटे में रहते हैं क्योंकि वनस्पति खाकर प्राणशक्ति का उपयोग तो जानवर कर चुकता है। मांस के रूप में वही चीज़ दुबारा पचाने के लिये मिलती है अतः मांस से हमें प्राणशक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। मांस तो उससे रहित कूड़ाकचरा मात्र है।

अब यह स्पष्ट हो गया होगा कि प्रकृति की यह व्यवस्था इतनी सुंदर और संपूर्ण है कि मनुष्य इसमें बाधक होकर सिवाय हानि के किसी प्रकार का लाभ नहीं उठा सकता। फिर भोजन पकाने से इतना नरम हो जाता है कि ज्यादा खाने में आ जाता है और पेट के अंत्रों के लिये खामखा उन दूषित पदार्थों को बाहर निकालने का काम बढ़ जाता है। प्राण-रहित भोजन करने से पेट में दूषित पदार्थों का जमाव होना अनिवार्य है ही। अब इससे दो प्रकार से हानि होती है--एक तो शरीर के लिये जो पोषणतत्व अनिवार्य हैं--वे जब उसे पकाये हुए निष्प्राण भोजन से नहीं मिल सकते तो फिर शरीर को उन्हें हमारे प्रकृतिदत्त कोष में से--जो हड्डियों व स्नायुसंस्थान में रहता है--मजबूरन लेना पड़ता है। इसका परिणाम होता है दुर्बलता का बढ़ना और हमारे शरीर की प्राणशक्ति का कम होना। दूसरा नुकसान जो निष्प्राण भोजन को करने से होता है वह है दूषित पदार्थों के जमाव से शरीर में जहर का पैदा होना और बढ़ते जाना।

प्रकृति अपनी व्यवस्था में किसी भी प्रकार के जहर और गंदगी को शरीर के अन्दर नहीं रहने दे सकती--अतः किसी न किसी रोग के रूप में उसे बाहर फेंकने का प्रयत्न करती है। अतः बीमारी अपने आप से किसी भी प्रकार से डरने लायक स्थिति नहीं है--बल्कि स्वागत करने योग्य है। यदि इसे दवाइयाँ खाकर दबाया जायगा तो किसी दूसरी शकल में विकार शरीर के बाहर निकलने की चेष्टा करेंगे। बल्कि दबाये जाने से जो बीमारी आज साधारण है वही कल को सांघातिक हो जायगी। हमें प्रकृति की व्यवस्था में संपूर्ण रूप से श्रद्धा होनी चाहिए--प्रकृति का कोई कार्य मनुष्य के लिए हानिकारक, या व्यर्थ का नहीं होता बल्कि सदा लाभ के लिये ही होता है।

अतः किसी भी प्रकार की बीमारी व पीड़ा का लक्षण दिखाई दे--हमें उसे प्रकृति की इस बात की चेतावनी समझना चाहिये कि शरीर में विकार इकट्ठे हो गये हैं--जिन्हें प्रकृति बाहर निकालना चाहती है। ऐसी स्थिति में हमें प्रकृति का सहायक होना चाहिये। जिस प्रकार जानवर बीमारी की संभावना मालूम होते ही उपवास करना प्रारंभ कर देते हैं--वैसा ही हमें भी करना चाहिये। ताकि शरीर के सारे कल पुर्जे भोजन पचाने के भार से मुक्त होकर विकारों को बाहर निकालने में लग सकें और हमारा शरीर शीघ्र ही स्वस्थ हो जाय।

प्राकृतिक चिकित्सा का महत्त्व

श्री भिक्षु का भाषण

गत जून मास के आरम्भ में तामिल नाड की तृतीय नेचुरोपैथिक कान्फरेन्स पुड्डुकोट्टा में हुई थी। उसके सभापति का आसन दक्षिण-भारत के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक श्री भिक्षु ने ग्रहण किया था। श्री भिक्षु पहले एलोपैथिक डाक्टर थे एवं अन्यान्य औषधोपचारों का भी आपको काफी तजुर्बा है। अब आप प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार में लगे हुए हैं एवं उसी के द्वारा लोगों की सहायता करते हैं। आपका अभिभाषण बहुत ही मार्के का हुआ है। उसके कुछ विशेष अंश हम यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं।—सं०

श्री भिक्षु ने अपने विद्वत्तापूर्ण भाषण में कहा कि प्राकृतिक चिकित्सा का जन्मस्थान भारतवर्ष ही है। आयुर्वेदशास्त्र के अध्ययन से यह स्पष्ट मालूम होता है कि उक्त चिकित्साप्रणाली का मूलाधार प्राकृतिक चिकित्सा ही है। केवल बाद में धीरे धीरे आयुर्वेद के साथ बहुत सी अवांछनीय बातों का जो मिश्रण हो गया है वह प्राकृतिक चिकित्सा के साथ मेल नहीं खाता।

यही नहीं, भारतीय ऋषियों ने तो धार्मिक कृत्यों के बतौर प्रतिदिन के जीवन में अमल में आने के लिये, प्राकृतिक चिकित्सा की आधारभूत उन बहुत सी बातों को रख दिया है जिनके नियमपूर्वक पालन करने से बीमार पड़ने की नौबत ही नहीं आ सकती। प्रातः उठना, बहते हुए अथवा स्वच्छ पानी से स्नान, सूर्य-नमस्कार करना (जिसमें व्यायाम तथा सूर्य-स्नान दोनों शामिल हैं), शाकाहार अथवा सात्विक भोजन करना, एकादशी आदि तिथियों पर उपवास रखना, केवल स्वच्छ जल पीना, तुलसी पत्र, पंचगव्य तथा गोवर को शुद्धि के लिए उपयोग करना, प्राणायाम करना तथा ध्यान व योगाभ्यास करना—आदि अनेक बातें हैं जिनका प्रत्येक भारतीय गृहस्थ के लिए पालन करना आवश्यक है। इनसे प्राचीन भारतीयों का प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों से पूर्णतया जानकार होना स्पष्ट है। तथा यह भी साफ हो जाता है कि आयुर्वेद का प्राकृतिक चिकित्सा से कितना घनिष्ट सम्वन्ध है।

एलोपैथी के वहुत से सिद्धान्तों का प्राकृतिक चिकित्सा से मेल अवश्य नहीं खाता। अपने ऐलोपैथी के अध्ययन और इसी पद्धति के अनुसार वर्षों चिकित्सा करने के अपने अनुभव से मैं कह सकता हूँ कि एलोपैथी की प्रणाली पूर्णतया वैज्ञानिक और बुद्धिसंगत नहीं है। बहुत सी स्थितियों में जब एलोपैथी ने रोगियों को जवाब दे दिया है, उन्हें आयुर्वेद तथा प्राकृतिक चिकित्सा प्रणालियों से ठीक किया गया है। प्राकृतिक चिकित्सा को उलझी हुई स्थिति में भी खूब सफलता मिली है।

बात यह है कि जब कि एलोपैथी कुनेन, इनजेक्शन, तथा अन्य जहरीली औषधियों द्वारा बीमारी को शरीर में रोक देती है और उन्हें बाद में अन्य रूपों में प्रगट होने के लिए आजाद छोड़ देती है—प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा बीमारी को विकार निकालने का साधन बनाकर सारे रोग को निर्मूल कर दिया जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा में सारे रोगों का रोग एक ही माना गया है—यानी शरीर में विजातीय और दूषित द्रव्यों का एकत्रित होना; तथा चिकित्सा भी एक ही मानी गई है—यानी उन विकारों को शरीर से बाहर निकाल देना। स्वस्थ होने की शक्ति तो मनुष्य-शरीर में विद्यमान है ही, चिकित्सक

का कर्त्तव्य तो केवल विकारों को शरीर से बाहर निकालने में शरीर की सहायता करना भर है।

आपने उदाहरण देते हुए बतलाया कि बीमारी का कारण कीटाणु नहीं हैं बल्कि दुर्बल मनोवृत्ति है। जिनकी इच्छाशक्ति प्रबल और सतेज होती है उन्हें प्लेग आदि कोई छूत के रोग असर नहीं करते। ऐसा अनेक बार देखा गया है। अतः रोगों से बचने के लिए शरीर और इच्छाशक्ति को सतेज और सबल बनाने की आवश्यकता है ताकि वह और शरीर रोगों से संघर्ष कर सकें।

छूत और कीटाणुओं के प्रपंच में न पड़ने की सलाह देते हुए आपने प्राकृतिक चिकित्सा के निम्नलिखित आधारभूत सिद्धांत बताये—

(१) शरीर और मन मूलतः स्वस्थ हैं। प्राकृतिक रहन-सहन के स्वस्थ्य रहने में सहायता मिलती है।

(२) स्वास्थलाभ करने की शक्ति तो मानव-शरीर में है ही, चिकित्सक का कार्य केवल शरीर को सहायता पहुँचाना है।

(३) रहन-सहन के जितने भी अप्राकृतिक और नकली तरीके हैं वही बीमारियों के कारण हैं न कि कीटाणु।

(४) उपयुक्त भोजन न करने से और रोजाना का मल शरीर से न निकलने से शरीर में विजातीय द्रव्य एकत्रित हो जाते हैं और रोग खड़े हो जाते हैं।

(५) प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का कार्य है कि एक तरफ तो विजातीय द्रव्यों को शरीर से बाहर निकालना, और उसे अपनी पूर्वावस्था पर पहुँचाना तथा दूसरी तरफ उपयुक्त प्राकृतिक भोजन द्वारा शरीर में उन पोषक तत्त्वों को पहुँचाना जिनकी उसे वास्तव में आवश्यकता है।

(६) प्राकृतिक चिकित्सा के तरीके बिलकुल सादे और मादकता रहित हैं। इनसे लाभ के अलावा हानि की जरा भी संभावना नहीं है।

आगे आपने बतलाया कि उपयुक्त भोजन के अभाव में पाचन अवयवों का बिगड़ जाना और असंयम द्वारा शरीर की शक्ति का नष्ट होना—यही दोनों अधिकांश बीमारियों के कारण हैं। अतः परिमित, सात्विक आहार और उपवास द्वारा स्वस्थ होने में जितनी सहायता मिलती है उतना फायदा दुनिया की कोई भी दवाइयाँ नहीं कर सकतीं। सात्विक भोजन में फल और शाक-सब्जी शामिल हैं। बीमार को दालें कतई काम में न लेना चाहिए। तीव्र रोगों की तीव्रता घट जाने के बाद और जीर्ण रोगों में भीगा हुआ अंकुरित अनाज बहुत लाभ के साथ दिया जा सकता है।

आजकल ऐलोपैथिक डाक्टर लोग विटामिन सहित भोजन को बहुत लाभदायक बतलाते हैं। यह विटामिन पके फल, हरी तरकारी, भीगे अनाज और सूखे फलों यथा बादाम किशमिश आदि में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

ऐलियोपैथी की दवाओं में जो मादक द्रव्यों का और पारे आदि द्रव्यों का मिश्रण होता है वह अंततोगत्वा शरीर के लिए बड़ा हानिकारक सिद्ध होता है। इसी प्रकार इनजेक्शन, कुनेन, ब्रोमाइड आदि भी शरीर में अपना जहर छोड़ जाते हैं। मुझे कई ऐसे डाक्टर भी मिले हैं जो अपने परिवार के लिए इस प्रकार की कोई जहरीली दवायें काम में नहीं लाते। प्राकृतिक चिकित्सा में इस प्रकार का कोई खतरा नहीं होता। बहुत से ऐसे केस जिनके लिए डाक्टर लोग आपरेशन की आवश्यकता समझा करते हैं, वे भी प्राकृतिक चिकित्सा से (बिना आपरेशन) अच्छे हो सकते हैं। जैसे टांसिल, हाइड्रोसील, हारनिया, बवासीर, फोड़े आदि। कई स्थितियों में आपरेशन का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है—परन्तु बहुत कम।

बीमारी से डरने की आवश्यकता नहीं है। यह शरीर में विकार एकत्रित होने की सूचना और उन विकारों को बाहर निकालने का शरीर का प्रयत्न मात्र है। उपवास, एनीमा, और भोजन के नियंत्रण द्वारा हमें शरीर के इस प्रयत्न में सहायक होना चाहिए। आवश्यकता हो तो सूर्य स्नान और वाष्पस्नान, जल के विशेष स्नान और मिट्टी की पट्टी से भी मदद ली जा सकती है। शरीर को

क हालत में रखने के लिए सूर्य-नमस्कार, योग, आसन ायाम तथा दंड बैठकों को नियम पूर्वक करना चाहिए। ारा वर्षों का अनुभव है कि शरीर के चमड़े की किसी स्म की बीमारी, कब्ज, लीवर, जल जाने, फोड़े, घाव ादि में मिट्टी के प्रयोग से बड़ा लाभ होता है।

अंत में आपने प्राकृतिक चिकित्सा का सर्वसाधारण में प्रचार करने की आवश्यकता बतलाते हुए प्राकृतिक-चिकित्सकों को अपना कार्य बहुत कर्त्तव्यपरायणता के साथ करने का उपदेश दिया ताकि कालान्तर में जनता और सरकार दोनों का सहयोग प्राप्त किया जा सके। और अपने उद्देश्य की सफलता में विश्वास प्रगट करते हुए भाषण समाप्त किया।

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

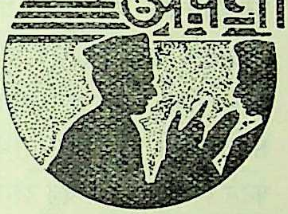

मेरे मुँह के छाले

श्रीयुत वंशीधर शर्मा

मैं बचपन से इस रोग से बहुत पीड़ित रहा। ऐसा कोई मास न था जिसमें मेरे मुँह में छाले न रहे हों। पढ़ने लिखने का काम—जिसमें बातचीत करना जरूरी और इस पर छालों का रोग, यह कोढ़ में खाज थी। प्रति सप्ताह तेज जुलाब के द्वारा पेट साफ किया करता था। दो एक दिन ठीक रहता और फिर वही दर्द और पीड़ा। यदि मसाले खाता तो मुँह में जलन होती, यदि मीठा खाता तो छाले दूने होते। शेखावाटी में रहना—शुष्क जलवायु—फलों का अभाव। कुछ समझ में नहीं आया कि क्या करना चाहिए। त्रिफला और कास्क्रेटा की गोलियाँ मैंने लगातार वर्षों तक सेवन कीं पर लाभ कुछ नहीं। कभी सुख से खाया नहीं और पढ़ाते समय भी कम बोलकर ही अपना काम निकाला। इस तरह आठ-दस वर्ष के अध्यापनकाल के बाद जब मैंने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया तब यह अवस्था मुझे बहुत अखरी और एक दिन मैंने सब दवाओं की शीशियों, चूर्ण की पुड़ियों और गोलियों के डिब्बों को तिलांजलि दे दी। और इस निर्णय पर पहुँचा कि प्राकृतिक (सात्विक) भोजन चाहे कितना भी बेस्वाद लगे बिना मसाले और बिना नमक खाने की ओर अपनी प्रवृत्ति को जागृत करने का प्रयत्न किया जाय। मुझे अपने घर में प्रचलित भोजन-पद्धति को मेरे अनुकूल बनाना पड़ा। इससे स्वभावतः मुझे यह सूझा कि भोजन संबंधी कला साधारण गृहस्थों से उठ सी गई है और अब जब कि मैं बाहर जंगल में रहता हूँ और यदाकदा शहरी वस्तुओं का बाध्य होकर प्रयोग करता हूँ तब तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर इस निर्णय पर आता हूँ कि सात्विक भोजन जिसकी रूपरेखा गीता के सत्रहवें अध्याय में अंकित की गई है, उसे हम लोग भूल गये हैं।

किसी अवसर पर यह भी याद आता है कि महात्मा टालस्टाय ने स्त्री को इच्छा-प्रधान जीव माना है। बहुत से ऐसे पदार्थ हैं जो खाने में स्वादिष्ट होते हुए भी छोड़ने पड़ते हैं और कई ऐसे पदार्थ हैं जिन्हें बेस्वाद होने पर भी खाना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है।

प्रायः भारतवर्ष में भोजन की सारी व्यवस्था हमारी पूज्य देवियों के ही हाथों में है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ कि कई प्रकार के मसालों का मिश्रण करने में रंग

और स्वाद की दृष्टि से रुचि-वैचित्र्य होता है। गुजरात में कढ़ी में मीठा, राजस्थान म साग में हल्दी और घी में मिर्च डालकर दही में तैराना, यह एक अद्भुत सा रंग और स्वाद का मेल है। इससे स्वाद ही नहीं प्रत्युत रंग की ओर भी हमारी देवियों का ध्यान आकर्षित हुआ है और इस धुन में चीज का गुण और स्वाद भी छूट गया है।

यदि इसका विस्तार के साथ वर्णन किया जाय तो इस विषय में काफी आलोचनात्मक दृष्टि से लिखा जा सकता है और दुर्भाग्य से इसको हमने सभ्यता में भी शुमार कर लिया है। परन्तु सात्विक भोजन की परिभाषा के मापदण्ड से यदि आज हम अपने समाज (शहरी समाज) के आहार को माप डालें तो हम कह सकेंगे कि हमारा समाज बहुत भटक चुका है।

राजसी भोजन में कटु, अम्ल, लवण, ऊष्ण, तीक्ष्ण, रुक्ष और विदाही, ये विशेषण आज हमारे समाज में खूब दिखाई पड़ते हैं। बिना मिर्च के कोई साग नहीं बनते, और चटपटी चाटों का तो आधार ही मिर्च पर आश्रित है और मधुर की भी यही दुर्गति है। कुछ गेहूँ के दाने सूखे चबाकर उसके बाद जौ के दाने चबाकर यदि हम अनुभव करें तो हमें अनुभव होगा कि गेहूँ में एक तरह का मिठास है जिसका अभाव जौ में है।

अनाजों में जो स्वाभाविक मिठास है उसके स्थान में गुड़, शक्कर और चीनी से अधिक मीठा करने की प्रवृत्ति हमारे समाज में गहरी जड़ पकड़ गई है। जिस मीठे के बारें में डाक्टर कैलोग यह कहते हैं—

"चीनी का व्यवहार करने से मनुष्य के शरीर में धीरे धीरे चूने, लोहे और विटामिनों की कमी होने लगती है। इसका परिणाम यह होता है कि हड्डियाँ पतली पड़ जाती हैं, दाँत कमजोर हो जाते हैं, और मांसपेशियों में शिथिलता आ जाती है।

"चीनी के साथ सबसे बुरी बात तो यह है कि यह स्वयं तो कठिनाई से पचती ही है, साथ खाई गई चीजों को भी ठीक से पचने नहीं देती। इसके व्यवहार से आँतों में छाले तक पड़ जाते हैं। खट्टी डेकार का आना, पेट में जलन का होना आदि रोग चीनी के ही व्यवहार के कारण होते हैं।"

इनसे स्पष्ट हो जायगा कि हमारे सात्विक भोजन में मीठे को भी स्थान नहीं है।

गुड़ के पक्षपाती शरीर में कौन से ऐसे तत्त्व की कमी महसूस करते हैं और वह कमी वास्तव में पूरी होती है या नहीं यह परीक्षण द्वारा तय नहीं हुआ है। मेरे छालों के सम्बन्ध में मैंने तीन साल तक गन्ने से बनने वाले किसी भी मीठे का उपयोग नहीं किया था और उस प्रयोग में मेरे शरीर को कोई क्षति नहीं हुई प्रत्युत लाभ ही हुआ। यहाँ पर यह कहना असंगत न होगा कि अपने इस सात्विक भोजन के प्रयोग काल में मुझे ढाई-तीन मास तक लगातार लुई कूने की उदर स्नान विधि और अन्य वाष्प स्नान तथा धूप स्नान आदि विधियों का भी सेवन करने का अवसर मिला जिसने सोने में सुगन्ध का काम किया। अब वह रोग निर्मूल हो गया है और अपने शरीर की छेड़ छाड़ के लिए कभी कभी मैं मिर्च जैसे तीक्ष्ण मसाले भी खा लेता हूँ और गुड़ जैसे मधुर रस का भी जान बूझकर प्रयोग कर लेता हूँ पर दोनों अवस्थाओं में मेरे लिए पहले जैसी बात नहीं रही।

मैं साधारण कोटि का जीव हूँ जिसके चारों ओर विषाक्त वातावरण है उसीने मुझे अपने कठोर नियम अर्थात् नमक, मिर्च, खट्टे और मीठे के त्याग के प्रयोग से कुछ नीचे उतरने को बाध्य किया है परन्तु बहुत से संसर्ग में आनेवाले घरों में सात्विक भोजन के महत्त्व को समझाने में काफी सफलता मिली है। वे आदमी जो अपनी जिह्वा के स्वाद को रोके बिना प्राकृतिक चिकित्सा करना चाहते हैं उनसे मेरा अनुरोध है कि वे अपनी भोजन पद्धति को—यदि उन्हें स्थायी लाभ की इच्छा है तो—आमूल बदल डालें जिसमें उन्हें अपना ही नहीं परन्तु अपने बच्चों का भी स्वास्थ्य बहुत सुन्दर देखने को मिलेगा। संभव है माता और स्त्री की ओर से पहले कुछ विरोध हो पर अनुभव ने सिद्ध कर दिया है कि थोड़े दिनों बाद उनका विरोध यदि त्रिया-हठ सा न हुआ तो सहयोग में अवश्य परिवर्तित होगा।

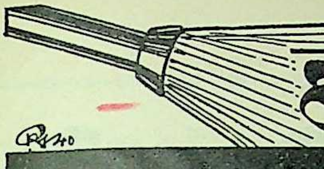

हमारी नज़र में

बोधक पत्राचें मराठी स्पष्टी करण——लेखक : राजरत्न प्रोफेसर माणिकराव, प्रकाशक : सुन्दरकुमार, बी० ए०, एल०एल० बी, चिटणीस श्री जुम्मा दादा व्यायाम मन्दिर, विट्ठल क्रीड़ा भवन, बड़ौदा। मूल्य ३)।

हमारे देश में अनेक प्रकार की कसरतें चालू हैं हैं इकट्ठा कर इनका स्वरूप निश्चित करने एवं के शिक्षण का यथोचित प्रबन्ध करने का प्रयास प्रोफेसर माणिक राव जी की अध्यक्षता में श्री जुम्मा ा व्यायाम मन्दिर वड़ौदा में किया गया है वह सर्वथा ंसनीय है। वहाँ शिक्षण के लिए एक विशद एवं ानिक क्रम निश्चित किया गया है जिसमें शरीर को ठित बनानेवाली एवं लंकड़ी, फरीगदका, भाला, पटा दि सी साहसयुक्त कसरतों का सुन्दर समावेश है। इन्हीं रतों के स्पष्टीकरण एवं उनके अंग प्रत्यंग दाँव पेंच के करण के लिए इस पौने चार सौ पृष्ठ के बोधक पत्र की ना मराठी भाषा में की गई है। पुस्तक अन्वेषण की ष्टि से सर्वथा उपयोगी है। समूह को कसरत कराते मय जो लोग अंग्रेजी ही में आज्ञा देते हैं इस पुस्तक उन्हें भारतीय भाषा में उपयुक्त शब्द मिल जाँयगे।

——बालेश्वरप्रसाद सिंह

यौगिक फिजिकल कल्चर सेल्फ इन्स्ट्रक्टर——शक : श्री देव बोहरा डाइरेक्टर, यौगिक फिजिकल ल्चर इन्स्टिटयूट, लायलपुर (पंजाब)। तीन फुट लंबे फुट चौड़े आर्ट पेपर पर छपे इस चार्ट का लागतमात्र ल्य ॥)।

जीवन-सखा के पाठक आसनों के महत्त्व से पूर्णतया रिचित हैं। शारीरिक एवं मानसिक विकाश में जो नका महत्त्वपूर्ण स्थान है उसे भी वे जानते हैं। पर नसे लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें पूर्णतया शुद्ध किया जाय। इस कार्य में बोहरा जी द्वारा प्रस्तुत इस चार्ट से पूरी सहायता मिल सकती है? चार्ट में सर्वसाधारण के योग्य कुछ आसनों की अन्तिम स्थिति ही नहीं दी गई है बीच के कई चित्र देकर उन्हें विधिवत समझाया गया है। कुल मिलाकर चौंतीस चित्र हैं। आसनों के नाम वगैरह अंग्रेजी में दिए गए हैं। यदि बोहरा जी हिन्दी में भी यह चार्ट प्रकाशित कर सकें तो वे एक बड़ी आवश्यकता की पूर्ति कर सकेंगे।

मधुकर——संपादक पंडित बनारसी दास जी चतुर्वेदी, प्रकाशक: श्री वीरेन्द्र-केशव-साहित्य-परिषद्, टीकमगढ़ (सी० आई०); वार्षिक मूल्य दो रुपया, एक प्रति का छः पैसा।

हिन्दी के विशिष्ट संपादक पं० बनारसी दास जी चतुर्वेदी के संपादकत्व में यह पाक्षिक पत्र कुछ ही महीनों से प्रकाशित होने लगा है। पत्र ने अपना क्षेत्र केवल बुंदेलखंड ही रखा है। फिर भी बुन्देलखंड से बाहर के लोगों की जानकारी की बहुत काफी चीजें इस पत्र में रहती हैं। पत्र की सामग्री देखते हुए यह कहा जा सकता है कि पत्र साहित्य से अधिक जीवन को स्थान देता है। और विषय चयन का जो दृष्टिकोण है उससे यह प्रतीत होता है कि इसे इस दिशा में अच्छी सफलता मिल रही है।

कमला——महिलाओं की यह मासिक पत्रिका दो वर्ष से श्री बापू राव जी विष्णु पराड़कर के सम्पादकत्व में काशी से प्रकाशित हो रही है। महिलाओं में जागृति उत्पन्न करने, जीवन को ऊँचा उठाने और उनके सांस्कृतिक एवं मानसिक विकाश के लिए इसके प्रत्येक अंक में भरपूर सामग्री रहती है। हम प्रत्येक भाई से उसे अपनी बहन के लिए उपहार स्वरूप इसे मँगा देने की सिफारिश करते हैं। वार्षिक मूल्य साढ़े चार रुपया।

——वि० दा० मोदी

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन आने पर ही जवाब दिया जायगा जो पृष्ठ ३१९ पर छपा है। महीने की १० तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा।——सं०

प्रश्न——मेरे छोटे भाई को सवेरे उठने के बाद बड़ी सुस्ती जान पड़ती है, जोर जोर से डकार भी आती है। ये किस रोग के लक्षण हैं और इन्हें कैसे दूर किया जा सकता है?

——रामचन्द्र गुप्त, छपरा

उत्तर——आपके भाई के इस कष्ट का एक ही कारण है, वह है अपच। उन्हें पूर्ण शाकाहारी एवं सादा भोजन —रोटी, सब्जी, फल, मेवे——करना चाहिए। मिठाई और तली हुई चीजों का प्रयोग बिलकुल बंद कर देना चाहिए। सप्ताह में दो बार वे पेट की धुलाई भी करें। सेर डेढ़ सेर गुनगुने गरम पानी में दो तीन तोला नमक मिलाकर सवेरे शौच हो आने के बाद एक साथ पी जाँय और फिर तुरंत कै करके निकाल दें। यदि वे आरम्भ में तीन चार दिन केवल फलाहार करें तो उन्हें लाभ और भी शीघ्र होगा। फलाहार करते समय नित्य सवेरे एनिमा लेना आवश्यक है।

प्रश्न——जून मास के जीवन सखा के अंक में आमके कल्प की पूरी विधि दी हुई है। आजकल आमका मौसम भी आगया है। पर क्या एक ऐसा व्यक्ति जिसके पेशाब से शक्कर निकलती हो इस कल्प का लाभ उठा सकता है? और क्या ऐसे व्यक्ति के लिए किशमिश का उपयोग दूध के साथ उचित होगा?

——कृष्ण प्रसाद, बाँदा

उत्तर——जिसे पेशाब से शक्कर आती हो उसे न आम का ही व्यवहार करना चाहिए न दूध का। किशमिश का भी उपयोग रोग करीब करीब चले जाने पर ही करना चाहिए? ऐसे रोगी का भोजन विशेषकर हरी तरकारियाँ, मठा, और शन्तरा, अनन्नास, सेब से खट्टे फल होने चाहिए। जामुन और गूलर का उपयोग भी लाभ के साथ किया जा सकता है। कभी कभी उपवास करना और महीने में तीन चार दिन केवल तरकारियों के रस या फलों के रस के आहार पर रह जाना ऐसे रोगी के लिए लाभदायक है। रोगी पेशाब की जाँच कराता रहे, चीनी न निकलने पर फिर धीरे धीरे भोजन में जौ के आटे की रोटी जोड़े। इस भोजनोपचार के साथ साथ जीवन-शक्ति बढ़ानेवाले सभी साधन—कसरत, आराम, वायुसेवन आदि का भी उपयोग रोगी को करना चाहिए।

प्रश्न——एक बार आपरेशन कराने पर भी टान्सिल यदि फिर बढ़ जाय तो किस प्रकार छुटकारा हो?

——टी० अग्रवाल

उत्तर——यह तो आप समझ ही गए होंगे कि टान्सिल की दवा आपरेशन कराना नहीं है। उसकी दवा है शरीर को निर्विकार बनाना। जब शरीर में विकार इकट्ठा हो जाता है तो वह टान्सिल, फोड़े, फुन्सी; घेघा आदि अनेक रूप धारण करके बाहर आता है। यह प्रकृति द्वारा आपके लिए सूचना है कि आप शरीर की स्थिति समझें।

टान्सिल के रोगी को श्वेतसार अर्थात् चावल, गेहूँ, आलू, बाजरे आदि का व्यवहार कुछ दिन के लिए बन्द

कर देना चाहिए और प्रोटीन के रूप में दूध और कुछ मेवे तथा फल तरकारियों का उपयोग करना चाहिए। क्रम आरम्भ करने के पहले एक दो दिन का उपवास कर लिया जाय तो अच्छा है। कागजी नींबू का रस सिल पर दिन में दो बार लगाना चाहिए तथा उसी से भी साफ कर लेना चाहिए। यदि अंगुली में नींबू रस लगा कर टान्सिल दबाया जा सके तो लाभ शीघ्र । इस विधि से टान्लिस चले जाने पर यदि भोजनादि क्रम बिगाड़ा न जायगा तो फिर यह रोग न होगा।

प्रश्न--मेरे एक सम्बन्धी पाचन-विकार एवं स्नायु-क दुर्बलता से पीड़ित हैं अक्सर मानसिक अशान्ति विचारों की दुर्बलता भी उन्हें सताती रहती है। रीरिक दुर्बलता भी अधिक रहती है। कुछ शंकाशील हैं। कृपया इनके उपचार की व्यवस्था पर कुछ काश डालने का कष्ट करें। **--रणधीर सिंह, लश्कर**

उत्तर--पाचन-क्रिया की गड़बड़ी और स्नायुविक लता को देखते हुए आपके सम्बन्धी के लिए मठे का बहुत उपयोगी होगा। अप्रैल '४१ के जीवन-सखा अंक में पृष्ठ १९९ पर जो दूध कल्प की विधि दी गई वही मठे के कल्प की भी विधि है। केवल दूध की जगह देना है। आप रोगी को एक दिन फलाहार कराने बाद दूसरे दिन से मठे का कल्प आरम्भ करा दीजिए। ले दिन घंटे घंटे पर तीन-तीन छटाँक मठा दीजिए और र धीरे धीरे समय के अन्तर को कम करते जाइए हाँ तक कि आध आध घंटे पर मठा देने लग जाइए। ले सेर भर दही में सेर भर पानी मिलाकर मठा तैयार जिए फिर धीरे धीरे पानी की मात्रा कम करते हुए ध सेर तक लाइए पर पानी की मात्रा तभी कम करना रू कीजिए जब रोगी आध-आध घंटे पर तीन-तीन टाँक मठा लेने लग जाय।

प्रश्न--मुझे सात-आठ वर्षों से बहुत कब्ज रहता है। साथ ही मुझे जुकाम-खांसी भी सदैव घेरे रहते हैं। जुकाम, चार-चार पाँच-पाँच दिन के बाद हमेशा ता रहता है, जिसके कारण अधिक कमजोर हो गया हूँ। कब्ज की तो अधिक शिकायत है। सैकड़ों रुपये खर्च कर डाले, सभी नामी इलाज कराए, किन्तु इन रोगों से छुटकारा नहीं मिलता। कसरत और दौड़-धूप भी किया करता हूँ, किन्तु 'ज्यों ज्यों दवा करते गए मर्ज बढ़ता गया, वाली बात चरितार्थ हो रही है। व्यायाम से जुकाम और कब्ज दोनों ही अधिक बढ़ जाते हैं। रोज छींकों पर छींकें होती रहती हैं। कब्ज के लिए एनिमा प्रयोग करता हूँ किन्तु कोई विशेष अन्तर नहीं। आपकी सम्मति में मुझे यह कठोर रोग दूर करने के लिए क्या क्या प्राकृतिक एवं स्वास्थ्यप्रद उपचार करना चाहिए।

--वी० एस० आनन्द, टिहरी स्टेट

उत्तर--यदि आप दस-पन्द्रह दिन का एक उपवास कर लें तो आपको बहुत लाभ होगा पर यह किसी जानकार की ही देखभाल में करना चाहिए। आप धीरे धीरे छोटे उपवासों से शुरू करें और फिर आप स्वयं एक लंबा उपवास कर सकेंगे। लंबा उपवास करने के लिए यह आवश्यक है कि पहले शरीर की सफाई एक खास हद तक कर ली जाय वह सफाई धीरे धीरे छोटे उपवासों एवं भोजनसुधार से होती रहेगी।

आप पहले जलपान करना बन्द कर दें और दोपहर तथा शाम को रोटी सब्जी लें और साथ साथ सबेरे शाम सात-सात मिनट का पेड़ू नहान भी। पन्द्रह दिन बाद आप तीन दिन का उपवास करें और इसे फल रस तथा फलों से तोड़कर फिर रोटी सब्जी और नहान शुरू करें। रोटी शुरू करने के पन्द्रह दिन बाद फिर एक पाँच दिन का उपवास करें और फिर वही क्रम चलाएं। दो तीन महीने बाद आप अवश्य ही एक लंबा उपवास करने में सफल होंगे। रोज रात को मिट्टी की पट्टी पेड़ू पर बाँधकर सोयें इससे सबेरे आपका पेट साफ होगा अन्यथा एनिमा तो पूरा काम करेगा ही।

आप जरा भी निराश न हों। सैकड़ों रुपयों की दवा ने लाभ न किया तो चिन्ता न कीजिए आप इस सीधे स्वाभाविक रास्ते से चलकर अवश्य ही सुन्दर स्वास्थ्य के स्वामी हो जायँगे।

--वि० दा० मोदी

जीवन-सखा के नियम

(१) जीवन-सखा प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को जीवन-सखा का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख काग़ज के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

सचित्र
मासिक पत्र]

धर्म-दूत

[वार्षिक १);
नमूना मुफ्त

यदि आप संसार के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष भगवान बुद्ध की जीवनी और उनका अमूल्य उपदेश पढ़ना चाहते हैं; यदि आप बौद्ध कालीन भारतीय संस्कृति, सभ्यता, साहित्य और कला का अध्ययन करना चाहते हैं; यदि आप यह जानना चाहते हैं कि संसार में भारतीय धर्म, संस्कृति, साहित्य और कला का कैसे प्रचार हुआ तो आज ही 'धर्मदूत' का ग्राहक बनिये।

पता—महाबोधिसभा, सारनाथ (बनारस)

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें

सन् १९३६ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३७ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३८ (दो अंक नहीं हैं)	मूल्य २)
सन् १९३९ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९४०	मूल्य ५)

दिव्य सूचना

आपके भाग्य की सभी बातें और सुख प्राप्ति के लिए अनेक उपाय भृगुसंहिता से ठीक ठीक बतला दिये जाँयगे। इसके लिए २॥) पेशगी और जन्म-पत्र की नकल या पत्र लिखने का समय भेजना आवश्यक है।

पं० शन्तनु त्रिपाठी ज्योतिषी
भृगुसंहिता ज्योतिष कार्यालय
अम्बिकापुर, (सुरगुजा स्टेट)

बाजारू कहानियों व गल्पों की
मृगतृष्णा से आपको

कहानी

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।
(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।
(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है

'कहानी'

सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं...यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिए।'

श्री जैनेन्द्र—

'...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...'

श्री सुदर्शन

'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम कीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—

'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब—सब विचार से अंक सर्वाङ्ग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा—

'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है—अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय—

'...कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठो...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र—

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई...'

श्री पहाड़ी—

'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेगी।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें; पुस्तकालय २।।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

बालहित

माता-पिताओं तथा शिक्षकों का एकमात्र मासिक

१–बाल जीवन के मनोविज्ञान का अध्ययन।
२–शिक्षा के नवीन प्रश्नों का शास्त्रीय विचार-विनिमय।
३–माता-पिताओं को हररोज़ की कठिनाइयाँ तथा उनके वैज्ञानिक राय।
४–लोकतंत्र के लिये शिक्षण की व्यापक समस्याओं पर विचार।

आदि जीवन व्यापी शिक्षा का मौलिक बाँचन
आप को **'बालहित'** में मिलेगा

वार्षिक २); नमूना ≡);

आज ही लिखिये—
'बालहित' उदयपुर (मेवाड़)

हिन्दी की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका

वीणा

सम्पादक
श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

प्रकाशक
श्रीमध्यभारत-हिन्दी साहित्य-समिति

डॉक्टर बाबूराम सक्सेना, एम. ए., डी. लिट्., भू. पू. प्रधान-मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग:—'वीणा' हिन्दी की उच्च कोटि की पत्रिका है और मातृ-भाषा और साहित्य की प्रचुर सेवा कर रही है।

आगामी विशेषांक दीवाली के अवसर पर

वार्षिक मूल्य ४) नमूने का अंक फ्री नहीं भेजा जाता एक प्रति ।≡)

व्यवस्थापक—'वीणा', इन्दौर

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१)	रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	२।।)
(२)	सरल शरीर विज्ञान: ले० जानकी शरण वर्मा, बी० ए०	१।।)
(३)	प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदारनाथ गुप्त०, एम० ए०	२)
(४)	मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय परिवर्द्धित संस्करण	।=)
(५)	दूध ही अमृत है : ले० हनुमान प्रसाद गोयल	१।।)
(६)	स्वास्थ्य के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय	=)।।
(७)	क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।)
(८)	ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द	१)
(९)	आदर्श-भोजन : ले० एल० एन० चौधरी	।।।)
(१०)	स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर सुकुल	१)
(११)	कब्ज या कोष्ठवद्धता : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	।-)
(१२)	हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	१)
(१३)	फल उनके गुण तथा उपयोग : ले० केशव कुमार ठाकुर	१।)
(१४)	आरोग्य साधन : ले० गांधीजी	।=)
(१५)	नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) : लूई कूने	३।।)
(१६)	आकृति-निदान : ले० लूई कूने	१।।।)
(१७)	बच्चों की रक्षा : ले० लूई कूने	।-)
(१८)	मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लुई कूने	।)
(१९)	उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफेडन	१=)
(२०)	स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय	१)

		Rs.	as.
(२१)	**Nature Cure** by H. Lindlahar, M.D.	6	0
(२२)	**Practical Nature Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	4	0
(२३)	**Pranayama** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	2
(२४)	**The Nature Cure of Eye defects** by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D.	0	8
(२५)	**Your Diet in Health and Disease** by Harry Benjamin	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

Reg. No. A-172

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलतापूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म-रोग, रक्ताभाव, पुराना [illegible] खाँसी, दमा, [illegible], प्लूरिसी, दमा, बवासीर, [illegible], आमाशय का व्रण, [illegible] की खराबी, सभी तरह के ज्वर, यथा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arteriosclerosis), [illegible] चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), [illegible] (Appendicitis), [illegible] (Carbuncle), गठिया, तिल्ली बढ़ जाना, [illegible] के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह, [illegible] [illegible], [illegible], यक्ष्मा, [illegible], उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर ग्रांड-ट्रंक-रोड पर एक बड़े रकबे के सुन्दर उपवन में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने का पूरा अवसर मिलता है।

नियमावली पाँच पैसे का डाक-टिकट भेजकर मँगा ही सकते हैं। संक्रामक (Infectious) रोग के रोगियों के लिए स्वास्थ्य-गृह में प्रबन्ध नहीं है।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY [illegible] PRASAD SINHA [illegible] ALLAHABAD

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

सितम्बर
१९४१

७ अगस्ट ४१ को गुरुकुल को

संपादक :: पालेश्वरप्रसाद सिंह

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिएँ। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

५००) का पुरस्कार

प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तक के लिए

प्राकृतिक चिकित्सा विषयक एक सर्वाङ्ग सुन्दर पुस्तक चाहिए। जो महानुभाव लिख सकें विस्तृत विषय-सूची के साथ निम्नलिखित पते पर पत्र-व्यवहार करें।

जिन सज्जनों ने जल, वायु, धूप, मिट्टी, भोजन, कसरत, जड़ी-बूटी आदि सम्बन्धी छोटे-बड़े जो भी प्रयोग किए हों, कृपा पूर्वक लिख भेजें। उक्त पुस्तक में उन्हें सधन्यवाद प्रकाशित किया जायगा।

उर्दू बाजार,
गोरखपुर

विट्ठलदास मोदी

जीवन-सखा की पुरानी फाइलें

सन् १९३६ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३७ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९३८ (दो अंक नहीं हैं)	मूल्य २)
सन् १९३९ (एक अंक नहीं है)	मूल्य २॥)
सन् १९४०	मूल्य ५)

दिव्य सूचना

आपके भाग्य की सभी बातें और सुख प्राप्ति के लिए अनेक उपाय भृगुसंहिता से ठीक ठीक बतला दिये जायँगे। इसके लिए २।) पेशगी और जन्म-पत्र की नकल या पत्र लिखने का समय भेजना आवश्यक है।

पं० शान्तनु त्रिपाठी, ज्योतिषी
भृगुसंहिता ज्योतिष कार्यालय
अम्बिकापुर, (सुरगुजा स्टेट)

युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

सितम्बर
१६४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क ८

इस अङ्क में

विषय लेखक पृष्ठ

१. सम्पादकीय-- ३२०

२. डाक्टरों का हौवा कीटाणुवाद और उसकी वास्तविकता--श्रीयुत गंगाप्रसाद गौड़ 'नाहर' ३२१

३. रोगों के सम्बन्ध में डा० दास के विचार--श्रीयुत महेशदत्त मिश्र, एम्० ए० .. ३२८

४. प्राकृतिक चिकित्सा ही क्यों?--प्रो० धर्मदेव शास्त्री ३३१

५. 'अपच' या अजीर्ण रोग--स्टैनली लीफ़, एन० डी०; डी० ओ० .. .. ३३४

६. नींद लग गई--श्रीयुत महेशचन्द्र अग्रवाल, बी० एस्-सी० .. .. .. ३३६

७. सूर्य-स्नान और वायु-स्नान--श्रीयुत देवदत्त जैन ३३९

८. आँखों के सामने मक्खी उड़ना--डा० आर० एस० अग्रवाल, नेत्र-विशेषज्ञ .. ३४२

९. मैं दमा रोग से कैसे मुक्त हुआ?--श्रीयुत मक्खनलाल 'मगन' ३४३

१०. प्रश्नोत्तर-- ३४६

अगले अंक

में

क्या रहेगा?

१. उत्तम स्वास्थ्य के लिए श्वास-क्रिया
डा० के० लक्ष्मण शर्मा

२. श्वास-रोग और उसकी प्राकृतिक चिकित्सा
प्रो० भवानी प्रसाद, गुरुकुल, कांगड़ी

३. चिकित्सा-काल में समय का महत्त्व
हरबर्ट एम्० शेल्टन, एन० डी०

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

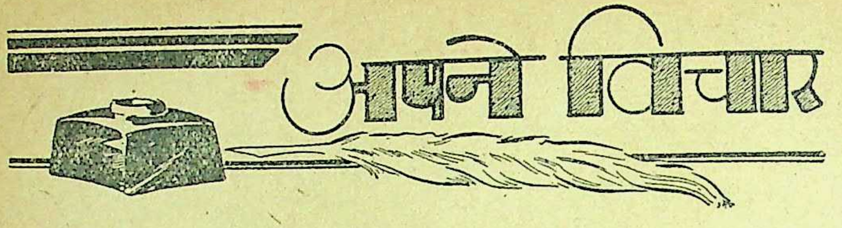

अपने विचार

शारीरिक स्वास्थ्य बनाम मानसिक स्वास्थ्य

'जीवन-सखा' के एक जिज्ञासु पाठक ने यह प्रश्न किया है कि महात्मा गाँधी स्वास्थ्य के प्राकृतिक नियमों का बड़ी कठोरता के साथ पालन करते हैं, फिर भी शरीर से वे इतने हृष्ट-पुष्ट नहीं हैं जैसा कि एक औसत दर्जे के तन्दुरुस्त आदमी को होना चाहिए। हम इस प्रश्न का उत्तर यहाँ पर न देकर अलग से देंगे। यहाँ हम केवल अपने पाठकों का ध्यान इस बात की ओर दिलाना चाहते हैं कि प्राकृतिक चिकित्सा का ध्येय केवल शारीरिक स्वास्थ्य प्राप्त करना ही नहीं बल्कि उसके साथ-साथ मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य प्राप्त करना भी है। पूर्ण स्वस्थ तो हम उसी को कहेंगे जिसमें स्वास्थ्य के ये तीनों पहलू मौजूद हों। तगड़ा और हृष्ट-पुष्ट शरीर होना वांछनीय है लेकिन वही सब कुछ नहीं। हम स्वस्थ रहना इसलिए चाहते हैं ताकि हमारा जीवन सुख और शान्ति पूर्वक व्यतीत हो। किन्तु क्या आप यह दावा कर सकते हैं कि इस उद्देश्य की पूर्ति केवल शारीरिक स्वास्थ्य के ही द्वारा हो सकती है? ——कदापि नहीं। स्वस्थ शरीर के भीतर वास करने वाले अस्वस्थ मस्तिष्क की वही दशा है जो किसी ताकतवर घोड़े पर सवार अशक्त अथवा कमजोर व्यक्ति की होती है। जीवन की सुख-शान्ति हमारी क्रियाओं पर निर्भर करती है और हमारी शारीरिक तथा मानसिक क्रियाओं का संचालन हमारे मस्तिष्क के द्वारा होता है। लेकिन अगर हमारा मस्तिष्क स्वस्थ नहीं है तो वह शारीरिक क्रियाओं पर हमारे आचरण तथा आहार-विहार पर अपना कोई नियंत्रण नहीं कायम कर सकता। आचरण तथा आहार-विहार दूषित होने से शारीरिक स्वास्थ्य कहाँ तक अच्छा बना रह सकता है यह कहने की नहीं, सोचने और समझने की बात है। 'सादा भोजन उच्च विचार' की भावना को लोग केवल पुस्तकों और लेखों तक ही सीमित रखना चाहते हैं, उसे व्यवहार रूप में लाने की इच्छा ही नहीं होती। इसके फलस्वरूप अगर लोग तरह तरह के रोगों से ग्रसित होते हैं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है। आपको ऐसे बहुत से व्यक्ति मिल सकते हैं जो देखने में तो शरीर से स्वस्थ और मजबूत जान पड़ते हैं लेकिन अगर आप उनसे कुछ देर तक बातें कीजिए तो वे आपसे अपनी किसी न किसी अन्दरूनी खराबी की ही चर्चा चलाएँगे। यह मानसिक अस्वास्थ्य का ही परिणाम है। यही नहीं बल्कि सच तो यह है कि शारीरिक अस्वास्थ्य से मानसिक अस्वास्थ्य कहीं अधिक खतरनाक होता है। शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार करना इतना कठिन नहीं है जितना कि मानसिक स्वास्थ्य को सुधारना। दूसरी बात यह कि शरीर से अस्वस्थ रहने वाला व्यक्ति अपने इस अभिशाप के भार को अकेले ही वहन करता है, इसका बोझ औरों पर नहीं पड़ने देता। लेकिन इसके विपरीत मानसिक अस्वास्थ्य का शिकार बना प्राणी अपने तो कष्ट भोगता ही है पर साथ ही वह समाज के जिस दायरे में रहता है उसे भी दूषित बना देता है।

फिर इस शारीरिक स्वास्थ्य के ही लिए लोगों में इतना अधिक आकर्षण क्यों? इसकी एक वजह है। मनुष्य के हृदय में वास करने वाली घृणा, ईर्ष्या और द्वेष की भावनाएँ प्रतिशोध चाहती हैं और इस उद्देश्य की पूर्ति का साधन बनती है उसकी शारीरिक अथवा पाशविक शक्ति। इसलिए वह मानसिक अथवा नैतिक स्वास्थ्य को अपने लिए इतना अधिक जरूरी नहीं समझता। वह सुख और शान्ति का इच्छुक तो है पर वह इसे जिस साधन के द्वारा प्राप्त करना चाहता है वह भ्रमात्मक और गलत है।

एक बार किसी ने महात्मा गाँधी से यह प्रश्न किया कि आपने अपने जीवन में कौन सी सबसे बड़ी सफलता प्राप्त की। इसके उत्तर में उन्होंने कहा——'मैंने अपनी शान्ति कभी नहीं खोई।' जीवन का सच्चा सुख यही है और यह मानसिक स्वास्थ्य का ही वरदान है। हम अगर अपने जीवन को पूर्णरूप से सुखी और शान्तिमय बनाना चाहते हैं तो यह अनिवार्य रूप से आवश्यक है कि हम शारीरिक और मानसिक दोनों दृष्टियों से अपने को स्वस्थ बनावें।

✠

डाक्टरों का हौवा कीटाणुवाद और उसकी वास्तविकता

श्रीयुत गंगाप्रसाद गौड़ 'नाहर'

जब किसी डाक्टर को, कोई संक्रामक रोग से पीड़ित रोगी को देखने का अवसर आता है, तो उसे बड़ी घबराहट होती है; क्योंकि उसके यहाँ लगभग सभी रोगों, विशेषतया संक्रामक रोगों, के कारण कीटाणु ही माने जाते हैं, जो एक शरीर से दूसरे शरीर में रोग फैलाने की क्षमता रखते हैं। डाक्टरों का विश्वास है कि रोग के कीटाणु प्रत्येक व्यक्ति के लिए, प्रत्येक अवस्था में, रोगोत्पत्ति का कारण बन सकते हैं--यदि उनसे बचाव का उपाय अनेक मारक दवाइयों (विषों) द्वारा पूर्व से ही न कर लिया गया हो। उनकी यह धारणा कितनी भ्रमोत्पादक एवं सत्य पर परदा डालने वाली है, इसी आवश्यक विषय पर विचार करने के लिए प्रस्तुत लेख की अवतारणा हुई है।

कीटाणु सम्बन्धी फैले हुए भ्रम का मूलोच्छेदन करने से पहले हमें यह जान लेना होगा कि इस सम्बन्ध में वैज्ञानिकों एवं डाक्टरों के क्या विचार हैं?

एक डाक्टर कीटाणुओं को मनुष्यों के लिए, विषधर सर्पों से भी अधिक भयंकर समझता है। वह कहता है कि कीटाणुओं में स्वतन्त्र जीवन, और शीघ्रता के साथ अपनी संख्या बढ़ाने की स्वाभाविक शक्ति होती है। वह कीटाणुओं को सर्वव्यापी मानता है। उसकी समझ से कीटाणु, पृथ्वी, वायु, भोजन और जल में उपस्थित रहकर स्वस्थ और अस्वस्थ—दोनों प्रकार के मनुष्यों के शरीर में साँस लेते, भोजन करते, तथा पानी पीते समय, करोड़ों की संख्या में प्रतिदिन प्रवेश करते रहते हैं। ये तो बाहर से कीटाणुओं के आयात की बातें हुईं। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक मनुष्य के भीतर न जाने कितने 'बेक्टीरिया' की उपस्थिति वह हर अवस्था में मानता है। कीटाणुओं के कार्य के सम्बन्ध में डाक्टरों का विश्वास है कि उन्हीं से दुनिया भर के रोग —हैजा, प्लेग, चेचक, पेचिश, बुखार आदि—फैलते हैं। वे कीटाणुओं को रोगों का एजेन्ट, और मनुष्य जाति का प्रबल शत्रु समझते हैं। वे कहते हैं कि कीटाणुओं में ऐसी असाधारण शक्ति होती है कि वे अपने से १०,००,००० गुने मनुष्यों का संहार एक क्षण में कर सकते हैं। एक डाक्टर जिसको सर्वत्र कीटाणु-ही-कीटाणु दिखाई देता था, लिखता है कि संसार के कीटाणु यदि डाक्टरी दवाइयों द्वारा नष्ट न किए जायँ तो जल-वायु अनुकूल रहने से वे केवल तीन दिन के भीतर ही, एक एक के तीस-तीस खरब हो जायँगे। आश्चर्य का विषय है कि संसार के बड़े-बड़े वैज्ञानिक—पास्त्युर, मेचनीकाफ, रैट, बुलक, आदि की भी साधारणतः यही धारणा है कि शरीर में रोगाणुओं का प्रवेश बाहर से होता है, और वही भीतर घुसकर रोगों का कारण बनते हैं, जब कि असलियत ठीक इसके विपरीत है।

कीटाणु, रोग के कारण नहीं; रोग, कीटाणु के कारण

यह एक प्राकृतिक नियम है कि सृष्टि में जितने पदार्थ हैं उनके सूक्ष्म परमाणु, अनवरत रूप से गतिशील रहते हैं। जिन वस्तुओं के परमाणु एक-सी गति रखते हैं, उनमें परस्पर आकर्षण होता है, और विरुद्ध गति वाले परमाणु, एक दूसरे से दूर भागते हैं। अतः इस सिद्धांत के अनुसार रोग के कीटाणुओं का अस्तित्व होना, उन्हीं शरीरों में सम्भव है जिनमें पहले से ही रोग विद्यमान हैं, या जो रोग-ग्रसित हैं या जिनमें रोगों के ग्रहण करने की काबिलियत (विजातीय द्रव्य की उपस्थिति के फलस्वरूप) हैं। लेकिन, जिन शरीरों के भीतर, कीटाणुओं के विपरीत पोषक तत्व विद्यमान होंगे, अर्थात्, जो विसदृश द्रव्य से सर्वथा मुक्त होंगे, और स्पष्ट शब्दों में, जो पूर्ण स्वस्थ होंगे, उनपर उक्त प्राकृतिक नियम के अनुसार कीटाणुओं का आक्रमण होना असम्भव है। और यदि थोड़ी देर के लिए यह कार्य संभव भी मान लिया जाय तो ऐसे शरीरों में निषेधक शक्ति पहले से ही विद्यमान होने के कारण रोगाणुओं का विषवत् प्रभाव नष्ट हो जायगा और वे स्वयं लुप्त हो जावेंगे।

अपने इस कथन को मैं एक और ढंग से स्पष्ट करूँगा। प्रश्न है, एक रोगी के रोगाणु किसी दूसरे मनुष्य के शरीर में रोग उत्पन्न कर सकते हैं या नहीं? इसका उत्तर 'हाँ' में भी है और 'नहीं' में भी। अर्थात् जो मनुष्य पूर्ण स्वस्थ है, अथवा जिसका शरीर निर्मल है, उसके शरीर में संसार के सारे रोगाणु एक साथ मिलकर भी रोग उत्पन्न नहीं कर सकते। ऐसा मनुष्य, हैजा, प्लेग के कितने ही कीड़ों को क्यों न उदरस्थ कर जाय, किन्तु वे उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। परन्तु वे व्यक्ति, जो पहले से रोगी हैं, जिनके शरीरों में कीटाणुओं के पोषण योग्य द्रव्य विद्यमान हैं, उनमें रोगाणु अवश्य उत्पन्न होंगे, पनपेंगे, तथा वृद्धि को प्राप्त होंगे, विशेषकर उस अवस्था में जब कि दोनों का तापमान समान होगा। अवश्य ही यदि शरीर में विजातीय द्रव्य थोड़े परिमाण में होगा तो कीटाणुओं का भय भी कम रहेगा।

उदाहरण के लिए चेचक का दृष्टान्त लीजिए। चेचक जैसे छूत वाले रोगों में छूत की समस्त प्रक्रिया ठीक उसी प्रकार होती है, जिस प्रकार गुँधे हुए आटे वा दूध में क्रमशः खमीर वा जामन का, अथवा चेचक न हुए शरीर में चेचक के टीके का। यही कारण है कि घर में यदि एक व्यक्ति को चेचक निकले तो यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि उसकी छूत से उस घर का प्रत्येक प्राणी समान रूप से आक्रान्त हो उठे। चेचक का छूत द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति को निकलना या न निकलना तथा कम या अधिक निकलना, उस व्यक्ति के शरीर के भीतर विजातीय द्रव्य की उपस्थिति या अनुपस्थिति, तथा कम या अधिक परिमाण में उपस्थिति पर ही निर्भर करता है। आप कह सकते हैं कि जनाब! देखने में तो यह आता है कि जब चेचक, हैजा या प्लेग का प्रकोप होता है तो गाँव का गाँव शहर का शहर साफ हो जाता है, केवल थोड़े से भाग्यवान व्यक्ति ही बच जाते हैं। क्या उस समय महामारी से मरने वाले सभी व्यक्ति विजातीय द्रव्य से परिपूरित होते हैं? इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि प्रथम तो महामारी में मरने वाले सभी व्यक्ति महामारी में फैले हुए रोग से ही नहीं मरते, बल्कि उनमें से अधिकांश, उस रोग के भय से मर जाते हैं। फिर यदि थोड़ी देर के लिए यह मान भी लिया जाय कि सारे-के-सारे मरने वाले व्यक्ति, उस समय की फैली हुई छूत वाली व्याधि के कीड़ों ही से मरते हैं, तो यह भी मिथ्या नहीं है। कारण आज हममें से कितने हैं, जो दावे के साथ कह सकते हैं कि 'मैं विसदृश द्रव्य से सर्वथा शून्य हूँ', अथवा दूसरे शब्दों में 'मेरी काया स्वच्छ तथा निर्मल है, मैं सब प्रकार से निरोग हूँ?' अस्तु।

हमारे आजकल के अप्राकृतिक जीवन को दृष्टि में रखते हुए यह आश्चर्य का विषय नहीं है कि महामारी के जमाने में कुछ भाग्यवानों को छोड़ कर सब के सब कैसे मर जाते हैं। वास्तव में आश्चर्य का विषय

तो यह है कि उक्त कुछ भाग्यवान व्यक्ति उस समय मरने से बच कैसे जाते हैं। यदि हम ठंढे दिमाग से इस विषय पर थोड़ा-सा विचार करें तो मेरे इस कथन की सत्यता प्रमाणित हो जायगी।

यह तो कहने का साहस कोई कर ही नहीं सकता कि रोग के कीटाणु होते ही नहीं। वे होते हैं और अवश्य होते हैं, और इतने होते हैं कि यदि हम उनसे अपनी रक्षा करना चाहें तो किसी प्रकार कर ही नहीं सकते। प्रतिदिन की हवा, जिसमें हम साँस लेते हैं, प्रतिदिन के भोजन, जिसे हम खाते हैं, पानी, जिसे हम पीते हैं, कीटाणुओं से परिपूर्ण होते हैं। उनके अस्तित्व को कौन अस्वीकार कर सकता है? हम केवल इन्कार इस बात से करते हैं कि कीटाणु बीमारियों के कारण होते हैं। हम डाक्टरों की इस बात से भी सहमत हैं कि रोगों में उनके कीटाणु वर्तमान हो सकते हैं। मगर हम इस बात से कदापि सहमत नहीं हैं कि रोग-ग्रस्त शरीरों में रोग के कीटाणुओं की उपस्थिति इस बात का प्रमाण है कि कीटाणु ही रोग के कारण हैं।[1] किन्तु सत्य यह है कि रोग के समय या उससे पूर्व विसदृश द्रव्य, शरीर में जमा होकर जब सड़न पैदा कर देता है, तो वह सड़न उस रोग के कीटाणु का कारण होता है। सीधी सी बात है कि यदि कीटाणु रोगों के असल कारण होते तो रोग के आरम्भ होने के पूर्व ही वे शरीर में मौजूद रहते, किन्तु ऐसा वास्तव में होता नहीं। यह अनुभव सिद्ध बात है कि कभी-कभी कीटाणुओं की अनुपस्थिति में भी रोग के चिह्न प्रकट होने लगते हैं। डा० आर० एल० वाटकिन्स ने अपनी एक प्रसिद्ध पुस्तक में लिखा है कि तपेदिक होने से पूर्व उस रोग के रोगी के शरीर में तपेदिक के कीटाणुओं के मौजूद रहने का कोई भी प्रमाण नहीं मिलता। डाक्टरों का दावा है कि यक्ष्मा के कीटाणु रुधिर द्वारा स्नायुओं में प्रवेश कर जाते हैं, किन्तु प्रयोग करने पर यह दावा भी गलत साबित हो चुका है। कीटाणु-शास्त्र के बड़े-बड़े विशेषज्ञों एवं आचार्यों ने इस बात को स्वीकार कर लिया है कि बहुधा मनुष्य के शरीर में रोगों के कीटाणु ऐसी अवस्था में पाये जाते हैं जब कि उसे वे रोग हुए ही नहीं रहते। क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि कीटाणु, रोग के कारण नहीं होते?

कुछ दिन हुए, कनाडा के एक प्रसिद्ध चिकित्सक डा० जोन फ़्रेजर ने प्रस्तुत विषय पर अनेक प्रयोग करके इस पर अपनी अमिट छाप लगा दी है, और सिद्ध कर दिया है कि रोग कीटाणुओं से नहीं उत्पन्न होते, अपितु उनकी उत्पत्ति का कारण कुछ और है।

इंगलैण्ड की विख्यात स्वास्थ्य सभा "नेशनल-हेल्थ-लीग", जिसके सभापति सर आगस्टस जार्ज हैं, का दावा है कि प्राचीन सिद्धांत, जो कीटाणुओं को रोग का कारण बताता है, सर्वथा मिथ्या है। उनके विचार से विविध रोगों के कारण विविध प्रकार के कीटाणु नहीं हैं, जैसा कि इंगलैण्ड के रूढ़िवादी डाक्टर अब तक समझते आए हैं, किन्तु शरीर रूपी यन्त्र की पूरी तौर से रक्षा और सफाई न करना है। उक्त लीग का सिद्धान्त है कि कीटाणुओं का प्रभाव रोग की अन्तिम अवस्था में होता है जो उनके अस्तित्व को कायम रखने के लिए अनुकूल पड़ती है।

---

[1] **नोट—अभी हाल ही में एक अमेरिकन वैज्ञानिक संस्था ने ५०० व्यक्तियों की कण्ठ-नाली से लार निकाल कर उसकी परीक्षा की थी। फलस्वरूप उनमें से ३३७ अर्थात् ६७ प्रतिशत व्यक्तियों के शरीर में निमोनिया के कीटाणु पाए गए। उनमें से कुछ लोगों के शरीर में पाए गए कीटाणु तो बहुत ही भयानक किस्म के थे। कुछ व्यक्तियों के शरीर में दो या दो से अधिक तरह के कीटाणु पाए गए तथा अन्य लोगों में प्रायः हर प्रकार के रोग के कीटाणु मौजूद थे। फिर भी उनमें से कोई भी व्यक्ति रोग-ग्रस्त नहीं था और न उनमें किसी प्रकार के रोग के ही लक्षण पाए गए। इस प्रकार अब पाश्चात्य देशों में कीटाणुओं के सम्बन्ध की भ्रमात्मक धारणाएँ निर्मूल होने के लक्षण दिखाई देने लगे हैं।—सं०**

टोरन्टो में तीन साल (१९११-१३) तक लगातार वैज्ञानिक लोग केवल इस बात की छान बीन और प्रयोग करते रहे कि मनुष्य-शरीर पर कीटाणुओं का आक्रमण कब होता है, तथा वे स्वास्थ्य के लिए खतरनाक हैं या नहीं। वैज्ञानिकों के इस घोर परिश्रम का जो परिणाम निकला वह यह था कि चूँकि रोग के होने के बाद ही कीटाणु प्रकट होते हैं, इसलिए कीटाणु, रोग के परिणाम स्वरूप ही होते हैं, और इस तरह से वे स्वास्थ्य के लिए हानिकर भी नहीं होते। १९१४ ई० में उसी टोरन्टो नगर के कुछ उपकारी व्यक्तियों ने, इस सिद्धान्त को प्रमाणित सिद्ध करने के लिए कि कीटाणु, मानव-शरीर के लिए हानिकर होते हैं या नहीं वैज्ञानिकों को अपनी सेवाएँ समर्पित की थीं, जिसके फलस्वरूप उन लोगों को ताजे और स्वस्थ कीटाणु भोजन और जल में मिश्रित करके दिये गए थे किन्तु उससे उनका बाल भी बाँका नहीं हुआ; अर्थात् उन व्यक्तियों में से किसी भी व्यक्ति में बीमारी के कोई लक्षण नहीं पाये गए। एक नहीं अनेक ऐसे प्रयोग हुए। डिप्थीरिया, निमोनिया, टाईफाइड, ज्वर, गर्दनतोड़ ज्वर आदि के करोड़ों कीटाणु दूध, पानी और भोजनों में मिला-मिला कर उन पुरुषों को खिलाए गए, किन्तु उन सभी अवस्थाओं में परिणाम शून्य निकला।

उपरोक्त प्रयोगों के आधार पर प्राकृतिक चिकित्सक ही क्यों, कोई भी विचारशील व्यक्ति इस बात को माने बिना नहीं रह सकता कि कीटाणु से रोग नहीं फैलते, वरन् रोग शरीर की विशेष अवस्थाओं के कारण होते हैं, और कीटाणु रोग जनित मलिनता एवं सड़न से पैदा होते हैं।

उक्त सिद्धान्त के प्रमाण में एक और दृष्टान्त 'विज्ञान' पत्र से उद्धृत करने का लोभ संवरण नहीं किया जा सकता। यूरोप के वियना विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध प्रोफेसर, चिकित्सक एवं अन्वेषक डा० पेटनकोफर भी कीटाणु संबंधी इसी सिद्धान्त में विश्वास करते थे। उन्होंने कई बार सतर्क रहकर इस विषय पर व्याख्यान दिए और लेख लिखे, यद्यपि यूरोप का समस्त रूढ़िवादी चिकित्सक-समुदाय उनके विरुद्ध रहा। एक दिन उन्होंने अपने विद्यालय में अपने सप्रयोग व्याख्यान से लोगों को आश्चर्य में डाल दिया। वे हैजे के रोगाणुओं पर बोल रहे थे। पास ही एक बीकर में हैजे के असंख्य रोगाणुओं से परिपूरित घोल रक्खा हुआ था, जिसको उठाकर वे श्रोताओं के सामने ही गट-गट करके गले से उतार गए। परीक्षा अतीव भयानक थी। मगर सिद्धान्त की सत्यता में अटल विश्वास था, कुछ न हुआ।

इसी प्रकार अमेरिका के विसकन्सन स्टेट के एक डाक्टर रोडरमंड का उदाहरण है। उन्होंने अपने डाक्टर मित्रों के सामने यह सिद्ध करने के लिए कि भली-चंगी देह में संक्रामक रोगों के कीटाणुओं का कोई असर नहीं होता, अपने सारे शरीर में चेचक के विस्फोटकों का मवाद मल लिया। वहाँ के कानून के अनुसार वे तुरत पकड़कर क्वारंटाइन में बंद कर दिये गए। परन्तु इसके प्रथम बहुत से व्यक्ति उन्हें छू चुके थे। परिणामतः न उन्हें चेचक निकली और न उन व्यक्तियों में से किसी को, जिनको उन्होंने छुआ था। ऐसा क्यों हुआ? इसलिए कि कीटाणुओं का, या छूत का उन्हीं शरीरों में असर होता है जो मल या विष से लदे होते हैं। जिनकी दशा उस अति संयुक्त घोल, या अति हिमीकृत जल की सी होती है, जिसके जमाने के लिए बाहर का एक कण भी काफी होता है। जो शरीर मलों और विषों से बेतरह लदा है, उसकी समतोल (Equilibrium) दशा में उद्रेक पैदा करने के लिए रत्ती भर बाहरी उत्तेजना भी बहुत है।

कीटाणुओं का अस्तित्व आवश्यक, एवं नाश असम्भव

परमात्मा ने संसार में कोई भी वस्तु बेफायदा नहीं पैदा की है। काश ये रूढ़िवादी डाक्टर, केवल इसी एक बात को तत्व से समझने का कष्ट करते, तब भी यह कीटाणु संबंधी सिद्धान्त उनकी समझ में आसानी से आ जाता। यह असत्य नहीं है कि कीटाणु-परमाणु ही

कृति देवी के वास्तविक हाथ-पैर हैं, उन्हीं से वह सृष्टि ा सृजन, पालन, तथा संहार करती है। यह भी मिथ्या हीं है कि सृष्टि और प्रलय का तारतम्य कीटाणु-परमाणु र ही निर्भर करता है। संसार में जो सर्वत्र जीवन देखने आता है, यह उन्हीं कीटाणुओं की ही बरकत है। यं मनुष्य, क्षुद्राति क्षुद्र कीटाणु का ही एक विकसित है, क्या इस तथ्य से भी कोई इन्कार कर सकता है? स्तव में यदि कीटाणु जैसी कोई वस्तु आज संसार में होती तो कुछ भी न होता। एक तरफ तो ये कीटाणु सार में जीवन भरते हैं, और दूसरी तरफ संसार में जो ल, गंदगी एवं अस्वच्छता दिन-प्रति-दिन इकट्ठी होती हती है उनको ये साफ करते रहते हैं। कीटाणुओं में क बड़ी विचित्र बात यह है कि उनकी उत्पत्ति मल से ती है, और मल ही उनके जीवन-निर्वाह का एक मात्र धन होता है। वे पृथ्वी पर की निर्जीव वस्तुओं को ट करते रहते हैं। यदि ऐसा न होता तो संसार के सूखे ए पेड़-पौधे, निर्जीव एवं व्यर्थ वस्तुएँ, तथा पशु-पक्षी भी सदैव जैसे-के-तैसे बने रहते, और तब संसार में णियों के लिए जगह की कठिनाई होती। जहाँ मल गा, कीटाणु की उपस्थिति वहाँ अनिवार्य है। हमारे रीर के जूँ, चीलर, इसके दृष्टान्त हैं। जहाँ जीवन नहीं या जीवन-शक्ति की कमी है, वहाँ इनकी खूब चलती । मुर्दा और रोगी, इसके उदाहरण हैं। जहाँ जीवन वा जीवन-शक्ति की प्रबलता है, वहाँ ये फटकते तक हीं, और वहाँ फटकने पर इनका नाश अवश्यंभावी है। र्मल वस्तुएँ एवं पूर्ण स्वस्थ शरीर इसकी मिसालें हैं। अब सोचने की बात है कि सृष्टि की एक ऐसी परमावश्यक स्तु को समूल नष्ट करने का मनुष्य बीड़ा उठाए, जैसा के डाक्टर समुदाय का ख्याल है, क्या यह उसकी अनधिकार चेष्टा और अज्ञानता नहीं है? क्या यह प्रकृति और रमात्मा से खुल्लमखुल्ला बगावत करना नहीं है?

सच तो यह कि कीटाणुओं को निर्मूल करने का बीड़ा जो आज वैज्ञानिक उठाए हुए हैं, वह उनके बस की बात है ही नहीं। कारण, कीटाणुओं की सर्वव्यापकता और बहुतायत का यह हाल है कि ईश्वर के सर्वव्यापी होने में कोई संदेह भले ही कर सकता है, पर कीटाणुओं की व्यापकता में नहीं। एक पाउंड भर के मिट्टी के ढेले में ४,००,००,००० कीटाणुओं का अस्तित्व होता है, जिनमें सबसे छोटे कीटाणु की मोटाई १/२५००० इन्च होती है। अब तक जो कीटाणु संबंधी अनुसंधान हो चुके हैं, उनसे पता चलता है कि संसार में १०,००० से भी अधिक किस्म के कीटाणु पाये जाते हैं। सबसे साधारण और अधिक पाये जाने वाले कीटाणुओं को 'बैक्टीरिया' कहते हैं। इनके शरीर की मोटाई १/१००० इंच होती है। इन कीटाणुओं के नाश के लिए वैज्ञानिकों ने जिन अनगिनत विषों (उनके शब्दों में Anticeptic medicines) का, बड़े गर्व के साथ आविष्कार किया है, उनमें फारमेलिन, हरिन्, ब्लीचिंग पाउडर, बोरिक एसिड, पोटाश परमांगनेत, अलूमिनेट, ओज़ोन, कास्टिक सोडा, सोडियम परोक्साइड, बाइकैलाज़ित, क्लोरीन परौक्साइड, मरक्यूरिड क्लोराइड, फिनायल, रिसार्सिनोल, सैलिसिलिक ऐसिड, तथा लायसोल प्रधान हैं। इन विषों का प्रयोग, कीटाणुओं का नाश करने के लिए, पिछले कितने ही वर्षों से वैज्ञानिकों तथा डाक्टरों द्वारा हो रहा है, किन्तु लेखक की निगाह में तो परिणाम ठीक उल्टा ही दिखाई पड़ रहा है। अर्थात् जब से इन कीटाणु नाशक विषों का प्रयोग होना आरंभ हुआ है तब से रोगियों की (परिणामतः डाक्टरों की भी) संख्या में दिन-दिन वृद्धि हो ही रही है। साथ-ही-साथ अनेक नवीन रोगों की सृष्टि भी होती चली जा रही है, और अवस्था यहाँ तक पहुँच चुकी है कि आज स्वयं वैज्ञानिक-गण अपनी कठिनाई को महसूस करके चिन्तित होने लगे हैं। वे अनुभव करते हैं कि एक तरफ तो वे उपरोक्त कीटाणु नाशक औषधियों द्वारा कीटाणुओं के नाश की आशा करते हैं, और दूसरी तरफ वे उन्हीं दवाओं से मानव-स्वास्थ्य को एक सिरे से चौपट कर रहे हैं। क्योंकि यह सर्वथा सत्य है कि ये कीटाणु-नाशक औषधियाँ रोगियों की नसों और अँतड़ियों को बड़ी हानि पहुँचाती हैं। सब प्रकार की गंधयुक्त और कृमिनाशक

दवाइयाँ, जिनका प्रयोग जल एवं वायु को स्वच्छ करने के लिए होता है, कीटाणुओं को नष्ट नहीं करतीं, बल्कि जल-वायु को और गंदी करती हैं। साथ ही वे हमारी घ्राण-शक्ति को भी अत्यंत शिथिल कर देती हैं, जिससे वह रोगी के शरीर से निकली हुई साँस की दुर्गन्ध का अनुभव नहीं कर सकती। उक्त प्रयोगों द्वारा कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए चाहे कितना ही उद्योग किया जाय, उनसे यथार्थ में कुछ भी लाभ होना असम्भव है। क्योंकि मल भरे शरीर में उद्वेग उत्पन्न करने के लिए बहुत थोड़े दुर्द्रव्य की आवश्यकता होती है, और इसके विपरीत जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, पूर्ण स्वस्थ शरीर में कोई भी रोग उत्पन्न करने के लिए संसार के सारे कीटाणु भी नाकाफी सिद्ध हो सकते हैं।

सृष्टि से कीटाणुओं को एक दम नेस्त नाबूद करने का दम भरना, प्रकृति को युद्ध के लिए चुनौती देना है। आज तक के संसार के इतिहास में ऐसा एक भी प्रमाण नहीं मिलता, जिसमें प्रकृति से युद्ध करके किसी ने विजय पाई हो। इसलिए वैज्ञानिक अपने उक्त प्रयास में कभी सफलीभूत होंगे, इसमें सन्देह है। क्योंकि यह कठोर सत्य है कि कीटाणु-परमाणुओं का किसी काल में भी नाश नहीं होता। वे किसी-न-किसी रूप में सदैव बने रहते हैं, बने रहेंगे और बने रहने चाहिए। यदि आज विज्ञान का दृष्टिकोण, अप्राकृतिकता की ओर न होकर प्राकृतिकता के प्रचार की ओर होता, तो उससे मानव-जाति का कितना कल्याण होता, यह अनुभव से ही जाना जा सकता है।

पूर्ण स्वस्थ शरीर—कीटाणु-'प्रूफ़'

पूर्ण स्वस्थ और निर्मल शरीर में कीटाणुओं से युद्ध करके उनको पराजय करने की अद्भुत शक्ति परमात्मा ने दे रक्खी है। यदि ऐसा न हो तो इस संसार में सर्व-व्यापी कीटाणुओं से अपनी रक्षा करना, मनुष्य के लिए अति कठिन हो जाय। हम कीटाणुओं द्वारा सताये जाते हैं अपनी गलती से। हम अज्ञानवश प्राकृतिक नियमों के प्रतिकूल चलकर अपने नैसर्गिक स्वास्थ्य को खो बैठते हैं, और अपने शरीर के भीतर कीटाणुओं को पनपने लायक दुर्द्रव्य भर लेते हैं, फिर भी आशा करते हैं कि कीटाणु हमें तंग न करें, भला यह कब मुमकिन है? अतएव हम यदि चाहते हैं कि कीटाणु हमारा कुछ न बिगाड़ सकें तो अपने शरीर को हमें कीटाणु 'प्रूफ' बनाना पड़ेगा। पूर्ण स्वस्थ शरीर का ही दूसरा नाम कीटाणु-'प्रूफ' है। पूर्ण स्वस्थ शरीर के शुद्ध रक्त तक पहुँचने के पूर्व ही कीटाणु स्वयं नष्ट हो जाते हैं, और जो रक्त तक पहुँच जाते हैं, उन्हें विशुद्ध रक्त की स्वाभाविक उष्णता मार डालती है। परन्तु यदि हमारा शरीर रोगी है, और उसकी नाड़ियों और शिराओं का रक्त अशुद्ध हो चुका है तो उस दशा में कीटाणुओं का पोषण उस अशुद्ध रक्त से होना अनिवार्य हो जाता है। बच्चों के शरीर में कीटाणुओं के मारने की शक्ति सबसे प्रबल होती है। १२ वर्ष की आयु तक के बच्चों में से ६० प्रतिशत में क्षय के कीटाणु पाये जाते हैं। अब यह सोचने की बात है कि यदि वे सभी बच्चे, डाक्टरों के सिद्धान्तानुसार, क्षय रोग से पीड़ित होने लगें, तब तो बड़ा अन्धेर हो जाय।

पूर्ण स्वस्थ शरीर के पास, कीटाणुओं से अपनी रक्षा करने के निमित्त कौन-कौन से साधन होते हैं, अब उन्हीं साधनों पर सूक्ष्म रूप से विचार करके लेख को समाप्त किया जायगा।

हमारी बाहरी त्वचा, कीटाणुओं से मुठभेड़ करने में सुदृढ़ कवच का काम करती है। इस बाहरी त्वचा के तल में उसकी पाँच तहें और होती हैं, जिनमें एक प्रकार का रस प्रवाहित होता रहता है, जो अधिक गर्मी पड़ने पर स्वेद के रूप में बाहर आता है। त्वचा के असंख्य छिद्रों द्वारा जो कीटाणु शरीर में प्रवेश करते हैं, उनके लिए यह रस विष का काम करता है, जिसके सम्पर्क में आते ही सर्व प्रकार के कीटाणु विनष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार, हमारी नासिका-द्वार से, कर्ण-द्वार से तथा शरीर के अन्यान्य खुले द्वारों से एक प्रकार की श्लेष्मा खारिज होती रहती है, जो बाहर से भीतर प्रवेश

करने वाले कीटाणुओं के लिए घातक है। और जो कीटाणु इस घातक श्लेष्मा से बचकर आगे बढ़ते हैं, उनको परास्त करने के लिए गले की गिल्टियाँ (टानसिल्स) मौजूद होती हैं, जिनका प्रधान कार्य कीटाणुओं को नष्ट करना है। जो इने-गिने कीटाणु उन गिल्टियों को भी पार करने में सफल हो जाते हैं, उनका खात्मा पेट में स्थित उन विविध प्रकार के रसों से हो जाता है जो उनके लिए विषाक्त सिद्ध होते हैं। इन सभी दुर्गों को पार कर, यदि कोई कीटाणु वीर आगे बढ़ता है तो हमारे शरीर की शुद्ध रक्त-त्रिवेणी के किनारे पहुँचकर वह किसी प्रकार जीवित रह ही नहीं सकता। यह निश्चय है।

क्या कोई वैज्ञानिक, अपनी प्रयोगशाला में प्रयोग करके, एक भी ऐसे कीटाणु-योद्धा का पता लगा सकता है जो स्वस्थ शरीर रूपी सुदृढ़ गढ़ के उक्त कथित चक्रव्यूहों को भेद कर भीतर घुस जाय ?

उपसंहार

उपरोक्त लेख पूर्ण स्वस्थ शरीर को दृष्टि के सामने रखकर लिखा गया है जो एक प्राकृतिक सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। किन्तु जैसा कि ऊपर एक बार लिखा जा चुका है कि इस पृथ्वीतल पर कदाचित ही कोई ऐसा व्यक्ति मिले जिसका शरीर पूर्ण स्वस्थ कहलाने के काबिल हो। ऐसी दशा में हमको कीटाणुओं से डरने की तो कोई उतनी जरूरत नहीं है, जितनी इस बात से कि उनकी खाद्य वस्तु—गन्दगी—हमारे शरीर में अधिक मात्रा में न इकट्ठी होने पावे, वरना उससे पलनेवाले कीटाणुओं की उपस्थिति वहाँ आवश्यक हो जायगी उस गन्दगी को साफ करने के निमित्त। और तब उस साफ करने की प्रक्रिया के दौरान में हो सकता है शरीर को थोड़ी अशान्ति का अनुभव करना पड़े। मगर वह अशान्ति प्राकृतिक चिकित्सकों के समग्र वरदान रूप होती है और उसके कारणस्वरूप कीटाणु, परम हितैषी मित्र की हैसियत रखते हैं। क्योंकि इस प्रकार की अशान्ति के उपरान्त, यह ध्रुव सत्य है कि शरीर एक बार फिर विकार-रहित एवं निर्मल हो जाता है। एक वाक्य में कहना चाहें तो कह सकते हैं कि कीटाणु हमारे शत्रु नहीं मित्र हैं जिनसे हमें डरने का कोई कारण नहीं, ठीक वैसे ही जैसे हमें रोगों से नहीं डरना चाहिए। क्योंकि दोनों का कार्य एक ही है, अर्थात् हमारे शरीर के भीतर इकट्ठे हुए मल को साफ करके उसको विशुद्ध एवं निरोग बना देना।

रोगों के संबंध में डाक्टर दास के विचार

श्रीयुत महेशदत्त मिश्र, एम्०ए०

डॉ० सतीश चन्द्र दास एल्०आर०सी०पी०एंड एस्० (एडिनबरा) एल्०एम्०एस्० (कलकत्ता) एल्०आर०एफ०पी० एंड एस्० (ग्लासगो), एल०एस्० (डब्लिन) बंगाल में वर्षों तक एलोपैथिक चिकित्सा प्रचलित ढंग से करते रहे हैं। आप स्त्रियों के रोगों के विशेषज्ञ माने जाते हैं। कई बरसों के अनुभव के बाद आपने प्रचलित ढंग की डॉक्टरी चिकित्सा छोड़ दी और करीब बारह बरसों से आप लोगों को प्राकृतिक ढंग से रहने और उसी प्रणाली से इलाज करने पर जोर देते आ रहे हैं। आजकल आप सेवाग्राम में बापूजी के पास रह रहे हैं तथा अपने अनुभव का लाभ वहाँ के लोगों को दे रहे हैं। आपने हमारी प्रार्थना पर 'जीवन-सखा' के लिए अपने विचार भेजना स्वीकार किया था। यह लेख आपके द्वारा चर्चा के रूप में दिए गए विचारों को हिंदी में श्री महेशदत्त मिश्र, एम्०ए० ने लिखा है जो जेल से छूटने पर आजकल रोगी की हालत में सेवाग्राम में ही डाक्टर साहब के इलाज से स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं।——सं०

विना ऽपि भेषजैर्व्याधिः पथ्यादेव निवर्त्तते ।
न तु पथ्यविहीनानां भेषजानाम् शतैरपि ॥

'जीवन-सखा' के लिए डॉ० सतीश चन्द्र दास ने लेख लिखने का वादा किया था। पर वे हिन्दी में लिख नहीं पाते। इसी कारण उन्होंने मुझे आज्ञा दी कि मैं उनके विचारों को अपनी भाषा में आपके पास पहुँचाऊँ। मैं आजकल उनके इलाज में हूँ और अपने ज्ञान का अमूल्य लाभ भी वे अपनी चर्चाओं के द्वारा मुझे दे रहे हैं। प्रस्तुत लेख में मैं रोगों के सम्बन्ध में डॉ० दास के विचार रखने का प्रयत्न करूँगा। अंग्रेज़ी में तो उनकी चर्चा बहुत ही स्पष्ट, सुग्राह्य और सरल होती है। हिन्दी में लिखने में मुझसे भूल हो सकती है। पाठक उसके लिए मुझे ही दोषी समझें।

लगभग चालीस वर्षों तक डाक्टरी चिकित्सा के अनुभव के बाद भी डाक्टर साहब का विश्वास यही है कि रोगों को दूर करने में दवा का बहुत ही मामूली और गौण स्थान है व भोजन ही रोग पैदा करने तथा रोग निवारण में मुख्य है। लगभग सभी रोग जो हमारे शरीर में उत्पन्न होते हैं भोजन-सुधार याने पथ्य से अच्छे किये जा सकते हैं। भोजन यदि उपयुक्त गुणों वाला, उचित परिमाण और उचित मेल के हिसाब से खाया जाय तो उसी से मनुष्य स्वस्थ रह सकता है और अनियमित भोजन करने से ही अधिकतर रोग पैदा होते हैं। इसलिए जो रोगी हैं उनका इलाज उन गलतियों को दूर करने से अवश्य हो सकता है जिनके कारण रोग पैदा हुए। ऊपर लिखे श्लोक को कई बार मैंने डाक्टर साहब से सुना जिससे वे पूर्णतया सहमत हैं और जिसका भावार्थ यह है कि "रोग केवल भोजन में सुधार और परिवर्तन करने से ही बिना दवाई के भी अच्छे हो सकते हैं पर बिना

न में सुधार किए केवल औषधियों से तनिक भी फायदा होगा चाहे वे कितनी ही मात्रा में क्यों न दी जायँ।"

रोगों की एकरूपता

अब हमें देखना है कि भोजन से ही किस प्रकार पैदा होते हैं। थोड़ा विचार करने से पता चलेगा सारे रोगों का मूल कारण एक ही है और वह यह आहार की गड़बड़ी से शरीर में विकारी पदार्थ पैदा र जमा हो जाता है। यह समझने के लिए कि यह कारी पदार्थ, जिसे जहर ही कहना ठीक होगा, किस ह शरीर में जमा होता है, हमें यह जानना जरूरी है जो आहार हम खाते हैं उसका शरीर में किस भाँति रिवर्तन होता है। और इसलिए पाचनक्रिया का रंभिक रसायनिक ज्ञान आवश्यक है। आहार के ने में मुख्यत: तीन क्रियायें हैं।

(१) पहली क्रिया जिसे अंगरेजी में Digestion ते हैं वह है जब कि जो आहार खाया जाता है वह पाचक यों के साथ मिलकर एक ऐसे घुलनशील द्रव पदार्थ परिणत होता है जो रक्त में प्रवेश कर सके। यह पहली या मुँह में आमाशय में तथा पूरी तौर से छोटी अँतड़ियों पहले हिस्से में होती है।

(२) इसके बाद छोटी अँतड़ियों में से पचा हुआ र्थ जो घुलनशील अवस्था में होता है रक्त में प्रवेश ता है। इस क्रिया को अंग्रेजी में Absorption ते हैं।

(३) रक्त-नालियाँ जब भिन्न-भिन्न जीव कोषों Cells) के नजदीक पहुँचती हैं तब ये जीव-कोष त में से इस पचे हुए द्रव पदार्थ में से अपनी जरूरत के नुसार सभी पदार्थ खींच लेते हैं तथा उस पदार्थ को ने काम में आने लायक पदार्थ में परिणत कर लेते । जीव-कोषों के द्वारा की गई इस अंतिम क्रिया को ssimilation कहते हैं।

इस प्रकार जीव-कोषों को पोषण मिलता है। ब यह देखना चाहिए कि जहर कैसे पैदा होता है।

(१) शरीर के सारे जीव-कोष कुछ न कुछ काम करते ही रहते हैं जैसे—मांसपेशियाँ हिलने डुलने का काम करती हैं, फेफड़े श्वासोच्छवास का काम करते हैं आदि। इनके काम के कारण इनके अंदर ही एक रसायनिक परिवर्तन होता है और उससे कचरा या अनावश्यक पदार्थ पैदा होता है जो रोज शरीर से निकाल दिया जाना चाहिए।

(२) जीव-कोष काम करते करते मर भी जाते हैं। उनकी लाशें भी एक प्रकार का कचरा है और उसे भी बाहर निकलना जरूरी है।

(३) इसके अलावा तीसरे प्रकार का कचरा या जहर वह पचा हुआ पदार्थ भी है जो पाचन की दूसरी क्रिया (Absorption) में रक्त में चला आया है पर जो आवश्यकता से अधिक होने के कारण जीव-कोषों की आवश्यकता पूर्ति के बाद और रक्त में जितना रहना चाहिए उसके बाद भी बच जाता है। यह भी अतिरिक्त होने के कारण रोज बाहर फेंका जाना चाहिए।

रोगों का कारण

यह सब कचरा या ज़हर जो हमारे शरीर में रोज पैदा होता है चार प्रकार से रोज ही निकलता है—श्वासोच्छ्वास, पसीना, मूत्र वा मल के द्वारा याने फेफड़ों, त्वचा, गुरदे तथा गुदा के द्वारों से। किंतु यदि हमारे आहार में गलतियों के कारण यही जहर अधिक परिमाण में पैदा होता है जितना कि रोज इन चारों क्रियाओं से नहीं निकल पाता तो वह शरीर में ही रह जाता है। कहा जाता है कि यदि फेफड़ों द्वारा पैदा हुआ जहर ५ मिनट भी बिलकुल न निकल पावे, चमड़े से पसीना के रूप में जहर निकलना २४ घंटे के लिए बिलकुल बंद हो जाए, गुरदे से पेशाब के साथ ७२ घंटे तक जहर न निकल पावे व बड़ी अँतड़ियों से मल के साथ १५ से २० दिन तक जहर न निकले तो हम मर जायँ। इसका मतलब यह है कि जहर निकालने में फेफड़े प्रथम श्रेणी का, त्वचा दूसरी, गुरदे तीसरी तथा बड़ी अँतड़ियाँ चौथी श्रेणी का महत्त्व रखती

हैं। बचे हुए जहर के जमा होने की प्रथा यदि कुछ दिन जारी रहे तो उसके किसी न किसी रूप में शरीर से बाहर निकालने के प्रयत्न में हमारी जीवन-शक्ति ऐसे लक्षण पैदा करती है जिन्हें हम रोग कहते हैं। रोग हमारे शरीर में जमा हुआ कचरा (जहर) निकालने का एक प्राकृतिक साधन है जिससे हमें डरना नहीं चाहिए और इस उपयोगी क्रिया को शान्ति से बिना बाधा पहुँचाये अपना काम करने देना चाहिए। इस तरह हम देखते हैं कि यह जहर ही सब रोगों का कारण है और रोग मूलतः एक ही है। तो भी आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में रोगों को भिन्न भिन्न नाम दिए जाते हैं। यदि शरीर के किसी विशेष अंग में कोई लक्षण पैदा हुआ तो Arthritis (आर्थ्रिटिस) Appendicitis (अपेन्डिसाइटिस) Pleurisy (प्ल्युरिसी) आदि, यदि पाचन क्रिया की गड़बड़ी हुई तो मधुमेह, बात आदि अथवा कीटाणुओं की छूत से लक्षण पैदा हुए तो पेचिश, हैजा आदि नाम दिए जाते हैं। आधुनिक चिकित्सा शास्त्र के अनुसार सब रोग कीटाणुओं से होते हैं ऐसा मत है। इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में डा० दास का निश्चित मत यही है कि कीटाणु रोग का कारण नहीं हैं। हमारे शरीर में जब तक जमा हुआ अतिरिक्त जहर नहीं होगा कीटाणु हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते और हमें कोई रोग नहीं होगा। यह जहर ही इन कीटाणुओं के लिए भोजन का काम देता है। छूत की बीमारियों में कीटाणु तभी पनपते हैं जब कि पहले से ही जहर जमा हो याने रोग हो। यह जहर ही रोग पैदा करता है न कि कीटाणु। इसलिए रोग का जहर से अन्योन्याश्रित संबंध है और भीतरी सफाई का स्वास्थ्य से।

रोगों का इलाज

इसलिए रोगों के इलाज में उचित यही है कि रोग का मूलभूत कारण जो अधिकतर सभी रोगों में आहार की गड़बड़ी से पैदा हुआ जहर है उसे ही निकालने का प्रयत्न करना चाहिए। जमे हुए कचरे को शरीर में से दूर करने के लिए तीन तरीके हैं।

(१) जल्दी का और तेज तरीका—जहर निकालने के लिए उपवास का है। जब हम कुछ नहीं खाते तो हमारे शरीर में पाचन की क्रिया रुक जाती है और हमारी सारी जीवन-शक्ति जहर को दूर करने में लग जाती है। इससे जहर शीघ्रता से निकाल दिए जाते हैं। उपवास के बाद हम आहार धीरे धीरे बढ़ाते हैं जब तक कि आहार उचित प्रमाण तक न पहुँच जाय।

(२) दूसरा तरीका थोड़ा मंद है। इसमें रोगी का आहार इतना कम कर दिया जाता है कि उतना खाने से उसके शरीर में अतिरिक्त जहर पैदा नहीं होगा और तब उसकी जीवन-शक्ति इस आहार से पैदा हुए जहर के साथ साथ उस जहर को भी धीरे धीरे निकाल देगी जो पहले से जमा है। यह तभी हो सकता है जब रोगी के पास समय का प्रश्न न हो।

(३) तीसरा तरीका बिलकुल ही मंद है। इसमें रोग अच्छा होने में बहुत अधिक समय लगता है। यह तरीका उन्हीं रोगियों की हालत में उपयोग में लाया जाता है जो कि शुरू से ही उपरोक्त दोनों में से कोई भी तरीका उपयोग में ला नहीं सकते या लाना नहीं चाहते। ऐसी हालत में सिर्फ इतना किया जाता है कि रोगी के आहार में से धीरे धीरे पदार्थों की संख्या या परिमाण कम करते करते उसे उचित आहार के प्रमाण पर ला देते हैं और इसी आहार पर रखकर उसके अच्छा होने का प्रयोग करते हैं। इसमें धीरे धीरे लाभ होता है।

एक बार अतिरिक्त जहर निकाल देने के बाद हमें देखना होगा कि रोगी का उचित आहार क्या हो। आहार के विषय में तीन बातें मुख्य हैं यथा—खाद्य पदार्थों का गुण, परिमाण और भिन्न भिन्न पदार्थों को साथ खाने में उनके मेल का बैठना। हमारे आहार में अच्छे और जरूरी गुण वाले सभी पदार्थ होने चाहिए याने एक विशेष अनुपात और परिमाण में कर्बोज, प्रोटीन, चर्बी, तरकारी फल, पानी व जीवन-तत्त्व (विटामिन) वाले पदार्थ होने चाहिए। और आहार करने में एक दूसरे का मेल भी

बैठना चाहिए। जब हमारा स्वास्थ्य बिगड़ता है तो इसका मतलब यह है कि हमारा आहार परिमाण में कम या अधिक हो रहा है, हमें आहार में वे पदार्थ नहीं मिल रहे हैं जो हमारे शरीर के लिए आवश्यक हैं या फिर हम आहार लेने में बेमेल पदार्थ एक साथ खा रहे हैं। अतः इलाज के साथ साथ रोगी को भोजन के आवश्यक सिद्धान्त भी सीख लेना या सिखा देना चाहिए ताकि वह उन पर चल कर जीवन भर स्वस्थ रह सके।

खाने पीने के सम्बन्ध में डा० दास के जो विचार हैं मैं यहाँ विस्तार से न लिख कर पाठकों का ध्यान "विश्व वाणी" में निकले हुए श्री सुन्दर लाल जी के लेख की ओर आकर्षित करना चाहूँगा, जो उन्होंने मई मास के अंक में 'सेवाग्राम में भोजन के प्रयोग' पर लिखा है। उसका परिवर्द्धित और परिशोधित एक और लेख वे शीघ्र ही आगामी किसी अंक में निकालने जा रहे हैं वह भी पढ़ लिया जाय।

* * *

प्राकृतिक चिकित्सा ही क्यों ?

प्रो० धर्मदेव शास्त्री, 'दर्शन-केसरी', देहरादून

शास्त्री जी हिंदी संसार के यशस्वी लेखक हैं। आप अनेक विषयों पर लिखते रहते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति आपका स्वाभाविक प्रेम है। आपने इस लेख द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा की आवश्यकता प्रतिपादित की है और बताया है कि वेदों में भी प्राकृतिक चिकित्सा में पाई जाने वाली बहुत सी चीजें मिलती हैं।—सं०

प्राकृतिक चिकित्सा की ओर हमारे देश के विज्ञ पुरुषों का ध्यान जा रहा है। परन्तु प्रायः देखा यह जाता है, कि जब सब तरफ से निराशा ही दिखाई देती है तब सब प्रकार के हकीम, डाक्टर, और वैद्यों को आजमा लेने के बाद ही कुदरती इलाज की तरफ ध्यान जाता है। कुदरती इलाज करने वाले व्यक्ति को उस स्थिति में खाली रोग का ही इलाज नहीं करना पड़ता, बल्कि डाक्टर, वैद्य और हकीमों ने शरीर के अन्दर जो विजातीय द्रव्य बड़े परिमाण में डाल दिया है उसे भी निकालने के लिए शक्ति लगानी पड़ती है। आजकल प्राकृतिक चिकित्सा के विरुद्ध जो यह शिकायत की जाती है, कि इसमें समय बहुत लगता है, उसका कारण बहुत कुछ उपर्युक्त ही है। यदि प्रारम्भ में ही रोग का इलाज प्राकृतिक रूप से किया जाय तो निश्चित रूप से और कम समय में रोगी स्वस्थ हो सकता है।

× × ×

प्राकृतिक-चिकित्सा का महत्त्व कई दृष्टियों से बताया जा सकता है। परन्तु हमें तो प्राकृतिक चिकित्सा अभी इसीलिए पसन्द है कि हमारे निर्धन देश के लिए यही पद्धति ही सस्ती और उपयोगी है। दो वर्ष हो रहे हैं, मैं कलकत्ता में प्रसिद्ध सुधारवादी सेठ श्री दीपचन्द्र जी पोद्दार के घर पर ठहरा हुआ था। सेठ जी के घर में एक व्यक्ति बीमार हुआ। अच्छे से अच्छे डाक्टरों को बुला कर परामर्श किया गया। एक साधारण से बुखार की परीक्षा में रक्त-परीक्षा, थूक-परीक्षा आदि विविध परीक्षाओं में आवश्यकता से अधिक खर्च होगया, लेकिन

आराम घरेलू इलाज से ही हुआ। सेठ जी ने तब ये शब्द कहे, जो मुझे अभी तक याद हैं—"एलोपैथी की चिकित्सा बहुत महँगी है। हमारा दरिद्र भारत इस चिकित्सा का बोझ नहीं उठा सकता।"

सेठ छाजूराम जी आज साधारण भारतीय की अपेक्षा भी अधिक निर्धन हैं। कभी वे लखपती थे। हृदय तो उनका आज भी वैसा ही है परन्तु भाग्य ने उन्हें लाचार कर दिया। पिछले वर्ष में जब देहरादून आए, तो उनके दाँत में बहुत दर्द उठा। 'अमृतधारा' आदि का लेप किया गया, परन्तु कुछ भी लाभ न हुआ। मैंने कहा, यदि आपकी इच्छा हो, तो मैं एक दन्त चिकित्सक के पास आपको ले चलूँ। वे उस समय बात को टाल गए। बंबई जाकर उन्होंने मुझे एक विस्तृत पत्र लिखा, जिससे मालूम पड़ता था कि डाक्टरों का उनको बहुत कटु अनुभव है। पत्र के अन्त में उन्होंने लिखा था—"मेरा बस चले, तो मैं डाक्टरों की बुराई से अपने देश को छुड़ा दूँ। जब तक डाक्टर रहेंगे रोगों की वृद्धि होती रहेगी। हमारा देश बहुत निर्धन है, वह इतनी महँगी चिकित्सा का बोझ नहीं उठा सकता। डाक्टरों की चिकिसा के कारण अपने देश की पुरानी सस्ती कुदरती चिकित्सा लुप्त हो रही है। पहले हर एक घर में बुड्ढी औरतें मामूली तौर पर ही नहीं, अच्छी खासी चिकित्सा कर लेती थीं। उनको वह ज्ञान परम्परा से प्राप्त होता था। अब वह परम्परा नष्ट होती जा रही है। जरूरत इस बात की है, कि अब भी भारतीय घरों में थोड़ी बहुत जीवित इस परम्परा को प्रोत्साहन दिया जाय। कम से कम घरेलू नुस्खों, टोटकों और उपचारों का संग्रह कर उसे अवश्य प्रकाशित करना चाहिए।"

मैं समझता हूँ, सेठ जी ने जिस सचाई की ओर ध्यान दिलाया है उसे कोई भी समझदार इन्कार नहीं कर सकता।

आज मनुष्य का जीवन सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से बहुत पेचीदा हो गया है। उस पेचीदगी में यदि आहार व रहन-सहन सम्बन्धी भी पेचीदगी पैदा हो जाय तो मनुष्य का आनुवंशिक ह्रास आवश्यक नतीजा होगा।

× × ×

आचार्य नरेन्द्र देव जी एक प्रसिद्ध समाजवादी नेता हैं। और समाजवादी यन्त्रवादी होते ही हैं। कुछ वर्ष हुए जब आचार्य जी देहरादून आए, तब दमे की बीमारी के कारण उन्हें बहुत तकलीफ हो गई। वैसे भी उनका शरीर कमजोर ही है। भोजन में हाथ पिसा आटा ही खाने की बात उन्होंने कही। उस समय मैंने उनसे कहा कि 'आचार्य जी! और चाहे किसी बात में आप यन्त्रवादी बन जाइए, परन्तु भोजन में यन्त्रीकरण से आपका जीवन खतरे में पड़ जायगा। मैंने मजाक में ही बात कही थी, आचार्य जी ने भी उसे वैसा ही लिया, परन्तु बात है सोलहो आने सत्य। महात्मा गाँधी जी ने इसी लिए ही देश के गिरते हुए स्वास्थ्य को देखकर 'चक्की का आटा' 'हाथ कुटा चावल', 'गुड़', 'हाथ की घानी का तेल'—इस अवैज्ञानिक समझे जाने वाले भोजन की ओर देशवासियों का ध्यान आकर्षित किया। खैर! मतलब इतना है, कि आजकल का इलाज हमारे देश के लिए असह्य है।

जिस देश के लोगों को भरपेट रोटी भी नहीं मिलती वे इतना महँगा इलाज कैसे कर सकते हैं? मेरे हाथ में यदि देश की सत्ता आ जाय, तो मैं अपने देश के कमजोर कन्धों पर से इस बोझ को उतार कर फेंक दूँ। इस चिकित्सा-प्रणाली ने मनुष्य को मानसिक दृष्टि से कमजोर और पंगु बना दिया है।

सौभाग्य की बात है, कि अब हमारे देशवासियों का ध्यान इधर जाने लगा है। महात्मा गाँधी ने 'आरोग्य-साधन' पुस्तक लिखकर हवा, पानी, मिट्टी, सूर्य आदि प्रकृतिदत्त शक्तियों के उपयोग द्वारा स्वास्थ्य लाभ की ओर ध्यान दिलाया। उस वक्त हमारे देश का सामूहिक स्वास्थ्य इतना नहीं गिर गया था, जितना कि आज। और यदि शीघ्र इस ओर ध्यान न दिया गया, तो राष्ट्रीय स्वास्थ्य की दशा बहुत शोचनीय हो जायगी।

प्रो०........पंजाब के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में हैं। पंजाब में जिन दिनों मांस-पार्टी और घास-पार्टी

का द्वन्द्व-युद्ध चलता था, तब प्रो० जी मांस-पार्टी के जबरदस्त पोषक थे। सार्वजनिक सभाओं में अण्डा और मांस खाने के लिए लेक्चर देते थे। दो वर्ष हुए, मुँह पर लकवा मार गया। बड़े बड़े डाक्टरों का इलाज कराया, परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। पिछले दिनों जब वे मुझे मिले तब मैंने देखा, कि वे खूब हृष्ट पुष्ट और स्वस्थ हैं। पूछने पर मालूम हुआ मट्टी के प्रयोग से ही उन्हें लाभ हुआ है। यह ठीक है, कि नौ मास तक निरन्तर धैर्य रखना पड़ा। मिलने पर उन्होंने कहा, कि मेरा यह विश्वास हो गया है कि सात्विक और नियमित भोजन करने से मनुष्य कभी भी अस्वस्थ नहीं हो सकता। उनका यह भी कहना था, कि मांस खाने वाला व्यक्ति कभी न कभी अवश्य अस्वस्थ होगा।

× × ×

प्राकृतिक चिकित्सा का आज कल ही उद्गम हुआ हो, यह बात नहीं। ऋग्वेद में, जो कि संसार के साहित्य में सर्वप्रथम पुस्तक है, कठिन से कठिन रोगों का इलाज सूर्य, जलादि की चिकित्सा से करने की बात लिखी है। हृदय-रोग साधारण रोग नहीं, देखिए ऋग्वेद में उसके लिए क्या लिखा है? 'उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम्। हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय॥" इस मन्त्र में यह स्पष्ट बताया गया है कि उत्तरायण काल में उदयकालीन सूर्य की रश्मियों का सेवन करने से हृदय-रोग और पीलिया रोग दूर होते हैं। इस प्रकार के अन्य भी प्रमाण उपस्थित किए जा सकते हैं। हमारा यहाँ इतना ही अभिप्राय है कि प्राकृतिक चिकित्सा हमारे देश की परम्परा है। आज की अवस्था में तो भारतवर्ष के लिए सभी दृष्टियों से प्राकृतिक चिकित्सा-पद्धति ही उपयोगी सिद्ध हो सकती है। 'जीवन-सखा' पत्र ने इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। हिन्दी-जगत को 'जीवन-सखा' का इस सम्बन्ध में आभार मानना चाहिए कि उसने एक आवश्यक और उपेक्षित अंग की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया है।

⁂

जिस समय मनुष्य अपना पेट भरने के लिए हत्या करने को तैयार होता है, उस समय क्या ही हृदय-विदारक दृश्य उपस्थित होता है। हाथ में उसके छुरी या कुल्हाड़ी रहती है, सामने बेचारे अबोध विश्वासी जीव दिखाई पड़ते हैं—वही भेड़ जो प्यार से उसका हाथ चाटा करती थी, वही बैल, हाँ वही विश्वासी मित्र, जो किसी समय उसका खेत जोतता था। यकायक उनपर छुरी चलती है। भय और निराशा की चीत्कार से वायु गूँज उठती है। सारा आकाश मण्डल जीवों की चिल्लाहट और छटपटाहट से भर जाता है। पृथ्वी गरम लहू से नहा उठती है। और लोथों का ढेर चारों ओर लग जाता है।

मालूम नहीं हमारे मांसाहारी भाई इस दृश्य को किस भाव से देखेंगे, किन्तु इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि जिस कार्य में इतनी हृदयहीनता दिखानी पड़े, ऐसे ऐसे कारुणिक दृश्य उपस्थित हों और ऐसे अबोध जीवों का खून करना पड़े वह मनुष्यत्व की दृष्टि से कदापि उचित और न्याय-संगत नहीं कहा जा सकता।

'अपच' या अजीर्ण-रोग

स्टैनली लीफ, एन० डी०, डी० ओ०

आज जो हम फी सदी निन्नानवे आदमियों को पेट की बीमारी से परेशान देखते हैं उसका एकमात्र कारण यही है कि आजकल लोग आहार-विहार के नियमों को गलत तरीके से पालन करते हैं। जरूरत से ज्यादा किया गया भोजन ही तरह तरह की बीमारियों की जड़ है। इस लेख में बताया गया है कि आप अपने भोजन और रहन-सहन में सुधार करके किस प्रकार पुराने किस्म के अपच या अजीर्ण रोग से छुटकारा पा सकते हैं।—सं०

संसार के मनुष्यों के स्वास्थ्य को देखते हुए यह पता चलता है कि सौ में निन्नानवे व्यक्ति उदर रोग से पीड़ित हैं, जिसे एक शब्द में हम 'अपच' कह सकते हैं। 'अपच' उदर सम्बन्धी किसी भी शिकायत को कहते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि कारण एक ही है सिर्फ भिन्न भिन्न नाम दिए गए हैं। कोई कहता है 'मैं मन्दाग्नि का शिकार हूँ', कोई कहता है 'मुझे संग्रहणी है', कोई कहता है कि 'वायु विकार के कारण हालत तबाह है'। ये लोग डाक्टरों की शरण में जाते हैं और दवा देते देते थक जाने पर वे भी यह कह कर टाल देते हैं कि तुम्हारी स्नायु-शक्ति खराब हो गई और यह रोग असाध्य है। इन डाक्टरों को स्वस्थ जीवन की कुंजी से बिलकुल अनभिज्ञता रहती है और मरीजों को बुरी प्रकार से खिला पिला कर और भी खराब कर देते हैं, अन्त में जब रोग किसी प्रकार टसकता नहीं दीख पड़ता तो सारा दोष बेचारे स्नायु-जाल पर डाल देते हैं।

आजकल के गलत आहार विहार के नियमों को देखते हुए किसी को अपच न हो तो यही आश्चर्य की बात हो सकती है। शुरू में तो किसी को थोड़ी सी वायु हो जाती है या कभी एकाध टट्टी आ गई लेकिन जैसे जैसे खराबी आती जाती है, शिकायतें बढ़ती जाती हैं और शूल, पेट में दर्द, छाती का धड़कना इत्यादि रोज की बातें होने लगती हैं। कब्ज के कारण सिर में दर्द, अनिद्रा और शरीर का भारी रहना भी इन सब लक्षणों के अलावा दीख पड़ते हैं। बहुतों के पेशाब में 'फौस्फेट' की मात्रा भी बढ़ जाती है। जब तक निम्न कारणों को रोगी दूर नहीं करते, रोग से छुटकारा पाना असम्भव है और कहने की आवश्यकता नहीं कि पुरानी आदतों पर चलते रहने से वे 'Ulcer' और 'जलोदर' इत्यादि रोगों से पीड़ित पाये जायगे।

(१) गरिष्ट चीजों को खाना जैसे बिस्कुट, केक, चीनी, मैदा या मैदे से बनी हुई चीजें, मिर्च मसाला इत्यादि।

(२) अति भोजन—स्वास्थ्यकर भोजनों को भी पेट से फाजिल खाने पर अपच का होना स्वाभाविक है।

(३) गलत मेल का भोजन करना जिसके कारण पेट में अत्यधिक सड़न पैदा होती है।

(४) भूख न मालूम होने पर भी भोजन करना।

(५) भोजन को चबा-चबा कर न खाना, खास कर श्वेतसार पदार्थों को।

(६) खाना और पीना एक ही साथ करना।

(७) गन्दे विचारों में पड़े रहना जैसे क्रोध, भय, घृणा, इत्यादि जोकि शारीरिक शक्ति को बर्बाद करते हैं।

(८) 'पाचक' और 'रेचक' दवाइयों को खाते रहना।

(९) व्यायाम का न करना।

(१०) अत्यन्त थकान की हालत में भोजन करना।

(११) कब्ज।

'अपच' रोग प्राकृतिक तत्त्वों का सहारा लेकर ही छा हो सकता है, दवाइयों द्वारा तो खराबी ही होती गी। अगर रोग बहुत जीर्ण नहीं है तो एक छोटा वास और मामूली तरह के भोजन सुधार से ही काम सकता है। लेकिन जहाँ रोग जीर्णता की हालत में हाँ लम्बे उपवास की जरूरत पड़ती है। ऐसे उपवास सी अनुभवी व्यक्ति की देखरेख में ही करना चाहिए, ोंकि उभाड़ होने पर रोगी अपने को संभाल नहीं सकते। ब ही इस चिकित्सा के ज्ञाता ही कह सकते हैं कि रोगी कितने दिनों तक उपवास करने की शक्ति मौजूद है। वास की हालत में यह आवश्यक है कि एनिमा दोनों त लिया जाय। अक्सर देखा गया है कि लोग बिना निमा लिए ही उपवास करते चले जाते हैं। ऐसे लोगों बहुत कम लाभ की संभावना है। क्योंकि उपवास हालत में आँतें कमजोर पड़ जाती हैं और बाहरी रा न लेने से अन्दर का मल बाहर नहीं निकलता। वास के बाद रसाहार पर आना चाहिए। बहुत से पच' के रोगियों के लिए उपवास के बाद दूध का कल्प वश्यक है, खासकर जो दुबले और बहुत कमजोर हैं। एक ऐसी चीज है जो बहुत जल्द आँतों को ताकत ती है और शारीरिक शक्ति की वृद्धि करती है। उपस के बाद दो तीन हफ़्ते तक दूध पर रहकर फिर नियमित जन पर आना चाहिए। जो उपवास और दूध का ल्प नहीं कर सकते वे कुछ दिनों तक रसाहार, फलाहार रके नियमित भोजन करना शुरू करें तो इससे भी बहुत यदा होगा। बहुत से लोगों को तो दिन भर में सिर्फ बार भोजन करने से ही फायदा नजर आएगा। पहला जन दिन के बारह बजे और दूसरा सात बजे शाम को। तःकाल कुछ नहीं खाना और सिर्फ दो बार भोजन। टी मोटी पेट की गड़बड़ी के लिए एक सुन्दर भोजनम है। लेकिन जीर्ण रोगियों के लिए इससे ज्यादा लाभ की संभावना नहीं। बिना उपवास, रसाहार और दुग्धाहार किये यथोचित सफाई उनकी नहीं हो सकती।

कितना भोजन करना चाहिए इसके लिए बराबर लिखते रहना ठीक नहीं। कुछ भी खाइये पेट भारी नहीं होने पाए यही ध्यान रखना चाहिए। शरीर के लिये १६ औंस श्वेतासार, ३ औंस प्रोटीन और डेढ़ औंस चिकनाई काफी है। इसके साथ ही भोजन के चुनाव की ओर भी अवश्य सतर्क रहना चाहिए। शरीर को जिन विटामिन और लवणों की जरूरत है उनकी प्राप्ति आवश्यक है। इसके लिए ऊपर लिखी चीजें आपने अगर फल और सब्जियों से नहीं लीं तो सारा क्रम अपूर्ण रह जायगा और कब्ज की शिकायत तो कभी दूर हो ही नहीं सकती। निम्न भोजन-क्रम उदाहरण के लिए ली जा सकती है। बारह बजे—कच्ची सब्जियों का सलाद, रोटी और पकी सब्जी। शाम को—फल और दूध या किसी एक तरह का बादाम।

यापकल
परिश्रमी
लि २५

भोजन-सुधार के साथ साथ 'अपच' के रोगियों को कसरत की तरफ भी ध्यान दौड़ाना चाहिए, खास कर वे कसरत जो पेड़ू और स्नायु की शक्ति के लिए लाभदायक हैं। सुबह में टहलना और शाम को आसन करना एक सुन्दर तरीका है, लेकिन जो ज्यादा कमजोर नहीं हैं उन्हें प्रातःकाल मांसपेशियों को सुदृढ़ बनाने वाली कसरतें भी अवश्य करनी चाहिए। हिन्दुस्तानी ढंग के दंड-बैठक उसके लिए बड़े अच्छे व्यायाम हैं। कसरत करने में भी यह ख्याल अवश्य रखना चाहिए कि थकान अत्यधिक न होने पाये। शक्ति से ज्यादा थकान होने से जीवन-शक्ति का ह्रास होता है।

थोड़े में यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक 'अपच' के रोगी को उपवास से चिकित्सा शुरू करनी चाहिए और उसके बाद खूब संयम से नियमित भोजन करना शुरू करना चाहिए। चौबीस घन्टे में सिर्फ दो बार भोजन करना सभी रोगियों के लिए उत्तम होगा। सुबह शाम कसरत करना चाहिए और जहाँ तक हो खुले में रहने की कोशिश होनी चाहिए। खानपान में अपनी आदतों का सुधार करने और पाचन-प्रणाली को आवश्यक आराम देते रहने से अवश्य ही रोग निर्मूल हो जायगा।

नींद लग गई

श्रीयुत महेशचन्द्र अग्रवाल, बी० एस्-सी०

कुछ लोग काम करते करते भी झपकियाँ लिया करते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें बिलकुल नींद नहीं आती। यह नींद है क्या--इसका हमारे शरीर से क्या सम्बन्ध है आदि बातों पर इस लेख में प्रकाश डाला गया है। लेखक ने जो इसे कहानी का रूप देने का प्रयत्न किया है उससे विषय की रोचकता बढ़ गई है।--सं०

"क्यों ब्रह्मानंद ! यह पढ़ाई हो रही है या सुलाई ?"

ऊँघने वाला सचेत हो गया। बोला--

नहीं रामजी, Preparation leave में कहीं सुलाई हो सकती है। यार क्या बतावें अभी तक कुछ पढ़ा नहीं है।

ब्रह्मानंद पढ़ने लगा। परन्तु मुश्किल से दो चार मिनट गुजरे थे कि यकायक वह आगे को झुक गया। चेतना आई। सिर पीछे उठा। दो चार बार पलक चलाए। चारों ओर देखा। रामजी राय चला गया था। पढ़ने का प्रयत्न किया। परन्तु चंद मिनट बाद सुप्तावस्था ने फिर आ घेरा। सिर धीरे धीरे आगे को झुकता गया। इस बार कोई तीव्र झटका नहीं लगा। सिर डेस्क पर आकर टिक गया। ब्रह्मानंद सो रहा था।

क्या आप बता सकते हैं कि ब्रह्मानंद क्यों सो गया ? अक्सर आप काफी घूम फिर कर लौट कर जब आराम से बैठते हैं तो आपको नींद या झपकी आ जाती है। उस समय शायद माँ कहती है:

'सो गया। बेचारा थक गया था।'

तो क्या थकावट से नींद आ जाती है ? नींद के अन्य क्या क्या कारण होते हैं ? आदमी को कितनी देर सोना चाहिए ? कब सोना चाहिए ? और निद्रा कहते किसे हैं ? उसकी पहचान क्या है ? सोने वाले मनुष्य के साथ किन विशेष बातों का सम्बन्ध रहता है ?

आपने सुना होगा ठीक पाँच बजे श्री.... चिरनिद्रा में सो गए। अर्थात् 'श्री....' की मृत्यु हो गई। चिरनिद्रा में सोने वाला व्यक्ति न हिलता डुलता है न आँखें खोलता है, न साँस लेता है। वह सदैव जैसा का तैसा पड़ा रहेगा। मूर्च्छितावस्था का स्थान चिरनिद्रा के पश्चात आता है। मूर्च्छित मनुष्य कुछ समय बाद होश में आ जाता है। परन्तु यदि आप उसे पुकारिए अथवा हिलायें डुलायें तो वह न आँखें खोलता है और न चेतना को प्राप्त होता है पर श्वास चलता रहता है। निद्रावस्था में पड़ा मनुष्य पुकारने अथवा हिलाने-डुलाने से उठ बैठता है परन्तु मामूली आवाज सोते मनुष्य पर कोई असर नहीं करती। आवाज का किसी सोने वाले पुरुष पर कितना असर होगा यह इस बात पर निर्भर रहता है कि उक्त पुरुष किन परिस्थितियों में सोया था। फ़ांस और जर्मनी की खाइयों से लड़ने वाले कितने सिपाही लड़ाई करते करते सो जाते हैं। उस समय उन पर बंदूकों की आवाज व गोलों की दहाड़ का कुछ असर नहीं पड़ता। इसके विपरीत कतिपय सज्जन ऐसे होते हैं जो तनिक सी आवाज होने से जग उठते हैं। उनके मस्तिष्क को वह भी पसन्द नहीं। झपकी निद्रा की छोटी बहन है। झपकी आधा घंटा, पन्द्रह मिनट की होती है। सोनेवाला निद्रा की अपेक्षा झपकी में अधिक सचेत रहता है। ऊँघाई में मनुष्य की आँखें बंद रहती हैं। परन्तु उसके सुनने अथवा स्पर्श-अनुभव शक्ति तनिक भी लुप्त नहीं होती। ऊँघाई में बोलने की शक्ति भी मारी जाती है।

अस्तु, डाक्टरी परीक्षण द्वारा सिद्ध हो चुका है द्रा में शरीर को आराम मिलता है, साँस की गति ी होती है, नाड़ी धीरे धीरे चलती है, मस्तिष्क में की पूर्ति घट जाती है। सोते समय शरीर से चेतना था की अपेक्षा पसीना अधिक तीव्रता से निकलता जैसा कि कहा जा चुका है कि सोने वाले की स्पर्श-व तथा सुनने की शक्ति जाती रहती है। नींद ने पर पहले श्रवण शक्ति लौटती है, तब स्पर्श-शक्ति। ें सबसे बाद में खुलती हैं। बोलने की शक्ति भी खुलने के पहले ही लौट आती है। परन्तु यह बातें चर्यजनक हैं। उदाहरणार्थ आप जब किसी को पुकार जगाने में असमर्थ हो जाते हैं तो अक्सर उसके बदन पकड़ कर हिलाते हैं अथवा उसके गुदगुदी पैदा करते सोने वाला कुड़बुड़ाता है

'क्या है ? ....क्या करते हो ? ....'

मैंने रमेश को उस दिन इसी प्रकार जगाया था। आँखें खोल पलक मारते हुए बोला—

'अच्छा चलता हूँ।'

मैं उसके सोने वाले कमरे के बाहर निकल आया। मिनट बीता, दो मिनट, तीन मिनट....। रमेश बाहर नहीं निकला अन्दर जाकर क्या देखता कि जनाब आली फिर लिहाफ ओढ़कर खर्राटे ले रहे। कहने का मतलब यह कि आँखें सबसे बाद में तो ती ही हैं, परन्तु यदि शीघ्र ही मनुष्य-विशेष को र से एकान्त मिलता तो वह फिर सो जाता है। र्थात् निद्रा के लिए एकान्त-अनुभव अनिवार्य मालूम ता है।

आप जब दीपक बुझा कर खाट पर आँख बंद करके टे हैं, आपका दिमाग इधर उधर की कुछ बातों पर र करता है और आप कल्पना द्वारा कुछ दृश्य देखते। तत्पश्चात सब कुछ धीरे धीरे गायब हो जाता है। अचेतन अवस्था में पहुँच जाते हैं। परन्तु श्रवण ा स्पर्श-शक्ति बनी रहती है। इनके लुप्त होते ही पूर्ण रूप से सो जाते हैं। महात्मा गाँधी नेत्र बंद करके अपने ख्याली घोड़ों को अति शीघ्र रोक लेते हैं। फलस्वरूप उन्हें नींद आते देर नहीं लगती।

इसमें सन्देह नहीं कि निद्रा का मनुष्य की एकाग्र चित्त होने की शक्ति से काफी सम्बन्ध है। परन्तु ऐसा न होने से भी मनुष्य को निद्रा आती है। वैज्ञानिकों के इसके बारे में कतिपय मत हैं जिनमें निम्नलिखित मुख्य हैं—

(१) मस्तिष्क में रक्त-पूर्ति की कमी के कारण मनुष्य को निद्रा आ घेरती है।

(२) लगातार जागते रहने के कारण रक्त में एक प्रकार का रासायनिक विष उत्पन्न हो जाता है जिससे मनुष्य सो जाता है।

(३) नींद वह मानुषिक Instinct है जिसके कारण मनुष्य चेतनाहीन होकर अपने शरीर को आराम पहुँचाता है।

अस्तु, कोई भी कारण हो, यह आवश्यक है कि मनुष्य स्वयं यह देखे कि उसको किस हालत में कम से कम कितनी देर तक सोना चाहिए। वैज्ञानिक खोज के अनुसार निकलने वाली नींद की मात्रा निम्नलिखित तालिका में दी गई है—

आयु	कितने घंटे सोना चाहिए।
४-६ हफ़्ता	२२
१-२ साल	१८
२-३ साल	१५-१७
३-४ साल	१४-१६
४-६ साल	१३-१५
६-९ साल	१०-१२
९-१३ साल	८-१०
१३-१५ साल	९-१०
१५- साल	७-८

जिन सज्जनों को रात्रि में नींद नहीं आती, उन्हें तरह तरह की बीमारियाँ घेर लेती हैं। स्वभाव चिड़-चिड़ा हो जाता है, शरीर में शक्ति का अभाव अनुभव होता है तथा कार्यक्षमता बिलकुल घट जाती है। निद्रा

देवी द्वारा तलाक दिए भाई यदि पूर्ण रूप से खोज करें तो उन्हें निम्न प्रकार के कारण मिलेंगे।

(१) रात्रि को सिगरेट, कहवा, अथवा चाय पीना। इनसे चित्त में उथल पुथल आरम्भ हो जाती है जिससे नीद पास नहीं आती। यही कारण है कि अक्सर परीक्षा निकट आने से विद्यार्थीगण चाय, सिगरेट आदि उत्तेजक पदार्थ का सेवन करके रात को दो तीन बजे तक पढ़ाई करते हैं।

(२) अंगों में दर्द, पैरों में ठंढ अथवा अपच।

(३) दिमागी चिन्ता—इसके बारे में कुछ कहना व्यर्थ है। आप जानते ही हैं कि चिंता चिता की बड़ी बहन है। यह जो भी करे थोड़ा समझिए।

इन कारणों को दूर कर देने से शर्तिया नींद आने लगती है। परन्तु जब यह मर्ज बढ़ जाता है तो इसके लिए 'हिप्नाटिज़्म'[1] से बढ़कर कोई इलाज नहीं समझा जाता। इसका कारण यह है कि बड़े मर्ज में अधिकतर चिंता लग जाती है।

निद्रा में अक्सर बच्चे चिल्लाते या बड़बड़ाते हैं। ऐसे बच्चे अधिक Sensitive होते हैं और दिन में होने वाली लड़ाई व मारपीट, अथवा माँ द्वारा याद दिलाए भालू, बंदर, बाबा, बिगवा निद्रा में उनके दिमाग का साथ नहीं छोड़ते। इससे भी बढ़कर वह बीमारी है जिसमें सोनेवाला चलता फिरता व काम करता है। इसके मरीज अपनी खाट छोड़कर मीलों निकल गए हैं। यदि लिखा जाय तो ऐसे मरीज़ों के कारनामों से एक किताब भरजाय।

अस्तु। इन बीमारियों में पहले तो मनुष्य को अपने भोजन, रहन-सहन, स्वच्छता का विशेष बन्दोबस्त करना चाहिए। हाँ, यदि आपको यह विश्वास हो जाय कि आपके शरीर में कोई रोग नहीं है लेकिन तब भी मर्ज पीछा नहीं छोड़ता तो आप अवश्य किसी हिप्नाटिस्ट[2] के पास जावें और अपने डाक्टर की राय के अनुसार उससे इलाज करा लेवें।

---

[1] कहा जाता है कि भारत जैसे गरीब देश में हिप्नाटिज़्म की बातें करना बेकार है। शायद आप भी इस बात को मानते हैं। अतएव इन हालतों में नींद लाने के लिए निम्नलिखित प्राकृतिक चिकित्सा उत्तम समझी जाती है—

(१) गरम पानी की बोतल पैरों के पास रक्खी जाय ताकि रक्त सर से हट जाय और नींद आने में सुविधा हो।

(२) यदि मनुष्य तेजी से टहले और फिर धीरे धीरे तो उसे थकाई का आभास अधिकाधिक मालूम पड़ेगा। अक्सर देखा गया है कि ऐसी दशा में फौरन नींद आ जाती है।

(३) भैंस का दूध सेवन करने से शायद खूब नींद आती है। इसका अनुमोदन—तथा प्रस्ताव भी—यूनानी हकीम भली प्रकार करते हैं।

परन्तु अंततः हिप्नाटिस्ट को ढूँढ़ निकालने का प्रयत्न करना न भूलिए। क्योंकि उस दशा में यह प्राकृतिक चिकित्सक कुछ न कर सकेंगे। चिंता को भगाना तनिक इनकी ताकत के बाहर है।

[2] 'जीवन-सखा' के पाठकों को शायद इन हिप्नाटिज्म वालों से पूर्ण घृणा है परन्तु खेद है कि नींद न आने की बीमारी को दूर करने के लिए प्राकृतिक चिकित्सक के बाद हिप्नाटिस्ट के पास ही जाना उचित होगा।

सूर्य-स्नान और वायु-स्नान

श्रीयुत देवदत्त जैन

सूर्य की बैंगनी-पार रंग की किरणों (Ultra Violet Rays) का हमारे स्वास्थ्य पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ना सिद्ध हो चुका है। आजकल बड़े-बड़े डाक्टर रोगियों पर इसका सफलता पूर्वक प्रयोग करते हैं। किन्तु सूर्य की यह किरण सभी जगह नहीं प्राप्त की जा सकती। इसलिए वैज्ञानिकों ने एक यंत्र तैयार किया है जिसके द्वारा वे कृत्रिम किरण देते हैं। इधर अभी कुछ ही समय हुए वैज्ञानिकों ने यह पता लगाया है कि सूर्य-स्नान की तरह वायु-स्नान भी शरीर के लिए बड़ा लाभदायक है। इस लेख में आप वायु-स्नान के गुणों से परिचित होंगे।—सं०

सूर्य स्नान हमारे स्वास्थ्य के लिए कितना उपयोगी सिद्ध हुआ है, यह बताने की अब आवश्यकता नहीं रह गई है। आधुनिक चिकित्सकों ने, जो सहज ही किसी तर्क या सिद्धान्त को मान लेने वाले नहीं हैं, खूब सोच समझ लेने के द इस चिकित्सा को प्रश्रय दिया है। किन्तु यह कोई वात नहीं है। ईसा से चार-पाँच सौ वर्ष पूर्व ोक्रेटीज़—जिसे प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का जनक हते हैं—अपने शिष्यों को नित्य नियमित रूप से सूर्य-नान करवाता था।

आज हम जिस 'जिमनास्टिक' (Gymnastic) ब्द को स्कूली कसरतों के अर्थ में इस्तेमाल करते हैं वह स्तव में बहुत पुराना है। यह हमें प्राचीन ग्रीक सभ्यता युग में प्रचलित व्यायाम-शास्त्र की याद दिलाता । 'जिमनोस' (Gymnos) ग्रीक भाषा का एक ब्द है जिसका अर्थ होता है—'नग्न'। ग्रीक निवासी र के बाहर खुले में व्यायाम करते थे और उनके शरीर स्त्र से ढँके न रहते थे। इसलिए उनके शरीर पर वायु ौर प्रकाश का लाभदायक प्रभाव पड़ता रहता था।

मध्यकाल के लोग प्रकाश तथा प्रकृति के अन्य वर-नों को भूल गए। लेकिन आगे चल कर सन् १८४८ ई० में एक प्राकृतिक चिकित्सक आर्नल्ड रिक्ली (Arnold Rikli) ने फिर से नियमित सूर्यस्नान का पुनरुद्धार किया। वह आस्ट्रिया निवासी था। किंतु वह चिकित्सा-शास्त्र की उपाधि से विभूषित न था। अतः उसकी खोज का जनमत ने बहुत वर्षों तक स्वागत न किया। निदान १८९० में पाम (Palm) नामक अंग्रेज डाक्टर ने फिर इसका प्रचार करना चाहा। उसने बतलाया कि सूर्यस्नान से Rickets रोग से रक्षा होती है और रोग हो जाने पर इसी से वह ठीक भी हो सकता है। तथापि लोगों ने दस वर्ष बीत जाने पर ही इसकी ओर ध्यान से देखा और इसको अपनाया।

प्रकाश में आओ

इतने वर्षों तक मनुष्यजाति व्यर्थ ही कष्ट और रोग सहती रही। उसने स्वास्थ्यदायक प्रकाश का तिरस्कार किया। ठीक तरह न बढ़े हुए बालक और Anæmia (रक्तहीनता) रोग से पीड़ित युवक असमय में ही काल-कवलित होते थे तथापि प्रकाश को स्थान न दिया गया। किन्तु अब सर्वसाधारण इसकी उपयोगिता समझते हैं। आज हम समुद्र के किनारे बच्चों को खुली वायु और प्रकाश में खेलते देखते हैं। उनका स्वास्थ्य फलस्वरूप अत्युत्तम हो जाता है। यह सब लाभदायक प्रभाव

Ultra Violet Rays का बतलाया जाता है। इसलिए हमको ऐसे समय सूर्यस्नान करना चाहिए जब कि अधिक से अधिक Ultra Violet Rays संचार करती हों। जहाँ प्रकाश नहीं है वहाँ चिकित्सक लोग अप्राकृतिक प्रकाश रोगियों को देते हैं। अतः सब को चाहिए कि प्रकाश में आवें और स्वास्थ्य लाभ करें।

इस प्रश्न का एक दूसरा पहलू भी है जिसका पता हाल ही में लगाया गया है। सूर्यस्नान के लाभप्रद प्रभाव को देखा गया। वैज्ञानिकों ने बतलाया कि Ultra Violet Rays इस लाभ के कारण हैं। किंतु हाल ही में यह सिद्ध कर दिया गया है कि इसी प्रकार के प्रभाव शरीर को किसी सायेदार स्थान में जहाँ वायु अविरल गति बहती हो खुला छोड़ देने से भी प्राप्त किया जा सकता है। अतः हम देखते हैं कि यह स्वास्थ्यवर्धिनी शक्ति प्रकाश अथवा Ultra Violet Rays के फलस्वरूप नहीं किन्तु वायु के त्वचा पर प्रभाव के कारण प्राप्त होती है। वास्तव में वस्त्र शरीर की प्राकृतिक आवश्यकता नहीं। जो लोग प्राकृतिक चिकित्सा में विश्वास रखते हैं वह देखेंगे कि वायु में शरीर को खुला छोड़ देने से स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

त्वचा का व्यायाम

आधुनिक सभ्यता ने हर प्रकार से हमें अधिकाधिक आराम और आश्रय देकर पंगु बना दिया है। हमारी त्वचा इसका एक और सबूत है। हमें सदा त्वचा को व्यायाम कराना चाहिए ठीक उसी तरह जैसे हम हाथ पावों को कराते हैं ताकि वह स्वस्थ तथा सशक्त रह सकें। शरीर को कपड़ों से ढँके रहने से त्वचा निर्बल हो जाती है जिससे उसमें स्फूर्ति तथा तेज नहीं रह जाता है। बात यह है कि त्वचा की शक्ति तथा स्फूर्ति भी स्नायुओं पर निर्भर रहती है। हमारे शरीर में जितने रोम तथा रोमकूप हैं सब छोटी छोटी स्नायुओं के आधार पर ही काम कर सकते हैं। वायु तथा प्रकाश उन पर सदा प्रभाव करते हैं और उन्हें बलशाली बनाते हैं। किंतु तंग तथा फिट कपड़ों से जब यह उन तक नहीं पहुँच सकते तो ये स्नायु निःशक्त हो जाते हैं क्योंकि उनको उचित व्यायाम नहीं मिलता। फलतः वह अधिकाधिक शिथिल पड़ते जाते हैं और उनमें स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की शक्ति कम होती जाती है। फलस्वरूप हमें सर्दी और गर्मी अधिक लगती है, हमारी त्वचा से कम पसीना निकलता है; जो विष तथा मैला उसे ठीक ठीक बाहर निकालना चाहिए था वह वैसे नहीं निकल पाता और नतीजा यह होता है कि हमारे शरीर पर स्वास्थ्य को हानिकर मैल अधिक मात्रा में जम जाता है। अन्दर से भली प्रकार सुरक्षित तंग अंडरवियर और बाहर से भारी भारी वस्त्रों से लदा हुआ शरीर त्वचा को आलसी बना देता है। जिस प्रकार हम एक तंग कोठरी में वांछित मात्रा में आक्सीजन नहीं प्राप्त कर सकते वैसे ही कपड़ों से ढकी होने पर त्वचा साँस नहीं ले सकती। हमारे फेफड़े कार्बन एसिड बाहर फेंकते हैं—हमारी त्वचा को urea और यूरिक एसिड बाहर निकालनी चाहिए। यही कारण है कि जब हम शरीर को भारी भारी लिहाफों से ढककर घोंट देते हैं तो हमें Rheumatism और Neuritis इत्यादि जैसी भीषण बीमारियाँ आ घेरती हैं; हमारे पूर्वज कभी सर्दी से नहीं डरते थे। उन्हें तो सदा हवा के अपर्याप्त होने का ही डर रहता था।

वायु का त्वचा पर सुखप्रद प्रभाव

अतः हमें चाहिए कि हम सदा वायु-स्नान करें और नियमपूर्वक करें। यह आसान भी है क्योंकि जहाँ सूर्य-प्रकाश नहीं भी है वहाँ वायु की कमी नहीं। प्रातःकाल तथा शाम को दोनों वक्त—कपड़े पहनने से पहले और कपड़े उतारने के बाद हमें वायुस्नान करना चाहिए। यह कोई कठिन बात नहीं। बल्कि इसके विपरीत त्वचा को आनन्दानुभव होता है। चाहे हल्के ही वस्त्र हम क्यों न पहने हों—उनसे छुटकारा पाने पर शरीर को आनन्द ही होता है। और वायु का सुखप्रद प्रभाव तो एक अनुभव करने की बात है।

सभ्यता की पोशाक में अपने को ढँक लेने के पूर्व नित्यप्रति प्रातःकाल व्यायाम कीजिए और उसी प्रकार रात्रि को सोने से पूर्व वायुस्नान कीजिए। इस प्रकार आपको सूर्यस्नान से प्राप्त कहे जाने वाले अनेक लाभ होंगे। और सूर्यप्रकाश के बिना भी आपकी त्वचा का रंग अधिक सुघर हो जावेगा। उसका पीलापन दूर हो जावेगा और हमारे वस्त्रों के समान जड़वत होने के बजाय वह लचीला हो जावेगा। हमारी त्वचा को सांस लेने का अभ्यास हो जावेगा——अधिक शीत अथवा गर्मी सहने की शक्ति हो जावेगी और वह शरीर से विषैले पदार्थों को निकाल फेंकेगी। आपके सारे शरीर में रक्तसंचार अधिक सुचारु रूप से हो सकेगा। आपका Blood pressure यदि ऊँचा हो तो कम हो जाएगा। आपका श्वास मन्द नियमित गति से चलने लगेगा। आपकी भूख बढ़ेगी और पाचन शक्ति ठीक होगी।

यह सब लाभ आपको अपने कमरे में ही हो सकते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों में रह कर स्वस्थ हुए लोगों को आपको ईर्ष्या करने की कोई आवश्यकता नहीं। आपका चेहरा भी उन्हीं की तरह सुन्दर तथा सुर्ख हो सकता है। किन्तु उनके चेहरे की लाली की नकल पाउडर और क्रीम लगाकर आप न करें। इससे तो वास्तव में प्रकृति के मार्ग में बाधा पहुँचती है। आपके रोमकूप बंद हो जायेंगे। फिर यदि आप वायुस्नान भी करेंगे तो पूर्ण लाभ न हो सकेगा।

नित्यस्नान द्वारा आप अपनी त्वचा को स्वच्छ रखिए। ठंड लगने का भय न कीजिए। जिस प्रकार सूर्यस्नान ठंडी वायु में अधिक हितकर होता है उसी प्रकार वायुस्नान भी ग्रीष्म ऋतु से शीतकाल में अधिक लाभ करता है। किंतु पाठक यह न समझें कि हम उन्हें ४०° तापमान की ठंड में शरीर खोले फिरने की सलाह दे रहे हैं। ठंड लगने से कोई लाभ न होगा। हाँ, शरीर को थोड़ा थोड़ा शीतल करना सुखकर तथा स्वास्थ्यवर्धक होता है। हाँ, यह ध्यान रहे कि शरीर में उतने ही समय में गर्मी आ जाय।

सावधानी के साथ आरम्भ कीजिए और अपनी त्वचा को नित्य धीरे धीरे ठंड सहने का अभ्यास कराइये। ज्यों ज्यों इसकी शक्ति बढ़ती जायेगी आप अधिक समय तक वायुस्नान कर सकेंगे। आप कमरे में इसे करके देखें। अवश्य ही आपको इसकी आदत डालने की इच्छा हो जायगी और एक बार आदत हो जाने पर तो आप इसे कभी नहीं त्यागेंगे। इससे आपको वर्ष भर सुख तथा स्वास्थ्य की प्राप्ति होगी।

* * *

कोई भी व्यक्ति, जो मांसाहार के द्वारा आँतों में होनेवाले विष संचय का ध्यानपूर्वक अध्ययन करेगा और फिर थोड़े समय के लिए सुनियमित किन्तु मांसहीन भोजन को भी आजमाएगा उसे निरामिष भोजन की महोपयोगिता के विषय में तनिक भी संदेह न रह जायगा। साथ ही उसे यह भी विदित हो जायगा कि मांसाहारियों के मलाशय में जो भयंकर जीवाणु भरे रहते हैं और जो अपेण्डि-साइटिस, कोलाइटिस आदि कितने ही रोगों को——जिनमें शिर-दर्द, रक्तावरोध आदि भी सम्मिलित हैं——जन्म दिया करते हैं उनसे छुटकारा पाना असंभव हो जाता है।

आँखों के सामने मक्खी उड़ना

डॉ० आर०एस० अग्रवाल, नेत्र-विशेषज्ञ

आँखों की एक प्रकार की बीमारी होती है जिसे अंग्रेजी में "फ़्लाइंग फ़्लाइज़" या "फ़्लोटिंग स्पेक्स" कहते हैं। इस रोग से पीड़ित होने वाले व्यक्तियों को ऐसा जान पड़ता है कि जैसे उनकी आँखों के सामने भुनगे, मक्खी तथा आमतौर से काले रंग की अनेक चीजें उड़ती रहती हों। जब रोगी उन चीजों की तरफ देखने लगता है तो वे कुछ और पीछे खिसक गई जान पड़ती हैं।

इस रोग के सम्बन्ध में अनेक पुस्तकों तथा लेखों के रूप में वैज्ञानिकों ने अपने भिन्न भिन्न विचार प्रकट किए हैं। कोई कहता है कि आँख के भीतर छोटी छोटी दूषित वस्तु उत्पन्न हो जाने पर यह रोग होता है, और कुछ लोगों का यह कहना है कि हाजमे, दिल और गुरदों की बीमारी में यह शिकायत अकसर हो जाया करती है। कुछ वैज्ञानिकों का यह भी कहना है कि यह रोग उन्माद या पगलपन का पहला लक्षण है। इस मर्ज के लिए अखबारों में अनेक प्रकार की पेटेन्ट दवाइयों के विज्ञापन देखने को अक्सर मिला करते हैं।

क्षीण दृष्टि-शक्ति वाले व्यक्तियों में यह बीमारी आम तौर से पाई जाती है। इस बीमारी का कारण, आँखों की तथा मस्तिष्क की कमजोरी है। बहुत से लोगों ने अनुभव किया होगा कि अगर सूर्य या किसी अन्य चमकदार वस्तु को कुछ देर तक देखा जाय तो उनके बाद आँखों के सामने तारे, बुलबुले, भुनगे आदि उड़ते हुए दिखाई देने लगते हैं। इसकी वजह यह कि किसी चमकदार चीज को देखते रहने से आँखों पर जोर पड़ता है। आप किसी स्वस्थ दृष्टि वाले व्यक्ति को दिखा सकते हैं। आँखों पर जोर पड़ने से "फ़्लाइंग स्पेक्स" पैदा हो जाते हैं। यह शिकायत बाल, वयस्क, वृद्ध सभी को हो सकती है।

इसका इलाज यही है कि आँखों पर जोर न पड़ने दिया जाय। काली वस्तु का ध्यान करने से यह शिकायत जल्द दूर की जा सकती है। इसके लिए किसी तख्ती पर काला विन्दु बनाकर उसे कुछ देर तक ध्यानपूर्वक देखना चाहिए। इस विन्दु का पहले आँखें बन्द करके ध्यान करना चाहिए। फिर आँखें खोलकर उसे देखन चाहिए। इसके लिए अभ्यास की जरूरत है।

पलक भाँजना––बहुत से लोगों को तो जल्दी जल्दी पलक भाँजने से ही आराम मिल जाता है। यह कोशिश करनी चाहिए जिससे आप एक समय ३०-४० बार ठीक तौर से पलक भाँज सकें। इसके अभ्यास के लिए एक उपाय यह है कि आप किसी छोटे से बच्चे को देखें और इस बात पर गौर करें वह कितनी जल्दी जल्दी पलक मारता है। फिर आप अपनी आँखें बन्द करके बच्चे की उसी अवस्था का ध्यान करें। फिर आइने के सामने खड़े होकर पलक भाँजें और देखें कि आपकी पलकें उसी तेजी से नीचे-ऊपर होती हैं या नहीं। पलक भाँजने का उपयुक्त ढंग यह है कि आँखें थोड़ी ही खुली रहें और ऊपर की पलक आँखों पर पड़ी रहे।

झूमना––झूमने का अभ्यास कर लेने से भी इस रोग के दूर करने में बड़ी सहायता मिल सकती है। किसी जँगले की तरफ मुँह करके खड़े हो जाइए और अपनी दृष्टि जँगले के बाहर जमीन पर गड़ाइए। अब दाँए-बाएँ झूमिए––जिस तरह घड़ी का पैण्डुलम झूमता है। दाएँ-बाएँ झूमने के साथ-साथ निगाह जमीन पर पड़ने दीजिए। झूमने में ऐसा मालूम होगा कि जब दाहिनी ओर झुकते हैं तो जँगले के सीकचे बाईं ओर घूमते हैं और जब आप बाईं ओर झूमते हैं तो सलाखें दाहिनी

ोर झुकती हैं। इसके उपरान्त आँखें बन्द करके झूमते हुए और सलाखों के दाहिने बाएँ झुकने की हालत का ्यान कीजिए। इस अभ्यास के करने पर सिर या ाँखों में भारीपन मालूम हो या Floating specks ं कोई कमी न जान पड़े तो समझ लीजिए कि आप भ्यास करने में कोई गलती कर रहे हैं। इसके लिए ापको Mind and vision नामक पुस्तक से हायता मिल सकती है।

इस रोग और इसकी चिकित्सा के सम्बन्ध में यहाँ र एक उदाहरण दिया जाता है। एक डाक्टर को पनी आँखों के सामने काले डोरे उड़ते मालूम होते थे। उसकी दृष्टि शक्ति भी कमजोर पड़ गई थी। चश्मा गाने से काम तो चल जाता लेकिन उसके सिर में दर्द ोने लगता। उन्होंने लगभग १५ जोड़े चश्मे खरीद रक्खे े और हर एक चश्मा दूसरे से भिन्न था। एक नेत्र-विशेषज्ञ ने उन्हें पाँच-पाँच इंजेक्शन भी दिए और दवाइयाँ भी पिलाईं। लेकिन जब वह डाक्टर दवा करते करते हर तरह से नाउम्मेद हो गए तो मेरे इलाज को आजमाने के लिए आए, हालाँ कि उनका इसके प्रति कोई विश्वास नहीं था। मैंने यंत्रों द्वारा उनके नेत्रों की परीक्षा की। मुझे उनकी आँखों के भीतर कोई ऐसी खराबी नहीं जान पड़ी जिसे इस Floating specks का कारण बताया जा सके। हाँ, उनके दृष्टिपात करने का ढंग भिन्न प्रकार का था। वह अपनी आँखें ज्यादा खोलकर और दृष्टि पर जोर देते हुए तथा विना पलकें मारें देखा करते। मैंने सबसे पहले उन्हें पलक मारना सिखाया फिर उन्हें काले विन्दु पर कुछ देर तक देखने और फिर आँखें बन्द करके उसका ध्यान करना सिखाया। इसके साथ ही वह सुबह शाम झूमने का अभ्यास भी किया करते थे। इस क्रिया के द्वारा उनकी दृष्टि शक्ति दिन-प्रति दिन बढ़ने लगी और Flying specks जाते रहे।

* * *

जिस मनुष्य को जितने भोजन की आवश्यकता हुआ करती है, उसी हिसाब से प्रायः उसे भूख लगा करती है। ठण्डे देशों में गरम देशों की अपेक्षा अधिक भोजन की आवश्यकता रहती है, अतएव वहाँ भूख भी अधिक लगती है। इसी प्रकार परिश्रमी लोगों को बैठे-ठलुओं की अपेक्षा अधिक भोजन की आवश्यकता पड़ती है, अतएव उन्हें भी अधिक भूख लगती है। बच्चों को भी बड़ों की अपेक्षा अधिक बार भोजन की आवश्यकता पड़ती है अतएव उन्हें भूख जल्दी जल्दी लगती है। इस प्रकार साधारण दशा में भोजन की मात्रा निश्चित करने के लिए हमारी भूख ही सबसे बढ़िया और स्वाभाविक पथप्रदर्शिका है और यदि खाने पीने में इसकी आज्ञा का पालन मनुष्य करता रहे तो शरीर की बहुत सी व्याधियों से छुटकारा मिल सकता है। किन्तु कुछ लोग इच्छा या रुचि को ही भूख समझ लिया करते हैं और इसलिए हानि उठाते हैं। इच्छा या रुचि वास्तव में तबियत की माँग है, शरीर की माँग नहीं। शरीर की जो माँग होती है, उसी को भूख कहते हैं। बढ़िया और स्वादिष्ट भोजन को देखकर भूख न रहते हुए भी बहुधा खाने की इच्छा हो जाती है ऐसी इच्छा को दबाकर सदैव भूख को ही प्रधानता देना हमारा कर्तव्य है।

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

मैं दमा रोग से कैसे मुक्त हुआ

श्रीयुत मक्खनलाल 'मगन'

मैं अलीगढ़ से आठ मील पश्चिम गोंडा ग्राम का पटवारी हूँ। मुझको सन् १९१८ ई० की महामारी में महान् कफकारक सन्निपात का भीषण रोग हुआ, और शीत का प्रकोप होता रहा। उस समय मेरी आयु १७-१८ साल की थी। अपने पिता का एक मात्र पुत्र होने के कारण मेरा हर प्रकार का इलाज हुआ, और अन्त में यशोलाभ एक ग्रामीण वैद्यराज को प्राप्त हुआ। वैद्यराज ने मेरी निर्बलता के कारण कफ बाहर निकालने के बदले रसादिक औषधियाँ दे देकर शुष्क कर दिया। जिससे स्वस्थ होने पर भी बहुत दिन तक खाँसी बनी रही। परन्तु युवावस्था के कारण इस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। मेरी खाँसी प्रतिवर्ष नवीन रूप धारण करने लगी, विशेषकर हिमकाल में नजला जुकाम से अधिक कष्ट होने लगा। मेरे पास आराम के विशेष साधन थे; जिससे अधिक शारीरिक परिश्रम न करना मेरा स्वभाव बन गया था। अतएव शरीर में विजातीय द्रव्य की वृद्धि होने से शरीर स्थूल हो गया। सन् १९३६ ई० में सेटिलमेन्ट (बन्दोबस्त) होने के कारण शहर में ग्राम की अपेक्षा मानसिक तथा शारीरिक परिश्रम भी अधिक बढ़ गया, और इसी बीच में सेटिलमेन्ट अफसर ने अपने मुख्य कार्य में चक तराश नियत कर लिया, जिसकी वजह से मुझे दिन रात शारीरिक परिश्रम के अतिरिक्त लिखने पढ़ने का कार्य भी बिजली के पंखे और रोशनी के नीचे करना पड़ा। फलतः खुश्की बढ़ जाने से गले में एक प्रकार की खराश और हर समय खुश्क खाँसी उत्पन्न हुई। हर समय एस्० ओ० के साथ रहने से उनको भी ज्ञात हुआ और उन्होंने अच्छे अच्छे डाक्टरों और अलीगढ़ के सिविल सर्जन साहब की मंत्रणा से एक डाक्टरी नुसखा निश्चित कर दिया, जिससे खाँसी का वेग रुका रहा, परन्तु इस भयंकर रोग की जड़ पुष्ट होती रही। सन् ३८-३९ ई० के हिम काल में यही खाँसी श्वास-रोग का कारण बन गई, और मैं अनेक प्रकार की दवाइयों का सेवन करता हुआ क्षणिक सुख लाभ प्राप्त कर जीवन-नौका चलाता रहा। तत्पश्चात् सन् १९४०-४१ ई० के हिमागमन में श्वास रोग ने अपना भयंकर रूप धारण किया और मैंने भी अच्छी से अच्छी पेटेन्ट औषधियों का सेवन किया, परन्तु रोग बढ़ता ही गया। तब मैंने ऐसी ऐसी नशीली तथा जहरीली वस्तुओं का सेवन किया, कि जिनके नाम लिखने में घृणा होती है। उनकी वजह से मेरी यह दशा हुई कि ऊर्ध्व स्वांस चलने लगी। शरीर शिथिल, रक्त संचार में रुकावट, दस कदम चलना भी कठिन। खाना पीना छूट गया। यहाँ तक कि डाक्टर लोगों ने कहा कि तुम्हारा फेफड़ा खराब हो गया है और तुमको राजयक्ष्मा हो गया है। इस निराशावस्था की व्याकुलता में, इधर उधर भटकते हुए एक दिन मैंने डाक्टर विजयपाल सिंह साहब का साइनबोर्ड देखा—जिसमें लिखा था, "असाध्य रोगों की प्राकृतिक ढंगों द्वारा अचूक चिकित्सा"। मुझे कुछ सान्त्वना हुई और प्राण-भिक्षुक बन कर डाक्टर साहब की शरण ली। डाक्टर साहब ने मुझे धीरज बँधाया और उपचार के लिए अपने यहाँ मुझे रख लिया।

सबसे पहले डाक्टर साहब ने मुझको उपवास कराना प्रारम्भ किया। पहले दिन से ही दो बार पेड़ू-स्नान और दोनों समय एनिमा प्रारम्भ किया। एक दिन निराहार रहने के उपरान्त गर्म जल में नींबू निचोड़ कर

की आज्ञा दी गई। इस प्रकार से पाँच दिन व्यतीत सका।

तदनन्तर पालक, बथुआ और गाजर के अर्क से सप्ताह व्यतीत कराया और इन दिनों में पेड़ू-स्नान जली का स्नान, तथा भाप द्वारा पसीना और कफ के काले जाने का प्रयोग होता रहा, छाती और स्नायुओं मालिश, बिजली यंत्र द्वारा होती रही, पेट पर मिट्टी पट्टी बाँधी जाती थी और दूसरे दिन एनिमा भी दिया ता था इसी सप्ताह में मेरे शरीर में स्फूर्ति आने लगी स का वेग कम हो गया। जहाँ मुझको २४ घंटे परे- न रहना पड़ता था वहाँ केवल रात्रि में १२ से २ बजे परेशानी शेष रह गई।

तीसरे हफ़्ते में मुझको प्रातः १-२ पके टमाटर खाने अर्क पालक, बथुआ और गाजर पीने की आज्ञा दी गई कहा गया कि इस हफ़्ते में फलों में गाजर और संतरा व्यवहार कर सकते हो। रात्रि में गरम जल में शहद कर पीने को बताया गया। सोते समय १ सेब सेवन राया गया पहले सप्ताह के अनुसार पेड़ू-स्नान—स्केन- और बिजली भाप का प्रयोग तथा २-१ दिन एनिमा कराया गया। और अच्छी धूप होने पर सूर्य-स्नान काराया जाता था और मिट्टी की पट्टी बाँधी जाती। रात्रि की खुश्की बढ़ने के समय बादाम, शहद या दाम का तेल प्रयोग कराया गया जिससे खुश्की और त्रि की परेशानी से मुक्ति पाई और काम करने, भजन और धार्मिक पुस्तकों का अवलोकन करने में रुचि गई और प्रातः सायं दो दो तीन तीन मील घूमने का हो गया।

चौथे सप्ताह में मुझको मठा और पपीता और कभी कभी पालक का साग दिया जाने लगा और कुछ व्यायाम और घूमना बढ़ाया गया और पेड़ू-स्नान, एनिमा, भाप, बिजली, स्वेदन, मालिश इत्यादि यथाक्रम होते रहे जिससे अनेक प्रकार के विजातीय द्रव्य शरीर से निकल कर शरीर आरोग्यता प्राप्त करता रहा और मुझ में नवजीवन का संचार होने लगा।

पाँचवें सप्ताह में मुझको केवल दूध और शहद तथा किशमिश दिए गए और उपरोक्त क्रमानुसार प्रयोग जारी रक्खे गए और दूध में बादाम का तेल या पिसे हुए बादाम खिलाए गए जिससे मेरे शरीर में नवीन रक्त-वीर्य का संचार हुआ और श्वास रोग दूर हो गया। और मुझमें १० मील चलने और भरपूर शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम करने की शक्ति आ गई।

इतने समय में डाक्टर साहब मेरी आर्थिक दशा से पूर्ण परिचित हो चुके थे अतएव उन्होंने आज्ञा दी कि अब तुम अपने गाँव में रहकर यथाक्रम स्नान जारी रक्खो और अधिक से अधिक समय तक अन्न त्याग करो और कभी कभी उपवास करते रहो। अतएव मैं गाँव चला गया और अपने आहार में केवल दूध मठा-रस गाजर और कभी कभी छिलका सहित २-१ आलू सेवन करता हुआ केवल ग्रामीण स्नान और उपवास करता रहा जिससे पूरे तीन माह में पूर्ण लाभ प्राप्त हुआ।

अब भी मैं डाक्टर साहब की आज्ञानुसार ज्यादातर पत्तीदार शाक, लौकी-ककड़ी और फलाहार पसंद करता हूँ और अन्न की मात्रा थोड़ी से थोड़ी रखता हूँ। जहाँ तक हो सकता है घी और तेल की तली हुई वस्तुऐं सेवन नहीं करता और सप्ताह में एक दिन उपवास करता हूँ। अब मैं नीरोग हूँ।

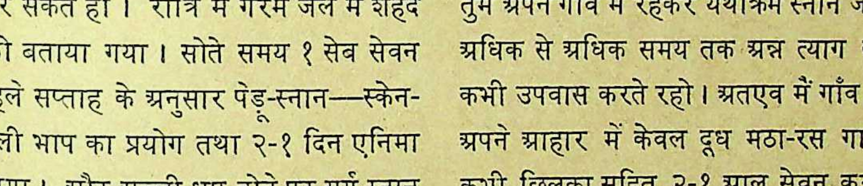

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप रूप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन आने पर ही जवाब दिया जायगा जो पृष्ठ ३५० पर छपा है। महीने की १० तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा।—स०

प्रश्न—क्या पचास साल की उम्र हो जाने पर भी अगर कोई प्राकृतिक जीवन व्यतीत करे तो वह हट्टा-कट्टा रह सकता है? महात्मा गाँधी प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हुए भी सूखे ही नजर आते हैं। लोग इससे बहुत डरते हैं कि प्राकृतिक चिकित्सा करने के बाद वजन बहुत घट जाता है। यहाँ तक कि १ मन ३४ सेर का १ मन ४ सेर ही रह जाता है।

—श्री सम्पतमल मेहता, डीडवाना (मारवाड़)

उत्तर—मेरा ख्याल है कि ५० साल क्या ६० साल की अवस्था में भी कोई अगर चाहे तो वह प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा अपना काया-कल्प कर सकता है। गाँधी जी ने कभी तगड़ा और पहलवान बनना नहीं चाहा। वे तो सिर्फ स्वस्थ रहना चाहते हैं और बहुत कुछ अर्थों में हैं भी। हाँ, उनको रक्त-चाप की शिकायत रहती है। मेरा ख्याल है वह तो सिर्फ उनके अति परिश्रम करने का ही परिणाम है। लोग ६० साल की अवस्था में भी तगड़े बने हैं। मैं इसके दो एक उदाहरण देता हूँ। 'जीवन-सखा' के पिछले किसी अंक में अल्मोड़े के एक रिटायर्ड हेडमास्टर (पन्त जी) ने एक लेख लिखा था जिसमें उन्होंने बताया है कि वह जीवन-सखा पढ़कर किस प्रकार हट्टे-कट्टे बने और चश्मे से छुटकारा पाया। पाठकों ने सेन्ट फोर्ट बेनेट का नाम सुना होगा, जिन्होंने 'बुढ़ापा और उसका इलाज' नामक पुस्तक लिखी है। ६० साल की अवस्था में, जब कि वे मरणासन्न दशा में थे, उन्होंने प्राकृतिक ढंग से अपनी चिकित्सा की और उसके बाद उन्होंने स्वास्थ्य ही नहीं, यौवन भी प्राप्त कर लिया। वजन बढ़ना घटना तो खाने पीने के ज्ञान पर निर्भर करता है कुछ ऐसे भोजन हैं जो वजन बढ़ाने वाले हैं, और कुछ ऐसे हैं जो वजन घटा देने वाले हैं। इसके लिए भोजन का ठीक ठीक ज्ञान होना आवश्यक है।

प्रश्न—मैं कई मास से 'जीवन-सखा' नियमित रूप से पढ़ता रहता हूँ। आप एनिमा लेने पर बहुत जोर देते हैं। इस बार जुलाई के अंक में भी एक व्यक्ति के प्रश्न का जवाब देते हुए आपने उसे एनिमा लेने की सलाह दी है। परन्तु मैंने सस्ता साहित्य मंडल से "ब्रह्मचर्य ही जीवन है" नामक एक पुस्तक मँगाई है। उसमें मैंने पढ़ा है और स्वयं डाक्टरों को भी यह कहते सुना है कि एनिमा नहीं लेना चाहिए क्योंकि इससे आँते कमजोर हो जाती हैं और एनिमा लेने की आदत पड़ जाती है, मतलब यह कि बिना एनिमा लिए टट्टी होती ही नहीं।

—श्री वासुदेव पण्ड्रेऊवाला, चूरू (बीकानेर)

उत्तर—हाँ, ठीक है। डाक्टर लोग जिस तरह से एनिमा लेने की सलाह देते हैं अर्थात् एनिमा के जल में सोप (साबुन) ग्लेसरीन (तेल) या अन्य प्रकार की चीजें मिला कर एनिमा लेने को कहते हैं, इन चीजों से तो जरूर आँतें कमजोर होंगी और एनिमा की आदत पड़

यगी। ये चीजें आँतों में जाकर जलन पैदा करती हैं र तब टट्टी होती है। बार-बार जलन पैदा होने से तों का कमजोर पड़ जाना स्वाभाविक ही है। पर हम निमा में केवल सादा जल लेने की राय देते हैं। कभी भी उस जल में नीबू का थोड़ा रस भी डाला जा कता है। जल से आँतें कमजोर नहीं होतीं बल्कि शनैः नैः मजबूत होती हैं। मैं स्वयं इसका अनुभव प्राप्तकर का हूँ। बहुत पहले, मेरे पेट में फोड़ा हो गया था, सकी वजह से मैं १८ महीने तक लगातार हर रोज खाने से लौटने के बाद एनिमा लेता था। मुझे तो सकी आदत नहीं पड़ी। एनिमा लेने के दिनों में भी झे आपसे आप टट्टी होती रही। एनिमा लेने से मेरी तें अवश्य मजबूत हुईं और मुझे रोग से छुटकारा मला।

प्रश्न--मेरे पिता जी के दोनों पैरों में दो साल से कवत (Eczema) हो गया है। कभी कभी पानी कलता है, वरना खुजली सूखी है। इस रोग से टकारा पाने का कोई उपाय बताइये।

--श्री जनार्दन राव, सर्राफ, (लखनऊ)

उत्तर--यह भी एक प्रकार का रक्त-विकार है जो लोगों को बहुत परेशान करता है। इस बीमारी का दो तरह से इलाज किया जा सकता है। एक तो समूचे शरीर का इलाज और दूसरा स्थानीय, अर्थात् जहाँ पर तकलीफ हो उसका इलाज। पहले दो तीन दिन तक रसाहार और उसके बाद फल, तरकारियाँ और गिरी और कुछ बादाम दे सकते हैं। सबसे अच्छी बात यह होगी कि २०-२५ दिन तक उन्हें दूध और अन्न मत दें। सूखे फल काम में लाए जा सकते हैं। एनिमा एक वक्त जरूर दिया जाय। उकवत को पानी में कुछ बूँद नीबू का रस डालकर उससे धोवें। दिन भर में छः या सात बार मिट्टी की पट्टी बाँधें। पट्टी हटाने के बाद उकवत को पानी से धोकर उस पर गरी का तेल लगाएँ। तेल तैयार करने की विधि इस प्रकार है--आधा गरी का तेल और आधा नीबू का रस दोनों मिलाकर ३-४ घंटे तक धूप में रक्खें। तेल तैयार हो जायगा। हफ़्ते में एक दिन उकवत पर भाप भी दे सकते हैं। मेरा ख्याल है कि एक महीने के भीतर ही उकवत अच्छा हो जायगा। इस रोग में सर्वांग आसन भी फायदा करता है लेकिन यह आसन उनको करना चाहिए या नहीं, यह उनकी शारीरिक दशा पर निर्भर करता है।

प्रश्न--मेरा छोटा भाई (उम्र ६ साल) १८ जुलाई से ज्वर से पीड़ित हुआ। दो तीन रोज बुखार १०३° डिगरी तक रहा। उसके बाद ७-८ रोज १००° बुखार रहा और अब पिछले ६-७ दिनों से उसके मुँह का तापमान ९९° रहता है। यदि आप इसे ज्वर समझते हैं तो कृपया इसे दूर करने का कोई उपाय बताइये। बालक कमजोर हो गया है। लेकिन खेलता खूब है उसे भूख अधिक लगती है और टट्टी रोज साफ हुआ करती है।

--श्री जनार्दन राव, सर्राफ, (लखनऊ)

उत्तर--मेरा ख्याल है कि आपके भाई को Typhoid बुखार था। इसका इलाज साधारण ज्वर का सा होना चाहिए। टायफायड ज्वर जब उतरता है तो ९९° तापमान एक या डेढ़ हफ़्ते तक रह सकता है। यह मामूली उपचार से दूर हो जायगा। हाँ, यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि मिट्टी की पट्टी और बाथ जारी रहे जब तक कि वह बालक बिलकुल स्वस्थ न हो जाय।

बालेश्वर प्रसाद सिंह

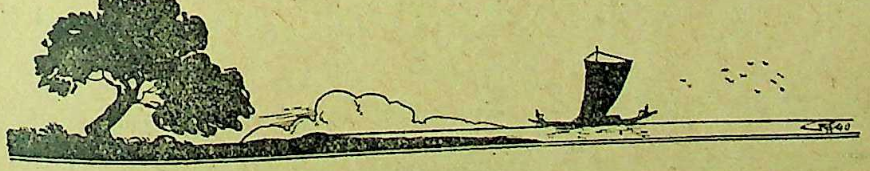

कमला

[महिलाओं की अपनी मासिक पत्रिका]
सम्पादक--श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर
सहायक--श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी

मैनेजर, 'कमला',
गायघाट, बनारस

नारी जागरण का महान् सन्देश सुनाने वाली हिन्दी की प्रमुख सर्वोत्तम मासिक पत्रिका 'कमला' के प्रकाशन से हिन्दी के पत्र पत्रिकाओं की दुनिया में एक अजीब तहलका मच गया है। हर एक उसकी गम्भीरता और उपयोगिता का कायल हो रहा है। यदि आपको विश्वास न हो तो एक प्रति मंगाकर देख लें। नमूने के लिये ।=) के टिकट भेजिये। वार्षिक मूल्य ४।।) रखा गया है। आज ही चंदा भेजिये या नमूना मँगाइये।

विनय पत्रिका पर 'आज' की सम्मति

टीकाकार श्री देवनारायण द्विवेदी; प्रकाशक भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस। पृष्ठ ३८४, मूल्य ग्लेज कागज का २।), रफ का २)। कमीशन ।) रुपया

गोस्वामी तुलसीदास का यह पावन ग्रन्थ भक्तिरस से ओतप्रोत है। इसमें भक्ति, वैराग्य और दीनता की वह निर्झरिणी प्रवाहित होती है जिसमें निमज्जन कर हृदय निर्मल हो जाता है। इसके एक एक पद में हमें गोस्वामीजी के भक्ति-प्रवण अन्तस्तल की झांकी मिलती है। परन्तु भाषा की क्लिष्टता के कारण बहुत से पाठक गोस्वामीजी की इस अमर कृति के आस्वादन से वंचित रह जाते हैं। रामचरित मानस की भाषा में यह बात नहीं है इसीसे अपढ़ ग्रामीणों के मुख से भी हमें रामायण की चौपाइयां सुनने को मिल जाती हैं। पर विनयपत्रिका की भाषा कुछ क्लिष्ट है। भक्तवर बैजनाथ तथा अन्य कितने ही विद्वानों ने इसी कठिनाई को दूर करने के लिए इसकी टीकाएं की हैं। नयी टीकाओं में श्री वियोगी हरि की टीका बहुत प्रसिद्ध है। इस टीका में स्थान स्थान पर श्री वियोगी हरि की टीका की अशुद्धियों की चर्चा की गयी है। यह ठीक है कि ऐसे उत्तम ग्रन्थों की टीका की भूलें खटकती हैं, किन्तु ऐसे पावन ग्रन्थ में यत्र तत्र किसी की अशुद्धियों की चर्चा करते जाना तो और भी खटकता है माना कि द्विवेदीजी ने किसी असत् उद्देश्य से ऐसा नहीं किया पर इस प्रसंग को छोड़कर भी वे टीका कर सकते थे।

प्रस्तुत टीका में पहले पद दिये गये हैं फिर क्रमशः भावार्थ, शब्दार्थ और 'विशेष'। विशेष में गीता, श्रीमद्भागवत, रामचरित मानस, देवीमहात्म्य से तथा सूरदास, ललित किशोरी, कालिदास आदि के तुलनात्मक पद दे देने से टीका की उपयोगिता और भी बढ़ गयी है। टीका की भाषा सरल और सुबोध है। पुस्तक संग्रहणीय है।

विवाहोपलक्ष्य में भेंट देने की महान् वस्तु क्या? वही स्त्री जगत् में हलचल मचाने वाली पुस्तक

क्या आप किसी के पिता और पति हैं?

यदि हाँ तो

भाभी के पत्र

पढ़िये और अपनी स्त्री तथा कन्याओं को पढ़ाइये,

भूमिका लेखक--कृष्णदेवप्रसाद गौड़ 'बेढब' बनारसी,
लेखक--श्री व्यथित हृदय
मूल्य सजिल्द १)

पता—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, ब्रांच, चौक, कचौड़ी गली, बनारस

बालहित

माता-पिताओं तथा शिक्षकों का एकमात्र मासिक

१–बाल जीवन के मनोविज्ञान का अध्ययन।
२–शिक्षा के नवीन प्रश्नों का शास्त्रीय विचार-विनिमय।
३–माता-पिताओं को हर रोज़ की कठिनाइयाँ तथा उनके वैज्ञानिक राय।
४–लोकतंत्र के लिये शिक्षण की व्यापक समस्याओं पर विचार।

आदि जीवन व्यापी शिक्षा का मौलिक वाचन
आप को **'बालहित'** में मिलेगा

वार्षिक २)   नमूना ≡)

आज ही लिखिये—
'बालहित', उदयपुर (मेवाड़)

हिन्दी की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका

वीणा

सम्पादक
श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

प्रकाशक
श्रीमध्यभारत-हिन्दी साहित्य-समिति

डॉक्टर बाबूराम सक्सेना, एम. ए., डी. लिट्., भू. पू. प्रधान-मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग:—'वीणा' हिन्दी की उच्च कोटि की पत्रिका है और मातृ-भाषा और साहित्य की प्रचुर सेवा कर रही है।

आगामी विशेषांक दीवाली के अवसर पर

वार्षिक मूल्य ४)   नमूने का अंक मुफ़्त नहीं भेजा जाता   एक प्रति ।=)

व्यवस्थापक—'वीणा', इन्दौर

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

कहानी

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।

(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।

(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है

'कहानी'

सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'···इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।···इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं···यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है···हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिए।'

श्री जैनेन्द्र—

'···विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है···'

श्री सुदर्शन

'···इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम कीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।···मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—

'···छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब——सब विचार से अंक सर्वाङ्ग सुन्दर है।···'

श्री उषादेवी मित्रा—

'···'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है——अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना···'

श्री देवराज उपाध्याय—

'···कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं. उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है···'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'···पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा···इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र—

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई···'

श्री पहाड़ी—

'···'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेगी।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें; पुस्तकालय २॥) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

प्रश्नोत्तर-कूपन, सितम्बर'४१

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१)	रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ..	२॥)
(२)	सरल शरीर-विज्ञान: ले० जानकीशरण वर्मा, बी० ए०	१॥)
(३)	प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदारनाथ गुप्त०, एम० ए०	२)
(४)	मठा उसके गुण तथा उपयोग : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय (परिवर्द्धित संस्करण) ..	।=)
(५)	दूध ही अमृत है : ले० हनुमानप्रसाद गोयल	१॥)
(६)	स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन-सखा' कार्यालय	=)॥
(७)	क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह	।)
(८)	ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द	१)
(९)	आदर्श-भोजन : ले० एल० एन० चौधरी	॥)
(१०)	स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर सुकुल ..	१)
(११)	कब्ज या कोष्ठबद्धता : ले० डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह	।-)
(१२)	हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	१)
(१३)	फल उनके गुण तथा उपयोग : ले० केशवकुमार ठाकुर	१)
(१४)	आरोग्य साधन : ले० गांधीजी	।=)
(१५)	नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) : लूई कूने	३॥)
(१६)	आकृति-निदान : ले० लूई कूने	१॥।)
(१७)	बच्चों की रक्षा : ले० लूई कूने	।-)
(१८)	मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लुई कूने	।)
(१९)	उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफेडन	१=)
(२०)	स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय	१)

		Rs.	as.
(२१)	**Nature Cure** by H. Lindlahar, M.D.	6	0
(२२)	**Practical Nature Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D. ..	4	0
(२३)	**Pranayama** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	2
(२४)	**The Nature Cure of Eye defects** by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D.	0	8
(२५)	**Your Diet in Health and Disease** by Harry Benjamin ..	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

उपचार के साधन

नियमित उपवास, भोजन-सुधार, दूध का कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मानसिक [illegible]।

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलतापूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के नये रोग, [illegible], [illegible] जुकाम, खाँसी, कब्ज, संग्रहणी, प्लूरिसी, दमा, [illegible], रक्तस्राव, आमाशय का [illegible], आँतों के [illegible], सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arteriosclerosis), रक्त चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood Pressure), [illegible] (Appendicitis), [illegible] (Carbuncle), गठिया, [illegible], [illegible], [illegible], सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारियाँ, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह, (पथरी), [illegible], [illegible], [illegible], कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि।

स्थान

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह इलाहाबाद स्टेशन से थोड़ी दूर [illegible] [illegible] एक [illegible] के सुन्दर [illegible] में स्थित है जहाँ प्राकृतिक जीवन [illegible] [illegible] की [illegible] [illegible] है।

[illegible] रोग [illegible] का [illegible] [illegible] मात्र ही [illegible]। संक्रामक (Infectious) रोग के रोगियों के लिए स्वास्थ्य-गृह में प्रबन्ध नहीं है।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

PRINTED BY [illegible] SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD.
PUBLISHED BY PT. BALESHWAR PRASAD [illegible] [illegible] ALLAHABAD

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

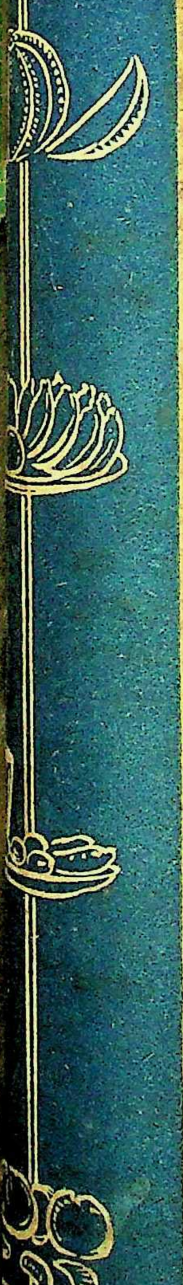

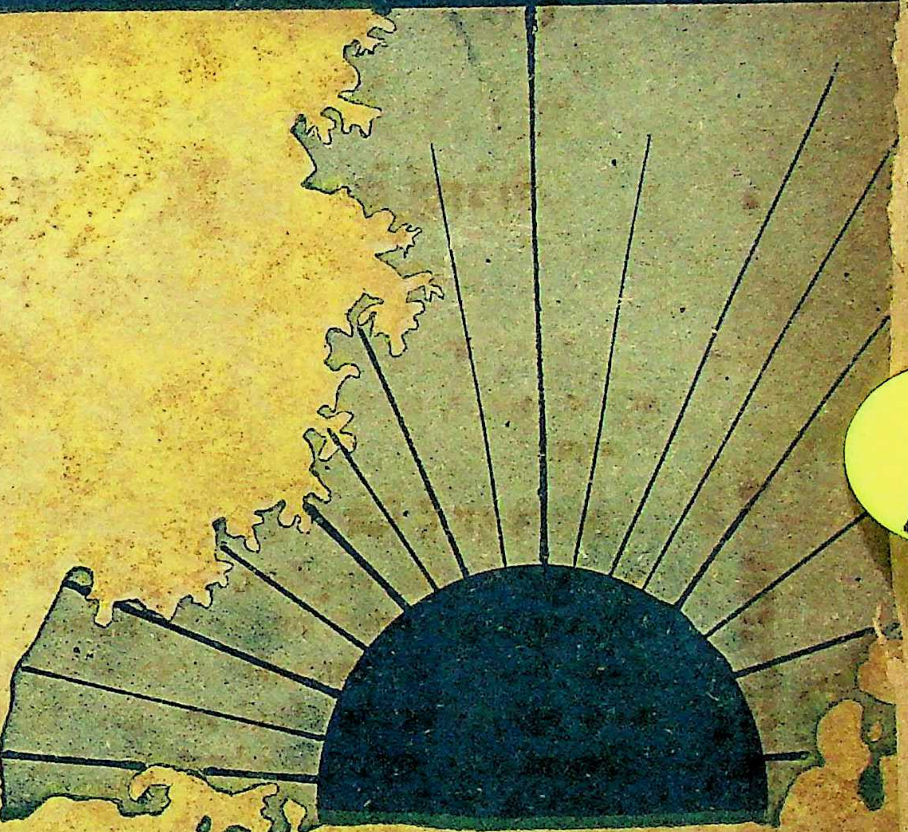

श्वास रोग
और
उस की प्राकृतिक चिकित्सा
प्रबंध लिखित

अक्टूबर
१९४१

संपादक :: बालेश्वरप्रसाद सिंह

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख काग़ज़ के एक तरफ़ हाशिया छोड़ कर साफ़ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

अपना स्वास्थ्य और दूसरों का स्वास्थ्य

प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के तत्वावधान में योग तथा प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति सिखाने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। शिक्षाकाल दो दो सप्ताह का प्रायः चार मास के अन्तर पर साल भर में तीन बार होगा। पहला शिक्षणकाल गत मार्च मास में हुआ था। दूसरा १८ अगस्त '४१ से आरम्भ हुआ। अब तीसरा तथा अंतिम शिक्षण-काल १५ नवम्बर से शुरू होगा। विद्यार्थियों को आने की सूचना एक सप्ताह पहले ही दे देनी चाहिए। अगले साल नए विद्यार्थियों का शिक्षण-काल फरवरी १९४२ से चलेगा।

प्रत्येक दो सप्ताह के शिक्षणकाल के लिए फीस केवल पाँच रुपया होगी जो प्रार्थना-पत्र के साथ भेज दी जानी चाहिए। शिक्षण का विस्तृत विवरण-पत्र दो आने के डाक-टिकट भेजने से प्राप्त हो सकेगा।

शिक्षाकाल की समाप्ति पर शिक्षार्थियों की परीक्षा होगी जो उत्तीर्ण होंगे वे एन० डी०, डी० वाई० (N.D., D.Y.) की डिगरी प्राप्त करेंगे।

८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

बालेश्वर प्रसादसिंह
डाइरेक्टर-प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ मूल्य १।)

पता :: स्वास्थ्य पुस्तक भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

अक्टूबर
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क १०

इस अङ्क में

विषय लेखक पृष्ठ

१. अपने विचार-- ३५०
२. श्वास-क्रिया से उत्तम स्वास्थ्य--श्रीयुत एल० कामेश्वर शर्मा ३५२
३. श्वास रोग और उसकी प्राकृतिक चिकित्सा--प्रो० भवानी प्रसाद, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार ३५६
४. आसन--डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह .. ३६१
५. दन्तहीनों का भोजन--श्रीयुत कामता प्रसाद अग्रवाल, एम० ए० .. .. ३६४
६. प्राकृतिक चिकित्सा से नवजीवन कैसे पाया ?--श्रीयुत सोहनलाल बहुरा .. ३७०
७. स्वरोदय-विज्ञान--श्रीयुत श्यामसुन्दर भंवर ३७२
८. प्रश्नोत्तर-- ३७५

अगले अंक में क्या रहेगा ?

१. **योग--मानव-जीवन की चरम शान्ति**
लेखक--स्वामी कुवलयानन्द

२. **पीड़ा-रहित प्रसव**
लेखिका--श्रीमती लक्ष्मी अग्रवाल

३. **नेत्र-चिकित्सा-सम्बन्धी मेरे अनुभव**
लेखक--डा० आर० एस० अग्रवाल, नेत्र विशेषज्ञ

४. **वीर्य-दोष और उसका इलाज**
लेखक--डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

अपने विचार

सुखी जीवन की समस्या

मनुष्य की इच्छाएँ असीम हैं, किंतु उसकी सबसे प्रबल इच्छा और लालसा जीने की और स्वस्थ तथा सुखी रहकर जीने की है। मनुष्य में इच्छाओं को पूर्ण करने की प्रवृत्ति भी स्वभावतः पाई जाती है। किन्तु प्रायः यही देखा जाता है कि मनुष्य की अधिकांश इच्छाएँ पूरी नहीं हो पातीं। ऐसा क्यों? —इसके साधारणतः निम्न कारण बताए जा सकते हैं —

(१) अज्ञान
(२) साधन का अभाव
(३) आलस्य
(४) इच्छा-शक्ति की कमी

अधिकांश इच्छाओं के पूर्ण न होने का पहला कारण अज्ञान बताया गया है। यह मानी हुई बात है कि जब हमें किसी लक्ष्य का समुचित ज्ञान होता है तभी उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील बनने में हमारी दिलचस्पी होती है और तभी हमें उस काम के करने में हर्ष और उत्साह का बोध होता है। हम उसे पूरा करने में पूरी तौर से लग जाते हैं और उसमें सफलता भी प्राप्त कर लेते हैं। पर यदि हम जिस काम में हाथ लगाते हैं उसका हमें समुचित ज्ञान नहीं है, उसमें हम दिलचस्पी नहीं लेते तो वह हमारे लिए एक तरह का बोझ-सा हो जाता है और उसमें हमारा समय और शक्ति लगाना व्यर्थ साबित होता है।

दूसरी ओर हम यह भी देखते हैं कि सभी व्यक्तियों को अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए समान रूप से साधन नहीं प्राप्त हैं। और यदि साधन भी हैं तो मनुष्य ने अपने जीवन-क्रम को इतना अनियमित बना लिया है कि उसे कोई भी काम कटिबद्ध होकर और दृढ़तापूर्वक करना गवारा नहीं। मनुष्य का आलस्य उसे किसी भी कष्टसाध्य कार्य में हाथ नहीं लगाने देता।

साथ ही एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि केवल किसी कार्य की इच्छा करने से ही उसकी पूर्ति नहीं होती। इसके लिए हमें यह देखना होगा कि अमुक व्यक्ति अपने किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किस हद तक इच्छा करता है। यदि उसमें उत्कट इच्छा है तो लक्ष्य की प्राप्ति निश्चित है। इस बात में केवल वही लोग संदेह कर सकते हैं जो इच्छा-शक्ति की महानता से सर्वथा अपरिचित हैं।

हमारे यहाँ स्वस्थ और शक्ति-सम्पन्न होकर सुख-शान्तिमय जीवन व्यतीत करने के जो साधन बताए गए हैं वे सरल और सुगम हैं। लेकिन मुश्किल तो यह है कि आधुनिक विज्ञान के युग ने मनुष्य को इतना निकम्मा बना दिया है कि वह हर बात में आराम चाहता है। वह बिना हाथ-पैर डुलाए ही अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने को उत्सुक रहता है। किन्तु उन साधनों को कोई पेटेन्ट दवाइयों की भाँति पैसे खर्च करके नहीं प्राप्त कर सकता। उन साधनों का वास्तविक मूल्य अगर

कुछ हो सकता है तो वह लगन और उत्साह ही है। हम उन साधनों को केवल यही मूल्य देकर प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए हम यह आसानी के साथ समझ सकते हैं कि आज जो हमारे लिए सुखी जीवन व्यतीत करना एक जटिल समस्या बन गया है उसका कारण केवल हमीं हैं। दुर्भाग्य तो यह है कि हम हर एक बात में पाश्चात्य देशों की नकल करना चाहते हैं, सो भी केवल उन्हीं बातों की जिसमें अपने किसी खास स्वार्थ की पूर्ति होती है। हम ऊपरी टीम-टाम का ही अनुसरण करने में रह जाते हैं, उनकी अच्छाइयों का अनुकरण नहीं कर पाते। अपने यहाँ के प्राचीन ऋषि मुनि जिस प्रकार का जीवन व्यतीत करते थे, जिस प्रकार का उनका आहार और दैनिक जीवन-क्रम था, उसका अनुसरण करना आजकल के तथाकथित सभ्य पुरुषों के लिए अपने को असभ्य या अर्ध-सभ्य युग में फिर घसीट कर ले जाना है! आधुनिक सभ्यता के युग में हम अर्ध-नग्न नहीं रह सकते—क्योंकि यह असभ्यता का परिचायक है—हम अन्न के बजाय साग-पात, फल-फूल खाकर रहना पसन्द नहीं करते क्योंकि हम समझते हैं संसार में ईश्वर ने मनुष्य के आनन्द के लिए तरह तरह के साधन प्रदान किए हैं, फिर उनका उपयोग क्यों न किया जाय ? फलतः हमारी रसना को तरह तरह के पकवानों का स्वाद मिल गया है, उसके बिना जी मानता ही नहीं।

इस तरह सच पूछिए तो आजकल के जमाने में मनुष्य का अनुचित आहार-विहार, रहन-सहन, मानसिक और आध्यात्मिक दुर्बलता ही उसके रोग-शोक ग्रस्त जीवन के कारण बने हैं। हम जड़ की ओर ध्यान न देकर शाखाओं को ही विच्छिन्न करने में रहते हैं और तभी हमारा प्रयत्न असफल सिद्ध होता है। हम जल के बीच रहते हुए भी अपने को प्यासा देखते हैं। इसलिए यदि हम वस्तुतः जीवन में सुख और शान्ति की इच्छा रखते हैं, यदि हम स्वस्थ और नीरोग रहकर आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, तो हमें सबसे पहले इस भ्रम को दूर करना होगा कि स्वास्थ्य को धन देकर खरीदा जा सकता है। हम इसके लिए बाहरी साधनों का सहारा न ढूँढ़ कर प्राकृतिक साधनों के महत्त्व को समझें और उन्हें अपनाएँ। अपने आहार और रहन-सहन को नियमित बनावें, नियम से परिश्रम और आराम करें। किसी भी बात में अतिशयता न आने दें। हरेक कार्य में हर्षोत्साह का अनुभव करें—फिर तो हमारी इच्छाएँ पूर्ण होकर ही रहेंगी। सुखी-जीवन की समस्या का यही एक मात्र हल है।

जीवन के आधार (२)

श्वास-क्रिया से उत्तम स्वास्थ्य

श्रीयुत एल० कामेश्वर शर्मा

मानव-शरीर का निर्माण पंच-तत्वों से हुआ है। इनमें आकाश-तत्व, वायु-तत्व, और प्रकाश-तत्व सूक्ष्म हैं, तथा जल-तत्व और क्षिति-तत्व स्थूल। अनुभवी लेखक ने यह प्रमाणित किया है कि उत्तम स्वास्थ्य के लिए स्थूल तत्वों की अपेक्षा सूक्ष्म तत्वों का ही अधिक महत्त्व है। आप अपने पहले लेख में आकाश-तत्व की महिमा का वर्णन कर चुके हैं। प्रस्तुत लेख में आपने वायु-तत्व के महत्त्व पर प्रकाश डाला है। 'जीवन-सखा' के पाठक इससे लाभ उठाने का प्रयत्न करेंगे। —सं०

पिछले लेख में हम यह ज्ञात कर चुके हैं कि आकाश-तत्त्व (Ether) का क्या गुण है और हम अपने शरीर का इसके साथ किस प्रकार सामंजस्य स्थापित कर सकते हैं। उस लेख में यह भी बताया जा चुका है कि हमारे शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इस आकाश-तत्त्व की सबसे अधिक आवश्यकता है क्योंकि प्रकृति के ५ तत्त्वों में से यही सबसे सूक्ष्म तत्त्व है। परन्तु वायु भी हमारे लिए प्रायः समान रूप से आवश्यक है, क्योंकि प्रकृति के अनुसार हमें हर समय साँस लेने की ज़रूरत होती है। हमें हवा की धूप से भी अधिक ज़रूरत होती है। आप यह देख सकते हैं कि प्रकृति हमें दिन में केवल १२ घंटे ही धूप प्रदान करती है और बाकी १२ घंटे हमें बिना धूप के व्यतीत करना पड़ता है।

आकाश, वायु और धूप में अपेक्षाकृत उच्च कोटि के तत्त्व हैं और ये हमारी पाचन-प्रणाली तथा अन्य प्राणदायिनी शक्तियों के उद्गम स्थान हैं। हमारा स्वास्थ्य इन्हीं तत्त्वों पर निर्भर करता है। इसलिए उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त करने का मूल मंत्र यही है कि हम इन तीनों तत्त्वों को अधिक से अधिक अंशों में प्राप्त करें तथा बाकी दो तत्त्वों को जो, स्थूल हैं, कम से कम अंशों में ग्रहण करें।

भीतरी स्वच्छता के लिए वायु का महत्त्व

शरीर-रचना-शास्त्र के विद्यार्थी यह जानते होंगे कि रक्त में गैस के रूप में उत्पन्न हो जाने वाले विकारों को दूर करने के लिए तथा पाचन क्रिया के अनन्तर बच रहने वाले पदार्थ को भस्मीभूत करने के लिए हमें वायु की कितनी अधिक आवश्यकता होती है। हम जितनी ही अधिक और शुद्ध वायु का सेवन करेंगे उतनी ही पूर्णता के साथ पाचन क्रिया से बच रहने वाले पदार्थों को भस्मीभूत करने तथा मल को दूर करने की क्रिया सम्पन्न होगी। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव यह पड़ता है कि हमारी प्राण-शक्ति बढ़ जाती है।

हम जो भोजन करते हैं उसके प्रत्येक अंश का वायु से प्राप्त होने वाले आक्सीजन के अंश के साथ सन्तुलन होना चाहिए। भोजन के जो अंश पूरी तौर से पच नहीं पाते वे विष-तुल्य हो जाते हैं। इस विष का प्रकृति जिन प्रयत्नों के द्वारा निवारण करती है उन्हें हम रोग कहते हैं। तात्पर्य यह कि प्रकृति रोगों के द्वारा उस विष के प्रभाव को दूर करती है।

वायु से 'आक्सीजन' की प्राप्ति

अब हमारे सामने जो सवाल पैदा होता है वह यह है -क्या व्यायाम के तौर पर श्वास-क्रिया के अभ्यास की ोई ज़रूरत है ? इस सवाल का जवाब देने से पहले हमें क दूसरे सवाल का जवाव देना होगा—हमें कितने ाक्सीजन' की ज़रूरत होती है ? अगर हम केवल उतने भोजन से संतुष्ट हो जायँ जितना कि हमारी जीवन-क्ति को कायम रखने के लिए तथा हमारे दैनिक कार्यों ो पूरा करने की क्षमता प्रदान करने के लिए निहायत री है, और यदि हम जो अपने आनन्द के लिए आवश्य-ता से अधिक भोजन करते हैं, उसका बहुत कुछ अंशों ं परित्याग कर दें तो उसके फलस्वरूप हमें साधारण ास-क्रिया से जो 'आक्सीजन' प्राप्त होता है उससे धिक 'आक्सीजन' प्राप्त करने की आवश्यकता न होगी। किन सच बात तो यह है कि हम ज़रूरत से कम से कम गुना भोजन करते हैं। यहाँ पर यह ध्यान में रखना गा कि हमें कितना भोजन करना चाहिए, इसका माप ड यह नहीं है कि हममें भोजन को पचाने की कितनी धिक शक्ति अथवा क्षमता है। प्रकृति यह नहीं चाहती क हम जहाँ तक पचा सकते हैं वहाँ तक खूब भोजन करें। गर हम ऐसा करेंगे तो इसका फल यह होगा कि हमारी री शक्ति भोजन को हज़म करने में ही लग जायगी र शरीर के अन्य प्राण-पोषक तथा विकार अथवा न को दूर करने के कार्यों को पूरा करने के लिए बहुत म शक्ति बच रहेगी। इसलिए अगर हम ज़रूरत से धिक भोजन करते हैं तो पाचन क्रिया के द्वारा तथा न्य प्रकार से शरीर में उत्पन्न हुए विकारों को दूर करने ं बाधा पड़ेगी। लेकिन हम स्वाद लेने के इतने अधिक दी हो गए हैं कि हमें इस बात की फिक्र लगी रहती है कि किस प्रकार और अधिक भोजन पचा लिया जाय।

हम जितना हज़म कर सकते हैं, उसकी अपेक्षा म भोजन करना संभव है। इतना ही नहीं बल्कि अगर चाहें तो अपेक्षाकृत कम भोजन करके भी अपने को स्वाद और रुचि की दृष्टि से भी संतुष्ट कर सकते हैं। इसके लिए चाहिए यह कि जीवन-शक्ति कायम रखने के लिए जितने भोजन की आवश्यकता है उससे अधिक किन्तु हमारी पाचन-शक्ति जितनी है उससे कम भोजन किया जाय। इस मध्य-मार्ग का आसानी के साथ अनुसरण किया जा सकता है और इससे उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त करने में कोई बाधा भी न पड़ेगी। लेकिन हमें यह ध्यान रखना होगा कि श्वास लेने की अपेक्षाकृत उत्तम क्रिया के द्वारा हम अपनी जीवन-शक्ति को बढ़ा सकते हैं और उसे संरक्षित भी रख सकते हैं। इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। श्वास-क्रिया के इस अभ्यास के द्वारा हम और अधिक मात्रा में 'आक्सीजन' प्राप्त कर सकते हैं।

हमारे शरीर के लिए साधारण रूप से जितने 'आक्सीजन' की आवश्यकता है उतना प्राप्त करने के लिए भी अपेक्षाकृत उत्तम ढंग से श्वास-क्रिया संचालित करनी होगी। लेकिन अच्छा यह होगा कि वायु में जितना 'आक्सीजन' है उसे पूर्ण रूप से ग्रहण करना हम अपना उद्देश्य बनावें।

प्रो० राममूर्ति तथा अन्य भारतीय पहलवानों ने शारीरिक व्यायामों की अपेक्षा श्वास-क्रिया में उत्तमता प्राप्त करने के ही द्वारा अपना शारीरिक विकास किया है।

व्यायाम के तौर पर श्वास-क्रिया

साधारणतः हठ योग पर पुस्तकें लिखने वाले लोग विद्यार्थियों को इस बात के लिए सावधान करते हैं कि बिना किसी निपुण व्यक्ति की निगरानी के वे श्वास-क्रिया का अभ्यास न करें। लेकिन अगर वह विद्यार्थी सर्वथा शान्त-भाव से यह अभ्यास आरम्भ करे तो उसके लिए किसी निर्देशक या पथप्रदर्शक की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। इस प्रकार के अभ्यास के लिए सबसे मुख्य बात यह है कि ठीक तौर से कार्य किया जाय और उसे क्रम क्रम से आगे बढ़ाया जाय।

हर बार साँस लेते समय हम भीतर की कुछ वायु को बाहर निकालते और कुछ स्वच्छ वायु को ग्रहण करते हैं। साँस खींचते ही कुछ क्षण तक वह रुकती है और इसी प्रकार साँस बाहर निकालने के बाद भी हम कुछ क्षण तक रुकते हैं। इस अवस्था को हठ-योग में 'कुम्भक' बताया गया है। इस पहले कुम्भक का मुख्य उद्देश्य यह है कि फेफड़े के वायु-कोषों (Air cells) और उनके चारों ओर फैली हुई रक्त शिराओं (Capillary blood vessels) के बीच इस स्वच्छ वायु का आदान-प्रदान हो। श्वास-क्रिया का यही मूल तथ्य है। जितनी ही अधिक देर तक स्वच्छ वायु को भीतर रोका जायगा उतना ही अधिक श्वास-क्रिया से लाभ उठाया जा सकेगा। साँस बाहर फेंकने के बाद जो कुम्भक होता है उसका उद्देश्य श्वास-क्रिया से सम्बन्धित शिराओं तथा मांस-पेशियों को आराम देना है।

इस प्रकार हम इस श्वास-क्रिया को चार भागों में विभाजित कर सकते हैं—(१) बाहर साँस निकालने के द्वारा वायुकोषों को खाली करना, (२) स्नायुओं को आराम देने के लिए तथा पुनः श्वास खींचने के लिए विराम, (३) स्वच्छ वायु से वायु-कोषों को फिर भरना, और (४) फिर विराम जिसके दरमियान रक्त अपने विकार (Carbon dioxide) को निकालता और उसके स्थान पर जीवन दायक 'आक्सीजन' को ग्रहण करता है। साधारण श्वास लेने की क्रिया से उत्तम श्वास-क्रिया में यही अन्तर होता है कि इसके दरमियान श्वास लेने की इन चारों अवस्थाओं का धीरे धीरे किन्तु पूर्ण रूप से पालन होता है।

इस क्रिया के लिए हमें यह करना चाहिए कि हम आरम्भ में श्वास को इस तरह से बाहर निकालें जिसमें तत्सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण शिराओं पर कम से कम जोर पड़े, पर इसके साथ ही श्वास की क्रिया से अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सके। श्वास लेने की इस पहली क्रिया को हठ-योग में 'रेचक' बताया गया है।

आजकल औसत सभ्य पुरुष के फेफड़े लचीले (Elastic) नहीं रहते और उनके विस्तार की परिधि बहुत कम होती है। इसलिए वे जो रेचक क्रिया करते हैं वह अधूरी होती है। और इसके फलस्वरूप श्वास लेने की तीसरी क्रिया—जिसे पूरक कहते हैं—भी अधूरी होती है। हर बार साँस लेने के समय कुछ न कुछ गन्दी वायु फेफड़े के अन्दर रह जाती है और बाहर से साँस के द्वारा आई हुई स्वच्छ वायु को भी साधारणतः एक सेकेण्ड के कुछ ही अंशों तक वह रोक पाता है। इसलिए वह श्वास-क्रिया का बहुत कम लाभ उठा पाता है। फिर आजकल जो हम इतने अधिक लोगों को क्षय रोग से ग्रस्त देखते हैं वह कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

स्वास्थ्य-सुधार के लिए इस बात की बहुत अधिक आवश्यकता है कि फेफड़े के अन्दर की गन्दी वायु अधिक से अधिक मात्रा में बाहर निकाल दी जाय। स्वास्थ्य के लिए यह एक सबसे सरल और उपयोगी कार्य भी है। इसी के द्वारा हम पूरक तथा कुम्भक क्रियाओं को पूर्ण करने के लिए तैयारी कर सकते हैं।

पूरक और कुम्भक ये दोनों क्रियाएँ तब की जा सकती हैं जब कि फेफड़ों में अधिक अंशों में लचीलापन और स्नायुओं तथा मांसपेशियों में ऊँचे दरजे की स्वच्छता और शक्ति आ जाय। लेकिन ऐसा केवल रेचक क्रिया के ही द्वारा हो सकता है, जिसके साथ हमें अपने भोजन में भी सुधार करना होगा।

दूसरी ओर अगर पूरक क्रिया को पूर्ण बनाने के लिए प्रयत्न किया जाय, अर्थात् फेफड़ों को अपेक्षाकृत अधिक फुला कर हवा भरने का अभ्यास किया जाय तो तत्सम्बन्धी स्नायुओं और मांसपेशियों पर अधिक जोर पड़ेगा। लेकिन अगर जहाँ तक सम्भव हो सके वहाँ तक हवा को बाहर निकालकर फेफड़ों को सिकोड़ने का प्रयत्न किया जाय तो उसमें स्नायुओं और मांसपेशियों पर कम या नहीं के बराबर जोर पड़ेगा। अधिक हवा बाहर निकालने पर स्वभावतः साधारण से अधिक वायु अन्दर लाया जा सकेगा और इसमें जोर भी अधिक नहीं पड़ेगा। इस प्रकार श्वास-क्रिया को उन्नत बनाने का स्वाभाविक

क्रम इस प्रकार बनाया जा सकता है—

(१) केवल रेचक क्रिया।

(२) रेचक क्रिया और श्वास को बाहर निकाल देने के उपरान्त विराम (जिसे वाह्य कुम्भक कहते हैं)।

(३) रेचक, वाह्य कुम्भक, और पूरक।

(४) ये चारों क्रियाएँ।

इनमें से प्रत्येक क्रिया में आपको यथासंभव अधिक से अधिक समय लगाना होगा ताकि आप दूसरी क्रिया को पूर्ण करने में समर्थ हो सकें। एक क्रिया में कितना समय लगाया जाय यह स्वयं निर्णय किया जा सकता है।

श्वास-क्रिया की विधि और उसके लाभ

रेचक क्रिया के समय अभ्यासी को आराम से बैठना चाहिए ताकि उसकी रीढ़ सीधी बनी रहे। इसके लिए पद्मासन सबसे अधिक उपयुक्त होगा। इसके अनन्तर अभ्यासी को मुख के रास्ते वायु बाहर निकालनी चाहिए और तब मुँह और दोनों नथनों को बन्द करके श्वास को थोड़ी देर तक भीतर रोकना चाहिए। फिर एक नथने द्वारा धीरे धीरे साँस भीतर ले जानी चाहिए और उसे थोड़ी देर तक फेफड़े के भीतर रोकनी चाहिए और तब दूसरे नथने के द्वारा साँस को बाहर निकाल देना चाहिए। यह एक प्राणायाम होता है। फिर फेफड़े को थोड़ी देर तक आराम देने के बाद दूसरे नथने से धीरे धीरे साँस भीतर ले जानी चाहिए। आरम्भ में केवल थोड़े ही समय तक अभ्यास करना चाहिए। उदाहरण के लिए किसी निर्दिष्ट समय में तीन मिनट तक अभ्यास पर्याप्त होगा। इस क्रिया में पर्याप्त रूप से उन्नति कर लेने के बाद आगे बढ़ा जा सकता है।

पूरक क्रिया के समय साँस को भीतर ले जाने के समय जहाँ तक हो सके उदर को नीचे और ऊपर भी खींचना चाहिए। इस हालत में भी अभ्यासी साँस को भीतर खींचना जारी रख सकता है, लेकिन अब उसे अपनी पसलियों को ऊपर उठाना होगा (उसके साथ ही कंधे भी कुछ ऊपर उठेंगे) ताकि बाहर से भीतर पहुँचने वाली साँस फेफड़े के सिरे पर लगे और उसमें वायु भरे। पँसलियों के उन्नत होने पर फेफड़े की सतह (Diaphragm) भी ऊपर उठेगा। और फिर स्वभावतः अपने मूल स्थान पर आ जायगा।

इस क्रिया के लाभ अनेक हैं। इससे शारीरिक और मानसिक दोनों तरह के स्वास्थ्य पर बहुत लाभकारी प्रभाव पड़ता है। ऊपर और नीचे होने के द्वारा फेफड़ों की एक प्रकार से नियमित रूप से मालिश (Massage) हो जाता है। इस क्रिया से रक्त को और अधिक 'आक्सीजन' प्राप्त होता है और पाचन क्रिया तेजी के साथ बढ़ने लगती है। इसके द्वारा बीज कोषों के विकार, तथा विष जो रोगों के कारण बनते हैं, दूर हो जाते हैं। संक्षेप में, इससे शरीर के प्रत्येक अवयव में सुधार होता है।

इस अभ्यास की पहली क्रिया से रोगियों को लाभ पहुँचाया जा सकता है। दमा और क्षय रोग से पीड़ित होने वाले व्यक्तियों को तो इस क्रिया से निश्चय ही लाभ पहुँचेगा।

शारीरिक स्वास्थ्य के ही समान मानसिक स्वास्थ्य को भी उन्नत बनाना परमावश्यक है। इस अभ्यास के द्वारा मस्तिष्क स्वस्थ और सबल बनता है। पाठकों को यह ध्यान में रखना होगा कि यहाँ जिस क्रिया का उल्लेख किया गया है वह स्वास्थ्य लाभ के अन्य प्राकृतिक उपकरणों के ही अन्तर्गत है।

श्वास-रोग और उसकी प्राकृतिक चिकित्सा

प्रोफेसर भवानी प्रसाद, प्राकृतिक स्वास्थ्य-शास्त्रोपाध्याय, काङ्गड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार

'दमा दम के साथ जाता है'—यह कहावत काफी प्रसिद्ध हो चुकी है। लेकिन अन्य चिकित्सा पद्धतियों द्वारा असाध्य घोषित किए गए रोग भी प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में साध्य बताए गए हैं। प्रोफेसर साहब प्राकृतिकि चिकित्सा के अच्छे मर्मज्ञ हैं। इस लेख में आपने अंग्रेजी तथा अन्य प्रकार की दवाइयों की निस्सारता दिखाते हुए यह बताया है कि प्राकृतिक उपायों के द्वारा श्वास-रोग जैसे भयावह संहारक रोग पर हम किस प्रकार विजय प्राप्त कर सकते हैं। लेख अनुभूति मूलक एवं विशेष उपयोगी है।—सं०

प्रायः प्रत्येक साधारण पुरुष की श्रद्धा औषध-चिकित्सा पर उसी समय तक बनी रहती है, जब तक उसको श्वास सरीखे किसी दारुण रोग का सामना करने की हालत में निजी अनुभव उठाने का अवसर नहीं मिलता है। बहुत सी औषधियाँ खा चुकने पर भी जब उसका रोग नहीं जाता, तो उसको दवाइयों में सन्देह होने लगता है। वह श्वास-रोग से पीड़ित अन्य मनुष्यों से जानकारी प्राप्त करके उनसे इस विषय में पूछ-ताछ करता है, तो उसको ज्ञात होता है कि वे भी वर्षों से इस रोग से महा कष्ट पा रहे हैं और किसी दवा से भी कोई वैद्य वा डाक्टर उनके इस मारक रोग का मूलोच्छेद नहीं कर सका है। उसको कभी न कभी कोई ऐसे औषध चिकित्सक भी मिल जाते हैं जो स्वयं जीर्ण श्वास-रोग से पीड़ित हैं। अब उसको औषधियों की भूल भुलैयाँ का ज्ञान होने लगता है और वह समझने लगता है कि जब चिकित्सक महानुभाव स्वयं अपने रोग का प्रतीकार नहीं कर सके, तो वे मेरे रोग को किस प्रकार हटा सकते हैं। इस अनुभव द्वारा वास्तविकता पर पहुँचने में उसे अनेक वर्ष लग सकते हैं। वैद्य लोग उसको जो दिलासा देते रहते हैं, उससे वह वर्षों धोखे में पड़ा रह सकता है। प्रारम्भ में उस पर श्वास-रोग के आक्रमण बहुत दिनों का अन्तर देकर और स्वल्पकालिक होते रहे हैं और उनके कष्टदायक लक्षण चिकित्सक की प्रभावशाली औषधि के देते ही चमत्कारिक रूप से लुप्त हो जाते रहे हैं। इससे वह समझता रहा है कि वैद्य महाशय अमोघ चिकित्सा के अनन्त भण्डार हैं।

ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है, रोग के आक्रमण की अवधि बढ़ती जाती है और उनके बीच का अन्तर भी घटता जाता है अर्थात् आक्रमण शीघ्र शीघ्र होने लगते हैं। आक्रमणों के शान्त होने के बाद भी श्वास लेने में कठिनाई बराबर बनी रहती है। रोगी की निराशा, उद्विग्नता और चिन्ता बढ़ती जाती है। वह नहीं जानता कि रोग का अगला आक्रमण कब हो जाय। वह भविष्य को अनिष्ट की आशंकाओं से परिपूर्ण देखता है और चिकित्सा के लिए कहीं अन्यत्र जाने का संकल्प करता है। किसी बड़े नगर में पहुँचकर उससे किसी बड़े ठाट-बाट वाले वा ऊँची दूकान वाले वैद्य वा डाक्टर से भेंट होती है और बहुमूल्य पेटेन्ट औषधियों और इंजेक्शनों से उसकी स्वल्प पूँजी का तो मूलोच्छेद अवश्य

कर दिया जाता है, किन्तु उसका रोग सुरसा राक्षसी के वदन के समान बराबर बढ़ता ही जाता है और श्वास के साथ उसकी राजसी सज-धज को बढ़ाने के लिए, हृदय-स्पन्दन, वृक्क रोग, उरस्तोय (श्वास प्रणाली प्रदाह) फुप्फुस प्रदाह (निमोनियाँ), राज-यक्ष्मा (तपेदिक), क्षय (फेफड़ों का दिक़) और रक्तचाप का दबाव आदि प्रचुर रोगों की सेना आ धमकती है।

वस्तुतः श्वास स्वयं तो कोई मारक रोग नहीं है, किन्तु यदि यथार्थ चिकित्सा द्वारा उसका प्रतीकार न किया जाय तो उसके परिणामस्वरूप ऐसे भयंकर रोग हो जाते हैं, जो रोगी के सतत कष्ट के कारण बने रहते हैं और उसके जीवन की दीप-शिखा को बुझा देते हैं। और इसीलिए "दमा दम के साथ" की कहावत प्रचलित हो गई है। दयामयी प्रकृतिमाता प्रत्येक रोगी को ऐसे अवसर सदा प्रदान करती रहती है कि वह अपने रोग के यथार्थ स्वरूप और उसके मूलोच्छेदक यथार्थ उपचार को जान ले और उसके अनुसार चलकर अपने जीवन को सुखी बना सके। श्वास-रोग भी इसका अपवाद नहीं है। उसके भी मूल कारण तक पहुँचने की आवश्यकता है। मूलकारण के सविस्तर वर्णन से पूर्व यहाँ पर प्रथम श्वास-रोग के लक्षणों का उल्लेख किया जाता है।

श्वास के लक्षण

श्वास-रोग की विशेषता यह है कि उसमें रोगी को श्वास लेने में कठिनता का अनुभव होता है। उसमें क्लोम कण्डिका प्रदाह (कास) से यह अन्तर है कि श्वास के आक्रमण तो क्लोम कण्डिका (Bronchial tube) की नाड़ियों के संकोचन (सिकुड़ने) से होते हैं और क्लोम कण्डिका प्रदाह (खाँसी) में श्वास-क्रिया में जो कठिनता होती है वह क्लोम कण्डिकाओं में कफ के रुकने से होती है वा उसमें क्लोम कण्डिकाओं की आच्छादनी कला (Lining membranes) पर शोथ (प्रदाह हो जाता है, जिससे कि भीतर जाने वाले वायु के मार्ग का व्यास घट जाता है।

क्लोम कण्डिका प्रदाह (कास) में भीतर और बाहर अर्थात् श्वास निःश्वास दोनों में कष्ट का अनुभव होता है किन्तु श्वास-रोग के आक्रमण में मुख्य कठिनता बाहर को श्वास निकालने में ही होती है उसमें रोगी को एक घड़घड़ाहट वा कृच्छ्रश्वसन के शब्द का अनुभव होता है, रोगी का मुखमण्डल पीला वा नील वर्ण का हो जाता है, कानों पर भी नीलाहट आ जाती है और ग्रीवा और कनपटियों की शिराएँ रस्सी के समान ऊपर को उभर आती हैं। मुख और देह पर ठण्डा पसीना झलक आता है, चिन्ता और भय रोगी की चेष्टा से प्रकट होते हैं। श्वास का आक्रमण आधा घंटा वा उससे अधिक भी रह सकता है। इसके पश्चात् क्लोम कण्डिकाओं का तनाव शनैः शनैः घटने लगता है। खांसना और कफ निकलना प्रारम्भ हो जाता है, और जब ये कष्ट शान्त हो जाते हैं तो थका हुआ और बहुत कुछ कष्ट से छुटकारा पाया हुआ रोगी सो जाता है और प्रातःकाल में आपाततः अपने पिछले कष्ट से कुछ मुरझाया हुआ जग उठता है। बहुत सी दशाओं में घड़घड़ाहट का शब्द दिन रात होता रहता है और श्वास का संकोच (लघुता) सदैव न्यूनाधिक कष्ट देता ही रहता है। श्वास लेने की मांसपेशियों पर बल पड़ने के कारण कभी कभी छाती कुछ समय तक आक्रमण से पीछे भी दुखती रहती है। श्वास-रोग का विशेष चिह्न यह है कि उसके आक्रमण अकस्मात् होते हैं।

क्लोम कण्डिका प्रदाह में साधारणतः खाँसी उठने और श्वास लेने की कठिनता में शनैः शनैः वृद्धि से पहले ही सूचना मिल जाती है, किन्तु श्वास-रोग में तो इसके अतिरिक्त और कोई पूर्वबोधक चिह्न नहीं होते हैं कि कदाचित् कुछ मानसिक बिषाद (उदासी) कुछ शिरोवेदना, कुछ उदर का आध्मान (भारीपन) वा उत्तेजना प्रतीत होती है। श्वास-रोग की एक और विशेषता यह है कि उसमें श्वास लेने की कठिनता से श्रान्ति अवश्यम्भावी नहीं है। उसके अधिकांश कष्टदायक आक्रमण प्रातःकाल के स्वल्प समय में होते हैं और उस समय रोगी को

शय्या पर पड़े हुए कुछ विश्राम मिल जाता है। जब रोगी निद्रा से जागता है तो उसका दम घुटता हुआ सा प्रतीत होता है और ऐसा अनुभव होता है कि कोई दैत्य उसके गले और छाती को दवा रहा है। तव श्वसन-क्रिया के साथ संघर्ष आरम्भ होता है। हृदय पर दबाव प्रतीत होता है, रुधिर वाहिनियाँ ग्रीवा और कनपटियों पर उभड़ आती हैं, रोगी वायु को उत्तेजना पूर्वक मुख फैला कर भीतर ले जाना चाहता है किन्तु मुख से भी थोड़ी ही वायु भीतर जा पाती है। परन्तु उससे रोगी के कष्ट में केवल वृद्धि ही होती है, क्योंकि वह भीतर गई हुई वायु को निकालने में असमर्थ रहता है। यह वायु तो उसके फुप्फुसों में रुक जाती है। आसन्न मृत्यु के भय से उसके हृदय की पीड़ा में वृद्धि होती है। अन्ततः जब अन्त निकट आया हुआ प्रतीत होता है—जब हृदय और फुप्फुस फटने पर तुले हुए प्रतीत होते हैं—तो आक्रमण धीमा पड़ जाता है वा भीतर रुकी हुई कुछ वायु फुप्फुसों से बाहर निकल जाती है। रोगी को दुःख-मोचन का अनुभव होता है। उसको ठण्ढा पसीना आता है। कुछ थोड़ी खाँसी उठती है और तभी रोगी और उसकी सेवा करने वाले श्रान्तिपूर्वक निद्रा का सुख लेते हैं।

श्वास के उत्तेजक कारण

यहाँ इस विषय को अधिक संकुल (पेचीदा) बनाने से बचने के लिए केवल क्लोम कण्डिकाओं वा कला के शोथात्मक (Bronchial) वा श्लेष्मल (Catarrhal) श्वास-रोग का ही वर्णन किया जायगा। वस्तुतः रहन सहन की एक ही प्रकार की भूलें मूलतः हार्दिक श्वास-रोग तथा वृक्क श्वास-रोग का कारण होती हैं अतएव उनका हृदय कपाटिका के रोगों से जो कि उक्त प्रकार के श्वास के साथ साथ रहते हैं पृथक् वर्णन करना स्पष्टतः ही निरर्थक है।

श्वास-रोग के निमित्त कारण साधारणतः निम्नलिखित होते हैं—

जल वायु, ऋतु, स्थानिक कुहासा, धूलि, गन्ध, धुआँ, विकृत दाँत, भारी भोजन के कारण अपच, वृक्षों और पुष्पों का पराग, नाक, कण्ठ, हृदय, आमाशय वा आँतों में गड़बड़ी के कारण नाड़ियों पर प्रतिक्षेप (Nerve reflexes)। कभी कभी प्रतिश्याय भी श्वास का कारण होता है और कभी कभी नाड़ियाँ ही श्वास का कारण होती हैं। श्वास-रोग सीधे वा हेर-फेर से क्लोम कण्डिकाओं की नाड़ियों के विक्षोभ से ही उत्पन्न होता है। धूल, धुआँ आदि विक्षोभ के सीधे कारण हैं। प्रतिश्याय वा कास से उत्पन्न क्लोम कण्डिकाओं का शोथ भी सीधा विक्षोभ उत्पन्न कर सकता है। अपच और बद्धकोष्ठ के परिणामस्वरूप आहार के विषाक्तीकरण वा आहार के उफान से जो विष बनते हैं वे क्लोमकण्डिकाओं की नाड़ियों में जानेवाले रुधिर द्वारा हेर-फेर से विक्षोभ का कारण होते हैं। हेर-फेर से विक्षोभ के कारण का एक और रूप नाड़ियों के वे प्रतिक्षेप हैं जो क्लोम कण्डिकाओं से दूरवर्ती देह के अंगों में यथा विकृत दाँत, नाक की फुंसी वा हृदय आमाशय वा आँतों में गड़बड़ी के कारण उत्पन्न होते हैं।

मूल कारण

स्मरण रखना चाहिए कि प्रत्येक रोगी को सैकड़ों वा सहस्रों बार श्वास के आक्रमण से पूर्व ऐसे उत्तेजक कारणों का अनुभव हुआ है। इससे क्या परिणाम निकलता है? इसका स्पष्ट परिणाम यही है कि आक्रमण से पूर्व रोगी के देह की दशा उसके प्रारम्भ की दशा से भिन्न होती है। यह अत्यन्त स्पष्ट बात है इससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि श्वास-रोग प्राकृतिक चिकित्सा से क्यों सुसाध्य है, जब कि अन्य चिकित्सा पद्धतियों के द्वारा वह असाध्य ही रहता है। सच्ची बात यह है कि स्वस्थ मनुष्य को श्वास-रोग कभी नहीं हो सकता। वस्तुतः श्वास के अधिकांश रोगी स्पष्ट ही पूर्वतः अस्वस्थ होते हैं। उनको पहले से ही प्रतिश्याय, कास, हृदय पीड़ा, वृक्क रोग, अपच, बद्धकोष्ठ, रुधिर-चाप का

स्राव, फुप्फुस रोग, दन्त विकार वा देह के किसी अंग की वृद्धि कोई न कोई रोग विद्यमान ही होते हैं। कोई मनुष्य प्रत्यक्ष रोगी न भी प्रतीत होते हों तो वे स्थूलकाय, अति भोजी वा आवश्यक व्यायाम न करने वाले होते हैं। प्रत्येक अवस्था में वे उस विष का लक्ष्य बने हुए पाये जायेंगे, जो मिथ्याहार विहार के कारण रक्त की बिगड़ी हुई वा विषाक्त दशामात्र हैं। इस दशा में क्लोम कण्डिकाओं की नाड़ियाँ विषाक्त रक्त के कारण ऐसी उत्तेजित हो जाती हैं कि तनिक सी भी कोई उत्तेजना श्वास-रोग के विशेष चिह्न अर्थात् क्लोम कण्डिकाओं की नाड़ियों के संकोचन का कारण बन जाती हैं।

श्वास-रोग की चिकित्सा

ऊपर की व्याख्या से यह बात स्पष्ट है कि श्वास-रोग की चिरस्थायी चिकित्सा केवल उसके आक्रमण के समय के उपचारों, वा उसके लक्षणों को सूची भेदन (Injection) वा एस्प्रीन आदि शामयिक प्रचलित औषधियों से दवा देने के द्वारा नहीं हो सकती। इनसे तो विष की मौलिक दशा की वृद्धी ही होती है और अन्ततः रोगी की दशा उत्तरोत्तर बिगड़ती चली जाती है। दाँतों को उखड़वा देने वा उपान्त्र (Appendix) और उपजिह्विका (Tonsils) स्त्रियों के वीजकोष (Ovaries), पित्ताशय (Gall-bladders) को कटवा डालने से तो वही दशा होती है जो घोड़े को गाड़ी के पीछे जोतने से होती है। यदि रुधिर प्रवाह को स्वच्छ और मर्यादित रक्खा जाय, तो इनमें से अधिकांश शस्त्रोपचार निरर्थक ही सिद्ध होंगे।

इसलिए स्थिर चिकित्सा में प्रथम पग इस विष को दूर करना ही होना चाहिए, क्योंकि यही श्वास-रोग का मूल कारण है। निस्संदेह सबसे अधिक प्रभावशाली, सर्वप्रथम उपाय एक सप्ताह वा उससे अधिक दिनों का पूर्ण उपवास है। तीन वा चार दिन से कम का उपवास प्रायः निरर्थक है। उपवास के दिनों में आँतों के सारे मार्ग को स्वच्छ रखने के लिए प्रतिदिन आभ्यंतर स्नान (अर्थात् वस्ती कर्म्म) करते रहना चाहिए। जो जन आहार के बिना रहने का निराधार भय रखते हों वा प्रतिदिन वस्ती करने में कठिनता अनुभव करते हों, वे एक सप्ताह तक अंगूर आदि किसी ताजे फल के रस पर निर्वाह करने का प्रयत्न करें

उपवास के पश्चात् जिसमें कि बड़ी सावधानी की आवश्यकता है और एक सप्ताह तक अंगूर आदि के रस पर वा मल शोधक आहार पर रहने के पीछे भी रोगी का आहार प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तानुसार होना चाहिए। साधारण, अवैज्ञानिक, असंतुलित, पूर्व के प्रचलित आहार को पुनः करने लग जाना निरर्थक और हानिकारक होगा और उससे रोग के पुनः लौट आने की अत्यन्त संभावना है।

भोजन का विधान यह है कि उसमें ताजे फलों और कच्चे वा रंधे हुए शाकों का आधिक्य रहे—हरे शाकों की प्रधानता रहे। कर्बोज (अल्पाग्निवर्धक =Carbohydrates) तथा स्नेहद्रव्य (महाग्निवर्धक=Hydro-carbonates) इन दोनों श्रेणी के आहारों की मात्रा, जिनमें श्वेतसार (स्वत्व) शर्करा, घी, तैल, मलाई आदि तथा मांस, मछली, पनीर, अंडे आदि मांसवर्धक द्रव्य आदि सम्मिलित हैं, कम से कम (न्यूनातिन्यून) सीमा तक घटा देनी चाहिए। यदि उक्त आहार बिल्कुल त्याग दिए जायँ तो स्वास्थ्य लाभ की प्रगति अधिक वेग से हो सकेगी। इस बात का पूरा ध्यान रहे कि अति भोजन कभी न किया जाय और न समय बिताकर विलम्ब से भोजन किया जाय। यदि ४५ वर्ष से अधिक की आयु हो तो रोगी को प्रतिदिन दो ही मर्यादित भोजन करने चाहिए। साधारण जन मध्य की आयु में इतना ही आहार भले प्रकार पचा सकते हैं—विशेषतः जिन मनुष्यों को कठोर शारीरिक परिश्रम खुली वायु में करने का अवसर नहीं मिलता है, उनको तो आहार का यह नियम अवश्य ही पालनीय है। यदि प्रथम बार उपवास में पूर्ण सफलता प्राप्त न हो तो पूर्ण स्वास्थ्य लाभ तक समुचित आहार की व्यवस्था

के साथ यदा कदा छोटे छोटे उपवास बार बार करते रहना चाहिए।

देह में विद्यमान किन्हीं अम्ल विषों को त्वचा से स्वेद द्वारा और वृक्कों (गुर्दों=Kidneys) के मार्ग से मूत्र द्वारा निकालना चाहिए। त्वचा से अधिक काम लेने के लिए प्रतिदिन व्यायाम के द्वारा पसीना निकालना चाहिए वा सप्ताह में एक बार वाष्प स्नान लेते रहना चाहिए। वाष्प स्नान के पश्चात् शीतल जल से घर्षण स्नान वा अन्य धारा स्नानादि द्वारा त्वचा को बल प्रदान करना चाहिए। गाजरों और मरचोबा वा मृदु विलायती सूत मूली (Asparagus) के आहार में वृद्धि करके और बिना मीठा मिलाया हुआ अम्ल फलों, यथा नींबू आदि का रस प्रचुर मात्रा में पीकर वृक्कों की क्रियाशीलता को उत्तेजित करना चाहिए।

प्रतिदिन खुली वायु में घूमिए और अपने फुप्फुसों (Lungs) को प्रत्यग्र (ताज़ा) पवन से पूर्ण कीजिए। मानुषिक अग्नि को ओषजन के पंखे से प्रज्वलित कीजिए। गहरा श्वास लीजिए अर्थात् रुक रुक कर शनैः शनैः श्वास लीजिए और प्रत्येक श्वास में अपने इष्टदेव के नाम का जप करते रहिए तथा अपने परम पिता के प्रति कृतज्ञता की भावना से मन को भरपूर रखिए। प्रतिदिन वैज्ञानिक व्यायाम कीजिए और वह यथासंभव खुली हवा में होना चाहिए।

यदि कोष्ठ-बद्धता हो तो उसकी चिकित्सा प्राकृतिक ही होनी चाहिए। विरेचक औषधियों से बचना चाहिए। वे आमाशय तथा अन्त्रों की कलाओं (झिल्लियों) में उत्तेजना उत्पन्न करती हैं और इस उत्तेजना का परिणाम नाड़ियों के प्रतिक्षेप (Reflex) द्वारा श्वास का आक्रमण होता है।

श्वास के आक्रमणावस्था की चिकित्सा

जब श्वास का उग्र आक्रमण हो, तब रोगी को चाहिए कि वह बिस्तर पर वा कुर्सी पर आराम से बैठा रहे। अच्छा यह होगा कि पैर भूमि पर लटकते रहें और शरीर को बिल्कुल सीधा रक्खा जाय। रोगी के कमरे में वायु का संचार यथेष्ट हो। किन्तु उक्त कमरा ठण्डा न होना चाहिए। वायु के सीधे झोंको से बचना चाहिए और छाती और कन्धों को ढीले गर्म वस्त्रों से ढके रखना चाहिए।

जब तक श्वास-क्रिया ठीक न हो जाय, तब तक तरल वा कठोर सब प्रकार का आहार बन्द रखना चाहिए। रोगी को नींबू का रस निचोड़ा हुआ और विशुद्ध मधु (शहद) से मीठा किया हुआ तप्त जल घूँट घूँट करके पीने को देना चाहिए। यदि श्वास का आक्रमण बहुत उग्र हो तो कमरे में भाप उठता हुआ तप्त जल का एक पात्र रखकर आर्द्र वायु को उष्णता प्रदान करनी चाहिए। छाती पर शीतल जल की गद्दी रखकर उसके ऊपर ऊनी वस्त्र (कम्बलादि) लपेट देना चाहिए। बाहुओं पर तप्त जल का अभिषेक (धारा डालना) करना वा गर्म सेक करना रोगी का कष्ट घटा देता है। मेरु दण्ड के ऊपरी भाग पर बारी बारी से तप्त और शीतल जल की पट्टियाँ रखने और तत्पश्चात् उसको मर्दन करने से भी यही लाभ प्राप्त होता है। यह आवश्यक है कि पैरों को कुछ समय तक तप्त जल में रखा जाय और फिर उन को शीतल जल से अंगोछ कर सुखा लेना चाहिए। इससे पैरों में रक्त का संचार होता रहेगा। श्वास के आक्रमण में भीतर के श्वास वायु को बाहर निकालने में बड़ी कठिनता हुआ करती है उसमें सहायता पहुँचाने के लिए कोई दूसरा मनुष्य छाती के दोनों ओर करवटों को दबाता रहे।

ज्यों ही श्वास का आक्रमण शान्त हो त्यों ही आँतों को स्वच्छ करने के लिए वस्ती (एनिमा) करनी चाहिए और तप्त जल का स्नान भी पूर्ण शरीर से करना चाहिए।

अन्तिम सूचना

स्मरण रखिए कि श्वास का मौलिक कारण देह के विष हैं। औषधियाँ, सूची-भेदन, तम्बाकू, मद्य, चाय,

हवा, उग्र विरेचक, और भय, क्रोध आदि मानसिक उत्तेजनाएँ—ये सब देह में विष की वृद्धि करने में सहायक होते हैं अतः उनसे सर्वदा बचना चाहिए।

बालकों को जो श्वास-रोग हो जाता है, उसका कारण उनको अधिक आहार वा मिथ्याहार कराना होता है या उनको अत्यधिक वस्त्र पहनाने वा व्यायाम से वंचित रखने वा समुचित पोषण न करने से भी यह रोग हो जाता है, उनको शीतला का टीका लगाने वा औषधि देते रहने से भी इस रोग के होने में सहायता मिलती है। ये ही कारण रोग से उठे हुए निर्बल मनुष्यों और युवाओं की दशा में भी लागू होते हैं। कफ मिक्श्चर आदि खाँसी की औषधियाँ भी इस रोग की उत्पत्ति की अपराधी हैं। क्लोम-कण्डिकाओं का श्वास (Bronchial asthma) रोग ऊपर वर्णित प्राकृतिक उपचारों से प्रायः सदैव सुसाध्य है। हार्दिक (Cardial asthma) श्वास-रोग भी प्राकृतिकोपचार से बहुधा चला जाता है।

आसन

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

आसन और प्राणायाम की महिमा अवर्णनीय है। हमारे देश के प्राचीन पुरुषों ने इसके महत्त्व को अच्छी तरह समझा था और इससे आश्चर्यजनक लाभ भी उठाया था। लेकिन आजकल के जमाने में स्वास्थ्य के इन उत्तम साधनों की प्रायः उपेक्षा ही की गई है, और इसका परिणाम भी आज स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है। प्रस्तुत लेख में आजकल की प्रचलित विभिन्न प्रकार की कसरतों की अपेक्षा आसन के महत्त्व को बताते हुए तीन आसनों की विधि और उसके लाभ समझाए गए हैं।

स्वास्थ्य-लाभ के प्राकृतिक साधनों में योगासन का सबसे अधिक महत्त्व है। यह वस्तुतः है तो एक प्रकार का व्यायाम ही, किंतु अन्य शारीरिक व्यायामों की अपेक्षा यह अधिक वैज्ञानिक और लाभप्रद है। योगासन की श्रेष्ठता इस वजह से भी स्वीकार की गई है कि इसके द्वारा न केवल मनुष्य का शारीरिक विकास बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक विकास भी होता है। आजकल हमारे यहाँ तथा विदेशों में जो कसरतें प्रचलित हैं उनके द्वारा शरीर के प्रत्येक अवयव का व्यायाम हो जाता है यह कहना गलत होगा। इसके विपरीत इस तरह के व्यायामों में कुछ त्रुटियाँ भी पाई जाती हैं। उनमें से एक सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि वे शरीर के स्नायुओं अथवा मांसपेशियों को सजग तथा लचीला बनाने, जो कि उत्तम स्वास्थ्य के लिए निहायत ज़रूरी है, के बजाय सख्त बना देती हैं। इसके अलावा एक बात यह भी है कि संसार में प्रचलित कोई भी व्यायाम मनुष्य को किसी न किसी अंश में शारीरिक लाभ भले ही पहुँचा दे किन्तु वह मनुष्य को दीर्घजीवी बनाने का दावा नहीं कर सकता। इस तरह का दावा केवल योगासन ही कर सकता है।

शारीरिक स्वास्थ्य लाभ की दिशा में भी योगासन से अन्य कसरतों की अपेक्षा अधिक लाभ उठाया जा सकता है। उदाहरण के लिए स्व० प्रोफेसर राममूर्ति

आसन और प्राणायाम के द्वारा वह चमत्कार दिखा गये हैं, जो संसार के पहलवानों को आश्चर्य तथा विस्मय में डाल देने वाला है।

लेकिन एक बात यह भी है कि योगासन से केवल वही लोग लाभ उठा सकते हैं जो नियम-बद्ध होकर तत्परता के साथ इसे करते हैं। इसके लिए मानसिक शुचिता की भी नितान्त आवश्यकता होती है। सीधा-सादा सात्विक भोजन, उत्तम कोटि की मानसिक स्थिति के साथ योगासन का सबसे अधिक मेल खाता है और तभी मनुष्य के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक पहलुओं का पूर्ण रूप से विकास होता है और वह रोगमुक्त, भयहीन तथा शान्तिमय जीवन भी दीर्घकाल तक व्यतीत करता है। आसन और प्राणायाम का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। इनके द्वारा हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर ली थी। योगासन की महिमा अवर्णनीय है।

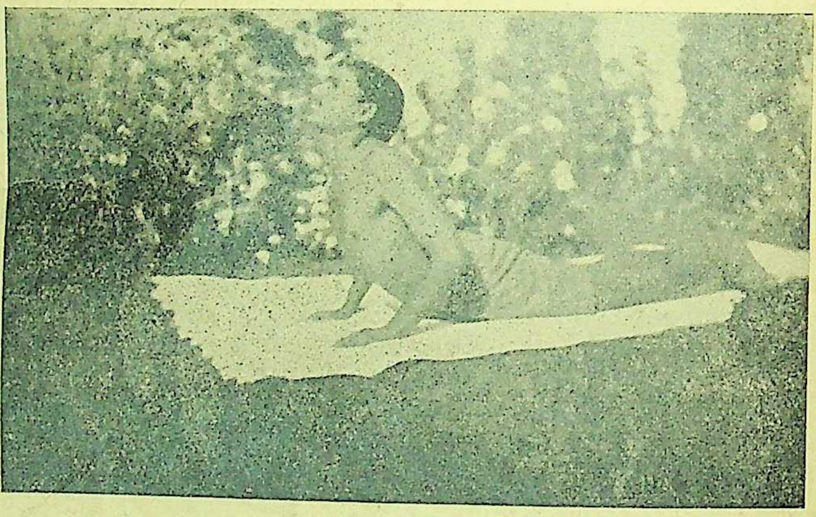

भुजंगासन

'जीवन-सखा' के पाठकों के लिए यहाँ तीन योगासनों और उनकी विशेषताओं का वर्णन किया जाता है।

अंग्रेजी में एक कहावत है, You are as old as your spine is rigid.—अर्थात् आपकी रीढ़ जितनी ही कड़ी है उतनी ही अधिक आपकी उम्र मानी जायगी। बच्चों की रीढ़ बहुत ही मुलायम या लचीली होती है और वह आसानी से झुक सकती है। मनुष्य की रीढ़ अथवा मेरुदण्ड में इकतीस गुठलियाँ हैं। मेरुदण्ड के नीचे के हिस्से में पाँच गुठलियाँ मिलकर एक हो जाती हैं, बच्चों में ये गुठलियाँ भी अलग अलग होती हैं। ये इकतीस गुठलियों के बीच से इकतीस जोड़े ज्ञानतन्तु निकलते हैं और शरीर के हर एक भाग में जाते हैं और प्राण-शक्ति प्रदान करते हैं। प्रत्येग अंग का संचालन इन्हीं पर निर्भर करता है। इन्हीं तन्तुओं के कारण रक्त का संचार होता है और शरीर के अंग पुष्ट होते हैं। इन ज्ञानतन्तुओं में यदि किसी प्रकार की कमजोरी आ जाती है तो उसका बड़ा ही भयंकर परिणाम होता है। यदि एकाएक किसी प्रकार से तन्तुओं की चाल में रुकावट आती है तो जिस भाग में ये जाती हैं उस भाग में सूजन, दर्द कमजोरी और अनेक प्रकार की खराबियाँ होने लगती हैं और सड़न तथा जलन भी पैदा हो जाती हैं। यदि धीरे धीरे इन तन्तुओं में अड़चन आती है तो शरीर धीरे धीरे शिथिल होने लगता है, कमजोरी आने लगती है, पाचन शक्ति कम होती जाती है, आदमी जल्द बुड्ढा दिखने लगता है, और उसकी जीवन-शक्ति का ह्रास होने लग जाता है।

योरप और अमेरिका में इलाज की नई पद्धतियाँ चली हैं जिन्हें ओस्चियो पैथी (Osteopathy), काइरो पैथी (Chiropathy) और Neurotherapy कहते हैं। इस पद्धति के चिकित्सकों का ख्याल है कि पीठ की हड्डियों में जब गड़बड़ी आती है अर्थात् धसक जाती हैं और इनकी चाल में कड़ाई आती है तो इन हड्डियों के बीच से जो नसें निकलती हैं उनसे पर्याप्त मात्रा में जीवन-शक्ति का संचार नहीं होता है और तभी उस अंग में

बीमारी पैदा होती है जिस अंग में ये पहुँचती हैं। इसलिए चिकित्सकों का मुख्य उद्देश्य रीढ़ की हड्डियों को ठीक करना होता है। इन हड्डियों को ठीक करने से बहुत सी बीमारियाँ सचमुच अच्छी होती देखी गई हैं।

ये तीन आसन जो नीचे बताए जा रहे हैं, इनसे मेरुदण्ड का कड़ापन दूर होता है और यदि हड्डी कुछ धसकी हुई होती है तो वह अपनी जगह पर आकर बैठ जाती है।

भुजंगासन

स्थान—एक स्वच्छ साफ कमरा जिसके चारों ओर की खिड़कियाँ खुली हों। उसी में एक चटाई पर एक मुलायम गद्दीदार आसन बिछा दीजिए फिर उसके ऊपर एक स्वच्छ चादर डाल दीजिए। फिर आसन करना शुरू कर दीजिए।

विधि—पेट के बल बिस्तरे पर लेट जाइए और दोनों हाथों को अपने सीने के पास हथेली को पट करके जमीन पर रखिए, दोनों पैर एक साथ रहेंगे। अब धीरे धीरे ऊपर की तरफ सिर को उठाइए और पीछे की तरफ जितना ले जा सकें ले जाइए। पर इस बात का ध्यान रहे कि आखिरी अवस्था में जोर हाथों पर किंचित ही रहेगा और नाभि से नीचे का हिस्सा जमीन से ही लगा रहेगा, उठेगा नहीं।

इस आसन को अपनी पूरी अवस्था में पाँच सेकेण्ड से एक मिनट तक कर सकते हैं। इस तरह कुल तीन बार कर सकते हैं।

शलभासन

विधि—पेट के बल बिस्तरे पर लेट जाइए। हाथ शरीर के अगल बगल, उपर की तरफ हथेलियाँ खुली हुई लगी रहेंगी। दोनों पैर एक साथ सीधे जमीन से लगे रहेंगे। अब हाथों पर जोर देते हुए क्रम से पैरों को ऊपर उठाइए, जितना उठा सकें उठाएँ फिर अपनी पूर्ववत दशा में आ जायँ। ऐसा करने के बाद फिर दोनों

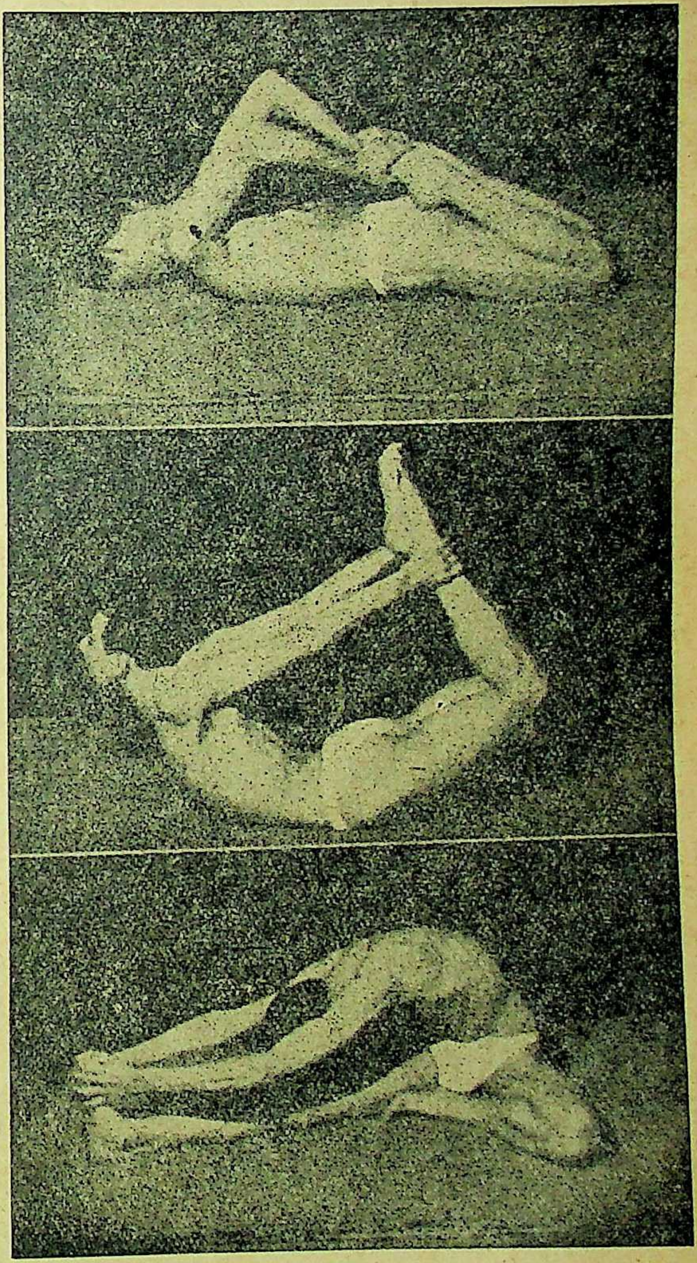

१, २, धनुरासन

[शेष ३६९ पृष्ठ पर]

भोजन-विज्ञान

दन्तहीनों के लिए भोजन

श्रीयुत कामता प्रसाद अग्रवाल,
एम०ए०, विशारद

दन्तहीन व्यक्तियों के भोजन की समस्या पर विचार करने बैठते समय किसी के सामने जो चित्र स्वभावतः व तुरत खिंच उठते हैं वे ८०-९० वर्ष के बुड्ढों और १ महीने से लेकर साल भर तक बच्चों के हैं। पर आज ९० प्रतिशत लोग जैसा अप्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हैं उससे तो अधेड़पन के लगभग ही बहुत से लोगों के दाँत या तो गिर जाते हैं या इतना हिलने लगते हैं कि उनसे काम लेना बहुत कष्टकर प्रतीत होता है। कहानी इतने में ही पूरी नहीं हो जाती। बहुत से व्यक्तियों को तो ३०-३५ वर्ष की उम्र में ही उनका प्रतिदिन का भोजन अत्यधिक अप्राकृतिक होने के कारण पायरिया हो जाता है जिसका कि एलोपैथ डाक्टरों के पास एक मात्र इलाज है—तुरंत सारे प्राकृतिक दाँतों से हाथ धो बैठना और नकली दाँतों को जड़वा कर मुँह की किसी प्रकार शोभा बनाए रखना। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि आज के अप्राकृतिक रहन-सहन वा एलोपैथ डाक्टरों के युग में दाँतों की रक्षा वा दन्तहीनों का भोजन ये दोनों कितने महत्त्वपूर्ण विषय हैं।

पर दन्तहीनों के लिए भोजन की समस्या पर पूर्णतः प्रकाश डालने के पहिले यह किंचित ज़रूरी-सा हो जाता है कि हम क्यों न संक्षेप में सोचें कि लोग आखिर दन्तहीन इतनी जल्दी हो क्यों जाते हैं, हमारे दाँत इतने शीघ्र व इतनी कम उम्र में हिलने लगते व दर्द क्यों करने लगते हैं तथा पायरिया से इतने अधिक लोग आज क्यों पीड़ित दिखाई देते हैं और हम ऐसा क्यों न खायें-पियें तथा अपना रहन-सहन रक्खें कि हम मरते दम तक अपने दाँत मजबूत व सुरक्षित बनाये रख सकें।

दन्तरोग होने के कारण—अधिकतर व्यक्तियों के दाँतों के शीघ्र व कम उम्र में ही हिलने लगने व गिर जाने अथवा पायरिया रोग हो जाने के निम्न-लिखित मुख्य कारण होते हैं—

१. प्रतिदिन एसा भोजन करना जिसमें दाँतों की कसरत होती ही नहीं या होती भी है तो केवल नाम मात्र के लिए। लोग प्रायः जिह्वा के स्वाद के लिए और दाँतों को अधिक कष्ट न देने के लिए बहुत ही मुलायम चीजें हलुआ, मलाई, खीर, रबड़ी, लपसी, पतली दाल, सफेद शक्कर का शर्बत, बिस्कुट इत्यादि खाया करते हैं जो बहुत कम कुचले या बिना कुचले ही गले के नीचे उतार लिए जाते हैं। इससे दाँतों की कसरत ही नहीं होती और इस तरह शरीर के ये बहुत ज़रूरी अवयव कमजोर होकर हमसे शीघ्र विदा हो जाते हैं।

२. पहिले ही कारण से सम्बन्धित दूसरा कारण है—अपने दैनिक भोजन क्रम में चना, गरी, बादाम, मूँगफली इत्यादि चीजों का व्यवहार न करना जिनके अभाव में लार (Saliva) या थूक का अंश भोजन में नहीं मिल पाता जिससे कब्ज रहने लगता है। और प्रतिदिन कब्ज रहना व दाँतों का मजबूत रहना दो विरोधी बातें हैं।

३. सफेद शक्कर का, जिसे 'सफेद विष' की तरह प्राकृतिक चिकित्सकों ने माना है, तथा उससे बनी हुई मिठाइयों का बहुत ज्यादा इस्तेमाल करना।

४. चाय वा दूध बहुत गर्म गर्म पीना और उसके बाद ठण्ढे पानी से कुल्ला कर डालना या बरफ का बहुत ज्यादा सेवन करना। दूध पीने के बाद कुल्ला ज़रूर करना चाहिए पर यह तो तभी हो सकता है जब लोग गर्म या बहुत गर्म दूध या चाय न पिया करें।

५. दाँतों की सफाई की ओर प्रतिदिन उचित रूप से ध्यान न देना।

६. भोजन करने के बाद कुल्ला न करना अथवा रूमाल या किसी छोटे कपड़े से ऊपर ही ऊपर मुँह पोछ डालना जैसा कि अंग्रेज किया करते हैं। यही कारण है कि उनको इतनी छोटी अवस्था में ही बहुधा पायरिया होता देखा जाता है।

७. साधारणतः स्वास्थ्य का ख़राब रहना।

इतन्रा समझ लेने के बाद पाठकों के मन में यह जिज्ञासा उठना स्वाभाविक है कि आखिर दाँतों को सदैव मजबूत बनाए रखने व सुरक्षित रखने के उपाय व साधन क्या हैं? पर दाँतों के ख़राब होने व काम न करने के उपर्युक्त मुख्य कारणों को जानकर प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए आसानी से ऐसे साधनों व तरकीबों को सोच सकता है जिससे कि दाँत हमेशा साथ देते रहें और वह उनसे जीवन-पर्यन्त विहीन न हो। इसलिए 'दाँतों की रक्षा के उपायों' पर किंचित प्रकाश डालना इस लेख में अप्रासंगिक होगा। पर जो व्यक्ति अपने मस्तिष्क को इस विषय में अपनी ओर से कष्ट न देना चाहें वह भी अपना काम सिर्फ आँखों को ही थोड़ी तकलीफ देकर चला लें। वह केवल 'जीवन-सखा' के कुछ पिछले अंकों के पन्ने उलट जायँ। उनमें से किसी एक में अभी हाल ही में एक लेख 'दाँतों की रक्षा' पर प्रकाशित हुआ था।

पाचन-क्रिया कैसे होती है?——पर दाँतों की रक्षा के विषय में कोई भी पूर्ण रूप से सतर्क नहीं हो सकता यदि उसने भोजन के पचाने में दाँतों के महत्त्वपूर्ण कार्य के विश्लेषण को अच्छी तरह नहीं समझा है। इसलिए अब आगे संक्षेप में यह स्पष्टतः बताया जायगा कि पाचन क्रिया कैसे होती है और उसमें दाँतों को अपनी क्रिया द्वारा कितना बड़ा योग देना होता है, भोजन कितने प्रकार के होते हैं और ऐसे कौन से भोजन हैं जिनको यदि दाँतों से पूरी तरह कुचला न जाय तो उनका पाचन बहुत कठिनता से होगा——इस प्रकार उनके पाचन में दाँतों की क्रिया का कितना बड़ा भाग व सहयोग होता है। इस प्रकार के भोजनों में यदि दाँतों की मेहनत व कष्ट की और मुरव्वत की गई तो क्रमशः पाचन-शक्ति कमजोर होती जायगी और व्यक्ति अनेक प्रकार के रोगों को अनजान में न्योता देगा।

शरीर को बनाए रखने के लिए उसकी जो ज़रूरतें होती हैं उनकी पूर्ति होने की दृष्टि से खाद्यपदार्थ ६ प्रकार के होते हैं।

(१) कर्बोज-प्रधान खाद्य पदार्थ (Carbohydrates)
(२) पुत्तनक या मांसवर्धक पदार्थ (Proteins)
(३) चिकनाई या चरबी देनेवाले पदार्थ (Fats)
(४) पानी
(५) खनिज नमक (Mineral salts)
(६) विटामिन (खाद्योज) प्रधान खाद्य पदाथ।

ये ६ प्रकार के खाद्य पदार्थ हमारे दैनिक भोजन में अवश्य रहने चाहिए यदि शरीर को पूर्ण विकसित करना है और सदैव स्वस्थ रखना है। इनमें से कार्बोज-प्रधान खाद्य-पदार्थों तथा चिकनाई–प्रधान खाद्य-पदार्थों से हमको उष्णता व काम करने की शक्ति मिलती है, पुत्तनक अथवा मांसवर्धक पदार्थ टूटे फूटे सेलों की मरम्मत कर प्रतिदिन मेहनत करने से जिन अवयवों का छीजन होता है उसको पूरा करने तथा शरीर की वृद्धि में विशेष सहायक होते हैं। पानी का कार्य व्यर्थ पचे हुए भोजन को धुलाकर शरीर में सोख जाने के योग्य बनाना, खून को तरल रखना तथा शरीर के विकारों को बाहर निकालना है। खनिज-लवण-प्रधान खाद्य पदार्थ हमारे अस्थि-निर्माण में सहायक होते हैं और रक्त को क्षारमय (Alkaline) बनाए रखते हैं। विटामिन (खाद्योज) प्रधान पदार्थ अनेक प्रकार की व्याधियों के आक्रमण से बचने के लिए तथा तन्दुरुस्ती में किसी प्रकार की गड़बड़ी न हो इसलिए आवश्यक होते हैं। ये शरीर में राज का काम करते हैं।

कर्बोज प्रधान खाद्य पदार्थों के दो भेद हैं (१) श्वेतसार या माड़वाले (Starchy foods) (२) शक्कर-प्रधान (Sugar)। श्वेतसार पदार्थों में कई तरह के अनाज जैसे गेहूँ, चावल, जौ, बाजरा इत्यादि

तथा भाजियों व फलों में आलू तथा केला आते हैं। इनमें और तत्त्व भी होते हैं पर श्वेतसार का आधिक्य होता है। शर्करा-प्रधान कर्बोज पदार्थों में गन्ना, चुकन्दर, छुहारा, खजूर, अंजीर, गुड़, चीनी व खाँड़ आते हैं।

पुत्तनक या मांसवर्धक पदार्थों में अनाजों में सब तरह की दालें (छिलके सहित) चना मसूर उर्द मूँग इत्यादि, भाजियों में मटर, लोभिया (बोड़ा), फलों में सूखे मेवे बादाम, अखरोट इत्यादि, दूध तथा दूध से बने पदार्थ और पशुओं के मांस मछली तथा अण्डा आते हैं। इनमें दूसरे दूसरे पदार्थों के अंश भी विद्यमान हैं जैसे मूँगफली व बादाम में चिकनाई, दूध में चीनी व चिकनाई पर उनमें प्रधानता व आधिक्य प्रोटीन तत्त्व का ही है।

खनिज-लवण व विटामिन-प्रधान वाले पदार्थों में अधिकतर ताजे फल व प्राकृतिक हरे साग आते हैं। बहुत से विटामिन हमको अनाज व दूध से भी मिलते हैं।

भोजन के पाचन में दाँत कितना ज़रूरी काम करते हैं इसको समझने के लिए विशेष तौर से तीन प्रकार के खाद्य पदार्थों का पाचन किस-किस अवयव द्वारा प्रधानतः होता है—इसका जानना आवश्यक है। मांसवर्धक या प्रोटीन तत्त्व प्रधान वाले खाद्य पदार्थों का पाचन विशेष रूप से आमाशय और छोटी अँतड़ियों द्वारा होता है। इनको पचने के लिए दाँतों की कुचलने की क्रिया द्वारा जो लार पैदा होती है उसकी आवश्यकता बहुत कम होती है। पुत्तनक पदार्थों के पचाने में आमाशय के रस (Gastric juice) की आवश्यकता होती है। यह रस खट्टापन लिए होता है क्योंकि इसमें नमक का तेजाब (Hydrochloric acid) रहता है इसके अतिरिक्त इसमें पेप्सीन व रेनेट नामक दो खमीरें भी होती हैं इसलिए पुत्तनक प्रधान पदार्थों का मेल खट्टे फलों के साथ बहुत अच्छा बैठता है। इससे उनका पाचन बहुत शीघ्र होता है। यदि दूध किसी को न पचता हो तो यदि वह पीने के पहले या बाद को एक टमाटर, नींबू या सन्तरा चूस ले तो दूध उसे फौरन पचने लगेगा।

चिकनाई प्रधान वाले खाद्य पदार्थों के (घी, तेल, दूध की चिकनाई) पाचन का सीधा संबंध मुँह के लार अथवा दन्त-क्रिया तथा आमाशय के रसों से नहीं है। आमाशय से भोजन छोटी आँतों में पहुँचता है। 'पक्वाशय' छोटी आँत का पहला हिस्सा है। छोटी आँतों में तो सभी प्रकार के भोजनों के बचे-खुचे अंश को पचना पड़ता है। जब आहार रस पक्वाशय में पहुँचता है तो यहीं क्लोम (Pancreas) और जिगर या यकृत (Liver) नामक गिल्टियों के रस आहार रस से मिलते हैं और उसके अच्छी तरह पच जाने में सहायक होते हैं।

क्लोम रस पतला, साफ, और खारापन का गुण लिए रहता है। इसमें तीन तरह की खमीरें पाई जाती हैं—(१) अमाइलोप्सिन (Amylopsin) इसका असर लार के असर की तरह होता है। श्वेतसार का जो भाग लार के अभाव से बचा रहता है वह इस खमीर के प्रभाव से शर्करा में बदल जाता है। (२) ट्रिप्सिन (Trypsin)—इस दूसरे खमीर का असर आमाशय के रस के प्रभाव से बचे हुए मांसवर्धक पदार्थों के अंश को पचा देता है पर अपना यह कार्य यह अपने खारे पन के गुण के कारण करता है। (३) स्टीप्सिन (Steapsin or lipase)—क्लोमरस के अन्दर की यह तीसरी खमीर चिकनाई के पदार्थों पर अपना प्रभाव डालती है और उनको पचने योग्य बना देती है। क्लोम रस के इस काम में उसे यकृत (Liver) से निकले पित्त से बहुत सहारा मिलता है। इस प्रकार **हम संक्षेप में देख सकते हैं कि प्रोटीन-प्रधान पदार्थों का पाचन प्रधानतः आमाशय के रस से होता है और फैट या चिकनाई पदार्थों का पाचन मुख्यतः छोटी आँतों में पित्त तथा क्लोम रस के एक खमीर से होता है।**

कर्बोज प्रधान खाद्य पदार्थों का पाचन तो मुँह के चलाने से ही आरम्भ हो जाता है। यहीं पर दाँतों द्वारा कुचलने की क्रिया में भलीभाँति हृदयंगम करने की महत्ता आती है। कर्बोज खाद्य पदार्थ तो लार से बहुत कुछ पचा करते हैं। मुँह में लार की कुछ गिल्टियाँ (Salivary glands) हैं इनसे ही जब श्वेतसार-प्रधान भोजन दाँतों द्वारा पूरी तरह से कुचला व चबाया जाता है और साथ ही लार के साथ भी अच्छी तरह मिलाया जाता है तब वह केवल मुलायम ही नहीं हो जाता बल्कि पचने योग्य हो जाता है। **शरीर को यथार्थ में श्वेतसार या कर्बोज पदार्थों के पचाने के लिए शक्कर में बदलना पड़ता है** और यह काम सर्वप्रथम मुँह में लार के प्रभाव से होता है। लार खारापन का गुण रखती है और उसके अन्दर टायलिन (Ptyalin) नामक एक खमीर होता है और यही श्वेतसार प्रधान (Starchy foods) को शरीर में पचने योग्य शर्करा में बदल देता है। जैसा बताया जा चुका है कि श्वेतसार पदार्थों के अन्दर रोटी, चावल, आलू व केला इत्यादि आते हैं। लार के विषय में एक बात जान लेना बहुत आवश्यक है। यह तभी बनती और निकलती है तथा भोजन के साथ मिश्रित होती है जब भोजन (विशेषकर श्वेतसार-प्रधान खाद्य-पदार्थ) अच्छी तरह चबाया व कुचला जाता है यानी जब उस पर दाँतों की क्रिया पूरी तरह से होती है। इस प्रकार देखा जा सकता है कि दाँतों से पूरा काम न लेने पर या दन्त विहीन होने पर श्वेतसार प्रधान पदार्थों का पचना बहुत मुश्किल हो जायगा। लार मुँह में ही बनती है, पेट या आमाशय में नहीं और इसलिए मुँह में रोटी चावल, आलू, केला इत्यादि का दाँतों से पूरी तरह चबाया जाना ज़रूरी है। श्वेतसार पदार्थ हमको गर्मी व काम करने की शक्ति देते हैं––यह पहले ही बताया जा चुका है और हमारे दैनिक भोजन में इसी की मात्रा सबसे अधिक होती है और होनी चाहिए। इस तरह अब पूरी तरह से स्पष्ट हो जाता है कि कम-से-कम श्वेतसार प्रधान खाद्य पदार्थों को दाँतों से खूब कुचलना चाहिए जबतक कि भोजन के कण बहुत पतले व पानी सरीखे तरल पदार्थ में न बदल जायँ। बड़े-बड़े निवाले रोटी इत्यादि के लेकर दो चार बार चबाकर कदापि न निगल जाना चाहिए। चबा चबा कर भोजन करने से हमारे दाँतों की भी कसरत पूरी तरह से होती रहेगी जिससे दाँत जीवन पर्यन्त सुरक्षित व दृढ़ बने रहेंगे।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है श्वेतसार का जो अंश लार की क्रिया से बच रहता है वह छोटी आँतों में जाकर अन्त में उसके एक विशेष खमीर से पच जाता है। पर अब यह भी स्पष्टतः विदित हो गया होगा कि **कर्बोज पदार्थों का पाचन मुख्यतः दाँतों की क्रिया व लार के मिलने से ही होता है।** श्वेतसार पदार्थों के अतिरिक्त जो मांसवर्धक पदार्थ तथा चिकनाई वाले पदार्थ खाये जाते हैं उनपर लार की क्रियिा का कोई रासायनिक असर नहीं होता। लार के मिलने से वे मुलायम तो हो जाते हैं पर उनमें श्वेतसार से शर्करा बनानेवाली जैसी क्रिया नहीं होती। खाने की कुछ ऐसी चीजें भी हैं जैसे चना या दूसरी दालें––इनमें जो थोड़ा श्वेतसार का अंश होता है उस पर लार का प्रभाव पड़ता है, शेष प्रधान प्रोटीन तत्त्व जो इनमें होता है उसका पाचन आमाशय व आँत के रसों द्वारा होता है––यह भी पहले बताया जा चुका है।

इतना जान लेने के बाद अब दन्तहीनों के लिए भोजनों का आसानी से पता लगाया जा सकता है। भोजन ऐसा होना चाहिए जिसमें सब पोषक तत्त्व हों क्योंकि सभी शरीर को बनाये रखने के लिए बहुत ज़रूरी हैं, यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है। आशय यह है कि जिनके दाँत नहीं हैं उनके लिए भी ऐसे भोजन होने चाहिए जिनमें प्रोटीन, कर्बोज, चिकनाई, पानी खनिज लवण तथा विटामिन प्रधान खाद्य-पदार्थ शामिल हों।

बिना दाँत वालों में दो प्रकार के लोग आते हैं एक महीने से लेकर साल-डेढ़ साल के बच्चे तथा बुड्ढे और जिनके दाँत गिर गए हैं।

दन्तहीन बच्चों के लिए भोजन––बच्चों को तो प्रोटीन व चिकनाई के तत्त्व देने के लिए सबसे अच्छा मां का दूध (इसके अभाव में गाय का दूध पानी मिलाकर) है और कर्बोज पदार्थों में केला देना सर्वोत्तम होगा। इसको माँ पहिले अपने मुँह में थोड़ा कुचलकर उसे दे सकती है। शर्करा के लिए शहद का प्रयोग बच्चों के लिए बहुत

ही गुणकारी है। खनिज-लवण तथा विटामिन के लिए बच्चों को मुख्यत: रसीले फलों का—सन्तरा, टमाटर, मौसम्बी, मीठे नींबू आदि—रस देना उचित व उपयोगी होगा। इसके अतिरिक्त गाजर व पालक आदि कन्दों व शाकों का रस लाभ के साथ बच्चों को दिया जा सकता है। तरकारी का सूप बनाकर भी बच्चों को दिया जा सकता है। केले में कर्बोज तत्व के अलावा विटामिन भी बहुत होते हैं और इसका भी प्रयोग बच्चों की बाढ़ के लिए बहुत ही उपयोगी है। पर इसका प्रयोग करते समय एक बात माताओं और वयस्कों को भी ध्यान में रखना चाहिए कि केले की फली तभी खाई व खिलाई जाय जब वह खूब पककर गल-सी जाय। तभी उसमें ऐसी शर्करा पैदा होती है जो पाचन क्रिया में बहुत सहायता पहुँचाती है। केले के जरा सा भी कच्चा रह जाने पर वह कब्ज करता है। केले के खूब पक जाने की पहचान यह है कि ऊपर का छिलका काला पड़ जाय। तभी उसे लाभ के साथ इस्तेमाल किया जा सकता है।

दन्तहीन वृद्धों वा वयस्कों के लिए आहार—३०-३५ साल की उम्र के बाद शरीर को प्रोटीन तत्त्व वाले पदार्थ यानी मांसवर्धक पदार्थों की उतनी आवश्यकता नहीं होती जितनी अधिक आवश्यकता कर्बोज व श्वेतसार पदार्थों की होती है, क्योंकि ज्यों ज्यों उम्र बढ़ती जाती है त्यों त्यों शरीर को गर्मी और काम करने की शक्ति के उत्पन्न होने की ज़्यादा ज़रूरत होती है और जैसा ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है गर्मी व शक्ति पहुँचाने का कार्य प्रधानत: श्वेतसार पदार्थों द्वारा किया जाता है।

कहने का आशय यह है कि बच्चों को प्रोटीन प्रधान या मांसवर्धक पदार्थों की अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि बचपन का समय शरीर की वृद्धि का होता है और शरीर की वृद्धि २५ साल की उम्र के बाद विशेषत: नहीं होती। बच्चों को श्वेतसार प्रधान पदार्थों की बहुत कम ज़रूरत होती है, पर ठीक इसके विपरीत वयस्कों व वृद्धों को श्वेतसार प्रधान खाद्य पदार्थों की अत्यधिक आवश्यकता होती है पर मांसवर्धक पदार्थों को भोजन से बिना किसी हानि के अलग किया जा सकता है।

पर दन्तहीन वयस्कों अथवा वृद्धों को श्वेतसार पदार्थ कैसे दिए जा सकते हैं—उनके तो दाँत जो गिर गये हैं? और दाँत ही कुचलने का काम कर श्वेतसार को शर्करा में बदल देते हैं और फिर उन्हें पचने योग्य बना देते हैं।

इस प्रश्न का हल भी बहुत सीधा-सा है। वह यह कि ऐसे लोग श्वेतसार पदार्थों का सेवन इस प्रकार करें कि वह Pre-digested form (पहिले से ही पचे हुए) रहें अर्थात् श्वेतसार पदार्थों को वे बहुत तरल व पतला कर मुँह में लें जिससे दाँतों के कुचलने का कोई काम ही न रहे। इस तरह करने से दन्तहीन लोग श्वेतसार पदार्थों से वंचित न रह सकेंगे।

अब Pre-digested starchy foods (पहिले से ही पचे हुए भोजन) भी सोचकर आसानी से ढूँढ़े जा सकते हैं। उनमें से कुछ ऐसे खाद्य पदार्थों की सूची नीचे दी जाती है—

अ—चावल को लपसी बनाकर खाया जाय।

ब—गेहूँ को खूब महीन तोड़कर उसका दलिया बनाकर लिया जाय।

स—गेहूँ का दूध निकालकर लिया जा सकता है। इसके लिए गेहूँ के चोकर को ७-८ घंटे पानी में फूलने दिया जाय। फिर उसे निचोड़कर उस सत्त्व को उबालकर लपसी बनायी जाय। फिर उसको दूध और शहद के साथ बड़े मजे से लिया जा सकता है।

शर्करा के लिए—शहद से काम लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त खजूर अंजीर किशमिश, इनको पानी में उबालकर या काफी देर भिगोकर उनके मीठे रस से शर्करा की पूर्ति की जा सकती है। पर खजूर, अंजीर आदि को बहुत महीन तोड़कर भी दन्तहीन व्यक्ति इस्तेमाल कर सकते हैं।

प्रोटीन या मांसवर्धक पदार्थ भी यदि दन्तहीन वयस्क व वृद्ध चाहें तो ले सकते हैं। प्रोटीन तत्त्व उन्हें दूध, दही व मठा से भली प्रकार व सर्वोत्तम मिल सकता

हैं। इसके अतिरिक्त प्रोटीन की सप्लाई खूब पकी हुई व ली हुई दालों के खाने से भी हो सकती है। पर प्रोटीन लिए सर्वोत्तम पदार्थ दूध, दही व मठा है, दालों का योग तो ४०-५० साल की उम्र के बाद कतई छोड़ ना चाहिए। इनका प्रोटीन मध्यम श्रेणी का होता है। सके अतिरिक्त कुछ सब्जी भी हैं जिनसे यह बात हो कती है, जैसे कच्चे मटर। इनको पहले खूब कूटकर व हीन कर खाया जा सकता है।

चर्बी के तत्त्व की पूर्ति के लिए कड़े मेवों, बादाम व नारियल आदि का दूध व Paste तथा मलाई ली जा सकती है।

विटामिन या खाद्योज तथा खनिज लवण दन्तहीन व्यक्तियों को रसीले फलों व शाकों से मिल सकते हैं। ऐसे लोग सन्तरे, नींबू, मौसम्बी, टमाटर का इस्तेमाल करें। इसके अतिरिक्त कुछ कड़े फल भी रसीले होते हैं जैसे नाशपाती व सेब। इनको कूट व कुचलकर तथा रस निकालकर आसानी से लिया जा सकता है।

शाकों वा कन्दों में पालक व गाजर आदि का रस इसी तरह निचोड़कर ले लेना चाहिए। पर इसके अलावा रवल, तरोई, नेनुआ, लौकी आदि को एक साथ धीमी आँच में आध घंटे उबालकर उसका सूप या रस भी लिया जा सकता है। इसमें सारे खनिज-लवण व विटामिन निचुड़ जाते हैं। यह रस लेना बहुत हितकारी होगा, इसको तो गृहस्थों को कभी फेंकना ही नहीं चाहिए।

दन्तहीनों के लिए दैनिक भोजन-क्रम—अब नीचे दन्तहीनों के लिए प्रतिदिन का भोजन-क्रम भी उनकी सुविधा के लिए दिया जाता है—

८ बजे सुबह—फलों का रस खासकर सन्तरे जाति का।

११ बजे दिन—गेहूँ की लपसी दूध और मुनक्का डालकर बनी हुई या सिर्फ दलिया और मुलायम तरकारी, जैसे लौकी।

४ बजे शाम—फलों का रस।

८ बजे रात—कोई भी गूदेदार फल जैसे पपीता, अंगूर इत्यादि और दूध।

तरकारियों का रस और क्रीम।

मुलायम पकी तरकारी और मक्खन या क्रीम।

बच्चों के लिए सबसे अच्छा भोजन दूध है इसलिए उन्हें केवल फलों का रस और दूध जितना वे पचा सकें देना चाहिए।

[पृष्ठ ३६३ का शेषांश]

रों को एक साथ जितना उठ सकें उठाएँ पर ध्यान हे पैर उठते समय मुड़ेंगे नहीं।

इस आसन के करने के लिए भी समय का वही हिसाब हेगा। अपनी पूरी अवस्था में पाँच सेकेण्ड से एक मिनट क कर सकते हैं। इस तरह तीन बार कर सकते हैं।

धनुरासन

विधि—पेट के बल विस्तरे पर लेट जाइए, पैरों को घुटनों से मोड़ लीजिए फिर दाएँ बाएँ पैरों को न्हीं हाथों से क्रम से पकड़ लीजिए। अब धीरे धीरे छाती को निकालते हुए सिर को ऊपर उठाइए। साथ ही हाथों को ऊपर की तरफ खींचते हुए पैरों को पीछे की रफ तान दीजिए। आगे पीछे शरीर को इतना उठाइए कि सिर्फ पेट और कमर (पेड़ू) जमीन से लगी रह जाय। शेष शरीर का तमाम भाग उठ जाय।

समय की व्यवस्था इस आसन के करने में भी वही रहेगी। पाँच सेकेण्ड से एक मिनट तक कर सकते हैं। इसी तरह तीन बार करना चाहिए।

लाभ—इन आसनों से कब्ज या कोष्ठबद्धता दूर होती है। पीठ की मांसपेशियां ठीक होती हैं। जब पेट के अन्दर वायु गुम हो जाती है तब धनुरासन करना चाहिए। ऊपर की वायु खोलने के लिए भुजंगासन तथा अधोवायु ठीक करने के लिए शलभासन करना चाहिए। इससे सबसे अधिक लाभ यकृत और प्लीहा को पहुँचता है इनकी बहुत अच्छी कसरत हो जाती है।

(क्रमशः)

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

प्राकृतिक चिकित्सा से नवजीवन कैसे पाया ?

श्रीयुत सोहनलाल बहुरा,
मोहल्ला सुजानराय, पेशावर

मेरा पाचन बाल्यावस्था से ही बिगड़ा हुआ था। मैं यदा कदा बद्धकोष्ठ, वमन, ज्वर और प्रतिश्याय में ग्रस्त रहता था। नाक से गाढ़ा, श्वेत कफ (बलगम) निकलता था और मुँह से राल बहुत जाती थी। सारे शरीर पर फुंसियाँ भी निकलती रहती थीं। बाल्यकाल में ही मेरे घोर शीतला भी निकली थी। उससे मेरे प्राण कठिनता से बचे थे। उसी से मेरी एक आँख भी नष्ट हो गई थी। प्रायः ६ वर्ष की आयु में बद्धकोष्ठ और उदर विकार बहुत बढ़ गए थे। भूख बिलकुल न लगती थी। मैं भूख के बिना खाता और वेग के बिना ही शौच जाता था। देखने भालने में मेरे शरीर में रोग के कोई चिह्न न थे। मैं अच्छा भला चंगा दीखता था, किन्तु मेरे दोनों फेफड़ों में विकार था। डाक्टरों ने मेरे उदर में राजयक्ष्मा की ग्रंथियाँ (T. B. Glands) बतलाई थीं। मुझको स्वल्प मात्रा में ज्वर भी रहता था। इन रोगों के निवारणार्थ सूचिवेध चिकित्सा (Injection) कराते कराते मेरी त्वचा स्पर्शानुभूति शून्य हो गई थी––उसमें हिस न रही थी। पसीना बिल्कुल नहीं आता था। बड़े बड़े डाक्टरों, हकीमों और वैद्यों की चिकित्सा से कुछ भी लाभ नहीं हुआ। मेरी देह में रुधिर का बिल्कुल अभाव प्रतीत होता था। डाक्टरों ने निराश होकर मुझसे कह दिया था कि अब तुम किसी खुले स्थान पर जाकर रहो और जो चाहो खाओ पियो। उनकी सम्मति में मेरा रोग असाध्य हो चुका था।

उन्हीं दिनों मुझको प्राकृतिक चिकित्सा का पता लगा और मैंने जर्मनी के डा० लूईकूने की पुस्तक ‘‘नया इलमशफ़ाबख्शी’’ नामक पढ़ी। उससे मेरा विश्वास इस चिकित्सा पर दृढ़ हो गया। मैंने टब बनवाकर अपने आप ही अपनी जल चिकित्सा प्रारंभ कर दी और पथ्य-आहार के नियम का पूरा पालन किया। मैं सायं प्रातः लंबा भ्रमण किया करता था। मेरा मुख्य आहार फल, शाक, सब्जी ही थे। मैं प्रचुर जल पीता था। बहुत दिनों तक कच्चे अंकुरित गेहूँ, कच्चा दलिया खाता रहा। बिना छने, मोटे आटे की रोटी उबली हुई साग सब्जी के साथ खाता रहा। दूध, घी, मक्खन बहुत दिनों तक नहीं खाया। मुझको इस चिकित्सा में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। मेरे एक भाई ऐलोपैथिक डाक्टर थे और कुरी जि० रावलपिंडी में रहते थे। उन्होंने मुझको वहाँ की अच्छी जलवायु में अपने पास रक्खा और मैं वहाँ भी अपनी जल चिकित्सा करता रहा। मेरे भाई मुझको इस चिकित्सा से बहुत रोकते थे, किंतु जब मैंने न माना तो उन्होंने मुझको मेरी स्वेच्छा पर छोड़ दिया। पूर्व जो मुझको पसीना नहीं आता था, वह सूर्य-स्नान से आने लगा। फिर मेरे पैरों पर शोथ आगया और दाँए पैर की पिंडली में दो छिद्र हो गए। उनमें से विषैला पानी निकलता था। मेरे भाई ने नश्तर लगाकर उन छिद्रों को बड़ा कर दिया। उससे उनमें से बहुत पीप निकला। इससे मेरे शरीर में बहुत हलकापन प्रतीत हुआ। मेरे उक्त डाक्टर भाई का आग्रह था कि मैं अपनी पिंडली के जख़्मों पर गाज और आयोडीन लगाऊँ परन्तु मैंने न माना और मैं उनपर गीली स्वच्छ मिट्टी लगाता था। डाक्टर का कथन था कि मिट्टी सेप्टिक अर्थात जख़्म को सड़ाने वाली है। मेरा उत्तर था कि मिट्टी एन्टी सेप्टिक है। अतः मैं जख़्मों और पेट पर मिट्टी की

टी तह ही लगाता रहा।

इस रोग में मेरा सारा शरीर काला पड़ गया था। ड्डियाँ निकल आई थीं। देह पर मांस न रहा था। रे उक्त डाक्टर भाई ने कह दिया था कि अब यह नहीं बेगा और इसे इसके घर पेशावर पहुँचा दो। बड़ी ठिनता से मुझको उठाकर पेशावर लाया गया। झको शौच और लघुशंका भी उठाकर कराई जाती थी। ारे देह के जोड़ों और कमर के पीछे भी फोड़े निकले थे। न पर भी मैं गीली मिट्टी लगाता रहा। मैंने चुटकी टकी भर बालू भी बहुत दिनों तक खाया। इसके ाने से आँतें स्वच्छ होकर बद्धकोष्ठ दूर हो जाता है।

घरवाले बल-वृद्धि के लिए मांस और अंडे खाने र जोर देते थे, किन्तु मैंने उनकी बात नहीं मानी ौर धैर्य तथा दृढ़ता के साथ पथ्याहार पर स्थिर रहा। रे घर के लोग तो मेरे जीवन से निराश हो चुके थे, किन्तु रे मन में दृढ़ विश्वास था कि मैं अवश्य स्वस्थ हो जाऊँगा। शनैः शनैः मुख और नाक के मार्ग से जमा हुआ ीला कफ प्रचुर मात्रा में निकलता रहा। खाँसी और वर कभी कभी बढ़ जाते थे, किन्तु मैं मिट्टी की पट्टी का ौर यथासंभव खुली हवा का प्रयोग बराबर करता रहा। सने मुझको नया जीवन प्रदान किया। शनैः शनैः मैं चलने फिरने के योग्य हो गया। तब मैंने डाक्टरों से अपनी परीक्षा कराई, तो उन्होंने कहा कि अब तुम भय से बाहर हो।

इस वर्ष हरिद्वार आने पर मैंने श्री श्रवणनाथ पुस्तकालय में 'जीवन सखा' पढ़ा और उसमें पंडित भवानी प्रसाद जी स्वास्थ्यशास्त्रोपाध्याय (Professor of Naturopathy) काँगड़ी, गुरुकुल विश्वविद्यालय का लेख पढ़कर मैंने काँगड़ी गुरुकुल में जाकर उनके दर्शन किए और उनको अपने रोग का वृत्तान्त सुनाया। उनकी आज्ञानुसार मैं अपनी यह आपबीती लिखकर उनको दे रहा हूँ। आशा है कि उससे मेरे समान दारुण रोगों से ग्रस्त जन प्राकृतिक चिकित्सा करके दुःखों से मोचन प्राप्त करेंगे और प्राकृतिक चिकित्सा का चमत्कार देखेंगे।

नोट—यह वृत्तान्त उपर्युक्त रोगी ने मेरे कहने पर उर्दू में लिखकर मुझको दिया था। मैं उसको हिंदी में अनुवादित करके 'जीवन सखा' के पाठकों के लाभार्थ भेज रहा हूँ।

विनीत,
भवानी प्रसाद
अवैतनिक प्राकृतिक स्वास्थ्यशास्त्रोपाध्याय
काँगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय

* * *

क्या आपको भी कुछ कहना है ?

क्या आपने जीवन-सखा के सिद्धान्तों के अनुसार खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने का अनुभव किया है ? यदि हाँ तो उसे दूसरों की सहायता, तथा मार्ग-प्रदर्शन के लिए लिख भेजें। उन्हें हम सहर्ष प्रकाशित करेंगे। यदि सम्भव हो सके तो यह चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व और बाद का अपना फ़ोटो भी भेजें। आप का अनुभव दूसरों के बड़े काम का हो सकता है। अपने अनुभव निष्पक्ष भाव से तथा सच्चाई के साथ लिखें। यदि आपने किसी अन्य व्यक्ति को इस चिकित्सा-प्रणाली के द्वारा लाभ पहुँचाया हो तो उसके सम्बन्ध में भी अपने अनुभव भेज सकते हैं।—सम्पादक

स्वरोदय विज्ञान

श्रीयुत श्यामसुन्दर झँवर

स्वर-शास्त्र का हमारे यहाँ प्राचीन-काल में बड़ा महत्त्व रहा है। इसे प्रायः योग का ही एक अंग कहा जा सकता है। यह मनुष्य को पग-पग पर प्रत्यक्ष फल देने वाला बताया गया है। किंतु आजकल यह अलौकिक शास्त्र लुप्तप्राय हो गया है। योग्य लेखक ने इसका पुनरुद्धार करने की जो चेष्टा की है वह सराहनीय है। आशा है 'जीवन-सखा' के पाठक इस लेख को विशेष दिलचस्पी के साथ पढ़ेंगे।—सं०

विधाता ने मनुष्य के जन्म से ही देह के साथ ऐसे आश्चर्यजनक कौशलपूर्ण उपाय रच दिए हैं जिन्हें जान लेने पर सांसारिक वैषयिक, किसी भी कार्य में असफलता का दुःख नहीं हो सकता। हम इन अपूर्व कौशलों को नहीं जानते इसी कारण हमारे कार्य असफल हो जाते हैं, आशाएँ भंग हो जाती हैं, हमें मनस्ताप और रोग भोगने पड़ते हैं। ये कौशल कई शास्त्रों के विषय हैं। इन आश्चर्यजनक शास्त्रों में से एक स्वरोदय शास्त्र भी है। यह स्वरशास्त्र जैसा दुर्लभ है, स्वरज्ञ गुरु का मिलना भी उतना ही दुर्लभ है। परन्तु यह स्वरोदय विज्ञान जो पद-पद पर प्रत्यक्ष फल देनेवाला है बहुत ही आश्चर्यचकित कर देता है। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने मनुष्यमात्र के कल्याणार्थ इस शास्त्र का शोध किया था। अन्य शास्त्रों की तरह यह स्वर-शास्त्र भी लुप्तप्राय हो चुका है, तथापि खोज करने पर इसके विशेषज्ञ अवश्य मिलते हैं। जो कुछ इस शास्त्र के सम्बन्ध में उपलब्ध हैं उस पर से भी इस शास्त्र का पुनरुद्धार हो सकता है। सिर्फ कुछ लोग इस ओर अपना ध्यान आकर्षित करते हुए शोध करने का प्रयत्न करें तो अतीव प्रसन्नता की बात होगी और हम इस शास्त्र को फिर नये सिरे से जीता-जागता देख सकेंगे।

स्वर-शास्त्र सीखने के लिए श्वास-प्रश्वास की गति के सम्बन्ध में सम्यक् ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। क्योंकि स्वरोदय-विज्ञान का आधार प्रत्येक मनुष्य के नकसोरों (नथुनों, नासापुटों) से चलते हुए श्वास-प्रश्वास की गति पर ही है। (हमारी नासिका में जो दो छिद्र हैं उनमें से प्रत्येक को नकसोरा कहते हैं।) यों तो यह बात बड़ी साधारण-सी प्रतीत होती है; परन्तु इस श्वास-प्रश्वास की गति कितनी रहस्यपूर्ण और आश्चर्यजनक है। इसका पता उस समय लगता है जब हम स्वरोदय-विज्ञान द्वारा उस ओर ध्यान देना शुरू करते हैं। श्वासोच्छ्वास की शक्ति और सामर्थ्य देखकर किसी को भी आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। हमारी प्रत्येक क्रिया तथा तज्जन्य सुखदुखादि द्वन्द्व, शारीरिक और मानसिक कष्ट, रोग-व्याधि आदि तमाम शरीर की आपत्तियाँ इनसे प्रभावित हैं। इनकी सहायता से दुख दूर किये जा सकते हैं और मनोवांछित सुख प्राप्त किये जा सकते हैं। संक्षेप में मनुष्य के इस शरीररूपी रथ के संचालन के ये ही सूत्रधार हैं। यथा—

'काया नगर मध्ये तु मारुतः क्षितिपालकः'

अर्थात् देहरूपी नगर में वायु राजा के समान है।

साधारणतया मनुष्य प्रति मिनट १३ से १५ श्वास-प्रश्वास करता है। इस प्रकार रात-दिन में यानी पूरे २४ घंटों में उसकी संख्या २१६०० तक पहुँचती है। यह संख्या प्रति मिनट जिस प्राणी की जितनी कम होगी उसकी उतनी ही आयु अपेक्षाकृत ज़्यादा होगी। इसके

ए कई प्रमाण दिए जा सकते हैं। भिन्न-भिन्न प्राणियों ी आयु तथा प्रति मिनट श्वासोच्छ्वास की तुलना करने यह बात स्वयमेव स्पष्ट हो जाती है। कहने का अभि- ाय यह है कि श्वास-प्रश्वास की संख्या को कम करने आयु बढ़ाई जा सकती है।

यह शायद बहुत थोड़े लोगों को पता होगा कि मारे शरीर में रात-दिन अव्याहत गति से चलने वाला ास-प्रश्वास एक ही समय में नासिका के दोनों नकसोरों साधारणतया नहीं चला करता। वह क्रमशः निश्चित मयानुसार अलग-अलग दोनों नकसोरों से चला करता । एक नकसोरे का निश्चित समय पूरा हो जाने पर ह दूसरे में जाता है। श्वास-प्रश्वास की इस गति का नाम ्वर' तथा इस गति का एक नकसोरे से दूसरे में जाना सका 'उदय' कहलाता है।

हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने स्वरोदय की इस क्रिया का निश्चित रूप से पता लगाकर उससे किस तरह ाभ उठाए जा सकते हैं, तथा उससे लाभ उठाने लिए कौन कौन से कार्य कब और कैसे करना चाहिए न सब विषयों का निश्चय किया था।

बाएँ हाथ की ओर के नकसोरे से जब श्वास लता है तब उसे इडा में चलना या चन्द्रस्वर का चलना र दाहिने हाथ की ओर के नकसोरे से जब श्वास लता है तो उसे पिंगला में चलना या सूर्य स्वर का लना कहते हैं। और दोनों नकसोरों से एक समय एक मान श्वास चलने पर उसे सुषुम्ना में चलना कहते ।

कौन से नकसोरे से श्वास चल रहा है इसको ानने की तीन-चार युक्तियाँ हैं। सबसे सरल रीति ह है कि किसी एक नकसोरे को बन्द करके दूसरे से ाधारण जोर से (नाक साफ कर लेने के बाद) दो-चार ार श्वासोच्छ्वास करना चाहिए। फिर इसी तरह सको बंद करके दूसरे से दो-चार बार श्वास-प्रश्वास रना चाहिए। इस प्रकार करने से जिस नकसोरे से ास लेने और छोड़ने अर्थात् श्वासोच्छ्वास करने में सरलता प्रतीत होती हो उसे खुला हुआ तथा जिससे रुकावट-सी प्रतीत हो उसे बंद समझना चाहिए। दूसरी युक्ति यह है कि मुँह से श्वास लीजिए और एक नकसोरे को बन्द करके दूसरे से उसी समय छोड़ दीजिए। इस तरह मुँह से श्वास लेकर एक ही नासिका से दो-चार बार छोड़िए। उसके बाद मुँह से श्वास लेकर और इस नकसोरे को बन्द कर दूसरे नकसोरे से दो-चार बार छोड़िए। इस प्रकार करने से जिस नकसोरे से श्वास छोड़ने में सरलता प्रतीत हो उसे खुला तथा जिससे रुकावट-सी प्रतीत हो उसे बन्द समझना चाहिए। अन्य युक्तियाँ समझने में कठिन हैं। जो नकसोरा खुला हो उसी से साँस चल रही है ऐसा मानना चाहिए। क्रमशः अभ्यास होने पर बहुत आसानी से मालूम होने लगता है कि किस नकसोरे से श्वास-प्रश्वास हो रहा है।

स्वर निश्चित समयानुसार अलग अलग दोनों नकसोरों से चला करता है। किस दिन किस नासिका से पहले श्वास-क्रिया होती है, इसका एक निर्दिष्ट नियम है। यथा––

> "आदौ चन्द्रः सिते पक्षे भास्करस्तु सितेतरे।
> प्रतिपत्तो दिनान्याहुस्त्रीणि त्रीणि क्रमोदये॥"
>
> ––परनविजयस्वरोदय

"कृष्णपक्ष की प्रतिपदा तिथि से तीन तीन दिन की बारी से सूर्यनाड़ी अर्थात् दाहिनी नासिका (नकसोरे) से, तथा शुक्लपक्ष की प्रतिपदा तिथि से तीन-तीन दिन की बारी से चन्द्र अर्थात् बाईं नासिका से पहले श्वास प्रवाहित होता है।" अर्थात् स्वर चलने का नियम यह है कि शुक्लपक्ष की १, २, ३; ७, ८, ९; १३, १४, १५ इन तिथियों में सूर्योदय से लेकर ढाई घड़ी अर्थात् एक घंटे तक वाम नासिका से और इसी प्रकार ४, ५, ६; १०, ११, १२ इन ६ तिथियों में सूर्योदय से लेकर ढाई घड़ी तक दाहिनी (दक्षिण) नासिका से श्वास चलना चाहिए। और कृष्णपक्ष की १, २, ३; ७, ८, ९; १३, १४, १५ इन तिथियों में सूर्योदय से लेकर ढाई घड़ी तक दक्षिण नासिका से और इसी प्रकार ४, ५, ६;

१०, ११, १२ इन ६ तिथियों में सूर्योदय से १ घंटे तक वाम नासिका से श्वास चलना चाहिए। प्रत्येक नासिका-रन्ध्र में स्वरोदय होने के बाद वह साधारणतया ढाई घड़ी तक विद्यमान रहता है। उसके बाद दूसरे नासिकारन्ध्र में स्वरोदय होता है और वह भी ढाई घड़ी तक रहता है। इसके बाद फिर पहले रन्ध्र से ढाई घड़ी तक श्वास चलता है। इसी तरह साधारणतया रातदिन नियमपूर्वक ढाई-ढाई घड़ी तक एक-एक नासिका-रन्ध्र से श्वास चलता है। इस प्रकार दिन रात में १२ बार वाम नासिका रन्ध्र में और १२ बार दाहिने नासिका-रन्ध्र में स्वरोदय क्रमशः होता है। यही मनुष्य जीवन में श्वास की गति का स्वाभाविक नियम है।

वाम, दक्षिण और सुषुम्ना स्वर के प्रवाह में अलग-अलग कार्य करना चाहिए। कभी-कभी ऐसा होता है कि जिस स्वर में हमें कोई कार्य करना चाहिए वह स्वर नहीं चलता है। कार्य के अनुकूल नासिका से श्वास चलना आरम्भ होने तक उस कार्य को न करके चुपचाप बैठे रहना अति दुष्कर है। इसी प्रकार कार्यभेद से तथा अन्यान्य अनेक कारणों से एक नकसोरे से दूसरे नकसोरे में वायु की गति बदलने की भी आवश्यकता हुआ करती है। अतएव अपनी इच्छानुसार श्वास की गति बदलने की क्रिया सीख लेना नितान्त आवश्यक है। इसकी क्रिया अत्यन्त सहज है। जिस नकसोरे से श्वास चलता हो, उसके विपरीत दूसरे नकसोरे को अँगूठे से दबा देना चाहिए और जिससे श्वास चल रहा हो उसके द्वारा वायु खींचना चाहिए। फिर उसको दबाकर दूसरे नकसोरे से वायु निकालना चाहिए। अर्थात् जिस नकसोरे से श्वास चलाना हो उससे वायु निकालना चाहिए। और दूसरे से खींचना चाहिए फिर जिससे श्वास खींचा था उसीसे खींचकर दूसरे से निकालना चाहिए। इसी तरह कुछ देर तक एक से श्वास लेकर दूसरे से निकालते रहने से अवश्य श्वास की गति बदल जायगी। जिस नासिका से श्वास चलाना हो उसके विपरीत करवट सोकर यह क्रिया करने से बहुत शीघ्र श्वास की गति बदल जाती है और दूसरे नकसोरे से श्वास प्रवाहित होने लगता है। इस क्रिया के बिना भी यदि वाम नकसोरे से श्वास चलाना हो तो थोड़ी देर दक्षिण करवट लेटना चाहिए और दक्षिण नासिका से श्वास चलाना हो तो थोड़ी देर बाएँ करवट लेटना चाहिए।

आगे के लेखों में स्वरों से संबंधित पंच-तत्त्व, कौन कौन से कार्य कब करने चाहिए, पुरुष और स्त्री के स्वरों में भेद है या नहीं तथा स्वर से संबंधित सुखदुख, यात्रा-प्रकरण, रोगप्रश्न, भाग्योदय आदि विषयों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न करूँगा। इस विज्ञान पर लेख लिखनेवाला एक असाधारण व्यक्ति होना चाहिए, परन्तु मैंने जो यह दुस्साहस किया है उसके लिए तथा इस लेख में जो मेरी त्रुटियाँ रह गई हों उनके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ।

हाँ, यदि इस लेख के पढ़ने से ही किसी सज्जन का ध्यान इस विज्ञान की ओर आकृष्ट हुआ है और यदि वे चाहते हैं कि इस लेख से भी थोड़ा बहुत लाभ उन्हें मिले तो एक युक्ति यह है कि सूर्योदय के समय श्वास-प्रश्वास की जो स्वाभाविक क्रिया दी गई है उसी के अनुसार सूर्योदय के समय श्वास चलाने का प्रयत्न करें। शुक्ल-पक्ष की प्रतिपदा को सूर्योदय से करीब १५ मिनट पहले से सूर्योदय तक (और बाद में भी) दाहिनी करवट लेटें। इसी प्रकार और दिनों के लिए भी समझें। और जब सुबह शय्या त्याग करें तब जिस हाथ की ओर से नकसोरे से श्वास चल रहा हो उसी हाथ की हथेली से मुख का स्पर्श कर उसी ओर का पाँव पहिले आँगन में रखकर शय्या त्याग करें और देखें कि दिन भर कितना अच्छा बीतता है।

(क्रमशः)

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप रूप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन आने पर ही जवाब दिया जायगा जो पृष्ठ ३२ पर छपा है। महीने की १० तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा।——सं०

प्रश्न——नेति कितने प्रकार की होती है उनका क्या लाभ और गुण है और करने का समय और विधि क्या है?

——प्रताप नारायण वैद्य, मियापुरा, गाजीपुर

उत्तर——नेति प्रायः दो ही प्रकार की प्रचलित हैं——(१) जल नेति और (२) सूतनेति। जलनेति —— पहले योगजल तैयार कर लिया जाता है। योगजल गरम जल में नमक डालने से तैयार होता है। जल की गरमी शरीर के तापमान के बराबर हो। इस जल को आप एक ग्लास में लें। दोनों नाकों से धीरे धीरे करके ऊपर खींचें। जोर से खींचने में नाकों में पानी लगेगा इसलिए धीरे धीरे खींचना अच्छा है। पाँच छः बार खींचने से पानी गले में आ जायगा। उसको आप बाहर थूकते जायें। कुछ दिन के अभ्यास से दो तीन ग्लास पानी से आप अपने नाकों को रोज सुबह दातुन करते वक्त साफ कर लिया करें।

सूत नेति——यह धागों का १८ इंच लंबा होता है, आधा बटा होता है, और आधा बिना बटा रहता है। बटे हिस्से पर मोम चढ़ाया होता है। यह भी सुबह ही किया जाता है। पहले ठंडे पानी से भिगा ले और जिस नाक से साँस चलता हो उसी से ऊपर चढ़ायें। जब गले में आ जाय तब अँगुलियों को गले में डालकर इसको निकाल लें। इसी तरह से दूसरी नाक में भी चढ़ा लें।

कब नहीं करना चाहिए?

(१) जब मनुष्य बहुत अस्वस्थ हो, ज्वर आता हो तब नहीं करना चाहिए।

(२) कभी ऐसा होता है कि नेति करते वक्त ज़रा सा खून भी नाक से आ जाता है। इसके लिए एक दो दिन बन्द कर देना चाहिए। और फिर अभ्यास आरम्भ कर देना चाहिये।

लाभ——इससे आँख, कान, और नाक की अनेक बीमारियों में फायदा होता है। नेति करने वाले की दृष्टि तीव्र होती है। एक आदमी की नाक करीब करीब सड़ गयी थी, दूर से ही बंदबू निकलती थी, नेति करने ही से उसकी बीमारी जाती रही। आपने पिछले अंकों में श्री भदन्त आनन्द कौशल्यायन का लेख पढ़ा ही होगा।

प्रश्न——मेरे कान में पहले खुजली मालूम हुई बाद में कुछ दर्द और अब कुछ रुई के साथ मवाद भी निकलता है। इस हालत में मुझे क्या करना चाहिए?

उत्तर——यह बीमारी एकाएक नहीं शुरू होती। कान के पास बहुत मात्रा में विजातीय द्रव्यों के इकट्ठा होने से ही यह शिकायत पैदा होती है। हकीम लोग इसको नज़ला कहते हैं। इसके हटने से ही यह शिकायत जायगी। आप भोजन में सुधार करें नेति नित्य प्रति करें और कानों के ऊपर सिर में दोनों तलहथियों से धीरे धीरे मालिश करें। यह शिकायत आपकी धीरे धीरे जाती रहेगी।

प्रश्न—पुरानी खाँसी के लिए आप कौन सा उपाय बताते हैं ?

—कोकचन्द्र, सिर्सा

उत्तर—पुरानी खाँसी अनेक प्रकार की हो सकती हैं। कूकर खाँसी, (Hooping-cough) ब्रांकाइटिस, दमा इत्यादि। मेरे यहाँ इन सब का इलाज एक ही है। सबसे पहले एक दो दिन का उपवास बाद में एक दो दिन रसाहार दें। एनीमा का प्रयोग सुबह शाम करें। इसके बाद मामूली भोजन करें। भोजन शत प्रतिशत क्षारमय हो। इसके लिए आप डा० चौधरी लिखित "आदर्श भोजन" देखें। गले में बीच बीच में भाफ दें। यदि रोगी बहुत कमज़ोर नहीं है तो उसको गजकरनी अर्थात् गर्म पानी नमक मिलाकर पिलाएँ और रोज प्रातःकाल ही कै करायें। इस तरह के कुछ ही दिनों के अभ्यास से खाँसी ज़रूर अच्छी हो जायगी।

प्रश्न—पायरिया का क्या इलाज होगा ?

उत्तर—पायरिया होने पर लोग अक्सर अपना दाँत निकलवा देते हैं लेकिन ऐसा करने से कारण तो नहीं गया। पेट की खराबी से ही पायरिया मुख्यतः होता है। और फिर पायरिया होने पर पेट खराब होता है। इसका इलाज दोनों प्रकार से करना चाहिए अर्थात् पेट को भी शुद्ध करना चाहिए और साथ साथ दाँतों को भी साफ़ रखना चाहिए। सुबह शाम नमक और शुद्ध कड़ुवा तेल से दाँतों को दातुन करने के बाद मालिश करें। हरे बोतल के पानी से दिन में चार पाँच बार कुल्ला करें।

हरा पानी तैयार करने की विधि—हरा बोतल बाजार में जाँच कर लें। हरा बोतल मिलना मुश्किल है पर कभी कभी मिल ही जाता है। इसको तीन तिहाई साफ जल कुयें या नदी का भरकर धूप में काठ के ऊपर रख दें। दो तीन घंटे में यह जल तैयार हो जाता है। इसी से कुल्ला करें। नित्यप्रति के अभ्यास से रोग जाता रहेगा।

प्रश्न—उपवास रखने का सुन्दर तरीका क्या है ? महींने में कितनी बार उपवास किया जावे ?

—भागीरथ लाल, सहारनपूर

उत्तर—उपवास दो तरह के होते हैं, पहला लम्बा उपवास और दूसरा छोटा उपवास। लम्बा उपवास बिना तैयारी किए नहीं करना चाहिए नहीं तो बड़ी तकलीफ होती है। इसके लिए कुछ फलाहार और बाद में रसाहार से शुरू करना चाहिए। दोनों हालतों एनीमा दोनों वख्त लेना चाहिये। इस तरह तीन चार रोज व्यतीत करके उपवास शुरू करने पर ज्यादा तकलीफ या भयानक उभाड़ का सामना नहीं करना पड़ता। छोटा उपवास जैसे दो या तीन दिनों का तो सभी हालतों में किया जा सकता है। उपवास की हालत में भी दोनों वक्त एनीमा का प्रयोग करते जाना चाहिए।

प्रश्न—एक सज्जन जिनकी अवस्था १६ साल की है उनकी एड़ियों के तलवों में एक २ पैसा भर जगह में दर्द होता है। खाट से उठते ही चल नहीं सकते। धीरे धीरे जब दस पाँच मिनट चलते हैं तब स्वाभाविक चाल पर आते हैं। हाथ से दाबने पर उस जगह दर्द होता है और ऐसा मालूम होता है कि हड्डी में दर्द है। इधर दस दिनों से हाथों की अँगुलियों के पोड़ओं की गाठों में दर्द है जिससे मालूम होता है कि हाथ पैर दोनों बेकार हो जायँगे। यदि ऐसा हुआ तो एक परिवार जो इनके आश्रित है दुःख में पड़ जायगा।

राम गोपाल पालीवाल, भारती भवन, फीरोजाबाद

उत्तर—हालतों से मालूम होता है कि उपरोक्त सज्जन गठिया रोग से पीड़ित हैं। इसके लिए शक्ति अनुसार उन्हें उपवास कराइये और उसके बाद रसाहार और फलाहार। अच्छा यह होगा कि सेब, सन्तरा, मोसम्बी जैसे फलों पर ये कुछ दिनों तक रह जायें और दोनों वक्त पेड़ू नहान लेते जावें। यदि यह न हो तो उपवास रसाहार के बाद उन्हें एक वख्त मामूली भोजन और दूसरे वक्त फलाहार के साथ कूने स्नान् दीजिए। बहुत कमजोरी रहने पर तो मैं उन्हें दूध चिकित्सा ही करने की सलाह देता हूँ। सभी हालतों में पेट की सफाई की ओर अवश्य ध्यान देंगे। इसलिए एनीमा प्रयोग को न भूलेंगे।

बालहित

माता-पिताओं तथा शिक्षकों का एकमात्र मासिक

१—बाल जीवन के मनोविज्ञान का अध्ययन।
२—शिक्षा के नवीन प्रश्नों का शास्त्रीय विचार-विनिमय।
३—माता-पिताओं को हर रोज़ की कठिनाइयाँ तथा उनके वैज्ञानिक राय।
४—लोकतंत्र के लिये शिक्षण की व्यापक समस्याओं पर विचार।

आदि जीवन व्यापी शिक्षा का मौलिक वाचन
आप को **'बालहित'** में मिलेगा

वार्षिक २)　　　　नमूना ≡)

आज ही लिखिये—
'बालहित', उदयपुर (मेवाड़)

हिन्दी की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका

वीणा

सम्पादक
श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

प्रकाशक
श्रीमध्यभारत-हिन्दी साहित्य-समिति

डॉक्टर बाबूराम सक्सेना, एम. ए., डी. लिट्., भू. पू. प्रधान-मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग:—'वीणा' हिन्दी की उच्च कोटि की पत्रिका है और मातृ-भाषा और साहित्य की प्रचुर सेवा कर रही है।

आगामी विशेषांक दीवाली के अवसर पर

वार्षिक मूल्य ४)　नमूने का अंक मुफ़्त नहीं भेजा जाता　एक प्रति ।=)

व्यवस्थापक—'वीणा', इन्दौर

जल-चिकित्सा के प्रवर्तक लुई कूने की ४ कृतियाँ !

(१) नवीन चिकित्सा विज्ञान

लुई कुने प्राकृतिक चिकित्सा-जगत के ध्रुव हैं। इस पुस्तक में आप ने रोगों के निवारण के लिए जल के जो आश्चर्यजनक प्रयोग बताए हैं उनसे संसार के अगणित प्राणियों का कल्याण हुआ है। यह पुस्तक इतनी उपयोगी है कि इसकी एक प्रति घर में रहने से डाक्टरों के पास जाने वाले पैसे की बचत हो सकती है। अपने ढंग की इस अद्वितीय पुस्तक का मूल्य केवल ३।।) रु० (सजिल्द)।

(२) आकृति-निदान

लुई कुने की यह एक दूसरी कृति हैं। इसमें मनुष्य की आकृति को देखकर विभिन्न प्रकार के रोगों का निदान बताया गया है। पुस्तक का विषय ही इसकी उपयोगिता का परिचायक है। अनेक चित्रों से सुसज्जित इस सचित्र पुस्तक का मूल्य १।।।) मात्र है।

(३) मैं निरोग हूँ या रोगी ?

स्थूल शरीर ही उत्तम स्वास्थ्य का परिचायक नहीं। इस पुस्तक को पढ़कर आप यह जान सकेंगे कि वस्तुतः आप स्वस्थ हैं या अस्वस्थ तथा आप वास्तविक स्वास्थ्य किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य केवल ।)

(४) बच्चों की रक्षा

इस पुस्तक में जन्म से लेकर बड़े होने तक बच्चों के पालन-पोषण और रक्षा की स्वाभाविक रीति और बिना औषधि की चिकित्सा के उपाय बताए गए हैं। मूल्य केवल ।~)

इनकी एक एक प्रति अवश्य रखिए

मैनेजर, स्वास्थ्य-पुस्तक भण्डार, ८७, हिम्मतगंज, इलाहाबाद

कमला

[महिलाओं की अपनी मासिक पत्रिका]
सम्पादक—श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर
सहायक—श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी

मैनेजर, 'कमला',
गायघाट, बनारस

नारी जागरण का महान् सन्देश सुनाने वाली हिन्दी की प्रमुख सर्वोत्तम मासिक पत्रिका 'कमला' के प्रकाशन हिन्दी के पत्र पत्रिकाओं की दुनिया में एक अजीब तहलका मच गया है। हर एक उसकी गम्भीरता और उपयोगिता कायल हो रहा है। यदि आपको विश्वास न हो तो एक प्रति मंगाकर देख लें। नमूने के लिये ।=) के टिकट जये। वार्षिक मूल्य ४॥) रखा गया है। आज ही चंदा भेजिये या नमूना मँगाइये।

विनय पत्रिका पर 'आज' की सम्मति

टीकाकार श्री देवनारायण द्विवेदी; प्रकाशक भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस। पृष्ठ ३८४, मूल्य ग्लेज गज का २।), रफ का २) । कमीशन ।) रुपया

गोस्वामी तुलसीदास का यह पावन ग्रन्थ भक्तिरस से ओतप्रोत है। इसमें भक्ति, वैराग्य और दीनता की निर्झरिणी प्रवाहित होती है जिसमें निमज्जन कर हृदय निर्मल हो जाता है। इसके एक एक पद में हमें गोस्वामीजी भक्ति-प्रवण अन्तस्तल की झांकी मिलती है। परन्तु भाषा की क्लिष्टता के कारण बहुत से पाठक गोस्वामीजी इस अमर कृति के आस्वादन से वंचित रह जाते हैं। रामचरित मानस की भाषा में यह बात नहीं है इसीसे ग्रामीणों के मुख से भी हमें रामायण की चौपाइयां सुनने को मिल जाती हैं। पर विनयपत्रिका की भाषा कुछ लष्ट है। भक्तवर बैजनाथ तथा अन्य कितने ही विद्वानों ने इसी कठिनाई को दूर करने के लिए इसकी टीकाएं की नयी टीकाओं में श्री वियोगी हरि की टीका बहुत प्रसिद्ध है। इस टीका में स्थान स्थान पर श्री वियोगी हरि की का की अशुद्धियों की चर्चा की गयी है। यह ठीक है कि ऐसे उत्तम ग्रन्थों की टीका की भूलें खटकती हैं, किन्तु पावन ग्रन्थ में यत्र तत्र किसी की अशुद्धियों की चर्चा करते जाना तो और भी खटकता है माना कि द्विवेदीजी किसी असत् उद्देश्य से ऐसा नहीं किया पर इस प्रसंग को छोड़कर भी वे टीका कर सकते थे।

प्रस्तुत टीका में पहले पद दिये गये हैं फिर क्रमशः भावार्थ, शब्दार्थ और 'विशेष'। विशेष में गीता, मद्भागवत, रामचरित मानस, देवीमहात्म्य से तथा सूरदास, ललित किशोरी, कालिदास आदि के तुलनात्मक पद देने से टीका की उपयोगिता और भी बढ़ गयी है। टीका की भाषा सरल और सुबोध है। पुस्तक संग्रहणीय है।

वाहोपलक्ष्य में भेंट देने की महान् वस्तु क्या ? वही **स्त्री जगत् में हलचल मचाने वाली पुस्तक**

क्या आप किसी के पिता और पति हैं ?

यदि हाँ तो

भाभी के पत्र

पढ़िये और अपनी स्त्री तथा कन्याओं को पढ़ाइये,

भूमिका लेखक—**कृष्णदेवप्रसाद गौड़ 'बेढब' बनारसी,**

लेखक—**श्री व्यथित हृदय**
मूल्य सजिल्द १।)

पता—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, ब्रांच, चौक, कचौड़ी गली, बनारस

बाजारू कहानियों व गल्पों की
मृगतृष्णा से आपको

कहानी

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।
(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।
(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है

'कहानी'

सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं...यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिए।'

श्री जैनेन्द्र—

'...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...'

श्री सुदर्शन

'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम कीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—

'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब—सब विचार से अंक सर्वाङ्ग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा—

'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है—अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय—

'...कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं. उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र—

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई...'

श्री पहाड़ी—

'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेगी।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें; पुस्तकालय २।।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

प्रश्नोत्तर-कूपन, अक्टूबर'४१

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये

(१)	रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकीशरण वर्मा, बी० ए०	२।।)
(२)	सरल शरीर-विज्ञान: ले० जानकीशरण वर्मा, बी० ए०	१।।)
(३)	प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदारनाथ गुप्त०, एम० ए०	२)
(४)	मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय	।=)
(५)	दूध ही अमृत है : ले० हनुमानप्रसाद गोयल	१।।)
(६)	स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन-सखा' कार्यालय	=)।।
(७)	क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह	।)
(८)	ब्रह्मचर्य ही जीवन है : ले० स्वामी शिवानन्द	१)
(९)	आदर्श-भोजन : ले० एल० एन० चौधरी	।।।)
(१०)	स्वास्थ्य और योगासन : ले० विद्याभास्कर सुकुल	१)
(११)	कब्ज या कोष्ठवद्धता : ले० डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह	।-)
(१२)	हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	१)
(१३)	फल उनके गुण तथा उपयोग : ले० केशवकुमार ठाकुर	१)
(१४)	आरोग्य साधन : ले० गांधीजी	।=)
(१५)	नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) : लूई कूने	३।।)
(१६)	आकृति-निदान : ले० लूई कूने	१।।)
(१७)	बच्चों की रक्षा : ले० लूई कूने	।-)
(१८)	मैं निरोग हूँ या रोगी : ले० लुई कूने	।)
(१९)	उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफेडन	१=)
(२०)	स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ : ले० महेन्द्रनाथ पाण्डेय	१)

		Rs.	as.
(२१)	**Nature Cure** by H. Lindlahr, M.D.	6	0
(२२)	**Practical Nature Cure** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	4	0
(२३)	**Pranayama** by Dr. K. L. Sharma, N.D.	0	2
(२४)	**The Nature Cure of Eye defects** by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D.	0	8
(२५)	**Your Diet in Health and Disease** by Harry Benjamin	0	12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

निराश [illegible] की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] and Low Blood [illegible]

स्थान

[illegible]

[illegible] ALLAHABAD

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

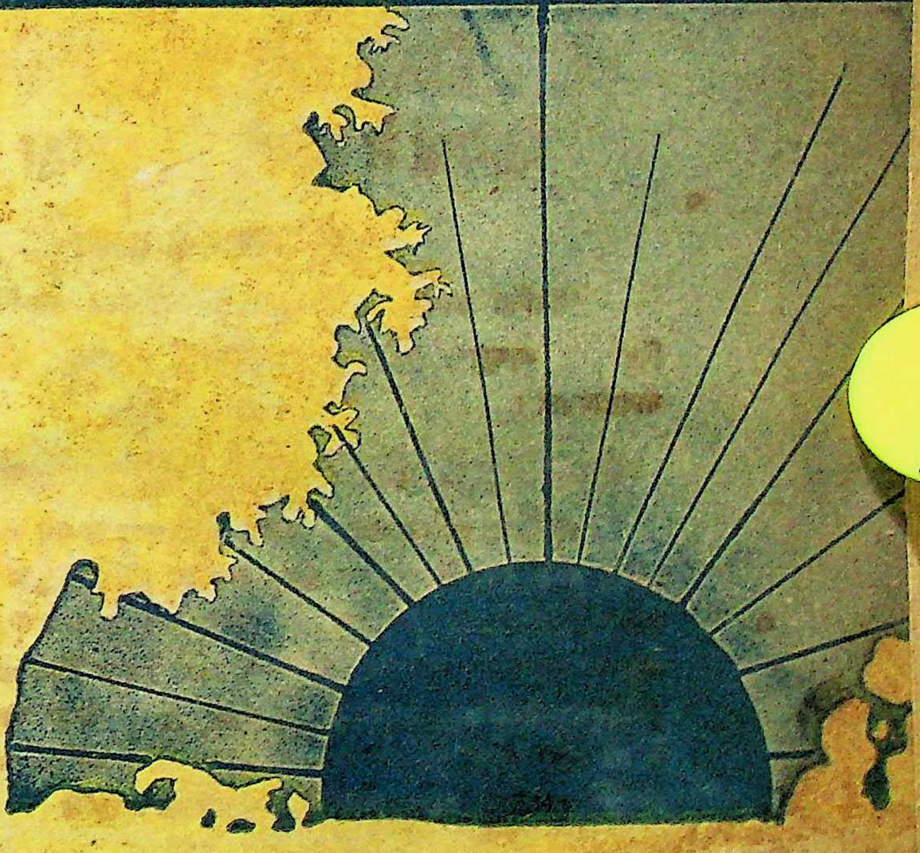

नवम्बर
१९४१

७ नवंबर ४१ [illegible] कल[illegible] में प्राप्त।

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज़ के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

त रु ण

सचित्र मासिक पत्र

वार्षिक मूल्य ३)

'तरुण' के कुछ मुख्य विषय

- सुरुचिपूर्ण कहानियाँ, एकांकी नाटक और कविताएँ
- सामयिक विषय-विज्ञान, राजनीति आदि
- साहसिक यात्राएँ और अन्वेषण, जीवनियाँ
- शारीरिक-रक्षा, व्यायाम और खेल
- ललित-कला

तरुण-भाव निम्न-लिखित सद्गुणों से पुष्ट होता है—

- अदम्य उत्साह और साहस की क्षमता
- शारीरिक योग्यता, मानसिक तीव्रता और नैतिक दृढ़ता

'तरुण' में इनसे संबंध रखने वाली रोचक, संस्कृतिपूर्ण और ठोस सामग्री प्रति मास होती है

कुछ सम्मतियाँ

...The articles are of great Value and are written in a style that will appeal to the young—Professor Amaranatha Jha.

....'तरुण' मुझे बहुत पसन्द है—कवि निराला

... अब तक हिन्दी में ऐसा कोई पत्र न था जो तरुणों की रुचि का केन्द्र बन सके—'हंस'....

यह न केवल तरुणों को वरन हमारे बुजुर्गों को भी बहुत कुछ सिखायेगा—'बालक'

तरुण कार्यालय, इलाहाबाद

स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ मूल्य १।)

पता :: स्वास्थ्य पुस्तक भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

नवम्बर
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क ११

इस अङ्क में

विषय	लेखक	पृष्ठ
१. सम्पादकीय		३७८
२. योग—मानव-जीवन की चरम शान्ति—	स्वामी कुवलयानन्द	३७९
३. स्वप्न-दोष—	डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह	३८४
४. स्वरोदय-विज्ञान—	श्री श्यामसुन्दर भँवर	३९०
५. नेत्र-चिकित्सा सम्बन्धी मेरे अनुभव—	डा० आर० एस० अग्रवाल	३९५
६. मानसोपचार—	श्री आनन्दप्रिय	३९७
७. 'अपना पथ पहचान लिया'—	श्री सत्यनारायण श्रीवास्तव	४००
८. प्रश्नोत्तर		४०३

अगले अंक
में
क्या रहेगा ?

१. पीड़ा-रहित प्रसव—श्रीमती लक्ष्मी अग्रवाल

२. अपनी मालिश आप—मो० अब्दुस्सत्तार खैरी, एम० ए०

३. प्रसन्न रहने के १२ सरल नियम

४. दृष्टि जाँच—डा० आर० एस० अग्रवाल

५. पथरी—इसका कारण और इलाज—चौधरी कृष्ण बिहारी राय

एवं अन्यान्य उपयोगी लेख

अपने विचार

मानसिक व्याधियाँ

मानव-जाति को उत्पीड़ित करने के लिए अनेकानेक शारीरिक व्याधियाँ तो हैं ही, किन्तु उनसे भी अधिक भयानक मानसिक व्याधियाँ हैं जो आज हमारी वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय सुख-शान्ति के लिए विनाशकारी सिद्ध हो रही हैं। हमारा समाज, सामाजिक संस्थाएँ और सरकार भी इस व्याधि का निराकरण करने से उदासीन हैं। आजकल अंग्रेजी दवाखाने, अस्पताल, औषधालय आदि प्रायः हर शहर में बन गए हैं, लेकिन आपको ऐसी कोई भी संस्था देखने को न मिलेगी जहाँ पर मनुष्य की मानसिक व्याधियों की चिकित्सा की जाती हो। खेद की बात तो यह है कि ये अस्पताल और दवाखाने शारीरिक व्याधियों से भी मनुष्य की रक्षा करने में असफल ही हुए हैं—यह नित्य प्रति रोगियों की बढ़ती हुई अधिकाधिक संख्या से स्पष्ट है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आजकल के लोग इन दोनों तरह की व्याधियों से आक्रान्त हो रहे हैं। जिन्हें कोई शारीरिक रोग नहीं है वे मानसिक रोग से ही परेशान हो रहे हैं।

आश्चर्य की बात तो यह है कि ये मानसिक व्याधियाँ इतनी मामूली मामूली बातों को लेकर पैदा हो जाती हैं जिनका हम थोड़े से भी विवेक से काम लेने पर प्रतीकार कर सकते हैं। ये हमारे सम्मुख घृणा, प्रतिहिंसा लोभ, चिन्ता, आलस्य, निराशा, अहंकार, ईर्ष्या-द्वेष, भय, असहिष्णुता, काम-लिप्सा, स्वार्थपरता, अविश्वास, अज्ञान, आत्म-निग्रह का अभाव आदि अनेक रूपों में प्रकट होती हैं। साथ ही बहुत से ऐसे लोग भी हैं जिन्हें किसी न किसी मानसिक व्याधि के पाले रहने में ही बड़ा सुख मिलता है। लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए वे अपनी कल्पित व्याधियों का प्रदर्शन तथा उनका अतिरंजित वर्णन करने से भी नहीं चूकते। उनकी यह मनोवृत्ति तो और भी घातक सिद्ध हो रही है। इसलिए इस दिशा में सुधार के लिए कोई कदम उठाने से पहले इस तरह के लोगों की इस घातक मनोवृत्ति को बदलने के लिए प्रयत्न करना अनिवार्य रूप से आवश्यक है।

मानसिक स्वास्थ्य के आधार शारीरिक स्वास्थ्य, शक्ति और सौन्दर्य हैं। ये इस कोटि के होने चाहिए जिनसे हम अपने को गौरवान्वित कर सकें। हम औरों के सामने अपने स्वास्थ्य और शक्ति, अपने सुख और सौन्दर्य का प्रदर्शन करने के लिए प्रयत्नशील बनें, न कि रोग-शोक तथा कल्पित व्याधियों का प्रदर्शन करने के लिए।

मानसिक व्याधियों से बचाव के लिए सबसे सरल उपाय यह होगा कि हमें छोटी-छोटी बातों के लिए भी जो बहुत अधिक सोच-फिक्र करने की आदत पड़ गई है, उसमें सुधार करें। अपने को अनावश्यक और अत्यधिक महत्त्व देने की जरूरत नहीं। अनावश्यक अथवा कल्पित भय के स्थान हम अपने में शारीरिक और नैतिक साहस पैदा करें। साहसी व्यक्ति औरों की अपेक्षा कम चिन्तित, क्लांत तथा दुखी होता है। ईर्ष्या-द्वेष को दूर कीजिए। इससे लाभ तो कुछ होता नहीं, इसके विपरीत मानसिक शान्ति भी मारी जाती है और जीवन बहुत दुखपूर्ण बन जाता है। दूसरों के गुणों की सराहना करने की आदत डालिए—दूसरों की सफलता पर ईर्ष्या नहीं हर्ष प्रकट करने की चेष्टा कीजिए। प्रसन्नता मनुष्य को व्याधियों से मुक्त रखने के लिए महौषधि है। सुख पाकर तो सभी हँसते रहते हैं—वह तो साधारण सी बात है। आपदाओं और कष्टों का मुस्कान से स्वागत कीजिए। फिर यह जीवन का राजमार्ग आपके लिए सुघर और आनन्ददायक बन जायगा जिसपर अग्रसर होकर आप आसानी के साथ और हँसते हुए इस जीवन-यात्रा को पूरी कर सकने में समर्थ हो सकेंगे।

◆

योग—मानव-जीवन की चरम शान्ति

[स्वामी कुवलयानन्द]

हर्ष, ज्ञान और सुरक्षा—ये तीन प्रकार की आधारभूत मनोवृत्तियाँ बालक में जन्म-ग्रहण करने के समय से ही पाई जाती हैं। आत्म-रक्षा, उत्सुकता और प्रेम—ये तीन इन मनोवृत्तियों के प्रेरक हैं। आत्म-रक्षा के साथ साथ शिशु में आत्म-प्रेम की भावना भी चलती रहती है। माता बच्चे को सुरक्षा, ज्ञान और प्रसन्नता प्राप्त कराकर उसकी समस्त स्वाभाविक भावनाओं को परितुष्ट करती है। लेकिन ज्यों ज्यों बच्चे की अवस्था अधिक होने लगती है, उसके जीवन में असफलताओं का प्रादुर्भाव होने लगता है—उसका चरम-सुख धीरे धीरे लुप्त होने लगता है। फिर यह स्थायी किस प्रकार हो, यही मानव जीवन की सबसे बड़ी समस्या है। प्रस्तुत लेख में आप देखेंगे कि योग के ही द्वारा मनुष्य अनन्त अस्तित्व, अनन्त ज्ञान, और अनन्त प्रसन्नता प्राप्त करके मानव जीवन के इस चरमलक्ष्य पर पहुँच सकता है।—सं०

उपर्युक्त विषय पर चर्चा करने के लिए हम यौगिक ग्रन्थों, जीव-विज्ञान (Biology) और आचरणवाद (Behaviourism) को अपने विषय का आधार बनायेंगे। जीव-विज्ञान प्राणि-जगत् पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालता है और आचरणवाद मनोविज्ञान की एक शाखा है। उसका आविर्भाव सापेक्षरूप से जीव-विज्ञान से हुआ है और यह आचरण-सम्बन्धी अनुसन्धान में उन प्रणालियों से काम लेता है जो निस्सन्देह वैज्ञानिक हैं।

आचरणवादी (Behaviourist) लोग मनुष्य को एक प्राणी मानते हैं और चित्त (Mind) तथा उससे सम्बन्धित चेतना, प्रवृत्ति, आदि प्रत्येक बात को मानने से या तो अस्वीकार करते हैं या उसकी उपेक्षा करते हैं। अपने अन्वेषणों में मानसिक प्रक्रियाओं को न पाने के कारण वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मानव मनोविज्ञान के अध्ययन के लिए इन समस्त धारणाओं को मानने से इनकार कर देना होगा। इस प्रसंग पर चर्चा करते हुए अभी आगे चलकर हम देखेंगे कि उनकी कुछ प्राणलियाँ तो इस विषय की शिक्षा के लिए अत्यधिक उपयोगी हैं पर साथ ही हमें यह ज्ञात होगा आचरणवाद में कुछ त्रुटियाँ भी हैं। आचरणवाद के सम्बन्ध में नीचे संक्षेप में जो चर्चा की गई है उससे हमारा काम चल जायगा।

आचरणवादियों के मत के अनुसार मनुष्य मात्र की समस्त क्रियाएँ, जिनमें नव-जात शिशुओं की क्रियाएँ भी सम्मिलित हैं, सामान्य अथवा विषम (Complex) उत्तेजनाओं (Stimuli) की शरीर में होने वाली प्रतिक्रिया मात्र हैं। साधारण विद्युत-शक्ति रखने वाले बिजली के तार का अगर हम स्पर्श करें तो हमारी अँगुलियों में एक सामान्य उत्तेजना (Sensation) होगी और उसके फलस्वरूप हम जो तत्काल अपना हाथ खींच लेंगे वह उस उत्तेजना की सामान्य प्रतिक्रिया कही जायगी। लेकिन अगर किसी राष्ट्र के सम्मुख मद्य-निषेध जैसी कोई समस्या उपस्थित की जाय तो उस राष्ट्र पर उसकी जो प्रतिक्रिया होगी वह बहुत विषम होगी। संवेदना और उसकी प्रतिक्रिया के बीच के पारस्परिक सम्बन्ध का विशिष्ट रूप से अध्ययन किया जा सकता है। आचरणवादियों के मतानुसार मानव मनोविज्ञान का अध्ययन करने का यही एक वैज्ञानिक तरीका है। आचरणवादियों का दावा है कि इस प्रकार मनोविज्ञान के

सम्पूर्ण क्षेत्र का विशिष्ट रूप से अनुसन्धान कर लेने तथा उत्तेजना और प्रतिक्रिया के पारस्परिक सम्बन्धों (Stimulus-response relations) का समुचित रूप से अध्ययन कर लेने पर अगर उन्हें कोई स्वस्थ शिशु मिले तो वे उसे साधु या असाधु, राजा या रंक के रूप में परिणत कर सकते हैं। निस्सन्देह आचरणवादियों को बच्चों के जन्म लेने के समय से ही शिक्षा देने का अवसर प्रदान करना चाहिए। यह शिक्षा मुख्यतः दो प्रकार——सापेक्ष और निरपेक्ष (Conditioning और Unconditioning)——से दी जाती है। शिक्षा के ये तरीके क्या हैं यह नीचे दिए गए उदाहरण से स्पष्ट हो जायगा।

एक कुत्ता है जो किसी खास चीज को देखते ही भूँकने लग जाता है। अब यदि आप उस चीज को कुत्ते के सामने हर बार लाए जाने के साथ ही एक घन्टी बजा दिया करें और यही क्रम कई बार दोहरावें तो आप देखेंगे कि चाहे वह वस्तु सामने न भी आवे किन्तु घन्टी के बजते ही वह कुत्ता भूँकने लगेगा। घन्टी के बजते ही कुत्ते के भूँकने लग जाने को Conditioned response कहते हैं और इस प्रक्रिया को 'कन्डीशनिंग' (Conditioning) कहते हैं। इसके ठीक विपरीत प्रक्रिया को 'अनकन्डीशनिंग' (Unconditioning) कहते हैं। इसका भी एक उदाहरण लीजिए। एक बच्चा है जो बिल्ली से बहुत डरता है। इस मामले में बिल्ली उस बच्चे में उत्तेजना (Stimulus) उत्पन्न करने वाली है जिसकी प्रतिक्रिया होती है भय के रूप में। अब यदि प्रतिदिन भोजन करने के समय बिल्ली को उस बच्चे के सामने लाया जाय——आरम्भ में बिल्ली को बालक से इतनी दूर पर रक्खा जाय, जिससे उसमें भय का संचार होने की गुंजाइश न हो और फिर क्रम से उसे बालक के अधिकाधिक निकट लाया जाय तो कुछ ही दिनों में उस बालक के हृदय से बिल्ली का भय जाता रहेगा। भय दूर करने की इस प्रक्रिया को Unconditioning कहते हैं। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में यह दोनों क्रम——Conditioning और Unconditioning——चलते रहते हैं और उस व्यक्ति के आचरण के यही मुख्य कारण बनते हैं।

इन दोनों प्रक्रियाओं की व्याख्या करके आचरणवादियों (Behaviourists) ने मानव मनोविज्ञान की दिशा में इतनी सहायता पहुँचाई है जिसका मूल्य नहीं आँका जा सकता। फिर भी आचरणवादी लोग मनुष्य के आचरण का सापेक्ष रूप से अध्ययन करने के उत्साह में पड़कर उस कड़ी की उपेक्षा कर गए हैं जो उत्तेजना की, प्रतिक्रिया के साथ सम्बन्ध जोड़ती है। मैं समझता हूँ कि जब तक उत्तेजना और प्रतिक्रिया (Stimulus और Response) का एक दूसरे से सम्बन्ध जोड़ने वाली इस कड़ी (Link) का पूरी तौर से अध्ययन नहीं किया जाता तब तक आचरणवाद मनुष्य के आचरण के सम्पूर्ण ढाँचे की व्याख्या करने में कभी सफलीभूत न हो सकेगा। इन दोनों का सम्बन्ध जोड़ने वाली यह कड़ी क्या है इसे हम उत्पत्ति-विज्ञान की प्रणाली से, जिसका आचरणवादी लोग स्वयं मनोवैज्ञानिक अनुसन्धानों में प्रयोग करते हैं, स्पष्ट करने का प्रयत्न करेंगे। इस प्रणाली का सम्बन्ध शिशु-जीवन (Infant life) के विकास के अध्यन के द्वारा मनुष्य के जीवन के विकास के अध्ययन से है।

आचरणवादी लोग यह स्वीकार करते हैं कि दो ऐसी क्रियाएँ होती हैं जो यत्नज (प्रयत्न करके सीखी जा सकने वाली), अथवा स्थिति-बाध्य (Conditioned) नहीं है बल्कि जिनका सम्बन्ध भ्रूण-विज्ञान (Embryology) से है। साँस लेना, रोना-चिल्लाना, पेशाब करना, हाथ-पैर चलाना आदि क्रियाएँ भ्रूणात्मक (Embryological) हैं। लेकिन आचरणवादियों का आगे कहना है कि इनके अलावा अन्य प्रतिक्रियात्मक आचरणों (Response) को मनुष्य 'कन्डीशनिंग' और 'अनकन्डीशनिंग' इन दो प्रक्रियाओं के द्वारा सीखता है। अब हम यहाँ पर

शिशु के जन्म-ग्रहण करने के समय से उसके जीवन का अध्ययन करेंगे और मानसिक प्रक्रियाओं की सहायता लिए बिना ही उसके आचरण पर विस्तार पूर्वक विचार करने का प्रयत्न करेंगे।

इस सम्बन्ध में हमारा ध्यान सबसे पहले जिस बात की ओर आकर्षित होता है वह है शिशु में ग्राह्य तथा अग्राह्य उत्तेजनाओं को पहचानने की शक्ति। मैं यह मानता हूँ कि ग्राह्य (Acceptable) और अग्राह्य (Unacceptable) उत्तेजनाओं को 'अनकन्डीशनिंग' प्रक्रिया के द्वारा क्रम से अग्राह्य और ग्राह्य उत्तेजनाओं के रूप में परिणत किया जा सकता है। लेकिन कोई यह दावा नहीं कर सकता कि ग्राह्य तथा अग्राह्य उत्तेजनाओं के बीच के भेद को पहचानने की क्षमता को भी शिशुओं में शिक्षा के द्वारा उत्पन्न की जा सकती है। फिर भी यदि कोई आचरणवादी अधिक गहराई के साथ विचार करे तो उसे यह स्वीकार करना पड़ेगा कि शिशुओं में पाई जाने वाली यह क्षमता आत्मज अथवा जन्म-जात है। इसके अलावा आचरणवादी लोग हमें यह नहीं बता सकते कि कोई एक विशिष्ट उत्तेजना क्योंकर किसी शिशु को ग्राह्य अथवा अग्राह्य होती है ? वे केवल यही कह सकते हैं कि शिशु में ग्राह्य उत्तेजना की शरीर-सम्बन्धी विशिष्ट प्रतिक्रियाएँ होती हैं जो उसे ग्राह्य मालूम होती हैं। लेकिन आचरणवादियों का यह उत्तर बहुत ही असन्तोषजनक है। इसका सन्तोषजनक उत्तर केवल यही हो सकता है कि विशिष्ट उत्तेजना ग्राह्य इसलिए होती हैं क्योंकि वे ऐसी संवेदनाएँ (Sensations) उत्पन्न करती हैं जिनसे शिशु के हर्ष अथवा प्रसन्नता की स्वाभाविक भावना की पूर्ति होती है। संवेदनाओं (Sensations) का अस्तित्व स्वीकार करने से यह आवश्यक हो जाता है कि चेतना (Consciousness) के अस्तित्व को भी स्वीकार किया जाय। क्योंकि चाहे वह आन्तरिक हो अथवा वाह्य, प्रत्येक वयस्क मनुष्य उत्तेजनाओं (Stimuli) द्वारा उत्पन्न हुई अनुभूतियों का ज्ञान रखता है।

आगे चलकर हम यह भी देखते हैं कि शिशु जिस वातावरण में पलता है उस वातावरण से अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उत्पन्न की गई उत्तेजनाओं से ही सन्तुष्ट नहीं हो जातीं, बल्कि वह लगातार इस बात का प्रयत्न करता रहता है कि उसे नवीन उत्तेजनाओं का ज्ञान हो। शिशु जो बार बार अपनी आँखें और सिर इधर उधर घुमाता रहता है उसे भ्रूण-सम्बन्धी अथवा सापेक्ष प्रतिक्रिया बताकर टाला नहीं जा सकता। वह तो ऐसा केवल नया ज्ञान प्राप्त करने के ही लिए करता है। एक बात और। भय उत्पन्न करने वाली उत्तेजनाओं से शिशु का अपनी माता की गोद में छिपना साफ तौर से यह प्रकट करता है कि उसमें सुरक्षा प्राप्त करने की जन्म-जात अथवा अयत्नज प्रबल भावना मौजूद है।

अबतक शिशु के सम्बन्ध में हमने जो जानकारी प्राप्त कर ली है वह इस लेख के उद्देश्य को पूरा करने के लिए पर्याप्त होगा। हमने यह देख लिया है कि हमें न केवल संवेदनाओं और चेतना के अस्तित्व को बल्कि यह भी स्वीकार करना होगा कि शिशु में ३ प्रकार की आधारभूत जन्मजात प्रबल भावनाएँ विद्यमान होती हैं—वे हैं हर्ष, ज्ञान सुरक्षा प्राप्त करने की भावनाएँ। अन्य मनोभावनाओं की, जिन्हें कुछ दार्शनिकों ने जन्मजात बताए हैं, इन्हीं तीनों आधारभूत प्रबल मनोभावनाओं की शाखाओं के रूप में व्याख्या की जा सकती है।

अब यहाँ पर प्रश्न यह होता है कि वे कौन सी प्रेरणाएँ (Instincts) हैं जिनके कारण शिशु में ये तीनों प्रकार की प्रबल मनोभावनाएँ उत्पन्न होती हैं? मेरे विचार से वे हैं आत्म-रक्षा, उत्सुकता और प्रेम की प्रेरणाएँ। शिशु में सुरक्षा की भावना उसकी आत्म-रक्षा और ज्ञान की प्रबल मनोभावना उसकी उत्सुकता के परिणाम हैं, यह बात आसानी से समझ ली जा सकती है। लेकिन प्रेम की प्रेरणा को, जिसके कारण शिशु में हर्ष अथवा प्रसन्नता की प्रबल भावना उत्पन्न

होती है, समझाने के लिए कुछ सविस्तर वर्णन की आवश्यकता पड़ेगी। आत्म-रक्षा की भावना के साथ साथ उसका एक और भी आवश्यक पहलू चलता रहता है वह है आत्म-प्रेम की भावना। जबतक आत्म-रक्षा की भावना का आत्म-प्रेम के साथ अविभाज्य सम्बन्ध नहीं कायम होता तबतक वह कार्यान्वित नहीं हो सकती और जबतक उसमें हर्ष अथवा प्रसन्नता की भावना न मिली होगी तबतक प्रेम की कोई भावना उत्पन्न न हो सकेगी। इस प्रेम की भावना को आरम्भ में शिशु अपनी माता के प्रति और फिर बाद में अपने वातावरण के प्रति लक्षित करता है। उसके प्रेम की गहराई इस बात पर निर्भर करती है कि उसे किसी वातावरण के विभिन्न पहलुओं से किस हद तक हर्ष अथवा प्रसन्नता प्राप्त होती है। यह स्पष्ट रूप से जान लेना होगा कि सुप्रसिद्ध जर्मन मनोवैज्ञानिक डाक्टर फ़ायड की काम (Libido) सम्बन्धी धारणा* से इसका कोई भी सम्बन्ध नहीं है और इसका स्वरूप किसी भी प्रकार ऐन्द्रिक (Sexual) नहीं है, हालाँ कि यह सच है कि ऐन्द्रिक प्रेम (Sexual-love) इसी की एक शाखा है। त्वचा, नेत्र, मुख, गुदा और इसी प्रकार की अन्य इन्द्रियों (Erotisms) के बारे में फ़ायड की जो धारणाएँ हैं उनका कोई बायोलॉजिकल (शरीर-रचनाशास्त्र सम्बन्धी) आधार नहीं है।

यदि हम केवल इस बात को समझ लें, कि दुग्ध-पान करते समय बच्चे को जो प्रसन्नता होती है वह मुख के कारण नहीं बल्कि इसीलिए होती है कि पाचन-क्रिया-सम्बन्धी शिराओं में भूख के कारण उत्पन्न होने वाला तनाव शिथिल पड़ जाता है, तो हम फ़ायड की काम सम्बन्धी धारणा को मानने से अस्वीकार कर देंगे। फ़ायड की खोजों का मेडिकल मनोविज्ञान के सम्बन्ध में चाहे जो भी महत्त्व हो, लेकिन मुझे यह कहना ही पड़ेगा कि उन्होंने प्रेम का जो अर्थ लगाया है वह सर्वथा भ्रमात्मक है। यहाँ पर मुझे इस बात को भी स्पष्ट कर देना होगा कि घृणा कदापि जन्म-जात अथवा स्वाभाविक भावना नहीं है। यह प्रेम की भावना के विफल होने पर उत्पन्न होने वाली मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया मात्र है।

अब यदि हम ऊपर बताई गई बातों को ध्यान में रखते हुए प्रारम्भिक शिशु-जीवन का अध्ययन करें, तो हमें ज्ञात होगा कि माता बच्चों को सुरक्षा, ज्ञान, और प्रसन्नता प्राप्त कराकर उसकी समस्त स्वाभाविक भावनाओं को परितुष्ट करती है। यही कारण है कि बच्चे के लिए माता चरम प्रसन्नता का आधार है। लेकिन ज्यों ज्यों बच्चा बढ़ने लगता है, उसके जीवन में विफलता की बहुतायत होने लगती है, उसकी भावनाएँ बढ़ने लगती हैं और इस तरह उसका चरम सुख धीरे धीरे लुप्त होने लगता है। जो भी हो, प्रारम्भिक शिशु जीवन के इस अध्ययन से स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाता है कि हम इस संसार में, जो कि असफलताओं और कष्टों से परिपूर्ण है, किस प्रकार चरम शान्ति प्राप्त कर सकते हैं।

क्या इस अध्ययन से यह अर्थ निकलता है कि हमें अपने शिशु-जीवन को स्थायी रूप से कायम रखना चाहिए? कदापि नहीं। यदि ऐसा सम्भव भी हो तो भी यह हमारे लिए असहनीय बन जायगा। शिशु-जीवन हमें जो संकीर्णताएं (Limitations) देखने को

---

*फ़ायड के सिद्धान्त के अनुसार आनन्द और सुख देने वाली क्रियाएँ जो जन्म-ग्रहण करने के साथ ही बच्चों में पाई जाती हैं उनको 'लिबिडो' कहते हैं। यह 'लिबिडो' बड़ी आयु में काम-वासना का रूप धारण करके मनुष्य को सबसे अधिक प्रसन्नता देने वाली क्रिया बन जाता है। बाल्यावस्था में 'लिबिडो' का मुख्यतः ३ प्रकार की आनन्ददायक क्रियाओं से सम्बन्ध होता है—मुख, (होठ, जिह्वा, तालु) उपस्थ, और गुदा। मुख से आनन्द इसलिए मिलता है कि उसके द्वारा शक्तिदायक तथा क्षुधा को शान्त करने वाला भोजन प्राप्त होता है।—सं०

मिलती हैं वे भयानक हैं। निश्चय ही चरम शान्ति प्राप्त करने का यही उपाय है कि हम Conditioning और Unconditioning प्रक्रिया का इस तौर से प्रयोग करें ताकि हम उसके द्वारा प्रत्येक आन्तरिक अथवा वाह्य उत्तेजना को ग्राह्य बना सकें। इसके अलावा हमें जीवन की एक ऐसी स्थिति में पहुँचने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि अनन्त अस्तित्व, अनन्त ज्ञान और अनन्त प्रसन्नता प्राप्ति के द्वारा हमारी आत्म-रक्षा, उत्सुकता और प्रेम की आधारभूत भावनाओं का लक्ष्य पूर्ण हो जाय। अस्तित्व, ज्ञान, और आनन्द को स्थायी रूप से प्राप्त कर लेनेपर इन वस्तुओं की प्राप्ति के लिए होने वाला प्रेरणात्मक (Instinctive) द्वन्द मिट जायगा और प्रत्येक उद्वेग को ग्राह्य बन जाने के फलस्वरूप फिर किसी प्रकार की अशान्ति का कोई कारण न रह जायगा। संक्षेप में यह स्थिति मानव-जीवन की चरम शान्ति की होगी।

योग का यह दावा है कि वह मानव-जीवन में इसी तरह की स्थिति उत्पन्न कर सकता है। यम और नियम, जो अवश्य ही Conditioning और Unconditioning की ही प्रक्रियाएँ हैं, के द्वारा सभी प्रकार की उत्तेजनाओं को ग्राह्य बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त शारीरिक और मानसिक अभ्यास के द्वारा चेतना-शक्ति को इतना अधिक उन्नत बनाया जा सकता है जिससे यह बोध हो जाय कि वास्तविक व्यक्ति, जो अवश्य ही शरीर नहीं है, स्वतः अनन्त अस्तित्व, ज्ञान और हर्ष है। हमारे यहाँ इन तीनों स्थितियों को सत् चित् और आनन्द बताया गया है। आप मेरे इस कथन से पूरी तौर से सहमत होंगे कि वह स्थिति, जिसमें आत्मा को सच्चिदानन्द का अनुभव होता है, मानव-जीवन की चरम शान्ति है। मेरा विचार है कि यदि आचरण वादी लोग किसी स्वस्थ शिशु को वास्तविक सन्त के रूप में परिणत कर सकें तो उनकी प्रक्रियाओं में और योग के आचार्यों द्वारा बताई गई प्रक्रियाओं में बहुत अधिक समानता पाई जायगी।

अपना स्वास्थ्य और दूसरों का स्वास्थ्य

प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के तत्वावधान में योग तथा प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति सिखाने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। शिक्षाकाल दो दो सप्ताह का प्रायः चार मास के अन्तर पर साल भर में तीन बार होगा। पहला शिक्षणकाल गत मार्च मास में हुआ था। दूसरा १८ अगस्त '४१ से आरम्भ हुआ। अब तीसरा तथा अंतिम शिक्षण-काल १५ नवम्बर से शुरू होगा। विद्यार्थियों को आने की सूचना एक सप्ताह पहले ही दे देनी चाहिए। अगले साल नए विद्यार्थियों का शिक्षण-काल फरवरी १९४२ से चलेगा।

प्रत्येक दो सप्ताह के शिक्षणकाल के लिए फीस केवल पाँच रुपया होगी जो प्रार्थना-पत्र के साथ भेज दी जानी चाहिए। शिक्षण का विस्तृत विवरण-पत्र दो आने के डाक-टिकट भेजने से प्राप्त हो सकेगा।

शिक्षाकाल की समाप्ति पर शिक्षार्थियों की परीक्षा होगी जो उत्तीर्ण होंगे वे एन० डी०, डी० वाई० (N.D., D.Y.) की डिगरी प्राप्त करेंगे।

बालेश्वर प्रसादसिंह
८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद
डाइरेक्टर-प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

स्वप्नदोष

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

आजकल के अधिकांश युवक तथा स्कूलों और कालेजों के छात्र क्षीणकाय, निस्तेज, कान्तिहीन, व स्फूर्तिशून्य दिखाई पड़ते हैं। इस खेदजनक दृश्य के उपस्थित होने का मूल कारण है जान में या अनजान में नवयुवकों द्वारा किया जाने वाला वीर्य-नाश! इस लेख में स्वप्नदोष के कारण पर प्रकाश डाला गया है और बताया गया है कि इस व्याधि से किस प्रकार छुटकारा पाया जा सकता है। प्रस्तुत लेख हमारे नवयुवकों के लिए विशेष उपयोगी होगा।—सं०

आज जब हम विशेषतः अपने विद्यार्थी-समाज व युवक-समुदाय की ओर दृष्टिपात करते हैं तो हृदय दहल उठता है। आज वह स्वास्थ्य की दृष्टि से कितना नीचे गिरा हुआ है। किसी भी नवयुवक, किसी भी विद्यार्थी की ओर नजर दौड़ाइए, वह क्षीणकाय, दुर्बल, निस्तेज, कान्तिहीन, रक्तहीन व स्फूर्तिशून्य दीख पड़ता है। उसमें वह स्वस्थ मांसलता, अदम्य साहस, ज्वलन्त आभा, सजीला रक्तवर्ण व सदैव नूतन कार्यों की ओर प्रेरित करने वाली स्फूर्ति व शक्ति कहाँ हैं, जो व्यक्तित्व की सृष्टि करते हैं—जो दर्शक को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं—जो इच्छा-शक्ति को प्रबल बनाते हैं—जो युवावस्था में चुपचाप बैठने नहीं दे सकते तथा असम्भव को भी सम्भव समझने वाली विचार-धारा को जन्म देते हैं? यह है हमारे समाज के स्तम्भ, भारत के भावी आशा व कल के नागरिकों का करुण चित्र! पर इस हृदय-विदारक चित्र के मूल में क्या है—ऐसे चित्र के उपस्थित होने का आदि कारण क्या है? कारण छोटा-सा पर बहुत गम्भीर है। इसका मूल कारण है जान में या अनजान में आज के युवकों द्वारा किया जाने वाला वीर्यनाश! और इसका परिणाम है स्वप्न-दोष व धातुक्षीणता जैसी शुक्र व जननेन्द्रिय सम्बन्धी अनेकानेक व्याधियों द्वारा उनका पीड़ित होना। इस लेख में स्वप्नदोष क्या है, क्यों और कैसे होता है और इसका उचित उपचार व इलाज क्या है आदि पर वैज्ञानिक व शरीर-रचना की दृष्टि से प्रकाश डाला जायगा।

स्वप्नदोष क्या है?

जननेन्द्रिय से निद्रावस्था अथवा जागते रहने पर भी वीर्य का निकल पड़ना या पतन होना 'स्वप्न-दोष' कहा जाता है। होता यह है कि जब कोई कामोत्तेजक स्वप्न देखता है तब निद्रावस्था में ही स्वप्न-सम्भोग के समय शिश्न से वीर्यपात हो पड़ता है, आँख खुलने पर उसे अपने अधोवस्त्र वीर्य-पात से भीगे मालूम होते हैं। आधुनिक युवकों व विद्यार्थियों में विशेष कर यह एक सामान्य बात हो गई है। मनचले युवक अकसर सिनेमा के चित्र देखने जाते हैं और किसी न किसी अभिनेत्री के प्रति मन में बेहद आकर्षित हो उठते हैं। रात में जब सोने के लिए लेटते हैं तो उसीका चित्र उनकी आँखों के सामने नाचता रहता है। वे मन में उससे सहवास की भी सजग व अर्ध सजग कामन्ना करते हैं। मानसिक उत्तेजना अत्यधिक प्रबल होने पर अनायास ही रात में वीर्य-पात हो जाता है। किन्हीं-किन्हीं की दशा तो यह होती है कि किसी भी सुन्दरी युवती को देख लेने से ही वे स्खलित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त बहुत से युवकों के पेशाब करते समय भी वीर्य बहा करता है।

साधारणतः सर्व प्रथम उत्तेजना का यह "निर्गम-द्वार"

जिसे अंग्रेजी में Safety valve कहते हैं—उपरोक्त रूप में प्रकट होता है। इस प्राथमिक स्थिति में कोई गम्भीर समस्या उत्पन्न नहीं होती और न उस समय किसी को अधिक ध्यान देने की ही जरूरत है। पर आगे चलकर जब कोई व्यक्ति लगातार अहितकर व अस्वास्थ्यकर जीवन-यापन की ओर पूर्णतः जान में या अनजान में अपने को झुका लेता है तब यह अधिक गम्भीर रूप धारण कर लेता है। उस हालत में पहले वाली अस्थायी स्थिति की चीज स्थायी व संहारक समस्या बन जाती है। फलस्वरूप वीर्यपात व्याधि के रूप में बदल कर जड़ जमा लेता है। लोगों को धोखा देने के लिए आजकल की बहुत सी व्यवसायी पत्र-पत्रिकाओं में अश्लील विज्ञापनों द्वारा इंगित की हुई उत्तेजक और अनुत्तेजक औषधियों का बहुलता से प्रयोग व उपयोग किया जाता है। परिणाम इसका वही होता है, जो होना चाहिए।

'मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों-ज्यों दवा की।' उसका स्वास्थ्य दिन प्रति-दिन अधिकाधिक ह्रास की ओर अग्रसर होता जाता है। नवम्बर ४१

वीर्यपात किस प्रकार होता है ?

पुरुष के प्रजनन सम्बन्धी गुह्याङ्गों में निम्नलिखित अंग आते हैं—

१—वीर्य कोष (Testes), २—एपीडिडाइमिस (Epididymis), ३—डेफेरेन्स नली (Ducts of deferens), ४—शुक्र के संचित होने की थैली (Vesicula seminalis), ५—निकाल फेंकने वाली नलिका या स्राव नलिका (Ejaculatory duct), ६—शिश्न या जननेन्द्रिय (Penis), ७—शिश्न की गिल्टियाँ (Prostate glands).

Testes (वीर्यकोष)—ये जनन सम्बन्धी पुरुष की दो गिल्टियाँ हैं जो जाँघों के बीच तथा जननेन्द्रिय के नीचे लटकने वाली स्क्रोटम (Scrotum) नामक अणुओं की थैली में शुक्र सम्बन्धी महीन तन्तुओं (Spermatic cord) से लगी रहती हैं। वीर्य-कोषों (Testes) की बनावट के अन्दर लोब्यूल्स (Lobules) नामक छोटे लटकन आते हैं। इनमें बहुत छोटी छोटी नलिकाएँ होती हैं जिनके कि बाद में मिलने पर एक बड़ी नली बनती है जिसे एपीडिडाइमिस (Epididymis) कहते हैं पहले चित्र में दाहिना वीर्य-कोष, इपीडिडाइमिस लोब्यूल्स के अन्दर रहने वाली छोटी नलियों में ही वीर्य या शुक्र की उत्पत्ति होती है इसी वीर्य में शुक्राणु (Spermatozoa) होते हैं जो जानने योग्य हैं।

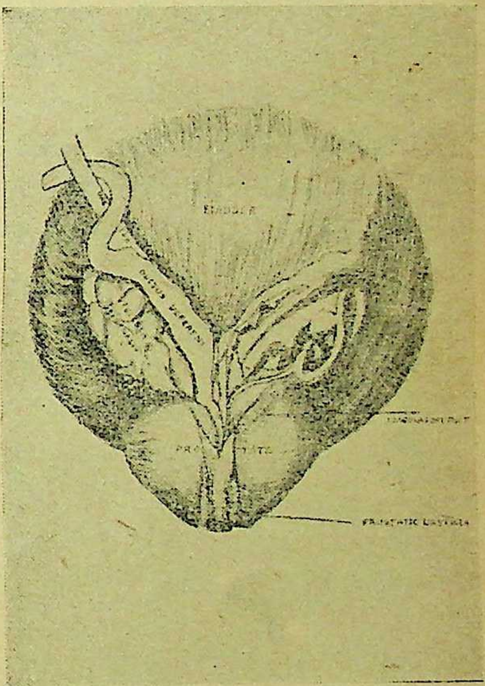

चित्र नं० १

'स्क्रोटम' (Scrotum) वह थैली है जिसमें वीर्य-कोष और शुक्र सम्बन्धी महीन तन्तु (Spermatic cords) के निचले हिस्से में रहते हैं। ये महीन तन्तु वीर्य-कोषों और डेफरेन्स की नली (Ducts of deferens) से सम्बन्ध रखने वाली धमनियों, शिराओं और स्नायुओं के बने होते हैं। ये पेड़ू से शुरू होते हैं और स्क्रोटम नामक थैली में वीर्य-कोषों से जुड़े रहते हैं।

'डेफरेन्स की नली' एपीडिडाइमिस का क्रम (Continuation) है। यह अपने उद्गम स्थान से

कुछ दूरी पर (तीसरे चित्र में नं० १) द्वारा दिखलाए हुए स्थान पर अपने तन्तु शेष के भाग से पृथक हो जाती है। फिर पीछे और नीचे की ओर जाकर मूत्राशय के संसर्ग में वीर्य को शुक्र के संचित होने की थैली (Vesicula seminalis) में उँड़ेल देती है (तीसरे चित्र में नं० २ द्वारा यह नली दिखलाई गई है जिसका अन्तिम हिस्सा दूसरे चित्र में दिखाया गया है)।

शुक्र के संचित होने की थैली मूत्राशय और मलाशय (Rectum) के बीच स्थित है। जैसा कि दूसरे चित्र में दिखाया गया है, दो थैलियाँ हैं--दोनों दो ओर। ये शुक्र या वीर्य के लिए कुण्ड का काम करते हैं, इन थैलियों के अन्दर प्रवाहित होकर आने पर यह जरूरी नहीं है कि वह अनिवार्यतः स्खलित हो जाय। इससे छुटकारा पाने का एक दूसरा तरीका भी है और वह है कि सिस्टम फिर से द्रव को सोखने के लिए वापस ले ले।

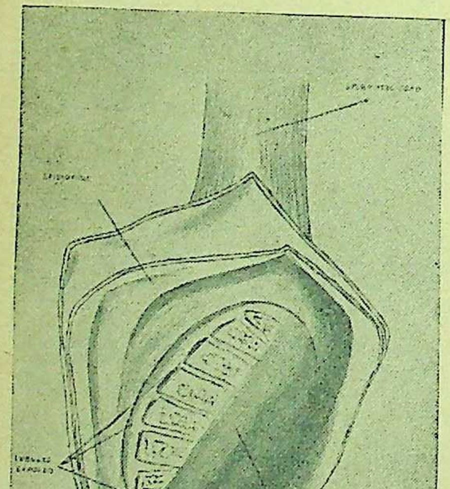

चित्र नं० २

'इजैकुलेटरी' (Ejaculatory duct)—निकाल फेंकने वाली नली, जैसी कि दूसरे चित्र में दिखलाई गई है, दाहिने व बाँयें दोनों ओर एक-एक होती है इनमें से 'वेसक्युलम सेमिनेलिस' के साथ 'डेफेरेन्स' की नली के अन्तिम भाग के मिलने से बनती है। ये दोनों नलिकाएँ मूत्रनली (Urethra) के उस हिस्से में खुलती हैं जो पतली दरार जैसे द्वारों के जरिए (Prostate gland) शिश्न की गिल्टी को पार करता है। ये द्वार सामान्यतया बन्द रहते हैं पर वीर्य-पात के समय खुल जाते हैं।

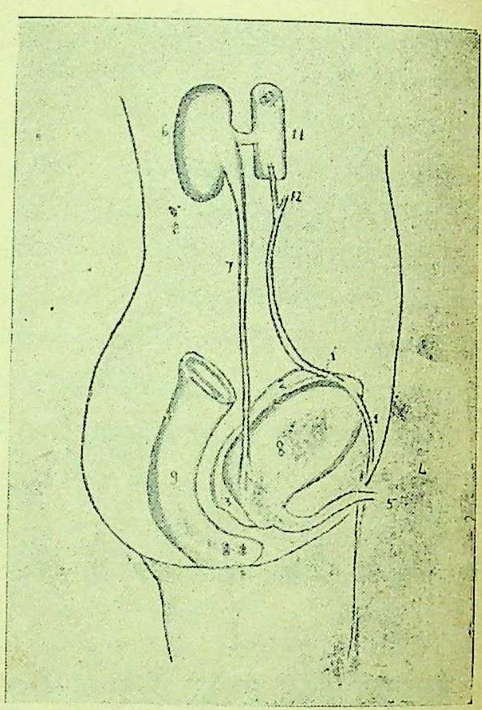

चित्र नं० ३

मूत्रनली से मूत्र और वीर्य दोनों निकलते हैं। तीसरे चित्र में नं० ४ और ५ की संख्याओं द्वारा मूत्रनली जननेन्द्रिय (Penis) की स्थिति दिखलाई गई है।

'प्रास्टेट' (शिश्न की गिल्टियाँ)---यह मूत्राशय के चारों ओर और मूत्र वाही नली जहाँ से शुरू होती है वहाँ पर फैली हुई है। इसमें दूध जैसा द्रव निकलता है जो वीर्यपात के समय मूत्र वाही नली में आ जाता है। संक्षेप में अब पाठकों को भलीभाँति स्पष्ट हो गया होगा कि वीर्य की उत्पत्ति वीर्य-कोषों (Testes) में होती है। यहाँ से यह पहले 'एपीडिडाइमिस' के जरिए से

होकर फिर डेफेरेन्स की नली होकर 'वेस्क्युलम सेमनलिस' में ले जाया जाता है। यहाँ पर यह द्रव उस समय तक संचित रहता है जब तक उसका 'इजैकुलेटरी नली' तथा मूत्रनली द्वारा स्राव नहीं हो जाता या वह फिर से सिस्टम में सोख नहीं लिया जाता।

वीर्यपात होने के कारण

वीर्यपात अथवा स्वप्नदोष व्याधि का रूप धारण कर लेने पर तो बहुत भयंकर हो जाता है। वीर्य ही सारे शरीर का पोषक होता है। इसलिए इसके सर्वनाश का कारण सम्पूर्ण स्नायु-प्रणाली से सम्बन्ध रखता है। जब शरीर की स्नायु-प्रणाली अत्यधिक दुर्बल हो जाती है तो शुक्र सम्बन्धी दौर्बल्य भी पैदा हो जाता है जिससे लिङ्ग सम्बन्धी अवयवों (Sex organs) में जरा-सी भी उत्तेजना होने पर वीर्य का स्राव होने लगता है। प्राकृतिक चिकित्सा में तो अधिकतर व्याधियों के मुख्यतः दो कारण माने जाते हैं—प्रतिदिन अस्वास्थ्यकर भोजन करना, तथा कोई व्यायाम न करना। पर वीर्यपात के विषय में एक कारण और भी आ जाता है और वह है मानसिक व्यभिचार और उत्तेजना तथा अशान्ति (यह व्यभिचार अभाग्यवश आजकल नवयुवकों व विद्यार्थियों में रात्रि में देखे हुए सिनेमा आदि के द्वारा पैदा होता है)। पर बहुधा अनेकानेक व्याधियों के मूल में प्रधानतः हमारा प्रतिदिन का आधुनिक 'अस्वास्थ्यकर' भोजन ही होता है। 'अस्वास्थ्यकर' भोजन कौन सा है और 'स्वास्थ्यकर' भोजन कैसा होता है इसको तो प्राकृतिक चिकित्सा की किसी भी विस्तार से लिखी पुस्तक से जाना जा सकता है। इसलिए इस पर यहाँ कुछ लिखना किञ्चित अप्रासंगिक होगा। पर इस विषय में पाठक यदि चाहें तो 'जीवन-सखा' कार्यालय से प्राप्त होने वाली तीन पुस्तकें—'आदर्श भोजन', 'क्या खाएँ और क्या न खाएँ' तथा हेरी बेन्जैमिन की पुस्तक 'Your Diet in Health and Disease' बहुत लाभ के साथ पढ़ सकते हैं। पर अस्वास्थ्यकर भोजन को एक शब्द या छोटी सी परिभाषा में इस प्रकार समझाया जा सकता है कि अस्वास्थ्यकर भोजन वह भोजन है जो प्रतिदिन हमारे पेट को पूरी तरह साफ नहीं करता और हमारे रक्त में सदैव क्षारता (Alkaline) व अम्लता (Acidity) के उचित व अनिवार्य अनुपात ८० : २० को स्थिर नहीं रख सकता। अधिकतर लोग प्रतिदिन घी, उत्तेजक मसाले, खूब भुना व तला हुआ, छिलका निकाला हुआ, मुलायम, चरपरा, भोजन करते हैं जिनमें अपने प्राकृतिक रूप में शाक व सब्जी तथा अत्यन्त गुणकारी व स्वास्थ्य-प्रद फलों का सर्वथा अभाव रहता है। फल यह होता है कि हमारा शरीर ऐसे भोजन को पूरी तरह से पचा कर और उसमें से शुद्ध रक्त बनाने लायक पोषक-तत्व ग्रहण कर शेष मल को जैसा चाहिए वैसा प्रतिदिन मलाशय से नहीं निकाल पाता जिससे कब्ज रहने लगता है। और कब्ज ९० प्रतिशत रोगों की नानी है। यह अब लोगों को सूर्य के प्रकाश की तरह धीरे धीरे स्पष्ट हो रहा है। प्रतिदिन थोड़ा थोड़ा कब्ज रहने से ऊपर बताया हुआ क्षारता व अम्लता का अनुपात हमारे रक्त में नहीं रहने पाता। रक्त दूषित होने लगता है अर्थात् उसमें अम्लता बहुत अधिक आ जाती है और एक दिन मनुष्य अपने को किसी न किसी रोग का शिकार पाता है। प्रतिदिन उत्तेजना व नशीली चीजों से व ऐसे भोजन करने से तथा दैनिक व्यायाम के अभाव में कब्ज धीरे धीरे बढ़ जाता है जिसका प्रभाव सारे स्नायु प्रणाली पर पड़ता है और उसमें क्रमशः दुर्बलता आती जाती है। और जरा सी भी काम के आलम्बन की भावना मात्र की उत्तेजना से सारी स्नायु-प्रणाली उत्तेजित हो उठती है, जिससे उपर्युक्त रीति से वीर्य-पात अवश्यम्भावी हो जाता है। पाठकों को यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि भोजन से ही शरीर को रक्त प्राप्त होता है और रक्त ही सारे स्नायुओं में दौड़ लगाता है तथा रक्त से ही वीर्य बनता है। इस तरह यदि रक्त यें अनावश्यक उत्तेजना

(उत्तेजक भोजन व मानसिक व्यभिचार से) न पैदा हो तो रक्त से वीर्य निकल कर वीर्यकोषों में कदापि नहीं आ सकता।

जब वीर्य रक्त में पूर्णतः घुला मिला रहेगा तब मनुष्य पूर्णतः स्वस्थ होगा। इस प्रकार संक्षेप में समझा जा सकता है कि स्नायुप्रणाली (जिसमें रक्त संचालित होता है) में अवांछित उत्तेजना तभी आती है जब रक्त ८० प्रतिशत क्षारमय नहीं होता। यदि रक्त में २० प्रतिशत से अधिक अम्लता न बढ़े तो अनावश्यक उत्तेजना हो ही नहीं सकती, तब फिर कामोत्तेजना भी न होगी। फलस्वरूप वीर्य-पात या स्वप्नदोष कोसों दूर रहेगा। यह अत्यधिक आवश्यक अनुपात तभी बिगड़ता है जब प्रतिदनि का भोजन कब्ज करने वाला उत्तेजक, नशीला व रक्त को दूषित करने वाला होता है।

स्वप्न दोष व वीर्यपात का उपचार

ऊपर के विवरण से किञ्चित आभास मिल सकता है कि ऐसी व्याधि से पीड़ित व्यक्तियों के लिए क्या उचित व उपयुक्त इलाज अथवा उपचार हो सकता है और होना चाहिए। इलाज के लिए अक्सर हमारे नवयुवक अनेकानेक विज्ञापनों में आकर्षक ढंग से प्रकाशित उत्तेजक व विषैली औषधियों का सेवन विवश हो किया करते हैं। पर वे सब व्यर्थ सावित होती हैं, क्योंकि व्याधियों का जो मूल कारण है (उचित भोजन की अव्यवस्था तथा व्यायाम का अभाव) उनको दूर करने में ये कभी भी सहायता नहीं करतीं। इसलिए उल्टे रोग की अवधि को ये केवल लम्बा कर देती हैं। इसके अलावा लोग अक्सर 'ब्रह्मचर्य' रखने को कहा करते हैं। पर ब्रह्मचर्य भी नहीं रक्खा जा सकता यदि भोजन में वांछित व स्वास्थ्यप्रद सुधार न किया गया। इसलिए उपचार में सर्व प्रथम तो यही आता है कि रोगी (स्वस्थ मनुष्य भी) अपने प्रतिदिन के भोजन में ऐसा सुधार करे कि उसको किसी प्रकार कब्ज न रहने पाये और यह तभी हो सकता है जब भोजन पूर्णतः सात्विक, सादा व अनुत्तेजक होगा। रोगी को नशीली चीजों——मांस, मदिरा व मादक द्रव्यों——का पूर्ण बहिष्कार कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त भोजन में शाक-सब्जियों का, उनके प्रकृत रूप में, और फलों का बहुत ज्यादा मात्रा में समावेश होना चाहिए। तरकारियों व शाकों को बहुत कम भूनना व उबालना चाहिए तथा उनमें बहुत ही कम मसाले डालना चाहिए। सफेद शक्कर का बहिष्कार कर किशमिश, अञ्जीर व शहद का प्रयोग करना चाहिए। आटा सदैव चोकर सहित व बिना छना हुआ तथा दाल साबूत व छिलके सहित इस्तेमाल करना चाहिए। इस प्रकार भोजन में सुधार करने से कब्ज कभी न रहेगा। कब्ज रहने पर मिट्टी की पट्टी का लेप व एनिमा का बेखटके उचित तरीके से प्रयोग करना चाहिए। खड़े चने के आटे की (बिना छना हुआ) रोटी खाना स्वप्नदोष में बहुत हितकर होगा। इसके अतिरिक्त रोगों की हालत में पेड़ूनहान व मेहनस्नान ('सिट्ज़ बाथ') बहुत लाभ के साथ लिए जा सकते हैं।

पर स्नायु-प्रणाली ठीक तरह से और पूरी तौर से अपनी सञ्चालन-क्रिया नहीं कर सकती यदि व्यक्ति कुछ न कुछ व्यायाम प्रतिदिन न करे। स्नायु-जाल को ठीक रखने के लिए यौगिक कसरतें (आसन) सर्वोत्तम हैं। वीर्यपात व स्वप्नदोष के रोगों में सर्वाङ्गासन, शीर्षासन व अङ्गुष्ठपाद आसन व उड्डियान बन्ध की क्रिया बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

शीर्षासन-सर्वाङ्गासन, स्वप्नदोष अथवा वीर्यपात के लिए किस प्रकार उपयोगी व उपचारात्मक सिद्ध हो सकता और होता है——इसको स्पष्ट करना यहाँ पर बहुत जरूरी होगा पर इसको पूरी तरह से समझने के लिए शरीर-रचना शास्त्र के कुछ सिद्धान्तों की ओर ध्यान देना होगा। जब रक्त हृदय से शुद्ध होकर निकलता है तो वह उन नलियों से होकर जाता है जिन्हें धमनियाँ (Arteries) कहते हैं। धमनियों की बहुत सी छोटी-बड़ी शाखाएँ होती हैं। सब शाखाओं से होता हुआ खून केशिकाओं (Capillaries) में आता है। ये

नलिकाएँ बाल जैसी पतली और बारीक होती हैं और इतनी काफी बड़ी होती हैं कि उनमें रक्त सामान्य मात्रा में अच्छी तरह दौड़ सके। पर यदि किसी कारणवश शरीर के किसी विशेष भाग में रक्त असाधारण मात्रा में खिंच आवे, तो उस भाग की केशिकाएँ बढ़ी हुई मात्रा के सञ्चालन के लिए फैल जाती हैं। यदि उकसाहट व उत्तेजना निरन्तर होती है या थोड़ी थोड़ी देर में बार बार होती है तो परिणाम भयानक होता है। ऐसा करने से केशिकाएँ हमेशा को विस्तृत व फूल जाया करती हैं और रक्त के सञ्चालन की गति धीमी पड़ जाती है। केशिकाओं के प्रसरण की हालत को, जिससे रक्त-प्रवाह रुक जाता है रुधिर सञ्चय (Congestion) कहते हैं जिससे यह प्रकट होता है कि रुधिर-सञ्चित (Congested) भागों में असाधारण मात्रा में रक्त जमा हो गया है। जिन अङ्गों और अवयवों में रुधिर-सञ्चय बहुत दिनों से होता रहता है उनके काम करने की शक्ति धीरे धीरे क्षीण हो जाती है और तनिक सी भी उत्तेजना मिलने पर वे बड़े जोरों से काम करने लगते हैं। काम सम्बन्धी ज्यादतियाँ (प्राकृतिक अथवा अप्राकृतिक) होने पर 'सेक्सुअल अपरेटस' में रुधिर-सञ्चय हो जाता है। बिना इच्छा-पूर्ति के बार बार की कामोत्तेजना शायद सबसे खराब चीज है जिससे आन्तरिक जननेन्द्रियों में रुधिर-सञ्चय हो जाता है। अतृप्त कामेच्छा से अवयव में सतत उत्तेजना बनी रहती है और यह केशिकाओं के प्रसरण को स्थाई बना देती है। इस प्रकार जिन इन्द्रियों व हिस्सों में रुधिर-सञ्चय हो जाता है वे अपने कार्य-शक्ति में धीरे धीरे दुर्बल हो जाते हैं और जरा सी भी कामोत्तेजना मिलने पर उनमें तीव्र गति से प्रतिक्रिया होती है। कामोत्तेजना में स्राव उसी समय सम्भव होता है जब कि बाहर निकाल फेंकने वाली नालियाँ (Ejaculatory ducts) खुलती हैं और वीर्य को निकलने देती हैं। जब तक इन नलियों के मुख द्वार (Orifices) बन्द रहते हैं तब तक स्राव हो ही नहीं सकता। अब जब जननेन्द्रिय का यही हिस्सा 'रुधिर सञ्चित' हो जाता है तो उसकी कार्य-क्षमता क्षीण हो जाती है और थोड़ी सी उत्तेजना पर इसमें जोरों से क्रिया होने लगती है। इस प्रकार जरा सी कामेच्छा स्राव के लिए काफी होती है। प्रदाह (Inflammation) के उपचार में यह माना हुआ सिद्धान्त है कि जिस अङ्ग में दाह होता है उसको हृदय से ऊपर उठा देना चाहिए। इस प्रकार करने से उस भाग में जो खून ज्यादा जमा हो गया था वह प्रवाहित हो जाता है, गुरुत्वाकर्षण-शक्ति से क्रिया में और भी तीव्र गति आ जाती है। प्रदाह रुधिर-सञ्चय (Congestion) का केवल बढ़ा हुआ रूप है। सो यदि ऊपर उठाने से प्रदाह में आराम मिलता है तो रुधिर-सञ्चय में अवश्य इससे मदद मिलनी चाहिए। ठीक यही सिद्धान्त शीर्षासन व सर्वाङ्गासन के करने में कार्य करता है इसीलिए ऐसी व्याधियों में ये बहुत उपयोगी हैं। आसनों के करने से जननेन्द्रिय की रक्त से खूब भरी हुई नालियाँ ऊपर उठ जायँगी (Elevated) जिससे उनमें अधिक रक्त बह जायगा, यदि इन मुद्राओं में प्रतिदिन काफी देर तक रहा जाय और यदि काफी लम्बे अरसे तक इनका अभ्यास किया जाय। जब रुधिर-सञ्चित अवयव इस प्रकार प्रतिदिन खाली हो जाया करेगा तो शिराएँ धीरे धीरे सिकुड़ने लगेंगी और कुछ महीनों के अभ्यास से जननेन्द्रिय क्रिया सामान्य ढङ्ग से होने लगेगी।

अंगुष्ठपाद आसन व उड्डियान भी वीर्यसम्बन्धी व्याधियों से मुक्त होने में काफी सहायक होंगे।

इस प्रकार स्वास्थ्य सम्बन्धी साधारण नियमों के पालन करने से (और सबसे बड़ा स्वास्थ्य सम्बन्धी साधारण नियम दैनिक भोजन के क्रम का है जिसे ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है) और उपर्युक्त यौगिक व्यायाम करने से मनुष्य केवल वीर्य-दोषों व रोगों से मुक्त ही नहीं बल्कि अपने को पुनः स्वस्थ, सबल, सशक्त, सतेज व कान्तिमय बना सकता है।

स्वरोदय विज्ञान

श्री श्यामसुन्दर कुँवर

पिछले लेख में लेखक ने स्वरोदय विज्ञान के महत्त्व पर प्रकाश डाला था। प्रस्तुत लेख में आपने बताया है कि किस नाड़ी के चलने पर किस तरह के कार्य किए जायँ तो उनमें सिद्धि मिल सकती है। इसके साथ ही आपने पंचतत्वों के स्वरूप और स्वरोदय विज्ञान से उनके सम्बन्ध पर भी विचार किया है।—सं०

यह पहले ही कहा जा चुका है कि इडा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों में अलग अलग कार्य करना चाहिए। इन कार्यों में से कुछ ऐसे भी हैं जिनको कैसे करना चाहिए यह भी जान लेना आवश्यक है। हम जो कुछ आवश्यक कार्य करते हैं, उनमें आजकल प्रायः उतनी सफलता नहीं मिलती। यदि वे कार्य अमुक निश्चित स्वर की उपस्थिति में किए जायँ तो पूर्णतया उनमें सफलता हासिल होती है। स्वरोदय शास्त्र का यह अंग सर्वसाधारण के लिए वहुत ही उपयोगी है।

वामस्वर (इडा) : जिस समय इडा नाड़ी से श्वास चलता हो उस समय स्थिर, सौम्य व शान्ति कर्म करना चाहिए। जैसे—पौष्टिक कर्म, मैत्रीकरण, प्रभुदर्शन, दिव्य (ऊँची) औषधिसेवन, रसायनकर्म, आभूषण पहिनना, नवीन वस्त्र धारण, विवाह, दान; आश्रम-प्रवेश, मकान बनवाना, जलाशय बनवाना, बाग-बगीचा लगाना, यज्ञ, बन्धु-बान्धव मित्रादि से मिलना, ग्राम या शहर बसाना, दूर गमन यदि दक्षिण या पश्चिम में जाना हो तो, पानी पीना, पेशाब करना, मन्दिर-प्रवेश, घर की वस्तुओं का संग्रह (संचय), अपने स्वामी का दर्शन, व्यापार, अन्न का संग्रह, सेवा, खेती, बीज बोना, सन्धि, गमन (बाहर जाना), विद्यारम्भ, मन्त्र की सिद्धि, काल की व्याधि की चिकित्सा, स्वामी का सम्बोधन (बुलाने), हाथी व घोड़े की सवारी, धनुष का धारण, हाथी व घोड़े का बाँधना, संगीत शास्त्र का विचार, तिलक-धारण, वृष्टि का आगमन, गुरु की पूजा और विष आदि का चालन (बाहर निकालना)। —इन कार्यों में चन्द्र नाड़ी उत्तम होती है और सिद्धिदायिनी बताई गई है।

दक्षिण स्वर (पिंगला) : जिस समय पिंगला नाड़ी चले उस समय कठिन, क्रूर और रुद्र कर्मों को करना चाहिए। जैसे : शस्त्राभ्यास, शास्त्राभ्यास दीक्षा आदि, संगीत का अभ्यास, सवारी, व्यायाम, नौकारोहण, यन्त्र-तन्त्र रचना, पहाड़ व किले पर चढ़ना, विषयभोग, युद्ध, पशु-पक्षी विक्रय, राजदर्शन, विवाद, किसी के समीप (मिलने) जाना, स्नान, भोजन, पत्रादि लेखन कार्य, कठिन और क्रूर मन्त्रों की साधना, वैरियों को विष देना, मृगया, ईंट, काठ, पत्थर, रत्न आदि का घिसना और तोड़ना, हाथी, घोड़ा, रथ इनको साधना वा चलाना, यक्षिणी, यक्ष, वैताल, विष, भूत आदि का निग्रह (रोकना), नदी के जलवेग के पार उतरना, ऊँट, गधा आदि की सवारी, लीपना-पोतना, साधारण-औषधि-ग्रहण, प्रेत का आकर्षण, शत्रु का निग्रह (दण्ड देना), तलवार, खड्ग को हाथ में लेना और शयन। इन कार्यों में सूर्य नाड़ी उत्तम और सिद्धि की दात्री कही गई है।

सुषुम्ना : सुषुम्ना के प्रवाह में मुक्ति फल के देने वाले कार्यों को करे। जैसे—ध्यान-धारणादि परमात्म-चिन्तन सम्बन्धी कार्य और योगाभ्यास। सुषुम्ना नाड़ी से श्वास चलने पर किसी को भी वर या

ाप प्रदान करने पर वह सफल होता है। चन्द्र और सूर्य नाड़ी में जो कार्य करना चाहिए वह कार्य सुषुम्ना की उपस्थिति में भूल कर भी नहीं करना चाहिए, अन्यथा विपरीत फल होगा क्योंकि सुषुम्ना नाड़ी ऐहिलौकिक कार्यों में दुष्टा मानी गई है।

प्राणवायु को सुषुम्ना में संचारित करने की विधि यह है—किसी एक नकसोरे को बन्द करके साधारण जोर से दूसरे नकसोरे से श्वास लीजिए और फिर शीघ्र ही बन्द नकसोरे के द्वारा श्वास छोड़िए। अब जिस नकसोरे के द्वारा श्वास छोड़ा है उसीसे साधारण जोर से श्वास लेकर दूसरे नकसोरे से, जिसे पहले अँगुली से बन्द कर दिया था, श्वास छोड़िए। इस प्रकार एक नकसोरे से श्वास लेकर और दूसरे से छोड़ने और फिर दूसरे से श्वास लेकर पहले से छोड़ने से लगभग ५० बार करने से प्राणवायु का सुषुम्ना में संचार हो जाता है।

योगाभ्यास किस नाड़ी से करना चाहिए इस विषय पर कुछ ज्यादा स्पष्ट करने की आवश्यकता है। साधारण योगाभ्यास जैसे आसन और जप आदि तो चन्द्र स्वर में करना चाहिए परन्तु कठोर यौगिक साधना जिसमें शरीर को कुछ कष्ट भी हो जैसे षटकर्म साधनादि ये सूर्य स्वर (पिंगला) की उपस्थिति में करनी चाहिए। और इससे भी ऊँचे यौगिक साधन जिनमें प्राणायाम और उससे आगे की अवस्थाएँ, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि सम्मिलित हैं, मनुष्य को सुषुम्ना नाड़ी में ही करनी चाहिए। इसका कारण भी है। सुषुम्ना में किया गया प्राणायाम सिद्धि का दाता होता है। जो नाड़ी शुद्धि के लिए घर्षण आदि क्रियाएँ की जाती हैं वे सब प्राणवायु का सुषुम्ना में संचार कराने के लिए भी की जाती हैं।

इसी प्रकार साधारण शान्त–सौम्य मन्त्रों की साधना तो चन्द्रस्वर में करनी चाहिए और क्रूर, रुद्र और कठिन मन्त्रों की साधना सूर्य स्वर में करनी चाहिए। और मन्त्रयोग जैसे मन्त्रों की ऊँची साधना जिनसे साधक को मुक्तिलाभ होता है सुषुम्ना में करनी चाहिए।

साधारण औषधि-सेवन हमेशा सूर्यस्वर में ही करना चाहिए पर यदि औषधियाँ दिव्य हैं तो चन्द्रस्वर उत्तम है।

सिर्फ बन्धु-बान्धव, मित्र और स्वामी आदि जो बहुत ही घनिष्ट हैं उनसे चन्द्रस्वर में मिलना चाहिए। अन्य सब लोगों से मिलने के लिए सूर्यस्वर होना चाहिए।

बाहर यात्रादि के लिए जाना तो कैसे जाना इस विषय में अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता है जिस पर एक अलग परिच्छेद में प्रकाश डालूँगा।

दान देना : यह कार्य हमेशा चन्द्रस्वर में ही किया जाता है। परन्तु "जब श्वास 'सकार' में स्थित हो (अर्थात् जब श्वास खींचकर अन्दर ले रहे हों) उस समय बाएँ पाँव को आगे बढ़ाकर दान देने से वह दान कोटि-गुना फल देता है।" ऐसा शिव जी का 'स्वरोदय' में वचन है।

स्वर के अनुसार ही नित्य कार्य करना चाहिए और जब रात दिन शुभ और अशुभ कार्य किए जायँ तब कार्य के अनुसार नाड़ी को चलावे।

चन्द्र, बुध, बृहस्पति और शुक्र इन वारों में चन्द्र (इडा) नाड़ी का अधिक महत्त्व रहता है और इसलिए इडा नाड़ी में करने योग्य कार्य इन वारों में विशेष फल देते हैं और ऐसा शुक्लपक्ष में होवे तो और भी विशेष फल होता है। परन्तु वार का महत्त्व पक्ष की अपेक्षा अधिक होता है इसलिए वार का ज्यादा ध्यान रखना चाहिए। मंगल, शनि और रवि इन वारों में सूर्यस्वर विशेष फलदायक होता है और ऐसा कृष्णपक्ष में होवे तो और भी अधिक लाभ होता है।

स्वरोदय के ज्ञान के साथ साथ पञ्चतत्वों का ज्ञान होना अनिवार्य है। पञ्चतत्वों के ज्ञान के बिना स्वरोदय की बहुत सी प्रक्रियाएँ न तो पूर्ण रूप से सिद्ध हो सकती हैं और न उनका पता ही चल सकता है। तत्त्वों के सम्बन्ध में एक विशेष बात जो कि सर्वदा स्मरण रहनी चाहिए, यह है कि स्वर के साथ साथ तत्त्व

भी विद्यमान रहते हैं। और जब तक स्वर एक नकसोरे से चलता रहता है, तब तक पाँचों तत्त्व क्रमशः एक-एक वार उदय होकर अपनी अपनी अवधि तक विद्यमान रहने के पश्चात् अस्त हो जाते हैं। यथा——

"वहेत्तावद् घटीमध्ये पञ्चतत्त्वानि निर्दिशेत् ।"
(स्वरशास्त्र)

"प्रतिदिन ६० घड़ियों में (ढाई-ढाई घड़ी के हिसाब से एक-एक नासिकारन्ध्र में) वायु, अग्नि या तेज, पृथ्वी, जल और आकाश तत्त्व का क्रमशः उदय होता है।" पञ्चतत्त्वों का स्वरोदय के साथ कैसे उदय होता है और उन्हें कैसे जाना जा सकता है इस विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिए यहाँ कुछ प्रक्रियाएँ दी जाती हैं——

(१) **श्वास की गति**——प्रत्येक तत्त्व के उदय में नकसोरे से चलते हुए श्वास की गति बदलती रहती है और वह इस प्रकार है : "मध्ये पृथ्वी ह्यधश्चापश्चोर्ध्वं वहति चा नलः। तिर्यग्वायुप्रचारश्च नभो वहति संक्रमे।"
(शिवस्वरोदय)

अर्थात् यदि नकसोरे के मध्य में श्वास चल रहा हो तो पृथ्वी, यदि नीचे की ओर से (अर्थात् ऊपर के होठ के बीच के भाग के पास का जो नकसोरे का कोना है वहाँ से) चल रहा हो तो जल, यदि ऊपर की ओर से चल रहा हो (अर्थात् दोनों नकसोरे नासिकाग्र के पास जहाँ मिलते हैं वहाँ से) तो अग्नि, यदि तिरछा अर्थात् एक ओर चल रहा हो तो वायु और यदि घूम घूम कर भँवर की तरह चल रहा हो तो आकाशतत्त्व का उदय समझना चाहिए।

(२) **आकार** : प्रत्येक तत्त्व की अपनी विशेष आकृतियाँ हैं——

"चतुरस्रं चार्द्धचन्द्रं त्रिकोणं वर्तुलं स्मृतम् ।
बिन्दभिस्तु नभो ज्ञेयमाकारैस्तत्त्वलक्षणम् ॥"

किसी एक निर्मल दर्पण को लेकर उस पर जोर से श्वास छोड़ने पर यदि चौकोन आकृति बने तो पृथ्वी, अर्धचन्द्राकार बने तो जल, त्रिकोण बने तो अग्नि, लम्बा-गोल बने तो वायु और बिन्दु-बिन्दु से दिखाई दें तो आकाश——इन तत्त्वों की उपस्थिति समझनी चाहिए।

(३) **स्थान** : प्रत्येक तत्त्व शरीर में विद्यमान भिन्न-भिन्न चक्रों में स्थित है——पृथ्वी तत्त्व मूलाधारचक्र में जो शरीर में योनि (गुदा) के पास सीवनी में सुषुम्ना के मुख से संलग्न है। जल तत्त्व स्वाधिष्ठान चक्र में जो पेड़ू अर्थात् लिङ्ग (जननेन्द्रिय) के मूल में स्थित है। तेज या अग्नि तत्त्व मणिपूरक चक्र में जो नाभि में स्थित है। वायु-तत्त्व अनाहत चक्र में जो हृदयप्रदेश में स्थित है। आकाश तत्त्व विशुद्ध चक्र में जो कण्ठ में स्थित है। इन चक्रों में ध्यान पूर्वक देखने से उस समय जो तत्त्व उदय होकर विद्यमान होगा, उसका शरीर पर विशेष प्रभाव हुआ होगा। इसके साथ ही जिस चक्र से श्वासोच्छ्वास करते समय श्वास उठता, ठहरता और छोड़ा जाता हुआ प्रतीत हो उसी चक्र के तत्त्व का उदय उस समय समझना चाहिए। परन्तु ऐसा ज्ञान होना कि श्वास इस चक्र से उठ रहा है यह कोई साधारण बात नहीं है। इसका ज्ञान बिना ईश्वर और सद्गुरु की कृपा के होना असम्भव सा ही है। हाँ, कभी-कभी ऐसा भान जरूर हो जाता है कि श्वास इस चक्र के स्थान से चल रहा है पर वह अधिकतर सच्चा नहीं होता है। जब ऐसा प्रतीत होवे तब अन्य प्रक्रियाओं की सहायता से अपने सन्देह का निराकरण कर लेना चाहिए।

(४) **रंग** : प्रत्येक तत्त्व का अपना-अपना खास रङ्ग होता है। जब-जब वह उदय होता है, तब-तब उस रङ्ग का विशेष प्रभाव रहता है। तत्त्वों के रंग तथा उसे देखने की रीति इस प्रकार है——

"आपः श्वेताः क्षितिः पीता रक्तवर्णो हुताशनः ।
मारुतो नीलजीमूत आकाशो भूरिवर्णकः ॥"

पद्मासन से षण्मुखी मुद्रा लगा कर अर्थात् दोनों हाथों के दोनों अँगूठों से दोनों कानों के छिद्र, दोनों तर्जनियों से दोनों आँखें, दोनों मध्यमाओं से दोनों नकसोरे तथा दोनों अनामिकाओं एवं कनिष्ठाओं से दोनों होठों के मेल (मुख के प्रान्त भाग) बन्द करके सम्पूर्ण वायु

का रेचन कर दे और फिर बाएँ नकसोरे से धीरे-धीरे श्वास को ग्रहण करे और फिर थोड़ी देर कुम्भक करके दाहिने नकसोरे से वायु को त्यागे। फिर दाहिने से पूरक करके कुम्भक करे और बाएँ से रेचक करे। इस प्रकार करने से यदि पीला रङ्ग नजर आवे तो पृथ्वी, श्वेत रङ्ग नजर आवे तो जल, लाल रङ्ग नजर आवे तो अग्नि, हरा या बादल का सा नीला वर्ण नजर आवे तो वायु तथा रङ्ग-बिरङ्ग अथवा काला रङ्ग नजर आवे तो आकाशतत्त्व की उपस्थिति समझनी चाहिए।

(५) **परिमाण** : (लम्बाई का माप) : प्रत्येक तत्त्व के उदय होने पर जिस प्रकार श्वास की गति में अन्तर पड़ जाता है, उसी तरह श्वास का प्रमाण भी बदल जाता है। तत्त्वों के परिमाण तथा उनके नापने की विधि इस प्रकार है—

"अष्टांगुलं वहेद्वायुरनलं चतुरंगुलम्।
द्वादशांगुलमाहेयं षोडशांगुलवारुणम्॥"

बारीक मींजी रूई अथवा किसी गत्ते पर अत्यन्त बारीक धूल लेकर उसे जिस नकसोरे से साँस चल रही हो उसके पास धीरे-धीरे ले जाओ। जहाँ पर पहले-पहल थोड़ी-थोड़ी रूई हिलने लगे या धूल उड़ने लगे वहाँ ठहर जाओ और उस दूरी को मापो। यदि वह दूरी १२ अंगुल है तो पृथ्वी, १६ अंगुल है तो जल, ४ अंगुल है तो अग्नि, ८ अंगुल है तो वायु तथा २० अंगुल है तो आकाश तत्त्व की उपस्थिति समझनी चाहिए। अभ्यास हो जाने पर सिर्फ अँगुलियों के द्वारा ही तत्त्वों के परिमाण का ज्ञान हो सकता है।

(६) **स्वाद** : प्रत्येक तत्त्व का अपना-अपना विशेष स्वाद होता है। यह स्वाद उस-उस तत्त्व की उपस्थिति में जीभ द्वारा अनुभव किया जा सकता है। यथा—

'माहेयं मधुरं स्वादु कषायं जलमेव च।
तिक्तं तेजो वायुरम्ल आकाशः कटुकस्तथा॥"
(शिव स्वरोदय)

अर्थात् यदि मुख में मीठा स्वाद जान पड़े तो पृथ्वी, कसैला (या खारा) स्वाद जान पड़े तो जल, तीखा स्वाद जान पड़े तो अग्नि, खट्टा स्वाद जान पड़े तो वायु और कड़वा स्वाद जान पड़े तो आकाश तत्त्व की उपस्थिति समझनी चाहिए।

(७) **उदयकाल** : जिस-जिस नासिकारन्ध्र से श्वास का प्रवाह होता है उसमें साधारणतया पहले वायु, फिर अग्नि, तृतीय बार पृथ्वी, फिर जल और अन्त में आकाश तत्त्व का क्रमशः ८, १२, २०, १६ और ४ मिनट तक क्रमवार उदय होता है। परन्तु कई बार ऐसा कारणवश नहीं भी होता है। इस परिच्छेद के द्वारा साधारणतया तत्त्वों के विद्यमान रहने की जो अवधि है वह भी समझ में आ गई होगी। तत्त्वों के विद्यमान रहने की अवधि भी नियमानुकूल है।

तत्त्वों के पहचानने के लिए विभिन्न चक्रों में जो ध्यान किए जाते हैं उनका पूर्ण विवरण देने का प्रयत्न आगे किसी लेख में करूँगा।

स्वरोदय-विज्ञान में तत्त्वों का ज्ञान ही मुख्य है। इस कारण प्रत्येक स्वरशास्त्रप्रेमी को इसका ज्ञान प्राप्त करना अत्यावश्यक है। पर इसका ज्ञान प्राप्त करना अति दुष्कर है। हाँ, ईश्वर की कृपा और स्वरज्ञ गुरु के मिलने पर वह अति सरल भी हो जाता है। आकार-भेद से तत्त्वों के ज्ञान का वर्णन जो किया गया है उसमें दर्पण पर शुरू-शुरू में एक लम्बा अण्डाकार सा और अंग्रेजी के भद्दे आठ (8) से मिलता-जुलता एक आकार सा प्रतीत होता है—ध्यान रहे दर्पण पर आकार बनने पर वे शीघ्र ही विलीन हो जाते हैं इसलिए उन्हें शीघ्र ही देखना चाहिए—फिर कभी त्रिकोण-सा भी आकार प्रतीत होता है और इस प्रकार साधक भ्रम में पड़ सकता है। पर सतत प्रयत्न करने के बाद तत्त्वों के आकार स्पष्ट रूप से प्रतीत होने लगते हैं।

तत्त्वों के स्थान के जो चक्र हैं उनका विवरण भी अन्य लेख में दिया जावेगा और इन चक्रों का वर्णन पाठकों को अन्यत्र भी पढ़ लेना चाहिए। चक्रों में ध्यान करने से तत्त्वों का ज्ञान सरल हो जाता है।

रङ्ग द्वारा तत्त्व पहचानने के लिए षण्मुखी मुद्रा

का प्रयोग करना पड़ता है। इस मुद्रा के करने के समय बहुत सावधानी रखनी चाहिए और रेचक बहुत धीरे-धीरे होना चाहिए। पहले कुछ दिनों तक तो रङ्ग नजर नहीं आते हैं पर थोड़े दिनों के अभ्यास के बाद ही भिन्न-भिन्न रङ्ग कुम्भक के समय नजर आते हैं।

स्वरोदय का ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक को जल्दी नहीं करना चाहिए। शीघ्र ही ज्ञान प्राप्त होना कठिन है। इसमें तो रोज प्रक्रियाओं के द्वारा तत्त्व को पहचानने का प्रयत्न करना चाहिए। एक महापुरुष ने यह उपदेश मुझे दिया था—"जब सोकर उठो तब देखो कौनसा स्वर चल रहा है। उस स्वर के साथ कौनसा तत्त्व बह रहा है। क्या उस तत्त्व के साथ किसी दूसरे तत्त्व का संयोग भी है। बाहर दृष्टि डालकर देखो भिन्न-भिन्न तत्त्वों की उपस्थिति में प्रत्येक वस्तु पर उन उन तत्त्वों के रङ्ग की झाँईं तुम्हें दिखाई देगी—यथा पृथ्वीतत्त्व में प्रत्येक वस्तु में तुम्हें पीलेपन की झाँईं सी प्रतीत होगी आदि। जब-जब हो सके देखो तुम्हारा श्वास किस ओर चल रहा है और उसकी लम्बाई का क्या परिमाण है।—इस प्रकार नित्य करने से तुम स्वरोदय-ज्ञाता हो जाओगे।

कभी-कभी एक तत्त्व के साथ दूसरे तत्त्व का संयोग भी हो सकता है। यथा—यदि श्वास का परिमाण १२ अंगुल है और यदि वह नकसोरे के मध्य में न चल कर तिरछा (एक ओर से) चल रहा हो तो पृथ्वी और वायु तत्त्वों का संक्रम चल रहा है ऐसा समझना चाहिए। परन्तु यदि दो से अधिक तत्त्वों का संयोग हो तो उस समय आकाश तत्त्व की उपस्थिति मानी गई है। जब तत्त्वों का थोड़ा-थोड़ा ज्ञान हो जावे तब लाख के पाँच गोल या चौकोर टुकड़ों पर तत्त्वों के भिन्न-भिन्न रङ्गों को पोत देना चाहिए। एक टुकड़े पर सफेद, दूसरे पर लाल, तीसरे पर पीला, चौथे पर हरा और पाँचवें पर काला—इस तरह रङ्ग पोत कर उन टुकड़ों को श्री शिव जी को सादर सर्मापित कर विधिवत् अपने खीसे में रखना चाहिए और खीसे में हाथ डालने पर जिस रङ्ग का टुकड़ा हाथ से बाहर निकाला जावे उसी रङ्ग के तत्त्व की उपस्थिति समझनी चाहिए। पर ध्यान रहे कि यह बाद की अवस्था है।

सुषुम्ना में केवल आकाश तत्त्व बहता है। अन्य तत्त्व इस नाड़ी से श्वास का संचार होने पर नहीं उदय होते हैं।

जो-जो कार्य इडा और पिंगला के संचार के समय करने योग्य ऊपर बताए गए थे वे पृथ्वी या जल या दोनों तत्त्वों की उपस्थिति में ही करने चाहिए। एक ऐसा भी पक्ष है कि इडा के प्रवाह में अग्नि तत्त्व की उपस्थिति में भी और पिंगला के प्रवाह में वायु और अग्नि इन तत्त्वों की उपस्थिति में भी ऊपर निर्दिष्ट कार्य किए जा सकते हैं। परन्तु पृथ्वी और जल ये दोनों तत्त्व विशेष फलदायक हैं। और आकाश तत्त्व की उपस्थिति में योगाभ्यास के सिवा कभी भी कोई कार्य न करे अन्यथा विपरीत फल होगा।

(क्रमशः)

नेत्र-चिकित्सा सम्बन्धी मेरे अनुभव

डा० आर० एस० अग्रवाल, नेत्र-विशेषज्ञ

डा० आर० एस० अग्रवाल से 'जीवन सखा' के पाठक अच्छी तरह परिचित हो चुके हैं। आप नेत्र-चिकित्सा के एक अनुभवी विशेषज्ञ हैं। आपने अपने इस चिकित्सा के सम्बन्ध के अनुभवों को धारावाहिक रूप में प्रकाशित करने का विचार किया है। प्रस्तुत लेख में आपने बताया है कि दृष्टि-शक्ति की क्षीणता का इलाज ऐनक नहीं है। आशा है, पाठकों के लिए डा० अग्रवाल के अनुभव बड़े उपयोगी सिद्ध होंगे।—सं०

आम तौर से खयाल किया जाता है कि कमजोर दृष्टि का इलाज ऐनक के सिवा और कुछ भी नहीं। आजकल करीब करीब हर एक व्यक्ति अपनी जिन्दगी में कभी न कभी कुछ न कुछ दृष्टि की कमजोरी की शिकायत करता है और रोगी की चाहे इच्छा हो या न हो डाक्टर ऐनक तजवीज कर देता है और साथ-साथ कह देता है कि कमजोर दृष्टि की दवा केवल ऐनक है इसके लगाने से दृष्टि आगे कमजोर नहीं होगी। परन्तु कुछ ही दिनों में ही रोगी को यह पता लग जाता है कि अब ऐनक से पहले जैसा साफ नहीं दिखाई देता। वह समझता है कि शायद दृष्टि और कमजोर हो गई है। वह फिर डाक्टर के पास जाता है और अपनी दृष्टि कम होने की कहानी बयान करता है। वह डाक्टर जिसने पहले ऐनक तजवीज की थी अपनी पहली कही बात की उपेक्षा करता है और फिर दूसरी ऐनक तजवीज कर देता है।

इस तरह ऐनक लगाने से आँखें खराब होती ही रहती हैं। बहुत से रोगी एक ऐसी स्थिति में आ जाते हैं जब कि कोई भी ऐनक 'फिट' नहीं होती और डाक्टर से उसको जवाब मिल जाता है और बेचारा मरीज अपनी जिन्दगी के दिन योंही अँधेरे में गुजारता है।

यदि डाक्टरों से यह सवाल किया जाता है कि आजकल इतनी ज्यादा कमजोर दृष्टि की शिकायत क्यों हैं तो जवाब मिलता है कि पुराने जमाने में लोग लिखने, पढ़ने, सीने, सिनेमा, बिजली इत्यादि में अपनी आँखें इस्तेमाल नहीं किया करते थे। ईश्वर ने आँखें सिर्फ़ दूर की चीजें देखने को बनाई थीं और ईश्वर ने यह एक बड़ी गलती की है कि आँख बनाते समय उन्होंने यह नहीं सोचा कि मानव-जाति को बारीक अक्षर पढ़ने, सिनेमा, बिजली इत्यादि में भी आँखें इस्तेमाल करनी पड़ेंगी।

परन्तु ऐसा सोचना और ईश्वरीय कार्य में गलती निकालना भला नहीं लगता। ईश्वर के कार्य बड़े पूर्ण हैं उनमें कहीं भी त्रुटि नहीं मिल सकेगी। ईश्वर खास तौर से कभी किसी ऐसे अंग के बनाने में गलती नहीं कर सकते थे।

पुराने जमाने की बनिस्बत आजकल के सभ्य जीवन में आँखें कमजोर होने की शिकायत तो जरूर बहुत ज्यादा पाई जाती है परन्तु इसका कारण उनका त्रुटिपूर्ण (Imperfect) निर्माण नहीं बल्कि आजकल की सभ्यता के जमाने में आँखों की क्रिया का त्रुटिपूर्ण होना है। इस विषय पर हम आगे चलकर विचार करेंगे। अमेरिका, जर्मनी, इंगलैण्ड ने इस बात के लिए बहुत धन खर्च किया है कि किसी तरकीब से मुल्क में कमजोर दृष्टि का बढ़ना रुक जाय, परन्तु सब कोशिशें बेकार रही हैं। बड़े बड़े डाक्टरों ने लिखा है कि ऐनक से यदि कुछ फायदा है तो बहुत जरा सा। हम ऐनक से रोग की प्रगति भी नहीं रोक सकते और जितने तरीके हमारे पास हैं, वह दृष्टि-शक्ति की क्षीणता रोकने में

या कमजोर दृष्टि की वजह से आगे चल कर जो अन्धा कर देने वाली भयानक बीमारी पैदा हो जाती है उनको रोकने में बिलकुल असमर्थ हैं।

अमेरिका के डाक्टर डब्लू० एच० बेट्स (Dr. W. H. Bates) को जल्दी ही यह ज्ञान हो गया था कि ऐनक कमजोर दृष्टि को ठीक करने की दवा नहीं है, इससे रोग नहीं जाता है बल्कि बढ़ता ही जाता है। वह कोई तरकीब सोचा करते। इस विषयपर उन्होंने बहुत सी पुस्तकें भी पढ़ीं; परन्तु ऐनक के सिवाय कुछ और दवा नहीं मिली। Dr. Bates ने सच्ची औषधि की खोज करनी शुरू की और बच्चों और छात्रों की आँखें देखने और बार बार उनकी परीक्षा करने में बड़ा परिश्रम किया और आहिस्ता आहिस्ता उन्हें कुछ सत्य की झलक मिलने लगी। फिर बड़े आदमियों, जानवरों के सम्बन्ध में अनुसन्धान करना शुरू किया और इस तरह ३० साल की मेहनत के बाद सच्ची औषधि की खोज करके जनता के सामने रख दी और साबित कर दिया कि आजकल के सभ्य-जीवन में नेत्रों का कमजोर न होना या कमजोर दृष्टि का ठीक हो जाना बिल्कुल सम्भव है। उन्होंने कुछ सरल नेत्र व्यायाम बतलाये हैं और ऐसा मालूम होता है कि वे प्राचीन भारतीय व्यायामों के तौर पर ही हैं। उदाहरण के लिए, डा० बेट्स कहते हैं कि सुबह को सूर्य की ओर मुँह करके बैठने से नेत्र की ज्योति बढ़ती है और वह इस तरकीव से १० मिनट में अनेक रोगियों की दृष्टि बढ़ सकती है। यही चीज भारत की प्राचीन सभ्यता थी।

अपनी एलोपैथी डिग्री लेने के बाद और नेत्र-विज्ञान के विशेषज्ञ हो जाने के पश्चात् मैं भी अन्य डाक्टरों की तरह अँधेरे में ही था और कमजोर दृष्टि के वास्ते ऐनक तजवीज करने के सिवाय और कोई दवा नहीं जानता था। खुद भी ऐनक नौ साल से लगाता रहा और घर वालों, दोस्तों, रिश्तेदारों के परिवारों में ऐनकों का खूब प्रचार करता था। परन्तु अनेक बार यह देखता था कि बहुत से रोगियों की ऐनक बदलनी पड़ती थी, बहुतों को ऐनक लगाने से नेत्रों और मस्तिष्क में पीड़ा हुआ करती थी। रोगी की शिकायत सुनकर किसी प्रकार उसको सन्तोष दे देता। साथ साथ अन्दर दिल में यह खोज रहती कि कोई तरकीव हाथ आनी चाहिए जिससे ऐनक की बीमारी कम हो। प्रैक्टिस शुरू करने के दो साल बाद डा० बेट्स की किताब हाथ लगी। उसे पढ़ने पर यह विश्वास न होता था कि ऐनक के सिवाय और भी कोई इलाज हो सकता है परन्तु एक आवाज अन्दर से आई कि तुझे यह किताब पढ़नी चाहिए और कुछ नई बात भी सीखनी चाहिए। पढ़ना शुरू किया। एक विद्यार्थी बाईं आँख से जन्म से अन्धा था। प्रयोगों का उस पर अमल भी साथ साथ किया। विद्यार्थी की आँख में अच्छी आँख जैसी रोशनी डेढ़ मास में आ गई। अब तो हिम्मत बढ़ गई और खूब दिलचस्पी आने लगी। अपनी भी ऐनक एक मास में अलग कर दी। थोड़े ही दिन बाद एक और विद्यार्थी आया वह दाईं आँख से अन्धा था। उस पर भी इलाज शुरू किया। ईश्वर की कृपा से उसने तो दो घंटे के इलाज में ही पूर्ण रोशनी ग्रहण कर ली। अब तो डा० बेट्स की और पुस्तकें मँगा कर पढ़ने का शौक हुआ। धीरे धीरे स्कूलों में जाना, विद्यार्थियों की आँखों की परीक्षा करना, लेक्चर देना शुरू किया। अनुभव बढ़ता गया। एक रोज एक महात्मा जी से भेंट हुई। डा० बेट्स के प्रयोगों के विषय पर बात चल पड़ी। वह कहने लगे कि मेरे पास चक्षु-व्यायाम का चार्ट है वह काश्मीर में जमीन के अन्दर से भोजपत्र पर मिला था। वह मुझे अपने स्थान पर दिखलाने ले गए और उस चार्ट में जो बताया गया था उसका सविस्तर वर्णन करने लगे। मैं चकित रह गया कि डा० बेट्स भी यही बातें लिखते हैं। यह चार्ट आगे हम देंगे।

अब १४ वर्ष की प्रैक्टिस से पूर्ण विश्वास हो गया है कि डा० बेट्स के इलाज के तरीके ही जनता को नेत्र रोग से बचा सकते हैं।

(क्रमशः)

मानसोपचार

श्री आनन्दप्रिय

कुछ रोग ऐसे हैं जो समुचित आहार और आवश्यक व्यायाम तथा अन्य साधारण प्राकृतिक उपायों से दूर किए जा सकते हैं, किन्तु दूसरी ओर कुछ रोग ऐसे भी होते हैं जिनका सम्बन्ध शरीर से न होकर मानसिक स्थिति से होता है। इसलिए उन रोगों के दूर करने के लिए शारीरिक उपचार की अपेक्षा मानसोपचार की आवश्यकता होती है। इस लेख में मानसोपचार के महत्त्व का वर्णन है। प्रस्तुत विषय मनोवैज्ञानिक होने के कारण उपयोगी होने के साथ ही रोचक भी है।—सं०

'जीवन सखा' के पाठक इस बात से परिचित हो चुके हैं कि स्वास्थ्य के तीन पहलू हैं—(१) आध्यात्मिक स्वास्थ्य, (२) मानसिक स्वास्थ्य और (३) शारीरिक स्वास्थ्य। इसलिए इन तीनों पहलुओं के ठीक हालत में रहने पर ही हम किसी को पूर्ण स्वस्थ कह सकते हैं।

शारीरिक स्वास्थ्य का प्रत्यक्ष सम्बन्ध भोजन और व्यायाम से है। हम भोजन में सुधार और आवश्यक व्यायाम के द्वारा शरीर के किसी भी विकार या रोग को दूर कर सकते हैं। लेकिन हमारे स्वास्थ्य के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं। शरीर पर प्रभाव पड़ता है भोजन का और भोजन पर मन का। इसलिए यदि मन की स्थिति ठीक नहीं है, यदि वह विकारयुक्त है तो वह भोजन शरीर को कभी लाभ नहीं पहुँचा सकता। इसी प्रकार कुछ रोग ऐसे हैं जिनका निवारण आहार से हो सकता है तो कुछ रोग ऐसे भी हैं जिन्हें दूर करने के लिए रोगी की मानसिक स्थिति में सुधार की आवश्यकता होती है। इसी को मानसोपचार कहते हैं। मानसोपचार का यह नाम भले ही किसी को एकदम नया लगे लेकिन यह उपचार नया नहीं है। हमारे यहाँ बहुत प्राचीन समय से ही मानसिक स्थिति को विशेष महत्त्व दिया जाता रहा है। भारतीय संस्कृति की यह एक खास और निजी विशेषता रही है। लेकिन वर्तमान राजनीतिक परतन्त्रता ने हमें मानसिक परतन्त्रता में भी डाल दिया है। पश्चिमी देशों से उठने वाली सभी आवाजें हमें नयी मालूम होती हैं और उनमें हमारा विशेष आकर्षण होता है। पर वही बातें अगर हमारे ही देश का कोई मामूली व्यक्ति कहे तो साधारणतः वह उपहास का विषय बनता है।

हाँ, तो एक सफल चिकित्सक के लिए उपचार के समय रोगी की शारीरिक स्थिति के अलावा उसकी मानसिक स्थिति पर ध्यान देना भी समान रूप से आवश्यक है। इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। कभी कभी तो ऐसे रोगी चिकित्सकों के पास आते हैं जो वस्तुतः किसी भी शारीरिक व्याधि से पीड़ित नहीं रहते, उन्हें सिर्फ वहम की बीमारी रहती है। कुछ को अपनी व्यक्तिगत या पारिवारिक चिन्ताएँ, अप्रकट आशंकाएँ आदि ही नाना प्रकार के रोगों के रूप में देख पड़ती हैं; और अगर उनकी यह मानसिक विषम स्थिति अधिक दिनों तक जारी रहे तो वे सचमुच भयानक रोग-ग्रस्त बन जाते हैं।

यह मानसिक रोग अथवा वहम होता किस प्रकार का है, इसका एक उदाहरण देता हूँ। बात बहुत पुरानी है, लेकिन है बिल्कुल सत्य। उन दिनों एलोपैथिक या होमियोपैथिक डाक्टरों का आजकल का-सा आविर्भाव नहीं हुआ था। अक्सर लोग रोगों से मुक्ति पाने के लिए

जड़ी-बूटी का सेवन कराने वाले वैद्यों अथवा यंत्र-मंत्र करने वालों के ही पास जाया करते थे। एक बार एक लाला जी को अजीब बीमारी हुई। वह सोते समय एकाएक जोर से चीख उठते—"साँप, साँप, वह देखो मुझे काटने आ रहा है।"

पहले तो लोगों ने उनके इस मिथ्या भय को समझा-बुझाकर ही दूर कर देना चाहा। कुछ लोगों ने लाला जी का मजाक करना भी शुरू किया। लेकिन उन पर इन सब का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उनकी हालत दिन प्रतिदिन बिगड़ने लगी। घर वाले परेशान। किसी को कोई उपाय ही नहीं सूझता था। लाला जी के लिए एक घंटे भी नींद नसीब होना कठिन हो गया। नींद न आने का उनके शरीर पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। वे सचमुच रोग-ग्रस्त हो गए और ऐसा जान पड़ा कि अब वे अधिक दिन तक जीवित न रह सकेंगे।

उनकी इस बीमारी के सिलसिले में झाड़-फूँक, यंत्र-मंत्र करने वालों की खूब बन आई। मनमाना पैसे वसूल किए; पर लाला जी को लाभ कुछ भी न हुआ।

उन दिनों गोरखपुर में श्री गुप्तार पंडित बड़े चलते-पुरजे के वैद्य थे। अदने लोगों से लेकर सेठ साहूकारों, रईसों तथा अंग्रेज अफसरों तक उन्होंने काफी अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी। लेकिन सच बात तो यह थी कि पंडित जी केवल दवाइयों पर ही निर्भर नहीं करते थे। उनकी बुद्धि असाधारण रूप से प्रखर थी। इसलिए वे वैद्यक की पुस्तकों में रोग के बताए गए निदानों का अन्ध अनुसरण नहीं करते थे। वे रोगी की प्रत्येक बात पर गौर करते और उसी के अनुसार कार्य करते। उनकी सूझ कितनी जबरदस्त थी इसका एक उदाहरण देकर मैं लाला जी का किस्सा सुनाऊँगा।

एक बार श्री गुप्तार पंडित शहर में किसी काम से जा रहे थे। एक जगह उन्होंने देखा कि खासी भीड़ लगी है और वहाँ समवेत स्वर से करुण-क्रन्दन गूँज रहा है। इतने में एक व्यक्ति ने आकर पंडित जी के पैर पकड़ लिए। 'पंडित जी मेरे एक ही बच्चा है, मर रहा है, उसके प्राण बचाइए।'—कहते कहते वह रो पड़ा। पंडित जी उस व्यक्ति को अच्छी तरह से जानते थे। वह शहर का मशहूर व्यापारी था। उसके यहाँ तम्बाकू, खमीरा आदि तैयार होते जिसकी बदौलत वह काफी मालदार बन गया था। पंडित जी ने उस लड़के को देखा, वह मृत प्राय हो रहा था, पेट फूल गया था। पास में बैठे हुए प्रसिद्ध एलोपैथिक डाक्टर यह घोषित कर चुके थे कि लड़के की जान बचना मुश्किल है। सावधानी के साथ कुछ क्षण तक निरीक्षण करने के बाद पंडित जी ने कहा—इसे एक मैनफल रगड़कर पिला दो, अभी यह चंगा हो जायगा। पास बैठे हुए डाक्टर तड़प उठे—क्या आप इसे उल्टी कराएँगे? तब तो यह आध घंटे भी जीवित न रहेगा। पंडित जी ने उस व्यापारी से कहा—मैंने दवा बता दी। अगर तुम करोगे तो यह लड़का अच्छा हो जायगा, नहीं तो इन डाक्टर साहब के सामने ही यह आध घंटे के भीतर चल बसेगा। व्यापारी ने पंडित जी की बात मान ली। उसे मैनफल पिला दिया गया। उसके पिलाते ही लड़के ने उल्टी की और उसकी हलक से सुरती का एक छोटा सा टुकड़ा बाहर आ गिरा। लड़के ने आँखें खोल दीं। डाक्टर साहब पानी-पानी हो गए। व्यापारी ने प्रसन्न होकर पंडित जी के चरणों पर रुपए की थैली अर्पित की। पंडित जी आगे बढ़े। रास्ते में उनके एक साथी ने पूछा कि भाई, आपने यह कैसे समझ लिया कि वह लड़का सुरती का टुकड़ा निगल गया है। इस पर उन्होंने कहा इसमें आश्चर्य करने की बात ही क्या है। उसका बाप सुरती का कारबार करता है। चारों तरफ सुरती की गाँठ पड़ी हैं। मैं समझ गया कि उसने सुरती का एक टुकड़ा खा लिया है।

उन्हीं श्री गुप्तार पंडित के पास अन्त में लाला जी को भी लाया गया। पंडित जी ने उनका निरीक्षण किया। लाला जी से प्रश्न भी किए। लाला जी कहने लगे—सोते समय मैं देखता हूँ कि एक साँप मुझे काटने दौड़ रहा है। पर ये लोग मेरी बात नहीं मानते। उल्टे मेरा मजाक उड़ाते हैं। पंडित जी को बातें समझने में

देर न लगी। उन्होंने कहा—अच्छा आज मैं आपके यहाँ आऊँगा और रात में यह देखूँगा कि वह साँप कैसे बच निकलता है। यह कहकर उन्होंने लाला जी को विदा किया।

इधर उन्होंने कुछ लोगों से पानी के अन्दर रहने वाला एक बड़ा-सा साँप, जो विषैला नहीं होता, पकड़ लाने को कहा। साँप आ जाने पर वह लाला जी के मकान पर पहुँचे और लाला जी के अनजाने में उस साँप को उनके चारपाई के समीप एक टोकरे के नीचे ढँक कर रखवा दिया। उन्होंने लाला जी से कहा कि आप रात में बेखटके सोइए। साँप आएगा तो मैं देख लूँगा। किसी तरह लाला जी सोये—लेकिन सोने के दो तीन घंटे बाद ही वह चीख उठे—"साँप, साँप।" पंडित जी ने टोकरी हटा दी और कहा—हाँ, यह देखिए यही है वह साँप। लोग तैनात तो पहले से ही कर दिए गए थे। वह साँप मार डाला गया। इसके बाद उन्होंने लाला जी से कहा—आपने देखा न, वह साँप मार डाला गया। अब आपको डरने की कोई ज़रूरत नहीं, बेधड़क सोइए। कहना न होगा कि उस रात लाला जी को बहुत समय के बाद पूरी नींद आई। उन्होंने स्वप्न में फिर कभी नहीं साँप देखा और कुछ ही दिनों में बिल्कुल स्वस्थ हो गए।

मानसिक रोगों अथवा वहम के इस तरह के अन्य कई उदाहरण दिए जा सकते हैं। ऐसे रोगी प्रायः अज्ञात आशंका, भय, चिन्ता आदि मनोभावनाओं का शिकार रहते हैं। इसके लिए चिकित्सक को सावधानी के साथ ही अपनी सहज बुद्धि से भी काम लेना अच्छा होगा। अगर रोगी को कोई वहम है तो यह समझ लेना चाहिए कि कोई अन्य व्यक्ति अपनी तर्कपूर्ण दलील या उपदेश से उसे लाभ नहीं पहुँचा सकता। इसके पहले तो उसे रोगी को यह विश्वास दिला देना होगा कि वह उसके प्रति गहरी सहानुभूति रखता है और यह कि रोगी अपने बारे में जो ख्याल करता है वह ठीक है। इतना हो जाने के बाद चिकित्सक को चाहिए कि वह अप्रत्यक्ष रूप से रोगी के मानसिक प्रवाह की गति को बदल दे। फिर रोगी अपने आप सुधरने लगेगा। मनोरंजन अथवा दिलबस्तगी के उपाय इस दिशा में अपना विशेष महत्त्व रखते हैं।

* * *

एक अंग्रेज लेखक का कथन है, कि नीरोग उन्हीं मनुष्यों को कहना चाहिए जिनके शुद्ध शरीर में शुद्ध मन का वास हो। मनुष्य केवल शरीर तो नहीं है, शरीर तो उसके रहने की जगह है। शरीर, मन, और इन्द्रियों का ऐसा घना सम्बन्ध है कि इनमें किसी एक के बिगड़ने पर बाकी के बिगड़ने में जरा भी देर नहीं लगती। शरीर की उपमा गुलाब के फूल के साथ दी गई है। गुलाब के फूल का ऊपरी भाग तो उसका शरीर है और सुगन्धि उसकी आत्मा। कागज के गुलाब को कोई पसन्द नहीं करता। जैसे गुलाब के समान दिखाई पड़ने वाले गन्धहीन फूलों को लोग फेंक देते हैं वैसे ही ऐसे शरीर पर किसी का प्रेम नहीं हो सकता जो ऊपर से देखने में अच्छा लगता है पर उसके अन्दर रहने वाली आत्मा के व्यवहार ठीक नहीं होते। बुरे चरित्र के लोग नीरोग नहीं गिने जाते। शरीर और आत्मा का ऐसा गहरा सम्बन्ध है कि जिसका शरीर नीरोग होगा उसका मन अवश्य ही शुद्ध होगा।

—महात्मा गाँधी

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

'अपना पथ पहचान लिया'

श्री सत्यनारायण श्रीवास्तव,
बलिया

मैं गत अक्टूबर मास के जीवन सखा में "क्षय से मुक्ति मिली" नाम की कहानी पर प्रकाश डाल चुका हूँ। उन दिनों भी, जब कि मैंने इलाज छोड़ दिया था, मुझे पूर्ण रूप से स्वास्थ्य-लाभ नहीं हुआ था, फिर भी मैं नौकरी की तलाश में निकला। इस बेकारी के युग में स्वतन्त्र-जीवन का कार्य कहाँ मिले; फिर भी मैंने रचनात्मक कार्य की तरफ भविष्य की आशा से Government Polytechnic Institute Raniwa में पदार्पण किया। यहाँ का जीवन हमें बड़ा आनन्दमय जँचा, पर पूर्ण स्वस्थ न था इस वास्ते शरीर में दो पँसलियों की तरफ रक्ताभाव से मन मलीन हो जाया करता था।

प्रारम्भ में तो प्रकृति के अनुगामी को अल्प-काल में स्वयं निजी अनुभव न होने से घबराहट अवश्य जान पड़ती है पर ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है, नित्य नये नये अनुभव होते रहते हैं और शरीर में स्थानीय विकार का वास्तविक कारण जान पड़ने लगता है, जैसा कि दोनों पँसलियों में रक्ताभाव का ज्ञान मुझे गत जनवरी और फरवरी मास में हुआ। पाठक इस रक्ताभाव का कारण जानना चाहेंगे पर अभी कारण वर्णन करने से प्रसंग अधूरा रह जायेगा अतः इससे मुझे क्या कष्ट भुगतना पड़ता था पहले यह जान लें।

रक्ताभाव से मन में मलीनता और एक प्रकार की विशेष चुनचुनाहट होने लगती। इस चुनचुनाहट से घबराहट ऐसी होती कि सिवाय घर चले जाने के कुछ सूझता ही नहीं था, पर मिट्टी और पानी तो हमारे जीवन-साथी रहे हैं। मैं धैर्य धारण किए रहता। पर हमारे स्नेही जन मुझे कोसते कि तुम व्यर्थ में जीवन बर्बाद कर रहे हो। प्राकृतिक चिकित्सा को छोड़कर किसी डाक्टर को पकड़ो। पर इधर डाक्टर-वैद्यों के गुण-अवगुण का पता तो हमें न था, हाँ उनकी बातें हमें उपहासास्पद जान पड़तीं। मैं लायब्रेरी से प्राकृतिक विषय की पुस्तकें लेकर पढ़ने लगता। इन पुस्तकों के पढ़ने से बड़ा आनन्द मिलता और साहस बढ़ता क्योंकि इनमें अन्य डाक्टरी और वैद्यक की पुस्तकों की भाँति रोग को असाध्य नहीं बताया गया है अथवा ऐसा वर्णन नहीं मिलता जिससे रोगी को ढाढ़स न बँधे। इसके विपरीत इससे इतना प्रोत्साहन मिलता है कि प्राकृतिक चिकित्सा से निस्सन्देह ९९ फी सदी असाध्य रोग भी अच्छे हो जाते हैं और स्वयं मैं इस बात को गारण्टी देकर कहता हूँ कि यदि कोई सज्जन अपने जीवन से निराश हो गए हों और यह जानते हों कि स्वास्थ्य डाक्टरों वैद्यों के यहाँ नहीं बिकता वरन् स्वयं प्रकृति ही चिकित्सक है, हम उसीके अनुसार चलेंगे; तो जीवन-दान मिलना निश्चित है। डाक्टर-वैद्य सिवाय भाग्यतः ५ फी सदी बीमारी दवा देने के, निकाल फेंक नहीं सकते। हमारे पास आएँ--जीवन-दान अवश्य मिलेगा। पर कौन देगा? प्रकृति, जैसा कि मैंने स्वयं अनुभवों द्वारा तीन भयंकर असाध्य रोगों पर विजय पाई है।

शरीर के विकार तो निकले थे नहीं जिससे मेरा स्वास्थ्य बनता और हृदय प्रफुल्लित होता, सारे शरीर में खुजली पैदा हो गई और मेरा जंघा और चूतड़ इस प्रकार के चकत्ते से भर गया कि एक कदम पैर रखना कठिन हो गया, यह खुजली हमें ही सिर्फ न हुई थी पर छात्रावास के अन्य लोगों में भी ७५ फी सदी कब्जा

जमाए हुए थी। पर मुझे सबसे ज्यादा थी। अन्य छात्रगण दवा की शरण लेते पर हमें क्या था मिट्टी की पट्टी का प्रयोग प्रारम्भ हो गया। हमें तो चलने को कौन कहे उद्वेग से मुँह से बात तक न निकलती फिर बिस्तरे पर चार पाँच पीली चिकनी मिट्टी की पट्टियाँ रखकर लेट जाता। यह हमारे वास्ते कोई नई बात तो थी नहीं कि मिट्टी के आश्चर्यकारी तात्कालिक लाभ से अजनबी की तरह अचम्भा करूँ। १।। घंटे में आन्तरिक गर्मी विजातीय द्रव्य को खींच कर गर्म हो जाती इस निरन्तर तीन दिन के प्रयोग से मैं अन्य भाइयों की भाँति हो गया—अब वे लोग मुझे आश्चर्य से देखते। उन्हीं दिनों मुझे एक किताब में यह लिखा मिला कि यक्ष्मा के रोगी के चूतड़ में फोड़ा होना उसकी बीमारी के दूर होने का शुभ लक्षण है।

मैं प्रायः मिट्टी का गुणगान किया करता और उन लोगों की दशा देखकर हमें बड़ा दुख होता जो दवाओं के बल पर अपने जीवन को बलपूर्वक खींच रहे थे। मैं उनसे प्राकृतिक चिकित्सा विषयक बातें छेड़ देता और इसी के शरण में आने के लिए आग्रह करता। अन्य लोग जिन्हें मेरी बातें न जँचतीं, हमें पागल कह कर हँसी उड़ाते। पर मैं कहता कि मैं तुम्हारी भी कोई बीमारी मिट्टी से दूर कर दिखाऊँगा, समय की प्रतीक्षा करो। इसके अलावा और कोई उत्तर न था मैं चुप हो जाता। इसी अवसर पर एक भाई को, जो तीन माह से पैर के घाव से तंग थे हार मान कर मुझसे अपने घाव का इलाज पूछने आए। जहरीली दवा या औषधोपचार तो जानता न था जो उन्हें बताता। मैंने कहा—भाई तुम तो जानते ही हो मेरी एक दवा है मिट्टी, जिसकी लोग हँसी उड़ाते हैं। तुम तो मिट्टी के कायल नहीं हो—शायद तुम भी हँसी उड़ाते होगे। हाँ यदि पूछ रहे हो तो मिट्टी को गीली लेई जैसी बना कर प्रयोग कर देखो। इसमें तुम्हारा खर्च ही क्या होगा। प्रयोग तो करो। उन्होंने मेरे कहने के मुताबिक चलना प्रारम्भ कर दिया और चार ही दिन के प्रयोग से घाव पर विजय मिली। अब क्या था जो लोग हँसी उड़ाते थे वही हमारे समर्थक भी हो गए। मुझे तो विश्वास था ही प्रोत्साहन मिलता गया। देखा देखी बहुतेरे मिट्टी का प्रयोग फोड़ा फुन्सी आदि विकारों पर करने लगे।

अस्वस्थता में शरीर में पग पग पर विकार भरा रहता है। इस कारण थकावट और हृदय की मलीनता हमारे वास्ते स्वाभाविक हो गई थी। किसी काम के करने में जी लगता ही न था। हाँ, एक जगह शान्तिवास अच्छा जान पड़ता था—पर रूई धुनना बहुत बुरा। इससे दिल चुराये रखता था—इस तरह दिल के चुराये रखने का वास्तविक कारण हमारे पेट में अनावश्यक पदार्थ की अधिकता थी जो निकल नहीं पाई और गर्मी के रूप में सम्पूर्ण शरीर में फैल कर ज्वर और मन मलीन बनाये रखती, कब तक और कहाँ तक भागें। इतना तो समय था नहीं कि अवकाश ले लूँ, वह भी दो चार दिन या दो चार माह तक। उन डाक्टरों और वैद्यों के मतानुसार असाध्य यक्ष्मा के प्रकोप को छाती पर गीली मिट्टी की पट्टी बाँध ज्वर की व्यथा को कम करके रूई धुनने का कार्य करता था। इस प्रकार कार्य-क्रम जारी रहते देख कर हमारे शुभचिन्तक अफसोस करते और घर जाने की राय देते पर घर क्यों जायँ दवा सेवन करने या स्वास्थ्यलाभ करने? मुझे किताबों के पढ़ने से दिन दूना रात चौगुना अनुभव होता गया। उपवास चिकित्सा की पुस्तक में लिखा पाया कि बीमारी की हालत में भोजन करना अपनी बीमारी को बढ़ाना है न कि स्वास्थ्य को। और भी अन्य बातें मालूम हुईं। मैंने उपवास भी करना प्रारम्भ कर दिया। इस उपवास में निजी अनुभव न था इस वास्ते सफलता न मिली। इसका प्रधान कारण हमारी कमी थी न कि उपवास चिकित्सा की। यह चिकित्सा तो योग है और जो भी योग सच्चे मन से साधा जाता है अवश्य सध जाता है। इससे यदि प्राकृतिक चिकित्सा की साधना में सफलता नहीं मिलती तो उसकी वजह अपने ज्ञान की कमी समझनी चाहिए। यह बात मैं जानता था इससे घबराया नहीं

बल्कि पूर्ण रूप से पुस्तकों का अध्ययन किया। आखिरकार, मुझे अपनी कमी मालूम हो गई। उपवास में पाचन क्रिया नहीं होती जिससे पेट अनुत्तेजक हो जाता और इसी अनुत्तेजकता से न तो शौच होता है न पेट साफ। इस वास्ते उपवास में एनिमा प्रयोग आवश्यक है वरना नये लोगों को बजाय लाभ के हानि की सम्भावना रहती है। हमें उपवास में शरीर हल्का जान पड़ने लगा पर सुस्ती और कमजोरी भी मालूम देने लगी। अब मैंने पानी का आन्तरिक प्रयोग करना शुरू किया। खाने के वक्त तो एकदम कम या बिल्कुल ही नहीं पर डेढ़ घंटे के बाद भर पेट पानी पी लेता और इस तरह दिन भर एक दो घूँट करके पूरा पानी पी लिया करता। इस पानी के नये प्रयोग से थकावट में कमी हुई। सम्पूर्ण शरीर में रक्तसंचालन बढ़ा और हृदय प्रफुल्लित रहने लगा। चुनचुनाहट तो समाप्त ही हो गई शौच भी पहले से साफ होने लगा। हमें अभी देहात के जीवन में अपना स्वास्थ्य ऐसा था जहाँ स्वच्छ और खुली वायु और सात्विक भोजन मिलता था। अब शहरी जीवन में रहने का मौका मिला।

उपवास चिकित्सा के मुताबिक इतना अवश्य करता कि बाहर यात्रा करने के दिन भोजन न करता ताकि पेट खाली रहने से स्फूर्ति रहे। पर इस क्रिया से मेरा सिर बहुत फटने लगता और ऐसी नौबत आ पहुँचती कि 'अब मरा'। फिर भी पानी को तो जीवन-रक्षक बनाया ही था चट स्नान कर लेता इस प्रकार––

बन्द स्नानागार (Bath room) में धीरे धीरे पेड़ू पर पानी छोड़ता इस क्रिया से पेट में ठंढक पैदा होते ही सम्पूर्ण शरीर बिजली की भाँति शीघ्र ठंढा हो जाता और शक्ति जान पड़ती। इस तरह जब कभी निष्क्रियता जान पड़ती, चट पानी से पेड़ू ठंढा कर शरीर में स्फूर्ति ला देता। यहाँ शहर में मिट्टी तो मिलती न थी कि पट्टी प्रयोग करूँ, इसलिए पानी का ही प्रयोग करता और इसी के बल से सूक्ष्मातिसूक्ष्म भोजन को, जिसमें कि स्वादिष्ट होने के वास्ते काफी परिवर्तन कर दिया जाता था और इस कारण पोषक पदार्थ एकदम नष्ट हो जाते थे, पचा लेता। अब मेरा स्वास्थ्य जो सात दिन पहले था वह बाद में बहुत बदल गया––ये सब करामात पानी के ही हैं जो आप देख रहे हैं।

सचित्र हठयोग

लेखक––स्वामी शिवानन्द सरस्वती

जनरल प्रिंटिंग वर्क्स, कलकत्ता से प्रकाशित प्रस्तुत पुस्तक आसन-व्यायाम सम्बन्धी एक अभूतपूर्व देन है। इस ग्रन्थ के अध्ययन से सर्वसाधारण सुगमता पूर्वक शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक बल तथा उन्नति प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही इसमें विभिन्न रोगों के लिए आसन, प्राणायाम तथा अन्य यौगिक क्रियाओं की सरल विधियाँ भी दी गई हैं। पुस्तक की उपयोगिता इसकी एक प्रति मँगा कर ही जानी जा सकती है।

पुस्तक मिलने का पता––

मैनेजर, प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

प्रश्नोत्तर

प्रश्न--गरी से दूध किस तरकीब से तैयार किया जाता है ?

--प्रेमबिहारी, बी० ए० हेड मास्टर ग० एच० ई० स्कूल, जौनपुर

उत्तर--जिस प्रकार बादाम से दूध तैयार किया जाता है उसी प्रकार गरी से भी। बादाम से दूध तैयार करने की तरकीब इस प्रकार है--दूध बनाने के लिए जितने बादाम की जरूरत हो सब को पानी में फूलने दें। फूल जाने के बाद छिलके निकाल दें। तब किसी पत्थर पर पानी के साथ घिसें। यह दूध गाय के दूध के समान ही पुष्टिकारक होता है।

प्रश्न--मेरे एक मित्र बड़े हट्टे कट्टे शरीर के हैं और व्यायामशील तथा ब्रह्मचारी भी हैं, फिर भी उनकी लम्बाई ५ फीट ५ इंच पर आकर रुक गई है। इसका क्या कारण है ? किस कारण से मनुष्य छोटे कद के रह जाया करते हैं ? लम्बाई बढ़ाने का क्या प्राकृतिक उपाय है ?

--एस०एस०, रामगढ़

उत्तर--इस विषय पर जूलाई १९४० के जीवन सखा में 'ऊँचाई बढ़ाइए' शीर्षक में लेख निकल चुका है। आप पढ़ लें।

प्रश्न--करीब एक वर्ष से मेरे शिर के बाल उड़े हुए हैं। जिस समय बाल उड़ना शुरू हुआ था उस समय शिर दबाने से जख्म सा कष्ट होता था। चमड़े का रंग काला सा हो गया था। मेरे माथे में विकार भी था। मुँह का स्वाद साबुन सा रहता था। उसी अवस्था में पायरिया का भी शिकार हो गया। अब तक छुटकारा नहीं मिला है। मैं पटना छोड़ कर देहात में रहने लगा हूँ। अब कुछ आराम का अनुभव हुआ है। शिर का चमड़ा ठीक रंग पर आ गया है। हजामत भी बनवा लिया करता हूँ। पुनः मेरे शिर पर बाल जम सकता है या नहीं ? मैंने किसी दवा का प्रयोग नहीं किया है। यदि बाल जम सकता है तो किस तरकीब से ?

--मंगलदयाल सिंह, हिल्सा

उत्तर--आपके शिर में Dandruff नाम की एक बीमारी हो गई है। विजातीय द्रव्य के कारण बाल उगने नहीं पाते। वे गिरते रहते हैं। कारण को दूर हटाने के लिए आपको स्थानीय और शारीरिक दोनों चिकित्साओं की ओर ध्यान देना चाहिए। स्थानीय इलाज--नीबू और नीले बोतल का पानी शिर में मालिश करें। पानी बनाने की विधि--किसी नीले रंग के बोतल में ¾ पानी भर कर ठेपी से बन्द कर दें और किसी काठ पर धूप में रख दें। १० बजे दिन से ५ बजे शाम तक में पानी तैयार हो जायगा। पानी जब ठंढा हो जाय तब मालिश करें। शारीरिक इलाज--शक्ति के अनुसार दो से तीन दिनों तक उपवास रखें। उपवास की हालत में दोनों शाम एनिमा और मिट्टी की पट्टी लेनी चाहिए। उपवास के बाद डाक्टर चौधरी लिखित 'आदर्श भोजन' के मुताबिक मामूली भोजन पर आवें। भोजन-सुधार के साथ साथ पेड़ू नहान भी लेना चाहिए।

प्रश्न--मेरी धर्मपत्नी को तीन महीने से मासिक-धर्म नहीं हुआ है। वे गर्भिणी भी नहीं हैं। जाँच करवा ली है। चार महीने से ब्रह्मचर्य से भी वे हैं। आयुर्वेदिक औषधियों का प्रयोग चल रहा था, बन्द करा दी गई। वे बहुत दुर्बल हो गई हैं। उनका भोजन दिन भर में एक फुलका और कुछ तुरई, पालक और परवल की सब्जी है। उनकी उम्र २० साल की है। कोई सन्तान नहीं हुई है। क्या आप कोई ऐसा उपाय बताने की

कृपा करेंगे जिससे मासिकधर्म हर महीने ठीक रूप में हुआ करे ?

——मेघराज जैन, जोधपुर

उत्तर——आपकी पत्नी का स्वास्थ्य दुर्बलता और कमजोरी के कारण ही ठीक नहीं है। इसका इलाज है दूध का कल्प। थोड़े-थोड़े दिनों का बाद देकर उन्हें तीन कल्प दीजिए।

प्रश्न——सितम्बर मास के जीवन सखा में मैंन यह पढ़ा है कि आपकी वताई रीति से भोजन करने से मनुष्य केवल महात्मा गाँधी ऐसा स्वस्थ ही नहीं रह सकता बल्कि इतना बल प्राप्त कर सकता है कि वह कुश्ती भी लड़ सकता है। अतएव मुझे यह बताने की कृपा करें कि एक साधारण मनुष्य किस प्रकार के भोजन और साधनों द्वारा वैसा स्वास्थ्य और बल प्राप्त कर सकता है ? मासिक खर्च कितना पड़ेगा ? मैं प्रति दिन प्रातःकाल सूर्य निकलने के पहले नंगे पैर घास पर दौड़ता हूँ। जाड़े में यह हानिकर तो नहीं होगा ? दौड़ने के बाद आराम कर तब स्नान करता हूँ। यदि यह दौड़ ठीक हो तो अपनी राय देने की कृपा करेंगे।

——रामसेवक सिंह, बस्ती

उत्तर——भोजन के विषय में श्री एल० एन० चौधरी लिखित 'आदर्शभोजन' पढ़िए। जीवन सखा के अंकों में भी हमेशा भोजन के सम्बन्ध में लेख निकला करता है। निजी सलाह अपना वजन, ऊँचाई और व्यवसाय लिख भेजने से दी जा सकती है। ठंढ के दिनों में भी नंगे पैर घास पर दौड़ सकते हैं। नुकसान नहीं फायदा ही होगा।

प्रश्न——मेरे गलहरी में दाद करीब सात वर्ष से है। वरसात के दिनों में बढ़ जाता है। खुजलाहट बराबर बनी रहती है और खुजलाने पर पानी निकल आता है। कभी-कभी चर्म भी फट जाता है और खून निकलता है।

——टीकमचन्द जैन, लखनऊ

उत्तर——खून में खटाई आने से दाद हुआ करता है। खून शुद्ध करने की कोशिश करें। इसका शारीरिक इलाज है कुछ दिनों तक भोजन में शत प्रतिशत क्षारमय पदार्थों का ही होना। पेट की सफाई की ओर पूरा ध्यान जाना चाहिए। जरूरत पड़ने पर एनिमा का प्रयोग करें। स्थानीय इलाज के लिए मिट्टी का प्रयोग कीजिए। दिन में दो तीन बार पीली मिट्टी लगाइए और आधा घंटा रख कर छोड़ाइए। गरी के तेल और नीबू के रस का समान समान भाग मिलाकर दाद के स्थान पर मालिश करें। आशा है इन प्रयोगों से आपका दाद जाता रहेगा।

प्रश्न——करीब चार वर्षों से मेरे कूले से घुटने तक दर्द हुआ करता है। दर्द कूले के किसी नस में जान पड़ता है जो कि घुटने तक जाता है। दर्द मीठा मीठा होता है सहन करने के लायक। डाक्टर 'साईटिका' और हकीम 'अरकुलनिशा' बताते हैं। सूर्य नमस्कार तथा और व्यायाम करने से दर्द कम हो जाता है। सर्दी लग जाने और भीग जाने से दर्द बढ़ जाता है। कभी कभी कमर के ऊपर के हिस्से में दर्द होकर दो चार मिनट में शान्त हो जाता है। कृपा कर ऐसी युक्तियाँ बतावें जिनसे ऊपर के रोग से छुटकारा मिले।

——टीकमचन्द जैन, लखनऊ

उत्तर——साईटिका और रुमेटिज्म करीब करीब एक ही चीज है। जीवन सखा के अनुसार आप भोजन में सुधार करें। चिकित्सा के लिए श्रीकेदारनाथ गुप्त लिखित 'प्राकृतिक चिकित्सा' में दिए गए 'गठिया का इलाज' से आपको काफी सहायता मिलेगी। साईटिका के लिए पश्चिमोत्तान आसन बहुत लाभप्रद सिद्ध हुआ है। रोज सन्ध्या समय तीन बार करें। $\frac{१}{४}$ मिनट से शुरू करके १ मिनट तक जायँ।

——बालेश्वरप्रसाद सिंह

* * *

भारतीय स्त्रियों और कन्याओं
की सबसे अच्छी और सबसे
सस्ती सचित्र मासिक पत्रिका

दीदी

वार्षिक मूल्य
२)
एक प्रति ≡)

सम्पादक—श्रीनाथसिंह

आशीर्वाद

मुझे विश्वास है कि **'दीदी'** अपने उद्देश्य की पूर्ति कर सकेगी।

—राजेन्द्रप्रसाद

'दीदी' के द्वारा हिन्दी का एक अंग भरेगा यह मुझे भरोसा है।

—पुरुषोत्तमदास टंडन

सदा कमनीय काम करके
लोक में कीर्तिवितान तने।
घरों में देवी कहा पूजे,
तिमिर में **'दीदी'** दिव्य बने।

—"हरिऔध"

सम्पादिका-समिति

'दीदी' की सम्पादिका-समिति में निम्नलिखित पाँच प्रमुख महिलाएँ हैं—

रानी गिरिजादेवी (भदरी)।

कुमारी विद्यावती, बी० ए०, सी० टी० (बेसिक), बी० टी०।

श्रीमती सत्यवती (स्नातिका), एम० एल० ए०।

कुमारी हरदेवी मलकानी, एम० ए०।

श्रीमती रत्नकुमारी, एम० ए०।

सम्मतियाँ

लड़कियों और स्त्रियों के लिए **'दीदी'** जैसे सरल हिन्दी मासिक की आवश्यकता थी। अब यह कमी पूरी हुई।"

—कर्मवीर

"...**'दीदी'** जबसे निकली है दिनोंदिन उन्नति करती जाती है।"

—प्रताप

"...काफी विचार-मंथन के उपरान्त श्री श्रीनाथसिंह ने **'दीदी'** का प्रकाशन आरम्भ किया है। आपने जिस उत्साह से इस ओर कदम बढ़ाया है, वह स्तुत्य है।"

—"आज"

"गेट-अप और छपाई भारत की समस्त पत्रिकाओं से अच्छी है।"

—आर्यमित्र

'दीदी' में क्या रहता है

'दीदी' में प्रतिमास चार सुन्दर कहानियाँ, एक सच्ची कहानी, शिशुपालन, गृहप्रबन्ध रसोई, कसीदा, यौवन-सौंदर्य और प्रेम-फ़ैशन आदि पर विशेषज्ञों के लेख और घर-गृहस्थी की सैकड़ों बातें रहती हैं। एक शब्द में 'दीदी' उन सब सवालों का जवाब देती है जो किसी भी स्त्री के हृदय में उठ सकते हैं।

'दीदी' का नववर्षांक दिसम्बर १९४१, **'दीदी'** का विशेषांक जनवरी १९४२ में प्रकाशित होगा।

प्रजामंडल श्रीनाथसिंह लिखित सर्वथा नवीन उपन्यास मूल्य १।) **'दीदी'** के ग्राहकों से सिर्फ १)।

ये दोनों विशेषाङ्क केवल उन्हीं को मिल सकेंगे जो नवम्बर सन् १९४१ से पहले वार्षिक मूल्य २) मनीआर्डर से भेजकर 'दीदी' के ग्राहक बन जायेंगे। पत्र या मनीआर्डर भेजने का पता—

प्रेमलता देवी, संचालिका 'दीदी' कटरा, इलाहाबाद

ऑर्डर दीजिए !　　　　ऑर्डर दीजिए !!

सबसे नया प्रकाशन

निःसहाय हिंदू

लेखक, श्रीयुत राधाकृष्णदास । हिंदू-जाति के विश्व-मान्य सिद्धांतों का सजीव, सारगर्भित चित्रण । संगठन, एकता और बंधुत्व का आदर्श उदाहरण ! आपके हृदय की कोमल भावनाओं को छू लेने का प्रयास कितना पवित्र—कितना सफल । एक बार अवश्य पढ़िए । मूल्य ।।), १)

कुबेर

लेखक, देवीप्रसाद धवन 'विकल' । वह धन-राशि में लोटनेवाला, नए युग के पूँजीपतियों का अपवाद-रूप, अभिमानी कुबेर न था । समाज की चोटों से तिलमिलाकर, आत्मविश्वास और लोकोपकार की भावना के सहारे जीनेवाला, औरों के लिये अपने धन को लुटा देनेवाला रंक 'कुबेर' विधाता के विधान से एक दिन सचमुच कुबेर बन गया । मूल्य १), १।।)

अंतःपुर का छिद्र

लेखक, सुप्रसिद्ध नाटककार पं० गोविंदवल्लभपन्त का सबसे नवीन बौद्ध कालीन नाटक । कौशांबी के राजमहल म होनेवाली प्रणय-लीला, महाराज उदयन की प्रेम-कथा का दुःखद प्रसंग । अधिकार-लिप्सा का रोमांचकारी दृश्य । सारगर्भित कथानक । स्टेज पर खेलने योग्य । मूल्य ।=), ।।।=)

बिहारी-सुधा

लेखक, मिश्रबंधु । महाकवि बिहारीलाल के २७० उत्तमोत्तम दोहों का अर्थ-सहित सुंदर संग्रह । घरेलू पुस्तकालयों की शोभा बढ़ाने योग्य अनुपम काव्य-ग्रंथ । मूल्य ।=), ।।।)

स्त्री-सौंदर्य और स्वास्थ्य

लेखक, श्रीयुत बुद्धिसागर वर्मा, बी० ए०, एल्० टी० । शरीर के अंगों का बनाव-शृंगार, सौंदर्य-रक्षा के नियम, व्यायाम, रोग तथा उनकी सरल चिकित्सा सौंदर्य बढ़ाने के देशी और विदेशी साधनों की उपयोगिता सरल भाषा में वर्णित है । सचित्र । मूल्य २), २।।)

मनुष्य का विकास

लेखक, श्री ज्योतिलाल भार्गव, बी० ए०, एल्-एल्० बी० । धरती पर सबसे पहले जानवर कैसे पैदा हुए । मनुष्य-जाति कैसे प्रकट हुई ? क्या आदमी आसमान से बरस पड़े थे या पाताल से निकल पड़े थे ? सभी प्रश्नों का विस्तृत और प्रासंगिक उत्तर देनेवाली एकमात्र पुस्तक । मूल्य ।=), ।।=)

भोजन और स्वास्थ्य

लेखक, डॉ० सत्यप्रकाश तथा डॉ० संतप्रसाद टंडन । स्वास्थ्य-वर्द्धक भोजन का चुनाव साधारण जन भी अपनी आय के अनुसार कर सकते हैं । इसके लिये अमीर-गरीब का कोई प्रश्न नहीं । मूल्य १), १।।)

मिलने का पता—गंगा-ग्रंथागार, ३६, लाटूश रोड, लखनऊ

ग्राहक बनिये ! ग्राहक बनिये !!

शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास सम्बन्धी प्रमुख मासिक

जिसमें ब्रह्मचर्य, सदाचार,
स्वास्थ्य, आरोग्यता,
नैतिक विकास, मानव
जाति की क्रमिक उन्नति,

सात्विक जीवन

आध्यात्मिकविकास आदि
पर विचारपूर्ण लेख
प्रकाशित होते हैं।

देश के प्रतिष्ठित विद्वानों तथा सार्वजनिक कार्यकर्ताओं ने मुक्तकण्ठ से 'सात्विक जीवन' के उद्देश्यों एवं प्रकाशन की प्रशंसा की है। उन्होंने यह विचार प्रकट किया है कि ऐसे संकटकाल में जब कि भारतीय ही क्यों, समस्त मानव जाति अधःपतन की ओर अग्रसर होती जा रही है तथा धर्म, सदाचर एवं नैतिक बल का ह्रास हो रहा है उस समय 'सात्विक जीवन' जैसे पत्र की विशेष आवश्यकता है।

अनेक में से कुछ सम्मतियाँ

(१) **माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन**--'सात्विकजीवन' के कुछ अङ्क मुझको मिले। मैंने इन अङ्कों को देखकर यह समझा है कि जीवन में पवित्रता लाना 'सात्विकजीवन' का ध्येय है...मैं पत्र का हृदय से स्वागत करता हूँ।

(२) **श्री युगुलकिशोर बिड़ला**--.....पत्र को देखने से पता चलता है कि कई लेख विशेष हितकर और आर्य संस्कृति के गौरव को प्रकट करनेवाले हैं। आपका उद्योग प्रशंसनीय है। मुझे आशा है कि आपके पत्र द्वारा अधिकाधिक आर्य संस्कृति के गौरव का विस्तार होता रहेगा।

(३) **पं० ठाकुरदत्त शर्मा, वैद्य, मालिक अमृतधारा, लाहौर**--'सात्विक जीवन' देखकर प्रसन्नता हुई, क्योंकि केवल सदाचार सम्बन्धी पत्र देखने में नहीं आये। पत्र सदा उन्नति करे ऐसी हमारी कामना है।

(४) **श्री वृजलाल वियाणी, अकोला**--'सात्विक जीवन' जैसे पत्रों की देश को अत्यन्त आवश्यकता है। मैं 'सात्विक जीवन' की हृदय से प्रगति चाहता हू। मुझे आशा है कि 'सात्विक जीवन' अपने ध्येय की प्राप्ति में सफल होगा।

(५) **सम्पादक आर्यमहिला"**--'सात्विक जीवन' का जन्म भारत के उज्ज्वल भविष्य का द्योतक है--इसकी शैशवकालीन आभा हमें इस बात का पूर्ण विश्वास दिलाती है। हम हृदय से इसकी उत्तरोत्तर वृद्धि चाहते हैं।

(६) **आचार्य अभयदेवजी गुरुकुल कांगड़ी**--आपका पत्र बहुत उपयोगी बातों का बतानेवाला होता है। और मनुष्यों को उच्च जीवन की तरफ प्रेरणा देनेवाला होता है।

(७) **व्याकरणाचार्य श्री नारायणदत्त त्रिपाठी, प्रधानाध्यापक, मारवाड़ी संस्कृत कालेज, काशी**--इस पत्र को देखकर मुझे अतीव हर्ष हुआ। मैं विश्वेश्वर विश्वनाथ से प्रार्थना करता हूँ कि 'सात्विक जीवन' मनुष्य जगत् के ऊपर अपनी छाप डालकर उनके जीवन को सात्विकतापूर्ण बनाये।

वार्षिक मूल्य ३), विद्यार्थियों, पुस्तकालयों एवं विद्यालयों से २), नमूने के लिये ।) का टिकट भेजें।

'सात्विक जीवन' कार्यालय

८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता

नौकरी की खातिर मारे मारे फिरने वालों को

हमारी नेक सलाह

इन पुस्तकों को मँगाकर अपनी बेकारी मिटाइये

आजकल जो पढ़े लिखे बेकार नौकरी के लिये मारे मारे फिरते हैं उनको हमारी यह नेक सलाह है कि वे हमारी नीचे लिखी हुई पुस्तकों में से कोई भी पुस्तक मँगाकर कोई सा भी कारोबार शुरू कर दें और यदि आवश्यकता हो तो हमारी सहायता और सलाह भी ले सकते हैं जो हम मुफ़्त में सदैव देने को तैयार हैं। ध्यान रहे हमारी सलाह से काम करने वाले कभी भी घाटा न उठायेंगे यह हमारा दावा और बीस साल का निजी अनुभव है।

सचित्र देशी बटन मेकर	१)	रत्नों की खान	॥)
स्वदेशी रंग शिक्षक	१)	सुगन्धित तेलों का व्यापार सचित्र	१॥)
स्वदेशी तेल शिक्षक	१)	पेटेन्ट दवाइयाँ प्रथम भाग	१)
रंगाई शिल्प शिक्षा	१)	पेटेन्ट दवाइयाँ दूसरा भाग	१॥)
शीशा पर क़लई करना	१)	बिजली की बैटरियाँ बनाना सचित्र	२)
घड़ी साजी सचित्र	॥)	बिला पैसे के सैकड़ों रोजगार सचित्र	१)
मुलम्मा साजी	२)	रबड़ की अनेक प्रकार की दस्तकारियाँ	१)
सुनारसाजी	२)	हुनर प्रचारक मेरी डायरी प्रथम भाग	१)
साबुनसाजी	१॥)	हुनर प्रचारक मेरी डायरी दूसरा भाग	२)
हर चीज जोड़ने के मसाले पहिला भाग	॥)	हुनर संग्रह	१)
,, ,, दूसरा भाग	॥)	हुनर शिक्षक	१)
खजाने की कुंजी	१)	पैंटरी [साइन बोर्ड साजी] सचित्र	२)
सत्य लक्ष्मी भण्डार	१॥)	कपड़ा छपाई की शिक्षा	१)
छोटे छोटे कारखाने खोलने के तरीके	।)	साबुन विज्ञान सचित्र	२)
कर्षाकला	॥)	लकड़ी पर पालिश	२)
सचित्र मोटर ड्राइवरी	२)	धन कमाने के सरल उपाय	१)
२५०० परीक्षित नुसखे सचित्र	३)	व्यापार और कारीगरी	२)
दर्ज़ी विज्ञान तीन भाग	४॥)	अचार शिक्षक	॥)
रोशनाई का व्यापार	१)	फोटोग्राफी शिक्षा सचित्र	४॥)
वस्त्र बुनकारी शिक्षा	२)	मिट्टी के बरतन बनाना सचित्र	२)
स्वदेशी शर्बतों का व्यापार	१॥)	भारतीय डायरेक्टरी	१)

ग्राहकों को सूचना

इन छोटी छोटी पुस्तकों का मूल्य इनकी मुटाई अथवा सुन्दरता पर निर्भर नहीं है बल्कि इनका मूल्य लेखकों के दिमाग के परिश्रम का दाम है। जो व्यक्ति मुटाई तथा सुन्दरता के उपासक हैं वे इन पुस्तकों को भूलकर भी न मँगावें क्योंकि न तो ये पुस्तकें मोटी हैं और न खूबसूरत ही हैं।

मैनेजर, बेकार-सखा, मशीन प्रेस, शिकोहाबाद, यू० पी०

भारतवर्ष की सामाजिक, औद्योगिक और सांस्कृतिक उन्नति का दावेदार

"समाजसेवक"

का

दीपावली अंक

इस विशेषांक में आपको ६४ पृष्ठों की ठोस समग्री मिलेगी। उद्योग और वाणिज्य के इतिहास और विकास के विभिन्न पहलुओं पर विषय के अधिकारी लोगों के लिखे हुए लेख।

इसके अतिरिक्त सुन्दर साहित्यिक निबन्ध, मनोरंजक कहानियां और उत्कृष्ट कविताएं।

सब मिलाकर यह अंक वास्तव में संग्रहणीय होगा।

सचित्र : सुन्दर :

नयनाभिराम छपाई :

अलग से लेने पर इस अंक का मूल्य ४ आ० होगा

ग्राहक बनने में शीघ्रता कीजिए

क्योंकि

यह अंक सीमित संख्या में ही प्रकाशित होगा।

लिखिए : "समाज सेवक", १५२ बी, हरिसनरोड, कलकत्ता,

विज्ञापनदाताओं को यह अवसर हाथ से नहीं जाने देना चाहिये

हिन्दी-संसार में हलचल मचा देनेवाला

'जीवन-सखा' का 'व्यायाम-अंक'

जनवरी सन् १९४२ में प्रकाशित होगा

[illegible] हिन्दी-प्रेमियों के लिए [illegible]

इसमें क्या रहेगा ?

१ [illegible] पर व्यायाम का प्रभाव।
२ [illegible] पर व्यायाम का प्रभाव।
३ [illegible] प्रणाली।
४ [illegible] व्यायाम-प्रणाली।
५ [illegible] की व्यायाम-प्रणाली।
६ भारत के व्यायाम-प्रणाली।
७ हिन्दुस्तानी व्यायाम-पद्धति।
८ पुरुष और स्त्रियों के लिए व्यायाम।
९ [illegible] कमजोरी और [illegible] का इलाज।
१० व्यायाम [illegible] के लिये।
११ [illegible]।
१२ [illegible] का इलाज।
१३ [illegible] का इलाज।
१४ [illegible] की बीमारियों का इलाज।
१५ [illegible] कारण और इलाज।
१६ [illegible] और घर में व्यायाम-चिकित्सा।
१७ फालिज का इलाज।
१८ [illegible] और व्यायाम।
१९ [illegible] के लिये व्यायाम।
२० [illegible]।
२१ योग-व्यायाम।
२२ [illegible] सफाई के लिये योग-क्रियायें।
२३ हिन्दुस्तान के व्यायाम-केन्द्रों का [illegible]
२४ व्यायाम के समय शरीर की [illegible] अवस्था।
२५ व्यायाम के लिए [illegible] तथा [illegible] का विचार।
२६ खिलाड़ियों (Sportsmen) का [illegible]।
२७ स्कूलों की व्यायाम-पद्धति।
२८ कालेजों और विश्वविद्यालयों में व्यायाम।
२९ लड़कियों के स्कूलों और कालेजों में व्यायाम।
३० [illegible] की [illegible] के कारण और इलाज।
३१ [illegible] और [illegible] का इलाज।
३२ व्यायाम और विश्राम।
३३ शरीर के अंग-प्रत्यंग का व्यायाम।
३४ हिन्दुस्तानी व्यायाम-[illegible] और [illegible] उनका [illegible]।
३५ हिन्दुस्तान के प्रान्तों में व्यायाम।
३६ शरीर पर व्यायाम का प्रभाव।
३७ देश में व्यायाम-प्रचार की आवश्यकता।

[illegible]

[illegible]—'जीवन-सखा', २७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

जीवन सखा

शारीरिक मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

दिसम्बर
१९४१

काँगड़ी गुरुकुल में ११ दिसम्बर ४१ को प्राप्त।

संपादक : : बालेश्वरप्रसाद सिंह

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७ हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

प्राकृतिक चिकित्सा के नवीनतम साधनों से सुसज्जित

आरोग्य मन्दिर

में सभी नए पुराने रोगों की चिकित्सा सफलता पूर्वक होती है। सुन्दर प्रबन्ध समुचित व्यवस्था, व्यक्तिगत देखभाल स्वास्थ्य मन्दिर की विशेषता है। स्वास्थ्य मन्दिर की निजी डेयरी भी है जहाँ गायों को रोगी के रोग के अनुसार खाद्य और जड़ी-बूटियाँ खिला कर दूध में औषध-गुण उत्पन्न किया जाता है। खर्च कम से कम।

विशेष जानकारी के लिए आज ही लिखिए। उत्तर के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है।

— पत्र-व्यवहार का पता —

आरोग्य मन्दिर
सुड़िया कुवाँ, बशारथपूर
गोरखपूर

—विट्ठलदास मोदी

स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ मूल्य १।)
मठा उसके गुण तथा उपयोग मूल्य ।=)

पता :: स्वास्थ्य पुस्तक भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

दिसम्बर
१९४१

जीवन-सखा

वर्ष ६
अङ्क १२

इस अङ्क में

विषय लेखक पृष्ठ

१. अपने विचार ४०६

२. पथरी--चौधरी कृष्णविहारी राय .. ४०७

३. अपनी मालिश आप--मोहम्मद अब्दुल सत्तार खैरी, एम० ए० .. .. ४११

४. पीड़ा-रहित प्रसव--श्रीमती लक्ष्मी अग्रवाल ४१४

५. गेहूँ का आटा कैसा होना चाहिए--श्री व्रजमोहन मिहिर ४१९

६. रोगों के दूर करने में समय का महत्त्व--श्री व्रजनन्दन प्रसाद, बी० ए० .. ४२२

७. पेट का पुराना दर्द कैसे दूर हुआ--श्री जुगलकिशोर अग्रवाल, कालिम्पोंग.. ४२५

८. हमारी नजर में ४२८

९. प्रश्नोत्तर ४३०

'जीवन सखा'

का

अगला अंक

स्वास्थ्य और व्यायाम विषयक
अनेकानेक लेखों और चित्रों
से सुसज्जित, सर्वांग सुन्दर

व्यायाम अङ्क

के रूप में प्रकाशित होगा
इसका विशेष विवरण
कवर के चौथे
पृष्ठ पर
देखिए

अपने विचार

शहर बनाम देहात

उस दिन स्वास्थ्य-प्रेमियों की एक मण्डली में शहरी बनाम देहाती जीवन पर बड़ी सरगर्मी के साथ बहस हो रही थी। एक सज्जन का कहना था कि ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति इतनी गई-बीती है कि वे ठीक तौर से अपना जीवन-निर्वाह भी नहीं कर सकते। यदि बीमारियों को देखा जाय तो शहरों की भाँति देहात भी नाना प्रकार के संक्रामक रोगों के शिकार होते हैं। फिर देहाती जीवन में क्या आकर्षण है?

जहाँ तक आर्थिक स्थिति का सवाल है, यह स्पष्ट है कि देहातों की ही नहीं वरन् समस्त भारत की दशा बड़ी शोचनीय है। लेकिन प्रश्न तो यह है कि देहात के औसत व्यक्ति का स्वास्थ्य शहर के एक औसत आदमी के मुकाबले में कैसा देखने में आता है? यदि विचार किया जाय तो हमें पता चलेगा कि जितने अधिक शहर के लोग व्याधि-पीड़ित हैं उतने देहात के लोग नहीं। अधिकतर रोग आरामतलब धनिक-वर्ग के लोगों के ही मेहमान बनते हैं। आधुनिक सुख-साधनों से युक्त भवनों में निवास करने वाले धनिक श्रेणी के लोग निरन्तर आर्थिक कष्टों के शिकार बने शोषित कृषक-वर्ग के लोगों के सामने अपने स्वास्थ्य का गर्व करें, ऐसा शायद ही कोई उदाहरण मिले। वे दूसरों पर अधिकार कायम करने के आदी हैं, इसलिए रुपए के बल पर वे स्वास्थ्य पर भी अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं। लेकिन प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का साहस मनुष्य करे, यह उसकी अहमन्यता नहीं तो और क्या कहा जा सकता है? वे स्वस्थ रहने के लिए कीमती 'टानिक' आदि का सेवन करते हैं——यह उनके मासिक व्यय का एक आवश्यक अंग बन गया है। वे दिन में कई बार विभिन्न रूपों में भोजन करते हैं। फलतः उनके शरीर में चरबी बढ़ जाती है, उन्हें मोटापा का रोग हो जाया करता है। सुबह-शाम मोटरों पर सवार होकर वे सैर करने तो निकलते हैं लेकिन स्वच्छ वायु उनकी त्वचा को स्पर्श करे, यह असम्भव है। कुछ समय तक खुली वायु या धूप में नंगे बदन बैठना वे अपनी शान के खिलाफ या असभ्यता का लक्षण समझते हैं। व्यायाम से तो केवल उनका किताबी परिचय है——वे व्यक्तिगत रूप से कभी कोई समुचित व्यायाम करना पसन्द नहीं करते। इस प्रकार भोजन, धूप, वायु और व्यायाम——इन जीवन-दायिनी शक्तियों से वे विमुख ही रहते हैं।

किन्तु दूसरी ओर ग्रामीणों के लिए यही एक वरदान है कि आर्थिक, सामाजिक, शिक्षा-सम्बन्धी तथा अन्य प्रकार की सुविधाओं से वंचित होकर भी वे प्रकृति से दूर नहीं हुए हैं। खुली वायु और धूप में वास, अपने परिश्रम से उत्पन्न हुए मोटे अन्न का भोजन, मौसम के अनुसार सहज प्राप्य फल और शाक-भाजी यही उनके लिए नियामत है।

भारत का हृदय गाँव में बसता है। हमारी प्राचीन संस्कृति, रहन-सहन, आचार-व्यवहार की यदि हमें आज भी कोई झलक मिलती है तो वह केवल इन्हीं देहातों में ही। यदि हम ग्रामीण जीवन और वहाँ के रहन-सहन की सादगी की मूल भावना का अपने में समावेश करा सकें तो निश्चय ही वह हमारे लिए बड़ा कल्याणकारी सिद्ध हो सकता है। इस मूल भावना को ग्रहण कर लेने पर हम यदि चाहें तो शहर के वातावरण में रहते हुए भी अपने को अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ और नीरोग रख सकते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा ऐलोपैथी, होमियोपैथी, आयुर्वेद आदि प्रणालियों की भाँति कोई चिकित्सा-प्रणाली नहीं बल्कि वह मानव-जाति को प्रकृति का सन्देश

(शेष पृष्ठ ४१८ पर पढ़िये)

पथरी

चौधरी कृष्णविहारी राय

पथरी एक भयानक रोग है। एलोपैथ डाक्टर इसके लिए आपरेशन के सिवाय और कोई दूसरा उपाय नहीं बता सकते। किन्तु प्राकृतिक चिकित्सा ने इस रोग के दूर करने में अपना चमत्कार दिखाया है। चौधरी कृष्णविहारी राय ने स्वयं इस रोग के अनेक रोगियों को चंगा किया है। आपका यह लेख सर्वांगपूर्ण और अनुभूत है।—सं०

जब वायु मूत्राशय में आए हुए शुक्र के साथ मूत्र को और पित्त के साथ कफ को सुखा देती है अर्थात् जब मूत्र और शुक्र अथवा पित्त और कफ वायु से सूख कर पत्थर की तरह कड़े हो जाते हैं तब पथरी रोग होता है।

पथरी के पूर्व रूप

पथरी होने से पहले मूत्राशय में अफारा आ जाता है—वह फूल जाता है। मूत्राशय के चारों तरफ अत्यन्त पीड़ा होती है, अथवा वस्ति के पास के स्थानों में दर्द होने लगता है। मूत्र में बकरे के पेशाब की-सी बदबू आती है, पेशाब कष्ट से होता है, ज्वर चढ़ जाता है और भोजन की रुचि नहीं होती।

पथरी के साधारण लक्षण

पथरी होने से नाभि में, फोते के नीचे सीवन में तथा नाभि से नीचे की जगह मूत्राशय या वस्ति के मुँह में दर्द होता है। मूत्र बहाने वाले मार्गों के बन्द हो जाने से मूत्र की धार बीच में ही फट जाती है यानी विच्छिन्न धार से पेशाब होता है। पेशाब करते समय जोर करने से पीड़ा होती है। किसी समय पथरी के मूत्र-मार्ग से अचानक हट जाने पर गोमेद के समान साफ पेशाब आराम से होता है। इसके संचार से मूत्र-मार्ग के घिस जाने के कारण खून मिला हुआ या लाल रंग का पेशाब होता है और बड़े जोर से दर्द होता है। मतलब यह कि मूत्र-मार्ग में पथरी द्वारा किसी तरह का घाव हो जाने से पेशाब में खून दिखाई देता है और पेशाब निकलते समय भयंकर वेदना होती है।

शारङ्गधर में पथरी का लक्षण इस तरह लिखा है—

निरुध्य मूत्रमार्गम् या यातना जनयेद्भृशम्।
कटि वस्ति प्रदेशेषु साश्मरीति निगद्यते॥

अर्थात्—जो मूत्र-मार्ग को रोक कर बहुत तकलीफ देती है, कमर और पेड़ू में वेदना करती है, उसे पथरी कहते हैं।

वाताधिक्य पथरी के लक्षण

(१) रोगी दाँत पीसता है और काँपता है।

(२) तकलीफ के मारे चिल्लाता है।

(३) लिङ्ग और नाभि को हाथों से दबाए रहता है।

(४) पेशाब करते समय काँखने से अधोवायु के साथ मल गिरता और टपक-टपक कर पेशाब होता है।

(५) पथरी का रंग नीला या धूसर होता है और उस पर काँटे होते हैं।

पित्ताधिक्य पथरी के लक्षण

(१) वस्ति या पेड़ू में अत्यन्त जलन और भयंकर वेदना होती है।

(२) पथरी छूने से अत्यन्त गर्म मालूम होती है। उसकी आकृति भिलावे की गुठली जैसी और रंग लाल, पीला या काला होता है।

कफाधिक्य पथरी के रोगी में पाए जाने वाले लक्षण

(१) वस्ति में नोचने की-सी अथवा सूई गड़ाने की-सी पीड़ा होती है।

(२) पथरी छूने में शीतल, भारी, चिकनी शहद की तरह पिङ्गल या सफेद रङ्ग की होती है।

(३) यह पथरी बहुधा बालकों के होती है। परन्तु बालकों की पथरी के बढ़ने का आधार थोड़ा होता है इसलिए पथरी निकालने में आसानी होती है।

वीर्य की पथरी के निदान, लक्षणादि

वीर्य की पथरी अधिक उम्र वालों को होती है, बच्चों को नहीं होती। यद्यपि वीर्य बालकों के भी होता है तथापि वे मैथुन नहीं कर सकते। इसलिए उनके वीर्य की पथरी भी नहीं होती। जो लोग मैथुन के समय अधिक आनन्द के लिए स्थान-च्युत या निकलते हुए वीर्य को रोक लेते हैं उनका वीर्य भीतर ही रह जाता है, बाहर निकलने नहीं पाता। उस रुके हुए वीर्य को वायु लिङ्ग और फोतों के बीच में मूत्राशय के मुँह पर ले जाकर सुखा देती है, तब वह वीर्य पथरी हो जाता है।

वीर्य की पथरी होने से वस्ति या पेड़ में शूल चुभाने के समान दर्द होता है। दोनों फोते सूज जाते हैं और मूत्रकृच्छ्र रोगी की तरह पेशाब होता है। दुर्बलता, ग्लानि, कृशता, कूख में पीड़ा, पाण्डुता, अरुचि, उष्णवात, मूत्राघात, तृषा, हृदय-वेदना, 'ओरियन्टल सोर्स' और वमन—ये सब पथरी के उपद्रव हैं।

सांघातिक लक्षण

पथरी, शर्करा, सिकता; रोगी की नाभि और फोतों में सूजन, पेशाब का रुकना और शूल के समान वेदना होना—ये लक्षण रोगी की मृत्यु की सूचना देते हैं।

जल-चिकित्सा के जनक कूने कहते हैं कि यह ठीक है कि औषधियों द्वारा चिकित्सा करने वालों की दृष्टि में भिन्न भिन्न रोग हैं और सब की चिकित्सा भी भिन्न भिन्न है किन्तु मेरे चिकित्सा-विज्ञान का चश्मा चढ़ा कर देखने से सब रोग एक हैं और सब की चिकित्सा भी एक ही है। इन सब की उत्पत्ति भी हमको विजातीय द्रव्य के संचय में एकदम मिल जाती है। यहाँ हमको विशेष कर उस संचय का वर्णन करना है जिसके प्रभाव से विजातीय द्रव्य को निकालने वाले हमारे शरीर के उन यन्त्रों का काम ढीला पड़ जाता है जिन्हें प्रकृति ने इसी काम के लिए बनाया है। वे यन्त्र हैं—गुर्दे और त्वचा। यहाँ उस दूषित वायु के सम्बन्ध में भी कुछ विचार करना है जो पाचन के समय पेट में पैदा हो जाती है और जिसके रीह, पाद, अपान आदि नाम हैं। वह वायु पाचन-यन्त्र में सर्वत्र फैल जाती है। आँतों की गति कृमि की तरह आकुंचनशील है, इसलिए वह हवा एक ओर तो भोजन को आगे की ओर सरकाती है, और दूसरी ओर फैलना उसका स्वभाव है। अतः वह पाचन-यन्त्र की दीवारों से टकराकर सारे शरीर और खून में मिल जाती है। यह बात नीचे लिखे दृष्टान्त से भलीभाँति समझ में आ सकती है। पृथ्वी पर समुद्र, नदी, झील और तालाबों में जो जल भरा हुआ है, उसे पृथ्वी की ऐसी जलवाहिनी नाड़ियाँ समझना चाहिए, जैसी कि शरीर में रक्तवाहिनी नाड़ियाँ हैं। लेकिन इनके अतिरिक्त वाष्प या भाप के रूप में भी बहुत सा जल और वायु पृथ्वी के समस्त विभागों में भरा रहता है। यही बात उस खान पान की है, जो हमारे शरीर में जाता है। कहने को तो खाना किन्हीं निर्दिष्ट मार्गों और स्थानों में ही रहता है परन्तु हवा के रूप में होकर वह समस्त शरीर में पहुँच जाता है। इसीलिए मद्य पीते ही उसका असर सारे शरीर में और विशेष कर सिर में मालूम होने लगता है। यदि हमारी त्वचा अपना काम ठीक तौर पर कर रही हो, तो उस वायु का भाग, पसीने और साँस के द्वारा भी निकल जाता है। वह वायु पसीने के द्वारा भी निकलती है और बिना पसीने के भी। हर मनुष्य के शरीर के पसीने से जुदा जुदा गन्ध निकलती है। जब पसीने के साथ बहुत दिनों का संचित हुआ दूषित द्रव्य अधिक परिमाण

में मिल जाता है, तब पसीने से बहुत बुरी बू आने लगती है। इसके विपरीत पूर्ण नीरोग मनुष्य के पसीने में कोई दुर्गन्ध नहीं होती। शरीर के भीतर ही भीतर यह वायुरूप ताप गुर्दे के द्वारा भी निकलता है। गुर्दे द्रव पदार्थ में मिश्रित उन तापों को मूत्र द्वारा वस्ति में पहुँचाते हैं। इस तरह से पसीना और मूत्र करीब करीब एक ही सी दो वस्तुएँ हैं, जिन्हें शरीर बाहर निकालता रहता है। जिस समय मूत्राशय पूरी तौर से भर जाता है, उस समय मूत्र-त्याग की इच्छा होती है। उसको उसी समय खाली करना चाहिए, अन्यथा शरीर को बड़ी हानि पहुँचने की सम्भावना रहती है। यह इतना आवश्यक है कि इस पर ध्यान न देना बड़ी भूल होगी। आजकल मिथ्या संकोच और मिथ्या आधुनिक रीति-रिवाज हमें जैसा करना चाहिए वैसा करने से रोकते हैं। फिर यदि गुर्दों और वस्ति में वह दूषित द्रव्य रुक जाय——जो शरीर से निकल जाना चाहिए था——तो क्या आश्चर्य है? बालकों में वस्तुओं का परिवर्त्तन तरुण मनुष्यों की अपेक्षा बड़ी शीघ्रता से होता है, क्योंकि उनमें जीवन-शक्ति अधिक होती है। इसलिए यदि हम बालकों की किसी भयानक हानि से रक्षा करना चाहते हैं तो उन्हें मल-मूत्र कभी नहीं रोकने देना चाहिए। यदि मूत्र-त्याग ठीक समय पर नहीं किया जायगा, तो शरीरस्थ अन्य वस्तु के समान मसाने में भी रासायनिक प्रक्रिया होने लगेगी और उद्वेग उत्पन्न हो जायगा। इससे मसाने में गर्मी बढ़ जायगी, परिणाम यह होगा कि मूत्र का द्रव-अंश भाप बन कर उड़ जायगा और उसमें से नमक का भाग बाकी रह जायगा। इस कारण मूत्राशय में जाने वाले गुर्दों के पदार्थ गुर्दे ही में रुक जायँगे और उनमें परिवर्त्तन-क्रिया होने लगेगी। यथा समय मल-मूत्र का त्याग न करके जब उनके वेग को रोका जाता है तब उनकी हाजत ही मिट जाती है और जब हम उन्हें त्यागना चाहते हैं तब वे नहीं उतरते। लेकिन उस मूत्र का क्या होता है? वह मूत्र वस्ति में कम हो जाता है और इस कारण शरीर में अवश्य मिल जाता है। मूत्र का कुछ भाग रासायनिक क्रिया के कारण भाप में बदल कर शरीर तथा खून में फिर मिल जाता है। मूत्र के इस प्रकार उड़ जाने से गुर्दों और मूत्राशय में नमक और न घुलने वाले पदार्थों के पीले रंग के छोटे छोटे रवे बाकी रह जाते हैं जो बाद में अपूर्ण रूप से निकाल दिए जाते हैं अर्थात् वे हमेशा पूरी तरह नहीं निकलते। मूत्राशय में जमे हुए द्रव्य को खुर्दबीन से दो सौ गुना बड़ा करके देखा जाय, तो हमें उसमें सूक्ष्म रवे दिखाई देंगे। यदि उनको अलग अलग देखा जाय, तो पीले और यदि एक साथ देखा जाय तो ललाई लिए हुए दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार जब मूत्राशय दूषित पदार्थ से भर जाता है, तब साधारणतः पथरी रोग पैदा होता है।

यह रोग शरीर में विकार उत्पन्न होने पर अथवा प्रकृति विरुद्ध आहार-विहार करने से उसी तरह जमता है जैसे एंजिन के 'ब्वायलर' में पपड़ी जम जाती है। यह तभी जमती है जब कि तापमान अधिक हो और खनिज द्रव्यों से युक्त पानी व्यवहार में आया हो। यह पपड़ी वर्षा के पानी में बहुत कम जमती है। मूत्र भाप के रूप में उड़ जाता है और छोटे छोटे रवे मिलकर जुड़ जाते हैं। जब तक ये रवे बहुत छोटे छोटे होते हैं तब तक वे मूत्र के साथ निकलते रहते हैं और किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होती परन्तु जब ये बड़े हो जाते हैं तब ये नली में 'दर्दगुर्दा' पैदा कर देते हैं। इसीको पथरी का रोग कहते हैं।

पथरी की तेज नुकीली धार नली की झिल्ली पर आघात पहुँचाती है और उसमें प्रदाह पैदा कर देती है। यह मूत्राशय में भी होती है। यदि पेड़ू में विजातीय द्रव्य के अधिक भार से मूत्र-नालिकाओं का मार्ग संकुचित हो जाता है तो पथरी के ये टुकड़े मूत्र के साथ बाहर नहीं निकल सकते और मूत्राशय में रह कर एक शिला के रूप में इकट्ठे हो जाते हैं। वहाँ पर निरन्तर घूमते रहने से वह शिला गोलाकार हो जाती है; परन्तु फिर भी वह अपने नुकीलेपन को कायम रखती है। यह बात नहीं कि पेशाब के अवरोध से बराबर पथरी ही बने।

पेशाब का स्वभाव यह है कि वह अपना सम्पूर्ण स्वरूप बदल कर शरीर में विजातीय द्रव्य बन जाता है। इससे और भी अनेक प्रकार के रोगों की उत्पत्ति हो सकती है।

कूने साहब की सारी बातों का सार यही है कि विजातीय द्रव्य का शरीर में एकत्रित होना ही रोग का कारण बनता है। अतः इसकी सफल चिकित्सा तभी सम्भव है जब कि शरीर के किसी निर्दिष्ट स्थान से उसे पुनः बाहर निकाल दिया जाय। आयुर्वेद और हकीमी में पथरी एक असाध्य रोग समझी जाती है। एलोपैथी में चीरना ही इसका एकमात्र उपाय है परन्तु प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा इस महाघातक रोग से भी मुक्ति मिली है और मिल सकती है। यदि धैर्य और संयम के साथ इस मार्ग का अवलम्बन किया जाय तो दो तीन महीने में पथरी ऐसे कठिन रोग से अवश्य छुटकारा मिल सकता है। 'जीवन-सखा' में पथरी के रोगियों की रोग-मुक्ति की कहानी अनेक बार निकल चुकी है। अतः मैं अब चिकित्सा-क्रम लिख रहा हूँ।

उपचार

१——पथरी प्रायः बालकों को होती है परन्तु पूर्ण वयस्क को भी हो सकती है। पथरी के रोगी को लम्बे उपवास से आश्चर्यजनक लाभ होता है। परन्तु लम्बा उपवास बिरले ही रोगी कर सकते हैं। अतः साधारण रोगी के निमित्त एक सप्ताह का रसाहार, तीन सप्ताह तक फलाहार और उसके पश्चात् कुछ काल तक भोजनसुधार करने से पथरी सदा के लिए चली जाती है। प्रथम सप्ताह में पथरी के रोगी को केवल नारंगी का रस देना चाहिए। रसाहार और फलाहार-काल में दोनों समय मिट्टी की पट्टी आधे घंटे तक रखकर शुद्ध जल का एनिमा अवश्य देना चाहिए। दिन में तीन-चार बार मिट्टी की पट्टी दर्द के स्थान पर देनी चाहिए। स्थानीय वाष्प-स्नान पन्द्रह मिनट तक जरूर एक दिन का अन्तर देकर देना चाहिए। हरी और पीली बोतल का जल सम भाग लेने से इस पर जादू का काम करता है। एक माह के पश्चात् रोगी को प्रातःकाल दो सन्तरे का रस, दिन में चोकरदार आटे की रोटी, पपीते की तरकारी और टमाटर, पुदीना इत्यादि का यथेष्ट मात्रा में सलाद देना चाहिए। शाम को सेब और सलाद देना चाहिए। इसके साथ ही साथ पेड़ू-स्नान सात मिनट तक दोनों समय एक सप्ताह तक लेना चाहिए। दूसरे सप्ताह से सुबह मेहन-स्नान १५ मिनट तक और शाम को पेड़ू-स्नान १५ मिनट लेना चाहिए। स्नान के पश्चात् यथाशक्ति व्यायाम करना चाहिए। स्नानों का समय क्रमशः बढ़ाकर मेहन-स्नान (सिट्ज बाथ) आधा घंटा तक और पेड़ू स्नान २० मिनट तक लेना विशेष लाभदायक होगा। सप्ताह में एक बार सारे शरीर का वाष्प-स्नान या सूर्य-स्नान केले की पत्ती लेकर, उसके बाद पेड़ू-स्नान करना चाहिए। रसाहार के समय पानी खूब पीना चाहिए। फलाहार के समय जहाँ तक हो सके सेब, नारंगी, अनार, नीबू और खरबूजा सेवन करने से शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ होगा। खरबूजे का कल्प पथरी पर अचूक होता है। यदि सम्भव हो तो एक ही प्रकार का फल फलाहार काल में लेना उत्तम होता है। पपीते का बीज पानी में मलकर छान कर पीने से पेशाब में विशेष अन्तर हो जाता है और पथरी शीघ्र दूर होती है। चिकित्सा-काल में कभी कभी दर्द कुछ समय के लिए बिल्कुल ही चला जाता है और जब 'स्टोन' मूत्र नली से निकलने लगता है तब रोगी मारे दर्द के पहिले से भी अधिक वेग से चिल्लाने लगता है। ऐसा आक्रमण कभी कभी कई घंटों तक चलता है। ऐसा प्रायः पथरी के निकलने के समय ही होता है। ऐसे मौके पर उपवास, स्थानीय पट्टी, एनिमा और वाष्प-स्नान को काम में लाना चाहिए। रोग-मुक्त हो जाने पर भी भोजन-सुधार के साथ स्नानों को कई महीने तक चलाना चाहिए अन्यथा पुनः इसका आक्रमण होने की सम्भावना रहती है। यह बड़ा ही हठी रोग है।

* * *

अपनी मालिश आप

तनदुरुस्ती, ताकत और खूबसूरती के लिए

मोहम्मद अब्दुलसत्तार खैरी, एम० ए०

इस लेख के द्वारा हम 'जीवन सखा' के पाठकों को प्राकृतिक स्वास्थ्य के एक नए विशारद से परिचय कराना चाहते हैं। आप अलीगढ़ यूनिवर्सिटी में स्वास्थ्य-व्यायाम के इंचार्ज थे। जर्मनी, फ़्रान्स, स्वेडेन, फिनलैण्ड, रूस आदि यूरोप के अनेक देशों में आपने अपने जीवन के अनेक वर्ष बिताए हैं और वहाँ के लोगों में भारतीय व्यायाम-पद्धति के प्रति आस्था उत्पन्न की है। इस समय आप नजरबन्द हैं। यह लेख आपने उर्दू में लिखा है, जिसे यहाँ हिन्दी लिपि में रूपान्तरित कर दिया गया है—सं०

बदन का मलना, सहलाना, सूतना, रगड़ना, दबाना, गूँधना, बेलना और बदन पर थपेड़े लगाना, मुक्के या घूँसे लगाना, चप्पियाँ लगाना, चुटकियाँ लेना और इसी तरह जो काम भी बदन के साथ करना उनके लिए जो शब्द हमारे मुल्क में सबसे ज्यादा बोला जाता है वह बदन की मालिश है, और जो शब्द अंग्रेजी में इस्तेमाल होता है वह फ़्रांसीसी शब्द 'मसाज' है। चूँकि मुझे मालिश के अलावा कोई और अच्छा शब्द मालूम नहीं, इसलिए मैं इसी शब्द को इस्तेमाल करूँगा। पढ़ने वालों को चाहिए कि 'मालिश' से वह तमाम माने समझ लें जो ऊपर लिखे बारह शब्दों से मालूम होते हैं।

बहुत ही पुराने जमाने से बहुत सी बीमारियों के इलाज में बहुत से मुल्कों में मालिश का इस्तेमाल किया जाता था। पुराने चीनी, मिस्री और हिन्दी लोग इसको अच्छी तरह से जानते थे। पुराने यूनानी और रूमी बीमारियों के अलावा अपने हमामों में नहाने के बाद भी मालिश कराते थे। तिब्बी यूनानी का बाबाआदम बोकरात (Hippocrates) मालिश को बीमारियों के अलावा मोच और जोड़ों के उतर जाने में इस्तेमाल करता था। रूमी हकीम और तिब्बी यूनानी का बड़ा सरधरा जाल यूनुस भी मालिश का इस्तेमाल करता था और उसने मालिश को कई किस्मों में तकसीम किया था। और अपने हिन्दुस्तान का हाल तो हमको मालूम ही है। अब तक मालिश के माहिर मौजूद हैं। बीमारियों के अलावा खास कर मुख्तलिफ किस्म के दर्दों में इस्तेमाल के लिए हमारे पहलवान लोग भी थकान उतारने और बदन में लचक पैदा करने के लिए मालिश करवाते हैं। औरतों में तो मालिश का इस्तेमाल बहुत आम है। तरह तरह के दर्दों में, खास कर कमर के दर्दों के लिए, मालिश बहुत फ़ायदा देती है। सुना है कि मद्रास के सूबे में मालिश का बहुत रिवाज है। मुल्क भर में लोग थकान उतारने के लिए पाँव दबवाते हैं, चप्पियाँ लगवाते हैं। बाज वक्त बाप अपने लड़कों से कहते हैं कि खड़े होकर मेरी टाँगों पर चलो। ये सब मालिश ही की किस्में हैं। मगर मालिश की बुनियाद केवल तजुर्बे और अमल पर थी। बेटे बाप से और शागिर्द उस्ताद से मालिश करना सीख लेते थे। जहाँ तक मालूम हो सका है, सबसे पहले सन् १८७० में हालैंड के एक डाक्टर मेजगर ने मालिश की बुनियाद इल्मी तौर से इल्म फीनरलोजी (Phynirlogy) की डाली। उसको इसमें पूरी कामयाबी हुई। उसने इसकी बिना पर एक निजामे इलाज (System of therapy) कायम किया, जिसको बहुत जल्द जर्मनी के मशहूर डाक्टरों ने मान लिया और उसका इस्तेमाल शुरू कर दिया। फिर तो इलाज का यह तरीका फैलना शुरू हो गया और इसने फ़्रांस में बड़ी तरक्की की, मगर अभी तक यह सिर्फ बीमारियों और तकलीफों के इलाज में ही इस्तेमाल होता है। बदकिस्मती से ईसाई मजहब के असर की वजह से अपने बदन को मजबूत और ताकतवर रखने और बनाने और खास कर बदन की खूबसूरती बढ़ाने की तरफ तवज्जो करने का शौक बिल्कुल जाता रहा था। यह हाल ही की बात है कि पुराने यूनान के ओलम्पिया खेलों के दुबारा जिन्दा करने के साथ साथ यह शौक भी फिर बढ़ना शुरू हुआ है।

बदन को तन्दुरुस्ती के साथ मजबूत, ताकतवर और खूबसूरत बनाने के शौक के साथ मालिश के तरीकों में भी बहुत तबदीली पैदा हो गई है। क्योंकि अब मालिश बीमारियों के इलाज के अलावा बदन के ताकत और खूबसूरत बनाने में भी कसरत से इस्तेमाल होती है। इस किस्म की मालिश 'स्पोर्ट मसाज' के नाम से मशहूर है। इस वक्त मुझको कोई मुनासिब शब्द अपनी जबान में इसके लिए नहीं मिलता। बस, इस मजमून में 'ताकती मालिश' से मेरा मतलब 'स्पोर्ट मसाज' ही होगा। 'स्पोर्ट मसाज' और दूसरी मसाज के तरीकों में जो बड़ा फर्क है वह यह है कि स्पोर्ट मसाज तन्दुरुस्त बदन पर किया जाता है। इसलिए इसमें इतनी एतमाद और नजाकत की जरूरत नहीं, जितनी बीमार बदन पर मालिश करने में जरूरत होती है।

स्पोर्ट मसाज या ताकती मालिश के सबसे पहले झंडाबर्दार फिनलैंड के लोग हैं और फिनलैंड के बाद अमेरिका ने भी इसमें बहुत दिलचस्पी ली है। सन् १९१४-१८ की बड़ी लड़ाई के बाद चूँकि वारसाई के मुहायदे की बिना पर जर्मनी में जंगीत (लड़ाई) का खात्मा कर दिया गया। इसलिए ज़र्मनी ने तन्दुरुस्ती और ताकत बढ़ाने के लिए हर किस्म की स्पोर्ट की तरफ बहुत ज्यादा ध्यान दिया और इसमें उसकी कामयाबी के गवाह सन् १९२८ में आम्स्टरडम के और १९३२ में अमेरिका के और १९३६ में बर्लिन के ओलम्पिया के खेल हैं। सन् १९३६ के बर्लिन के ओलम्पिया खेलों में अमेरिका और फिनलैंड दोनों जर्मनी से दूर रह गए। इस कामयाबी में ताकती मालिश का भी बहुत बड़ा हिस्सा था। ये सब पुरानी जर्मनी की बाबत है। मौजूदा जर्मनी के मोतल्लिक मैं कुछ नहीं कहता। अफसोस, कि हमारे मुल्क में सारे पुराने फन मरते जा रहे हैं या मर गए। इस तरह मालिश के फन के माहिर भी बहुत कम हो गए, गोकि अब भी कभी कभी कहीं कहीं कोई उस्ताद मिल जाता है। हमारे मुल्क में आफत यह है कि पुरानी बातें और पुराने फन तो मिटते जाते हैं और उनकी जगह मौजूदा इल्म और फन की बुनियाद पर जो नये मुफीद काम हैं वे अभी कायम नहीं हुए। हमारे मुल्क में नये स्पोर्ट मसाज या ताकती मालिश का जानने वाला शायद ही कोई हो। असल में अभी पूरी तरह इस किस्म के स्कूलों और कालिजों के सीखे हुए, जहाँ यह मसाज सिखाया जाता है, यूरोप और अमेरिका में भी बहुत कम हैं और फिर इनकी फीसें इतनी हैं कि हर एक देने के लिए तैयार नहीं, और न दे सकता है। बीमार को अच्छा करने के लिए, उसको मौत के मुँह से छुड़ाने के लिए, जो कुछ भी हमसे हो सकता है अपने लिए या अपने किसी चहते के लिए हम करने को तैयार हैं। मगर फकत ताकत बढ़ाने के लिए या बदन को खूबसूरत बनाने के लिए हमारे पास इतना है ही नहीं कि हम कुछ खर्च कर सकें और फिर इस किस्म का मसाज कम से कम हफ़्ते में एक या दो दफा होना चाहिए और फिर इसको बराबर जारी रखना चाहिए। इसका खर्च सिवा अमीरों के और कौन उठा सकता है! इस हालत में हम सिर्फ यही कर सकते हैं कि अपनी मालिश आप करना सीखें। गो हम अपनी मालिश आप उसी तरह से नहीं कर सकते जिस तरह दूसरा आदमी हमारी मालिश कर सकता है, फिर भी बहुत कुछ कर सकते हैं।

किसी ने कहा है कि हम लोग अपने पालतू जानवरों

की अपने बच्चों और खुद अपने आप से ज्यादा देखभाल करते हैं। अपने सामने उनको मुनासिब दाना और चारा देते हैं, उनको नहलाते हैं, यहाँ तक कि बाजों की मालिश तक करते हैं और अपने बदन की देखभाल का तो कभी ख्याल भी नहीं आता। मुसलमान गो वज़ू करता है और कम से कम जुम्मे के जुम्मे नहाता है और हिन्दू भी बराबर अपना स्नान करता है मगर यह बदन की सफाई और तन्दुरुस्ती के लिए नहीं बल्कि इसलिए कि उसका दीन और धर्म ऐसा कहता है। इसका नतीजा यह हुआ कि मुसलमान का पाँच वक्त का वज़ू और हिन्दू का रोज रोज का स्नान उसके बदन को साफ नहीं करता, बस जरा गीला कर देता है। यह सभी जानते हैं कि हमारी तन्दुरुस्ती का दारोमदार हमारी सफाई पर है और सफाई बदन की देखभाल का सिर्फ एक हिस्सा है। यहाँ मैं मजमून से दूर चला जाऊँगा, अगर यह कहूँ कि हम लोग ठीक ठीक खाना खाना भी नहीं जानते। यह माना कि हम गरीब हैं, फिर भी हम बहुत कुछ कर सकते हैं। अल्लाह ने, भगवान ने, वे चीजें, जो हमारी तन्दुरुस्ती के लिए जरूरी है, बहुत कसरत से पैदा किए हैं। उनमें से या तो बहुत सी मुफ़्त हैं या बहुत सस्ती, और जिनका ठीक ठीक इस्तेमाल करना बहुत ही आसान है। फिर भी हम कुछ नहीं करते। बहुत कम लोग जानते हैं कि हमारी खाल या हमारा चमड़ा हमारे लिए क्या क्या करता है और उसको ठीक रखना हमारे लिए कैसा ज़रूरी है। चमड़े या खाल को ठीक और तनदुरुस्त रखना ताकि वह अपना काम ठीक से कर सके, ताकती मालिश का बड़ा नतीजा है। बदन को रगड़ने के बाद हरेक ने देखा होगा कि खाल में सुर्खी आ जाती है। यह इसलिए कि ख़ून सतह के करीब जल्दी जल्दी दौड़ने लगता है और ख़ून में हमारे बदन की गिजा लदी होती है। जहाँ जहाँ ख़ून दौड़ कर जाता है वह गिजा तकसीम कर जाता है।

इस मजमून में मैं ताकती मालिश के तरीकों पर बहस नहीं कर सकता और न पूरी तरह से यह बता सकूँगा कि किस किस तरह इससे क्या फायदे पहुँचते हैं। आइन्दा इसके मजमूनों में इसके मोतल्लिक पूरी तरह लिखूँगा कि पढ़ने वाला खुद उस पर अमल कर सके। जहाँ जरूरी होगा तस्वीरें भी देने की कोशिश करूँगा। अब मैं इस मजमून को खाल के अहमियत के बारे में जो एक मशहूर प्रोफेसर स्लाइज ने लिखा है, उसको जहाँ तक हो सके लिख कर खत्म करता हूँ।

"हमारी खाल एक अजीब जादू का लिबास है, जिसको पहने हुए हम इधर उधर फिरते हैं। जवानी के जमाने में इसमें एक किस्म की चमक दमक और अजीब शान होती है। इसकी खूबसूरती दिलों को अपनी तरफ खींचती है, मगर बुढ़ापे में इसमें झुर्रियाँ पड़ जाती हैं जिससे इन्सान की बेबसी जाहिर होती है। हमारी खाल का हमारी जिन्दगी में क्या काम है ? हमारी खाल साँस लेती है और हमारी जिस्म की गर्मी को दुरुस्त रखती है और बदन के अन्दर जो चीजें इस्तेमाल में आ चुकी हैं उनकी गन्दगियों को बाहर निकाल देती है, हवा को चूसती है, रोशनी और नमी को लेती है और बाहर करती है, और वह दवाइयों और जहरों को हिफाजत से जमा रखती है और तेल जो हमारी हिफाजत करता है वह उससे निकलता है। वे सिकुड़ती हैं और फैलती हैं। उनसे एक किस्म की खुशबू निकलती है, जिससे न सिर्फ कौमें ही पहचानी जा सकती हैं बल्कि जो हमको एक खास शख्सीयत (Personality) भी देती है। अलावा इसके वह हमारे ऐशाब का (Organ of our nervosity) आला है। यही नहीं बल्कि वह एक गलीचा है जिसमें हमारे अजीब वो गरीब इस्तेयाब (Feelings) के तारे बुने हुए हैं, जैसे आसमान के तारे बेगिनती हैं इसी तरह हमारी रूहानी जिन्दगी के असर भी बेगिनती हैं। हमारी खाल डर जाती है और शौक और जौक और नफरत के महसूसात (अनुभव) भी उस पर अपना असर डालते हैं। बेताबी गुस्से और शर्म से हमारी खाल लाल हो जाती है और खौफ और गमी (रंज) के असर उसको जर्द कर देते हैं। हमारी बीमारी का वह बहुत

ही बढ़िया बैरोमीटर (Barometre) है जिसके जरिए एक माहिर हमारी तन्दुरुस्ती, बीमारी और आने वाली बीमारी के बारे में बड़े बड़े नतीजे निकाल सकता है। कैसे कैसे हिस्सीस उसमें भरे हुए हैं। करोड़ों छोटे छोटे ऐशाब के दाने जो खाल में बोये हुए हैं, हमको कैसे मजे, कैसी तक्सीन और कैसी नफरत दिलाते हैं। इनके जरिए से एक आदमी से दूसरे आदमी में हिस्सीस की नहरें जारी हो जाती हैं। एक के दूसरे के छूने में बाज वक्त कैसी बिजली दौड़ जाती है। बाज वक्त महज एक का दूसरे पर हाथ रख देने से अजीब हाल हो जाता है। ये सब कुछ हमारे खाल की किस्में हैं।

इससे मालूम हो गया होगा कि हमारे बदन में खाल की अहमियत है और खाल की दुरुस्ती यानी ठीक तरह से रख-रखाव ताकती मालिश के जरिये से ही हो सकता है।

◆ ◆ ◆

पीड़ा-रहित प्रसव

श्रीमती लक्ष्मी अग्रवाल

जनन-सम्बन्धी आँकड़ों के देखने से पता चलता है कि हर साल भारी संख्या में इस देश की माताओं को प्रसव-काल में अकाल मृत्यु का शिकार बनना पड़ रहा है। सौभाग्य से जो माताएँ बच भी जाती हैं, उनके सौंदर्य और स्वास्थ्य में घुन-सा लग जाता है, वे अपना स्वाभाविक तथा स्त्री-सुलभ आकर्षण खो बैठती हैं। इसलिए मातृ-रक्षा का प्रश्न हमारे लिए बहुत अधिक चिन्तनीय बन गया है। माताओं की किस प्रकार से रक्षा की जा सकती है, प्रसव-काल के बाद उनके स्वास्थ्य और सौन्दर्य को कायम रखने के लिए क्या प्राकृतिक उपाय हैं, यह इस लेख में पढ़िए——सं०

प्रसव-काल ही स्त्री-जीवन की सबसे जटिल समस्या है। नारी ही बच्चे को जन्म दे उसका पालन-पोषण कर उसे इस योग्य बनाती है कि वह शिशु 'भारत की भावी आशा और कल का नागरिक' बन सके। जन-समाज जानता है कि योग्य माता ही योग्य सन्तान उत्पन्न कर सकती हैं। हम जानते हैं कि औरतों की हालत कितनी गिरी हुई है और जब माता ही योग्य नहीं तो बच्चे कैसे योग्य हो सकते हैं। योग्यता प्राप्ति के लिए चाहिए—विद्या, बल, चातुर्य, प्राकृतिक भोजन और सबसे मुख्य है——तन्दुरुस्ती अर्थात् माता का स्वास्थ्य।

यह प्रायः सभी जानते हैं कि प्रसव-काल के समय माता को कितनी अधिक पीड़ा होती है। इसी प्रसव-काल की ही वेदना के कारण कितनी मातायें काल का ग्रास बन जाती हैं, कितने शिशु कुसमय में ही अनाथ हो जाते हैं, कितनी सन्तानों के अंग भंग और माताओं को कितनी ही बीमारियाँ हो जाती हैं जिनकी ओर हमारा ध्यान ही आकृष्ट नहीं होता और हम उसे दैविक प्रकोप समझ कर चुप्पी साध लेते हैं। मेरी इस बात को सुन कर अधिकांश बहिनें कहने लगेंगी कि डाक्टरी सहायता का उचित प्रबन्ध कर लेना चाहिए। पर मैं पूछती हूँ कि कितनी बहिनों को यह सहायता प्राप्त है? और फिर क्या इतने ही उत्तर से

हमें सन्तोष प्राप्त हो जायगा। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि बहुत अंशों में डाक्टरी सहायता आवश्यक है परन्तु यह तो हम अपनी आँखों से ही प्रत्यक्ष देखते हैं कि ज्यादातर शहर की और सभ्य समाज की नवयुवतियाँ ही, जिन्हें सब प्रकार की डाक्टरी सहायता प्राप्त है, इस प्रसव-वेदना की अधिकतर शिकार होती हैं। उन्हें गाँव की उन असभ्य स्त्रियों की अपेक्षा अधिक दुःख उठाना पड़ता है जो स्वयं ही काम-काज, तथा घर का सारा धन्धा अपने हाथ से करती हैं। शहर की औरतों को पढ़ी लिखी दाइयों और लेडी डाक्टरों की देख-रेख में रहते हुए भी बच्चा जनने के बाद बहुत सी बीमारियाँ हो जाती हैं परन्तु गाँवों की स्त्रियाँ, जो शिक्षित समाज में असभ्य गिनी जाती हैं, कितनी आसानी से प्रसव कर लेती हैं, जब कि वे गाँवों में अशिक्षित-दाइयों की सहायता पाती हैं। वे खेतों में काम करती हैं, चक्की पीसती हैं तथा घर का सारा काम काज करती हैं। शहर की फैशनेबिल युवतियाँ इस घर के काम से घबरा नित्य बिस्तर पर पड़ी रहती हैं और प्रसव-वेदना का असहनीय कष्ट उठाती हैं। गाँव की स्त्रियों के काम करने के कारण जननेन्द्रिय और उसके कल-पुर्जे अपनी ठीक अवस्था में रहते हैं और कभी कभी तो यहाँ तक होता है कि उनके बच्चे घर पर ही बिना किसी सहायता के आसानी से हो जाते हैं। उनके शरीर की आकृति उन्हें इस योग्य बनाती है कि वे इस कठिन पीड़ा का बहुत ही कम अनुभव करती हैं। डाक्टरी सहायता से बच्चा जनने में हमारी मातायें वा बहिनें अकसर बुरी तरह बीमार होती और मरती हैं। ऐसा क्यों होता है? क्या इस तरह की घटनाओं के लिए हम कुछ भी जिम्मेदार नहीं हैं? गर्भावस्था के समय और उसके पहिले भी शरीर की आकृति ठीक रखने के कुछ नियम हैं। बनावटी सभ्यता के इस युग में वे नियम भुलाये जा चुके हैं और समझाने पर जल्दी समझ में नहीं आते। उन्हें सुनकर प्रायः लोग हँसते और मखौल उड़ाते हैं। कुछ प्राकृतिक उपचार भी हैं जिनका पालन करने से प्रसव-पीड़ा बहुत अधिक अंशों में कम की जा सकती है। प्रसव-पीड़ा तो स्वाभाविक ही है परन्तु सहने योग्य बनाना तो प्रत्येक व्यक्ति के हाथ में है। बहुतों का कथन है कि प्रसव-पीड़ा आवश्यक है परन्तु मैं नहीं कह सकती इसमें कहाँ तक सत्य है। वयोवृद्ध पुरुष बच्चों के खेल-खिलौने और क्रीड़ायें देख कर कितने प्रसन्न होते हैं परन्तु क्या कभी उन्होंने उन्हीं बालकों की जननियों को इस असहनीय पीड़ा से बचाने के लिए डाक्टरी सहायता के अतिरिक्त और भी कोई प्राकृतिक उपचार किए हैं। डाक्टरी सहायता के साथ ही साथ माता को प्रसव के समय बहुत सहन-शक्ति और तन्दुरुस्त शरीर की आवश्यकता होती है, परन्तु क्या स्त्रियाँ अपने को इसके लिए तैयार करती हैं? कदापि नहीं। इस समय को तो वे दैव-आसरे छोड़ कर निश्चिन्त हो जाती हैं। डाक्टरी सहायता माताओं की निश्चलता को दूर करने का काफी प्रयत्न करती है और यह बताती है कि गर्भवती स्त्रियों को कितना और कैसा व्यायाम करना चाहिए, उनके भोजन, रहन-सहन और उनकी आकृति कैसी होनी चाहिए। अब शिक्षित समुदाय में इन बातों पर काफी प्रकाश डाला जा रहा है। जगह जगह पर जच्चाखाना या मातृ-गृह (Maternity Hospitals) स्थापित किए जा रहे हैं परन्तु यह तो हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि सफलता कहाँ तक और कितनी मात्रा में मिली है।

यह बात तो स्वाभाविक ही है कि अधिकांश बालिकायें अपने जीवन में मातृत्व के सुख का अनुभव करेंगी और इतना कहने में कोई शर्म की बात नहीं है। हम भारतवासियों में इतने अन्धविश्वास और दुर्भाग्यवश इतनी मूर्खता फैली हुई है कि हम समझ नहीं सकते कि वही बालिकायें आगे चलकर इस पीड़ा का दुर्दान्त अनुभव करेंगी। हम इस विषय पर इतने अज्ञान क्यों बने रहें? माता-पिता यह नहीं सोचते कि सन्तान के प्रति उनका क्या कर्तव्य है और उन्हें कैसी शिक्षा दी जानी चाहिए। बालिकाएँ कालेजों और विश्वविद्यालयों से

बड़ी बड़ी डिगरियों से विभूषित होकर निकलती हैं परन्तु उनकी इस शिक्षा के साथ किस अनुपात में उन्हें जीवन की इस कठिन परीक्षा की शिक्षा दी जाती है जिसमें अधिकांश को उत्तीर्ण होना है ?

पशुओं की ओर दृष्टिपात करने पर हमें ज्ञात होगा कि वे भी इस योग्य होते हैं कि समय पूरा होने पर आसानी से प्रसव करें। जरा सोचिए, क्या हमारी गाय को बच्चा जनने के लिए किसी लेडी डाक्टर की जरूरत होती है। यह क्यों ? उनके पेड़ू की बनावट, उनकी मांसपेशियाँ इस योग्य होती हैं कि समय आने पर वे फैल जाती हैं और प्रसव सरलता से हो जाता है। यह बात नहीं कि जानवरों को कष्ट होता ही नहीं परन्तु वह तो प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए अपना जीवन-यापन करते हैं; फिर मनुष्य ही प्रकृति से इतनी दूर क्यों है ?

संसार में और भी तो प्राणी हैं क्या सिर्फ मनुष्य ही इतना कमजोर है कि वह दुख उठाया करे। क्या उसके पढ़ने लिखने, विद्योपार्जन करने सभ्य वनने तथा सभी प्रकार शक्तिमान वनने का यही नतीजा है कि स्वस्थ वा सुखी रहने के अलावा वह रोगों का शिकार हुआ करे। मनुष्यों में भी लोग जो कम पढ़े-लिखे और सभ्यता के पीछे हैं वे पढ़े-लिखे और सभ्य लोगों की अपेक्षा कम रोग-ग्रस्त होते हैं। इसका कारण क्या है ? यही कि हम प्रकृति से बहुत दूर हट गए हैं। मनुष्य ने अपने चारों ओर का वातावरण अप्राकृतिक बातों से इतना दूषित कर रक्खा है कि वह अपने को इनसे विलग नहीं करना चाहता और इसीमें रहते हुए इतना असहनीय कष्ट उठाने को प्रस्तुत रहता है। इसमें लेशमात्र सन्देह नहीं है कि हमने प्रकृति से दूर होकर अपने जीवन को विषाक्त कर लिया है। हमारे अप्राकृतिक रहन-सहन, खान-पान का हमारे स्वास्थ्य पर कितना बुरा प्रभाव पड़ा है और उससे हमें क्या क्या कष्ट उठाने पड़ते हैं यह तो सभी जान सकते हैं पर ध्यान विरले ही देते हैं। हम अपनी बुद्धि से काम नहीं लेते। हम गम्भीरता पूर्वक नहीं सोचते कि हम प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए अपना शारीरिक बल ठीक रक्खें, जिसे हमारी बढ़ी हुई सभ्यता और फैशन ने रोक रक्खा है। हम काम करना अपनी शान और योग्यता के खिलाफ समझते हैं। पाश्चात्य स्त्रियों की नकल कर अपनी वेश-भूषा तो बदल देते हैं, परन्तु हम उनके अच्छे कामों की ओर तनिक भी ध्यान नहीं देते।

प्रसव-पीड़ा से बचाव के कुछ सरल उपाय

अब मैं होने वाली माता के लिए कुछ सरल और प्राकृतिक उपाय बताऊँगी जिन पर ध्यान देने तथा जिन्हें प्रयोग में लाने से प्रसव-पीड़ा अधिकांश मात्रा में कम की जा सकती है।

सबसे पहली और मुख्य बात जो बहुत अधिक ध्यान देने योग्य है वह है माता के पेड़ू की आकृति और ख़ासकर जननेन्द्रिय का अपनी ठीक अवस्था में होना। जननेन्द्रिय का ठीक आकार गोल होगा और यह सिर्फ उन्हीं स्त्रियों में मिलता है जो बचपन से ही प्राकृतिक भोजन पर रक्खी जाती हैं। हम रोज देखते हैं माता-पिता अपने बालकों को कितना चटोरा बना देते हैं। दरवाजे से चाट वाले को निकलते देखकर माता जी अपनी प्यारी पुत्री को झट से पैसा निकाल कर दे देती हैं और इसी चटोरी आदत का बाद में उसके जीवन पर क्या असर पड़ता है इस पर कोई ध्यान ही नहीं देता। स्वस्थ बालिकाएँ जिन्हें अपने जीवन के खाद्य पदार्थों में विटामिन 'डी' अधिक मात्रा में मिली है सरलता से प्रसव कर लेती हैं। पेड़ू की आकृति बिगाड़ने में इस युग के फैशन ने भी बहुत साथ दिया है। सभ्य समाज की कहलाने वाली नवयुवतीं ऊँची एड़ी का जूता, कसी पोशाक पहन कर किस शान के साथ निकलती हैं, यह तो प्रायः सभी देखते हैं। बालिकाओं की बढ़ती हुई अवस्था में फैशनेबिल मातायें ऊँची एड़ी के जूते पहनाने में नहीं चूकतीं पर वे इसके भयंकर परिणाम पर तनिक भी ध्यान नहीं देतीं ! इस ऊँची एड़ी के कारण पेड़ू की आकृति गोल होने के बजाय अंडाकार

हो जाती है और इस प्रकार गोल पेडू की अपेक्षा इसकी परिधि कम हो जाती है और बच्चे के बाहर निकलने का रास्ता संकुचित हो जाता है।

किसी स्त्री के दाँत, जबड़े और चलने के ढंग को देखकर हम उस की शक्ति का पता लगा सकते हैं। 'कैलशियम' की कमी के कारण माता के दाँत कमजोर हो जायेंगे और उसकी तन्दुरुस्ती पर बुरा प्रभाव पड़ेगा और गर्भाशय की बनावट में खराबी आ जायगी। वह अपनी जगह से हट जायगा और शरीर में कमजोरी आ जायगी। स्वस्थ स्त्री सीधे तन कर खड़ी होकर चल सकेगी परन्तु कमजोर स्त्री उठने में कष्ट अनुभव करेगी और इस तरह उठने-बैठने से उसके पेडू की मांस-पेशियाँ खिचेंगी। उनमें फैलाव होगा और प्रसव-काल के समय वे खिंच जायेंगी। ऊँची एड़ी के जूते पहनने से हम अपने पंजे पर अधिक जोर देंगे और इससे कूल्हे की हड्डी के घूम जाने का भय है और पेडू की आकृति बिलकुल नष्ट हो जायगी। ऊँची एड़ी के जूते पहनने से शरीर आगे की ओर झुक जाता है जो रीढ़ की हड्डी और पैर के झुकाव को तो एक ठिकाने लगा जाता है। इन्हीं फैशनेबिल नवयुवतियों के बच्चा पैदा करने के समय डाक्टरों की आवश्यकता होती है।

बचपन से ही बच्चों का स्कूल डेस्क पर झुक कर बैठना पेड़ू की आकृति को बिगाड़ देता है। स्कूल की अध्यापिकाओं व माता-पिता का कर्तव्य है कि वे इन बातों पर विशेष ध्यान दें।

फैशन के कारण कसी साड़ियाँ व कसी बाडियाँ पहनी जाती हैं जो पेड़ू को नली की शक्ल दे देती है, जो सुन्दरता का विशेष चिन्ह समझा जाता है।

दूसरी बात जो ध्यान देने योग्य है वह है माता का भोजन। खाद्य पदार्थों का शरीर पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। अप्राकृतिक भोजन से शरीर के अन्दर रोग पैदा हो जाते हैं जो माता और बच्चे दोनों के लिए ही हानिकारक हैं। प्रायः यह कहा जाता है माता को गर्भावस्था के समय जो जी में आए खाने देना चाहिए और वह अण्ट-सण्ट खाने लगती हैं। बहुत सी स्त्रियाँ तो कोयला और मिट्टी खाने तक में नहीं चूकतीं।

तीसरी बात है कसरत के अभाव से मांसपेशियों की कमजोरी। स्त्रियों के लिए कसरत आवश्यक है। बहुतों का विचार है कि कसरत करने से स्त्रियों में अस्वाभाविक कठोरता आ जाती है परन्तु स्त्रियों के लिए कसरत उतनी ही जरूरी हैं जितना कि पुरुषों के लिए। स्त्रियों की कसरतें हैं चक्की पीसना, घर का काम काज करना, खाना बनाना आदि। थोड़ा सा व्यायाम भी आवश्यक है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि गाँव की स्त्रियों को इतनी वेदना क्यों नहीं उठानी पड़ती? सिर्फ काम करने के कारण। इसके विपरीत शहर की स्त्रियाँ रात दिन बिस्तरों पर पड़ी रहती हैं और उनकी मूल धारणा यह होती है कि गर्भ धारण के समय कोई काम न करना और बड़े आराम का जीवन व्यतीत करना चाहिए और इसी कारण वे प्रसव-वेदना का अधिक शिकार होती हैं। स्त्रियों को किसी अन्य प्रकार की कसरत की आवश्यकता नहीं है। जो किसान खेतों में जी तोड़ कर परिश्रम करते हैं उन्हें कसरत की क्या आवश्यकता है? जो स्त्रियाँ घर का सारा काम काज करती हैं उनकी तो कसरत स्वयं हो जाती है, उन्हें कसरत की क्या आवश्यकता। जो बालक रात दिन खेलते रहते हैं उन्हें कसरत की क्या आवश्यकता? यदि सभ्य समाज की नवयुवतियाँ घर का काम धन्धा करना अपनी शान के खिलाफ समझती हैं तो उनके लिए और भी तो कसरतें हैं।

गर्भ धारण के समय सबसे आवश्यक कसरत है टहलना। यह टहलना धीरे धीरे बढ़ाना चाहिए। यह तो अभ्यास के साथ बढ़ता रहता है। टहलना खुली हवा में होता है इससे श्वास खुल कर आती है और सारे अंगों में फुर्तीलापन और ताजगी रहती है। काफी साफ हवा फेफड़ों में जाती है।

गर्भवती स्त्री में असमतल भूमि पर चलना बहुत अच्छा होता है। दुर्भाग्यवश बहुतों का यह विचार है कि

इससे गर्भपात हो जाने का भय रहता है। परन्तु जो स्त्रियाँ ऊँची-नीची जमीन पर चलती और सीढ़ियों पर चढ़ती-उतरती हैं उन्हें प्राय: कष्ट कम होता है।

तीसरी कसरत जो स्त्रियों के लिए आवश्यक है वह यह कि उन्हें नथने खोल कर साफ हवा में धीरे धीरे साँस लेना और धीरे धीरे बाहर निकालने का अभ्यास करना चाहिए। यदि यह श्वास-क्रिया ठीक होगी तो इससे माता का स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहेगा।

चारपाई पर बैठ कर, हाथ पीछे खाट पर रखकर पैर तेजी से हिलाने चाहिए। इसके साथ ही साथ श्वास-क्रिया भी करते जाना चाहिए।

जमीन पर एड़ियाँ मिलाकर चित लेट जाना चाहिए। हाथ बगल में होंगे और फिर एक घुटने को ऊपर उठा फिर दूसरे को उठा साथ-साथ चलाने का अभ्यास करना चाहिए।

एड़ी मिलाकर सीधे खड़े होकर आगे को झुककर पंजे के छूने की चेष्टा करना परन्तु घुटने बिल्कुल न झुकें। यह बहुत लाभदायक सिद्ध होगा।

इन कसरतों से पेट और पेड़ू की मांसपेशियाँ ढीली होंगी जिससे पाचन ठीक होगा साथ ही साथ दूसरे अवयव भी पुष्ट होंगे और इस कारण प्रसव-पीड़ा कम होगी।

कसरत नियम से और रोज खुली हवा में की जानी चाहिए। सातवें या आठवें महीने में ये कसरतें बिल्कुल बन्द कर देनी चाहिए और तब बस घूमना जारी रखना आवश्यक है।

बच्चा प्रसव करने के बाद कसरत करने की सलाह डाक्टर से लेनी चाहिए। बिना उसकी सलाह के कसरत नहीं करनी चाहिए।

उपरोक्त बातों पर ध्यान देने से पता लगेगा कि भावी माता इन कसरतों को करते हुए प्रसव-पीड़ा से बहुत बच सकती हैं। हम लोग सभ्यता में बहुत आगे बढ़ चुके हैं। हमारा ज्ञान बहुत ऊँचा हो चुका है इसलिए यदि हम अपने घर की स्त्रियों से काम नहीं करवाना चाहते तो हमें ये कसरतें तो अवश्य ही करवानी पड़ेंगी।

(पृष्ठ ४०६ का शेषांश)

सुनाने वाली देव-दूतिका है। देश और जल-वायु के अनुसार लोग स्वच्छ, सीधा-सादा भोजन करें, जीवन को संयमपूर्ण और नियमित बनावें तथा अपने मस्तिष्क और हृदय को अनावश्यक किन्तु अनिष्टकारी भावनाओं—भय, ईर्ष्या, द्वेष, संताप, निराशा आदि—से मुक्त रख कर प्रसन्नतापूर्वक स्वास्थ्यमय जीवन व्यतीत करें, यही इसका प्रधान लक्ष्य है। प्रकृति के इसी सन्देश को हम अपने देश के कोने कोने में सुनाना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि यहाँ के लोग अपनी प्राचीन भारतीय संस्कृति और सभ्यता को फिर से अपनावें।

एक बात गाँवों के सम्बन्ध में भी। आजकल गाँवों में भी जो नाना प्रकार के संक्रामक रोगों का प्रकोप हम अक्सर देखते हैं, उसका कारण स्पष्ट है। देहात के लोग प्रकृति के निकटतम सम्पर्क में रहते हुए भी अपने अज्ञान के ही कारण इस तरह के रोगों के शिकार बनते हैं। स्वास्थ्य सम्बन्धी बहुत सी आवश्यक बातों के ज्ञान का अभाव, स्वच्छता अथवा सफाई के समुचित उपयोग की कमी आदि ऐसे अनेक कारण हैं जिनसे देहात के लोगों को भी अपने शहरी भाइयों की तरह प्रायः रोगों से पीड़ित होना पड़ता है। इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा का शहरों और देहातों दोनों में समान रूप से हम प्रचार करना चाहते हैं।

भोजन-विज्ञान

गेहूँ का आटा कैसा होना चाहिए

[श्री व्रजमोहन मिहिर]

आटा हमारे भोजन का एक खास अंग है। लेकिन आजकल बाजारों में जिस प्रकार का आटा साधारणतः बिकता है वह लाभकारक होने के बजाय अनिष्टकारी ही होता है। इस लेख में गेहूँ की किस्म तथा उसके गुण-दोष से पाठकों की जानकारी होगी और यह मालूम होगा कि मिलों में पिसे आटे कितने दूषित होते हैं। लेखक ने बैल की चक्की या हाथ की चक्की में पिसे हुए आटे के महत्त्व पर जोर दिया है।--सं०

जितने किस्म के अनाज हम लोग नित्य व्यवहार में लाते हैं उनमें गेहूँ का नाम सर्व प्रथम आता है। शहर के रहने वाले प्रायः सभी इसे इस्तेमाल करते हैं। निस्सन्देह, अनाजों का यह शिरोमणि है। शरीर के पोषण के लिए इसमें प्रोटीन, स्टार्च और कार्बो-हाइड्रेट पाया जाता है। अनाजों में विटामिन आमतौर से कम पाए जाते हैं, लेकिन और अनाजों की अपेक्षा, इसमें विटामिन 'बी' अधिक पाया जाता है। इसके चोकर में विटामिन 'डी' रहता है इसलिए आटे से चोकर को अलग न किया जाय। और अनाजों के मुकाबले में यह कुछ महँगा पड़ता है लेकिन इसके विशेष गुणों का विचार करते हुए इसकी थोड़ी सी महँगी नगण्य है। इसकी थोड़ी बहुत काश्त तो हिन्दुस्तान के प्रायः सभी हिस्सों में की जाती है लेकिन पंजाब और संयुक्त प्रान्त इसका घर है। पंजाब में और इस प्रान्त के पच्छिमी भागों में यह कसरत से पैदा किया जाता है। इन स्थानों का गेहूँ और स्थानों के गेहूँ से ज्यादा अच्छा समझा जाता है। इस प्रान्त में चंदौसी और हापड़ का गेहूँ स्वाद में अच्छा होता है। चंदौसी का गेहूँ कुछ महँगा होता है इसलिए दूकानदार उसे कम मँगाते हैं।

गेहूँ दो किस्म के होते हैं। उसकी एक किस्म, लाल होती है और दूसरी सफेद। लाल गेहूँ संयुक्त प्रान्त के दक्षिणी हिस्से में अधिक पैदा किया जाता है। यह देखने में पंजाब और इस प्रान्त के पच्छिमी हिस्से के गेहूँ की भाँति नहीं होता लेकिन खाने में इसका जायका भी अच्छा ही होता है। कुछ लोग इस गेहूँ को काफी जायके के साथ खाते हैं। पच्छिम का गेहूँ देखने में मोती की तरह लगता है। अच्छे गेहूँ की पहचान यह है कि वजन में वह भारी हो और देखने में शर्बती रंग का पानीदार हो। पच्छिमी गेहूँ का दाना और गेहुँओं की अपेक्षा ज्यादा बड़ा भी होता है। चँदौसी के गेहूँ की कुछ खास पहचान है। इसका दाना गोल गहरे शर्बती रंग का होता है, और मुँह की ओर कुछ चपटा होता है। इसकी रोटी खाने में मीठी होती है। गेहूँ खरीदते समय निम्न लिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए।

(१) दाना भारी हो। चख कर यह जान लेना चाहिए कि वह सूखा और कड़ा है, दाँत से चबाने में लसदार मालूम हो और जायका मिठास लिए हुए होना चाहिए। यह भी देख लेना चाहिए कि वह किसी प्रकार खोखला और घुन खाया हुआ न हो। देखने में उसके दाने सुन्दर और पानीदार हों। किसी किसी गेहूँ में मिट्टी तथा सरसों अधिक रहती है। खरीदते समय

इस पर भी ध्यान रखना चाहिए। लेकिन यह बात अच्छे गेहूँ की किस्म का ख्याल करते हुए गौण समझनी चाहिए।

गेहूँ में प्रोटीन और स्टार्च दोनों विद्यमान हैं इस लिए भारी होने से इसका व्यवहार कुछ कोष्ठ-बद्धता उत्पन्न करता है। इसके इस अवगुण को दूर करने के लिए इसके साथ काफी मात्रा में हरी सब्जी खानी चाहिए और साथ ही साथ आटे से इसका चोकर भी अलग न किया जाय। गेहूँ एक पूर्ण भोजन है। सब्जी के साथ इसे इस्तेमाल करता हुआ प्राणी आजीवन इस पर रह सकता है।

इसके इस्तेमाल में हम लोग बहुत गलती करते हैं। गेहूँ को आटे में परिवर्तित करने के लिए हिन्दुस्तान में बहुत बड़ी बड़ी 'फ़्लावर' मिलें हैं। एक बड़ी मिल नित्य हजारों मन गेहूँ पीस कर निकाल देती है। बाजार में आटे की माँग न होने पर भी इन मिलों का काम नहीं रुकता। इसके संचालक यही चाहते हैं कि उनकी मिलें कभी बन्द न हों। इस प्रयास में कभी कभी उनके गोदाम में हजारों बोरे इकट्ठा हो जाते हैं। उनके बहुत कुछ कोशिश करने पर भी वे एकदम नहीं बिक जाते। एक बहुत बड़ी फ़्लावर मिल के काम के देखने का मुझे एक दफा मौका मिला था। मैंने देखा कि अक्सर मिल के गोदाम में आटे के सैकड़ों क्या हजारों बोरे हमेशा रक्खे रहा करते थे। उनमें से सैकड़ों बोरे पुराने भी रहा करते थे। जब आटे की माँग ज्यादा होती थी या यों ही मामूली माँग के समय भी उन पुराने बोरों का आटा नए पिसे हुए आटे में मिला दिया जाता था। पुराने आटे की हालत क्या बताएँ। आटा बोरे के अन्दर जम कर थोक बन जाता था जिसमें अनगिनती कीड़े बिलबिलाया करते थे। यही आटा नए पिसे हुए आटे के साथ मिला कर बाजार में बिकने के लिए आता है। ऐसे आटे को खाकर सोचने की बात है कि स्वास्थ्य कैसे अच्छा रह सकता है? यह तो बड़ी बड़ी मिलों के आटे का हाल है जिसे अधिकतर लोग इस्तेमाल करते हैं। बाजार के भोजनालय या कचौड़ी बेचने वालों के यहाँ से भोजन करके जो लोग अपनी जिन्दगी बसर करते हैं उनका स्वस्थ रहना भी एक आश्चर्य की बात है। पहले तो जो आटा यहाँ इस्तेमाल किया जाता है वही इतना खराब होता है कि हमारे खाद्य-पदार्थों में उसे कभी स्थान न मिलना चाहिए था। दूसरे दूकानदार लोग अपनी कार्रवाइयों से उसे और भी दूषित बना देते हैं। जिस घी का वे इस्तेमाल करते हैं वह बड़ा खराब होता है। कढ़ाई पर बराबर चढ़ा रहने से वह इतना ज्यादा जल जाता है कि किसी प्रकार खाने के काबिल नहीं रह जाता; फ़िर भी वह इस्तेमाल किया जाता है। इस लेख में इस बात से कुछ अधिक सम्बन्ध नहीं है इसलिए इस पर ज्यादा लिखना कुछ मुनासिब नहीं मालूम होता, लेकिन एक बात कह देना जरूरी समझता हूँ कि जहाँ तक हो सके लोगों को बाजार से भोजन करने की आदत छोड़ देनी चाहिए। बाजार की पूड़ी कचौड़ी, रोटी मिठाई आदि कोई भी चीज अपने दूषित परिणाम से खाली नहीं है। इन दूकानों से भोजन करना मानो बीमारी को मोल लेना है।

इसके अलावा शहरों में बहुत सी छोटी छोटी चक्कियाँ होती हैं। प्रायः गृहस्थ इन चक्कियों में अपने यहाँ का गेहूँ भेज कर पिसवाते हैं। बाजार के आटे से तो यह जरूर अच्छा है लेकिन इसमें से भी गेहूँ का पोषण-तत्व बहुत कुछ नष्ट हो जाता है। पिसते समय गेहूँ का आटा बहुत गरम होकर चक्की से बाहर आता है इसलिए उसमें गुण नहीं के बराबर रह जाता है। आटा प्राप्त करने के दो और तरीके हैं जिससे हमें शुद्ध आटा मिल सकता है। पंजाब में एक प्रकार की ऐसी चक्की है जो बैलों द्वारा चलाई जाती है। इस चक्की के पिसे हुए आटे में पोषण-तत्व बहुत कम नष्ट होता है। यह आटा हाथ के जाँते से पिसे हुए आटे से प्रायः बिलकुल मिलता जुलता है। मेरा अनुमान है कि इस प्रकार के आटे के व्यवहार का सौभाग्य पंजाब प्रान्त को ही प्राप्त है। यदि सब प्रान्त वाले इसे अपना सकें तो

सार्वजनिक स्वास्थ्य में बहुत कुछ उन्नति हो जायगी। हाथ की चक्की से पिसे हुए आटे का क्या ही कहना है। वह तो निहायत ही अच्छा है।

भोजन के सम्बन्ध में आजकल और भी बहुत से आविष्कार हो रहे हैं। कुछ विशेषज्ञों का यह कहना है कि भीगे हुए अनाज में, जिसमें अंकुर निकल आता है, पोषण-तत्व बहुत ज्यादा बढ़ जाता है। लेकिन भारतवर्ष के वैद्यक शास्त्र ने इसकी दोहाई नहीं दी है। उसका कहना है कि ऐसे अनाज पचने में भारी हो जाते हैं। यह बात भी सर्वथा त्याज्य नहीं है। आजकल भी लोग नया अनाज खाने की मनाही करते हैं। इसका कारण मुझे यही मालूम होता है कि नए अनाज में पुराने अनाज से ज्यादा ताकत होती है और नया होने के सबब से वह कुछ गरम होता है। इसलिए कमजोर मेदे वालों के लिए यह बहुत अच्छा नहीं सावित होता। इसके इस्तेमाल से अक्सर लोगों को कोई न कोई तकलीफ हो जाती है। यही बात अंकुरित अनाज के लिए भी कही जा सकती है। चूँकि उसमें पोषण-तत्व अधिक बढ़ जाते हैं इसीलिए बहुतों के मेदे के लिए यह अनुकूल भोजन नहीं प्रमाणित होता। अतः जो लोग इसका प्रयोग करना चाहें उन्हें कुछ सावधान रहने की जरूरत है। जिन लोगों का हाजमा अच्छा है और जो इसे आसानी से पचा सकते हों वे इसका इस्तेमाल अपनी रुचि के अनुसार कर सकते हैं।

बैल की चक्की या यदि सम्भव हो सके तो हाथ की चक्की का पिसा हुआ आटा इस्तेमाल करना सव प्रकार से लाभप्रद है। यह मेदे को लाभ पहुँचाने के वजाय कभी हानि नहीं पहुँचा सकता। गेहूँ के व्यवहार द्वारा अगर हम अपने रुपए का पूरा फायदा उठाना चाहते हैं तो हमें बैल अथवा हाथ की चक्की का पिसा हुआ ही आटा इस्तेमाल करना चाहिए। इससे आपके स्वास्थ्य को बहुत कुछ लाभ पहुँचेगा। डाक्टरों की फीस और दवा में लोगों का बहुत रुपया खर्च हो जाता है। इस मद में भी बहुत कुछ कमी हो जायगी। सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि स्वास्थ्य सदा अच्छा रहेगा। आपके अन्दर से दवा की तलाश जाती रहेगी। दूसरा एक और बहुत बड़ा लाभ यह होगा कि दूसरों पर निर्भर करने की आदत भी बहुत कुछ कम हो जायगी। जीवन को प्रकाश मिलेगा। अतः चक्की के आटे का हम लोगों के जीवन के साथ बहुत बड़ा सम्बन्ध है। हमारे जीवन के साथ जितना घनिष्ट सम्बन्ध खादी का है उससे किसी कदर कम महत्त्व इसका नहीं है वल्कि कुछ अंशों में उससे भी अधिक। क्योंकि इसका सम्बन्ध हमारे आन्तरिक जीवन पर प्रभाव डालता है।

* * *

BOOKS ON NATUROPATHY

		Rs.	as.
(1)	Nature cure *by H. Lindlahar, M. D.*	6	0
(2)	Practical Nature Cure *by Dr. K. L. Sharma, N. D.*	4	0
(3)	Pranayam *by Dr. K. L. Sharma, N. D.*	0	2
(4)	The Nature Cure of Eye Defect *by Dr. L. Kameshvaram*	0	8
(5)	Your Diet in Health and Disease *by Harry. Benjamin*	0	12

To be had from:—

THE MANAGER, HEALTH BOOK DEPOT
87, HIMMATGANJ, ALLAHABAD

रोगों के दूर करने में समय का महत्त्व

श्री व्रजनन्दन प्रसाद, बी० ए०

किसी वृक्ष को जड़ से काट कर फेंक देने का काम कुछ घंटों में पूरा किया जा सकता है, लेकिन अगर कोई उसके स्थान पर नया पेड़ लगाना चाहे तो इसमें कई बरस लग जायँगे। संहार या ह्रास तात्कालिक हो सकता है परन्तु पुर्ननिर्माण या विकास क्रम से ही होगा। यदि कोई चाहे कि वह रोगों से तत्काल मुक्ति पा जाय तो यह भला कब संभव हो सकता है ? अगर कोई तत्काल स्वास्थ्य लाभ कराने का दावा करता है तो यह उसका ढोंग ही समझना चाहिए। रोग-मुक्त होने में समय तो लगेगा ही। जो लोग रोगों के दूर होने में विलम्ब होते देखकर प्राकृतिक चिकित्सा को सन्देह की दृष्टि से देखने लगते हैं उनके लिए यह लेख विशेष रूप से उपयोगी होगा और वे चिकित्सा के सम्बन्ध में समय के महत्त्व को अच्छी तरह से समझ सकेंगे।——सं०

'समय दीजिए'——डाक्टर सिनहा के इन शब्दों को सुनकर मिस्टर प्रसाद ने पूछा कि अगर प्राकृतिक चिकित्सा किसी रोग को तीन या चार हफ़्ते में अच्छा कर सकती है तो क्यों नहीं सफ़ाई की शक्तियों को बढ़ाकर उसे और जल्द अच्छा किया जा सकता है ?

इस प्रश्न का उत्तर डाक्टर साहब ने निम्न लिखित शब्दों में दिया :—

महोदय, आप यह भूल से समझ बैठे हैं कि रोग का छू मन्तर भी होना संभव है। अगर आप शरीर-विज्ञान पर ज़रा ध्यान दें तो यह बात आसानी से मालूम हो जायगी कि रोग-मुक्ति एक विपरीत विकास है——अर्थात् रोग जिस तरह आहिस्ता आहिस्ता आया है उसी तरह यह शनैः शनैः वापिस भी होता है। आप कहेंगे कि बहुतेरे डाक्टर तो रोग को बहुत जल्द अच्छा कर देते हैं। लेकिन आप माफ करेंगे, यदि मैं यह कहूँ कि इनमें अधिकांश रोग-मुक्ति स्थायी नहीं होती और जो स्थायी होती भी हैं उनका परिश्रम एक या दो रोज का नहीं बल्कि हफ़्तों और महीनों का रहता है। इस शरीर में गिरे हुए तन्तुओं का निर्माण सदैव होता रहता है। रोग-मुक्ति किसी डाक्टर की जादूगरी का फल नहीं होती। यह शरीर के अपने खास परिश्रम का परिणाम है।

डाक्टर टिलडन ने कहा है कि रोग एक विकास है। यह न तो कोई छूत का परिणाम है और न कोई ऐसी स्थूल वस्तु ही है जो शरीर में प्रवेश करते ही आनन्दमय जीवन का ह्रास करने लगती है। जिस प्रकार प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ को अपने विकास में भिन्न भिन्न नियमों का पालन करना पड़ता है उसी तरह रोग भी शरीर में आहिस्ता आहिस्ता ही प्रवेश करता है। यह आपकी भूल है, कि जब कोई चिह्न प्रकट हुए तो आपने समझा कि रोग हुआ और जब वे जाते रहे तो समझ लिया कि रोग से छुटकारा मिल गया। असल में तो इन लक्षणों के हट जाने पर भी शरीर उसी हद तक पहुँच पाता है जहाँ तक वह उसके आने के पहले था।

पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ अभी कोसों दूर रहता है। रोग की शुरुआत के पहले के स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने के लिए और मेहनत करना चाहिए। मनुष्य लक्षणों के अनुसार रोगों का नाम देता चला जाता है और प्रत्येक नये लक्षण को एक नया रोग समझता है। लेकिन यह

ख्याल के बाहर रहता है कि ये सारी वारदातें सिलसिलेवार हैं। जब तक रोग के नाम की ओर मनुष्य का दौड़ान है वह सदैव रुपये खींचनेवालों के चंगुल में फँसा रहेगा जो उसे चूसते रहेंगे।

चाहे वह कोई भी चिकित्सा-पद्धति हो, उसमें समय अवश्य लगेगा। अगर निर्धारित समय चिकित्सा के पहले नहीं व्यतीत हुआ है तो वह अवश्य चिकित्सा-काल में लगेगा। प्रकृति अपना काम धीरे धीरे करती है, कूद-फाँद नहीं मचाती। आधुनिक विज्ञान-युग में एकत्रित शक्तियाँ——जैसे डाइनामाइट——छोड़ी जाने पर एक पहाड़ तक को क्षण मात्र में विदीर्ण कर सकती हैं लेकिन ऐसी सफलता किसी वृक्ष की सिंचाई करने में आज तक किसी भी शक्ति को नहीं मिली। किसी प्राणी के शरीर के अन्दर की वे शक्तियाँ, जो वर्षों से और नीरव-गति से एकत्र होती रही हैं, स्वेच्छापूर्वक या किसी बाहरी साधन के द्वारा तत्काल दूर की जा सकती हैं, लेकिन अगर उन शक्तियों को पुनः प्राप्त करना हो तो उसमें निश्चय ही समय लगेगा।

इसका एक उदाहरण लीजिए। एक लड़की को कमर की बीमारी हो गयी और उसके अंग निकम्मे बन गए——उसके लिए चलना-फिरना या खड़ा होना असम्भव हो गया। एक साल बाद वह जल-चिकित्सा करने लगी। कब तक उसने इस क्रम को जारी रक्खा, यह तो मालूम नहीं लेकिन इतना पता लगा कि उसे जल-चिकित्सा से फायदा अवश्य हुआ था। कुछ दिन बाद वह सपरिवार न्यू गिनी से आए हुए एक सुन्दर पक्षी को देखने के लिए एक जहाज के कप्तान से मिलने गई। नाविक उस लड़की को उठा कर डेक पर ले आए और उसके परिवार के लोग कप्तान से मिलने गए। अपने को अकेला पाकर पहले तो वह बहुत डरी लेकिन पास ही में 'केबिन ब्वाय' को देखकर उस पक्षी के बारे में उसने दरियाफ़्त किया। 'केबिन ब्वाय' ने कहा कि वह पक्षी कप्तान के कमरे में है और उसकी उत्सुकता को देखकर उसने उस लड़की से वहाँ चलने के लिए भी आग्रह किया। उस लड़के के साथ वह लड़की सीढ़ियों को पार करती हुई कप्तान के केबिन में पहुँची। थोड़ी देर बाद उसके परिवार के लोग जब उसकी तलाश में घबड़ाए हुए कप्तान के कमरे में पहुँचे तो उन्होंने उस लड़की को पक्षी के पास देखा। इस पर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने जानना चाहा कि वह लड़की बिना किसी का सहारा लिए ही वहाँ तक कैसे चली आई। उन लोगों के पूछने पर ही उस लड़की को यह बोध हुआ कि वह अपने आप इतनी दूर चल सकी है।

अब यह कहना कि यदि यह घटना छः महीने या एक साल पहले हुई होती तो वह लड़की चलने लगती, मेरे ख्याल से तो सर्वथा विवादास्पद है। कम से कम तर्क तो यह मानने को तैयार नहीं होता। जीवधारियों में क्षति-पूर्ति उसी प्रकार होती रहती है जैसे जन्म और विकास। जिस प्रकार बच्चे से मनुष्य बनने में वर्षों लग जाते हैं उसी प्रकार रोग-मुक्त होने में भी समय लगता है। हाँ, यह मैं मानता हूँ कि वातावरण का असर भी अवश्य होता है।

जब कभी शरीर के भीतर कोई गड़बड़ी होती है तो चिकित्सा सम्बन्धी कार्य सदैव शुरू हो जाते हैं। जब लोगों को यह गड़बड़ी प्रत्यक्ष रूप से मालूम नहीं हो पाती उस हालत में भी ये बातें सत्य हैं। जब खराबी उस हद तक पहुँच जाती है कि यह देहात्मा उसे जीत नहीं पाता तब रोग बहुत उग्र रूप धारण कर लेता है और शरीर के किसी भाग में यह प्रगट होने लगता है जिसे हम लोग रोग कहते हैं। अब यह निर्विवाद रहा कि यह शरीर क्षति-पूर्ति करता रहता है और खराबियों की सफाई भी करता रहता है। साथ ही यह भी सिद्ध है कि चिकित्सा सम्बन्धी कार्य शरीर के रोग-ग्रसित भाग में ज्यादा होता रहता है।

लेकिन चाहे कितनी भी चेष्टा की जाय, यह कार्य आवश्यक समय व्यतीत होने पर ही पूर्ण हो सकता है। उदाहरण के लिए हम एक मामूली अस्वस्थ व्यक्ति की ओर ध्यान दें। इस मनुष्य के शारीरिक और स्नाय-

विक जाल में शून्यता आ गई है। खून में विकार या विष (Toxins) भरे हैं, तन्तुओं का ह्रास होता रहता है। किसी भाग में विकार ज्यादा भरा है, किसी भाग में कम। शरीर पीला पड़ गया है। पाचक रसों का प्रवाह ठीक नहीं हो पाता। ऐसी हालत में सारे विकारों को एक साथ ही दूर करना सम्भव नहीं। एक छोटे से घाव के भरने में भी समय लगता है। मैं तो यहाँ तक कहने को तैयार हूँ कि अगर कुछ ही काल में स्वस्थ बनाने का कोई ठेका लेता है तो वह ढोंगी है। कभी कभी ऐसे अस्वस्थ शरीर में जिगर और तिल्ली भी औसत से ज्यादा बढ़े रहते हैं। ऐसी हालतों में स्वास्थ्य-लाभ बच्चों का खेल नहीं है। लेकिन इतना तो अवश्य कहा जायगा कि समय देने से औसत दरजे का स्वस्थ मनुष्य बनना असम्भव नहीं है।

जितने भी तरह के मानसोपचार (Faith cure) आदि हैं, जो कभी कभी जादू की तरह फलीभूत होते दीख पड़ते हैं, वे प्रायः उसी मौक़े पर कारगर होते हैं जहाँ चिकित्सा करीब-करीब समाप्त हो चुकी रहती है। इन परिस्थितियों में चिकित्सा इस तरह की जादू-की-सी करामातों के बहुत पहले ही पूर्ण हो चुकी रहती है। और जहाँ हम लोग देखते हैं कि स्वास्थ्य की प्राप्ति स्थायी नहीं हो पाती वहाँ ये 'जादूगर' समय से पहले पहुँचने के कारण असफल हो जाते हैं। मृत्यु भी तभी होती है जब शरीर में विकार शरीर की निवारक शक्ति से बहुत ज्यादा बढ़ जाते हैं।

क्षणिक चिकित्सा कभी स्थायी हो नहीं सकती। जन्म से बिगड़ी आदतों की वजह से जब शरीर अस्वस्थ हो जाता है तो पुनः स्वास्थ्य की प्राप्ति शनैः शनैः आदतों में सुधार और रहन-सहन में तबदीली के द्वारा ही हो सकती है।

इस सम्बन्ध में डाक्टर ट्रेल ने अपने विचार इस प्रकार प्रगट किए हैं—

"दुनिया में जितने भी ऐसे डाक्टर हैं जो औषधियों पर कम विश्वास रखते हैं (चाहे वे किसी भी चिकित्सा-पद्धति के अनुयायी क्यों न हों) वे स्वास्थ्यप्रद रहन-सहन को ही चिकित्सा में असली स्थान देते हैं। ऐसे डाक्टरों का ध्यान रोगी के शरीर से विकार निकालने की तरफ और उसके बदन के पोषण और पुष्टि के लिए हवा, धूप, पानी जैसे आवश्यक साधनों को पहुँचाने की ओर ज्यादा रहता है। स्वास्थ्य-विज्ञान का असली सिद्धान्त यही है और यही असली चिकित्सा-प्रणाली है। प्रकृति इसके अलावा और कोई दूसरा रास्ता नहीं बताती और ईश्वर भी इसके सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं सुझा सकते।"[1]

जल-चिकित्सा के प्रवर्तक
लूई कूने की चार कृतियाँ

(१) नवीन चिकित्सा विज्ञान	मूल्य ३।)
(२) आकृति निदा	मूल्य १।।)
(३) मैं निरोग हूँ या रोगी?	मूल्य ।)
(४) बच्चों की रक्षा	मूल्य ।-)

पता—स्वास्थ्य पुस्तक भण्डार, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

---

[1] हरबर्ट एम० शेल्टन, एन० डी० के एक लेख का भावानुवाद।

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

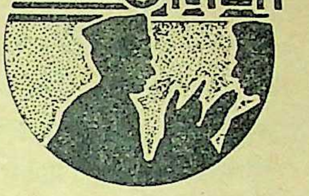

पेट का पुराना दर्द कैसे दूर हुआ

श्रीयुत जुगलकिशोर अग्रवाल,
कालिम्पोंग (बड़वा निवासी)

मुझे यहाँ आए अभी अधिकसमय नहीं हुआ है, किन्तु इतने अल्प-काल में ही अब यहाँ पर प्राकृतिक चिकित्सा का अच्छा प्रचार हो गया है। मेरे यहाँ आने के पहले यहाँ पर कोई यह जानता तक न था कि एनिमा क्या होता है अथवा क्या मिट्टी की पट्टी, जल के प्रयोग आदि भी अद्‌भुत चमत्कार दिखा सकते हैं ?

हाँ, तो उस दिन मैं अपनी दूकान पर बैठा हुआ था। एक रोगी को वाष्प-स्नान करा रहा था। इसी बीच एक सज्जन पहुँचे। उस रोगी से प्राकृतिक चिकित्सा का गुण-गान सुनकर उन्होंने मुझसे कहा—'मेरे लड़के के पेट में ४-५ साल से लगातार दर्द बना रहता है। सब प्रकार की चिकित्सा की किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। क्या इस नवीन चिकित्सा पद्धति से उसका इलाज हो सकता है ?'

'उसको सुबह लाकर दिखलाइएगा तब विचार करेंगे'——मैंने सहानुभूति प्रकट करते हुए उनसे कहा।

दूसरे दिन लड़के को देखा गया तो प्रतीत हुआ कि बहुत दिनों का विकार पेड़ू में इकट्ठा हो रहा है जिसके कारण दर्द होता है। पेट सख्त था——दबाने से पत्थर की तरह कड़ा प्रतीत होता था। आँखें और जिह्वा भी देखी गईं, मालूम हुआ कि लड़के में अभी जीवन-शक्ति है, उसकी हालत देखने से मुझको विश्वास हो गया कि वह अच्छा हो जायगा। आयु देखते हुए बच्चा बहुत कमजोर था। उसकी आयु १४ साल की थी, वजन २५ सेर था। मैंने उसके पिता से कहा कि अगर आप इसको पथ्य से रख सकेंगे और धैर्य व विश्वास से एक या दो मास तक इलाज चलाते रहेंगे तो आराम हो सकता है। पुरानी बीमारी है और इस चिकित्सा में समय अधिक लगता है, इसलिए सम्भव है तीन मास भी लग जायँ। उन्होंने प्रसन्नता का भाव प्रकट करते हुए कहा, "जो आप कहेंगे उसी प्रकार किया जावेगा। इलाज शुरू कीजिए"। साथ ही मैंने यह भी कह दिया था कि अगर आरम्भ में तकलीफ कुछ बढ़ भी जावे तो घबराना नहीं कारण यह कि इस चिकित्सा में 'उभाड़' हुआ करता है।

लड़के का नाम गोपीराम है अतः हम अब आगे इसी नाम से इसे सम्बोधित करेंगे। दूसरे ही दिन से इलाज आरम्भ कर दिया गया। आरम्भ में मिट्टी की गीली पट्टी आध घंटे तक लगाने के बाद एनिमा द्वारा पेट साफ किया गया। पहली बार के एनिमा से बहुत समय का सड़ा हुआ मल पेट से निकला जिससे बड़ी दुर्गन्धि आती थी। एनिमा वाले दिन गोपी को केवल फलों पर रखा गया। फिर सुबह शाम दोनों समय आध आध घंटे के लिए मिट्टी की ठंडी पट्टी दी जाती थी। आरम्भ में एक दिन का अन्तर देकर अर्थात् सप्ताह में तीन बार एनिमा दिया गया। लड़का कमजोर था अन्यथा यदि उसे दैनिक एनिमा दिया जाता तो और भी उत्तम होता। सप्ताह में दो बार पेड़ू पर भाप भी दिया गया। सुबह शाम दोनों समय खुली हवा में घूमाना आरम्भ किया एवं सुबह उठते ही शौच से पहले और रात को शयन से पहल जल पीने की राय दी गई। दिन में जिस समय भी दर्द उठता फौरन मिट्टी की गीली पट्टी दी जाती थी। पट्टी देते ही १०-१५ मिनट के बाद दर्द हल्का पड़ जाता था। पहले तीन दिन तक गोपी की वही हालत रही।

फिर किंचित् लाभ प्रतीत हुआ, किन्तु लगभग एक सप्ताह के बाद दर्द अधिक होने लगा। पहले दिन में एक बार दर्द उठता था तो अब २-३ बार होने लगा। किन्तु मिट्टी की पट्टी से वह कम हो जाता था। तीन-चार दिन तक उभाड़-स्वरूप दर्द कुछ अधिक रहा फिर कुछ कम होने लगा। १५ दिन के बाद गोपीराम को दस्तों के रूप में उभाड़ हुआ। हर रोज दस या बारह दस्त आने लगे। कोई चार-पाँच दिन तक इसी प्रकार दस्त आते रहे; किन्तु मजे की बात यह थी कि लड़के को दस्तों के कारण कमजोरी तनिक भी महसूस नहीं हुई, वह सदैव की भाँति ही खेलता कूदता था बल्कि उसमें उत्साह पहले से भी कुछ अधिक आ गया था। फिर दस्त कम होने लगे इसके बाद पेट दर्द २-३ दिन से होने लगा। इलाज का क्रम उसी प्रकार जारी रहा। लगभग २५ दिन बाद दस्त फिर आने लगे। यह दूसरा उभाड़ था किन्तु यह पहले से हल्का था। घर वाले पहले उभाड़ में ही घबराए थे किन्तु इस बार तो और भी अधिक घबराए क्योंकि इस बार कुछ ज्वर भी लड़के को हो गया था। ज्वर और दस्त दोनों को देखकर चिन्तित होना स्वाभाविक ही था किन्तु मैंने समझा दिया और पहले भी यह बताया जा चुका था कि इस चिकित्सा में ऐसा होता ही है। अतः समझाने बुझाने से घर वालों की चिन्ता कम हुई और चिकित्सा चालू रही। इस बार के दस्तों में भी पहले की ही तरह बहुत विकार निकला। मल कई रंग का और बदबूदार था। मैंने कहा कि इसके बाद अब और उभाड़ इसको न होगा, यह इसके हित के लिए ही हुआ है, पेट का दर्द अब अवश्य चला जावेगा।

वास्तव में ऐसा ही हुआ। तीसरे दिन दस्त बन्द हो गए और तीन दस्त दैनिक आने लगे। एक दस्त भोजन के बाद लगता था जिसकी आदत इसको बचपन से ही पड़ गई थी। किन्तु आराम होने के बाद अब यह आदत भी छूट चुकी है। पहले अनियमित दस्त होते थे, फिर नियम से होने लगे। अब पेट बिल्कुल मुलायम हो गया है और चेहरे का रंग भी पहले से बदल गया है। आँखों में काफी रोशनी प्रतीत होती है। एक सप्ताह के बाद एनिमा सप्ताह में तीन की जगह दो बार और फिर केवल एक बार दिया जाने लगा। एनिमा वाले दिन दोपहर को फल और शाम को रोटी दी जाती थी। सप्ताह में एक उपवास भी कराया जाता तो अच्छा था किन्तु बालक था इसलिए भूख सहन नहीं कर सकता था। अब भूख भी पहले से अधिक लगने लगी। पेड़ू-नहान भी कराया जाता किन्तु यहाँ पर टब इत्यादि की व्यवस्था नहीं थी एवं पहाड़ी स्थान होने के कारण ठंडे पानी के व्यवहार से भी घर वाले बहुत डरते थे। इसलिए बिल्कुल सरल तरीका ही रखा गया और ऐसी ही व्यवस्था करनी पड़ी जैसी कि यहाँ पर सुलभ हो सकती थी। यह चिकित्सा का साधारण क्रम पढ़ कर पाठक अवश्य हैरान होंगे।

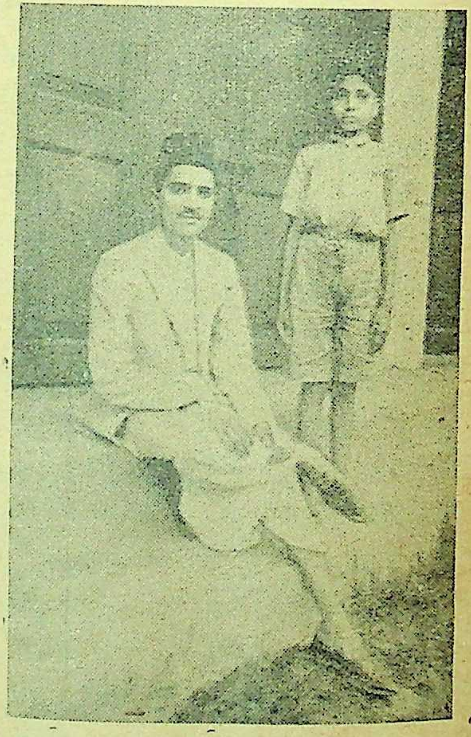

यह भी बता देना नितान्त आवश्यक है कि भोजन सुधार से आराम होने में पूरी सहायता मिली। खास कर

प्राकृतिक चिकित्सा का महत्त्व भोजन पर ही है। भोजन की गड़बड़ी से ही अनेक बीमारियाँ पैदा होती हैं और प्राकृतिक आहार पर आ जाने से आश्चर्यजनक लाभ होता है।

गोपी-राम का भोजनक्रम इस प्रकार बनाया गया—भात-दूध-चाय-घी, चीनी मिठाई, सब प्रकार की दालें और मिल का पिसा आटा बन्द किया गया। फलों और तरकारियों में केला और आलू, राई व करेला बन्द किया गया। दोनों समय हाथ के पिसे हुए और बिना छने चोकरदार आटे की रोटी सब्जी के साथ दी जाती थी एवं दिन में एक या दो बार संतरा, सेब, टमाटर, पपीता आदि फल दिए जाते थे। फलों और तरकारियों पर अधिक ध्यान दिया गया। एक मास के बाद भात खाने की आज्ञा दे दी गई, किन्तु सिर्फ हाथ से कुटे चावल का भात और केवल तरकारी के साथ। खुशी की बात है कि यहाँ पर हाथकुटे चावल कसरत से मिल जाते हैं। शनैः शनैः दूध और घी, मक्खन इत्यादि भी आरम्भ करा दिया गया है। अब लड़के का स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक है। घर वालों ने लड़के के पथ्य पर खूब ध्यान रखा। अगर पथ्य पर ख्याल न रखा जाता तो आराम होना कठिन था। प्रसन्नता का विषय है कि अब यहाँ पर लोगों की श्रद्धा प्राकृतिक चिकित्सा की तरफ बढ़ने लग गई है।

* * *

'जीवन-सखा' के पाठकों से निवेदन

(१) जिन ग्राहकों का वार्षिक चन्दा दिसम्बर मास में समाप्त हो जाता है, उनसे नम्र निवेदन है कि वे अगले वर्ष का चन्दा ३) मनीआर्डर से भेज देने की कृपा करें। न भेजने से हमें 'जीवन सखा' का 'व्यायाम अंक' उन ग्राहकों के पास वी० पी० से भेजना पड़ेगा, जो हमारे तथा हमारे पाठकों दोनों के लिए असुविधा-जनक होगा। इसलिए आशा है 'जीवन सखा' के प्रेमी पाठक इस निवेदन पर ध्यान देंगे।

(२) ग्राहकों को चाहिए कि वे पत्र-व्यवहार के समय अपनी ग्राहक-संख्या लिखना न भूलें। इससे पत्र का ठीक समय से जवाब देने में विलम्ब तथा असुविधा होने की सम्भावना रहती है।

(३) पता बदलने के लिए महीने की २०वीं तारीख तक हमें सूचना मिल जानी चाहिए।

(४) 'जीवन सखा' के प्रचार में पाठकों का विशेष हाथ रहा है इसलिए उनसे हम निवेदन करते हैं कि वे अपने प्रिय-जनों तथा इष्ट-मित्रों को इसकी उपयोगिता बताकर ग्राहक बनाने में हाथ बँटाएँ। हम इसके लिए कृतज्ञ होंगे।

(५) जिन पुस्तकालयों को १) में साल भर के लिए 'जीवन सखा' दिया गया था, उन्हें हम सूचित करना चाहते हैं कि दिल्ली के सेठ गाडोदिया जी के दान के ही फलस्वरूप हम ऐसा कर सके थे। अतः वे अगले वर्ष 'जीवन सखा' प्राप्त करने के लिए २) मनीआर्डर से भेज दें, अन्यथा हम उन्हें 'जीवन सखा' भेजने में असमर्थ होंगे।

व्यवस्थापक
'जीवन सखा', इलाहाबाद

हमारी नज़र में

सचित्र हठयोग--मूल्य १ रु०। लेखक श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती, प्रकाशक--जेनरल प्रिंटिग वर्कस लिमिटेड ८३, पुराना चीना बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता। इस पुस्तक में हठयोग की सारी चीजें बड़ी खूबसूरती के साथ और सचित्र दी गयी हैं। हठयोग चार अंगों में बाँटा गया है, आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बन्ध क्रियाएँ। आसन का प्रकरण हठयोग प्रदीपिका से भी ज़्यादा है और एक अच्छे व्यायाम पद्धति के लिए यह यथेष्ट है। सिर्फ इन आसनों के द्वारा शरीर पूर्ण स्वस्थ रक्खा जा सकता है। प्राणायाम प्रकरण में भी थोड़े में आठो प्राणायाम दे दिए गए हैं जो प्राणायाम के प्रकरण में बड़े ही महत्त्व के हैं। मैं श्वास की क्रिया दो मतलबों से किया करता हूँ। एक तो ओषजन (औक्सीजन) ज्यादा लेने के लिए और दूसरा नाड़ी सुधि के लिए। आठो प्रकार के प्राणायाम में हम कुम्भक करते हैं। कुम्भक करने से ओषजन का लेना मामूली श्वास लेने से भी कम हो जाता है। आलस्य दूर करने के लिए हमें ज़्यादा ओषजन की ज़रूरत पड़ती है। इसके लिए श्री स्वामी कुवलयानन्दजी कपालभाती और उज्जयी बताते हैं। इसके लिए उन्होंने उज्जयी में कुम्भक नहीं बताया है। विद्वान लेखक नित्य सुबह उठने के बाद ही आलस्य के लिए प्राणायाम करने को बताते हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि यह कैसे हो सकता है। हठयोग प्रदीपिका में एक दो श्लोक हैं उन्हें मैं उद्धृत करता हूँ।

"यथा सिंहो गजो व्याघ्रो भवेद्वस्यः शनैः शनैः
तथैव सेवितो वायु अन्यथा हंति साधकम् ॥१॥
"प्राणायामादि युक्तेन सर्वरोग क्षयो भवेत्।
अयुक्ताऽभ्यास योगेन सर्वरोग समुद्भवः ॥२॥

इसका मतलब यह हुआ कि प्राणायाम अर्थात् कुम्भक एक ब एक नहीं शुरू करना चाहिए। इससे बहुत नुकसान होने की संभावना है इस विषय में विद्वान लेखक को आदेश देना आवश्यक था। वाम और दक्षिण नौलि करते समय की जो तस्वीर उद्धृत की गई है प्रचलित अभ्यास से कुछ भिन्न है। इस तरह से मांसपेशियों पर अधिकार करना मैक्सिक प्रणाली (Maxic system) में आता है पर हमारे यहाँ की प्रचलित विधि कुछ और ही है। प्रचलित विधि में कुछ लाभ ज्यादा है और अपनी ही विधि को अपनाना चाहिए। पुस्तक बड़ी ही सुन्दर है। छपाई सफाई बड़ी ही अच्छी है। और यह आशा की जाती है कि पाठक इससे लाभ उठावेंगे।

बाल-साहित्य

अनोखी दुनिया--लेखक, श्री व्यथित हृदय; प्रकाशक, भार्गव पुस्तकमाला, गायघाट, बनारस; मूल्य ।।=)

'अनोखी दुनिया' अपने नाम के ही अनुरूप पुस्तक है। प्रस्तुत पुस्तक यद्यपि विशेषतः बालकों के ही मनोरंजन और ज्ञान-वर्धन के उद्देश्य से लिखी गई है लेकिन इसमें संसार की जिन प्राकृतिक तथा वैज्ञानिक चमत्कार-पूर्ण घटनाओं का वर्णन है वे केवल बच्चों के ही लिए नहीं, वरन् साधारण ज्ञान वाले वयस्क लोगों के भी लिए समान रूप से चित्ताकर्षक प्रतीत होंगी। 'आदमी खाने वाला पेड़', 'रोटी खाने वाला रेडियो', 'शीशे की रेलगाड़ी', आदि अनेक कहानियाँ तो ऐसी हैं जिनका केवल नाम ही पाठकों के हृदय में कुतूहल पैदा कर देनेवाला है। पुस्तक की सरल और सीधी-सादी भाषा, रोचक वर्णन-शैली प्रशंसनीय हैं। इस पुस्तक की एक सबसे बड़ी विशेषता यह है कि आजकल साधारण भूतों और परियों की जो कहानियाँ प्रचलित हैं उनके विपरीत यह बालकों में संसार के वैज्ञानिक चमत्कारों के प्रति अभिरुचि और

जानकारी पैदा करेगी। बालोपयोगी साहित्य को समुन्नत बनाने के लिए हमें ऐसी ही कृतियों की आवश्यकता है। पुस्तक की छपाई-सफाई सुन्दर बन पड़ी है।

अभागे दम्पति

यह श्री व्यथितहृदय की एक दूसरी कृति है और भार्गव पुस्तकमाला, गायघाट, बनारस से प्रकाशित हुई है। इसमें हमें आजकल के अधिकांश व्यक्तियों के दाम्पत्य-जीवन का एक करुण तथा मर्मस्पर्शी चित्र देखने को मिलता है। पति को अपनी पत्नी से शिकायतें हैं और पत्नी के हृदय में अपने पति के बारे में। आजकल पाश्चात्य देशों की हवा यहाँ के स्त्री-पुरुषों को जो लग गई है शायद वही हमारे समाज के इस खेदजनक दृश्य का मुख्य कारण है। इस चित्र का दोनों पहलू अन्धकार-पूर्ण प्रतीत होता है। लेखक ने पति और पत्नी की इस विषम समस्या को स्वयं हल करने की चेष्टा न करके यह कार्य पाठकों पर ही छोड़ दिया है। पुस्तक पढ़ने और विचार करने की चीज है। लेखक ने इस पुस्तक को पत्रों के रूप में लिखा है जिससे पढ़ने में उपन्यास का-सा आनन्द आता है जो किसी 'ट्रेजडी' से कम हृदय-स्पर्शी नहीं। प्रत्येकदम्पति को इस पुस्तक को तो एक बार पढ़ना ही चाहिए। मूल्य १।) है

'भिवानी प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह'
तथा
'शकुन्तला हेल्थ होम लाइब्रेरी'

हमारे प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह की यह एक नई शाखा लाहौर बाजार, भिवानी, जिला हिसार में कायम हुई है जिसके ब्रान्च-डाइरेक्टर श्री नन्दकिशोर शर्मा, एन० डी०, डी० वाई० हैं। इस प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह में भी नियमित उपवास, भोजन में सुधार, दूध अथवा मठा-कल्प, जल-चिकित्सा, सूर्य रश्मि-चिकित्सा, मिट्टी का व्यवहार, व्यायाम, योग-क्रियाएँ, प्राणायाम, बिजली का प्रयोग, मालिश, मानसोपचार आदि प्राकृतिक साधनों द्वारा अनेकों रोगों की चिकित्सा होगी।

इसके अतिरिक्त यहीं पर प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी ट्रेनिङ्ग क्लास भी १५ फरवरी से लिए जाया करेंगे जो बहुत उपयोगी होंगे। विशेष जानकारी के लिए ५ पैसे का टिकट भेज कर उपर्युक्त पते से विवरण-पत्र मँगाइए।

सञ्चालक, प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह, प्रयाग

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भ में जिज्ञासु पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिए कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार में न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप रूप में लिखें। डाक से उत्तर पाने के लिए डाक-टिकट भेजना आवश्यक है। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर-कूपन आने पर ही जवाब दिया जायगा जो पृष्ठ ३२ पर छपा है। महीने की १० तारीख तक प्राप्त प्रश्नों का उत्तर अगले मास प्रकाशित हो सकेगा।—सं०

प्रश्न—मैं सीधा सादा भोजन करता हूँ। गेहूँ के चोकरदार आटे की रोटी और सब्जी। तब भी वायु की शिकायत रहती है। भोजन के बाद डकारें आती हैं। कभी कभी पाकस्थली में दर्द मालूम होता है। खाने के वक्त भूख ठीक लग जाती है। टट्टी भी साफ हो जाती है। हमें क्या प्रयत्न करना चाहिए कि मेरी शिकायत दूर हो जांय।

—जे० के० अन्यलिया, बी०ए०, गंगा शहर, बीकानेर

उत्तर—इन सारी शिकायतों का कारण पेट में वायु का पैदा होना है। भोजन ठीक से न पचने के कारण आँतों में सड़न पैदा होती है और उससे वायु की उत्पत्ति होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि पाचन-प्रणाली की कमजोरी ही इसका कारण है। इसके लिए आप भोजन में सुधार करें और ऐसे भोजन खाएँ जो आसानी से पच जाय। भोजन में कारबोज का भाग ज्यादा होने से वायु अधिक पैदा होती है। साथ ही भोजन की मात्रा की ओर भी आप ख्याल रखें। एक बार में थोड़ा भोजन किया करें। कसरत भी आपके लिए आवश्यक है। इसके लिए खुले वायु में टहलना सबसे अच्छी कसरत है।

प्रश्न—मेरी स्त्री की उम्र पच्चीस वर्ष की है। स्वास्थ्य अच्छा रहा है, शरीर कुछ स्थूल जरूर है। परन्तु इधर आठ नौ महीनों से उनकी दोनों कलाइयों पर Oriental sores हो गए हैं जो हर प्रकार की औषधियों और Injection से भी ठीक नहीं हुए हैं। अब तीन महीने से उनको दर्द-गुर्दा की शिकायत भी प्रथम बार जीवन में आरंभ हुई है। दर्द को दूर करने के लिए उन्हें छः सात Morphia and Atropine के Injections भी दिए गए। उनकी Kidneys में दो छोटी छोटी पथरियाँ भी हो गई हैं। पथरी का Attack तो इन तीन महीनों में अब तक एक ही बार हुआ है जो दो दिनों तक रहा परन्तु दर्द महाभयंकर हुआ था। कृपया लिखिए कि पथरियाँ कैसे निकलेंगी और जख्म कैसे आराम होंगे।

—हरीचरणदास, सब-जज, कौजरा

उत्तर—यद्यपि आपकी स्त्री को रक्तविकार और पथरी दो भिन्न रोग हैं तथापि दोनों के कारण एक हैं। वह है विजातीय द्रव्य का शरीर में इकट्ठा होना। आप उन्हें एक सप्ताह तक संतरा, अनार और नीबू के रस पर रखिए। रसाहार के बाद सेब धीरे धीरे खिलाइए। सेब, संतरा, अनार पर कम से कम दो सप्ताह तक और रखिए। रसाहार और फलाहार काल में दोनों समय पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखकर एनिमा देना न भूलिए। दिन में भी कम से कम तीन चार बार पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी दीजिए। पानी में नीबू का रस निचोड़ कर खूब पिलाइए। चौथे सप्ताह से धीरे धीरे रोटी और सब्जी और फल दीजिए। इसी सप्ताह से दोनों समय पेड़ू स्नान भी आरम्भ कर दीजिए। दोपहर में धूप में

केले की पत्ती से समस्त शरीर को ढँककर बैठाइए। जब पसीना आने लगे तब साधारण स्नान कराके पेड़ू स्नान कराइए। जख्म पर मिट्टी की पट्टी देकर स्थानीय स्टीम दीजिए। एक घंटे बाद नारियल के तेल में नीबू का रस मिलाकर दिन में दो तीन बार इसे जख्म पर लगाइए। यही क्रम दो तीन महीने चलाइए। इससे आपकी स्त्री के दोनों रोग चले जायँगे। इसी अंक में पथरी पर लेख छपा है उससे आपको विशेष सहायता मिलेगी।

प्रश्न—मुझे कभी कभी कुछ बवासीर का दौरा हो जाया करता है जिससे मेरा स्वास्थ्य बहुत गिर जाता है। मैं कभी भी हृष्ट पुष्ट नहीं होने पाता। अनेक यत्न करने पर भी कोई बड़ी सफलता नहीं मिलती। मैं 'जीवन सखा' का ग्राहक हूँ। और इस विषय पर प्रकाशित कई लेखों के अनुसार कई प्रयोग भी कर चुका हूँ। मैं सप्ताह में एक बार उपवास और एनिमा लेता हूँ, सात्विक भोजन और सात्विक जीवन भी व्यतीत करता हूँ। मिट्टी इत्यादि के प्रयोग भी किए परन्तु विशेष सफलता नहीं मिली। मुझे इसके साथ ही साथ स्वप्नदोष भी होता है। उपाय करने पर भी बन्द नहीं होता। कृपया यदि हो सके तो विद्यार्थियों के कल्याण के लिए आगामी अंक में वीर्यदोष दूर करने के उपाय पर एक लेख प्रकाशित करें। इससे उन विद्यार्थियों को जो शर्म के मारे अपना रोग छिपाते हैं और अन्त में बहुत नुकसान उठाते हैं उनको लाभ होगा। बवासीर कैसे दूर होगी ?

उत्तर—वीर्यदोष पर 'जीवन सखा' के नवम्बर अंक में एक लेख निकल चुका है। बवासीर से क़ब्ज का बड़ा ही घनिष्ट सम्बन्ध है। कब्ज से बवासीर और बवासीर से निरन्तर कब्ज रहने लगता है। सबसे पहले कब्ज को दूर कीजिए और बवासीर आप ही चला जायगा। साधारण कब्ज उपवास, एनिमा, स्नान और आसनों इत्यादि से एक माह के अन्दर ही चला जाता है। परन्तु बवासीर का कब्ज कम से कम तीन महीने से लेकर छः महीने तक का समय ले सकता है। लम्बे उपवास से शीघ्र आदमी रोगमुक्त हो सकता है। परन्तु सर्वसाधारण के निमित्त लम्बा उपवास करना टेढ़ी खीर है। अतः तीन दिनों का उपवास करके उसके बाद दो सप्ताह तक फलाहार करके रोटी सब्जी पर आ जाना चाहिए। उपवास और फलाहार काल में दोनों शाम मिट्टी की पट्टी पेड़ू पर रख कर एनिमा लेना आवश्यक है। रोटी सब्जी के साथ साथ दोनों समय पेड़ू स्नान भी आरम्भ करना चाहिए। एक सप्ताह के बाद प्रातःकाल 'मेहन स्नान' और सायंकाल 'पेड़ू स्नान' करना चाहिए। स्नान के बाद दूर तक तेजी से खूब टहलना चाहिए। भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन और सर्वांग आसन से आपको विशेष लाभ होगा। स्थानीय 'स्टीम-बाथ' एक दिन का अन्तर डालकर लीजिए। सप्ताह में एक बार 'स्टीम-बाथ' या 'सन-बाथ' लेने से विशेष फायदा होता है। रात को सोने के समय एक नीबू का रस हरे बोतल के जल के साथ एक Syringe भरकर गुदा मार्ग में चढ़ा कर सो जाइए।

प्रश्न—दाँत ब्रुश से साफ करना ठीक है या नहीं ?

—वैदेहीशरण, पटना

उत्तर—दाँतों को ब्रुश से साफ करने से कुछ काल में दाँत अलग अलग हो जाते हैं जिससे अन्न के छोटे छोटे टुकड़े मसूड़ों के दरारों में रुककर सड़ने लगते हैं। उनके सड़ने से दाँतों पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। ब्रुश की सफाई नित्य नहीं हो सकती। यदि पन्द्रह मिनट तक ब्रुश को पानी में नित्य उबालें तो विशेष हर्ज नहीं है परन्तु यह सर्वसाधारण के लिए सम्भव नहीं है। दातुन के खास प्रभाव जो दाँतों पर पड़ते हैं वे ब्रुश से नहीं प्राप्त हो सकते। जैसे—नीम की दातुन कृमिनाशक है, मौलश्री, महुआ, बबूल इत्यादि की दातुन से दाँत मजबूत होते हैं। उन योरोप के रहने वालों के दाँत जो ब्रुश का प्रयोग सदा करते हैं बहुत ही खराब होते हैं। इससे बढ़कर ज्वलंत प्रमाण ब्रुश के विपक्ष में और कौनसा हो सकता है।

—बालेश्वरप्रसाद सिंह

कहानी नववर्षाङ्क

के लेख और लेखक

कहानियाँ

मृत्यु की आड़ में––उषादेवी मित्रा
हुस्न और हैवान––कृष्णचन्द्र
कर्मनिरता––एण्टन चेखव

उपन्यास

निरैया––रवीन्द्रनाथ देव
मैचा––राजनाथ पाण्डेय

पद्यबद्ध कहानियाँ

जंगल की बात––नरेन्द्र शर्मा
खिलौना––सियारामशरण गुप्त।

डायरी

पूँजीपति की डायरी––शिवदानसिंह चौहान।

मेरी क़लम का राज़

गुलाबराय, पहाड़ी, उषादेवी मित्रा, अश्क, सत्यवती मल्लिक, शौकत थानवी, कौशिक, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, शिवपूजन सहाय, रामविलास शर्मा––

स्केच

नूरी––सत्यवती मल्लिक
फेरीवाला––प्रकाशचन्द्र गुप्त
म्यूज़िक कान्फ्रेंस––मुहम्मद तक़ी

युद्ध की कहानियाँ

स्पेन के गृह युद्ध के दो पृष्ठ––पहाड़ी
चलो भाग चलें––वांडा डाइनौस्का

संस्मरण

प्रेमचन्द––शिवरानी देवी

कहानी कला पर लेख

बीवी की कहानियाँ––नरोत्तम प्रसाद नागर
आज की कहानी––अमृतराय
कहानी का प्लाट––श्रीराम शर्मा
विज्ञान और कहानी साहित्य––भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव

हास्य

हमसफ़र––शौकत थानवी।

इसके अतिरिक्त पुस्तकालय, अनेकों कलापूर्ण चित्र आदि से सुसज्जित विशेषाङ्क प्रकाशित हो गया है

अब थोड़ी ही प्रतियाँ बची हैं

एक प्रति का मूल्य अलग से आठ आना। वार्षिक ३)

कहानी नववर्षांक की प्रति सरस्वती-प्रेस बुकडिपो अमीनुद्दौला पार्क, लखनऊ; कामताप्रसाद कक्कड़ रोड, इलाहाबाद से भी मिलेंगी। आप अपना चन्दा इन शाखाओं में जमाकर मनीआर्डर ख़र्च बचा सकते हैं।

व्यवस्थापक, 'कहानी', बनारस कैंट

हिन्दी-मन्दिर, इलाहाबाद को आप जानते ही हैं
अब आपको
उसका समस्त प्रकाशन
सस्ता साहित्य मण्डल से मिला करेगा

(१)
कनाट सर्कस, नई दिल्ली

(२)
दरीबा कलाँ, दिल्ली

(३)
अमीनुद्दौला पार्क, लखनऊ

(४)
खजूरी बाजार, इन्दौर

(५)
१३२/१ हरिसन रोड, कलकत्ता

(६)
जीरो रोड, इलाहाबाद

क्योंकि
हिन्दी
मन्दिर, प्रयाग
के
समस्त प्रकाशनों का स्टॉक
मंडल ने मोल ले लिया है
अतः
'मंडल' के स्थायी ग्राहकों और
'जी० सा०' के ग्राहकों को पौने
मूल्य में मिल सकता है

हिंदी मंदिर के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

काव्य-आलोचना (१) कविता-कौमुदी : पहला (हिंदी), दूसरा (हिन्दी), चौथा (उर्दू), सातवाँ (बँगला)
(२) तुलसीदास और उनकी कविता—दो भाग
काव्य (३) पथिक, (४) मिलन, (५) स्वप्न, (६) मानसी आदि
नाटक (७) जयन्त, (८) बफाती चाचा, (९) प्रेमलोक, (१०) बानर संगीत आदि
कहानियाँ (११) तरकस, (१२) बीथिका, (१३) यूरोप की कहानियाँ आदि
जीवनियाँ (१४) अशोक, (१५) चन्द्रगुप्त, (१६) बुद्ध, (१७) मुसलिम सन्त आदि
कोष (१८) हिन्दुस्तानी कोष, (१९) पाकेट डिक्शनरी

इसके अलावा किसानोपयोगी, महिलोपयोगी, तथा बालोपयोगी साहित्य
कुल मिलाकर ११५ पुस्तकें!
विशेष सूचीपत्र मँगाकर देखिए

भारतीय स्त्रियों और कन्याओं
की सबसे अच्छी और सबसे
सस्ती सचित्र मासिक पत्रिका

दीदी

वार्षिक मूल्य
२)
एक प्रति ≡)

सम्पादक—श्रीनाथसिंह

आशीर्वाद

मुझे विश्वास है कि 'दीदी' अपने उद्देश्य की पूर्ति कर सकेगी।

—राजेन्द्रप्रसाद

'दीदी' के द्वारा हिन्दी का एक अंग भरेगा यह मुझे भरोसा है।

—पुरुषोत्तमदास टंडन

सदा कमनीय काम करके
लोक में कीर्तिवितान तने।
घरों में देवी कहा पूजे,
तिमिर में 'दीदी' दिव्य बने।

—"हरिऔध"

सम्पादिका-समिति

'दीदी' की सम्पादिका-समिति में निम्नलिखित पाँच प्रमुख महिलाएँ हैं—

रानी गिरिजादेवी (भदरी)।

कुमारी विद्यावती, बी० ए०, सी० टी० (बेसिक), बी० टी०।

श्रीमती सत्यवती (स्नातिका), एम० एल० ए०।

कुमारी हरदेवी मलकानी, एम० ए०।

श्रीमती रत्नकुमारी, एम० ए०।

सम्मतियाँ

लड़कियों और स्त्रियों के लिए 'दीदी' जैसे सरल हिन्दी मासिक की आवश्यकता थी। अब यह कमी पूरी हुई।"

—कर्मवीर

"...'दीदी' जबसे निकली है दिनोंदिन उन्नति करती जाती है।"

—प्रताप

"...काफी विचार-मंथन के उपरान्त श्री श्रीनाथसिंह ने 'दीदी' का प्रकाशन आरम्भ किया है। आपने जिस उत्साह से इस ओर कदम बढ़ाया है, वह स्तुत्य है।"

—"आज"

"गेट-अप और छपाई भारत की समस्त पत्रिकाओं से अच्छी है।"

—आर्यमित्र

'दीदी' में क्या रहता है

'दीदी' में प्रतिमास चार सुन्दर कहानियाँ, एक सच्ची कहानी, शिशुपालन, गृहप्रबन्ध रसोई, कसीदा, यौवन-सौंदर्य और प्रेम-फ़ैशन आदि पर विशेषज्ञों के लेख और घर-गृहस्थी की सैकड़ों बातें रहती हैं। एक शब्द में 'दीदी' उन सब सवालों का जवाब देती है जो किसी भी स्त्री के हृदय में उठ सकते हैं।

'दीदी' का नववर्षांक दिसम्बर १९४१,
'दीदी' का विशेषांक जनवरी १९४२ में प्रकाशित होगा।

प्रजामंडल श्रीनाथसिंह लिखित सर्वथा नवीन उपन्यास मूल्य १।)
'दीदी' के ग्राहकों से सिर्फ १)।

ये दोनों विशेषाङ्क केवल उन्हीं को मिल सकेंगे जो नवम्बर सन् १९४१ से पहले वार्षिक मूल्य २) मनीआर्डर से भेजकर 'दीदी' के ग्राहक बन जायेंगे। पत्र या मनीआर्डर भेजने का पता—

प्रेमलता देवी, संचालिका 'दीदी' कटरा, इलाहाबाद

नौकरी की खातिर मारे मारे फिरने वालों को

हमारी नेक सलाह

इन पुस्तकों को मँगाकर अपनी बेकारी मिटाइये

आजकल जो पढ़े लिखे बेकार नौकरी के लिये मारे मारे फिरते हैं उनको हमारी यह नेक सलाह है कि वे हमारी नीचे लिखी हुई पुस्तकों में से कोई भी पुस्तक मँगाकर कोई सा भी कारोबार शुरू कर दें और यदि आवश्यकता हो तो हमारी सहायता और सलाह भी ले सकते हैं जो हम मुफ़्त में सदैव देने को तैयार हैं। ध्यान रहे हमारी सलाह से काम करने वाले कभी भी घाटा न उठायेंगे यह हमारा दावा और बीस साल का निजी अनुभव है।

सचित्र देशी बटन मेकर	१)
स्वदेशी रंग शिक्षक	१)
स्वदेशी तेल शिक्षक	१)
रंगाई शिल्प शिक्षा	१)
शीशा पर क़लई करना	१)
घड़ी साजी सचित्र	।।)
मुलम्मा साजी	२)
सुनारसाजी	२)
साबुनसाजी	१।)
हर चीज जोड़ने के मसाले पहिला भाग	।।)
,, ,, दूसरा भाग	।।)
खजाने की कुंजी	१)
सत्य लक्ष्मी भण्डार	१।)
छोटे छोटे कारखाने खोलने के तरीके	।)
कर्घाकला	।।)
सचित्र मोटर ड्राइवरी	२)
२५०० परीक्षित नुसखे सचित्र	३)
दर्ज़ी विज्ञान तीन भाग	४।।)
रोशनाई का व्यापार	१)
वस्त्र बुनकारी शिक्षा	२)
स्वदेशी शर्बतों का व्यापार	१।)
रत्नों की खान	।।)
सुगन्धित तेलों का व्यापार सचित्र	१।)
पेटेन्ट दवाइयाँ प्रथम भाग	१)
पेटेन्ट दवाइयाँ दूसरा भाग	१।।)
बिजली की बैटरियाँ बनाना सचित्र	२)
बिला पैसे के सैकड़ों रोजगार सचित्र	१)
रबड़ की अनेक प्रकार की दस्तकारियाँ	१)
हुनर प्रचारक मेरी डायरी प्रथम भाग	१)
हुनर प्रचारक मेरी डायरी दूसरा भाग	२)
हुनर संग्रह	१)
हुनर शिक्षक	१)
पैंटरी [साइन बोर्ड साजी] सचित्र	२)
कपड़ा छपाई की शिक्षा	१)
साबुन विज्ञान सचित्र	२)
लकड़ी पर पालिश	२)
धन कमाने के सरल उपाय	१)
व्यापार और कारीगरी	२)
अचार शिक्षक	।।)
फोटोग्राफी शिक्षा सचित्र	४।।)
मिट्टी के बरतन बनाना सचित्र	२)
भारतीय डायरेक्टरी	१)

ग्राहकों को सूचना

इन छोटी छोटी पुस्तकों का मूल्य इनकी मुटाई अथवा सुन्दरता पर निर्भर नहीं है बल्कि इनका मूल्य लेखकों के दिमाग के परिश्रम का दाम है। जो व्यक्ति मुटाई तथा सुन्दरता के उपासक हैं वे इन पुस्तकों को भूलकर भी न मँगावें क्योंकि न तो य पुस्तकें मोटी हैं और न खूबसूरत ही हैं।

मैनेजर, बेकार-सखा, मशीन प्रेस, शिकोहाबाद, यू० पी०

ऑर्डर दीजिए ! ऑर्डर दीजिए !!

सबसे नया प्रकाशन

निःसहाय हिंदू

लेखक, श्रीयुत राधाकृष्णदास । हिंदू-जाति के विश्व-मान्य सिद्धांतों का सजीव, सारगर्भित चित्रण । संगठन, एकता और बंधुत्व का आदर्श उदाहरण ! आपके हृदय की कोमल भावनाओं को छू लेने का प्रयास कितना पवित्र—कितना सफल । एक बार अवश्य पढ़िए । मूल्य ।।), १)

कुबेर

लेखक, श्री देवीप्रसाद धवन 'विकल' । वह धन-राशि में लोटनेवाला, नए युग के पूँजीपतियों का अपवादरूप, अभिमानी कुबेर न था । समाज की चोटों से तिलमिलाकर, आत्मविश्वास और लोकोपकार की भावना के सहारे जीनेवाला, औरों के लिये अपने धन को लुटा देनेवाला रंक 'कुबेर' विधाता के विधान से एक दिन सचमुच कुबेर बन गया ! मूल्य १), १।।)

अंतःपुर का छिद्र

लेखक, सुप्रसिद्ध नाटककार पं० गोविंदवल्लभ पन्त का सबसे नवीन बौद्ध कालीन नाटक । कौशांबी के राजमहल में होनेवाली प्रणय-लीला, महाराज उदयन की प्रेम-कथा का दुःखद प्रसंग । अधिकार-लिप्सा का रोमांचकारी दृश्य । सारगर्भित कथानक । स्टेज पर खेलने योग्य । मूल्य ।=), ।।।=)

बिहारी-सुधा

लेखक, मिश्रबंधु । महाकवि बिहारीलाल के २७० उत्तमोत्तम दोहों का अर्थ-सहित सुंदर संग्रह । घरेलू पुस्तकालयों की शोभा बढ़ाने योग्य अनुपम काव्य-ग्रंथ । मूल्य ।=), ।।।)

स्त्री-सौंदर्य और स्वास्थ्य

लेखक, श्रीयुत बुद्धिसागर वर्मा, बी० ए०, एल्० टी० । शरीर के अंगों का बनाव-शृंगार, सौंदर्य-रक्षा के नियम, व्यायाम, रोग तथा उनकी सरल चिकित्सा सौंदर्य बढ़ाने के देशी और विदेशी साधनों की उपयोगिता सरल भाषा में वर्णित है । सचित्र । मूल्य २), २।।)

मनुष्य का विकास

लेखक, श्री ज्योतिलाल भार्गव, बी० ए०, एल्-एल्० बी० । धरती पर सबसे पहले जानवर कैसे पैदा हुए । मनुष्य-जाति कैसे प्रकट हुई ? क्या आदमी आसमान से बरस पड़े थे या पाताल से निकल पड़े थे ? सभी प्रश्नों का विस्तृत और प्रासंगिक उत्तर देनेवाली एकमात्र पुस्तक । मूल्य ।=), ।।=)

भोजन और स्वास्थ्य

लेखक, डॉ० सत्यप्रकाश तथा डॉ० संतप्रसाद टंडन । स्वास्थ्य-वर्द्धक भोजन का चुनाव साधारण जन भी अपनी आय के अनुसार कर सकते हैं । इसके लिये अमीर-गरीब का कोई प्रश्न नहीं । मूल्य १), १।)

मिलने का पता—गंगा-ग्रंथागार, ३६, लाटूश रोड, लखनऊ

प्रश्नोत्तर-कूपन, दिसम्बर'४१

विश्ववाणी की महान योजना

आगामी जनवरी अङ्क विश्व और भारतीय संस्कृति का विशेषाङ्क

हमारा दावा है किसी भारतीय पत्रिका ने इतना सुन्दर विशेषाङ्क अब तक नहीं निकाला

यह विशेषांक छै महीने के परिश्रम का परिणाम होगा

078737

विशेषाङ्क के कुछ लेखक

- एच० जी० वेल्स
- जार्ज बर्नर्ड शा
- रोमां रोलां
- प्रो० आइन्सटाइन
- मैडम चियाङ्गकाइ शेक
- कु० ज़ोरा नील हर्स्टन
- जान अर्सकिन
- वाल्टर लिपमैन
- अलबर्ट वाइटन
- डाक्टर पाल ब्रण्टन
- सर एडवर्ड बेन्थल
- एलबर्ट ग्यूरार्ड
- श्रीमती सरोजिनी नायडू
- सर एस० राधाकृष्णन
- सर सी० वी० रमन
- सर शिव स्वामी अय्यर
- सर यदुनाथ सरकार
- सर शफ़ात अहमद खां
- सर सीताराम पाटकर
- सर टी० विजयराघवाचार्य
- सर तेजबहादुर सप्रू
- सर अब्दुल क़ादिर
- सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास
- सर मिरज़ा इस्माइल
- आचार्य क्षितिमोहन सेन
- श्री राजगोपालाचार्य
- पण्डित सुन्दरलाल
- भदन्त आनन्द कौशल्यायन
- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
- श्री जैनेन्द्र कुमार
- श्री सुमित्रानन्दन पन्त
- डाक्टर भूपेन्द्रनाथ दत्त
- डाक्टर ताराचन्द
- श्री धर्मानन्द कौशाम्बी
- डाक्टर डी० आर० भण्डारकर
- महापण्डित राहुल सांकृत्यायन

लेखों के अतिरिक्त दर्जनों कविताएँ, कहानियाँ, एकांकी नाटक आदि होंगे

- ■ इस महान और वृहत् विशेषांक की क़ीमत होगी केवल दो रुपया।
- ■ किन्तु स्थायी ग्राहकों को यह अङ्क मुफ़्त में मिलेगा।
- ■ ३० नवम्बर तक विशेषांक की प्रति रिज़र्व करा लीजिये।

जिन ग्राहकों का चन्दा दिसम्बर में समाप्त होता है वे भी १५ दिसम्बर तक छै रुपया मनीआर्डर से भेज दें।

विशेषाङ्क की कापी रिज़र्व न कराने पर निराश होना पड़ेगा

वार्षिक मूल्य ६)
विशेषाङ्क का २)

मैनेजर विश्ववाणी
इलाहाबाद

Reg. No. A-172

हिन्दी-संसार में हलचल मचा देनेवाला

'जीवन-सखा' का 'व्यायाम-अंक'

जनवरी सन् १९४२ में प्रकाशित होगा

जो प्राकृतिक साधनों द्वारा स्वास्थ्य-लाभ करने के इच्छुक हिन्दी-प्रेमियों के लिए स्वास्थ्यविषयक एक अभूतपूर्व ग्रंथ होगा।

इसमें क्या रहेगा ?

१ फेफड़े और मांसपेशियों पर व्यायाम का प्रभाव।
२ हृदय पर व्यायाम का प्रभाव।
३ जर्मन व्यायाम-प्रणाली।
४ स्वीडिश व्यायाम-प्रणाली।
५ फ्रांस की व्यायाम-प्रणाली।
६ जापान की व्यायाम-प्रणाली।
७ हिन्दुस्तानी व्यायाम-पद्धति।
८ युवकों और युवतियों के लिए व्यायाम।
९ पेट की कमजोरी और आँत उतरने का इलाज।
१० व्यायाम बीमारियों के लिये।
११ मालिश।
१२ कब्ज का इलाज।
१३ श्वास-रोग का इलाज।
१४ रक्त-[illegible] की बीमारियों का इलाज।
१५ मोटापा, उसका कारण और इलाज।
१६ नाड़ी-दौर्बल्य और [illegible] में व्यायाम चिकित्सा।
१७ फालिज का इलाज।
१८ [illegible] प्राणायाम।
१९ [illegible] के लिये व्यायाम।
२० सूर्य-नमस्कार।
२१ योग-व्यायाम।
२२ अन्दरूनी सफ़ाई के लिये योग-क्रियायें।
२३ हिन्दुस्तान के व्यायाम-केन्द्रों का सिंहावलोकन।
२४ व्यायाम के समय शरीर की आन्तरिक अवस्था।
२५ व्यायाम के लिए अवस्था, व्यवसाय तथा स्त्री-पुरुष का विचार।
२६ खिलाड़ियों (Sportsmen) का व्यायाम।
२७ स्कूलों की व्यायाम-पद्धति।
२८ कालेजों और विश्वविद्यालयों में व्यायाम।
२९ लड़कियों के स्कूलों और कालेजों में व्यायाम।
३० कन्धों की विषमता का कारण और इलाज।
३१ हकलाना और गले का इलाज।
३२ व्यायाम और विश्राम।
३३ शरीर के अंग-प्रत्यंग का व्यायाम।
३४ हिन्दुस्तानी व्यायाम-प्रवर्तकों की जीवनी और उनका कार्य।
३५ हिन्दुस्तान के प्रान्तों में व्यायाम।
३६ शरीर पर व्यायाम का प्रभाव।
३७ देश में व्यायाम-प्रसार की आवश्यकता।

अनेक चित्रों से सुसज्जित इस वृहद् विशेषांक का मूल्य १) होगा, किन्तु 'जीवन-सखा' के सभी नये पुराने ग्राहकों को मुफ्त मिलेगा। इसलिए यदि आप अबतक 'जीवन-सखा' के ग्राहक न बने हों, तो शीघ्र बनकर इसे प्राप्त करें। १५ दिसम्बर के पूर्व ही एक १) अग्रिम भेजकर विशेषांक की कापी अपने लिये रिजर्व करा सकते हैं। युद्ध के कारण जो अनिवार्य कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गयी हैं उनकी वजह से यह विशेषांक सीमित संख्या में प्रकाशित होगा। इसलिए १५ दिन के पूर्व ही जिन्होंने विशेषांक की प्राप्ति के लिये आवेदन नहीं किया, उन्हें फिर बाद में अंक प्राप्त नहीं हो सकेगा। अतः शीघ्रता कीजिए, अन्यथा निराश होना पड़ेगा।

मैनेजर—'जीवन-सखा', ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY SYT. BALESHWAR PRASAD SINHA, [illegible] J, ALLAHABAD

Compiled
1999-2000